गांधीजी

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

५

(१९०५-१९०६)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

अगस्त १९६१ (श्रावण १८८३ शक)

साढ़े सात रुपये

निदेशक, प्रकाशन विभाग, दिल्ली–८ द्वारा प्रकाशित
और जीवणजी डाह्याभाई देसाई, नवजीवन प्रेस, अहमदाबाद–१४ द्वारा मुद्रित

भूमिका

प्रस्तुत खण्डमें जुलाई १९०५ से अक्तूबर १९०६ तक की सामग्री दी गई है। यह समय गांधीजीके व्यक्तिगत जीवन और दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय समाजके जीवनमें महत्त्वपूर्ण परिवर्तनोंका है। यद्यपि ट्रान्सवालके भारतीयोंकी सेवाके व्रत और 'इंडियन ओपिनियन' के खर्चकी दृष्टिसे वे स्वयं अभीतक जोहानिसवर्गमें रहकर वैरिस्टरी कर रहे थे,फिर भी उनका फीनिक्स आश्रम सहयोगियोके लिए घर वन गया था। इन सहयोगियोंमें श्री वेस्ट जैसे कुछ यूरोपीय भी सम्मिलित थे। जोहानिसबर्गमे उनका पारिवारिक जीवन अपेक्षाकृत अधिक स्थिर हो गया था; सहयोगी और सहकारी भी परिवारके सदस्य थे। भोजनके वाद रातको वे तथा अन्य सदस्य धार्मिक अध्ययन और दार्शनिक चर्चा करते थे। अपने धन्धेके लिए उन्होंने जो सख्त आचार-नीति अपनाई थी उसके बावजूद उनकी वकालत वढ़ती गई। जीवनमें सादगीके साथ-साथ संयम और शारीरिक श्रमपर जोर बढ गया। घरसे दफ्तर तक का छ: मीलका फासला वे आते और जाते पैदल ही तय करते थे। उनके आहार-सम्बन्धी प्रयोग भी चलते रहे। अपने वड़े भाई श्री लक्ष्मीदासके नाम पत्र (मई २७, १९०६) में उन्होंने लिखा था, "कुछ भी मेरा है, यह मेरा दावा नही है। मेरे पास जो-कुछ भी है, वह सब लोक-सेवामें लगाया जा रहा है . . . मुझे किसी किस्मके दुनियाई सुख-भोगकी इच्छा बिलकुल नही है।"

सार्वजनिक कार्यकर्ताके जीवनमें ब्रह्मचर्यकी आवश्यकतापर उनका विश्वास अधिकाधिक वढ़ता गया — यह दूसरा महत्त्वपूर्ण विकास हुआ। तव उन्हें आत्मज्ञानकी दिशामे उसके उपयोगकी प्रतीति नही हुई थी। किन्तु जूलू विद्रोहके समय, जब उन्हे डोलीवाहक दलके साथ कठिन मंजिलोंपर जाना पड़ा, उन्होंने लिखा है: "मेरे मनमें विचार उदित हुआ कि यदि मैं इस तरह समाजकी सेवामें संलग्न होना चाहता हूँ तो मुझे धन और सन्तानकी इच्छा छोड़ देनी चाहिए और सांसारिक काम-काजसे अलग होकर वानप्रस्थ जीवन व्यतीत करना चाहिए।" ('आत्मकथा', भाग ३, अध्याय ७) उन्हें विश्वास हो गया कि वे "आत्मा और शरीर दोनोंके लिए साथ-साथ नही जी सकते", और उन्होंने जीवनके ३७ वें वर्षमे आजन्म ब्रह्मचर्यका व्रत ले लिया। अन्ततः उन्हे सितम्वर ११, १९०६ की सार्वजनिक सभामे उस व्रतकी सुन्दरता और शक्तिका साक्षात्कार हुआ, जो ईश्वरको साक्षी रखकर बुरे कानूनके सामने न झुकनेके कारण मिलनेवाले दण्डको झेलनेके लिए लिया गया था; और उसी दिन उस सिद्धान्तका जन्म हुआ जो वादमें "सत्याग्रह" कहलाया।

उनके हाथोंमें 'इडियन ओपिनियन' उनके प्रभावकी उत्तरोत्तर वृद्धिका साधन बन गया था। विशेषत. गुजराती विभागके द्वारा उन्होंने दक्षिण आफ्रिकी भारतीय समाजको आत्म-संयम, स्वच्छता और अच्छी नागरिकता सिखाने और सत्याग्रहके योग्य वनानेका प्रयत्न किया। उसमें उन्होने टॉलस्टॉय, लिंकन, मैज़िनी, एलिजाबेथ फ्राइ, फ्लॉरेन्स नाइटिंगेल, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर और टी० माधवराव जैसे महान् पुरुषो और स्त्रियोंके जीवन-चरित लिखकर अपने पाठकोंको अनुप्रेरित करनेका प्रयास किया। कुछ व्यावहारिक कठिनाइयोके कारण बादमे उन्हें 'इंडियन ओपिनियन' के हिन्दी और तमिल विभाग वन्द कर देने पड़े। छगनलाल गांधीको लिखे उनके पत्रोसे प्रकट होता है कि वे उक्त पत्रकी सामग्री, स्तर और रूप-विन्यास आदिके बारेमें तफसीलसे हिदायतें देते थे। पत्रका आर्थिक संकट अभीतक बना हुआ था और गांधीजीको उसके लिए समाजसे अधिकाधिक सहयोगकी अपील करनी पड़ती थी।

उन्होंने बार-बार ब्रिटिश भारतीय संघके माध्यमसे ट्रान्सवालके भारतीय समाजकी समस्याओंको लेकर जोरदार शब्दोंमें निवेदन प्रस्तुत किये। उदाहरणार्थ, ट्रान्सवाल लौटनेवाले भारतीय शरणार्थियोंसे उन्हें जाननेवाले यूरोपीयोंके नाम पूछनेकी प्रथा और ट्रामगाड़ियों तथा रेलगाड़ियों द्वारा भारतीयोंके सफरपर लगे हुए कठोर प्रतिबन्धों की उन्होंने आलोचना की। जब मार्च १९०६ में संविधान-समितिकी नियुक्ति हुई, तब गाधीजीके नेतृत्वमें संघने जोरदार तरीकेसे उसके सामने भारतीय दृष्टिकोण रखा। अनुमतिपत्रोंकी समस्या इतनी तीव्र हो गई थी कि संघने कतिपय परीक्षात्मक मुकदमे दायर करना भी तय किया। किन्तु चरम-स्थिति तब आई जब लॉर्ड मिलनरके आश्वासनपर स्वेच्छापूर्वक दुबारा पंजीयन करा लेनेके बाद भी सरकारने भारतीयोंको तीसरी बार पंजीयन करानेके लिए बाध्य करनेका कानून बनाना निश्चित किया। जिस दिन एशियाई अध्यादेशका मसविदा प्रकाशित हुआ उसी दिनसे दक्षिण आफ्रिकामें घटनाओंकी गति बढ गई। अगस्त २५, १९०६ को ब्रिटिश भारतीय संघने अध्यादेशका विरोध किया। ८ सितम्बरको गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' में अध्यादेशकी भर्त्सना करते हुए उसे "मानवताके विरुद्ध अपराध" कहा; साथ ही उसे सरकारका भारतीयोंको ट्रान्सवालसे भगानेका तरीका घोषित किया। गांधीजीने "खूनी कानून" के विषैले प्रभावोंको स्पष्ट किया और लोगोंसे फिर पंजीयन न करानेका अनुरोध किया। ११ सितम्बरकी सार्वजनिक सभा एक युगान्तरकारी घटना थी। प्रसिद्ध चौथे प्रस्तावकी सिफारिश करते हुए गांधीजीने अध्यादेशके सम्मुख न झुकने और परिणामस्वरूप जेल जानेके लिए समाजका आह्वान किया। सारी परिस्थितियोंसे समाज बहुत व्यग्र हो उठा था और यह तय किया गया कि साम्राज्य-सरकारके सामने भारतीय दृष्टिकोण पेश करनेके लिए एक शिष्टमण्डल इंग्लैंड भेजा जाये।

नेटालके भारतीयोंके सामने भी अपनी समस्याएँ थी। भारतीयोंके व्यापारिक परवाने फिरसे जारी करनेसे इनकार करना मामूली और रोजमर्रेकी बात हो गई थी। गांधीजीने इस परिस्थितिको गोरों और भारतीयोंके बीच स्पष्ट स्पर्धा माना। दादा उस्मानके मामलेकी अपील उपनिवेश-मन्त्रीके सामने की गई। डर्बन नगर-परिषदने भारतीय व्यापारियों और फेरीवालोको नये परवाने जारी न करनेका निश्चय किया। इसके पहले गांधीजीने सुझाव रखा था कि परवानोंके मामलोंकी जाँच-पड़तालके लिए नेटाल भारतीय कांग्रेस एक समिति बनाये। दूसरी परेशानियाँ भी थी; जैसे १६ वर्षसे अधिक उम्रके भारतीयोंपर १ पौंडका कर लाद दिया गया था; पासों और प्रमाणपत्रोंपर प्रतिषेधात्मक शुल्क लगा दिये गये थे। इस प्रकार इंग्लैडको शिष्टमण्डल भेजना एक अनिवार्य आवश्यकता प्रतीत हुई और नेटाल भारतीय कांग्रेसने गांधीजीको भेजना तय किया। किन्तु जब फरवरी १९०६ में जूलू-विद्रोह भड़क उठा तब गांधीजीने तमाम भारतीय शिकायतोंपरसे ध्यान हटा लिया और न केवल भारतीयोंको आहत सहायकोंके रूपमें अपनी सेवाएँ प्रदान करनेका औचित्य समझाया, बल्कि वास्तवमें नेटाल सरकारके सामने ऐसा प्रस्ताव भी पेश किया, जिसे मईके अन्ततक उसने स्वीकार कर लिया। इस प्रकार शिष्टमण्डल मुल्तवी हुआ और गांधीजीने अपने १९ सहयोगियोंके साथ लगभग छः हफ्तों तक डोली-वाहकके रूपमें काम किया।

जुलाईमे गाधीजी मोर्चेसे लौट आये। उन्होंने लौटकर देखा कि सरकार अभीतक अनिवार्य पुन: पंजीयनके प्रस्तावपर दृढ़ है, जिससे प्रश्नने पहलेसे भी अधिक गम्भीर रूप धारण कर लिया है। कुछ हफ्तों तक गांधीजी इसको लेकर व्यस्त रहे। लॉर्ड सेल्बोर्नने एशियाई अध्यादेशके बारेमें भारतीय पक्षको मंजूर करनेसे इनकार कर दिया और लॉर्ड एलगिनने अपना यह विचार व्यक्त किया कि शिष्टमण्डल भेजनेसे कोई लाभ नही होगा। किन्तु इससे भारतीय समाजका गांधीजी और अलीको इंग्लैड भेजनेका निश्चय और भी दृढ़ हो गया। एक अन्तिम बैठकमें

गांधीजी जानेके लिए तैयार हो गये, किन्तु उन्होंने पहले प्रमुख भारतीयोंसे यह वचन ले लिया कि वे पुनः पंजीयन कराना मंजूर नहीं करेंगे। उनके विचारमें भारतीय समाजके लिए वह समय कसौटीका था। इंग्लैंड जाते समय जहाजपर भी वे संघर्षके बारेमें ही विचार करते रहे और वहाँसे 'इंडियन ओपिनियन' के लिए उन्होंने जो लेख भेजे उनमें से एकमें संघर्षके विधि-निषेधका ब्यौरा दिया।

दक्षिण आफ्रिकाके सामने जो बड़े-बड़े प्रश्न थे उनपर अपना मत स्पष्ट करनेमें गांधीजी कभी नहीं चूके। खदानोंमें काम करनेवाले चीनी मजदूरोंके प्रति कठोर बर्तावकी उन्होंने निस्संकोच भर्त्सना की। जब ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर कालोनीका नया विधान बननेवाला था तब "रंगदार" लोगोंने उस संविधानके अन्तर्गत मताधिकार पानेके लिए प्रार्थनापत्र दिये। गांधीजीने उस आन्दोलनके साथ पूरी सहानुभूति दिखाई।

इस अवधिमें गांधीजीने ट्रान्सवाल और नेटालके प्रमुख समाचारपत्रोंमें अनेक लेख लिखे। 'नेटाल मर्क्युरी' के आमन्त्रणपर जून १९०६ में उन्होंने भारतीयोंकी मुख्य-मुख्य शिकायतों और उनके निराकरणके उपायोंका संक्षिप्त तथा सुस्पष्ट ब्यौरा दिया। 'रैंड डेली मेल' को लिखे पत्रमें उन्होंने भारतीयोंके लिए पूर्ण नागरिक स्वतन्त्रताकी माँग की। जब पूनिया नामकी एक भारतीय स्त्रीपर इसलिए मुकदमा चलाया गया कि उसके पास अलग अनुमतिपत्र नहीं था तब उन्होंने अखबारोंमें उसके विरुद्ध लिखकर जबर्दस्त हलचल पैदा कर दी, जिससे सरकारी पक्षका खोखलापन तो जाहिर हुआ ही, वहाँके अखबारोंको वह वक्तव्य भी वापस लेना पड़ा जिसमें दक्षिण आफ्रिकामें रहनेवाली भारतीय स्त्रियोंको लांछित किया गया था।

गांधीजी भारतीयोंके साथ बरती जानेवाली भेद-नीतिके विरुद्ध आन्दोलन चलानेके अतिरिक्त उनका रचनात्मक मार्गदर्शन भी करते रहते थे। जब नेटाल-सरकारने स्थानीय रूपसे वस्तुओंके निर्माणकी सम्भावनाकी जाँचके लिए एक आयोग बिठाया, तब उन्होंने भारतीय व्यापारियोंको उसके सामने गवाही देनेके लिए प्रेरित किया। बड़ौदाकी शैक्षणिक प्रगतिके उदाहरण देकर और गोखलेके सुझावोंका समर्थन करके वे भारतीयोंको शिक्षण प्राप्त करनेकी आवश्यकता निरन्तर समझाते रहते थे। दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय व्यापार-संघकी स्थापनाके प्रस्तावका भी उन्होंने अनुमोदन किया था।

भारतकी घटनाओंसे भी वे घनिष्ठ सम्पर्क बनाये रहे। भारतकी आवश्यकताएँ सदा उनके ध्यानमें रहती थीं। उन्होंने नमक-कर समाप्त करनेकी माँग की। बंग-भंग आन्दोलनके तीव्र होनेपर उन्होंने संयुक्त विरोध और अंग्रेजी मालके बहिष्कारका आह्वान किया। स्वदेशी आन्दोलनकी प्रगतिपर प्रसन्नता प्रकट की और साम्प्रदायिक एकताकी आवश्यकतापर जोर दिया। उन्होंने 'वन्दे मातरम्' को भारतका राष्ट्र-गीत और देशको एक राष्ट्र बनानेके लिए हिन्दुस्तानीको राष्ट्र-भाषा स्वीकार करनेकी सलाह दी। भारतीय नेतागण भारतमें जो-कुछ कर रहे थे उसपर वे ध्यान रखते रहे और कांग्रेसकी अध्यक्षताके लिए उन्होंने श्री गोखलेके निर्वाचनका समर्थन किया। "साम्राज्यका अविभाज्य अंग" होनेके नाते उन्होंने भारतकी आकांक्षाओंपर अधिक गहराईसे सोचनेकी आवश्यकता बताई और न्याय तथा मानवताके नामपर स्वराज्य (होम-रूल) की माँग पेश की।

वे बाहरी दुनियाकी महत्त्वपूर्ण घटनाओंपर भी नजर रखते रहे। निर्वाचनके सिद्धान्तोंपर आधारित नये रूसी विधानको उन्होंने प्रगतिकी दिशामें एक कदम माना। १९०५ की क्रान्तिके विषयमें उन्होंने कहा कि यदि यह क्रान्ति सफल हो गई तो "इस शताब्दीकी सबसे बड़ी विजय

और सबसे बड़ी घटना" मानी जायेगी। जापानकी महानताका श्रेय उन्होंने उसके द्वारा मिकाडोके शिक्षा-सम्बन्धी आदेशोंके निष्ठापूर्ण पालन और सेनाके आचारको दिया।

यह खण्ड उस विस्तृत भूमिकाको प्रस्तुत करता है जिसमें गांधीजीने वानप्रस्थ जीवन अपनाया और वे मानव-समाजके ऐसे मार्गदर्शकके रूपमें प्रकट हुए जिसे इस बातकी प्रतीति हो गई थी कि "किसी नये तत्त्वका आविर्भाव हुआ है।" यह तत्त्व था — सत्याग्रह; संवैधानिक आन्दोलनका पूर्ण संतोष प्रदान करनेवाला निर्मल विकल्प।

पाठकोंको सूचना

इस खण्डमें कुछ ऐसे प्रार्थनापत्र सम्मिलित किये गये है जिनपर यद्यपि दूसरोंके हस्ताक्षर हैं, तथापि वे गांधीजीके लिखे हुए माने गये हैं। इसके कारण खण्ड १ की भूमिकामें स्पष्ट किय जा चुके हैं। ये प्रार्थनापत्र गाधीजीके आत्मकथा-सम्बन्धी लेखोंके सामान्य साक्ष्य, उनके सहयोगी श्री एच० एस० एल० पोलक और श्री छगनलाल गांधीकी सम्मति तथा अन्य उपलब्ध प्रमाणोंके आधारपर 'इंडियन ओपिनियन' से लिये गये हैं।

अंग्रेजी तथा गुजराती सामग्रीसे अनुवाद करनेमें हिन्दीको मूलके समीप रखनेका पूरा प्रयत्न किया गया है। किन्तु साथ ही अनुवादको सुपाठ्य बनानेका भी ध्यान रखा गया है। छापेकी स्पष्ट भूलें सुधारकर अनुवाद किया गया है और मूलमें व्यवहृत शब्दोके संक्षिप्त रूप हिन्दीमें पूरे करके दिये गये हैं। नामोंको लिखनेमें सामान्यतः प्रचलित उच्चारणोंका ध्यान रखा गया है। शंकास्पद उच्चारणोंके सम्बन्धमें गांधीजीके गुजरातीमें लिखे गये उच्चारणको स्वीकार किया गया है।

प्रत्येक शीर्षककी लेखन-तिथि, यदि वह उपलब्ध है, दाहिने कोनेमें ऊपर दी गई है। यदि मूलमे कोई तिथि नहीं है तो चौकोर कोष्ठकोंमें अनुमानित तिथि दे दी गई है; और जहाँ जरूरी समझा गया है वहाँ उसका कारण भी बता दिया गया है। सूत्रके साथ अन्तमें दी गई तिथि प्रकाशन की है।

मूलकी भूमिकामें छोटे टाइपमें और मूल सामग्रीके भीतर चौकोर कोष्ठकोंमें जो-कुछ सामग्री दी गई है, वह सम्पादकीय है। मूलमें आये गोल कोष्ठकोको कायम रखा गया है। गाधीजी द्वारा उद्धृत अनुच्छेद हाशिया छोड़कर गहरी स्याहीमे छापे गये हैं।

'सत्यना प्रयोगो अथवा आत्मकथा' और 'दक्षिण आफ्रिकाना सत्याग्रहनो इतिहास' के विभिन्न संस्करणोमें पृष्ठ-सख्याकी भिन्नताके कारण, जहाँ आवश्यक हुआ है, केवल भाग और अध्यायका ही हवाला दिया गया है।

साधन-सूत्रोंमें एस० एन० संकेत साबरमती संग्रहालय, अहमदाबादमें उपलब्ध कागजपत्रोका सूचक है। इसी प्रकार जी० एन० गाधी स्मारक निधि और संग्रहालय, नई दिल्लीमें उपलब्ध कागज-पत्रोंका तथा सी० डब्ल्यू० सम्पूर्ण गाधी वाङ्मय द्वारा प्राप्त कागजपत्रोंका सूचक है। सामग्रीके सूत्रोंमें यदा-कदा जो संकेत आये है, उनमे "सी० एस० ओ०" कलोनियल सेक्रेटरीके ऑफिस के लिए, "सी० ओ०" कलोनियल ऑफिसके लिए तथा "एल० टी० जी०" या "एल० जी०" लेफ्टिनेंट गवर्नरके लिए आये हैं।

इस खण्डकी सामग्रीके साधन-सूत्र और सम्बन्धित अवधिका तारीखवार वृत्तान्त पुस्तकके अन्तमें दिये गये हैं।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक ट्रस्ट और संग्रहालय, गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय और नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद; गांधी स्मारक निधि तथा संग्रहालय और अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी पुस्तकालय, नई दिल्ली; भारत सेवक समिति, पूना; कलोनियल ऑफिस पुस्तकालय तथा इंडिया ऑफिस पुस्तकालय, लन्दन; फीनिक्स आश्रम, डर्बन; प्रिटोरिया आर्काइव्ज, प्रिटोरिया; नगर-परिषद, क्रूगर्सडॉर्प; श्री दी० गो० तेंडुलकर तथा 'महात्मा' के प्रकाशक; श्रीमती सुशीलाबहन गांधी तथा झवेरी परिवार, डर्बन; श्री छगनलाल गांधी, अहमदाबाद; श्री अरुण गांधी, बम्बई; तथा 'इंडियन ओपिनियन', 'इंडिया', 'नेटाल मर्क्युरी', 'रैंड डेली मेल', 'स्टार' और 'ट्रान्सवाल लीडर' समाचारपत्रोंके आभारी हैं।

अनुसन्धान तथा सन्दर्भ सम्बन्धी सुविधाओंके लिए गांधी स्मारक संग्रहालय, इंडियन कौंसिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स पुस्तकालय, केन्द्रीय सचिवालय पुस्तकालय तथा संयुक्त राज्य सूचना-सेवा पुस्तकालय, नई दिल्ली; साबरमती संग्रहालय तथा गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; सार्वजनिक पुस्तकालय, जोहानिसबर्ग; और ब्रिटिश म्यूजियम पुस्तकालय, लन्दन हमारे धन्यवादके पात्र हैं।

विषय-सूची

भूमिका ५
पाठकोंको सूचना ९
आभार १०
चित्र-सूची २४
१. नेटालके विधेयक (१-७-१९०५) १
२. श्री ब्रॉड्रिक और ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय (१-७-१९०५) २
३. लॉर्ड सेल्बोर्न और स्वशासन (१-७-१९०५) ४
४. सरकारी नौकरियोंमें भेद-भाव (१-७-१९०५) ४
५. मैक्सिम गोर्की (१-७-१९०५) ५
६. सिंगापुरमें चीनी और भारतीय (१-७-१९०५) ६
७. पत्र : उच्चायुक्तके सचिवको (१-७-१९०५) ६
८. पत्र : कैखुसरू व अब्दुल हकको (३-७-१९०५) ७
९. ऑरेंज रिवर उपनिवेशके कानून (८-७-१९०५) ८
१०. चीनी और गन्दी भाषा (८-७-१९०५) ९
११. भारतमें नमकपर कर (८-७-१९०५) १०
१२. पत्र . दादा उस्मानको (८-७-१९०५) १०
१३. पत्र : पारसी कावसजीको (८-७-१९०५) ११
१४ पत्र · जे० डी विलियर्सको (१२-७-१९०५) ११
१५. पत्र : उपनिवेश-सचिवको (१३-७-१९०५) १२
१६ पत्र : जालभाई व सोराबजी ब्रदर्सको (१३-७-१९०५) १३
१७. पत्र : हाइन व कारूथर्सको (१३-७-१९०५) १४
१८. पत्र : उमर हाजी आमदको (१३-७-१९०५) १५
१९ पत्र : टाउन क्लार्कको (१४-७-१९०५) १५
२०. केप प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम (१५-७-१९०५) १६
२१. श्री वाछा और भारतीय (१५-७-१९०५) १७
२२. नेटालमें मकान-कर (१५-७-१९०५) १७
२३ जापान द्वारा सन्धिकी तैयारी (१५-७-१९०५) १८
२४. पत्र : छगनलाल गांधीको (१५-७-१९०५) १९
२५. पत्र : उमर हाजी आमद झवेरीको (१७-७-१९०५) २०
२६. पत्र · हाजी इस्माइल हाजी अबूबकरको (१७-७-१९०५) २०
२७. पत्र : 'डेली एक्सप्रेस'को (१७-७-१९०५ के बाद) २१
२८. पत्र : रेवाशंकर झवेरीको (१८-७-१९०५) २३
२९. पत्र : रविशंकर भट्टको (२१-७-१९०५) २३
३०. पत्र : मेघराज व मूडलेको (२१-७-१९०५) २४
३१. पत्र : कैप्टन फॉउलको (२१-७-१९०५) २५

३२. श्री ब्रॉड्रिकका बजट (२२–७–१९०५) २५
३३. ट्रान्सवालमें एशियाई बाजार (२२–७–१९०५) २७
३४. एक गुप्त बैठक (२२–७–१९०५) २८
३५. क्रूगर्सडॉर्पके भारतीय (२२–७–१९०५) २९
३६. ट्रान्सवालमे भारतीय होटल (२२–७–१९०५) २९
३७. जोजेफ़ मैजिनी (२२–७–१९०५) ३०
३८. ट्रान्सवाल आनेवाले भारतीयोंको महत्त्वपूर्ण सूचना (२२–७–१९०५) ३१
३९. पत्र : बीमा कम्पनीके एजेंटको (२५–७–१९०५) ३२
४०. क्रूगर्सडॉर्पमें भारतीय (२९–७–१९०५) ३२
४१. ट्रान्सवालमें अनुमतिपत्र (२९–७–१९०५) ३३
४२. बाल्टिकके बेड़ेका रहस्य (२९–७–१९०५) ३३
४३. नेटालके गिरमिटिया भारतीय (५–८–१९०५) ३४
४४. जापान कैसे जीता? (५–८–१९०५) ३५
४५. पत्र : दादा उस्मानको (५–८–१९०५) ३५
४६. पत्र : कुमारी बिसिक्सको (५–८–१९०५) ३६
४७. पत्र : उमर हाजी आमदको (५–८–१९०५) ३६
४८. पत्र : अब्दुल हक व कैखुसरूको (५–८–१९०५) ३७
४९. पत्र : मुख्य अनुमतिपत्र-सचिवको (८–८–१९०५) ३७
५०. पत्र : अब्दुल हकको (८–८–१९०५) ३८
५१. पत्र : तैयब हाजी खान मुहम्मदको (८–८–१९०५) ३९
५२. पत्र : हाजी हबीबको (९–८–१९०५) ३९
५३. पत्र : अब्दुल कादिरको (१०–८–१९०५) ४०
५४. पत्र : पर्क्स लिमिटेडको (११–८–१९०५) ४१
५५. कदम-ब-कदम (१२–८–१९०५) ४२
५६. नेटालके नये कानून (१२–८–१९०५) ४३
५७. ट्रान्सवालमें वतनियोंको जमीनका अधिकार (१२–८–१९०५) ४३
५८. इंग्लैंड और जापानके बीच सन्धि (१२–८–१९०५) ४४
५९. पत्र : तैयब हाजी खान मुहम्मद ऐंड कम्पनीको (१२–८–१९०५) ४४
६०. पत्र : हाजी हबीबको (१४–८–१९०५) ४५
६१. पत्र : मुख्य अनुमतिपत्र-सचिवको (१५–८–१९०५) ४६
६२. पत्र : अब्दुल रहमानको (१६–८–१९०५) ४६
६३. क्या भारत जागेगा? (१९–८–१९०५) ४७
६४. सर मंचरजी और श्री लिटिलटन (१९–८–१९०५) ४८
६५. एलिजाबेथ फ्राइ (१९–८–१९०५) ४८
६६. ब्रिटिश संघ : एक सुझाव (२६–८–१९०५) ४९
६७. लॉर्ड कर्जन (२६–८–१९०५) ५०
६८. प्रोफेसर परमानन्द (२६–८–१९०५) ५१
६९. विश्व-धर्म (२६–८–१९०५) ५२
७०. रूसका नया सविधान (२६–८–१९०५) ५४

७१. अब्राहम लिंकन (२६–८–१९०५) ५४
७२. पत्र : गवर्नरके निजी सचिवको (३०–८–१९०५) ५६
७३. पत्र : मुख्य अनुमतिपत्र-सचिवको (१–९–१९०५) ५७
७४. नेटालके काफिर (२–९–१९०५) ५८
७५. काउंट टॉल्स्टॉय (२–९–१९०५) ५९
७६. जापानकी उन्नति (२–९–१९०५) ६०
७७. पत्र : शिक्षा-मन्त्रीको (५–९–१९०५) ६१
७८. सन्धिपत्र (९–९–१९०५) ६३
७९. चीनी खान-मजदूरोंपर अत्याचार (९–९–१९०५) ६३
८०. फ्लॉरेन्स नाइटिंगेल (९–९–१९०५) ६५
८१. स्वर्गीय कुमारी मैनिंग (१६–९–१९०५) ६६
८२. आगामी कांग्रेसका अध्यक्ष कौन? (१६–९–१९०५) ६७
८३. बड़ौदाके महाराजा गायकवाड़ और उनके दीवान (१६–९–१९०५) ६७
८४. ब्रिटिश मध्य आफ्रिकाके सम्बन्धमें समाचार (१६–९–१९०५) ६८
८५. इटलीमें भूकम्प (१६–९–१९०५) ६८
८६. चीनी और भारतीय : एक तुलना (१६–९–१९०५) ६९
८७. ईश्वरचन्द्र विद्यासागर (१६–९–१९०५) ७०
८८. पत्र : लेफ्टिनेंट गवर्नरके निजी सचिवको (१६–९–१९०५) ७३
८९. हुंडामलके मामलेकी फिर चर्चा (२३–९–१९०५) ७६
९०. श्री गाँश और भारतीय (२३–९–१९०५) ७७
९१. ऑरेंज रिवर उपनिवेशके भारतीय (२३–९–१९०५) ७८
९२. उपनिवेशमें उत्पन्न प्रथम भारतीय बैरिस्टर (२३–९–१९०५) ७९
९३. ट्रान्सवालमें अनुमतिपत्र सम्बन्धी विनियम (२३–९–१९०५) ८०
९४. पत्र : छगनलाल गांधीको (२३–९–१९०५) ८१
९५. पत्र : छगनलाल गांधीको (२७–९–१९०५) ८२
९६. पत्र : छगनलाल गांधीको (२९–९–१९०५) ८३
९७. ट्रान्सवालमें कानून बनानेकी सरगरमी (३०–९–१९०५) ८४
९८. केप प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम (३०–९–१९०५) ८६
९९. चीनी और अमेरिकी (३०–९–१९०५) ८७
१००. नेटालमें उद्योगोंको प्रोत्साहन देनेका आन्दोलन (३०–९–१९०५) ८७
१०१. नेटालकी पाठशालाएँ (३०–९–१९०५) ८८
१०२. जोहानिसवर्गवासियोंको सूचना (३०–९–१९०५) ८८
१०३. जॉर्ज वाशिंगटन (३०–९–१९०५) ८९
१०४. पत्र : छगनलाल गांधीको (३०–९–१९०५) ९०
१०५. पत्र : छगनलाल गांधीको (२–१०–१९०५) ९१
१०६. पत्र : छगनलाल गांधीको (५–१०–१९०५) ९२
१०७. पत्र : छगनलाल गांधीको (६–१०–१९०५) ९३
१०८ भारतमें अनिवार्य शिक्षा (७–१०–१९०५) ९४
१०९. भारतके 'पितामह' (७–१०–१९०५) ९६

११०. सर मंचरजीका अपमान (७–१०–१९०५) ९६
१११. बहिष्कार (७–१०–१९०५) ९७
११२. डॉक्टर बरनार्डो (७–१०–१९०५) ९७
११३. एक भारतीय कवि (७–१०–१९०५) ९९
११४. पत्र : छगनलाल गांधीको (७–१०–१९०५) ९९
११५. मानपत्र : लॉर्ड सेल्बोर्नको (९–१०–१९०५ से पूर्व) १००
११६. पॉचेफस्ट्रूमके भारतीयोंका वक्तव्य (९–१०–१९०५ से पूर्व) १०१
११७. लॉर्ड सेल्बोर्न और ट्रान्सवालके भारतीय (१४–१०–१९०५) १०३
११८. लॉर्ड सेल्बोर्नका आगमन (१४–१०–१९०५) १०४
११९. गिल्टीवाला प्लेग (१४–१०–१९०५) १०५
१२०. नमक-कर (१४–१०–१९०५) १०५
१२१. सर हेनरी लॉरेंस (१४–१०–१९०५) १०६
१२२. पत्र : छगनलाल गांधीको (१८–१०–१९०५) १०८
१२३. परवानेका एक और मामला (२१–१०–१९०५) १०८
१२४. सिगरेटसे हानि (२१–१०–१९०५) ११०
१२५. राजा सर टी० 'माधवराव (२१–१०–१९०५) ११०
१२६. मानपत्र: प्रोफेसर परमानन्दको (२७–१०–१९०५) ११३
१२७. जोहानिसबर्गमें प्लेगका इतिहास (२८–१०–१९०५) ११४
१२८. भूल-सुधार (२८–१०–१९०५) ११५
१२९. नेल्सन-शताब्दी महोत्सव : एक सबक (२८–१०–१९०५) ११७
१३०. विक्रेता-परवाना अधिनियम (२८–१०–१९०५) ११८
१३१. बहादुर बंगाली (२८–१०–१९०५) ११९
१३२. हमारा कर्तव्य (२८–१०–१९०५) ११९
१३३. आस्ट्रेलिया और जापान (२८–१०–१९०५) १२०
१३४. एक जागरूक भारतीय (२८–१०–१९०५) १२१
१३५. इंग्लैंड कैसे जीता (२८–१०–१९०५) १२१
१३६. चायसे हानियाँ (२८–१०–१९०५) १२३
१३७. सर टॉमस मनरो (२८–१०–१९०५) १२४
१३८. दुःखद प्रसंग (४–११–१९०५) १२५
१३९. फूट डालो और राज करो (४–११–१९०५) १२६
१४०. दादा उस्मानकी अपील (४–११–१९०५) १२७
१४१. लॉर्ड मेटकाफ़ (४–११–१९०५) १२९
१४२. पत्र : छगनलाल गांधीको (६–११–१९०५) १३१
१४३. तार : सम्राट्को (९–११–१९०५ से पूर्व) १३३
१४४. सम्राट् चिरजीवी हों! (११–११–१९०५) १३३
१४५. इंग्लैंड जानेवाला भारतीय प्रतिनिधिमण्डल (११–११–१९०५) १३४
१४६. नेटालका प्रवासी-अधिनियम (११–११–१९०५) १३६
१४७. लाल फीता (११–११–१९०५) १३६
१४८. रूस और भारत (११–११–१९०५) १३७

१४९. सर टी० मुतुस्वामी ऐयर, के० सी० आई० ई० (११–११–१९०५) १३९
१५०. भारतीय स्वयसेवक-दल (१८–११–१९०५) १४०
१५१. बन्दरगाहमे भारतीयोंके साथ दुर्व्यवहार (१८–११–१९०५) १४१
१५२. जोहानिसबर्गमें भारतीय बस्ती (१८–११–१९०५) १४२
१५३. ट्रान्सवालके भारतीयोको अनुमतिपत्रके सम्बन्धमे सूचना (१८–११–१९०५) १४२
१५४. जापान और ब्रिटिश उपनिवेश (१८–११–१९०५) १४३
१५५. केपका प्रवासी-कानून (१८–११–१९०५) १४३
१५६. माउटस्टुअर्ट एलफ़िन्स्टन (१८–११–१९०५) १४४
१५७. तार. सर आर्थर लालीको (२४–११–१९०५ के बाद) १४६
१५८. व्यक्ति-कर (२५–११–१९०५) १४६
१५९. श्री हैरी स्मिथ और भारतीय (२५–११–१९०५) १४७
१६०. बदरुद्दीन तैयबजी (२५–११–१९०५) १४९
१६१. शिष्टमण्डल : लॉर्ड सेल्बोर्नकी सेवामे (२९–११–१९०५) १५०
१६२. कटौती और व्यक्ति-कर (२–१२–१९०५) १५९
१६३ सर आर्थर लाली मद्रासके गवर्नरके रूपमें (२–१२–१९०५) १६०
१६४. भारतीय स्वय-सैनिक (२–१२–१९०५) १६०
१६५. डर्बन निगमके भारतीय कर्मचारी (२–१२–१९०५) १६१
१६६. हालका सुधार (२–१२–१९०५) १६१
१६७. पीली चमडीपर हमला (२–१२–१९०५) १६२
१६८. नेटाल प्रवासी-अधिनियम (२–१२–१९०५) १६२
१६९. वन्देमातरम् वंगालका गौर्यमय गीत (२–१२–१९०५) १६२
१७०. लॉर्ड सेल्बोर्न और ब्रिटिश भारतीय (९–१२–१९०५) १६४
१७१. उद्धरण. दादाभाई नौरोजीके नाम पत्रसे (११–१२–१९०५) १६५
१७२ केपका प्रवासी-अधिनियम (१६–१२–१९०५) १६६
१७३. मध्य दक्षिण आफ्रिकी रेल-प्रणाली और यात्री (१६–१२–१९०५) १६७
१७४. लन्दन भारतीय समाज और प्रोफेसर गोखले (१६–१२–१९०५) १६८
१७५. ट्रान्सवालके अनुमतिपत्र (१६–१२–१९०५) १६९
१७६. पत्र छगनलाल गाधीको (२१–१२–१९०५) १७०
१७७ पत्र: उच्चायुक्तके सचिवको (२२–१२–१९०५) १७१
१७८. फसल (२३–१२–१९०५) १७१
१७९. नेटाल-सरकार रेल-प्रणाली और भारतीय (२३–१२–१९०५) १७४
१८०. केपके भारतीय व्यापारी (२३–१२–१९०५) १७४
१८१. हिन्दू-मुसलमानोके बीच समझौता (२३–१२–१९०५) १७५
१८२. ईश्वरकी लीला अद्‌भुत है (२३–१२–१९०५) १७५
१८३. पर्यवेक्षण (३०–१२–१९०५) १७६
१८४. ऑरेंज रिवर कालोनी (३०–१२–१९०५) १७८
१८५. हीडेलबर्गकी जमातमे फूट और मारपीट (३०–१२–१९०५) १७९
१८६. वतनियोमे शिक्षण-कार्य (३०–१२–१९०५) १८०
१८७. चीनकी जागृति (३०–१२–१९०५) १८१

१८८. पत्र : उच्चायुक्तके सचिवको (३–१–१९०६) १८१
१८९. पत्र : म० ही० नाजरको (५–१–१९०६) १८२
१९०. भविष्यकी थाह (६–१–१९०६) १८३
१९१. ब्रिटिश भारतीयोंका दर्जा (६–१–१९०६) १८४
१९२. ऑरेंज रिवर कालोनीमें भारतीय (६–१–१९०६) १८६
१९३. व्यक्ति-करकी अदायगी (२०–१–१९०६) १८६
१९४. मनसुखलाल हीरालाल नाजर (२७–१–१९०६) १८७
१९५. काले और गोरे लोग (३–२–१९०६) १९०
१९६. सर डेविड हंटर (३–२–१९०६) १९१
१९७. हमारे तमिल और हिन्दी स्तम्भ (३–२–१९०६) १९१
१९८. ईरानके शाह (३–२–१९०६) १९२
१९९. पत्र : उपनिवेश-सचिवको (९–२–१९०६) १९२
२००. पत्र : टाउन क्लार्कको (१०–२–१९०६) १९४
२०१. ईसाइयों और मुसलमानोंके सम्बन्धमें लॉर्ड सेल्बोर्नके विचार (१०–२–१९०६) १९५
२०२. ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय (१०–२–१९०६) १९६
२०३. पत्र : छगनलाल गांधीको (१३–२–१९०६) १९७
२०४. पत्र : टाउन क्लार्कको (१३–२–१९०६) १९८
२०५. पत्र : कार्यवाहक मुख्य यातायात प्रबन्धकको (१४–२–१९०६) १९९
२०६. 'लीडर' को जवाब (१६–२–१९०६) २००
२०७. ट्रान्सवालके भारतीय और अनुमतिपत्र (१७–२–१९०६) २०१
२०८. जोहानिसबर्गकी ट्रामें और भारतीय (१७–२–१९०६) २०२
२०९. पत्र : छगनलाल गांधीको (१७–२–१९०६) २०३
२१०. पत्र : छगनलाल गांधीको (१८–२–१९०६) २०४
२११. पत्र : छगनलाल गांधीको (१९–२–१९०६) २०५
२१२. पत्र : छगनलाल गांधीको (२१–२–१९०६) २०६
२१३. दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीय (२२–२–१९०६) २०७
२१४. पत्र : छगनलाल गांधीको (२२–२–१९०६) २०८
२१५. सम्राट्का भाषण (२४–२–१९०६) २०९
२१६. ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय (२४–२–१९०६) २१०
२१७. प्रतिबन्धकी लहर (२४–२–१९०६) २१२
२१८. अनुमतिपत्रका काठ (२४–२–१९०६) २१३
२१९. लन्दनकी मैट्रिक परीक्षामें तमिल (२४–२–१९०६) २१३
२२०. पत्र : दादाभाई नौरोजीको (२६–२–१९०६) २१४
२२१. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (२६–२–१९०६) २१५
२२२. अभिनन्दन-पत्र : अब्दुल कादिरको (२८–२–१९०६) २१६
२२३. भाषण : अब्दुल कादिरकी विदाईपर (२८–२–१९०६) २१७
२२४. राजवंशके सदस्योंका आगमन (३–३–१९०६) २१८
२२५. भारतीय और उत्तरदायी शासन (३–३–१९०६) २१८
२२६. केपके भारतीय व्यापारी (३–३–१९०६) २२०

२२७ मध्य दक्षिण आफ्रिकी रेल-प्रणालीमें भारतीय यात्री (३–३–१९०६) २२०
२२८. मिडिलबर्गसे गुजरनेवाले भारतीयोको सूचना (३–३–१९०६) २२१
२२९. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (३–३–१९०६) २२१
२३०. पत्र . छगनलाल गाधीको (४–३–१९०६) २२२
२३१ पत्र . छगनलाल गाधीको (५–३–१९०६) २२३
२३२. पत्र छगनलाल गांधीको (५–३–१९०६) २२४
२३३ पत्र ए० जे० बीनको (५–३–१९०६) २२५
२३४ पत्र ए० जे० बीनको (७–३–१९०६) २२६
२३५ पत्र . छगनलाल गाधीको (९–३–१९०६) २२७
२३६. पत्र : छगनलाल गांधीको (९–३–१९०६) २२८
२३७. पत्र · उपनिवेश-सचिवको (१०–३–१९०६ से पूर्व) २२९
२३८ "एशियाइयोकी बाढ़" (१०–३–१९०६) २३१
२३९. एक अन्तर (१०–३–१९०६) २३३
२४० लज्जाजनक (१०–३–१९०६) २३४
२४१. व्यक्ति-कर सम्बन्धी शिकायत (१०–३–१९०६) २३५
२४२ जर्मन पूर्वी आफ्रिका जहाज प्रणालीके भारतीय यात्री (१०–३–१९०६) २३५
२४३. नेटाल भारतीय काग्रेस (१०–३–१९०६) २३६
२४४. फ्राइहीडको नेटालसे अलग करनेके लिए आन्दोलन (१०–३–१९०६) २३७
२४५ श्री जॉन मॉर्ले और भारत (१०–३–१९०६) २३७
२४६. नेटालमें अधिवासी-पास आदिके नये नियम (१०–३–१९०६) २३८
२४७. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (१०–३–१९०६) २३९
२४८. "कानून-समर्थित डाका" (१७–३–१९०६) २४०
२४९. व्यक्ति-कर (१७–३–१९०६) २४२
२५०. भारतीय स्वयंसेवकोंकी आवश्यकता (१७–३–१९०६) २४३
२५१. अन्तर्राज्य वतनी महाविद्यालय (१७–३–१९०६) २४४
२५२. सर विलियम गैटेकर (१७–३–१९०६) २४५
२५३ आस्ट्रेलियामें बस्तीकी कमी (१७–३–१९०६) २४५
२५४. ट्रान्सवालके भारतीयोंपर निर्योग्यताएँ (१७–३–१९०६) २४६
२५५. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (१७–३–१९०६) २४८
२५६ पत्र : दादाभाई नौरोजीको (१९–३–१९०६) २४९
२५७ नेटालका शीघ्र दूकानबन्दी अधिनियम (२४–३–१९०६) २५०
२५८ रंगदार लोगोका प्रार्थनापत्र (२४–३–१९०६) २५१
२५९. 'कलर्ड पीपुल्' का प्रार्थनापत्र (२४–३–१९०६) २५३
२६०. हीडेलबर्गकी जमातको दो शब्द (२४–३–१९०६) २५४
२६१. केपमें चेचक (२४–३–१९०६) २५४
२६२. सिडनीमें प्लेग (२४–३–१९०६) २५५
२६३. साबुनके लिए प्रमाणपत्र (२६–३–१९०६) २५५
२६४ प्रार्थनापत्र · लॉर्ड एलगिनको (३०–३–१९०६) २५६
२६५. शीघ्र दूकानबन्दी अधिनियम (३१–३–१९०६) २५८

२६६. न्यायका दुर्ग (३१–३–१९०६) २५९
२६७. भारतीय स्वयंसेवक (३१–३–१९०६) २६१
२६८. ट्रान्सवालका संविधान (३१–३–१९०६) २६२
२६९. ट्रान्सवालकी खानोंके लिए भारतीय मजदूर (३१–३–१९०६) २६३
२७०. केपके भारतीय (३१–३–१९०६) २६३
२७१. कुमारी बिसिक्सकी मृत्यु (३१–३–१९०६) २६५
२७२. ट्रान्सवालमें अनुमतिपत्र सम्बन्धी जुल्म (३१–३–१९०६) २६५
२७३. लड़ाईके दावे (३१–३–१९०६) २६६
२७४. भारतीय मामलोंके लिए ब्रिटिश संसद-सदस्योंकी नई समिति (३१–३–१९०६) २६६
२७५. सर जॉर्ज बर्डवुडकी बहादुरी और एक क्लबका हल्कापन (३१–३–१९०६) २६६
२७६. कैडबरी बन्धुओंकी उदारता (३१–३–१९०६) २६७
२७७. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (३१–३–१९०६) २६७
२७८. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (३१–३–१९०६) २६९
२७९. पत्र : छगनलाल गांधीको (६–४–१९०६) २७०
२८०. पत्र : उपनिवेश-सचिवको (७–४–१९०६ से पूर्व) २७१
२८१. पत्र : 'लीडर' को (७–४–१९०६ से पूर्व) २७२
२८२. पत्र : छगनलाल गांधीको (७–४–१९०६) २७३
२८३. शरण-स्थल (७–४–१९०६) २७४
२८४. गिरमिटिया कर (७–४–१९०६) २७६
२८५. नेटालमें राजनीतिक उपद्रव (७–४–१९०६) २७६
२८६. ट्रान्सवालमें जमीनका कानून (७–४–१९०६) २७८
२८७. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (७–४–१९०६) २७९
२८८. उद्धरण : दादाभाई नौरोजीके नाम पत्रसे (१०–४–१९०६) २८१
२८९. पत्र : छगनलाल गांधीको (१०–४–१९०६) २८१
२९०. पत्र : छगनलाल गांधीको (११–४–१९०६) २८२
२९१. पत्र : विलियम वेडरबर्नको (१२–४–१९०६) २८३
२९२. पत्र : छगनलाल गांधीको (१३–४–१९०६) २८६
२९३. एक मुश्किल मामला (१४–४–१९०६) २८७
२९४. ट्रान्सवाल अनुमतिपत्र अध्यादेश (१४–४–१९०६) २८८
२९५. एक परवाना सम्बन्धी प्रार्थनापत्र (१४–४–१९०६) २८९
२९६. परवाना सम्बन्धी विज्ञप्ति (१४–४–१९०६) २९०
२९७. नेटालका विद्रोह (१४–४–१९०६) २९१
२९८. फेरीवालोंपर खतरा (१४–४–१९०६) २९२
२९९. लेडीस्मिथ परवाना-निकाय (२१–४–१९०६) २९३
३००. ट्रान्सवालके अनुमतिपत्र (२१–४–१९०६) २९४
३०१. डर्बन नगर-परिषद और भारतीय (२१–४–१९०६) २९५
३०२. म० द० आ० रेल-प्रणालीमें यात्राकी कठिनाइयाँ (२१–४–१९०६) २९६
३०३. वीसूवियसका ज्वालामुखी (२१–४–१९०६) २९६
३०४. विलायत जानेवाला भारतीय शिष्टमण्डल (२१–४–१९०६) २९७

३०५. जहाजसे नेटालमें उतरनेवाले भारतीयोंको सूचना (२१-४-१९०६) २९७
३०६. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (२१-४-१९०६) २९८
३०७. 'इंडियन ओपिनियन'के बारेमें (२३-४-१९०६) २९९
३०८. मुस्लिम युवक-मण्डलसे (२४-४-१९०६) ३००
३०९. भाषण : कांग्रेसकी सभामें (२४-४-१९०६) ३०१
३१०. पत्र : उपनिवेश-सचिवको (२५-४-१९०६) ३०२
३११. 'नेटाल मर्क्युरी'को भेंट (२६-४-१९०६ से पूर्व) ३०२
३१२. एक भारतीय प्रस्ताव (२८-४-१९०६) ३०३
३१३. नेटाल दूकान-कानून (२८-४-१९०६) ३०४
३१४. इस पत्रकी आर्थिक स्थिति (२८-४-१९०६) ३०५
३१५. दक्षिण आफ्रिकाके नौजवान भारतीयोंसे विनय (२८-४-१९०६) ३०५
३१६. मोम्बासाकी सभा (२८-४-१९०६) ३०६
३१७. नेटालका विद्रोह और नेटालको मदद (२८-४-१९०६) ३०७
३१८. चीनमें हलचल (२८-४-१९०६) ३०७
३१९. तम्बाकूसे हानियाँ (२८-४-१९०६) ३०८
३२०. सान्फ्रान्सिस्कोकी हालत (२८-४-१९०६) ३०८
३२१. जवाब : मुस्लिम युवक संघको (२८-४-१९०६) ३०९
३२२. पत्र : छगनलाल गांधीको (३०-४-१९०६) ३१०
३२३. नेटाल भूमि-विधेयक (५-५-१९०६) ३११
३२४. केपके विक्रेता-परवाने (५-५-१९०६) ३११
३२५. ब्रिटेन, तुर्की और मिस्र (५-५-१९०६) ३१२
३२६. हमारा कर्तव्य (५-५-१९०६) ३१२
३२७. मोम्बासाका उदाहरण (५-५-१९०६) ३१३
३२८. मजदूरोंका रहन-सहन (५-५-१९०६) ३१४
३२९. भारतीय व्यापार-संघ (५-५-१९०६) ३१४
३३०. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (५-५-१९०६) ३१५
३३१. पत्र : छगनलाल गांधीको (५-५-१९०६) ३१७
३३२. पत्र : छगनलाल गांधीको (६-५-१९०६) ३१८
३३३. पत्र : लॉर्ड मेल्बोर्नको (१२-५-१९०६ से पूर्व) ३१९
३३४. भारतीय स्वयंसेवा (१२-५-१९०६) ३२१
३३५. भारतीयोंके अनुमतिपत्र (१२-५-१९०६) ३२२
३३६. रंगदार लोगोंका प्रार्थनापत्र (१२-५-१९०६) ३२३
३३७. भारतको स्वराज्य (१२-५-१९०६) ३२४
३३८. चीनी वापस जा सकेंगे (१२-५-१९०६) ३२४
३३९. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (१४-५-१९०६) ३२५
३४०. पत्र : दादाभाई नौरोजीको (१६-५-१९०६) ३२६
३४१. एक एशियाई नीति (१९-५-१९०६) ३२७
३४२. दक्षिण आफ्रिकामें दूकानबन्दी आन्दोलन (१९-५-१९०६) ३२८
३४३. पाँचेफस्ट्रूम और क्लार्क्सडॉर्प (१९-५-१९०६) ३२९

३४४. हमारे अवगुण (१९–५–१९०६) ३२९
३४५. भारतकी स्थितिपर 'रैंड डेली मेल' के विचार (१९–५–१९०६) ३३१
३४६. बालकोंके अनुमतिपत्रके बारेमें सूचना (१९–५–१९०६) ३३१
३४७. चीनियोंको वापस भेजनेका सवाल (१९–५–१९०६) ३३२
३४८. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (१८–५–१९०६ के बाद) ३३२
३४९. पत्र : 'ट्रान्सवाल लीडर' को (२१–५–१९०६) ३३५
३५०. साम्राज्य-दिवस (२६–५–१९०६) ३३६
३५१. नेटाल गवर्नमेंट रेलवे : एक शिकायत (२६–५–१९०६) ३३७
३५२. नेटालका भूमि-विधेयक (२६–५–१९०६) ३३७
३५३. चीनी-जागृतिकी एक निशानी (२६–५–१९०६) ३३८
३५४. पीला भय (२६–५–१९०६) ३३८
३५५. अमेरिकाके धनाढ्य (२६–५–१९०६) ३३८
३५६. चीनकी स्थितिमें परिवर्तन (२६–५–१९०६) ३३९
३५७. भारतमें युवराजकी यात्रा (२६–५–१९०६) ३४०
३५८. बसूटोलैंडमें भारतीयोंका बहिष्कार (२६–५–१९०६) ३४०
३५९. चीनी मजदूर (२६–५–१९०६) ३४१
३६०. दूकान-बन्दीका कानून (२६–५–१९०६) ३४१
३६१. नेटालका चेचक-अधिनियम (२६–५–१९०६) ३४१
३६२. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (२६–५–१९०६) ३४२
३६३. पत्र : लक्ष्मीदास गांधीको (२७–५–१९०६) ३४४
३६४. वक्तव्य : संविधान समितिको (२९–५–१९०६) ३४५
३६५. भारतीय मुसाफिर (२–६–१९०६) ३५५
३६६. एक अनुमतिपत्र सम्बन्धी मामला (२–६–१९०६) ३५५
३६७. स्वर्गीय डॉक्टर सत्यनाथन (२–६–१९०६) ३५६
३६८. केपमें प्रवासी अधिनियम (२–६–१९०६) ३५६
३६९. सर हेनरी कॉटन और भारतीय (२–६–१९०६) ३५७
३७०. नेटालका विद्रोह (२–६–१९०६) ३५७
३७१. नया सानफ्रान्सिस्को (२–६–१९०६) ३५७
३७२. पत्र : उपनिवेश-सचिवको (२–६–१९०६) ३५८
३७३. पत्र : प्रधान चिकित्साधिकारीको (२–६–१९०६) ३५९
३७४. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (६–६–१९०६) ३६०
३७५ पत्र : दादाभाई नौरोजीको (८–६–१९०६) ३६१
३७६. भारतीय और वतनी विद्रोह (९–६–१९०६) ३६२
३७७. फौजियोंको मदद (९–६–१९०६) ३६३
३७८. नेटालमें भारतीयोंकी स्थिति (१३–६–१९०६ से पूर्व) ३६३
३७९. वफादारीका प्रतिज्ञापत्र (१६–६–१९०६) ३६६
३८०. लॉर्ड सेल्बोर्न (१६–६–१९०६) ३६७
३८१. श्री सीडन (१६–६–१९०६) ३६७
३८२. पत्र : टुकड़ी नायकको (१८–६–१९०६) ३६८

३८३. पत्र : गो० कृ० गोखलेको (२२–६–१९०६) ३७०
३८४. अनुमतिपत्रका एक महत्त्वपूर्ण मुकदमा (२३–६–१९०६) ३७०
३८५ भारतीय स्वयसेवक (२३–६–१९०६) ३७२
३८६. सुलेमान मगाका मुकदमा (२३–६–१९०६) ३७३
३८७. लेडीस्मिथके गिरमिटिया भारतीय (२३–६–१९०६) ३७३
३८८ भारतीय डोलीवाहक दल (२३–६–१९०६) ३७३
३८९. किरायेके बारेमे महत्त्वपूर्ण मुकदमा (२३–६–१९०६) ३७४
३९०. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (२३–६–१९०६) ३७४
३९१. भारतीय लड़ाईमे जाये या नही ? (३०–६–१९०६) ३७६
३९२. उद्धरण : दादाभाई नौरोजीके नाम पत्रसे (३०–६–१९०६) ३७७
३९३ भारतीय डोलीवाहक दल (१९–७–१९०६ से पूर्व) ३७८
३९४. भारतीय डोलीवाहक दल (१९–७–१९०६ से पूर्व) ३८०
३९५. भाषण · आहत-सहायक दलके सत्कारके अवसरपर (२०–७–१९०६) ३८३
३९६. वक्तव्य : हीरक जयन्ती पुस्तकालयके सम्बन्धमे (२३–७–१९०६) ३८४
३९७ ट्रान्सवालके अनुमतिपत्र (२८–७–१९०६) ३८४
३९८ पत्र : विलियम वेडरबर्नको (३०–७–१९०६) ३८५
३९९ पत्र . दादाभाई नौरोजीको (३०–७–१९०६) ३८५
४००. पत्र प्रधान चिकित्साधिकारीको (३१–७–१९०६) ३८६
४०१. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (४–८–१९०६ से पूर्व) ३८८
४०२ गुप्त न्याय (४–८–१९०६) ३८९
४०३ श्री वाइटका वसीयतनामा (४–८–१९०६) ३९०
४०४. मिस्र और नेटालकी तुलना (४–८–१९०६) ३९१
४०५. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (४–८–१९०६) ३९१
४०६ जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (४–८–१९०६ के बाद) ३९३
४०७ पत्र दादाभाई नौरोजीको (६–८–१९०६) ३९५
४०८ पत्र · 'रैंड डेली मेल'को (९–८–१९०६ से पूर्व) ३९७
४०९ "उचित और न्याय्य व्यवहार" (११–८–१९०६) ३९९
४१० भाषण हमीदिया इस्लामिया अजुमनमे (१२–८–१९०६) ४०२
४११. पत्र : दादाभाई नौरोजीको (१३–८–१९०६) ४०३
४१२. प्रार्थनापत्र : लॉर्ड एलगिनको (१३–८–१९०६) ४०४
४१३ पत्र : हाजी इस्माइल हाजी अबूबकर झवेरीको (१४–८–१९०६) ४०५
४१४ भारत भारतीयोके लिए (१८–८–१९०६) ४०६
४१५. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (१८–८–१९०६) ४०७
४१६ स्वर्गीय उमेशचन्द्र बनर्जी (२५–८–१९०६) ४०८
४१७ फर्ककी हिमायत (२५–८–१९०६) ४०९
४१८. हिन्दुओके श्मशानकी स्थिति (२५–८–१९०६) ४१०
४१९ ईरानका मामला (२५–८–१९०६) ४१०
४२० पत्र उपनिवेश-सचिवको (२५–८–१९०६) ४११
४२१ पितामह चिरजीवी हों ! (२७–८–१९०६ से पूर्व) ४१३

४२२. घृणित! (२७–८–१९०६ से पूर्व) ४१४
४२३. उपनिवेशी भारतीय अंकित कर लें! (२७–८–१९०६ से पूर्व) ४१५
४२४. केप परवाना अधिनियम (२७–८–१९०६ से पूर्व) ४१६
४२५. पत्र : छगनलाल गांधीको (२७–८–१९०६) ४१७
४२६. तार : 'इंडिया' को (२८–८–१९०६) ४१८
४२७. ज़ापानके वीर कोडामा (१–९–१९०६) ४१८
४२८. पत्र : छगनलाल गांधीको (१–९–१९०६) ४१९
४२९. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (३–९–१९०६) ४२०
४३०. बधाई : दादाभाई नौरोजीको (४–९–१९०६) ४२१
४३१. अपराध (८–९–१९०६) ४२२
४३२. पितामह (८–९–१९०६) ४२३
४३३. रूस और भारत (८–९–१९०६) ४२४
४३४. ट्रान्सवालमें नकली अनुमतिपत्र (८–९–१९०६) ४२५
४३५. हिन्दू-श्मशान (८–९–१९०६) ४२६
४३६. पत्र : उपनिवेश-सचिवको (८–९–१९०६) ४२६
४३७. तार : उपनिवेश-मंत्रीको (८–९–१९०६) ४२७
४३८. तार : भारतके वाइसरायको (८–९–१९०६) ४२७
४३९. भाषण : खूनी कानूनपर (९–९–१९०६ से पूर्व) ४२८
४४०. भाषण : हमीदिया इस्लामिया अंजुमनमें (९–९–१९०६) ४२९
४४१. सार्वजनिक सभा (११–९–१९०६) ४३०
४४२. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (११–९–१९०६) ४३५
४४३. पत्र : विधान-परिषदके अध्यक्षको (११–९–१९०६) ४३८
४४४. पत्र : ट्रान्सवालके लेफ्टिनेंट गवर्नरको (१२–९–१९०६) ४३९
४४५. जवाब : 'रैंड डेली मेल' को (१२–९–१९०६) ४३९
४४६. पत्र : 'स्टार' को (१४–९–१९०६ से पूर्व) ४४०
४४७. ट्रान्सवालका नया विधेयक (१५–९–१९०६) ४४२
४४८. वक्तव्य : एशियाई अध्यादेशपर (१७–९–१९०६ से पूर्व) ४४२
४४९. पत्र : अखबारोंको (१९–९–१९०६) ४४४
४५०. पत्र : डॉ० एडवर्ड नंडीको (२०–९–१९०६) ४४५
४५१. पत्र : 'लीडर' को (२१–९–१९०६) ४४६
४५२. स्वर्गीय न्यायमूर्ति बदरुद्दीन तैयबजी (२२–९–१९०६) ४४७
४५३. ट्रान्सवालके भारतीयों द्वारा विरोध (२२–९–१९०६) ४४८
४५४. ट्रान्सवाल अनुमतिपत्र अध्यादेश (२२–९–१९०६) ४४९
४५५. ट्रान्सवालमें भारतीय स्त्रियोंकी मुसीबतें (२२–९–१९०६) ४५०
४५६. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (२२–९–१९०६) ४५१
४५७. पत्र : 'लीडर' को (२२–९–१९०६) ४५६
४५८. पत्र : प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिकारीको (२२–९–१९०६) ४५७
४५९. ज़ोहानिसबर्गकी चिट्ठी (२५–९–१९०६) ४५८
४६०. पत्र : डी० सी० मैल्कमको (२६–९–१९०६) ४६०

४६१. पत्र : डॉ० एडवर्ड नंडीको (२६–९–१९०६) ४६०
४६२. पत्र : 'लीडर' को (२७–९–१९०६) ४६१
४६३. पत्र : डॉ० एडवर्ड नंडीको (२७–९–१९०६) ४६१
४६४. कसौटीपर (२९–९–१९०६) ४६२
४६५. पूनिया काण्ड (२९–९–१९०६) ४६३
४६६. ट्रान्सवाल अनुमतिपत्र अध्यादेश (२९–९–१९०६) ४६५
४६७. डेलागोआ-बे के भारतीय (२९–९–१९०६) ४६६
४६८. चेतावनी (२९–९–१९०६) ४६६
४६९. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी (२९–९–१९०६) ४६७
४७०. ट्रान्सवालका कानून (२९–९–१९०६) ४६८
४७१. तार : ट्रान्सवाल गवर्नरको (३०–९–१९०६) ४७१
४७२. भाषण : विदाई सभामें (३०–९–१९०६) ४७२
४७३. हाजी वजीर अली (६–१०–१९०६) ४७२
४७४. हाँगकाँगमें ईश्वरीय प्रकोप (६–१०–१९०६) ४७३
४७५. ट्रान्सवालके भारतीयोंका कर्तव्य (६–१०–१९०६) ४७४
४७६. तार : उपनिवेश-मन्त्रीको (८–१०–१९०६) ४७६
४७७. प्रार्थनापत्र : लॉर्ड एलगिन को (८–१०–१९०६) ४७६
४७८. शिष्टमण्डलकी यात्रा – १ (११–१०–१९०६ से पूर्व) ४७८
४७९. शिष्टमण्डलकी यात्रा – २ (११–१०–१९०६) ४८०
४८०. नये नगरपालिका-कानूनके सम्बन्धमें दो शब्द (१३–१०–१९०६) ४८३
४८१. दावानल (१३–१०–१९०६) ४८३
४८२. पत्र : रामदास गांधीको (२०–१०–१९०६ से पूर्व) ४८४
४८३. शिष्टमण्डल की यात्रा – ३ (२०–१०–१९०६ से पूर्व) ४८५
४८४. कुछ प्रश्न (२०–१०–१९०६) ४८६
४८५. आशाकी किरण (२०–१०–१९०६) ४८८
४८६. टाइलर, हैम्डन और बनियन (२०–१०–१९०६) ४८८
सामग्रीके साधनसूत्र ४९०
तारीखवार जीवन-वृत्तान्त ४९१
सांकेतिका ५००

चित्र-सूची

गांधीजी ... मुखचित्र

पत्र : छगनलाल गांधीको ... ३२

पत्र : कुमारी बिसिक्सको ... ३३

घरका नक्शा ... २२५

भारतीय डोलीवाहक दल ... ३७६

सार्जेंट मेजर गांधी ... ३७७

जहाज 'आर्मडिल कासिल' से ... ४८०

१. नेटालके विधेयक

नेटाल सरकारके २१ जूनके खास 'गज़ट'मे चार विधेयक प्रकाशित किये गये हैं। वे सभी थोड़े या बहुत आपत्तिजनक हैं। पहला विधेयक उन कानूनोमें संशोधन करनेके लिए रखा गया है जो कि जूलूलैंड प्रान्तमें शराबके परवाने और दूसरे परवानोसे सम्बन्धित है। यह विधेयक अधिकतर ब्रिटिश भारतीयोंको लक्ष्यमें रखकर बनाया गया है। इसके अनुसार प्रत्येक फेरीवालेको प्रतिमास परवाना लेना पड़ेगा; और यह उन फेरीवालोंपर भी लागू होगा जो आयातित माल नहीं बेचते, यद्यपि ऐसा माल बेचनेके परवानेका कोई शुल्क नहीं देना पड़ता। जो फेरीवाला आयातित माल बेचनेका परवाना लेगा उसे प्रतिमास १ पौंड शुल्क देना पड़ेगा। इसके अतिरिक्त १८९७ के कानून १८ के अनुसार परवाने तबतक नही दिये जायेंगे जबतक कि उपनिवेश-सचिव उनकी मंजूरी न दे दे। इस सम्बन्धमे उनका निर्णय सर्वथा अन्तिम होगा, और "उनके निर्णयके खिलाफ किसी भी अदालतमें या उच्चाधिकारीके सामने अपील नही की जा सकेगी।"

दूसरा विधेयक भी ब्रिटिश भारतीयोसे ही सम्बन्वित है। इसके द्वारा अनधिकृत देहाती ज़मीनोपर कर लगाया जायेगा। यह उसी विधेयककी नकल है जिसपर हम पहले विचार कर चुके हैं[1]। इसके अनुसार वह ज़मीन जिसपर स्वयं उसका मालिक या कोई यूरोपीय, प्रत्येक वर्षमे जनवरीसे दिसम्बर तक के बारह महीनोंमें से कमसे-कम दो महीने लगातार नही रहा है, अनधिकृत मानी जायेगी।

तीसरे विधेयकका उद्देश्य निजी बस्तियोमें भी परवानोकी व्यवस्था करना है। इसमे 'निजी बस्ती' की व्याख्या की गई है: "किसी निजी जमीनपर अथवा बिकती हुई सरकारी जमीनपर बनी कितनी भी झोपड़ियाँ या मकान जिनमे वतनी या एशियाई रहते हों।" इस प्रकार जमीनका प्रत्येक टुकड़ा, जिसपर भारतीयोंका अधिकार होगा, कलमकी एक रगड़से 'निजी बस्ती' मे बदल दिया जायेगा, और उस स्थानके मालिकको एक परवाना लेना पड़ेगा और उसके लिए १० शिलिंग प्रति झोंपड़ी या मकान प्रतिवर्ष देने होगे। जिन झोंपड़ियोंमे एशियाई या वतनी कर्मचारी रहते होंगे उनका कोई परवाना-शुल्क नही लिया जायेगा। इसका शुद्ध परिणाम यह होगा कि ऐसे प्रत्येक कमरेपर, जो खुद मालिक या मालिकके नौकरके अलावा, किसी अन्य भारतीयके अधिकारमें होगा, १० शिलिंग सालाना कर लग जायेगा — फिर उस अपमानका तो कुछ कहना ही नही जो कि एशियाइयोके निवास-स्थानोंको 'बस्ती' के नामसे पुकारनेमें निहित है।

चौथा विधेयक आबाद रिहायशी मकानोंपर कर लगानेके सम्बन्धमें है। यह सबपर लागू होगा। शायद विधेयकके निर्माताओंका ध्यान विधेयकका मसविदा बनाते समय ब्रिटिश भारतीयो-पर बिलकुल नही था; फिर भी, अन्तमें इसका प्रभाव अन्य किसी जातिकी अपेक्षा उनपर कही अधिक पड़ेगा। इसमें, ७५० पौंडसे कम मूल्यके प्रत्येक मकानपर १ पौंड १० शिलिंग कर लगानेका प्रस्ताव है। यह कर ४,००० पौंडसे अधिक कीमतके रिहायशी मकानोंपर बढ़कर २० पौंड हो जाता है। और 'रिहायशी मकान' का अर्थ है ऐसा कोई भी मकान या मकानका भाग जो रहनेके काम आता हो — इसमे घरेलू नौकर-चाकरोके कमरे, अस्तबल, कोठियोके बाहर अहातोंमे बने कमरे, और अन्य वे सब तामीरात शामिल हैं जो रिहायशी

१. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ४७०।

मकानके साथ लगी हों, बशर्ते कि वे रिहायशके काम आती हों। यह कर मकानोंके मालिकोंसे नहीं, उनमें जो रहते है उनसे वसूल किया जायेगा। इसलिए उसमें रहनेवाले व्यक्तिको भी १ पौंड १० शिलिंग वार्षिक कर देना पड़ेगा; चाहे किसी कमरेकी कीमत केवल ५० पौंड ही क्यों न हो। बहुत-से कमरे केवल लकड़ी और लोहेके बने है, और उनका किराया शायद केवल पाँच शिलिंग मासिक दिया जाता है। इस किरायेमें भी सरकार आधा क्राउन [ढाई शिलिंग] मासिककी वृद्धि करना चाहती है। और कुछ नहीं तो, उसे छूटकी एक सीमा बाँध देनी थी और उससे नीचे कोई कर नहीं लगाना था। वर्तमान रूपमें विधेयकपर सब प्रकारकी गम्भीर आपत्तियाँ की जा सकती है। ये चारों विधेयक नये मन्त्रिमण्डलकी[1] कार्रवाइयोंका एक नमूना है। हम यह कहनेके लिए विवश है कि इनमेंसे प्रत्येकपर अनुभवहीनताकी छाप दिखाई दे रही है। सरकार इस उपनिवेशको आर्थिक कठिनाइयोंसे उबारनेके जो प्रयत्न कर रही है उनमे प्रत्येक सच्चे नागरिकको उसके साथ सहानुभूति है, परन्तु उसने आय बढ़ानेके जो साधन अपनाये है उनका उदाहरण युद्धकालको छोड़कर आजके जमानेमे प्राय: कहीं नही मिलता। ये चोखे आर्थिक सिद्धान्तोके भी विरुद्ध है। हमें आशा है कि इस उपनिवेशकी नेकनामी और यशकी रक्षाकी खातिर विधानसभा और विधान-परिषद इन विधेयकोंको एकदम अस्वीकार कर देगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–७–१९०५

२. श्री ब्रॉड्रिक[2] और ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय

सर मंचरजीके[3] प्रश्नपर श्री ब्रॉड्रिकने ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थितिके विषयमें एक बड़ा महत्त्वपूर्ण उत्तर दिया है। बेथनल-ग्रीनके सदस्यने जोर दिया कि भारतीय समस्याका कुछ-न-कुछ हल निकाला जाना चाहिए और श्री ब्रॉड्रिकने जोर देकर कहा कि युद्धसे पहले भारतीय जिन अधिकारोंका उपभोग करते थे उनमें कमी नही की जायेगी; और, ट्रान्सवालको जितना भी हो सकता है उतना दबाया जा रहा है; परन्तु कोई स्वशासित उपनिवेश जिन लोगोंका अपने यहाँ प्रवेश करना अवांछनीय मानता है उनके सम्बन्धमें उसकी कार्रवाइयोंमें दखल देना मुश्किल है। श्री ब्रॉड्रिककी पहली बातका एकमात्र अर्थ यह हो सकता है कि साम्राज्य सरकारका इरादा यह ध्यान रखनेका है कि भारतीयोंके उन अधिकारोंमें कमी नही होने दी जाये जो उन्हे 'बोअर शासन' के समय प्राप्त थे। परन्तु उस इरादेपर इस समय अमल नही किया जा रहा है। केवल एक उदाहरण ले लें। पहले ब्रिटिश भारतीयोंके प्रवेशपर कोई पाबन्दी नही थी। पर अब — जैसा कि इन स्तम्भोमे बार-बार दिखाया जा चुका है — किसी नये भारतीयको तो ट्रान्सवालमें प्रविष्ट होने ही नही दिया जाता, पुराने निवासियोंको भी केवल थोड़ी संख्यामें आने दिया जाता है, और वह भी थकाऊ, असुविधाजनक और खर्चीले जाब्तोमे से गुजरनेके

१. जिसके प्रधान सी० जे० स्मिथ थे।

२. जॉन ब्रॉड्रिक, भारतमन्त्री (१९०३–५)।

३. सर मंचरजी मेरवानजी भावनगरी (१८५१–१९३३): भारतीय बैरिस्टर, जो इंग्लैंडके निवासी बन गये थे; ब्रिटिश संसद और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी लन्दन-स्थित ब्रिटिश समितिके सदस्य। देखिए खण्ड २, पृष्ठ ४२०।

बाद। साम्राज्य-सरकार ट्रान्सवालको दबा रही है, यह हम जानते है और उसकी सराहना भी करते है। परन्तु हमें इसमें सन्देह है कि यह दबाव, परिस्थितिकी गम्भीरताके अनुसार, पर्याप्त है। माननीय मन्त्रीकी तीसरी बातसे अनेक सन्देह उत्पन्न होते हैं। उससे उनकी असहाय अवस्थाका पता चलता है। ट्रान्सवाल अभीतक स्वशासित उपनिवेश नही बना[1]; परन्तु छिपे हुए अर्थसे, श्री ब्रॉड्रिकने उक्त बात वैसा ही मानकर कही है। श्री ब्रॉड्रिकने उन वादोसे इनकार नही किया जिनकी चर्चा सर मंचरजीने की थी। और न इस बातसे इनकार किया जा सकता है कि जब ये वादे किये गये थे तब जिम्मेदार मन्त्री भलीभाँति जानते थे कि आगे क्या होनेवाला है। वे जानते थे कि युद्धका एकमात्र परिणाम क्या होगा और शान्तिकी घोषणाके पश्चात् ट्रान्सवालको स्वशासन देना पड़ेगा। इसलिए इसका मतलब यह निकला कि ट्रान्सवालके यूरोपीयोंको खुश करनेकी उत्सुकतामे, अब ब्रिटिश सरकार अपने वादोसे मुकर जानेके लिए भी तैयार हो गई है। यहाँ यह प्रश्न करना सर्वथा संगत होगा कि युद्ध समाप्त होते ही, भारतीयोके साथ किये गये वादे तुरन्त पूरे क्यों नही किये गये। और अब भी, सर विलियम वेडरबर्नके[2] सुझावके अनुसार, ट्रान्सवालको वास्तविक स्वशासन मिलनेसे पहले ही, ब्रिटिश सरकार ब्रिटिश भारतीयोंपर से पुरानी पाबन्दियाँ क्यों नही हटा देती? वह ऐसा करके इस कानूनको उलट देनेकी बदनामी और वैसा करनेकी आवश्यकता सिद्ध करनेका बोझ, उस परिषदके सिरपर क्यो नही डाल देती जो पूर्ण स्वशासन मिल जानेपर चुनी जायेगी?

जिस समय श्री ब्रॉड्रिकने उपर्युक्त बाते कही थी उसी समय उन्होने, एक अन्य स्थानपर, परन्तु भारत-मन्त्रीकी हैसियतसे ही, अपने श्रोताओंको बताया था कि उनपर, ब्रिटेनके बाद, पहला दावा भारतका ही है, क्योकि भारतके साथ ब्रिटेनका व्यापार उसकी अपेक्षा ज्यादा है जितना कैनेडा, आस्ट्रेलिया और दक्षिण आफ्रिकाके साथ मिलकर होता है। यदि युद्धकी समाप्ति-पर ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोके हितोपर इसी भावनासे विचार किया जाता तो लॉर्ड मिलनर[3] ट्रान्सवालके भारतीय-विरोधी कानूनोंपर भी ठीक उसी प्रकार बिना झिझके कलम फेर देते जिस प्रकार उन्होने ब्रिटिश सिद्धान्तोसे असंगत अन्य बीसियो अध्यादेशोंपर फेरी है। यह मामला ऐसा नही कि इधर उनका ध्यान ही न गया हो, क्योकि देशमें आवागमन आरम्भ होते ही भारतीयोने लॉर्ड मिलनरसे भारतीय-विरोधी कानून रद कर देनेकी प्रार्थना की थी। यदि वे यह कदम उठाते तो आज जो भारत-विरोधी आन्दोलन चल रहा है वह शायद सुनाई भी न देता। और हमारी सम्मतिमें श्री ब्रॉड्रिककी कल्पनापर अमल भी किया जा सकता है। अभी कोई बहुत देर नही हुई है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–७–१९०५

१. स्वशासन १९०६ में मिला।

२. भारतीय नागरिक सेवाके विशिष्ट सदस्य; इनका पीछे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेससे सम्बन्ध रहा। देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३९६।

३. सर अल्फ्रेड मिलनर, दक्षिण आफ्रिकाके उच्चायुक्त, १८९७–१९०५; केप उपनिवेशके गवर्नर, १८९७–१९०१ तथा ट्रान्सवालके १९०१–५।

३. लॉर्ड सेल्बोर्न[1] और स्वशासन

श्री ब्रॉड्रिकके वक्तव्यके[2] बारेमें हम जो कुछ कह चुके हैं, उसे देखते हुए ऑरेंज रिवर कालोनीमें लॉर्ड सेल्बोर्न द्वारा एक शिष्टमण्डलको, जो पिछले हफ्ते उनसे मिला था, दिये गये जवाबकी मीमासा करना दिलचस्पीकी बात होगी। शिष्टमण्डल उनसे उक्त उपनिवेशको स्वशासन देनेकी प्रार्थना करनेके लिए गया था। परमश्रेष्ठने परिभाषा करते हुए कहा :

> **ब्रिटिश साम्राज्यमें उत्तरदायी शासनका अर्थ शुद्ध स्थानीय मामलोंमें पूर्ण स्वतन्त्रता होता है। जबतक यह स्वतन्त्रता ब्रिटिश साम्राज्यके आम मेलजोलमें दखल नहीं देती अथवा उन सिद्धान्तोंको जिनपर उसकी नींव है, अथवा साम्राज्यकी किन्हीं अन्य भावनाओंको जो उसे एक-साथ बाँधती हैं, भंग नहीं करती, तबतक उसका अर्थ पूर्ण स्थानीय स्वराज्य है।**

यह परिभाषा सम्राटके एक विशिष्ट प्रतिनिधिके योग्य है और यह साम्राज्यके उपनिवेश-मन्त्रियोंके द्वारा बार-बार की गई घोषणाओंसे मेल खाती है। तब प्रश्न उठता है कि क्या ब्रिटिश भारतीयों-पर ट्रान्सवालमें जो निर्योग्यताएँ लादी गई हैं, वे साम्राज्यके आम मेलजोलमें दखल नहीं देतीं, अथवा उन साम्राज्यीय भावनाओंको जो उसे एकताके सूत्रमें बाँधती हैं, भंग नही करतीं? प्रश्नका उत्तर स्पष्ट है। हम आशा करते हैं कि जब परमश्रेष्ठके सामने भारतीय प्रश्नोंपर विचार करनेका अवसर आये, तब वे अपने द्वारा दी गई इस परिभाषाको लागू करेंगे और आजकी विसगतिको दूर करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–७–१९०५

४. सरकारी नौकरियोंमें भेद-भाव

लॉर्ड कर्जनने[3] बहुत बार कहा है कि वे नौकरियाँ देनेमें गोरों और कालोंके बीच कोई भेद नही करते। उन्होंने एक बार बड़े आवेशसे कहा था कि नौकरियाँ पानेके सम्बन्धमे ऐसी कोई बात नही जिसके बारेमें भारतीय शिकायत कर सकें। और यह साबित करनेके लिए कि भारतीयोंको बहुत-सी नौकरियाँ दी जा रही हैं, उन्होंने एक ब्योरा भी प्रकाशित कराया था। किन्तु वह ब्योरा बनावटी था, क्योंकि उसमें ७५ रुपये वेतन पानेवाले अनेक भारतीय शामिल कर लिये गये थे। माननीय गोपालकृष्ण गोखलेने[4] भी उनके इस झूठे दावेका भंडाफोड[5] कर दिया है।

१. दक्षिण आफ्रिकामें उच्चायुक्त तथा ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर उपनिवेशके गवर्नर, १९०५–१०।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

३. भारतके वाइसराय और गवर्नर-जनरल, १८९९–१९०५।

४. गोपालकृष्ण गोखले (१८६६–१९१५) भारतके एक प्रतिष्ठित नेता और राजनीतिज्ञ। १९०५ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके बनारस अधिवेशनके अध्यक्ष। देखिए खण्ड २, पृष्ठ ४१७।

५. शाही विधान परिषदमें दिये अपने एक बजट सम्बन्धी भाषणमें।

उन्होंने यह बता दिया है कि बड़े-बड़े वेतन पानेवाले लोग प्रायः सभी यूरोपीय हैं; और जो नई जगहें निकली हैं, वे भी सब यूरोपीयोंको ही मिली है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–७–१९०५

५. मैक्सिम गोर्की[1]

रूसके लोगों और हमारे देशके लोगोंके बीच एक हदतक तुलना की जा सकती है। जैसे हम गरीब हैं वैसे ही रूसकी जनता भी गरीब है। जैसे हमें राजकाज चलानेका कुछ भी अधिकार नही है और चुपचाप कर चुकाने पड़ते हैं, उसी प्रकार रूसके लोगोंको भी करना पड़ता है। रूसमें ऐसे कष्टोंको देखकर कुछ अत्यन्त वीर पुरुष सामने आ जाते है। कुछ समय पहले रूसमे विद्रोह हुआ। उसमें जिन्होने मुख्य भाग लिया उनमें मैक्सिम गोर्की भी थे। वे बहुत गरीबीमे पले थे। शुरूमें वे एक मोचीके यहाँ नौकरीपर रहे। वहाँसे उनको छुट्टी दे दी गई। फिर उन्होंने कुछ समय तक सिपाहीगीरी की। उस समय उन्हें अध्ययन करनेकी तीव्र अभिलाषा हुई। लेकिन गरीब होनेके कारण किसी अच्छी पाठशालामें प्रवेश नही मिल सका। उसके बाद उन्होंने एक वकीलके यहाँ नौकरी की और अन्तमें एक नानबाईके यहाँ फेरीदारका काम किया। इस बीच सारे समय उन्होने निजी परिश्रमसे शिक्षा प्राप्त करनेका कार्य जारी रखा। उन्होने १८९२ मे अपनी पहली पुस्तक लिखी जो इतनी रोचक थी कि उससे उनकी ख्याति तुरन्त फैल गई। उसके बाद उन्होने बहुत-सी रचनाएँ की हैं। इन सबके पीछे उनका एक ही उद्देश्य था कि लोगोको उनके ऊपर होनेवाले अत्याचारोंके खिलाफ उकसाया जाये, सत्ताधीशोंके कान खडे किये जायें और यथासम्भव जनताकी सेवा की जाये। वे पैसा कमानेकी कुछ भी परवाह न करके ऐसे तीखे लेख लिखते है कि उनपर अधिकारियोंकी कड़ी निगाह रहती है। वे लोकसेवा करते हुए जेल भी हो आये है, किन्तु इसे अपना सम्मान समझते हैं। ऐसा कहा जाता है कि यूरोपमें लोगोंके हकोंकी रक्षा करनेवाला मैक्सिम गोर्कीके समान कोई दूसरा लेखक नही है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–७–१९०५

१. अलेक्सी मैक्सीमोविच पीशकोव गोर्की (१८६८–१९३६): रूसी उपन्यासकार और लेखक।

६. सिंगापुरमें चीनी और भारतीय

सिंगापुर जितना हमारे नजदीक है उतना ही चीनियोंके नजदीक भी कहा जा सकता है। उस मुल्कमें चीनियोंको जितनी सुविधाएँ हैं उतनी ही भारतीयोंको भी हैं। फिर भी हम लोग सिंगापुरमें चीनियोंका मुकाबला नहीं कर पाते। बहुत-से चीनी सरकारी नौकरीमें हैं, सरकारी निर्माण विभागमें हैं, ठेकेदार हैं, और बहुत सम्पन्न हैं। कुछ तो मोटरें भी रखते हैं। सन् १९०० में २,००,९४७, सन् १९०१ में १,७८,७७८, सन् १९०२ में २,०७,१५६ और सन् १९०३ में २,२०,३२१ चीनी सिंगापुरके इलाकेमें गये; जब कि भारतीय हर साल सिर्फ २१,००० के हिसाबसे ही गये। इन भारतीयोंमें अधिकतर मद्रासी थे। इस उदाहरणसे ज्ञात होता है कि हम लोगोंको बाहरके देशोंमें जाकर अभी कितना काम करना बाकी है। हमारे लिए यह बहुत शर्मकी बात है कि हम लोग चीनियोंकी बराबरी नहीं कर सकते।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–७–१९०५

७. पत्र: उच्चायुक्तके सचिवको

जोहानिसबर्ग
जुलाई १, १९०५

सेवामें
निजी सचिव
परमश्रेष्ठ उच्चायुक्त
जोहानिसबर्ग

महोदय,

रंगदार व्यक्तियोंके बारेमें ऑरेंज रिवर कालोनीके परमश्रेष्ठ लेफ्टिनेंट गवर्नर द्वारा समय-समयपर स्वीकृत उपधाराओंके सम्बन्धमें उक्त कालोनीकी सरकार और मेरे संघके बीचमें जो पत्रव्यवहार[1] हुआ है, उसकी प्रतियाँ मैं इस पत्रके साथ संलग्न कर रहा हूँ। मेरा संघ परमश्रेष्ठका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करनेकी धृष्टता करता है कि मेरे पत्रमें किसी नये विधानकी माँग नहीं की गई है। मेरे संघकी नम्र रायमें लेफ्टिनेंट गवर्नरको जो अधिकार प्राप्त हैं उनके बलपर वे ऐसी उपधाराओंका निषेध कर सकते हैं जो ब्रिटिश परम्पराओं और अधिकार-पत्र (लैटर्स पेटेंट)के विरोधमें हों। मेरे संघको सूचित किया गया है कि नगरपालिकाओंको जो कानून बनानेकी आज्ञा मिली है उसे यदि विधान-परिषद स्वीकार कर ले तो फिर महामहिम सम्राटकी स्वीकृति उसपर प्राप्त करनी होगी। मेरे संघका यह खयाल भी है कि स्थानापन्न उपनिवेश-सचिव द्वारा लिखित पत्रका अन्तिम अनुच्छेद मेरे संघ द्वारा की गई शिकायतका औचित्य

१. देखिए "पत्र: उपनिवेश-सचिवको", खण्ड ४, पृष्ठ ४३३-४। सरकारने इसके उत्तरमें सूचित किया कि उपनिवेशमें नगरपालिकाओंके अधिकार सीमित करनेके उद्देश्यसे कानून बनानेका कोई विचार नहीं है।

पूरी तरहसे सिद्ध करता है; क्योंकि यदि ब्रिटिश भारतीयोंकी अत्यल्प संख्याके कारण उठाया गया प्रश्न कोई व्यावहारिक महत्ता नहीं रखता, तो मेरे पत्रमें उल्लिखित ढंगका विधान स्वीकृत करनेका भी कोई व्यावहारिक अर्थ नहीं हो सकता। वह उपनिवेशके लिए किसी प्रकार उपयोगी न होकर भी निरर्थक रूपसे दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीय समाजकी भावनाओंको चोट पहुँचाता है और इसलिए मेरा संघ ऐसी आशा करता है कि परमश्रेष्ठ उन उपधाराओंकी, जो ऑरेंज रिवर कालोनीकी विभिन्न नगरपालिकाओंमें पास की गई है तथा स्वीकृत की गई है, उदारतापूर्वक जाँच कराने और, राहत देनेकी कृपा करेंगे।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ८–७–१९०५

८. पत्र : कैखुसरू व अब्दुल हकको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई ३, १९०५

भाई श्री ५ कैखुसरू व अब्दुल हक,

आपका पत्र मिला। मुझे आपके उत्तरसे[1] सन्तोष है। आप लिखनेवालेका नाम जाननेकी इच्छा करते है, यह ठीक नहीं है। मैंने आपको लिखा है कि आपको उसे जाननेकी कोई जरूरत नहीं हैं। आपके लिए सचेत रहनेकी भी कोई बात नहीं है। यह सब भूल जाना है। जिसे अपना कर्तव्य पालन करना है उसे दूसरे जो भी कहें उससे निर्भय रहना चाहिए।

खातेमें मेरे नामे जो पैसा निकलता है उसका हिसाब मुझे भेजें। जो पैसा छापाखानेके लिए दिया गया है वह अभी मैंने जमा नहीं किया।

मो० क० गांधीके सलाम

श्री जालभाई सोराबजी ब्रदर्स
११० फील्ड स्ट्रीट
डर्बन

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे; पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ५११

१. यह गांधीजीके २७ जून १९०५ के पत्रका उत्तर था। देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ५१२।

९. ऑरेंज रिवर उपनिवेशके कानून

इस अंकमें हम ऑरेंज रिवर उपनिवेशके ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थितिके विषयमें दो महत्त्वपूर्ण पत्र प्रकाशित कर रहे हैं। पहला पत्र उक्त उपनिवेशके उपनिवेश-सचिवका वह संक्षिप्त और विलम्बित उत्तर है, जोकि उन्होंने जोहानिसबर्गके ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा एशियाई-विरोधी नगरपालिका-कानूनोंके विरुद्ध की गई आपत्तिपर भेजा है। ये कानून समय-समयपर ऑरेंज रिवर उपनिवेशकी नगरपालिकाओंने बनाये हैं और लेफ्टिनेट गवर्नरने स्वीकृत किये हैं। दूसरा पत्र आदिवासी-रक्षक सभाके मंत्री श्री एच० आर० फॉक्सबोर्नका है जो उन्होंने श्री लिटिलटनके[1] नाम लिखा है। ये दोनों एक-दूसरेसे बिलकुल उलटे हैं। उपनिवेश-सचिवने लिखा है कि सरकारका इरादा ऐसा कोई कानून बनानेका नहीं है जिससे कि ऑरेंज रिवर उपनिवेशकी नगरपालिकाओंके वर्तमान स्थानिक शासन-अधिकारोंमें किसी प्रकारकी कमी हो। हमारी सम्मतिमें यह इस प्रश्नकी सचाई स्वीकार कर लेना है। ब्रिटिश भारतीय संघने इन अधिकारोंको कम करनेकी माँग कभी नहीं की, क्योंकि लेफ्टिनेंट गवर्नरको पहले ही निषेधाधिकार प्राप्त है। जबतक लेफ्टिनेंट गवर्नर मंजूरी न दें तबतक कोई भी उपनियम लागू नही होता, और ऑरेंज रिवर उपनिवेश तक में हमें ऐसे किसी कानूनका पता नहीं जो लेफ्टिनेंट गवर्नरको किसी नगर-पालिकाके बनाये हुए उपनियमोंपर मंजूरी देनेके लिए मजबूर करता हो। इसके विपरीत, परम-श्रेष्ठ लेफ्टिनेंट गवर्नरको हिदायतें दी गई हैं कि वे किसी भी रंगभेदकारी कानूनपर मंजूरी न दें। और यह सभी मानेंगे कि जब वे सारे उपनिवेशके कानूनोंके विषयमें ऐसा नही कर सकते, तब वे उपनिवेशकी किसी खास नगरपालिकामें लागू कानूनोंके विषयमे भी ऐसा नही कर सकते। उपनिवेश-सचिवने जो कारण बताया है वह व्यंग्यात्मक है। उन्होंने लिखा है, "चूँकि उपनिवेशमें ब्रिटिश भारतीयोंकी संख्या इतनी थोड़ी है, इसलिए मेरा खयाल है कि, आप भी मानेंगे कि आपके उठाये प्रश्नका 'व्यावहारिक' महत्त्व बहुत नही है।" 'व्यावहारिक' शब्दके नीचे, पत्रमें रेखा खिची हुई है। इसका अर्थ क्या है? इससे सिर्फ यह प्रकट होता है कि ऑरेंज रिवर उपनिवेशके दरवाजे ब्रिटिश भारतीयोंके लिए सदा बन्द रहेंगे। और जो कोई ब्रिटिश भारतीय वहाँ आयेगा वह इन प्रतिबन्धक अधिकारोंके बावजूद वैसा करेगा, और यदि वह आपत्ति करता है तो उससे यह कह दिया जायेगा कि ये कानून रद नही किये जा सकते; मुँहतोड़ जवाब दिया जायेगा: "अब तो मौका निकल गया है।" क्या हम उपनिवेश-सचिवसे पूछ नहीं सकते कि यदि ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें इतने थोड़े ब्रिटिश भारतीय हैं तो उनका यह अनावश्यक अपमान क्यों किया जाता है? क्या किसी प्रकारका औचित्य न होते हुए भी किसी समूचे राष्ट्रकी भावनाओंको ठेस पहुँचाना व्यावहारिक नीति-निपुणता है? ऑरेंज रिवर उपनिवेशकी नगरपालिकाएँ निस्सन्देह इतना अनुचित काम नहीं करेंगी कि स्वयं उपनिवेश-सचिवके कथनानुसार जो मामला उनके लिए महत्त्वका नही है उसपर लेफ्टिनेंट गवर्नर तक की आपत्ति सुननेसे इनकार कर दें। ऐसा वे तभी करेंगी जबकि उन्हें अपनी कुछ भी हानि न पहुचानेवाले लोगोंका अकारण अपमान करनेमें आनन्द आता हो। परन्तु उपनिवेश-सचिवके पत्रकी चर्चा हम अधिक नहीं करेंगे। हमें प्रसन्नता है कि ब्रिटिश भारतीय संघ इस मामलेमें पहले ही कदम उठा चुका है और उच्चायुक्तकी सेवामें प्रार्थनापत्र भेज चुका है।

१. अल्फ्रेड लिटिल्टन, उपनिवेश-मन्त्री, १९०३–५।

उपनिवेश-सचिवको भेजे गये श्री फॉक्सबोर्नके पत्रको उक्त पत्रसे विपरीत देखकर हमें प्रसन्नता हुई। हम इस महत्त्वपूर्ण पत्रकी ओर, जिसे हमने अपने सहयोगी 'इंडिया' से उद्धृत किया है, सभी दक्षिण आफ्रिकी साम्राज्य हितैषियोंका ध्यान आकृष्ट करना चाहते हैं। आदिवासी-रक्षक सभाके विरुद्ध दक्षिण आफ्रिकामें अक्सर बहुत-कुछ कहा गया है। परन्तु हमें आशा है कि दक्षिण आफ्रिकाके समाचारपत्र और उनके पाठक प्रत्येक बातका निर्णय उसके गुणावगुणके आधारपर करेंगे, और अपनी पहलेसे बनी द्वेष-भावनाके कारण आदिवासी-रक्षक सभाके कार्यकी निन्दा न करेंगे। आखिर, उसके सदस्योंमें कई उदात्ततम अंग्रेज भी तो हैं। इस मामलेमें श्री फॉक्सबोर्नको कई आश्वासन भी दिये गये थे जो अभी पूरे होने शेष हैं। उन्होंने उपनिवेश-सचिवको याद दिलाया है कि युद्धसे पहले उनके संघके प्रार्थनापत्रोंके उत्तरमें कुछ वादे किये गये थे। इस कारण, वे "आशा करनेका साहस करते हैं कि उन वादोंको पूरा करनेमें बिलकुल विलम्ब न किया जायेगा।" और लॉर्ड मिलनरके कथनसे उनकी "यह आशा बढी है कि कमसे-कम उन रंगदार लोगोंके सम्बन्धमें तो ये वादे पूरे कर ही दिये जायेंगे, जो ब्रिटिश प्रजाजन हैं और असभ्य नहीं हैं।" साम्राज्य-सरकारको एक पेचीदा सवाल हल करना है। या तो उसे सर आर्थर लालीकी[1] सलाह माननी पड़ेगी और साहसके साथ वादा-खिलाफी करनी पड़ेगी, या ब्रिटिश परम्पराओंके अनुसार अपने वादे पूरे करने होंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८-७-१९०५

१०. चीनी और गन्दी भाषा

ट्रान्सवालकी खानोंके गोरोंका एक शिष्टमण्डल लॉर्ड सेल्बोर्नसे १ जुलाईको मिला था। उसने उनसे माँग की कि चीनी मजदूरोंसे गोरोंकी रक्षा की जानी चाहिए। उसने उन्हें बताया कि गोरे चीनियोंसे खराब बर्ताव नहीं करते। एक गोरेके नियन्त्रणमें ३० या ४० चीनी काम करते हैं, इसलिए दंगेके समय चीनियोंके लिए एक गोरेकी जान ले लेना कठिन नहीं है। चीनी बार-बार गन्दी भाषाके प्रयोगसे, इशारोंसे और मुँह बिचकाकर गोरे अधिकारीका अपमान करते हैं। वह भाषा इतनी गन्दी होती है कि शिष्टमण्डलके दुहराने योग्य नहीं है। शिष्टमण्डलके सदस्योंने बताया कि कोई भी गोरा ऐसा अपमान सहन करके चुप बैठा नहीं रह सकता। उत्तरमें लॉर्ड सेल्बोर्नने कहा कि ४०,००० चीनी मजदूरोंमें शारीरिक हमले करनेके मामले अबतक केवल २० हुए हैं। उनकी भाषा-सम्बन्धी शिकायत वजनदार नहीं है, क्योंकि खुद गोरे गन्दी भाषाका व्यवहार करके बुरा उदाहरण उपस्थित करते हैं। उनके सामने शराब पीना और अनुचित आचरण करना, खुद अपने लिए नुकसानदेह हो जाता है। ये भाषासे बिलकुल अनजान लोग अपने प्रति प्रयुक्त गन्दे शब्दोंको तोतोंकी तरह रट लेते हैं, और फिर उन्हें सुधारना बहुत कठिन हो जाता है। इसके अतिरिक्त [उन्होंने कहा कि गोरोंका गोरापन गोरी चमड़ीमें ही नहीं है, उन्हें अपने भीतर भी गोरा होना चाहिए; अर्थात् उनमें अपने अच्छे बर्तावसे सामनेके मनुष्यके मनमें आदर, आज्ञाकारिता और भय उत्पन्न करनेकी खूबी होनी चाहिए। तभी वे गोरे कहे जा सकते हैं।] संक्षेपमें चीनियोंके खराब बर्तावके लिए उन्होंने गोरोंको ही जिम्मेवार माना और अच्छे बर्तावसे चीनियोंको वशमें करनेकी जरूरत बताई।

१. ट्रान्सवालमें भूतपूर्व उच्चायुक्त।

शिष्टमण्डलने कुछ और भी दिक्कतें बताईं जिनपर लॉर्ड सेल्बोर्नने आवश्यक ध्यान देनेका वचन दिया है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८-७-१९०५

११. भारतमें नमकपर कर

डॉ० हचिन्सन द्वारा कड़ी आलोचना

भारतमें नमकपर कर है, इसके विरोधमें हमेशा आलोचनाएँ हुआ करती है। इस बार सुविख्यात डॉ० हचिन्सनने इसकी आलोचना की है। वे कहते है कि जापानमें इस प्रकारका कर था, वह अब समाप्त कर दिया गया है। फिर भी ब्रिटिश सरकार इसे कायम रखती है, यह बड़ी शर्मकी बात है। यह कर तुरन्त बन्द कर देना चाहिए। नमक ऐसी चीज है जिसकी आहारमें आवश्यकता होती है। भारतमें कुष्ठ रोग बढ़ रहा है उसका कारण नमक-कर है, ऐसा कुछ अंशमे कहा जा सकता है। डॉ० हचिन्सन मानते है कि नमक-कर एक जंगली रिवाज है और ब्रिटिश सरकारके लिए अशोभनीय है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८-७-१९०५

१२. पत्र : दादा उस्मानको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई ८, १९०५

सेठ दादा उस्मान,

आपका पत्र मिला। मुझे लगता है, आपके फ्राइहीड जानेकी पूरी जरूरत है। वहाँ व्यवस्था किये बिना आप कुछ नही कर सकेंगे, ऐसी आशंका है। मुझसे यहाँ बैठे-बैठे कुछ नही होता। यदि जुर्माना हुआ तो आपकी गैरहाजिरीमें दूकान खुली रखनेकी सिफारिश नही कर सकूँगा।

हुंडामलकी अपीलपर[१] बहुत कुछ निर्भर रहेगा। उस अपीलके सम्बन्धमें पूरी-पूरी सावधानी रखवाएँ। उस अपीलमें कौन पैरवी करेगा यह लिखें। उसमे जीत हो तो दूकान फिर खोल सकेंगे। बीचमें आप टाउन क्लार्क आदिसे जाकर मिलेंगे तो फायदा होना सम्भव है।

अब्दुल्ला सेठ हिसाब न दें तो मुझे घबरानेकी जरूरत दिखाई नही देती। दादा सेठको ज्यादा पैसा मिलेगा, यह आशा तो छोड़ ही दी है। इसलिए घबरानेका कारण तनिक भी नही है।

मो० क० गांधीके सलाम

सेठ दादा उस्मान
बॉक्स ८८
डर्बन

गांधीजीके स्वाक्षरोमें गुजरातीसे; पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ५८२

१. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ३७५, ३८५-८६ और ३९४।

१३. पत्र : पारसी कावसजीको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई ८, १९०५

रा० रा०[1] पारसी कावसजी,

आपका पत्र मिला। मुझे दुःख है कि आपको मुझसे पैसेकी मदद मिले, ऐसी मेरी स्थिति नही है।

मो० क० गांधी

श्री पारसी कावसजी
११५ फील्ड स्ट्रीट
डर्बन

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे; पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ५८४

१४. पत्र : जे० डी विलियर्सको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई १२, १९०५

सेवामें
श्री जे० डी विलियर्स
१८ एजिस बिल्डिंग्ज
जोहानिसबर्ग

प्रिय महोदय,

विषय : इस्माइल और ल्यूकस

इस आशासे कि मैं किसी समय स्वयं आपसे मिलकर बिलकी रकममें कमी करा सकूँगा, मैंने अभीतक जानबूझकर आपको चैक भेजनेमे देर की है। किन्तु अत्यधिक कामके दबावसे मैं अभीतक दफ्तर छोड़कर निकल नही पाया हूँ। सैयद इस्माइलके पास जो कुछ भी सम्पत्ति थी वह इस दावेकी ही थी। इसलिए १,३०० पौंडका नुकसान और मुकदमेंके खर्चकी अदायगी उसके लिए बहुत बड़ा घाटा है। इसलिए मैं आपसे अपने हिसाबमें खासी कमी करनेकी प्रार्थना करना चाहता हूँ। मैंने श्री ल्यूनार्डसे भी प्रार्थना की थी और उन्होने कमी करनेकी उदारता दिखाई है।

मै इसके साथ आपका बिल भेज रहा हूँ।

आपका विश्वासपात्र,
मो० क० गांधी

संलग्न :[2]

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ६३०

१. राज्यमान्य राजेश्री–श्रीमान्।
२. यह उपलब्ध नहीं है।

१५. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

जोहानिसबर्ग
जुलाई १३, १९०५

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
प्रिटोरिया

महोदय,

तारीख ७ के 'गवर्नमेंट गज़ट' के पूरकमें प्रकाशित अध्यादेशके मसविदेकी उपधारा ३ का, जो उपनिवेशके कानूनोंको "नगरपालिकाकी विधि-संहिताको सामान्य रूपसे संशोधित करने" के विषयमें है, मुझे विनयपूर्वक अपने संघकी ओरसे विरोध करना पड़ रहा है।

यह देखते हुए कि एशियाई-विरोधी कानून स्थानीय सरकार और साम्राज्य सरकारके विचाराधीन है, मेरा संघ यह निवेदन करनेकी धृष्टता करता है कि नगरपालिकाओंको एशियाई 'बाजारों' के संचालनका अधिकार देना असामयिक है और वैसा करनेका मंशा उपनिवेशके ब्रिटिश भारतीयोंकी भी मान-प्रतिष्ठाको नुकसान पहुँचाना है। १८८५ के कानून ३ में सरकारी अंकुशका विधान है और यह देखते हुए कि ट्रान्सवालकी नगरपालिकाएँ बहुत हद तक रंग-विद्वेषसे परिचालित होती हैं, मेरा संघ नम्रतापूर्वक निवेदन करता है कि एशियाई 'बाजारों' के संचालनका अधिकार नगरपालिकाओं या स्थानीय निकायोंको देना ब्रिटिश भारतीयोंके प्रति अन्याय होगा।

इसलिए मेरा संघ आशा करता है कि सरकार उक्त धाराको वापस ले लेगी और जबतक उपनिवेशमें ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थितिके प्रश्नको कोई अन्तिम आधार नहीं दे दिया जाता, इस मामलेको रोक रखा जायेगा।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, २२–७–१९०५

१६. पत्र : जालभाई व सोराबजी ब्रदर्सको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई १३, १९०५

श्री जालभाई व सोराबजी ब्रदर्स
११० फील्ड स्ट्रीट
डर्बन

प्रिय महोदय,

छापाखानेकी मदमें मेरे नामे जो हिसाब है, उसका उतारा आप मुझे भेजना भूल गये हैं। मेहरबानी करके उसे अपने सुभीतेसे मेरे पास भेज दें। मैं उम्मीद करता हूँ कि प्रेससे ताल्लुक रखनेवाला जो काम दिया जाता है, उसे आप मुस्तैदीके साथ करनेकी मेहरबानी करेंगे, क्योंकि फीनिक्समें अभीतक सब बातोंकी ठीक व्यवस्था नहीं हो पाई है।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

[पुनश्च]

आपका ११ तारीखका पत्र मिला। मुझे खुशी है कि श्री लॉटनसे[1] आपको उधारी मिल गई है। मैं उसे वापस भेज रहा हूँ। आपने छगनलालको १०० पौंड दिये, इसके लिए धन्यवाद। श्री रुस्तमजीको[2] आपने ८० पौंडका ड्राफ्ट भेजा, यह जाना।

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ६३३

१. एफ० ए० लॉटन, जोहानिसबर्गके एक प्रमुख वकील। देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३९६।
२. पारसी रुस्तमजी, भारतीय व्यापारी और गांधीजीके सहकार्यकर्ता। देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३९५।

१७. पत्र : हाइन व कारूथर्सको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई १३, १९०५

श्री हाइन व कारूथर्स
पो० ऑ० बॉक्स २६१
जोहानिसबर्ग

प्रिय महोदय,

विषय : मृत अब्दुल करीमकी जायदाद

मुझे अफसोस है कि आपने जो प्रलेख अनुवादके लिए मेरे पास छोड़ दिया था, उसे मैंने अभी बहुत थोड़ा ही किया है। अब भी २४ घने लिखे हुए पन्ने अनुवादके लिए शेष हैं। मुझे कदाचित् यह कहनेकी जरूरत नहीं है कि यह अनुवाद बहुत ही महँगा पड़ेगा। जितना काम मैंने किया है उसकी रकम २ पौंडसे अधिक हो गई है और समाप्त करते-करते वह लगभग १२ पौंड हो जायेगी। फिर भी मैंने जो कुछ अबतक पढ़ लिया है, उससे जान पड़ता है कि पोरबन्दरमें मेरे प्रतिनिधिको प्रमाणित नकल पानेमें बहुत चक्करका रास्ता अख्तियार करना पड़ा है। उसका कारण कानूनका परिवर्तन है, जिसके मुताबिक उन सम्बन्धित व्यक्तियोंके अतिरिक्त जो अदालतके अधिकारक्षेत्रमें आते हैं, कोई दूसरा व्यक्ति प्रमाणित नकलें नही पा सकता। बहरहाल, यदि आप मुझे अनुवादका काम जारी रखनेको कहें, तो मैं वैसा करूँगा। आपका पूरा अनुवाद देनेमें मुझे लगभग एक हफ्ता लग जायेगा। क्योंकि मेरी वर्तमान व्यस्तताओंके कारण मेरे लिए उसपर पूरे दो दिन लगाना सम्भव नही है, जो इस कामके लिए आवश्यक हैं। मैं सिर्फ थोड़ा-सा समय रोज इस कार्यमें लगा सकता हूँ।

आपका विश्वासपात्र,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ६४९

१८. पत्र : उमर हाजी आमदको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई १३, १९०५

सेठ श्री उमर हाजी आमद,

आपका पत्र मिला। अखबारकी कतरन वापस भेजता हूँ। इससे मालूम होता है कि 'ओपिनियन' का प्रभाव बढ़ता जा रहा है।

इसके साथ अंग्रेजीका पत्र वकीलको पढ़ानेके इरादेसे भेज रहा हूँ। वसीयतसे अनुसार अदालतकी तरफसे किसी ट्रस्टीकी नियुक्ति होनी चाहिए। बादमें जब कागज-पत्र यहाँ आयेंगे तब जायदाद आप दोनोंके नाम होगी। फिर पट्टा दर्ज होगा। मैंने जो अंग्रेजीमें लिखा है वह आप समझ जायेंगे, इसलिए ज्यादा विस्तारसे नहीं समझाता।

मो० क० गांधीके सलाम

सेठ उमर हाजी आमद झवेरी[1]
बॉक्स ४४१
डर्बन

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे, पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ६५१

१९. पत्र : टाउन क्लार्कको[2]

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई १४, १९०५

सेवामें
टाउन क्लार्क
जोहानिसबर्ग

महोदय,

विषय : भारतीयोंकी ट्रामगाड़ियोंमें यात्रा

इस विषयमें हमारी जो बातचीत हुई थी उसपर मैंने शान्ति और धीरजसे विचार किया है और अपने मुवक्किलसे सलाह-मशविरा कर लिया है। यदि इस बातका निश्चित आश्वासन दिया जा सके कि नई ट्रामगाड़ियोंमें भारतीयोंको यात्रा करनेकी सुविधाएँ दी जायेंगी, तो मेरा आसामी अदालतमें जाँच-मुकदमा दायर नहीं करेगा। किन्तु यदि ऐसा नहीं हो सके तो यह योग्य जान पड़ता है कि इस मामलेका निश्चित फैसला करा लिया जाये। मेरा व्यक्तिगत अनुभव यह रहा है कि जहाँ कुछ अधिकारोंका अकारण अभाव मान लिया गया है, वहाँ ऐसी मान्यताके बलपर ही

१. मूल गुजरातीमें 'जोहरी' है।
२. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ५०३।

आगेका प्रबन्ध करनेका नियम-सा बन जाता है और पहले जिस प्रश्नपर बातचीत हो सकती थी, वहाँ नया प्रबन्ध हो जानेपर निश्चित रूपसे ऐसे अधिकार या अधिकारोंके खिलाफ निर्णय हो जाता है? इसलिए मैं यह माननेकी धृष्टता करता हूँ कि ऊपर सुझाया गया प्रस्ताव बिलकुल संगत है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ६५९

२०. केप प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम

केप टाउनकी ब्रिटिश भारतीय समिति (ब्रिटिश इंडियन लीग)ने केप प्रवासी-अधिनियमपर अमलके विषयमें उपनिवेश-सचिवको एक प्रार्थनापत्र भेजा था। उसके उत्तरमें उनके दफ्तरसे समितिके अध्यक्षको जो पत्र मिला है उसे हम इसी अंकमें अन्यत्र प्रकाशित कर रहे हैं। समितिने भारतीय भाषाओंको मान्यता देनेके विषयमें जो प्रार्थना की थी उसे उपनिवेश-सचिवने एक वाक्यमें ही उड़ा दिया है। हमें आशा है कि समिति इस प्रश्नको यही न छोड़ देगी। उपनिवेश-सचिवके पत्रमें 'निवासी' शब्दका जो अर्थ लगाया गया है वह अत्यन्त असंतोषजनक है। उपनिवेशका प्रत्येक भारतीय यह साबित नही कर सकता कि वह उपनिवेशमें अचल संपत्तिका मालिक है या उसके स्त्री और बाल-बच्चे यहाँ मौजूद है। यदि इसी अर्थपर आग्रह किया जाता है तो, उपनिवेश-सचिवका इरादा वैसा करनेका न होते हुए भी, इससे अनावश्यक कठिनाइयाँ हुए बिना न रहेंगी। हो सकता है कि कोई व्यक्ति केपमें अपना रोजगार छोड़ दे, केवल कुछ समयके लिए भारत चला जाये, और अपने आपको सदाके लिए केपसे निष्कासित पाये, क्योंकि उसकी स्त्री और उसके बाल-बच्चे उपनिवेशमें नही है या वह अचल सम्पत्तिका मालिक नही है। इसका अर्थ होगा उस गरीब दूकानदारकी बिलकुल बरबादी, जो भ्रमवश अपने आपको सुरक्षित समझकर, अपना रोजगार अस्थायी रूपसे अपने मैनेजरके सुपुर्द करके भारत चला गया हो। यह उदाहरण काल्पनिक भी नही है, क्योंकि हम जानते है कि ऐसे अनेक भारतीयोंको केपमें फिर आनेसे इनकार करनेकी घटनाएँ सचमुच घटित हो चुकी हैं। इस कारण न्यायका तकाजा पूरा करनेके लिए, कर्नल क्रू[1] कमसे-कम जो कुछ कर सकते है वह है उन लोगोंके अधिकार मान्य कर लेना जो फिर यहाँ लौटनेके इरादेसे अपना रोजगार या नौकरी छोड़कर चले गये हों। तब वे नर्मीसे व्यवहार करनेकी बात कह सकेंगे, क्योंकि अभीतक तो उनकी व्याख्याके अनुसार कानूनके व्यवहारमें नर्मी बिलकुल नही है, कठोरता ही है। और तभी ब्रिटिश भारतीय समिति सरकारके रुखको मुनासिब मान सकेगी। अब तो हम, उनका अधिकतम सम्मान करते हुए भी, यह खयाल करते है कि यह कानून अन्यायपूर्ण और अनुचित है और केपवासी ब्रिटिश भारतीयोंको अवश्य ही भारी कठिनाइयोमें डाल देगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५–७–१९०५

१. केप कालोनीके उपनिवेश-सचिव।

२१. श्री वाछा[1] और भारतीय

राष्ट्रीय महासभाके सयुक्त मत्री श्री वाछाने हमे एक पत्र लिखा है, जो प्रोत्साहन, आशा और सुझावसे भरा है। हम उसका मुख्य भाग अन्य स्तम्भमे प्रकाशित करते है। उन्होने एक मिलता-जुलता उदाहरण दिया है, जो दक्षिण आफ्रिकामे ब्रिटिश भारतीयोके दर्जेके संबधमे चालू विवादकी दृष्टिसे महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने लिखा है:

> आपके यहाँके प्रवासी यूरोपीय यह भूल गये मालूम पड़ते हैं कि खुद व्यापारी और व्यवसायी ईस्ट इंडिया कम्पनीके विरुद्ध, जो उन्हें १८३३ का कानून बनने तक भारतमें व्यापार करनेसे मना करती थी, बड़ी तीखी भाषामें शिकायत किया करते थे। यहाँ जो आते थे वे 'अनधिकारी' कहे जाते थे, परन्तु, अनधिकारियोंमें धीरता और लगन थी।

और हम जानते हैं कि वे सफल हुए। दक्षिण आफ्रिकाकी हालतोमे भी लगन और धीरता आवश्यक है। १८३३ में न्याय जितना उनके पक्षमे था उसकी अपेक्षा अब हमारे पक्षमे अधिक है। दक्षिण आफ्रिकामे ब्रिटिश भारतीयोको अपने दर्जेमें सुधार करवानेका तिहरा अधिकार है। १८५८ की घोषणाके विरुद्ध कुछ भी क्यों न कहा जाये, उसमे उन्हे ब्रिटिश प्रजाके सम्पूर्ण अधिकारोका आश्वासन दिया गया है। वे यह दिखा चुके है कि दक्षिण आफ्रिकामे उनका जीवन परिश्रमी, संयमी, कानूनका पालन करनेवाला और ईमानदारीका रहा है; और जैसा बहुत बार माना जा चुका है, वे देशका विकास करनेमें बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। जिम्मेवार मन्त्रियोने उनसे बार-बार वादे भी किये है कि दक्षिण आफ्रिकामे उनके साथ, विशेषत: उनके नागरिक अधिकारोके बारेमे, न्याय और समानताका बरताव किया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५-७-१९०५

२२. नेटालमें मकान-कर

नेटाल 'गवर्नमेंट गजट' में मकान-करके सम्बन्धमें जो विधेयक प्रकाशित हुआ है उसके विरुद्ध लोगोकी भावना बढती जाती है। मैरित्सबर्गमे १० तारीखकी रातको इस विषयपर विचार करनेके लिए एक आम सभा की गई थी। डर्बनमें गुरुवारकी शामको सभा की गई है। इस विधेयकके विरुद्ध कदम उठानेके लिए बहुत-से लोगोंने अलग-अलग अर्जियोंपर हस्ताक्षर किये हैं। प्रस्तावित मकान-कर व्यक्ति-करसे भी अधिक अप्रिय हो गया है। इस विधेयकमें सूचित प्रस्ताव बहुत ही अपूर्ण है और हमेशाके लिए तो सम्भव है ही नही, उसे थोड़े समयके लिए मजूर कराना जोखिम-भरा है। यदि यह कर न्यायपूर्वक लगाया जाये तो स्थायी करके रूपमें वह व्यक्ति-करसे बेहतर कहा जा सकता है। व्यक्ति-कर तो सदाके लिए सहन करनेके योग्य है ही नही, यद्यपि कुछ देशोमे वह वसूल किया जाता है। मकान-करके विरुद्ध लोगोंकी जो

१. दिनशा एदुलजी वाछा (१८४४-१९३६): १९०१ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके कलकत्ता अधिवेशनके अध्यक्ष; वाइसरायकी विधान परिषद्के नामजद सदस्य; देखिए खण्ड २, पृष्ठ ४२१।

विरोधी भावना है उसकी वजहसे या तो उसका रूप बदल देना चाहिए और ऐसा न हो तो उसे हटा ही देना चाहिए, ताकि व्यक्ति-करके प्रति विरोधी भावना पैदा न हो।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५-७-१९०५

२३. जापान द्वारा संधिकी तैयारी

सदेलियन टापूकी जीत

जापानियोंने सदेलियन नामके रूसी टापूपर कब्जा करके उसमें अपनी फौजें उतार दी है। यह टापू ६७० मील लम्बा और २० से लेकर १५० मील तक चौड़ा है। इसका क्षेत्रफल २४,५५० वर्ग मील है, अर्थात् यह सौराष्ट्रसे अधिक विस्तृत है। इस टापूका दक्षिणी भाग सन् १८७५ तक जापानके कब्जेमें था, परन्तु इसके बाद इसे जापानने क्यूराइल टापूके[1] बदलेमें रूसियोंको दे दिया था। इसमें मिट्टीके तेलके बहुतसे कुएँ है। यहाँ कोयला भी बहुत निकलता है। इतने बड़े टापूपर जापानी अधिकार हो जानेका चालू सन्धिकी तैयारीपर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है। 'टाइम्स' पत्रका कहना है कि इस सारे युद्धके दौरानमें अन्य किसी घटनाने रूसी लोगोंको इतना दुःख नही पहुँचाया था। इस घटनाने यह बता दिया है कि रूसी अपनी सीमाकी रक्षा करनेमें सर्वथा असमर्थ है। इस टापूके रूसके हाथमें आये हुए भी ५० वर्ष पूरे नहीं हुए है। रूसने इसको राजनीतिक दाँवपेचोंसे अपने कब्जेमें लिया था और इससे जापानको नुकसान उठाना पड़ा था। यदि इस भारी युद्धका प्रसंग न आता तो यह टापू आज भी रूसके हाथमें ही रहता। बहुत अरसेसे जापानने इस टापूपर अपनी नजर लगा रखी थी, और इस सामयिक जीतसे यह खयाल किया जा रहा है कि वाशिंगटनकी संधि-वार्तामें जापानकी स्थिति बहुत मजबूत रहेगी। संधि-समितिकी बैठक होते-होते हमें यह समाचार सुननेको मिल सकता है कि मार्शल ओयामाने रूसी सेनाध्यक्ष लिनेविचको करारी चोट दी है। जापानी सेना अल्पकालिक यद्ध-विराम करनेसे इनकार करती है और जोरदार लड़ाईसे रूसको वास्तविक संधिके लिए मजबूर करनेका उसका इरादा है। और वह साहसके साथ कहती है कि संधिके सिवा दूसरा चारा नही है, यह वह दिखा देगी और संधिकी वार्ता करनेवाले रूसी प्रतिनिधियोंको अन्तमें जापानकी माँगें मंजूर करनी ही पड़ेंगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५-७-१९०५

१. उत्तर प्रशान्त महासागरमें एक छोटा-सा द्वीप-समूह।

२४. पत्र : छगनलाल गांधीको

२१–२४ कोर्ट चेम्बर्स
नुक्कड़, रिसिक व ऐंडर्सन स्ट्रीट्स
पो० ऑ० बॉक्स ६५२२
जोहानिसबर्ग
जुलाई १५, १९०५

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे पास आज तक का हिसाब भेजा जा चुका है। उसपर से भूकम्प कोषमें[1] जो रकमें मिली हैं तुम्हें उनकी जानकारी हो जायेगी। कुमारी न्यूफ्लीस द्वारा भेजी गई डर्बन बाढ़ कोषकी रकमें भी उसमें शामिल हैं। वे तुम श्री उमरको दे सकते हो। पत्रोंके लिए कोरे पुरौनी-कागज और कच्ची लिखाईके लिए गड्डियाँ मिल गई है। तुम्हारे निरीक्षण सम्बन्धी उल्लेखको मैं ठीक-ठीक नही समझा। तुम्हें चाहिए कि मुझे निश्चित उदाहरण भेजो। तब मैं कार्य-पद्धतिको अच्छी तरह समझ सकूँगा। मैं यह भी जानना चाहूँगा कि नुकसान कहाँ हुआ है या कहाँ होता आ रहा है। डाह्या जोगीका पैसा मिल गया है। वह रकम १ पौंड २ शि० ६ पें० है। मुझे मालूम है कि सामग्री देरसे भेजी गई थी। जितनी मुमकिन है, उतनी सामग्री आज भेज रहा हूँ। यदि कुछ बची तो वह कल भेज दी जायेगी। वेस्टने[2] मुझे लिखा है कि मगनलालको सितम्बरके करीब रवाना होना और दिसम्बरमें लौटना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा है कि तुम्हारी ऐसी राय है। यदि मगनलालके बिना काम चलाया जा सकता हो, तो मुझे कोई आपत्ति नही है। कावा और आनन्दलालका क्या हाल है? क्या पिल्ले अब बिलकुल अच्छा हो गया है? मगनलालको तमिल पुस्तकें मिल गईं? उसने पढ़ाई शुरू कर दी है?

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्च]

वाई० एम० सी० ए०, जोहानिसबर्गको एक सालके लिए 'इं० ओ०' भेजो। पैसा श्री मैकिंटायरसे[3] मिल गया है।

मो० क० गां०

भूकम्प और कुमारी न्यूफ्लीसके हिसाबके परचे अलग-अलग बनेंगे।

श्री छगनलाल खुशालचंद गांधी
मार्फत, इन्टरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस
फीनिक्स

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४२४५) से

१. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ४५८।

२. अल्बर्ट वेस्टसे गांधीजीकी मुलाकात १९०४ में जोहानिसबर्गके एक उपाहार-गृहमें हुई थी। वे प्लेगके समय रोगियोंकी शुश्रूषाके लिए जोहानिसबर्गमें गांधीजीके पास आये थे। परन्तु उसके बजाय गांधीजीने इंडियन ओपिनियन और उसके छापेखानेका प्रबन्ध उनके हाथों सौंप दिया। गांधीजी उनके विषयमें लिखते हैं: उस दिनसे लेकर मेरे दक्षिण आफ्रिका छोड़नेके दिन तक वे मेरे सुख-दुखके साथी रहे।" देखिए, आत्मकथा भाग ४, अध्याय १६।

३. एक स्कॉट थियॉसोफिस्ट जो गांधीजीके मुंशी थे। देखिए, आत्मकथा (गुजराती), भाग ४, अध्याय २१।

२५. पत्र: उमर हाजी आमद झवेरीको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई १७, १९०५

सेठ श्री उमर हाजी आमद झवेरी,

आपका पत्र मिला। सेठ हाजी इस्माइलके[1] दोनों पत्र वापस भेजता हूँ। उनके लिखनेका ढंग मुझे जरा भी पसन्द नहीं आया। इससे अनुमान होता है कि उनके खर्चपर नियन्त्रण रखना मुश्किल होगा। यदि वहाँ किरायेके बराबर खर्च हो जाता हो तो इस सम्बन्धमें क्या करना उचित होगा, यह सोचनेकी बात है।

व्यापारमें पोरबन्दरका खर्च पूरा करने लायक मुनाफा न हो तो यह मूल पूंजीको खाना ही है। मुझे लगता है कि फिलहाल कलहमें वृद्धि रोकनेके लिए पोरबन्दरको १०० पौंडके हिसाबसे भेजना पड़ेगा। मैं आज सेठ हाजी इस्माइलको पत्र[2] लिख रहा हूँ।

मो० क० गांधीके सलाम

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे; पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ६७८

२६. पत्र: हाजी इस्माइल हाजी अबूबकरको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई १७, १९०५

श्री सेठ हाजी इस्माइल हाजी अबूबकर,

उमर सेठका पत्र आया है। वे उसमें लिखते हैं कि यह खर्च ज्यादा है। आपके पिछले दो पत्र भी मैंने पढ़े। मुझे लगता है कि आपने जो पत्र लिखे हैं वे जितने चाहिए उतने शिष्टतापूर्ण नहीं हैं। उमर सेठ आपके काका हैं। इसलिए आपकी तरफसे उनको लिखा पत्र आपके खानदानी गौरवके अनुकूल शिष्टतापूर्ण होना चाहिए।

खर्चके बारेमें जो उमर सेठ कहते हैं वह विचारणीय है। जब उमर सेठ विलायत गये तबमें और आजके समयमें बड़ा अन्तर है। इस समय किराये आधे हो चुके हैं और अभी घटेंगे। यहाँका खर्च किरायेकी आयमें से पूरा होता है। इसलिए मूल पूंजीपर गुजारा करनेका वक्त आ गया है। मुझे लगता है कि आपकी जायदाद ऐसी है कि मूल पूंजीपर गुजारा करनेकी बात नहीं उठनी चाहिए। जिन्होंने पूंजीपर गुजारा किया है ऐसे करोड़पतियोंका पैसा भी खत्म हो गया है। इसलिए आपको मेरी खास सलाह है कि अपने घरका खर्च विचार कर करें। मुझे

१. उमर हाजी आमदके भतीजे।
२. देखिए अगला शीर्षक।

लगता है कि बहुत-कुछ खर्च कम हो सकता है। अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखें। कसरत और नियमित भोजनकी खास जरूरत है।

मो० क० गांधीके सलाम

श्री हाजी इस्माइल हाजी अबूबकर आमद झवेरी
पोरबन्दर
काठियावाड़
बरास्ता बम्बई

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे; पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ६९३

२७. पत्र : 'डेली एक्सप्रेसको'

जोहानिसबर्ग
[जुलाई १७, १९०५ के बाद]

सेवामें,
सम्पादक
'डेली एक्सप्रेस'

महोदय,

आपके एक पत्र-लेखकने आपके पत्रके इसी १७ तारीखके अंकमें 'सिकरैमसैम' के ठाटदार उपनामसे ब्रिटिश भारतीयोंपर आक्रमण किया है। मुझे भरोसा है कि आप मुझे उसका उत्तर देनेका अवसर देंगे। एक सीधी-सादी भारतीय कहावत है कि "आप घोड़ेको पानीके पास ले जा सकते हैं, पर उसे पानी पीनेके लिए बाध्य नहीं कर सकते।" इसी तरह जो लोग अपने सम्मुख उपस्थित तथ्योंसे आँखें मूंद लेते हैं उनकी गलत धारणाएँ मिटाई नहीं जा सकतीं। मुझे बहुत आशंका है कि आपका पत्र-लेखक उसी श्रेणीका है। तथापि, उसकी जानकारीके लिए मैं फिरसे यह प्रश्न पूछता हूँ – अगर युद्धके पहले केवल तेरह भारतीय ('कुली' नहीं, जैसा कि आपका पत्र-लेखक लिखना पसन्द करता है) 'दूकानदार, छोटे व्यापारी या फेरीवाले' थे तो फिर ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्षकी चुनौती[1] श्री क्लाइनेनबर्गने मंजूर क्यों नहीं की? याद रखिये कि इन दूकानदारोंके नाम समाचारपत्रोंको भेज दिये गये हैं। मैं देखता हूँ कि आपका पत्र-लेखक एक कदम और आगे बढ़ गया है। वह साहसपूर्वक यह कहता है कि इस तेरहकी संख्यामें दूकानदार, छोटे व्यापारी और फेरीवाले भी शामिल हैं। दुर्भाग्यसे उसने एक अशुभ[2] संख्या पसन्द की है। मैं आपके पास १०० पौंड जमा करनेको तैयार हूँ। अगर मैं दो मध्यस्थोंके सामने यह साबित न कर सकूँ कि युद्धके पूर्व पीटर्सबर्गमें भारतीय दूकानदारों, छोटे व्यापारियों और फेरीवालोंकी संख्या आपके पत्र-लेखककी बताई संख्याकी दुगुनीसे भी ज्यादा थी, तो वह रकम आपके पत्र-लेखकके सूचित किये हुए किसी भी भारतीय-विरोधी संघको

१. देखिए खण्ड-४, पृष्ठ ३५६।
२. पश्चिमके ईसाई देशोंमें १३ की संख्या अशुभ मानी जाती है।

दे दी जाये। शर्त सिर्फ यह है कि अगर निर्णय मेरे पक्षमें हो तो आपका पत्र-लेखक भी ब्रिटिश भारतीय संघको उतनी ही रकम देनेके लिए तैयार हो। इन दो मध्यस्थोंमें से एकका चुनाव आपका पत्र-लेखक करेगा और दूसरेका मैं। एक सरपंच चुन लेनेका अधिकार उन दोनोंको होगा। यह हुआ 'सिकरैमसैम' के आँकड़ोंके बारेमें।

जहाँतक इस आरोपका सम्बन्ध है कि वतनी ब्रिटिश भारतीयों द्वारा मूड़े जा रहे हैं, मैं आपके पत्र-लेखकका ध्यान सर जेम्स हलेटकी इस साक्षीकी[1] ओर दिला सकता हूँ, जो उन्होंने वतनी कार्य-आयोगके सामने इस विषयमें दी थी कि अधिक बड़ा कुकर्मी कौन है — यूरोपीय या भारतीय? आपके पत्र-लेखकके अन्य आरोपोंके बारेमें, जो उसे दी गई 'जानकारी' पर आधारित हैं, मैं केवल इतना ही कह सकता हूँ कि समझदार लोग उनकी सच्ची कीमतको समझकर ही उनका मूल्य आँकेंगे। अगर भारतीय कोई भी बेईमानीका व्यापार कर रहे हैं और पत्र-लेखकको उसकी जानकारी है तो निश्चय ही उसका इलाज उसीके हाथोंमें है। और अगर व्यापारिक परवानोंका प्रश्न अबतक अन्तिम रूपसे तय नहीं हुआ तो उसका कारण यह है कि 'सिकरैम-सैम' और उनके साथी ब्रिटिश भारतीयोंके सुझाये हुए उस अत्यन्त उचित समझौतेको भी मान्य करनेको तैयार नहीं हैं जिसके द्वारा नये परवानोंका नियन्त्रण नगर-परिषदके सदस्योंको सौंप दिया जायेगा और इस परिषदका चुनाव अधिकतर 'सिकरैमसैम' और उनके साथी ही करेंगे। महाशय, युद्धके पूर्व ब्रिटिश भारतीय प्रश्नका रूप जैसा था उसका थोड़ा-बहुत अनुभव आपको है। साथ ही आपको ब्रिटिश भारतीयोंका अनुभव भी है। पत्रकारितामें आपने स्वतन्त्र रुख अख्तियार किया है। मुझे निश्चय है, आप यह नहीं चाहते कि ब्रिटिश साम्राज्यके संघटक अंगोंके बीच जातीय विद्वेष बढ़े। संभवतः आप यह भी जानते होंगे कि आपके पत्र-लेखकने जिन तथ्योंको पेश किया है उनमें से कुछ असत्य हैं। जिन वक्तव्योंके प्रत्यक्ष मिथ्या होनेमें कोई सन्देह नहीं है उनकी भूल सुधारकर क्या आप अपने शुभव्रतका ही पालन नहीं करेंगे? [भारतीय केवल न्याय चाहते हैं, अनुग्रह नहीं।] ब्रिटिश झंडेके नीचे न्याय दुर्लभ वस्तु नहीं होनी चाहिए।

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-७-१९०५

१. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ४८८-८९।

२८. पत्र : रेवाशंकर झवेरीको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई १८, १९०५

आदरणीय रेवाशंकरभाई,[१]

आपका पत्र मिला। आप मेरे खातेमें ४५ रु० नामे लिखकर कैप्टन मैकग्रेगरके जमा कर लें। उतना मैंने उनके खाते नामे लिखकर आपका जमा कर लिया है।

चि० हरिलालको यहीं भेजनेमें कुशल दिखाई देती है। वहाँका खर्च जैसे बने वैसे कम करना बहुत जरूरी है। यहाँ मेरे ऊपर बोझा इतना है कि वहाँका खर्च उठाना मुश्किल है। उससे हरिलालका हित सधता हो, मुझे ऐसा भी नहीं दिखाई देता। रलियात बहनको[२] लिखे कि उन्हें अपना खर्च २० रु० से २५ रु० तक में चलाना चाहिए। मैंने भी उन्हें खर्च कम करनेके लिए लिखा है।[३]

चि० मणिलाल[४] और सूरजकी खबर पढ़कर सन्तोष हुआ है।

मोहनदासके प्रणाम

श्री रेवाशंकर जगजीवन ऐंड कं०
झवेरी बाजार
खारे कुआँके पास
बम्बई

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे; पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ६९६

२९. पत्र : रविशंकर भट्टको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई २१, १९०५

भाई श्री ५ रविशंकर भट्ट,

आपका पत्र मिला। मेरे विचारसे कोई भी भारतीय विद्वान आये हम सब उसका सम्मान करनेके लिए बाध्य हैं। उनके धर्मोपदेशसे हमारा सम्बन्ध नहीं है। उसका सम्मान करनेमें हिन्दू और मुसलमान दोनोंको शामिल होना चाहिए। इसलिए मैं समझता हूँ कि प्रोफेसर परमानन्दका[५]

१. डॉ० प्राणजीवन मेहताके सगे भाई। इनके जीवन-कालमें गांधीजी बम्बई जानेपर इनके ही घरमें ठहरते थे।

२. गांधीजीकी बड़ी बहन।

३. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

४. रेवाशंकरके पुत्र।

५. आर्यसमाजके प्रमुख नेता, जो पीछे भाई परमानन्दके नामसे अधिक प्रसिद्ध हुए। वे दक्षिण आफ्रिका भी गये थे, जहाँ उन्होंने कुछ भाषण दिये थे। देखिए "प्रो० परमानन्द", पृष्ठ ५१ और "प्रो० परमानन्दको मानपत्र", पृष्ठ ११३

सम्मान करना हम सबका फर्ज है। उनके धर्मोपदेशके सम्बन्धमें, जो उसमें उनके साथी हैं वे बादमें जो करना चाहेंगे वह करेंगे। इसलिए मुझे लगता है कि आपको उनका सम्मान करनेमें पीछे नहीं हटना चाहिए। चन्दा उगाहने आदिके लिए मैंने अपनी अनुमति नहीं दी है और न देनेका विचार है।

मो० क० गांधीके यथायोग्य

श्री आर० पी० भट्ट
बॉक्स ५२९
डर्बन

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे; पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ७२७

३०. पत्र: मेघराज व मूडलेको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई २१, १९०५

प्रिय महोदय,

आपका ९ तारीखका पत्र मिला। मेरी समझमें अभीतक जोहानिसबर्गमें चन्दा इकट्ठा करनेकी कोई जरूरत नहीं है। मेरे पास एक शिकायत भी आ चुकी है कि वहाँ चन्दा इकट्ठा[1] करनेके सिलसिलेमें मेरे नामका उपयोग किया जा रहा है। मैं चाहता हूँ कि आप इस स्वागतको कोई धार्मिक रूप न दें। आप जानते ही होंगे कि आर्यसमाजके उपदेश और सनातन हिन्दू धर्मके उपदेशोंमें अन्तर है, और सनातनियोंकी ओरसे एक शिकायत मेरे पास भेजी गई है। भारतसे आनेवाले किसी भी विद्वान भारतीयका आदर करना हमारा कर्तव्य है। मैं तो आपसे यह चाहूँगा कि भारतीयोंके सब वर्गोंकी ओरसे ऐसे व्यक्तियोंका उचित स्वागत किया जाये; किन्तु यह तभी हो सकता है जब उसमें कोई साम्प्रदायिक तत्त्व न हो; और, उसके बाद जो आर्यसमाजके उपदेशोंमें दिलचस्पी लेते हों वे उसे विशेष रूपसे देख लें।

आपका विश्वस्त,
मो० क० गांधी

श्री बी० ए० मेघराज व ए० मूडले
पो० ऑ० बॉक्स १८२
डर्बन

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ७३०

१. प्रो० परमानन्दके लिए; देखिए पिछला शीर्षक।

३१. पत्र : कैप्टन फॉउलको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई २१, १९०५

कैप्टन फॉउल
पो० ऑ० बॉक्स ११९९
जोहानिसबर्ग

प्रिय कैप्टन फॉउल,

देखता हूँ कि खुफिया पुलिसके लोग अभीतक बिना अनुमतिपत्रवाले भारतीयोकी खोजमें लगे हुए हैं। अपनी खोजमें उन्होंने १६ सालकी उम्रके लड़कोंकी भी जाँच की है। वे उपनिवेशमें आपके आश्वासनपर रह रहे हैं — विशेषतः वह एक लड़का जिसके बारेमे मैंने आपको लिखा है। महोदय, वे देखनेमे १६ सालसे कमके हैं। या, जब वे यहाँ आये थे तब तो अवश्य ही इसी उम्रके रहे होगे। दोष इतना ही है कि उनके माता-पिता यहाँ नही है। या तो वे अनाथ हैं, और अपने स्वाभाविक अभिभावकोंकी देख-रेखमे रहते हैं, या ऐसे हैं, जिनका लालन-पालन उनके माता-पिताकी जगह ले सकनेवाले रिश्तेदार कर रहे हैं। इसलिए मै आशा करता हूँ कि आप खुफिया पुलिसके लोगोंको यह आज्ञा देनेकी कृपा करेंगे कि जबतक मामला तय नही होता तबतक वे इन लोगोंको न छेड़े।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९०५), सख्या ७२९

३२. श्री ब्रॉड्रिकका बजट

भारत-मन्त्रीने ब्रिटिश लोकसभामें भारतीय राजस्व-लेखेपर विचारके लिए लोकसभाको समितिका रूप देनेके प्रस्तावपर जो बजट-विषयक वक्तव्य दिया, उसमे कई विशेषताएँ हैं। यह एक शुभ लक्षण है कि हालके वर्षोमें श्री ब्रॉड्रिकने अपना वक्तव्य, सदाकी भाँति अधिवेशनके अन्तमें पेश करनेके बजाय, जब कि बेंचें खाली पड़ी होती हैं और भारत-मन्त्री उनके सामने भाषणका स्वाग पूरा करते हैं, प्रायः प्रथम बार, उसके मध्यमें पेश किया है। यह परिवर्तन सोच-समझकर किया गया है। श्री ब्रॉड्रिकने कहा, "जल्द विचारका लाभ होगा — उपयोगी आलोचना और अच्छा शासन।" उन्होने यह आशा भी प्रकट की कि इस उदाहरणका आगे भी अनुसरण किया जायगा, चाहे वे भविष्यमें इस उच्च पदपर रहें अथवा विरोधी पक्षकी बेंचोंपर बैठें। श्री ब्रॉड्रिकने इस अवसरपर अत्यन्त स्पष्ट रूपसे बताया कि बहु-निन्दित भारतने साम्राज्यकी कितनी सेवा की है, और जिन दोनों सेवाओंपर उन्होंने इतना जोर दिया है वे ऐसी हैं कि उनकी ओर दक्षिण आफ्रिकाका ध्यान जाना चाहिए और उनकी सराहना होनी चाहिए।

उन्होंने कहा :

> **१९०२ और १९०३ में भारतके चौदह करोड़ तीस लाख पौंडके व्यापारमें से छः करोड़ बीस लाख पौंडका व्यापार सीधा ब्रिटेनके साथ था। और गत वर्षके सत्रह करोड़, सैंतालीस लाख और अड़तालीस हजार पौंडके व्यापारमें से सात करोड़ सत्तर लाख पौंडका माल सीधा ब्रिटेनमें आया या ब्रिटेनसे गया था। ब्रिटेनके व्यापारमें यह मात्रा छोटी नहीं है। कुछ लोग, कई दृष्टियोंसे, इस समय, उपनिवेशोंके व्यापारकी भारतके व्यापारके साथ तुलना कर रहे हैं। इसलिए यदि हम इन अंकोंकी तुलना करें तो मैं बतला सकता हूँ कि १९०२ में भारतको ब्रिटेनसे तीन करोड़ पैंतीस लाख पौंडका माल गया था। और यह निर्यात, कैनेडा, ब्रिटिश उपनिवेशों, उत्तरी अमेरिका और आस्ट्रेलियाको किये गये कुल निर्यातके बराबर था। गत वर्ष भारतको किये गये निर्यातका परिमाण बढ़कर चार करोड़ पौंड हो गया था, और वह, इस देशसे आस्ट्रेलिया, कैनेडा और केप उपनिवेशको किये गये कुल निर्यातके बराबर था।**

श्री ब्रॉड्रिकको इस सबका स्वाभाविक परिणाम निकालनेमें कोई कठिनाई नहीं हुई। इसलिए उन्होंने आगे कहा :

> **मुझे विश्वास है कि जब मैं यह कहूँ कि ब्रिटेनके साथ भारतका व्यापार बढ़तीपर है, तो मुझे आशा है, इस सभाका प्रत्येक सदस्य मेरा समर्थन करेगा। भारतके व्यापारमें ब्रिटेनका और ब्रिटेनके व्यापारमें भारतका भाग इतना अधिक है कि साम्राज्यके अन्तर्गत व्यापारके सम्बन्धमें जो भी विवाद हों उन सबमें हम भारतको प्रथम स्थान देनेका दावा कर सकते हैं।**

श्री ब्रॉड्रिकने जो दूसरा वक्तव्य दिया वह साम्राज्यकी रक्षाके विषयमें था। भारत पचहत्तर हजार ब्रिटिश सैनिकोंके प्रशिक्षणका और एक लाख चालीस हजार ब्रिटिश भारतीय सनिकोंकी भर्तीका स्थान है, और साम्राज्य इन सब सैनिकोंका किसी भी संकटके समय उपयोग कर सकता है। इन सबका खर्च भारत उठाता है, जो उसकी आठ करोड़ बीस लाख पौंडकी आमदनीमें दो करोड़ पाँच लाख पौंड बैठता है। लॉर्ड रॉबर्ट्ससे लेकर अबतक के सब नामी सेनापतियोंने भारतीय सेनाकी कुशलताकी पुष्टि की है। सर जॉर्ज व्हाइट और उनकी सेनाने, बोअर-युद्धके समय, अपनी इस तत्परताका प्रभावशाली उदाहरण उपस्थित किया था। ये सब तथ्य अर्थ-पूर्ण हैं। दक्षिण आफ्रिकाके राजनीतिज्ञोंको इन सबका अध्ययन और मनन करना चाहिए। और जब वे ऐसा कर चुकें तब हम उन्हें आदरपूर्वक सलाह देंगे कि वे अपने-आपसे यह प्रश्न करके देखें कि क्या विशुद्ध स्वार्थकी दृष्टिसे भी, भारतके निवासियोंके साथ, निरन्तर, बिलकुल ऐसे विदेशियोंका-सा व्यवहार करना लाभप्रद होगा जो कि उनकी ओरसे किसी भी प्रकारके लिहाजके अधिकारी न हों।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२-९-१९०५

३३. ट्रान्सवालमें एशियाई 'बाजार'

ट्रान्सवालके 'गवर्नमेंट गजट' के हालके अंकमें एक अध्यादेशका मसविदा प्रकाशित किया गया है। उसकी कुछ धाराएँ ये हैं :

(१) परिषद लेफ्टिनेंट गवर्नरकी मंजूरीसे, केवल एशियाई लोगोंके लिए, बाजारों या अन्य स्थानोंको अलग कर सकती है, कायम रख सकती है और चला सकती है; लेफ्टिनेंट गवर्नर द्वारा समय-समयपर बनाये गये नियमोंके अनुसार, उनका नियन्त्रण और निरीक्षण कर सकती हैं; और उनकी जमीनों या उनपर बनी इमारतों या अन्य निर्मित चीजोंको, उन शर्तोंपर एशियाइयोंको पट्टेपर दे सकती है जो समय-समयपर ऊपर कहे नियमोंके अनुसार तय की जायें।

(२) लेफ्टिनेंट गवर्नर १८८५ के कानून ३ या उसके किसी संशोधनकी धाराओंमें निर्दिष्ट किसी भी बाजारकी जगहों या अन्य स्थानोंको, नगरपालिकाकी किसी भी परिषदके नाम हस्तान्तरित कर सकता है; परन्तु ऐसा करते हुए उसके वर्तमान पट्टोंका खयाल रखा जायेगा; और ऐसे किसी भी हस्तान्तरणपर हस्तान्तरणके स्टाम्पका कर या रजिस्ट्रीका खर्च या कोई अन्य खर्च नहीं लगेगा; और इस प्रकार हस्तान्तरित किया गया कोई भी बाजार या स्थान, इस खण्डके उपखण्ड (१) के अन्तर्गत पृथक्कृत बाजार या क्षेत्र माना जायेगा।

(३) इस अध्यादेशके खण्ड २ के नियमोंके अनुसार आवश्यक परिवर्तनोंके साथ, किसी परिषदको अधिकार है कि वह चाहे तो ऐसे बाजारों और स्थानोंको बन्द कर दे और इनके लिए दूसरी उपयुक्त जमीनका बन्दोबस्त करे।

(४) इस खण्डका "परिषद" शब्द किसी भी नगरपालिकाकी परिषदका सूचक होगा, फिर वह नगरपालिका चाहे १९०३ के नगर-निगम अध्यादेशके अन्तर्गत बनी हो, चाहे १९०४ के संशोधित नगर-निगम अध्यादेश या किसी अन्य विशेष कानूनके अन्तर्गत।

जोहानिसबर्गके ब्रिटिश भारतीय संघने, 'बाजारों' का नियन्त्रण नगरपालिकाओंको हस्तान्तरित कर देनेके विचारका अविलम्ब प्रतिवाद[1] किया है। हमारी सम्मतिमें, ऐसे हस्तान्तरणके विरोधमें की गई आपत्तियाँ अकाट्य हैं। सारा ही एशियाई प्रश्न अभी विचाराधीन है, और उसके सम्बन्धमें साम्राज्य सरकार और स्थानीय सरकारके बीच पत्र-व्यवहार हो रहा है। १८८५ का कानून ३, जैसा दोनों पक्षोंने कहा है, अस्थायी है और यथाशीघ्र हटा दिया जायेगा। इसलिए कोई भी ऐसा विधान, जिसका आधार यह कानून हो और जिससे पाबन्दियाँ बढ़ती हों, उस उदार नीतिके अनुरूप नहीं हो सकता जिसका पालन करनेके लिए स्थानीय सरकारें बाध्य हैं। यदि यह बात नहीं है तो श्री लिटिलटनके इस वक्तव्यका क्या अर्थ होगा कि कमसे-कम युद्धसे पहलेकी अवस्थाएँ जैसीकी तैसी रहने दी जायेंगी। इसके अतिरिक्त रंगके प्रश्नपर ट्रान्सवालकी नगरपालिकाओं और स्थानिक निकायोंके पूर्वग्रह बड़े प्रबल हैं। वे इसका ढोल पीटनेमें संकोच

१. देखिए "पत्र: उपनिवेश-सचिवको", पृष्ठ १२।

नहीं करते; और कुछ नगरपालिकाएँ और निकाय, संभव होता है तो, इसके लिए हिंसा तक करनेको तैयार रहते हैं। इन परिस्थितियोंमें, जब कि भावी स्थिति अनिश्चित है, ट्रान्सवाल सरकार द्वारा नये कानूनका बनाया जाना अजीब मालूम होता है, मानो १८८५ का कानून ३, कानूनकी किताबमें से कभी हटाया ही नहीं जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२–७–१९०५

३४. एक गुप्त बैठक

हमारे सहयोगी 'ट्रान्सवाल लीडर' ने अपने प्रिटोरियाके संवाददाताका भेजा हुआ इस आशयका एक संवाद प्रकाशित किया है कि परमश्रेष्ठ सर आर्थर लालीने एशियाई-विरोधी सम्मेलन (एंटी एशियाटिक कनवेंशन)के नेताओंको निजी तौरपर मुलाकात दी। मुलाकातियोंमें श्री लवडे और श्री बोर्क भी शामिल थे। संवाददाताने यह भी लिखा है कि मुलाकात देर तक चली और मुलाकाती सर आर्थरके पाससे पूरे सन्तोषके साथ लौटे। मुलाकातमें दरअसल क्या हुआ, इसे प्रकट नहीं किया गया। लॉर्ड सेल्बोर्नने बोअर नेताओं और 'जिम्मेदार संघ' (रिस्पॉन्सिबल असोसिएशन)के सदस्योंसे मिलनेपर दूसरा ही रुख अपनाया। उन्होंने पत्र-प्रतिनिधियोंको निमन्त्रित किया और कार्रवाई प्रकाशित कराई। तो फिर, एशियाई मामलोंको इतना लुकाने-छिपानेकी क्या जरूरत थी? यदि मुलाकाती यह चाहते थे, तो क्या इसका मतलब यह है कि वे अपने कृत्यों और वक्तव्योंपर रोशनी पड़ने देनेसे डरते थे? और यदि सर आर्थरने गोपनीयता पसन्द की थी तो हम अदबके साथ जानना चाहते हैं कि ऐसा करनेमें उनका मंशा क्या था? उन्हें क्या यह आशंका थी कि श्री लवडे बिलकुल अंधाधुंध वक्तव्य देंगे और इसलिए उन्हें अपनी शर्मपर परदा डालनेकी फिक्र थी? ब्रिटिश भारतीय चाहते हैं कि उनके विरुद्ध या पक्षमें जो कुछ भी कहा जाये वह पूरी तरह खुल्लमखुल्ला कहा जाये। उन्हें किसी बातका डर नहीं है, वे किसी बातको न बढ़ाकर कहना चाहते हैं न घटाकर, क्योंकि उनका पक्ष सर्वथा न्यायपूर्ण है। इसलिए हम आशा करें कि ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंको कमसे-कम उन बातोंपर विचार करनेका अवसर अब भी दिया जायेगा जो उनकी पीठ पीछे, मुलाकातियोंने परमश्रेष्ठ लेफ्टिनेंट गवर्नरसे कही।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२–७–१९०५

३५. क्रूगर्संडॉर्पके भारतीय

क्रूगर्संडॉर्पमें भारतीयोंके बारेमे सभा[1] हो जानेपर नगरपरिषदके नाम वहाँके डॉक्टरकी रिपोर्ट आई है। उन्होने उसमे लिखा है कि भारतीयोके मकान अधिकतर गन्दे पाये जाते है, वे चाहे जहाँ थूक देते हैं, उनके पाखाने बड़े गन्दे होते है, पाखानोंकी जमीनपर पानी भरा रहता है जो बिलकुल नही सूखता है, वे दूकानपर ही बैठते और सोते है, इत्यादि। हम जानते है कि इसका बहुत-सा हिस्सा झूठ है और क्रूगर्संडॉर्पके भारतीयोंका कर्तव्य है कि वे इसके खिलाफ रिपोर्ट प्राप्त करे। फिर भी हमें ऊपरके आक्षेप एक हद तक स्वीकार करने पडेगे। इस बातसे कोई इनकार नही कर सकता कि हम लोग चाहे जहाँ थूक देते है और अपने पाखाने गन्दे रखते है। हम लोग पाखानोंकी सफाईकी ओरसे आम तौरपर उदासीन रहते है। हम यह अनुभव करते है कि हमे उदासीनता छोड़ देनी चाहिए। पाखानोमे से अनेक रोग लगते है, यह बात साबित हो सकती है। पाखाने साफ रखना बहुत आसान बात है। पाखानेके बाद हर बार बाल्टीमें सूखी मिट्टी या राख डाली जाये और तख्तोको हमेशा जन्तुनाशक पानीसे धोकर साफ किया जाये। यदि हमेशा ऐसा किया जाये तो इसमे समय खर्च नही होता और बहुत घिन करनेका कारण भी नही रह जाता।

[हमे थूकनेके बारेमें भी विचार करना चाहिए। घरमे अथवा दूकानमें चाहे जहाँ थूकनेके बजाय रूमालमे अथवा थूकदानमे थूकनेकी आदत डालना हर तरह जरूरी है।]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२–७–१९०५

३६. ट्रान्सवालमें भारतीय होटल

ट्रान्सवालमे भारतीय होटलोंके बारेमें आजतक कोई कानून नही बना है। काफिरोके भोजन-गृहों या गोरोके होटलोके परवाने लेने पड़ते है। ट्रान्सवालमे चीनियोकी सख्या बढ़ जानेसे चीनी होटल खुलने लगे। इनके लिए परवानेकी कोई जरूरत नही थी। डरके मारे चीनियोने सरकारसे परवाने माँगे। सरकारने लिखा कि परवानोंकी जरूरत नही है। चीनियोने यह समझा कि परवानेके बिना होटल खुल ही नही सकता, इस कारण उन्होंने सरकारको अर्जी भेजी कि परवानेका कानून बनना चाहिए। कहावत है, अपनी करनी, पार उतरनी। तदनुसार, अब इस सम्बन्धमे 'गवर्नमेट गजट' मे विधेयक प्रकाशित कर दिया गया है। अब होटलोके भारतीय मालिकोको भी परवाने लेने पडेंगे। इस विधेयकका विरोध भी नही किया जा सकता। इसलिए ट्रान्सवालमे जो लोग भारतीय भोजनालय चलाते है उनको बहुत सावधानीसे चलना होगा। हमारा खयाल यह है कि मकान बहुत स्वच्छ होंगे तभी परवाने मिलेगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२–७–१९०५

1. जून २३, १९०५ को।

३७. जोजेफ़ मैजिनी

जानने योग्य कार्यकलाप

इटली एक नवोदित राष्ट्र है। सन् १८९० से पहले वह बहुतसे छोटे-छोटे भागोंमें बँटा था और उनमें से प्रत्येकका शासक एक सरदार था। जैसा इन दिनों भारत या काठियावाड़ है वैसा सन् १८७० से पहले इटली था। लोग एक भाषा बोलते थे। एक स्वभावके थे, फिर भी सबके-सब छोटी-छोटी रियासतोंके अधीन थे। आज इटली यूरोपका एक स्वतन्त्र देश है और इटलीके लोगोंकी एक पृथक् जातीयता कही जाती है। यह कहा जा सकता है कि यह सब एक ही पुरुषके हाथसे हुआ है। उस पुरुषका नाम था जोजेफ मैजिनी।

मैज़िनी जेनोआमें १८०५ के जून महीनेकी २२ तारीखको जन्मा था। वह ऐसा सच्चरित्र, भला और स्वदेशाभिमानी पुरुष था कि उसके जन्मसे सौ वर्ष बाद उसकी जन्म-शताब्दी मनानेका आन्दोलन यूरोप-भरमें किया जा रहा था और वह अब भी जारी है; क्योंकि, यद्यपि उसने इटलीकी सेवा करनेमें अपना सारा जीवन बिताया, फिर भी उसका मन इतना उदार था कि वह हर देशका निवासी गिना जा सकता है। प्रत्येक देशके लोग उन्नत हों और मिलकर रहे, यह उसकी सतत सीख थी।

मैज़िनीकी प्रखर प्रतिभा १३ वर्षकी आयुमें ही दिखाई देने लगी थी। उसने बड़ी विद्वत्ता प्रदर्शित की, किन्तु फिर भी अपने देशके लिए उसके दिलमें जो आग थी उसके कारण उसने अन्य पुस्तकें छोड़कर कानूनका अध्ययन शुरू किया और अपने कानूनी ज्ञानका उपयोग गरीबोंको मुफ्त सहायता देनेमें करने लगा। फिर वह उस गुप्त संगठनमें शामिल हो गया जिसका उद्देश्य इटलीको संगठित करना था। उसका पता इटलीकी रियासतोंको चल गया, अतः उन्होंने उसे जेलमें भेज दिया। जेलमें भी उसने अपने देशकी मुक्तिका आयोजन जारी रखा। अन्तमें उसे इटली छोड़ना पड़ा। वह मार्सेल्ज़में जा रहा। रियासतोंने अपना प्रभाव काममें लाकर उसको वहाँसे भी निर्वासित करा दिया। इस प्रकार भटकते रहनेपर भी उसने हार नहीं मानी। वह लेख लिख-लिखकर गुप्त रूपसे इटली भेजता रहा। इसका प्रभाव धीरे-धीरे लोगोंके मनपर पड़ने लगा। यह सब करते हुए उसने बहुत कष्ट सहन किये। उसे जासूसोंसे बचनेके लिए गुप्त वेशमें भ्रमण करना पड़ा था। कई बार उसकी जान भी जोखिममें पड़ जाती थी; लेकिन इसका उसे डर नहीं था।

अन्तमें वह सन् १८३७ में ब्रिटेन गया। वहाँ उसे बहुत कष्ट तो नहीं था, किन्तु गरीबी बहुत भुगतनी पड़ती थी। इंग्लैंडमें वह बहुत बड़े-बड़े व्यक्तियोंके संपर्कमें आया। उसने उनसे मदद माँगी।

सन् १८४८ में वह गैरीबाल्डीको साथ लेकर इटली गया और वहाँ स्वराज्य स्थापित किया। किन्तु षड्यन्त्रकारी लोगोंके कारण वह देरतक नहीं टिक सका और उसे दुबारा भागना पड़ा। फिर भी उसका बल नहीं टूटा। उसने ऐक्यका जो बीज बोया था, वह बना रहा। और यद्यपि वह स्वयं देशसे निर्वासित रहा फिर भी सन् १८७० में इटली एक राज्य बन गया। उसका राजा विक्टर इमेन्यूयल हुआ। इस प्रकार उसे अपने देशके संगठित होनेसे संतोष मिला। फिर भी उसे स्वदेशमें लौटनेकी इजाजत नही थी। इसलिए वह छद्म वेषमें इटली जाया करता

था। एक बार उसे पुलिस पकड़नेके लिए आई। तब उसने स्वयं दरबानका वेश बनाकर दरवाजा खोला और इस प्रकार पुलिसको चकमा दिया।

यह महान पुरुष सन १८७२के मार्च महीनेमें चल बसा। इस समय उसके शत्रु भी मित्र हो गये थे। लोग उसकी सच्ची खूबियोंको पहचान गये थे। उसकी अर्थीके साथ अस्सी हजार लोग गये थे। जेनोआमें वह सबसे ऊँची जगहपर दफन किया गया। इटली और यूरोपके शेष देश आज इस पुरुषकी पूजा करते हैं। इटलीके महापुरुषोंमें उसकी गिनती है। वह सदा स्वार्थ-रहित, अहंकार-रहित, अत्यन्त पवित्र और धर्मनिष्ठ पुरुष रहा। गरीबी उसका आभूषण थी। वह पराये दुःखको अपना दुःख मानता था। ससारमें ऐसे उदाहरण विरले ही दीख पड़ते हैं जहाँ एक ही मनुष्यने अपने मनोबलसे और अपनी उत्कट भक्तिसे, अपने देशका अपने जीवन-कालमें उद्धार किया हो। ऐसा पुरुष तो मैजिनीकी माँने ही उत्पन्न किया था।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२–७–१९०५

३८. ट्रान्सवाल आनेवाले भारतीयोंको महत्त्वपूर्ण सूचना[1]

ट्रान्सवालमें आजकल अनुमतिपत्रोंके बारेमें भारतीयोंपर सख्ती की जा रही है। बहुत लोग, जो जाली अनुमतिपत्रोंके बलपर यहाँ ठहरे हुए थे, निर्वासित कर दिये गये हैं। अनुमतिपत्रोंपर जिनके अँगूठेके निशान नहीं थे ऐसे कुछ लोगोंको छः-छः सप्ताहकी कैदकी सजा दी गई है। अभी कुछ अन्य लोगोंको परेशानी होनेकी सम्भावना है। यह भी खयाल है कि अनुमतिपत्र-अधिकारी विभिन्न गाँवोंमें जाँच करनेके लिए जायेंगे। इसलिए जिनके पास जाली अनुमतिपत्र हों उनका तुरन्त ट्रान्सवाल छोड़कर चले जाना जरूरी है। जाली अनुमतिपत्रका उपयोग बिलकुल न किया जाये, नहीं तो जेल भुगतनेकी नौबत आयेगी।

आजतक १६ वर्षसे कम आयुके लड़कों और औरतोंको अनुमतिपत्रोंके बिना जाने देते थे; लेकिन अनुमतिपत्रोंकी जाँच शुरू होनेके बाद सीमापर बहुत सख्ती की जा रही है। अब १६ वर्षसे कम आयुका लड़का अपने पिताके साथ न हो अथवा स्त्री अपने पतिके साथ न हो तो उसको अनुमतिपत्र न होनेपर रोक लिया जाता है। एक स्त्री अपने पतिके बिना ट्रान्स-वाल जा रही थी। वह फोक्सरस्टमें उतार दी गई। इससे ट्रान्सवालमें भारतीयोंको नीचे लिखी बातें ध्यानमें रखनी चाहिए।

(१) जाली अनुमतिपत्र लेकर यहाँ प्रवेश न करें।

(२) स्त्रियाँ अनुमतिपत्र न होनेपर अपने पतिके बिना प्रवेश न करें।

(३) १६ वर्षसे कम आयुके लड़के भी अपने पिताके साथ ही अनुमतिपत्रके बिना प्रविष्ट हो सकते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२–७–१९०५

१. यह "हमारे जोहानिसबर्ग संवाददाता द्वारा प्रेषित," रूपमें प्रकाशित हुआ था।

३९. पत्र: बीमा कम्पनीके एजेंटको[1]

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई २५, १९०५

सेवामें
एजेंट
न्यूयॉर्क म्यूचुअल लाइफ इन्श्योरेंस सोसायटी
जोबर्ट स्ट्रीट
जोहानिसबर्ग

प्रिय महोदय,

आपको याद होगा कि श्री आनन्दलाल अमृतलाल गांधी[2] और श्री अभयचन्द अमृतलाल गांधीका[3] मेरी मार्फत बीमा हुआ था। उनकी पालिसियोंका नं० क्रमश: ३३६९००३ और ३३६९००४ है। मुझे मालूम हुआ है कि कुछ दिनोंसे इन पालिसियोंकी किश्तें नहीं दी गई हैं। क्या आप कृपया मुझे यह बता सकेंगे कि इन बीमा पालिसियोंको फिरसे जारी करना सम्भव है या नहीं? और यदि सम्भव है तो किन शर्तोंपर? यदि बीमा करानेवाला सज्जन उन्हें फिरसे जारी न कराना चाहे तो जो किश्तें वे दे चुके हैं, उनमें से उन्हें कुछ रकम वापस मिल सकती है या नहीं?

आपका विश्वस्त,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ७७१

४०. क्रूगर्सडॉर्पमें भारतीय

क्रूगर्सडॉर्पकी नगर-परिषदने सरकारको अर्जी भेजी है कि भारतीयोंको अनिवार्य रूपसे बस्तियोंमें भेजनेका कानून बनाया जाना चाहिए। ट्रान्सवाल सरकारने उत्तर दिया है कि, फिलहाल कुछ नहीं किया जा सकता, क्योंकि ब्रिटिश सरकारके साथ इस सम्बन्धमें पत्र-व्यवहार हो रहा है। इससे मालूम होता है कि श्री लिटिलटन और सर आर्थर लालीके बीच विवाद अभी चल ही रहा है। सर आर्थरकी यह माँग है कि केवल भारतीयोंपर ही लागू होनेवाले कानून बनाये जाने चाहिए। परिणामका पता आगामी वर्षसे पहले लगनेकी सम्भावना नहीं है। इस बीच हम उम्मीद करते हैं कि क्रूगर्सडॉर्पके भारतीय अपने मकान साफ-सुथरे रखेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-७-१९०५

१. गांधीजीने अगस्त ८, १९०५ को इसी तरहका एक पत्र बम्बईके एजेंटको लिखा था। सम्भवतः वह कम्पनीके जोहानिसबर्ग-कार्यालयकी सूचनापर लिखा गया होगा।
२-३. गांधीजीके चचेरे भाई अमृतलाल गांधीके पुत्र और तुलसीदास गांधीके पौत्र।

४१. ट्रान्सवालमें अनुमतिपत्र

हम 'गवर्नमेंट गजट'से लेकर यह छाप चुके हैं कि ट्रान्सवालमें कुछ अनुमतिपत्र रद कर दिये गये हैं[1]। कुछ लोगोंने इसका अर्थ यह लगाया है कि बताई हुई संख्याओंके सच्चे अनुमतिपत्रोंके मालिकोंको भी भागना पड़ेगा और उनके अनुमतिपत्र अवैध हो गये हैं। यह विचार भ्रान्तिपूर्ण है। जिनके अनुमतिपत्र वैध हैं और जिनके अँगूठेके निशान उनपर लगे हुए हैं उनको बिलकुल नहीं घबराना चाहिए। 'गजट'में नाम प्रकाशित होनेपर भी उनके अनुमतिपत्र रद नहीं होते हैं। यही बात रजिस्टरोंपर भी लागू होती है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-७-१९०५

४२. बाल्टिकके बेड़ेका रहस्य

बाल्टिक बेड़ेकी हारकी पूरी कहानीपर प्रकाश डालनेवाला रोजदीस्तवेन्स्कीका[2] जारके नाम प्रेषित पत्र सचमुच दयाजनक है। यद्यपि वह पत्र एक हारे हुए सेनापतिने लिखा है, फिर भी कोई यह न मानेगा कि उसमें बताये गये कारण उन्होंने अपनी हारके स्पष्टीकरणके लिए बहानेके रूपमें पेश किये हैं। जो गुप्त तथ्य अब प्रकट हुए हैं उनसे यह स्पष्टतः सिद्ध हो जाता है कि इस बेड़ेकी जो भीषण पराजय हुई वह अवश्यम्भावी थी। संसारके चतुरसे-चतुर सामुद्रिक युद्ध-विशारद कहते थे कि यह बेड़ा जापानियोंकी पूरी-पूरी खबर लेगा। ऐसा अनुमान लोग इसलिए लगाते थे कि इस बेड़ेके युद्धपोत अतिविशाल, शस्त्रास्त्रोंसे बहुत अच्छी तरह सज्जित और तेजीसे चलनेवाले थे। उनमें नयेसे-नये ढंगकी बढ़िया तोपें लगी थीं और उनके सेनापति बड़े दक्ष माने जाते थे। लेकिन जैसा कि जल सेनाध्यक्ष रोजदीस्तवेन्स्कीने लिखा है, उस बेड़ेकी ऐसी महत्ता केवल कागजी ही थी। उन्होंने जारको पत्रमें लिखा है कि शासन-व्यवस्थाकी खराबीके कारण युद्ध-पोतोंका निर्माण लज्जाजनक ढंगसे किया गया था। यही नहीं, उनमें हथियार और बख्तर आदि लगानेकी भी बड़ी कमियाँ थीं। तोपें ठीक तरह गोले नहीं फेंक पाती थीं, कोयलाघरमें पूरा कोयला नहीं भरा जा सकता था। उनकी तेज चालका वर्णन झूठा किया गया था, उनके एंजिन सदा ऐसी आवाज करते रहते थे मानो उनका सारा ढाँचा ढीला हो गया हो, दो-तिहाई नाविक निकम्मे थे; तोपचियोंको अपने कर्तव्योंका पता नहीं था और सबसे खराब बात तो यह थी कि माडागास्करसे आगे चलकर सब लोग विद्रोही हो गये थे। इस प्रकारका बेड़ा युद्ध करे तो परिणाम उसकी हारके सिवाय अन्य कुछ नहीं हो सकता। फार्मोसा छोड़नेके बाद क्या-क्या हुआ इसका यथार्थ वर्णन उस पत्रमें दिया गया है। वह अपने बेड़ेकी इस स्थितिको पहलेसे ही जानता था और ऐसी स्थितिमें उसने युद्धका उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेकर जो बहादुरी बताई उससे उसकी राज्यभक्ति ही प्रकट होती है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-७-१९०५

१. इनकी सूची ८ और १५ जुलाई, १९०५ के इंडियन ओपिनियनमें दी गई थी।

२. बाल्टिक नौसेनाध्यक्ष रिअर एडमिरल रोजदीस्तवेन्स्की।

४३. नेटालके गिरमिटिया भारतीय

श्री जेम्स ए० पॉलकिंगहॉर्नने गत ३१ दिसम्बरको समाप्त होनेवाला अपना वार्षिक विवरण प्रकाशित किया है। जैसा कि एक सहयोगी लिखता है, यह विवरण देरसे प्रकाशित हुआ है। नेटालमें अधिकांश सरकारी विवरण इसी तरह प्रकाशित होते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि इसके परिणामस्वरूप उनमें वह दिलचस्पी नहीं ली जाती जो उनके तात्कालिक प्रकाशनपर ली जाती। वर्तमान विवरण फिरसे गिरमिटकी शर्त लगानेपर और व्यक्ति-करके बारेमें प्रवासी अधिनियमके अमलपर यथेष्ट प्रकाश डालता है। अतः वह साधारणसे अधिक दिलचस्पीकी चीज है। भारतीय गिरमिटिया आबादीकी अबतक दी गई संख्याकी अपेक्षा यह अधिक सही संख्या भी देता है। संरक्षक द्वारा दी गई जानकारी 'आँखें खोलनेवाली' है। गत तीन वर्षोंमें भारतीय आबादी बहुत काफी बढ़ी है। १८७६ से १८९६ के बीचमें यह ३१,७१२ थी, १९०२ में यह, ७८,००४ थी और १९०४ के अन्तमें यह ८७,९८० हो गई। इस तरह दो वर्षमें लगभग १०,००० की वृद्धि हुई। और तो भी संरक्षकका अन्यत्र कहना है कि १९०२ मे १९,००० गिरमिटियोंके लिए प्रार्थनापत्र दिये गये हैं। वे इस माँगकी पूर्ति नहीं कर सके हैं। इस प्रकारके मजदूरोंकी माँग इतनी बड़ी है कि नये प्रार्थनापत्रोंको सर्वथा अस्वीकार कर देना आवश्यक हो गया है। इस बड़ी वृद्धिका कारण स्पष्ट है। इस श्रेणीके मजदूर बहुत लोकप्रिय हैं और उपनिवेशमें उनकी लोकप्रियता बढ़ती जा रही है। जो लोग आते हैं वे बड़ा संतोष प्रदान करते हैं और हजारों उपनिवेशियोंकी सुखद जीविका भारतसे गिरमिटिया मजदूरोंके सतत प्रवाहपर बहुत अंशोंमें निर्भर करती है। इससे जो निष्कर्ष निकलता है वह भी स्पष्ट है। भारतीयोंके अवांछनीय नागरिक होनेके बारेमें यहाँ जो हल्ला है वह अधिकांश रूपसे झूठा अथवा स्वार्थभरा है। ऊपर दिये गये आँकड़ोंसे जो निष्कर्ष निकलता है उसका आश्चर्यजनक समर्थन हमें परमश्रेष्ठ नेटालके गवर्नरके हाल ही के भाषणमें मिलता है। कृषि प्रदर्शनीके उद्घाटनके समय उन्होंने कहा था कि नेटालकी तटीय भूमिके विकासके लिए भारतीय कृषक अनिवार्य हैं।

संरक्षक महोदय व्यक्ति-कर और फिरसे गिरमिटमें प्रवेश-संबंधी कानूनके अमलसे बहुत अधिक असन्तुष्ट हैं। वे कहते हैं कि इस कानूनसे लोग बहुत अधिक बच निकलते हैं और जिन भारतीयोंकी गिरमिटकी अवधि समाप्त हो जाती है उनको भारत वापस भेजनेमें यह कानून असफल रहा है। जो लोग यहाँ रह गये हैं उनमें से बहुतेरे व्यक्ति-करसे बचनेमें सफल हो गये हैं। गत वर्ष ८८८ पुरुषों और ३४५ स्त्रियोंने नये कानूनके अधीन गिरमिटकी अवधि समाप्त की। इस संख्यामे से केवल १३७ पुरुषों और ३२ स्त्रियोंने पुनः गिरमिटमें आनेकी अर्जी दी। २०१ पुरुष और ५८ स्त्रियाँ भारत लौट गये। ३७५ पुरुषों और १४६ स्त्रियोंने कर चुकाया और यह लेखा तैयार करते समय १७० पुरुषों और १०५ स्त्रियोंके बारेमें कुछ स्थिर नहीं किया जा सका। इसपर आश्चर्य करनेकी बात नहीं है। व्यक्ति-कर राजस्व बढ़ानेका कोई सन्तोषजनक तरीका नहीं है। उपनिवेशमें बसनेमें इसके कारण रुकावट नहीं आई। अधिनियम बनानेवालोंने किसी ऐसे परिणामकी आशंका नहीं की थी। गिरमिटिया भारतीयोंको इससे खीज उत्पन्न होती है। यह उनसे अनुचित ढंगसे धन वसूल करनेका जरिया है और नेटालके सुन्दर नामपर एक धब्बा लगाता है। और इससे भी अधिक दुःखकी बात यह है कि यह कर उन

लोगोंपर लगाया गया है, जिनकी सेवाएँ, जैसा कि दिखाया जा चुका है, उपनिवेशकी भलाईके लिए अनिवार्य मानी गई है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५-८-१९०५

४४. जापान कैसे जीता?

न्यू यॉर्कमे संवाददाताओने बैरन कोमुरासे प्रश्न किया कि जापानकी जीतके कारण क्या है? बैरन कोमुराने जो उत्तर दिया वह सदाके लिए मनमें अंकित कर लेने योग्य है। उन्होंने कहा कि जापानकी माँग न्यायोचित है, यह एक कारण है। दूसरा कारण यह है कि जापानमे ऐक्य है। अधिकारियों और लोगोमें भ्रष्टाचार नही है। प्रत्येक व्यक्ति अपना-अपना कर्तव्य पूरा करता है। जापानी आलसी अथवा काहिल नही है और अत्यन्त सादगीसे रहते है। जापानी सादगीसे रहनेके कारण रूसियोसे टक्कर ले सके है। थोड़े कपड़े और आहारमें थोड़ी चीजोंकी आवश्यकता इत्यादि कारणोसे जापानी सैनिकोकी खाद्य-सामग्री आदि कम गाड़ियोमे ढोई जा सकती है। परिणामस्वरूप जापानियोको बहुतसे सैनिकोंको दूर तक ले जानेमे कम असुविधा रहती है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५-८-१९०५

४५. पत्र: दादा उस्मानको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त ५, १९०५

श्री सेठ दादा उस्मान,

पत्र मिला। श्री वाइलीको हकीकत भेजी है। उसकी नकल आपको भी भेजता हूँ। आपके परवानेके बारेमे आपका चेक मिलनेके बाद मैने आजतक कोई फीस नामे नही लिखी है। मुझे लिखनी चाहिए कि नही, जवाब लिखे।

विज्ञापन इकट्ठे किये, यह ठीक किया। चेक लिये या नही?

दफ्तरसे श्री लैविस्टरका मशविरा वगैरह कागजात भेजे।

मो० क० गांधीके सलाम

श्री दादा उस्मान
बॉक्स ८८
डर्बन

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे; पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ८७१

४६. पत्र : कुमारी बिसिक्सको[1]

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त ५, १९०५

प्रिय कुमारी बिसिक्स,

मुझे आपकी परेशानियोंके लिए बहुत अफसोस है। मुझे लगता है कि आपने जिन चीजोंका उल्लेख किया है वे वापस नहीं ली जा सकेंगी, क्योंकि न्यासीसे मुझे मालूम हुआ है कि वे बिक्रीमें शामिल कर ली गई हैं। चालू धन्धेके रूपमें बिक्रीसे केवल २१० पौंड वसूल हुए हैं। मुझे पता चला है कि कारोबार ब्राउन बन्धुओंने खरीदा है।

मैंने भगिनी हीलिएलसे कहा था कि शायद मैं सोमवारको आपके पास साइकिलसे चला आऊँ; किन्तु मुझे दुःख है कि मैं नहीं आ सकूँगा।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

कुमारी बिसिक्स
मारफत बॉक्स ४२०७

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ८७२

४७. पत्र : उमर हाजी आमदको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त ५, १९०५

श्री सेठ उमर हाजी आमद,

आपका पत्र मिला। मैरित्सबर्गमें विज्ञापन इकट्ठे किये, यह जानकर खुशी हुई।

आप फीनिक्स गये होंगे। नियमित रूपसे जाते रहिए। नींदमें खलल न पहुँचे, ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए।

मो० क० गांधीके सलाम

श्री उमर हाजी आमद
बॉक्स [४४१]
डर्बन

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे; पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ८७४

१. कुमारी एडा बिसिक्स एक उद्योगी थियोसॉफिस्ट थीं। उन्होंने एक छोटा निरामिष उपाहार-गृह खोला और बादमें उसका विस्तार करनेका निर्णय किया। वह सहायताके लिए गांधीजीके पास आईं। उन्होंने अपने एक मुवक्किलके एक हजार पौंड उसकी मंजूरीसे कुमारी बिसिक्सको दे दिये; परन्तु वे उन्हें कभी वापस नहीं मिले। उसकी क्षतिपूर्ति उन्होंने स्वयं की। देखिए आत्मकथा भाग ४, अध्याय ६।

४८. पत्र : अब्दुल हक व कैखुसरूको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त ५, १९०५

भाई अब्दुल हक व कैखुसरू,

आपका पत्र मिला। रुस्तमजी सेठका पत्र वापस भेजता हूँ। मैं उन्हें लिखूँगा। भाड़ेके बारेमें जो अर्थ आप निकालते हैं सो निकल सकता है। किन्तु उसकी चिन्ता किये बिना घर खाली न रहे, इसपर पर्याप्त ध्यान रखा जाये, इतना काफी है। आजम मूसा हुसेनके मुख्त्यार-नामेका अभी उपयोग नहीं हो रहा है। आपने पत्रपर पूरी टिकटें नहीं लगाई थी।

मो० क० गांधीके सलाम

संलग्न : १

पेढ़ी जालभाई सोराबजी ब्रदर्स
११० फील्ड स्ट्रीट
डर्बन

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे; पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ८७६

४९. पत्र : मुख्य अनुमतिपत्र-सचिवको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त ८, १९०५

सेवामें
मुख्य अनुमतिपत्र-सचिव
पो० ऑ० बॉक्स ११९९
जोहानिसबर्ग

महोदय,

विषय : अब्दुल कादिरके[1] अनुमतिपत्रकी नकल

पिछले महीनेकी १४ तारीखके आपके पत्र, संख्या ६५० से मुझे सूचना मिली कि अब आपने मेरे मुवक्किलके अँगूठेके निशानकी जाँच कर ली है और उसके अनुमतिपत्र तथा पंजीयनका पता लगा लिया है।

मैं निवेदन करता हूँ कि ऐसे मामलोंमें एक दूसरा अनुमतिपत्र अथवा किसी प्रकारका प्रमाणपत्र जारी करना आवश्यक है, ताकि पंजीकृत निवासी बिना परेशानीके वापस आ सके। मेरा मुवक्किल भारत जानेवाला है और इसलिए यदि आप उसे प्रमाणपत्र दे दें तो मैं बहुत

१. नेटाल भारतीय कांग्रेसके अध्यक्ष, १८९९–१९०१।

कृतज्ञ हूँगा। इसमें जालसाजीका प्रश्न नहीं हो सकता, क्योंकि जो प्रमाणपत्र आप जारी करेंगे उसपर अँगूठेका निशान रहनेके कारण किसी औरके द्वारा उसका उपयोग नहीं किया जा सकेगा।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ८८९

५०. पत्र : अब्दुल हकको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त ८, १९०५

भाई अब्दुल हक,

पारसी कावसजी लिखते हैं कि उन्हें ५० पौंड दिये जायें तो आप उनकी ओरसे एक वर्षकी जमानत दे देंगे। रुस्तम सेठ क्या कह गये हैं, यह आपको मालूम होगा। अपने खाते लिखकर उतनी रकम पारसी कावसजीको देना आपको उचित दिखे, तो लिखिए। तब मैं उमर सेठको उतने पौंडका चेक काटनेको लिखूँगा।

आजकल किराया हर माह कितना है, लिखिए।

मो० क० गांधीके सलाम

श्री अब्दुल हक
मारफत पेढ़ी जालभाई सोराबजी ब्रदर्स
११० फील्ड स्ट्रीट
डर्बन

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे; पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ८९०

५१. पत्र : तैयब हाजी खान मुहम्मदको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त ८, १९०५

सेठ श्री तैयब हाजी खान मुहम्मद,

आपके दावेके[1] बारेमें साथकी नकलके मुताबिक जवाब दिया है। मुझे दुःख है। अब लॉर्ड सेल्बोर्नको अधिक लिखनेकी जरूरत है, ऐसा मैं नहीं मानता। मुकदमा विलायतमें लड़ना होगा। या फिर तैयब सेठ आयें तो यहाँ लड़ सकते हैं।

मो० क० गांधीके सलाम

संलग्न :

पेढ़ी तयब हाजी खान मुहम्मद ऐंड कं०
बॉक्स ३५७
प्रिटोरिया

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे; पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ९००

५२. पत्र : हाजी हबीबको[2]

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त ९, १९०५

श्री सेठ हाजी हबीब,

करोडियाके बारेमें आपका पत्र मिला। मैंने नोटिस भेज दिया है।

मो० क० गांधीके सलाम

[पुनश्च]

मैं कल रात कामसे प्रिटोरिया गया था। सवेरे ७।। की गाड़ीसे आनेके कारण मिल नहीं सका, इसके लिए माफी चाहता हूँ। श्री कैलनबैकके[3] साथ सन्देशा भेजा है।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे; पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ९०७

१. यह युद्ध-क्षतिके सम्बन्धमें था।

२. मन्त्री, ट्रान्सवाल भारतीय संघ।

३. हरमान केलेनबैक एक धनी जर्मन वास्तुकार थे। श्री खानने उनमें आध्यात्मिक वृत्ति देखी और उनका परिचय गांधीजीसे करा दिया। वे गांधीजीके मित्र बन गये और उनके साथ सादे जीवनके प्रयोगमें शरीक हो गये। उन्होंने दक्षिण आफ्रिकाके अनाक्रमक प्रतिरोध आन्दोलनमें जेलयात्रा की। देखिए, दक्षिण आफ्रिकामें सत्याग्रह, अध्याय २३, ३३-३५।

५३. पत्र : अब्दुल कादिरको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त १०, १९०५

प्रिय श्री अब्दुल कादिर,

मुझे अभीतक आपको लिखनेका समय नहीं मिला था। कारोबारकी बातपर आनेके पहले, श्रीमती अब्दुल कादिरने जो कचौड़ियाँ भेजीं, उनके लिए उन्हें धन्यवाद देना चाहता हूँ। मैंने जो हँसी-हँसीमें माँगा था, सचमुच ही मिल गया। आप जानते हैं कि श्री उमर और श्री दादा उस्मान मेरे साथ थे। हम सबने उन्हीं कचौड़ियोंकी ब्यालू की। इसके सिवा एक दुर्घटना भी हो गई थी। एक इंजन पटरीसे उतर गया था और रातको सारे यात्रियोंको गाड़ियाँ बदलनी पड़ी थीं। आधी रातके बाद गाड़ी ३ घंटे पिछड़ गई। इसलिए जिन स्टेशनोंपर भोजन मिल सकता था उनपर भोजन नहीं दिया गया और उस परिस्थितिमें केवल मैंने ही नहीं, मेरे दूसरे रेलके साथियोंने भी — यद्यपि वे यूरोपीय थे — वे कचौड़ियाँ बहुत पसन्द कीं। वे बहुत स्वादिष्ट थीं। इस तरह जोहानिसबर्ग पहुँचनेके पहले ही टोकरी आधी हो गई। श्रीमती अब्दुल कादिरको उनकी मेहरबानीके लिए मैं फिर धन्यवाद देता हूँ।

बैंक द्वारा लिखाया गया जमानतनामा श्री अब्दुल गनीने[1] मुझे दिखा दिया है। मेरे विचारसे उसकी कोई जरूरत नही है। मेरी रायमें बैंककी जमानतपर साझेदारीके विघटनकी लिखा-पढ़ीका बिलकुल ही प्रभाव नही पड़ता। बॉडमें परिवर्तन करनेका कारण मेरी समझमें नहीं आता। लेकिन चूँकि पेढ़ी नये सिरेसे नाम चढ़ाई जानी है, इसलिए इसमें कोई नुकसान नही है। मैं आशा करता हूँ कि आप मामलेको जल्दी आगे बढ़ायेंगे। श्री मुहम्मद इब्राहीमका नाम वापस लेनेमें कोई कठिनाई नही होनी चाहिए; क्योंकि यदि वे राजी न हों तो भी अदालतका हुक्म बिलकुल काफी होगा। मुझे मालम हुआ है कि सभी हिस्सेदारोंकी इच्छा साझेदारीके विघटनको 'गजट' में विज्ञापित करने की है। मैं भी ऐसा ही सोचता हूँ। इसलिए मैं विज्ञापनका मसविदा[2] भेज रहा हूँ। यदि आप मंजूर करें, तो पाँचों हिस्सेदार उसपर दस्तखत कर सकते हैं और वह वहाँके और यहाँके दोनों 'गजटों' में तथा दोनों जगहोंके एक-एक दैनिक पत्रमें विज्ञापित किया जा सकता है। आपके लन्दनके एजेंटोंको भेजनेके लिए भी पत्रका मसविदा[3] साथमें है।

वहाँ जो बैठकें हुई उनमें आपने अत्यन्त चतुराई और शान्तिका परिचय दिया। उसे देखकर मैं हदसे ज्यादा प्रसन्न हुआ। यह मेरी हार्दिक आशा और प्रार्थना है कि दोनों धन्धे बढ़ते जायें और आप सबमें पूरा मेल-जोल बना रहे। मैं यह सलाह भी देना चाहता हूँ कि यद्यपि आगे चलकर दक्षिण आफ्रिकाका भविष्य निश्चय ही अच्छा है तो भी आप जो काम हाथमें लें, उसमें अत्यन्त सावधान रहें। हमें अभी और भी बुरे दिन देखने पड़ेंगे; जो इस सत्यको समझ

१. अध्यक्ष, ब्रिटिश भारतीय संघ।
२. व ३. ये उपलब्ध नहीं हैं।

लेंगे अन्तमें वे सबसे अधिक फायदेमें रहेंगे। मुझे इसमें शक नहीं है कि कारोबार बहुत अधिक करना है, किन्तु इसमें बहुत अधिक विचारशीलताकी आवश्यकता है।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

श्री अब्दुल कादिर
मारफत श्री एम० ओ० कमरुद्दीन ऐंड कं०
पो० ऑ० बॉक्स १८६
डर्बन

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ९१२

५४. पत्र : पक्सं लिमिटेडको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त ११, १९०५

पेढ़ी पक्सं लि०
पो० ऑ० बॉक्स २७८९
जोहानिसबर्ग

प्रिय महोदय,

विषय : जगन्नाथ

इस मुकदमेकी सुनवाई आज सुबह हुई। दो गवाहोंने इस आशयकी गवाही दी कि १ पौंड मक्खन माँगा गया था और उसपर जैसी टिकिया श्री लैवीने मुझे दिखाई थी वैसी टिकिया निरीक्षकको दी गई; और जब पैसा दिया जा चुका तब निरीक्षकने टिकिया तोली। टिकिया तोलते समय अभियुक्तने टिकियाके ऊपरकी लिखावटकी ओर इशारा किया। यह कानूनके मुताबिक स्पष्ट ही अपराध था, किन्तु मजिस्ट्रेटने ऐसा माना कि इस मामलेमें अभियुक्त बिलकुल निर-पराध है और इसलिए उसपर केवल १ पौंड जुर्माना किया गया। मैं वर्तमान परिस्थितियोंमें अधिकसे-अधिक यही कर सकता था। जान पड़ता है कि अदालतमें पिछले हफ्ते एक ऐसा ही मामला आया था। उसमें भी गवाहीसे यही जाहिर हुआ कि जो टिकिया बेची गई थी उसपर लिखावट बहुत अस्पष्ट थी; इसलिए मुझे लगता है कि जबतक ऊपर लगे हुए लेबिलपर चारों तरफकी लिखावट बहुत ज्यादा बड़ी नहीं होगी, तबतक फुटकर विक्रेताओंपर जुर्मानेकी जोखिम रहेगी और वह भी बहुत भारी जुर्मानेकी; क्योंकि वजनमें १ पौंड मक्खन माँगनेपर ग्राहकको उक्त प्रकारकी टिकिया बेचनेपर २० पौंड जुर्माना किया जा सकता है। इसलिए मैं [सोचता हूँ कि उनपर] लिखावट अधिक अच्छी होनी चाहिए अथवा अपने विक्रेताओंको यह कह दें कि वे इन टिकियोंको बेचते समय हर बार यह कहें कि वजनकी कोई गारंटी नहीं है।

मैं मुक़दमेके सम्बन्धमें ३ पौंड ३ शिलिंग आपके नाम डालता हूँ।

आपका विश्वासपात्र,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ९२२

५५. कदम-ब-कदम

रैंड अग्रगामी संघ (रैंड पायोनियर्स) को धन्यवाद है कि उसकी कार्रवाईके फलस्वरूप जोहानिसबर्गकी गिरजा-परिषद (चर्च कौन्सिल) अपने कर्त्तव्यके प्रति जागरूक हो गई है। परिषदके प्रतिनिधियोंका एक शिष्टमण्डल, ट्रान्सवालमें भूमिपर वतनी लोगोके अधिकारके सम्बन्धमें लॉर्ड सेल्बोर्नसे यह अनुरोध करनेके लिए मिला था कि वतनियोंको जो अधिकार युद्धसे पहले प्राप्त थे उनको अक्षुण्ण रखना वांछनीय है। ट्रान्सवालके महान्यायवादी यह बता चुके हैं कि ट्रान्सवालमें किस प्रकार युद्धसे पहले वतनी लोग स्वतन्त्रतापूर्वक जमीनके मालिक हो सकते थे। उन्होंने उनके सामने एक उदाहरण भी रखा था कि जब कुछ लोगोंने जमीनके बारेमें वतनियोंके अधिकारोंमें कमी करनेके लिए प्रार्थनापत्र दिया तब अध्यक्ष क्रूगरने[1] उनको सूचित किया था कि वे उनकी प्रार्थना स्वीकार नहीं कर सकते। यद्यपि यह ठीक है कि व्यवहारत: वतनी लोगोंको अपनी जमीनोंका पंजीकरण स्वयं अपने नाम करानेकी इजाजत न थी, परन्तु, महान्यायवादीने स्पष्ट बताया है कि, उनकी जमीनें वतनी मामलोंके आयुक्तके नाम पंजीकृत होनेपर भी, उक्त अधिकारीको उनके सम्बन्धमें निजी विवेकके प्रयोगका अधिकार नहीं मिल जाता था। वह जमीनको उक्त वतनीके न्यासीकी हैसियतसे ही अपने नाम लिखा सकता था और जमीनके असली मालिकके निर्देशसे उसके स्थानमें किसी दूसरे वतनीका नाम लिखानेके लिए बाध्य था, ताकि वह दूसरा वतनी न्यासके लाभका अधिकारी हो जाये। सर जॉर्ज फेरारके[2] नेतृत्वमें वतनी-विरोधी लोगोंके शोरगुल मचानेपर, सर रिचर्ड सॉलोमनने अपनी इच्छाके बहुत-कुछ विरुद्ध यह वचन दे दिया है कि वे वतनियोंकी जमीनोंका पंजीयन वतनी मामलोंके आयुक्तके नाम करनेके रिवाजको कानूनका रूप देनेके लिए एक विधेयक पेश करेंगे। रैंड अग्रगामी संघने इसके विरुद्ध फिर आन्दोलन शुरू कर दिया है। उनकी जिद है कि वतनी मामलोंके आयुक्तको उनका न्यासी बननेसे इनकार करनेका अधिकार होना चाहिए। यदि उनकी यह प्रार्थना स्वीकृत हो गई तो वतनियोंको युद्धसे पहले जमीनका मालिक होनेका जो अधिकार था, वह निश्चय ही छिन जायेगा।

गिरजा-परिषदने इसी प्रकारके आन्दोलनके विरुद्ध अपनी आवाज उठाई है। श्री हॉस्केनके नेतृत्वमें उसके शिष्टमण्डलने लॉर्ड सेल्बोर्नके सामने यह स्पष्ट कर दिया है कि जबसे ट्रान्सवालपर ब्रिटिश अधिकार हुआ है तबसे रंगदार लोगोंके साथ जो व्यवहार हो रहा है वह पहलेकी अपेक्षा ज्यादा बुरा है। उन्होंने और उनके साथी सदस्योंने यह भी कहा कि बहुत-से लोग युद्धको इसलिए ठीक समझते थे कि उनकी सम्मतिमें यह स्वतन्त्रताका युद्ध था। पादरी श्री फिलिप्सने कहा कि वे अपनी गाँठसे धन व्यय करके धर्म-युद्धके पक्षमें प्रचार करने इंग्लैंड गये थे, क्योंकि बोअर शासनमें रंगदार लोगोंपर जो ज्यादतियाँ की जा रही थीं उन्हें वे सहन नहीं कर सके थे। परन्तु पादरी साहबने अब अनुभव किया है कि इन जातियोंकी हालत ब्रिटिश शासनमें तनिक भी नहीं सुधरी है।

लॉर्ड सेल्बोर्नने उत्तर वही दिया जिसकी आशा की जाती थी। उन्होंने इस प्रश्नका अध्ययन पर्याप्त रूपसे नहीं किया था। इसलिए वे कोई मत प्रकट नहीं कर सके। परन्तु परमश्रेष्ठने कहा :

> **यदि ब्रिटिश शासनमें सभ्य अथवा असभ्य वतनियोंके साथ किसी प्रकारका अन्याय होता है तो यह हमारे शासनपर कलंक और धब्बा है और ऐसा विषय है जिसके बारेमें मैं व्यक्तिगतरूपमें अनुभव करता हूँ कि यह अपयशकी बात है।**

१. स्टीफेनस जोहानिस पॉलस क्रूगर, (१८२५–१९०४), बोअर नेता, ट्रान्सवालके राज्याध्यक्ष १८८३–१९००।
२. ट्रान्सवाल विधान परिषदके नामजद सदस्य।

ये शब्द उस व्यक्तिने कहे हैं जो ट्रान्सवालका शासक है। ईश्वर करे, परमश्रेष्ठने जिस नीतिका इस प्रकार साहसपूर्वक प्रतिपादन किया है, उसे क्रियान्वित करनेका भी उन्हे यथेष्ठ साहस और बल प्राप्त हो।

ब्रिटिश भारतीयोंके लिए यह मुलाकात महत्त्वहीन नही है। शिष्टमण्डलने परमश्रेष्ठसे जो कुछ कहा, वह सब उनपर भी समान रूपसे लागू होता है। और लॉर्ड सेल्बोर्नने जिस नीतिका प्रतिपादन किया वही नीति समस्त ब्रिटिश प्रजाओपर लागू होने योग्य है। यह खुशीकी बात है कि लॉर्ड सेल्बोर्नके रूपमें ट्रान्सवालको ऐसा गवर्नर और दक्षिण आफ्रिकाको ऐसा उच्चायुक्त मिला है जो कि विरोधी स्वार्थोके बीच न्यायके लिए कृतसंकल्प है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२–८–१९०५

५६. नेटालके नये कानून

नेटाल ससदने वस्तीके सम्बन्धमें और जमीनपर कर लगानेके सम्बन्धमे जो कानून बनानेका विचार किया था वह समाप्त हो गया है। विधान परिषदने इन दोनो विधेयकोंको और वतनियों-पर कर लगाने-सम्बन्धी विधेयकको अस्वीकार कर दिया है। इसलिए हमे बस्तीके सम्बन्धमे जो भय था वह फिलहाल तो दूर हो गया है। यद्यपि यह नही कहा जा सकता कि ये विधेयक हमारी अर्जीके कारण समाप्त हुए हैं, फिर भी इतना तो नि.सन्देह है कि हमारी अर्जीका असर पड़ा है। इससे हमें यह सबक लेना है कि यदि हम मेहनत करें तो कुछ-न-कुछ फल मिले बिना नही रह सकता।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२–८–१९०५

५७. ट्रान्सवालमें वतनियोंको जमीनका अधिकार

[ट्रान्सवालका सर्वोच्च न्यायालय सदा काले लोगोंको लाभ पहुँचाया करता है, अर्थात् वह न्यायकी अदालतमें गोरोंकी दहशत माने बिना, काले-गोरेको समान समझकर इन्साफ करता है।] रुडीपोर्टमे काफिर लोगोंका गिरजाघर है। उस गिरजाघरके उसके न्यासियोके नाम चढ़ानेकी अर्जी देनेपर उच्च न्यायालयने[1] निर्णय दिया है कि इस प्रकारकी जमीन काले लोगोके नाम दर्ज की जा सकती है। जमीनका इस प्रकार दर्ज किया जाना कानूनन मना नही है। इस मुकदमेसे प्रतीत होता है कि प्रिटोरिया, हीडेलवर्ग आदि स्थानोंमें जो मस्जिदे हैं, वे न्यासियोंके नामपर चढाई जा सकती हैं। यह प्रश्न प्रिटोरिया आदिकी जमातोके ध्यान देने योग्य है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२–८–१९०५

१. सर्वोच्च न्यायालयके स्थानपर उच्च न्यायालय शायद भूलसे लिख दिया गया।

५८. इंग्लैंड और जापानके बीच सन्धि

इंग्लैंड और जापानके बीच जो सन्धि हुई थी उसपर पुनर्विचार करनेका समय निकट आ रहा है; इसलिए इस सम्बन्धमें ब्रिटिश राजनयिक क्षेत्रोंमें चर्चा चल रही है। दोनों राज्योंके बीच ३० जनवरी १९०२ को पाँच वर्षके लिए सन्धि हुई थी। लेकिन उसमें यह भी शर्त थी कि चौथे वर्षके अन्त तक किसी भी पक्षकी तरफसे उस सन्धिको तोड़नेकी पूर्व सूचना न मिले तो वह पाँच वर्षके उपरान्त भी कायम रहे, और उसके बाद जो पक्ष उसे तोड़ना चाहे वह एक वर्ष पहले इत्तला भेजे। यदि इस सन्धिकी समाप्तिके समय कोई पक्ष युद्धमें उलझा हो तो यह सन्धि तबतक कायम रहे जबतक युद्ध शान्त न हो जाये।

इसके अतिरिक्त यदि दोनोंमें से एक पक्षको किसी शक्तिके विरुद्ध लड़ाई छेड़नी पड़े तो दूसरे पक्षको किसी तीसरी शक्तिको उसमें शामिल होनेसे रोकनेका प्रयत्न करना चाहिए। और यदि कोई तीसरी शक्ति लड़ाईमें उतरे हुए पक्षके मुकाबले विरोधी पक्षको सहायता दे तो दूसरा पक्ष लड़ाईमें व्यस्त पक्षकी सहायता तुरन्त करे।

ऊपरकी शर्तोंके अनुसार यदि आगामी वर्षकी ३० जनवरी तक सन्धि भंग करनेकी चेतावनी किसी पक्षको नहीं मिलती, तो यह सन्धि पाँच वर्ष उपरान्त भी जारी रहेगी। इसके विपरीत यदि इस बीच सन्धि-भंग करनेकी चेतावनी दे दी गई और सन्धिकी अवधिका अन्त होनेपर भी रूसके साथ युद्ध चलता रहा तो भी युद्धकी समाप्ति तक सन्धि कायम रहेगी।

इंग्लैंड और जापान दोनों पक्षोंके लिए सन्धि बड़ी लाभदायक सिद्ध हुई है। वास्तवमें तो इससे सारी दुनियाको लाभ हुआ है, ऐसा मानना चाहिए। क्योंकि, यदि रूसकी सहायताके लिए कोई तीसरी शक्ति मैदानमें आती तो इंग्लैंडको जापानकी मददके लिए लड़ाईमें आना पड़ता और ऐसा होनेपर एक बड़े पैमानेपर संसारकी शान्तिमें गहरी बाधा उपस्थित होती, ऐसा दिखाई पड़ रहा है। इस सबसे ऐसी आशा करनेके पर्याप्त कारण मौजूद हैं कि यह सन्धि आगे भी कायम रहेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२-८-१९०५

५९. पत्र : तैयब हाजी खान मुहम्मद ऐंड कम्पनीको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त १२, १९०५

सेठ श्री तैयब हाजी खान मुहम्मद ऐंड कं०,

आपका पत्र मिला। अब उच्चायुक्तको पत्र नहीं लिखा जा सकता। विलायत पहुँचना ही बाकी रहा है। अथवा यहाँ फिर गड़बड़ी हो तो भी सम्भव है। वहाँके महापौरसे मिलिए और उनसे पूछिए, क्या कहते हैं। मैं तुरन्त विलायतको लिखनेकी सलाह नहीं दे सकता। क्योंकि अगर तैयब सेठ आते हैं तो सच्ची लड़ाई यहीं लड़नी है। ज्यों-ज्यों दिन निकलते जायेंगे, कठिनाई बढ़ती जायेगी। नीचे लिखे मुताबिक तार करें तो अच्छा होगा :

उच्चायुक्त दावेमें हस्तक्षेपसे इनकार करते हैं। आपको आनेकी जोरदार सलाह देता हूँ[1]।

तयब सेठको अनुमतिपत्रकी जरूरत नही पड़ेगी, इसलिए उसकी कोई फिक्र नही करती है।

मो० क० गांधीके सलाम

सेठ तैयब-हाजी खान मुहम्मद ऐंड कं०
बॉक्स ३५७
प्रिटोरिया

गाधीजीके स्वाक्षरोमे गुजरातीसे; पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ९३४

६०. पत्र: हाजी हबीबको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त १४, १९०५

सेक्रेटरी साहब,

आपका पत्र आनेसे मुझे अपने भाषण[2] याद आ रहे हैं। मैंने आपसे कहा था कि 'स्टार'की तारीखें भेजूंगा। चारों भाषण १०, १८ और २९ मार्चके 'स्टार' मे प्रकाशित हुए हैं। इन सारे भाषणोको चाहे जहाँ भेजकर इनका खुलासा करानेमे मेरी पूरी रजामन्दी है। मैंने इन भाषणोंको फिर अग्रेजीमे पढा है। और मुझे कहना चाहिए कि इनमे किसी भी धर्मके विरुद्ध मैंने एक भी कड़वा शब्द नही कहा है। इनमे हरएककी तारीफ की है और प्रत्येककी खूबियाँ बताई हैं। मुझे स्वप्नमे भी किसीको दु ख पहुँचानेका खयाल नही आता। फिर भी ये कितने ही भाइयोको बुरे लगे हैं, इसका मुझे दु.ख है। और किसी भी प्रकारसे यदि मैं उनका मन शान्त कर सकूं तो ऐसा करना चाहता हूँ। यदि और भी स्पष्टीकरण आवश्यक हो तो लिखिए।

मो० क० गांधीके सलाम

श्री हाजी हबीब
बॉक्स ५७
प्रिटोरिया

गाधीजीके स्वाक्षरोंमें गुजरातीसे; पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ९५०

१. मूल पत्रमें तारके इस मसविदेका मजमून अंग्रेजीमें है।
२. गाधीजीके हिन्दू धर्मपर दिये गये चार व्याख्यान, देखिए, खण्ड ४, पृष्ठ ३९५, ४०२, ४३५।

६१. पत्र : मुख्य अनुमतिपत्र-सचिवको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त १५, १९५०

सेवामें
मुख्य अनुमतिपत्र-सचिव
पो० ऑ० बॉक्स ११९९
जोहानिसबर्ग

महोदय,

मै पत्रवाहक जॉन सौकलको उसके अनुमतिपत्र तथा पंजीयनके लिए भेज रहा हूँ। मेरी नम्र सम्मतिमें उसके पास जो कागज-पत्र है उनसे यह निर्विवाद सिद्ध होता है कि वह ३१ मई १९०२ को उपनिवेशमें था और तबसे यही है। वह अपने नामके पंजीयनके सिलसिलेमें जो तफसील देता है उससे यह जाहिर होता है कि उसका पंजीयन बोअर सरकारके जमानेमें हुआ होगा। मेरा खयाल भी ऐसा ही है। उसके दर्जेका आदमी किसी हालतमें पंजीकरणसे नही बच सकता, विशेषतः जब वह इतने लम्बे अरसेसे देशमें रहता हो — और पत्रवाहक निःसन्देह यहाँ लम्बे अरसेसे रहता जान पड़ता है। उसने मुझसे कहा है कि इस समय उसकी पहचानके ऐसे कोई लोग जोहानिसबर्गमें नही है जो इस बातको प्रमाणित कर सके कि उसने बोअर सरकारके जमानेमें अपना नाम दर्ज कराया था। आदमी मुझे बहुत गरीब लगता था। इसलिए मुझे विश्वास है कि अगरचे वह पहले ३ पौंड जमा करनेके सम्बन्धमें हलफिया बयान पेश करनेकी स्थितिमें नहीं है, आप उसे अनुमतिपत्र दे देंगे और उसका नाम भी नये सिरेसे दर्ज करवा देंगे। मुझे मामला बिलकुल सच्चा और सहानुभूतिके योग्य जान पड़ता है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ९७१

६२. पत्र : अब्दुल रहमानको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त १६, १९०५

श्री अब्दुल रहमान
पो० ऑ० बॉक्स १२
पॉचेफस्ट्रूम

प्रिय महोदय,

कल्याणदासको[1] 'इंडियन ओपिनियन' के चन्देके सम्बन्धमें आपने जो मदद दी, उसके लिए आपको बहुत धन्यवाद। आपने मुझसे पाँचेफस्ट्रूममें रखे मालके बीमेका जिक्र किया था। एक

१. कल्याणदास जगमोहनदास मेहता १९०३ में गांधीजीके साथ दक्षिण आफ्रिका गये थे और वहाँ वे उनके साथ ५ वर्ष रहे। उन्होंने १९०४ में जोहानिसबर्गके प्लेगके समय बहुत काम किया था।

कम्पनी है जो, अगर इमारत अच्छी और उपयुक्त हो तो, मेरा खयाल है ७ पौंड ६ शिलिंगके हिसाबसे, ऐसे मालका बीमा कर सकती है। अगर कोई अपने मालका बीमा करानेके इच्छुक हो तो मेहरबानी करके मुझे खबर कीजिये।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

पत्र-पुस्तिका (१९०५), संख्या ९८१

६३. क्या भारत जागेगा?

कर्जन साहब बंगालके दो भाग करके एक भाग असममें जोड़ देनेकी कोशिशें काफी अरसेसे कर रहे हैं। वे इसका कारण यह बताते हैं कि बंगाल इतना बड़ा प्रान्त है कि उसका सारा काम-काज एक गवर्नर नही देख सकता। असम एक छोटा-सा प्रान्त है, उसकी जनसख्या बहुत कम है, लेकिन यह बगालसे लगा हुआ है। इसलिए माननीय गवर्नर जनरलका इरादा है कि बगालका कुछ हिस्सा असममे मिला दिया जाये। बगाली लोग कहते है कि बगाली और असमी दोनों बिलकुल अलग-अलग है। बंगाली अत्यन्त शिक्षित है। वे एक जमानेसे एक साथ रहते आये हैं। उनको विभक्त करके उनका बल तोड़ देना और उनमें से बहुतोको असमके साथ मिला देना, यह बड़े अन्यायकी बात है। इस बारेमें बहुत चर्चा हो चुकी है। कुछ दिन पहले श्री ब्रॉड्रिकने बताया था कि उनको कर्जन साहबका विचार पसन्द आया है। यह समाचार जबसे भारत पहुँचा है तबसे बगालमें गाँव-गाँव सभाएँ की जा रही है। उनमे सभी लोगोने भाग लिया है। सुना है, चीनी व्यापारी भी इनमे शरीक हुए है। ये सभाएँ इतनी विशाल हुई बताई जाती है कि इनके बारेमे तार ठेठ दक्षिण आफ्रिका तक पहुँचे है। ऐसा प्रतीत होता है कि इन सभाओमे प्रथम बार ही ऐसे प्रस्ताव प्रस्तुत किये गये है कि सरकार घबड़ा जायेगी। मालूम होता है, भाषणोमे यह कहा गया है कि यदि सरकार न्याय न करे तो भारतके व्यापारी विलायतके साथ बिलकुल व्यापार न करे। यह बात हम लोगोने चीनसे सीखी, यह हमे स्वीकार करना चाहिए। किन्तु यदि सचमुच ही इसके अनुसार अमल कर दिखाया जाये तो हमारे कष्टोंका अन्त शीघ्र हो जायेगा और इसमें कोई आश्चर्यकी बात न होगी। क्योंकि यदि ऐसा हुआ तो विलायतको बड़ा नुकसान पहुँचेगा। इसके खिलाफ सरकारको कोई उपाय भी न मिलेगा। लोगोंसे व्यापार करनेकी जबरदस्ती नही की जा सकती। यह उपाय बहुत सीधा और सरल है। लेकिन क्या हमारे लोग बगालमें इतना ऐक्य बनाये रखेंगे? देशके हितके लिए व्यापारी लोग हानि सहन करेंगे? यदि हम इन दोनों प्रश्नोंके उत्तरमे हाँ कह सकें तो मानना होगा कि भारत सचमुच जाग गया है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-८-१९०५

६४. सर मंचरजी और श्री लिटिलटन

ट्रान्सवालमें भारतीयोंपर पड़नेवाली मुसीबतोंके सम्बन्धमें गत वर्ष विधान-परिषदमें यह प्रस्ताव किया गया था कि श्री लिटिलटन आयोगकी नियुक्ति करें। सर मंचरजीने लिखा था कि वे इस आयोगकी नियुक्तिके सम्बन्धमें अपनी सम्मति दे रहे हैं। उन्होंने इस बारेमें फिर जो प्रश्न किया है उसके उत्तरमें श्री लिटिलटनने कहा है कि अभी इस सम्बन्धमें परामर्श हो रहा है। इससे पता चलता है कि श्री लिटिलटनके साथ ट्रान्सवालकी सरकार झगड़ती रहती है और दोनों एकमत नहीं हैं। श्री लिटिलटनकी माँग यह है कि नेटाल उपनिवेशके लिए प्रवासी अधिनियमके समान कानून बनाये जायें, और सर आर्थर लाली चाहते हैं कि केवल भारतीयोंपर ही लागू होनेवाले कानून बनाये जायें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९–८–१९०५

६५. एलिजाबेथ फ्राइ[1]

अंग्रेज लोग हमपर शासन करते हैं और हमारी हालत खराब है, इसके कई कारण हैं। इनमें से एक कारण यह है कि इस जमानेमें अंग्रेजोंमें, हमारी अपेक्षा बहादुर, धार्मिक और पवित्र स्त्री-पुरुष अधिक हुए मालूम पड़ते हैं। कुछ भी हो, पवित्र स्त्री-पुरुषोंके जीवन वृत्तान्त जाननेसे और उनपर सतत मनन-चिन्तन करनेसे हमें लाभ होगा ही, ऐसा समझकर समय-समयपर हम इस प्रकारके जीवन-वृत्तान्त देते रहेंगे। हमें आशा है कि इस अखबारके पाठक इन्हें पढ़कर और वैसा ही आचरण करके हमको प्रोत्साहित करेंगे। हम पहले लिख चुके हैं कि 'इंडियन ओपिनियन'की फाइल प्रत्येक ग्राहक रखे। हम इस अवसरपर उस बातकी याद पुनः दिलाते हैं।

इंग्लैंडमें एक शताब्दी पहले श्रीमती एलिजाबेथ फ्राइ हो गई हैं। वे अत्यन्त धार्मिक महिला थीं और उनका ध्यान मानव-जातिके दुःख दूर करनेकी ओर रहता था। वे खुद हमेशा बीमार रहा करती थीं; किन्तु इस बातकी उन्होंने परवाह नहीं की। अपने ऊपर कष्टोंके आनेसे वे हारती न थीं। इंग्लैंडमें न्यूगेट नामका एक कारागृह है। उसमें सौ वर्ष पहले कैदी स्त्री-पुरुष बुरे ढंगसे रखे जाते थे। उनकी सार-सँभाल कोई नहीं करता था। उनकी दशा बहुत खराब थी। उनमें अपराध घटनेके बदले बढ़ते थे। उनका जीवन बहुत-कुछ जानवरों-जैसा था। नतीजा यह होता था कि जो लोग न्यूगेटमें कैद काटकर बाहर आते थे उनकी दशा दयनीय हो जाती थी। यह कष्ट साधु-प्रकृति एलिजाबेथ फ्राइसे देखा नहीं गया। उनका जी संतप्त हो उठा और उन्होंने अपना जीवन इस प्रकारके कैदियोंकी हीन दशा सुधारनेमें अर्पित कर दिया। वे अधिकारियोंकी स्वीकृति प्राप्त करके, मुख्यतः स्त्री कैदियोंकी सहायता करने लगीं। वे उनको सुख-सुविधाएँ दिलातीं। इतना ही नहीं, उन्होंने लेख लिखकर तथा अपने परिश्रमसे

१. एलिजाबेथ फ्राइ, १७८०–१८४५, सोसाइटी ऑफ फ्रेंड्सकी सदस्या थीं। वे जेल-सुधारकी अग्रणी थीं।

अधिकारियों द्वारा अनेक सुधार करवाये। इस प्रकारके परिश्रमके फलस्वरूप कैदियोंकी स्थिति बहुत सुधर गई। किन्तु उनके लेखे यह पर्याप्त नहीं था। उन दिनों कैदियोंको आस्ट्रेलिया भेजा जाता था। जहाजमें उनको बड़ा कष्ट दिया जाता था। स्त्री कैदियोंकी आबरू भी न रह पाती थी। एलिजाबेथने देखा कि अपने किये कराये सारे कामपर इन कैदियोंको ले जानेमें पानी फिर जाता है। इस कष्टको मिटानेके लिए वे स्वयं बड़ी मुसीबतें झेल कर जहाजोंपर आया-जाया करती थीं। अन्तमें उन्होंने जहाज-यात्राके कष्टोंको भी दूर कराया। फिर आस्ट्रेलियामें कैदियोंको जो कष्ट होता था उसमें भी सुधार करवाया और अन्तमें कानून बना कि आस्ट्रेलियामें पहुँचनेपर छः महीने तक तालीम देनेके बाद कैदियोंको दूसरोंकी नौकरीमें सौंप दिया जाये। इस प्रकार दु:खियोंके दु:खमें बहुत भाग लेनेवाली यह भली महिला अपना दु:ख भूलकर ईश्वरका भजन करती हुई परलोक सिधारीं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-८-१९०५

६६. ब्रिटिश संघ[1]: एक सुझाव

दक्षिण आफ्रिकाको अपनी भूमिपर प्रतिष्ठित वैज्ञानिकोंके इस संघका स्वागत करनेका अभूतपूर्व सम्मान प्राप्त हुआ है। ब्रिटिश विज्ञान-प्रगति संघ (ब्रिटिश असोसिएशन फॉर द एडवांसमेंट ऑफ साइन्स) एक ऐसी संस्था है जिसपर साम्राज्य गर्व कर सकता है। दक्षिण आफ्रिकी संघ (साउथ आफ्रिकन असोसिएशन)ने अपनी सहधर्मी संस्थाको इस देशमें बुलानेका विचार किया, यह खुशीकी बात है। इसके परिणाम दूरगामी हो सकते हैं। इससे संघका मुख्य उद्देश्य — यानी विज्ञानका प्रचार — तो सिद्ध होगा ही, उसमें भी एक बड़ा लाभ यह होगा कि ब्रिटेन, दक्षिण आफ्रिका और अन्य उपनिवेश एक-दूसरेके निकट आ जायेंगे। यह तीसरा अवसर है कि संघकी बैठक ब्रिटिश द्वीप-समूहके बाहर हो रही है। ऐसी यात्राओंके महत्त्व तथा, जिस सहृदयतासे सदस्योंका स्वागत किया गया है, उसे देखते हुए यह नहीं लगता कि यह क्रम अब टूटेगा। हम उस दिनकी प्रतीक्षामें हैं जब यह बैठक भारतमें होगी। हमें विश्वास है कि ऐसी बैठकसे न केवल भारतका हित होगा, बल्कि संघको भी लाभ होगा।

हमें एक नम्र सुझाव रखना है। हमने कहा है कि बाहरके देशोंको ऐसी यात्राएँ साम्राज्यके दूर-दूर तक फैले हुए उपनिवेशोंको जोड़नेमें बहुत सहायक होंगी। और इसलिए कि संघको सर्वत्र उसके वास्तविक रूपमें मान्य किया जाये, अर्थात् यह कि संघ साम्राज्यकी एक बड़ीसे-बड़ी संपत्ति है, हम चाहेंगे कि उसका वर्तमान नाम बदल कर 'ब्रिटिश साम्राज्य विज्ञान प्रगति संघ' कर दिया जाये।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-८-१९०५

1. १८३१ में स्थापित।

६७. लॉर्ड कर्ज़न

होनी होकर रही। लॉर्ड कर्ज़न अब भारतके वाइसराय नहीं रहे। यह भाग्यकी विडम्बना है कि जब उनका हटाया जाना अशक्य मालूम पड़ता था तभी उन्हें अत्यन्त अपमानजनक परि-स्थितियोंमें जाना पड़ा। वे ऐसे वाइसराय थे जिनके लिए प्रतिष्ठा ही सब कुछ थी और जो अपने हाथमें लिये हुए कामोंमें सफलता प्राप्त करनेके लिए अपनी प्रतिष्ठापर बहुत ज्यादा भरोसा रखते थे। अब उन्हे भारतसे जाना पड़ा है, तब उनकी प्रतिष्ठा नामके लिए भी शेष नहीं रही है। उनपर यह दुर्भाग्य युद्ध-मन्त्री द्वारा लगाये गये लाञ्छनके कारण आया। इससे वह अधोगति और भी स्पष्ट हो जाती है जो उन्हें सहनी पड़ी। ऐसा लगता है मानो यह उन करोड़ों पीड़ितोंकी प्रार्थनाका ही फल था जो उनके स्वेच्छाचारी शासनमें कराह रहे थे।

हमारा खयाल है कि लॉर्ड कर्ज़नने जो कुछ किया, नेकनीयतीसे प्रेरित होकर किया। उनका विश्वास निस्सन्देह यह था कि भारतीयोंके विरोधके बावजूद, वे खुद जिन बातोंको सुधारका नाम देना पसन्द करते उन्हें जबरदस्ती लोगोंके गले उतारकर उनका हित ही कर रहे हैं। पद सँभालते ही उन्होंने जो ऊँची आशाएँ उत्पन्न की थीं वे अन्य किसी वाइसरायने कभी नहीं की। उनके भाषणोंसे भारतीय विश्वास करने लगे थे कि वे भारतीय समस्याओंके समाधानके मामलेमें लॉर्ड रिपनसे[1] बाजी मार ले जायेंगे। ब्रिटिश सैनिकोंके व्यवहारके सम्बन्धमें उन्होंने जो सम्मति लिखी थी उसके द्वारा उन्होंने अपने वचनोंको कार्यरूप देकर भी दिखा दिया था। नमक-करमें कमी और दक्षिण-आफ्रिकी ब्रिटिश भारतीयोंके पक्षका समर्थन उनको सदा ही ख्याति देंगे। परन्तु इन बातोंकी पूरी गुंजाइश छोड़नेके पश्चात् भी, विशुद्ध परिणाम यह है कि उन्होंने अपने कार्य-कालका आरंभ लोगोंकी जितनी सद्भावनाके साथ किया था उसके अन्तमें वे उनकी उतनी ही अप्रियता कमा चुके हैं। यद्यपि उन्हें त्यागपत्र एक ऐसे दुर्भाग्यपूर्ण कारणसे देना पड़ा जो कि असैनिक शासनपर सैनिक निरंकुशताकी जीतका सूचक है, यद्यपि हम यह कल्पना बखूबी कर सकते हैं कि आज हजारों भारतीय घरोंमें आनन्द मनाया जा रहा होगा और ईश्वरको धन्यवाद दिया जा रहा होगा — इस मुक्तिपर, जो शुभ समझी जायेगी; और वह अकारण नहीं।

लॉर्ड कर्ज़नकी कारगुजारियोंको देखते हुए किसी नये वाइसरायसे कोई आशाएँ बाँधना बड़ा जोखिम-भरा काम हो गया है। यदि हम सुखी होना चाहते हैं तो शायद कोई आशा न बाँधना ही ज्यादा निरापद है। परन्तु मनोनीत वाइसराय लॉर्ड मिंटोके रूपमें भारतको एक उदात्त पुरुष मिल रहा है। भारत उनसे अपरिचित भी नहीं है, क्योंकि वे एक ऐसे प्रतिष्ठित वंशके हैं जिसका एक और भी व्यक्ति[2] भारतका वाइसराय रह चुका है। अपने औपनिवेशिक अनुभवसे भारतके शासनमें उन्हें अपरिमेय सहायता मिलनेकी सम्भावना है। उपनिवेशोंके शासनकी परम्पराएँ सदा विशुद्ध वैधानिक रही हैं और यदि भारतमें भी उनका पालन किया गया तो सम्राट एडवर्डके साम्राज्यके उस भागमें अगले पाँच वर्ष तक शान्तिपूर्ण शासनकी आशा की जा सकती है। ईश्वर करे कि ऐसा ही हो। उस देशमें एक बार फिर दुर्भिक्षका खतरा है; वहाँ अब भी लोग प्लेगसे मर रहे हैं; और निर्धनता प्रतिदिन लाखों घरोंको खोखला किये दे रही है। इन तिहरी

१. (१८२७–१९०९) भारतके वाइसराय और गवर्नर जनरल, १८८०–४ और उपनिवेश मंत्री, १८९२–५।
२. अर्ल मिंटो प्रथम, फोर्ट विलियम, बंगालके गवर्नर–जनरल : १८०७–१३

भयंकर आपत्तियोंसे रक्षाका एकमात्र उपाय यह है कि शासितोंके साथ अधिकतम सहानुभूति और दयालुताका व्यवहार किया जाये।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-८-१९०५

६८. प्रोफेसर परमानन्द

ऐंग्लो-वैदिक कॉलेजके प्रतिष्ठित विद्वान, प्रोफेसर परमानन्दको अब हमारे बीच रहते कुछ सप्ताह हो चुके है। उन्होंने बड़ी-बड़ी सभाओंमें रोचक व्याख्यान दिये हैं। उनका उद्देश्य आर्यसमाजकी शिक्षाओका प्रचार करनेका जान पड़ता है। इस समाजने, इसके धार्मिक सिद्धान्त कुछ भी हो, अत्यन्त उपयोगी और व्यावहारिक कार्य किया है। इसने सच्चे देशभक्त और बहुत-से आत्मत्यागी शिक्षक उत्पन्न किये है। कुछ महीने पूर्व भारतमे जो भयकर भूकम्प आया था, उसमें भी आर्यसमाज उत्तम काम कर चुका है। प्रोफेसर परमानन्द कार्यकर्ताओके उसी समाजसे सम्बन्धित हैं, और इसलिए दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोसे उनको हार्दिक स्वागत पानेका हक है। निश्चय ही, हम लोगोंके बीच विद्वान और सुसस्कृत भारतीय बहुत नही आ सकते।

लेकिन प्रश्न यह है कि हम ऐसे व्यक्तियोसे क्या लाभ उठाये या वे हमारा क्या उपयोग करें। हम कबूल करते है कि अपने बीच धार्मिक आधारपर तीव्र प्रचार-कार्यके लिए हम अभी परिपक्व नही हैं। यहाँकी जमीन इस कार्यके लिए तैयार नही है। हरएक मजहब अपने लिए अलगसे अपना प्रचारक और हितरक्षक रख नही सकता, सो बात नही है। आर्यसमाज भारतके किसी स्थापित रूढ़िगत धर्मका प्रतिनिधित्व नही करता। यदि हम यह कहें कि आर्य-समाज एक ऐसा फिर्का है जो अभी अपने अस्तित्वके लिए सघर्ष और नये अनुयायी बनानेके उपयुक्त परिस्थिति तैयार कर रहा है तो इससे उसका यश कम नही होता। वह हिन्दू धर्ममे सुधारका प्रतीक है। हम अनुभव करते है कि दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय अभी सुधारके किसी भी सिद्धान्तको ग्रहण करनेके लिए तैयार नही है। जहाँतक भारतीयोमे आन्तरिक कामका सम्बन्ध है, उनकी आवश्यकता है शिक्षण, और, जितना भी अधिक मिले उतना, ठीक प्रकारका शिक्षण। हमने सदा माना है कि भारतीय गृहस्थीमे सुधारकी गुजाइश है। और यह सुधार इन सैकड़ों भारतीय युवकोके शिक्षणके बिना न होगा जो इस उपमहाद्वीपमें प्राय. सर्वथा उपेक्षित है। हमारी नम्र सम्मतिमे प्रोफेसर परमानन्द सबसे अच्छा कार्य यह कर सकते है कि वे इस प्रश्नकी ओर अपना ध्यान ले जायें। वे जिस समाजके प्रतिनिधि है उसकी शक्ति, शुद्धता और उपयोगिता प्रदर्शित करनेका यह एक बहुत अच्छा, व्यावहारिक और प्रभावशाली उपाय है। हमारा खयाल है कि दक्षिण आफ्रिकामे भारतीय बालकोंको वेतन-भोगी अध्यापकोके द्वारा पर्याप्त शिक्षण दिलाना प्राय: असभव है। [हमें प्रारम्भिक शिक्षण तक के लिए उच्चतम योग्यता, अनुभव और संस्कृतिके अध्यापकोंकी आवश्यकता है।]

हम इन विचारोको प्रोफेसर परमानन्द और उनके द्वारा आर्यसमाज अथवा इसी प्रकारकी भारतकी अन्य संस्थाओंकी सेवामें — उनका मत या धर्म चाहे जो हो — हार्दिक विचारके लिए प्रस्तुत करनेका साहस करते है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-८-१९०५

६९. विश्व-धर्म[1]

वह जमाना अब नहीं रहा जब कि किसी एक मतके माननेवाले लोग- मौका-बे-मौका कह दिया करते थे कि हमारा मजहब ही सच्चा मजहब है, दूसरे सब मजहब झूठ हैं। सभी धर्मोंके प्रति सहनशीलताकी बढ़ती हुई भावना, भविष्यके लिए शुभ-सूचक है। लन्दनसे 'क्रिश्चियन वर्ल्ड' नामक एक साप्ताहिक मजहबी अखबार प्रकाशित होता है। इसमें 'जे० बी०' नामके एक सज्जन इस विषयपर प्रायः लेख भेजा करते हैं। मैं इस समाचारपत्रमें अभी हालमें ही प्रकाशित उनके एक लेखसे कुछ उद्धरण यहाँ देना चाहता हूँ।

लेखक बहुत ही उदार और उदात्त भावनाके साथ ईसाई दृष्टिकोणसे इस प्रश्नका विवेचन करते हैं; और यह दिखाते हैं कि किस प्रकार संसारके सब मजहब आपसमें जुड़े हुए हैं और इनमें से प्रत्येकमें कुछ ऐसे लक्षण भी हैं जो सभीमें विद्यमान हैं। एक ईसाई मत-प्रचारक अखबारमें ऐसे लेखका प्रकाशित होना उल्लेखनीय है और यह प्रकट करता है कि वह समयके साथ चल रहा है। कुछ वर्ष पूर्व ऐसा लेख धर्म-विरोधी उपदेश ठहराया गया होता और उसका लेखक अपने ही उद्देश्यका द्रोही कहा जाता और निन्दाका पात्र बन गया होता।

दूसरे मजहबोंके प्रति जो नई भावना ईसाइयोंकी मनोवृत्तिको बदल रही है उसका उल्लेख करने और यह दिखानेके बाद कि किस प्रकार कुछ साल पहले यह धारणा फैली हुई थी कि अन्य अनेक झूठे मजहबोंके बीच केवल ईसाई धर्म ही एक सच्चा धर्म है, उन्होंने कहा है:

> भारी परिवर्तन हुए हैं, और इन परिवर्तनोंका एक पहलू औसत आदमीको अत्यधिक चकित कर देनेवाला यह रहस्योद्घाटन है कि वह अबतक जिन सिद्धान्तोंके बीच पला है, वे प्रारम्भिक ईसाई धर्मकी शिक्षा कभी नहीं थे। वह देखता है कि अन्य जातियों और धर्मोंके विषयमें उसे अबतक जो राय रखनी पड़ी है, पुराने धर्मोपदेशकोंमें से सबसे उदारचेता उससे बहुत भिन्न विचार रखते थे। वह मसीहा-कालके इतने समीपवर्ती जस्टिन मार्टरके विषयमें सुनता है जो सुकरातके ज्ञानको 'दिव्यवाणी' से प्रेरित मानते थे। वह ऑरिगेन और निसा-निवासी ग्रेगरीके सिद्धान्तोंका परिचय प्राप्त करता है जिसकी सीख यह है कि समस्त मानव जाति एक ही दिव्य निर्देशके अधीन है। वह लक्टेंशसके विषयमें भी सुनता है जो यह मानते थे कि ईश्वरकी सत्तामें विश्वास सभी धर्मोंका समान गुण है . . .
>
> . . . . दरअसल, प्रत्येक युगमें अपेक्षाकृत सूक्ष्म चिन्तन करनेवाले ईसाइयोंने प्रायः इसी पद्धतिपर सोचा है। जरूरत सिर्फ इस बातकी रही है कि मनुष्य अन्य जातियोंके सम्पर्कमें — चाहे साहित्यके माध्यमसे हो या साक्षात् रूपमें — आयें, जिससे वे इस बातकी अनुभूति कर सकें कि धर्मोंके बीचकी 'अलंघ्य खाई' का सिद्धान्त जीवन और आत्मा, दोनों धरातलोंपर गलत है . . .
>
> . . . . धर्म अपने विभिन्न नामों और रूपोंमें मानव-हृदयमें एक ही बीज बोता आ रहा है — ज्यों-ज्यों उसका मस्तिष्क ग्रहण करने योग्य होता गया है, उसके सामने एक ही सत्यका उद्घाटन करता आया है।

१. यह लेख 'विशेष रूपसे प्रेषित' रूपमें प्रकाशित हुआ।

लेखक आगे कहता है कि अनेक ईसाई संस्थाएँ और सिद्धान्त अन्य धर्मोके ज्ञानसे ही उत्पन्न हुए हैं। इसके अनेक प्रतीक प्राचीनकालके ध्वसावशेष ही है।

> **इस दृष्टिसे प्राचीन फारसकी मित्र-पूजा कितनी आश्चर्यजनक है! एम० क्यूमोंटके शब्दोंमें, 'ईसाइयोंकी तरह ही मित्र-धर्मानुयायी परस्पर एक होकर सुगठित समाजोंमें रहते थे, और एक-दूसरेको पिता और भाई कहकर पुकारते थे। ईसाइयोके समान ही वे 'बप्तिस्मा', 'सहभोज' और 'नामकरण' आदि संस्कारोंका पालन करते थे; सर्वमान्य नैतिकताकी शिक्षा देते थे; चारित्रिक शौच तथा आत्मत्यागका उपदेश करते थे; और आत्माकी अमरता तथा मरणोत्तर जीवनमें विश्वास करते थे'।**

अगर लेखक ईसाई धर्मको सर्वोच्च स्थान देना चाहता है तो इसमें कोई आश्चर्यकी बात नही। परन्तु यह देखकर सन्तोष होता है कि ईसाई लेखकों तथा समाचारपत्रोंने ऐसी उदरा मनोवृत्ति अपनायी है।

[सबके हितोंको लक्ष्य बनाकर काम करनेवाले यूरोपीयों तथा भारतीयोके लिए यह बात विशेष महत्त्व रखती है। भारतका धर्म बहुत प्राचीन है। उसके पास देनेके लिए बहुत-कुछ है। हम दोनोके बीच एकता बढ़ानेका सबसे अच्छा उपाय यह है कि हममें एक-दूसरेके प्रति हार्दिक सहानुभूति और एक-दूसरेके मजहबके लिए आदर हो। इस महत्त्वपूर्ण प्रश्नपर और अधिक सहिष्णुताका फल हमारे दैनिक सम्बन्धोमें अधिक व्यापक उदारताके रूपमें प्रकट होगा और वर्तमान मनमुटाव मिट जायेंगे। और फिर क्या यह एक तथ्य नहीं है कि हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच इस प्रकारकी सहिष्णुताकी महती आवश्यकता है?] कभी-कभी ऐसा खयाल आता है कि पूर्व और पश्चिमके बीच सहिष्णुताकी स्थापनाकी इतनी बड़ी आवश्यकता नही है जितनी हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच। भारतीयोंके ही आपसी संघर्ष और कलहसे उनका मेलजोल नष्ट न होने पाये। जिस समाजमे फूट है वह ढहे बिना रह नही सकता। इसलिए मै भारतीय समाजके सभी अंगोंके बीच पूर्ण एकता और भ्रातृभावनाकी आवश्यकतापर जोर डालना चाहता हूँ।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-८-१९०५

७०. रूसका नया संविधान

रूसके ज़ारने अपनी प्रजाको चुनावपर आधारित संविधान कायम करनेका जो वचन दिया था, वह अमलमें लाया गया है। उसकी धाराओंके बारेमें जो तार दक्षिण आफ्रिका आये हैं, उनसे पता चलता है कि इस समयके प्रजातन्त्रीय राज्य-विधानोंसे वह बहुत कम मेल खाता है। और वह भी भविष्यमें सही रूपसे अमलमें लाया जायेगा या नहीं, यह बहुत सन्देहपूर्ण मालूम देता है। इस विधानमें कानून बनानेकी सत्ता ऊपरी दृष्टिसे तो चुने हुए मण्डलको दी गई है; किन्तु उन सारी धाराओंके बावजूद ज़ारने अपनी राज्यसत्ता कायम रखी है। इसलिए यह विधान अजीब-सा दीखता है। चुनी हुई राष्ट्रीय परिषद जिन कानूनोंको स्वीकृत करेगी उनके लिए ज़ारकी सम्मति प्राप्त करना आवश्यक होगा। राजसत्तापर यह परिषद किसी भी प्रकारका नियंत्रण रख सकेगी, ऐसा मालूम नहीं होता। फिर भी आगे चलकर अधिक ज़ोर लगानेके लिए इस प्रकारका विधान सीढ़ीका काम देगा, इस बातसे इनकार नहीं किया जा सकता।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-८-१९०५

७१. अब्राहम लिंकन

पिछले सप्ताह हमने एलिजाबेथ फ्राइका वृत्तान्त दिया था। इस बार अमेरिकाके एक भूतपूर्व राष्ट्रपतिका वृत्तान्त दे रहे हैं।

ऐसा माना जाता है कि गत शताब्दीमें जो बड़ेसे-बड़ा और भलेसे-भला मनुष्य हुआ, वह था अब्राहम लिंकन। अब्राहम लिंकनका जन्म सन् १८०९ में अमेरिकामें हुआ था। उस समय उसके माँ-बाप बहुत गरीबीकी हालतमें थे। १५ वर्षकी आयु तक उसे बहुत ही थोड़ा शिक्षण मिल पाया था। उसे शायद ही लिखना आता था और वह जगह-जगह चक्कर काटकर गुजारेके लायक थोड़ा-बहुत कमा लेता था।

अन्तमें उसके मनमें आगे बढ़नेका विचार पैदा हुआ। उन दिनों स्टीमरकी या अन्य किसी प्रकारकी सुविधाएँ न थीं। इसलिए वह लकड़ीके तख्तोंपर अमेरिकाकी विशाल नदियोंमें प्रवास करता हुआ कितने ही गाँवोंमें गया। एक जगह उसे मुंशीगीरीका काम मिल गया। इस समय उसकी आयु बीस वर्षकी थी। जब उसे यह नौकरी मिली तब उसके मनने यह समझाया कि कुछ अधिक अध्ययन करना चाहिए। इसपर उसने कुछ किताबें खरीद लीं और अपने ही श्रमसे अध्ययन प्रारंभ किया। इस बीच उसके एक रिश्तेदारके मनमें यह विचार आया कि यदि अब्राहम लिंकन कानूनका अध्ययन कर ले तो और उन्नति कर सकेगा। इस खयालसे उसने अब्राहम लिंकनको एक वकीलके यहाँ रखा दिया। वहाँ उसने बड़ी लगन और श्रमके साथ काम किया तथा अध्ययन भी किया। उसने अपनी चतुराईका इतना अच्छा परिचय दिया कि उसके अधिकारी बड़े प्रसन्न हुए। स्वयं उसको भी यह लगा कि मेरी स्थिति उस समाजकी सेवा करने योग्य है, जिसमें मैंने जन्म पाया है।

उसके मनमें ज्यों ही यह विचार उठा, उसने अमेरिकी रिवाजके अनुसार संसदका प्रतिनिधि बननेका इरादा किया। उसने अपनी विशेषताएँ जाहिर करनेके लिए पहला लेख लिखा। उसने बड़ी टक्कर ली, परन्तु वह स्वयं अभी इस दिशामे अनभिज्ञ था, और उसका प्रतिस्पर्धी एक प्रख्यात व्यक्ति था। इसलिए उसने पराजय पाई, किन्तु उसका शौर्य पहलेसे बढ़ गया।

उसकी भावनाएँ और भी तीव्र हो गई। उस समयके अमेरिकाकी परिस्थितिका सही-सही चित्र जिस व्यक्तिकी कल्पनामें आ सके वही लिंकनके गुणों और उसकी सेवाको समझ सकता है। अमेरिका इस समय उत्तरसे दक्षिण तक गुलामोंका पड़ाव बना हुआ था। आफ्रिकाके नीग्रो लोगोंको सरे-आम बेचना और उन्हें गुलामीमें रखना जरा भी अनुचित नही माना जाता था। बड़े-छोटे, अमीर-गरीब सभी लोग गुलामोंको रखनेमें अनहोनापन नही मानते थे। इसमें किसीको कोई बुराई नहीं लगती थी। धार्मिक मनुष्य और पादरी आदि लोग गुलामीकी प्रथाको बनाये रखनेमें आगा-पीछा नही करते थे। कुछ तो उसे उत्तेजना देते थे और सब यही समझते थे कि गुलामीकी प्रथा भी ईश्वरी नियम है; और नीग्रो गुलामीके लिए ही जन्मे है। केवल थोड़े ही मनुष्य देख पाते थे कि यह व्यवसाय अत्यन्त दूषित और अधार्मिक है। जो इस प्रकार देख सकते थे वे मौन साधे रहते थे, ताकत नहीं आजमाते थे। कुछ लोग गुलामोंकी स्थिति सुधारनेमें थोड़ा-सा योग देकर सन्तोष कर लेते थे। उस समय गुलामोंपर जो अत्याचार किये जाते थे उसका वृत्तान्त सुनकर आज भी हमारे रोंगटे खड़े हो जाते है। उनको बाँधकर मारा-पीटा जाता था, उनसे जबरदस्ती काम लिया जाता था, उन्हें जलाया जाता था, बेड़ियाँ पहनाई जाती थी; और यह नही कि यह सब एक-दो व्यक्तियोंपर ही किया जाता हो बल्कि सबपर यही बीतती थी। इस प्रकारके विचार जिन लोगोंके दिलोंमे गहरी जड़ जमा चुके थे, उनके विरोधमें खड़े होकर उनके विचारोंको पलटनेका और इसी व्यवसायपर जिन लाखों मनुष्योंकी आजीविका थी उन मनुष्योंका विरोध मोल लेकर और उनसे लडाई करके गुलामोंको बन्धनसे छुड़ानेका निश्चय अकेले लिंकनने किया और उसे पार उतारा, ऐसा कहा जा सकता है। ईश्वरपर उसकी आस्था इतनी अधिक थी, उसका स्वभाव इतना अधिक नरम था और उसकी दया इतनी गहरी थी कि रोज-रोज अपने भाषणो, लेखों और रहन-सहनके द्वारा वह लोगोके मनको बदलने लगा। अन्तमें लिंकनका पक्ष और उसका विरोधी, ऐसे दो पक्ष पैदा हो गये और अमेरिकामें बड़ा भारी घरेलू युद्ध हुआ। लिंकन इससे जरा भी डरा नही। अबतक वह इतना ऊँचा उठ चुका था कि उसे राष्ट्रपतिका पद मिल चुका था। लड़ाई कई वर्ष तक चलती रही, परन्तु लिंकन सन् १८५८–५९ से पूर्व ही सारे उत्तर अमेरिकामें गुलामीकी प्रथा बन्द कर चुका था। गुलामोंके बन्धन टूटे। जहाँ-जहाँ लिंकनका नाम लिया जाता वहाँ-वहाँ वह लोगोंके दुःख हरनेवाले मनुष्यके रूपमें पहचाना जाता था। उसने इस संघर्षके समय जो जोशीले भाषण दिये उनकी भाषा इतनी उत्तम थी कि वे अंग्रेजी साहित्यमे बहुत ऊँचे दर्जेके भाषण माने जाते है।

[इतना ऊँचा उठ जानेपर भी लिंकन सदैव विनम्र बना रहा। वह हमेशा यह मानता था कि जो प्रजा या व्यक्ति शक्तिशाली हो, उसे अपने बलका उपयोग गरीब अथवा कमजोर लोगोंका दुःख मिटानेके लिए करना चाहिए,] न कि ऐसे लोगोंको कुचलनेके लिए। यद्यपि अमेरिका उसकी अपनी जन्मभूमि थी और वह स्वयं अमेरिकी था फिर भी समस्त संसार अपना देश है, ऐसा वह मानता था। वह उन्नतिके शिखर तक पहुँच गया था और उसका व्यक्तित्व इतना श्रेष्ठ था, तिसपर भी कुछ दुष्ट लोग यह मानते थे कि गुलामीकी प्रथाको हटाकर लिंकनने बहुत लोगोंको हानि पहुँचाई है। इसलिए एक बार जब यह निश्चित मालूम हुआ कि लिंकन नाटक-

घरमें जानेवाला है तब उसको धोखेसे मार डालनेका षड्यन्त्र रचा गया। नाटकघरके पात्रोंको ही फोड़ दिया गया था और एक मुख्य पात्रने उसको गोली मारनेका बीड़ा उठाया था। जब वह नाटकमें अपनी विशेष कोठरीमें बैठा था तब वह दुष्ट मनुष्य उस कोठरीमें गया, दरवाजा बन्द किया और लिंकनको गोली मार दी। यह भला मनुष्य चल बसा। जब लोगोंने यह भयानक घटना देखी तब किसी न्यायकी अदालतमें जानेसे पहले ही उन्होंने उस हत्यारेको चीर[1] डाला। ऐसी करुण रीतिसे अमेरिकाके इस महान राष्ट्रपतिकी मृत्यु हुई। हम कह सकते हैं कि लिंकनने दूसरोंके दुःख मिटानेके लिए अपनी जिन्दगी न्योछावर कर दी। इसके बावजूद कहा जा सकता है कि लिंकन अब भी जीवित है। उसका बनाया हुआ संविधान अबतक अमेरिकामें चल रहा है। और जबतक अमेरिकाका अस्तित्व है तबतक लिंकनका नाम प्रख्यात रहेगा। ऊपरके वृत्तान्तसे पता चला होगा कि लिंकन अमर हो गया है, इसका कारण उसका बड़प्पन, चतुराई अथवा धन नहीं था; उसकी भलाई थी। लिंकन जैसे श्रेष्ठ तत्त्व जिस-जिस प्रजामें होते हैं अथवा होंगे वह प्रजा आगे बढ़ सकती है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६–८–१९०५

७२. पत्र: गवर्नरके निजी सचिवको

[जोहानिसबर्ग]
अगस्त ३०, १९०५

सेवामें
निजी सचिव,
गवर्नर, ऑरेंज रिवर कालोनी

महोदय,

ऑरेंज रिवर कालोनीके रंगदार लोगोंको प्रभावित करनेवाले नगरपालिकाके कुछ उपनियमोंके सम्बन्धमें मेरे संघने पिछली १ जुलाईको[2] जो निवेदन किया था, उसके उत्तरमें आपका १८ अगस्तका पत्र, नम्बर पी० एस० १५/०५, प्राप्त हुआ।

मेरा संघ आदरपूर्वक निवेदन करता है कि यदि बस्तीमें ब्रिटिश भारतीय हैं ही नहीं तो बस्तीके विनियमोंका वहाँ लागू करना ब्रिटिश भारतीय समाजका अकारण अपमान करना है— विशेषकर उस अवस्थामें जब कि मेरे संघने अभी तक यह आशा नहीं छोड़ी है कि उक्त उपनिवेशमें ब्रिटिश भारतीयोंको किसी-न-किसी दिन प्रवास-सम्बन्धी राहत मिलेगी ही। मेरा संघ यह नहीं समझ पाता कि जो बस्ती-उपनियम वतनियोंको लक्ष्यमें रखकर बनाये गये हैं उन्हें एक कृत्रिम परिभाषा देकर ब्रिटिश भारतीयोंपर क्यों लागू किया जा रहा है।

वतनी नौकरोंके अनिवार्य पंजीयनके नियमपर मेरे संघने कोई आपत्ति नहीं की है; किन्तु संघकी विनम्र सम्मतिमें ब्रिटिश भारतीयोंको दक्षिण आफ्रिकाके वतनियोंकी बराबरीपर रख

१. वास्तवमें पीछा करनेवाले सिपाहियोंने अस्तबलमें आग लगायी और उसमें छिपे हत्यारे बूथको गोलीसे उड़ा दिया था।

२. देखिए "पत्र: उच्चायुक्तके सचिवको", पृष्ठ ६।

देना सिद्धान्तः अनुचित और अन्यायपूर्ण है। अत., मुझे आपसे इस मामलेमें राहतकी प्रार्थना करनेका निर्देश दिया गया है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३–९–१९०५

७३. पत्र: मुख्य अनुमतिपत्र सचिवको

ब्रिटिश भारतीय संघ

पो० ऑ० बॉक्स ६५२२
जोहानिसबर्ग
सितम्बर १, १९०५

सेवामें
मुख्य अनुपतिपत्र सचिव
पो० ऑ० वॉक्स ११९९
जोहानिसवर्ग

महोदय,

मेरे संघको सूचना मिली है कि अनुमतिपत्र कार्यालयमें एक नया नियम लागू किया गया है। उसके अनुसार ब्रिटिश भारतीय शरणार्थियोके लिए आवश्यक हो गया है कि वे बजाय दो ज्ञात सन्दर्भ देनेके, जैसा कि अबतक देते रहे हैं, दो यूरोपीय सन्दर्भ दे। मेरे संघका नम्र निवेदन है कि यह प्रस्तावित नियम पहले तो ब्रिटिश भारतीय समाजके लिए एक अपमान है; क्योंकि इससे भारतीय साक्षीपर विश्वासकी कमी ध्वनित होती है, और दूसरे यह अव्यावहारिक भी है; क्योकि बिरले ही भारतीय ऐसे हैं जिनको यूरोपीय लोग नामसे जानते है। दूकानदार, उनके सहायक, बिक्री कर्मचारी और ब्रिटिश भारतीयोंके घरेलू नौकर यूरोपीयोके सम्पर्कमें कदाचित् ही आते है। उनसे यह आशा करना कि वे यूरोपीय सन्दर्भ प्रस्तुत करे अनुमतिपत्रके लिए उनके प्रार्थनापत्रको अस्वीकार करनेके बराबर है। तीसरे, यह घूसखोरीको बढ़ावा देगा; क्योकि यह सर्वथा संभव है कि थोड़ेसे नीतिभ्रष्ट भारतीयोके लिए थोड़े-से वैसे ही यूरोपीयोंको खोज लेना कठिन न होगा। ऐसे यूरोपीय किसी भी लाभके खयालसे झूठी कसम खानेको तैयार हो जायेंगे।

इसलिए मेरा संघ नम्र निवेदन करता है कि सुरक्षाका एकमात्र उपाय इसी बातमें है कि सन्दर्भ सम्माननीय हों और इस बारेमे उनकी जाति या रंगका विचार न किया जाये। तब भी बहुत सम्भव है, घूसखोरीके कुछ मामले हों। परन्तु वे विशुद्ध रूपसे ऐसे मामले होंगे जिनमें ऐसा करनेवालोके विरुद्ध कार्यवाही की जा सकेगी। एक या दो सफल मुकदमोके बाद ऐसी घटनाओका निश्चय ही अन्त हो जायेगा। इसके साथ ही मेरा संघ आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर खीचता है कि अनुमतिपत्रोंके सम्बन्धमें व्यापक प्रलोभनोके होते हुए भी ऐसी,

आपत्तिजनक कार्यवाहियाँ अपेक्षाकृत कम ही हुई हैं। यह निर्विवाद है कि युद्धसे पहले ट्रान्सवालमें १५,००० से ऊपर ब्रिटिश भारतीय वयस्क पुरुष रहते थे। आपकी पंजिकामें करीब १२,००० ही दिखाई पड़ते हैं। इसलिए यह मानना उचित होगा कि जिन व्यक्तियोंको अनुमतिपत्र मिले हैं, उनमें से अधिकतर युद्धसे पहलेके ट्रान्सवाल-निवासी हैं।

मेरा संघ सादर विश्वास करता है कि यह नियम वापस ले लिया जायेगा, और जो शरणार्थी वापस जानेकी अनुमतिकी प्रतीक्षा कर रहे हैं, उनकी अर्जियाँ जल्द मंजूर कर दी जायेंगी; क्योंकि, मेरे संघके पास जो जानकारी है, उसके अनुसार उन्हें बहुत बड़ी असुविधा और हानि हो रही है।

आपका, आदि,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काइव्ज़ एल० जी० ९२/२१३२

७४. नेटालके काफिर

विलायतसे ब्रिटिश संघके[1] कुछ सदस्य आजकल दक्षिण आफ्रिका आये हुए हैं। वे सबके-सब विद्वान हैं और उन्होंने ज्ञान अर्जित किया है। दक्षिण आफ्रिकामें यह संयोग पहली ही बार आया है। कुछ दिन पहले ये लोग नेटालमें थे। तब माननीय मार्शल कैम्बेल उनको अपनी माउंट एजकम्बकी कोठीपर ले गये थे। वहाँ उन सदस्योंको दो प्रकारके अनुभव कराये। एक तो आदिवासी काफिर कैसे होते हैं, यह बताया और उनके नाच आदिका प्रदर्शन कराया। उसके बाद शिक्षित आदिवासी काफिरोंसे परिचय कराया। उन लोगोंके वरिष्ठ श्री डुबे नामके व्यक्ति हैं। उन्होंने सदस्योंके समक्ष बड़ा प्रभावशाली भाषण किया।

श्री डुबे जानने योग्य वतनी हैं। इन्होंने फीनिक्सके पास अपने परिश्रमसे तीन सौ एकड़से अधिक जमीन ली है। वहींपर ये अपने भाइयोंको स्वयं पढ़ाते हैं। ये उन्हे विविध प्रकारके उद्योग सिखाते हैं और दुनियाके संघर्षसे मोर्चा लेनेके लिए उनको तैयार करते हैं।

श्री डुबेने अपने शानदार भाषणमें बताया कि काफिरोंके प्रति जो तिरस्कारका भाव रखा जाता है वह अनुचित है। आदिवासी काफिरोंकी तुलनामें शिक्षित काफिर अधिक अच्छे हैं, क्योंकि वे लोग अधिक काम करते हैं और उनका रहन-सहन ऊँचे ढंगका होनेके कारण व्यापारियोंमें उनकी साख अधिक है। आदिवासी काफिरोंपर करका बोझ लादना अन्याय है। और ऐसा करना उसी डालको काटनेके बराबर है जिसपर हम खुद बैठे हों। गोरोंके मुकाबले आदिवासी काफिर अपना कर्तव्य अधिक अच्छी तरह समझते हैं और उसका पालन करते हैं। वे परिश्रम करते हैं, और उनके बिना गोरे एक घड़ी भी नहीं टिक पायेंगे। वे सदैव वफादार रहनेवाली प्रजा हैं और नेटाल उनकी जन्मभूमि है। दक्षिण आफ्रिकाके सिवाय उनका कोई दूसरा देश नहीं है, और उनसे जमीन आदिके अधिकार छीनना उन्हें घरसे बाहर करनेके समान है।

१. देखिए, "ब्रिटिश सव: एक सुझाव", पृष्ठ ४९।

श्री डुबेके इस भाषणका गोरोंपर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा और उन्होंने कहा कि यदि उन्हें अपने फार्ममें लोहारी या छापेखानेका काम शुरू करनेमें दिलचस्पी हो, तो वे उन्हें सहायता देंगे। ब्रिटिश संघके सदस्योंने उसी समय आपसमे ६० पौंड इकट्ठा करके श्री डुबेको दिये। माननीय श्री मार्शल कैम्बेलने भी इस समय भाषण दिया और उसमें नेटालके आदिवासी काफिरोंकी प्रशंसा की और कहा कि वे अच्छे और उपयोगी हैं। उनके प्रति विद्वेष रखना गलतफहमी और भूलसे भरा हुआ है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–९–१९०५

७५. काउंट टॉलस्टॉय

ऐसा माना जाता है कि काउंट टॉलस्टॉयके समान धुरन्धर विद्वान, फिर भी फकीरी मनोवृत्तिवाला, कोई दूसरा व्यक्ति पश्चिमके देशोमें तो नही है। उनकी आयु आज प्रायः अस्सी वर्षकी हो चुकी है, फिर भी वे बहुत स्वस्थ, परिश्रमशील एवं विचक्षण हैं।

उनका जन्म रूसके एक उच्च कुलमें हुआ है। उनके माता-पिताके पास अपार धन था। वह उन्होने विरासतमे पाया है। वे स्वय रूसके एक उमराव हैं। अपनी जवानीमें उन्होंने रूसकी बहुत अच्छी सेवा की है। क्रीमियाकी लडाईमें वे बड़ी बहादुरीसे लड़े थे। उस समय वे अन्य उमरावोंकी तरह ससारके सभी प्रकारके भोगोंका भरपूर उपभोग करते थे। वेश्याएँ रखते थे; शराब पीते थे, और तम्बाकू पीनेकी उन्हें बहुत बुरी लत थी। युद्धकालमें जब उन्होंने भारी रक्तपात देखा तब उनका मन दयासे भर गया। उनके विचार बदल गये और उन्होंने अपने धर्मका अध्ययन शुरू किया। बाइबिल पढी। ईसा मसीहके जीवनका वृतान्त पढ़नेसे उनके मनपर बहुत बडा असर हुआ। रूसी भाषामें बाइबिलका अनुवाद था। उससे उनको सन्तोष न हुआ। इसलिए उन्होंने मूल भाषाका, अर्थात् हिब्रूका, अध्ययन किया और बाइबिलकी शोध जारी रखी। उनमें लिखनेकी महान शक्ति है, इस बातका पता भी उन्हे इन्ही दिनों चला। उन्होने लड़ाईसे होनेवाले अनर्थकारी परिणामपर बडी प्रभावशाली पुस्तक लिखी। सारे यूरोपमे उसकी ख्याति फैल गई। लोगोंकी नैतिकता सुधारनेके अभिप्रायसे कई उपन्यास लिखे। इनके मुकाबलेके ग्रन्थ यूरोपकी भाषाओंमे बहुत कम माने जाते हैं। इन सब पुस्तकोंमें उन्होने इतने अधिक प्रगतिशील विचार प्रकट किये हैं कि उनके कारण रूसके पादरी टॉलस्टॉयसे बिगड़ खड़े हुए। उन्हे बिरादरीसे बाहर निकाल दिया गया। इन सब बातोंकी कुछ परवाह न करते हुए उन्होंने अपना प्रयत्न जारी रखा, और अपने विचारोंको फैलाना शुरू कर दिया। उनके लेखोका प्रभाव खुद उनके मनपर भी बहुत पडा। उन्होने अपनी सारी सम्पत्ति त्याग दी और गरीबी अपनायी। आज अनेक वर्षोंसे वे एक किसानकी तरह रहते हैं। अपने निजी परिश्रमसे जो पैदा करते हैं उसीसे अपनी गुजर-बसर करते हैं। सब व्यसन छोड़ दिये हैं, अपना खाना-पीना भी बहुत सादा रखा है, और मन, वचन अथवा कायासे ऐसा कोई काम नही करते जिससे किसी प्राणीको हानि पहुँचे। सदैव अच्छे कामोमे और ईश्वरकी स्तुति करनेमें समय विताते हैं। वे यह मानते हैं कि:

१. दुनियामे मनुष्यको दौलत इकट्ठी नही करनी चाहिए।
२. दूसरा आदमी चाहे कितना भी बुरा करे फिर भी हमें उसका भला करना चाहिए, यह ईश्वरीय फरमान है, उसी प्रकार नियम भी है।

३. किसीको युद्धमें भाग नहीं लेना चाहिए।
४. राज्य-सत्ताका उपभोग करना पाप है। इससे दुनियामें अनेक दुःख उत्पन्न होते हैं।
५. [मनुष्य अपने कर्ताके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन करनेके लिए पैदा हुआ है, इसलिए अपने स्वत्वोंकी अपेक्षा उसे अपने कर्तव्यपालनपर अधिक ध्यान देना चाहिए।]
६. मनुष्यके लिए सच्चा रोजगार खेती है और बड़े नगरोंको बसाना, उनमें लाखों मनुष्योंको यन्त्रोद्योग आदिमें लगाना और इस प्रकारके लगे हुए मनुष्योंकी गुलामी अथवा गरीबीसे लाभ उठाकर थोड़ेसे मनुष्यों द्वारा अमीरीका उपभोग किया जाना ईश्वरीय नियमके विपरीत है।

उपर्युक्त विचार बहुत प्रतिभाशाली ढंगसे विभिन्न धर्मोंसे प्रमाण ढूँढ़-ढूँढ़कर और पुराने ग्रन्थोंके आधारपर सिद्ध किये हैं। इस समय यूरोपमें टॉलस्टॉयके सुझाये नियमोंके अनुसार चलनेवाले हजारों मनुष्य बसते हैं। इन मनुष्योंने अपना सर्वस्व त्यागकर बहुत सादी जिन्दगी अपनाई है।

टॉलस्टॉय अबतक जोशीले लेख लिखा करते हैं। स्वयं रूसी होनेपर भी रूस और जापानकी लड़ाईके सम्बन्धमें उन्होंने रूसके विरुद्ध बड़े तीखे और कड़े लेख लिखे हैं। रूसके सम्राटको टॉलस्टॉयने युद्धके सम्बन्धमें बड़ा प्रभावशाली और तीखा पत्र लिखा है। स्वार्थी अधिकारी टॉलस्टॉयपर बहुत कटु दृष्टि रखते हैं, फिर भी वे और स्वयं जार भी उनसे डर कर चलते हैं, और मान देते हैं। लाखों गरीब किसान उनके कहे हुए वचनोंका पालन करते हैं, यह उनकी भलमनसाहत और ईश्वरपरायण जीवनका प्रताप है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २-९-१९०५

७६. जापानकी उन्नति

संसारमें आज सबकी नजर जापानकी ओर लगी हुई है। कोई भी उस देशकी बहादुरी और चतुराईकी प्रशंसा किये बिना नहीं रहता। जापानके एक भूतपूर्व प्रधानमन्त्री काउंट ओकूमाने 'नॉर्थ अमेरिकन रिव्यू'में एक लेख लिखा है। उसमें बताया गया है कि इस समयके जापानकी महानता शताब्दियोंसे होते आनेवाले सुधारोंका परिणाम है। केवल शिक्षण-पद्धतिके दोषके कारण ही वह संसारकी नजरमें पिछड़ा हुआ था। जापानने समझ लिया कि विदेशियोंको अपने देशसे दूर रखना उसके वशमें नहीं है, और इसलिए उसने विचार किया कि अपनी सन्तानोंको विदेश भेजकर उन्हें वहाँकी विद्या और कला सिखाई जाये। इस काममें उसने जो स्वदेशाभिमान दिखाया उसके कारण उसकी अपनी प्रतिष्ठा कायम रही। जापानने उत्तम विदेशी शिक्षण-प्रणाली अपने देशमें जारी की। बालकों और बालिकाओंके लिए शिक्षण अनिवार्य कर दिया। साथ ही कला-कौशल और उद्योगपर भी ध्यान देनेमें वह नहीं चूका। जबतक उसके युवक पूरी तरह प्रशिक्षित होकर घर नहीं लौटे तबतक उसने विदेशी विद्वानोंको कामपर लगाये रखा।

जब पाठशालाओंकी योजना काफी जोरसे चल पड़ी तब मिकाडोने प्रत्येक स्कूलमें पढ़ानेके लिए एक आदेश प्रकाशित किया कि "तुम, हमारी प्रजा और अपने माता-पिताके प्रति भक्ति रखना; अपने भाई-बहनके प्रति स्नेहशील बनना; पति-पत्नी मेलसे रहना; अपना बरताव सरल

रखना; परमार्थ वृत्ति बढ़ाते जाना; अपने बुद्धिबल और सद्गुणोंका विकास करना; परोपकारके कामोसे देशकी कीर्ति बढाना; राज्यके संविधानका अनुसरण करके कानूनोका आदर करना; और अवसर आनेपर लोकसेवाके लिए मैदानमें आकर बहादुरी दिखाना।" न्यूयॉर्कमें भाषण करते हुए बैरेन कैनेकोने बताया था कि जापानकी प्रतिष्ठाकी बुनियाद यही है।

सैनिकों और नाविकोके बीच भी नीचे लिखी सात सीखे प्रचारित की गई थी :

१. खरे और वफादार बनो और असत्यसे दूर रहो।
२. अपने वरिष्ठ अधिकारीका आदर करो, साथियोंके प्रति सच्चे रहो, उद्दण्डता और अन्यायसे दूर रहो।
३. अपने अधिकारीकी आज्ञाके अधीन रहो और उसके आदेशोके प्राप्त होनेपर आना-कानी मत करो।
४. साहस और बहादुरीको ग्रहण करो और नामर्दी तथा भीरुताको त्याग दो।
५. क्रूर साहसकी प्रशंसा मत करो तथा दूसरोंका अपमान और दूसरोसे कलह मत करो।
६. सद्गुण तथा मितव्ययिताको अपनाओ और फिजूलखर्चीसे दूर रहो।
७. अपने गौरवकी रक्षा करो और जंगलीपन तथा कंजूसीसे अपनेको बचाये रखो।

जापानके सम्राटके इस प्रकारके आदेशोने प्रजा, सैन्य और सत्ताधिकारियोमे सद्गुणोका प्रसार करके उन सबको एक बनाया है और आज संसारको उसका जो बड़प्पन दिखाई देता है वह उपर्युक्त आदेशोका ही परिणाम है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २-९-१९०५

७७. पत्र : शिक्षा-मन्त्रीको

डर्बन
सितम्बर ५, १९०५

सेवामें
माननीय शिक्षा-मन्त्री

महोदय,

हम, उच्चतर श्रेणी (हायर ग्रेड) भारतीय विद्यालयमें[1] अध्ययन करनेवाले भारतीय बच्चोंके माता-पिता या अभिभावक, राहत पानेके लिए सादर निम्न लिखित निवेदन करते हैं।

हमे ज्ञात हुआ है कि सरकारका इरादा डर्बनके उच्चतर श्रेणी भारतीय विद्यालयको साधारणतया रंगदार बच्चोके स्कूलमे बदल देने और बालकों और बालिकाओमे कोई भेद न रखनेका है।

हम सविनय निवेदन करते है कि इस स्कूलको समस्त रंगदार बच्चोके लिए खोल देना भारतीय समाजके प्रति अन्याय और तत्कालीन शिक्षा-मन्त्री और सर अल्बर्ट हाइम व श्री रॉबर्ट रसेल द्वारा दिये गये इस आश्वासनकी अवहेलना है कि यह विद्यालय केवल भारतीय

१. देखिए, खण्ड ३, पृष्ठ १८२ और २१२।

बच्चोंके लिए सुरक्षित रखा जायेगा। इसकी स्थापना उस समय हुई थी जब सरकारने भारतीय बच्चोंको उपनिवेशके साधारण स्कूलोंमें भरती न करनेका निर्णय किया था।[1] और हम जानते हैं उस समय भी समस्त रंगदार बच्चोंके लिए एक स्कूल स्थापित करनेका प्रश्न उठाया गया था। परन्तु अच्छी तरह विचार करनेके बाद सरकारने सिर्फ भारतीय बच्चोंके लिए एक स्कूल कायम करनेका निर्णय किया। और यही कारण था कि इस स्कूलका वह नाम पड़ा जो आज है। इसके अतिरिक्त 'रंगदार बच्चे', इन शब्दोंका अर्थ इच्छानुसार घटाया बढ़ाया जा सकता है। 'ब्रिटिश भारतीय', इन शब्दोंका अर्थ सभी लोग जानते हैं परन्तु 'रंगदार व्यक्ति', शब्दोंका कोई निश्चित अर्थ नहीं है। और यह देखते हुए कि सरकारने भेद करनेकी नीति अपनाई है, यह उचित ही है कि उपनिवेशके इस सबसे बड़े नगरमें ब्रिटिश भारतीयोंके लिए एक स्कूल सुरक्षित रखा जाये। शिक्षा-अधीक्षकने उस दिन कहा था कि भारतीय माता-पिता नेटालके अन्य स्थानोंमें इस प्रकारके मिश्रणपर आपत्ति नहीं करते। परन्तु हम सादर निवेदन करते हैं कि नेटालके छोटे नगरोंसे इस प्रकारकी तुलना करना कदाचित् ही उचित होगा। डर्बन एक ऐसा नगर है जिसमें स्वतन्त्र और सम्पन्न भारतीयोंकी सबसे बड़ी आबादी है। इसलिए यह स्वाभाविक ही है कि ऐसे मामलोंमें डर्बनमें कठिनाई तीव्रताके साथ अनुभव की जाये।

जहाँतक लड़के-लड़कियोंको अलग-अलग रखनेका प्रश्न है, हम, काफी अनुभव प्राप्त तथा भारतीय भावनाओंसे परिचित माता-पिता, इतना ही कह सकते हैं कि इस निर्णयसे बहुत-सी जायज शिकायतें उत्पन्न होने वाली हैं। इस मार्गके अनुसरण किये जानेमें केवल व्यावहारिक गम्भीर आपत्तियाँ ही नहीं हैं, बल्कि बहुतसे उदाहरणोंमें धार्मिक भावनापर भी विचार करना है और हमें सन्देह नहीं कि सरकार ऐसी भावनाओंका पूरा खयाल रखेगी।

अन्तमें, हम आशा करते हैं कि उपर्युक्त दोनों मामलोंके बारेमें जो हिदायतें जारी की गई हैं वे वापस ले ली जायेंगी और जब उच्चतर श्रेणी भारतीय विद्यालयकी स्थापना हुई थी तब भारतीय समाजको जो विश्वास दिलाया गया था उसको सरकार बनाये रखेगी।

आपका, आदि,
अब्दुल कादिर
और ९९ अन्य

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१-१०-१९०६

१. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ १७६।

७८. सन्धिपत्र[1]

जापानने जो शर्तें घोषित की थी उनमे से उसने दो शर्तें उदारतापूर्वक बहुत-कुछ छोड़ दी हैं। एक तो यह कि लड़ाईके खर्चके बदलेमें कुछ न लिया जाये; किन्तु रूसी कैदियोंके खर्च तथा आहतोंकी सेवा-शुश्रूषाके खर्चके बदलेमें रूस केवल १२,००,००० पौंड जापानको दे; और दूसरी यह कि सखेलियन द्वीपको दोनों पक्ष आधा-आधा बाँट लें। यद्यपि रूसी जनतामें इस सन्धिपत्रसे प्रसन्नताकी लहर दौड गई है, जापानमे बड़ा असन्तोष फैला है, और उसके कम होनेके कोई लक्षण नहीं दीख रहे है। सन्धिपत्र तैयार हो जानेपर विना ढील-ढालके उनपर हस्ताक्षर करनेके उपरान्त दोनों पक्षोंके वकील अपने-अपने देश लौट जानेके लिए अधीर हो रहे हैं, ऐसा अन्तिम तारोंसे पता चलता है। जापानके राजदूत स्वदेश लौटनेपर अच्छे स्वागतकी जरा भी आशा नहीं करते, बल्कि उन्हें डर है कि जनता उनको क्रोधपूर्ण दृष्टिसे देखेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-९-१९०५

७९. चीनी खान-मजदूरोंपर अत्याचार

श्री लिटिलटनसे एक संसद-सदस्यने उक्त विषयमें प्रश्न किया था। उसके उत्तरमें उन्होंने जाँच करनेका तथा कोड़े लगाना बन्द करनेका वचन दिया। चीनियोको किस प्रकार कोड़े लगाये जाते हैं, उसका वर्णन जोहानिसबर्गके 'डेली एक्सप्रेस' में दिया गया है; वह बहुत करुणाजनक है। उसमेंसे मुख्तसर हाल हम नीचे दे रहे हैं। लेखकने यह बताया है कि जो-कुछ उसने लिखा है वह या तो स्वयं अपनी आँखोसे देखा हुआ है या हजारों मनुष्योंको बेंत या कोड़े लगानेका हुक्म जिन व्यक्तियोंने दिया था, उनकी गवाहीपर आधारित है। इस वर्षके प्रारंभमें, जोहानिसबर्गकी एक खानमें औसतन बयालीस चीनियोको प्रतिदिन कोड़े लगाये जाते थे; इसमें अपवाद रविवारका भी नही है। यह सब इस प्रकार होता है: ऐसे मजदूरके विरुद्ध पहले तो उसका सरदार शिकायत करता है, फिर उसको अहातेके मैनेजरके कार्यालयमें ले जाया जाता है; वे भाई साहब अपराधके अनुसार दस, पन्द्रह अथवा बीस बेंत मारनेका हुक्म देते हैं। फिर दो चीनी सिपाही उसको करीब पन्द्रह कदम दूर ले जाते हैं। सिपाहीका हुक्म होते ही कैदी फौरन रुक जाता है। वह अपनी पतलून आदि कपड़ा उतार देता है और औंधे मुँह जमीनपर लेट जाता है। एक सिपाही उस बेचारेके पैर दबा लेता है और दूसरा उसका सिर पकड़ लेता है। इसके बाद बेंत लगानेवाला आदमी तीन फुट लम्बे और तीन इंच मोटे हत्थेवाले डंडेसे, आदेशके अनुसार धीरे-धीरे अथवा जोरसे उसकी पीठपर प्रहार करता है। यदि इस बीच पीड़ा सहन न हो सकनेसे वह थोड़ा भी हिलता-डुलता है तो एक और आदमी उसे अपने पैरोंसे दबा लेता है और तब गिनती पूरी की जाती है।

१. इस सन्धिपत्रपर ५ सितम्बर १९०५को पोर्ट्समाउथ (संयुक्त राज्य अमेरिका) में हस्ताक्षर किये गये।

किसी-किसी खानमें कोड़ोके बदले लकड़ीसे पीटा जाता है। उसकी चोटें इतनी तेज होती हैं कि उनके कारण मांस उभर आता है और चमड़ी फट जाती है। नोर्सडीपकी खानमें मैनेजर कुकके समयमें यदि कोई चीनी बरमेसे ३६ इंच गहरा छेद न कर पाता तो वह उसे सजाका हुक्म देता था। सजा देनेका उसका तरीका और भी क्रूर था। वह सख्त मजबूत लाठीसे काम लेनेकी आज्ञा देता था और उससे जाँघोके पीछे जहाँ, बिलकुल ही सहन न हो ऐसे स्थलपर, चोट मारनेका हुक्म देता था; और खूनकी धार चल जानेपर भी प्रहारोंकी संख्या पूरी की जाती थी। कभी-कभी तो इतनी सख्त चोट लग जाती थी कि बेचारे चीनीको अस्पताल भेजना पड़ता था। इस दुष्ट कुककी जगह बादमें प्लेस नामका व्यक्ति नियुक्त किया गया। वह चोरोमें शाह माना जाता था, इसलिए वह लाठीके बदले रबड़के टुकड़े काममें लेता था। कुछ समय बाद खानके अधिकारियोंने देखा कि प्रतिमास जो काम होना चाहिए वह नही हो रहा है, इसलिए प्लेसको अधिक सख्ती करनेका हुक्म दिया गया। प्लेसने ऐसा करनेसे इनकार कर दिया और उसे त्यागपत्र देना पड़ा। इसपर लोकसभामें चर्चा होनेसे अधिकारियोंने कोड़ोके बदले और कोई सजा देनेका निर्देश किया। इसपर प्लेसने, जिसे चीनका अनुभव था, चीनका प्रचलित रिवाज दाखिल किया। वह अपराधी चीनीको बिलकुल नंगा कर देता। फिर उसको अहातेमें खड़े झंडेके साथ उसीकी चोटीसे बँधवा देता और वहाँ, चाहे जितनी ठंड अथवा चाहे जैसी कड़ी धूप हो, दो-तीन घंटे तक खड़ा रखता। फिर वह दूसरे चीनियोंको यह आदेश देता कि वे अपराधीको दाँत दिखा-दिखा कर चिढ़ायें। दूसरा तरीका यह था कि अपराधीके बायें हाथमें एक पतली रस्सी बाँधी जाती। फिर उस रस्सीको कड़ेमें डालकर बेचारे मजदूरको इस प्रकार लटकाया जाता कि उसे केवल पैरोंकी अँगुलियोके सिरोंके सहारे ही दो-तीन घंटे तक खड़ा रहना पड़ता था। कही-कहीं तो बेचारे मजदूरके हाथमें हथकड़ी डालकर जमीनसे दो फुट ऊँचे पाटसे बाँध दिया जाता था और इस तरह बिना हिले-डुले उसे दो-तीन घंटे तक रहना पड़ता था। इस प्रकारकी सजा तो ताड़से छूटकर भाड़में गिरनेके समान हुई। लोकसभामें बेंतकी मारके बारेमें चर्चा हुई तो खानोंके निर्दयी अधिकारियोंने बेंत लगाना बन्द कर दिया, किन्तु संसदमें यह कहना भुला दिया गया कि उसके बदले अधिक पीड़ा पहुँचानेवाली सजा निश्चित की गई है।

इस बातको प्रकाशमें लाकर 'डेली एक्सप्रेस' के सम्पादक श्री पेकमानने सैकड़ों चीनियोंका मूक आशीर्वाद प्राप्त किया है। यदि वह सब सच हो — और गलत माननेका कोई कारण नही है — तो खानके अधिकारी अपने सिरजनहारके सामने क्या जवाब दे सकेंगे? दक्षिण आफ्रिकाके गरीब मजदूरोंकी हायसे अगर वे बरबाद हो जायें तो क्या आश्चर्य? अंग्रेजोंने लड़ाई करके ट्रान्सवाल जीता, उसका प्रयोजन क्या यही था?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-९-१९०५

८०. फ्लॉरेन्स नाइटिंगेल[1]

हम पिछले एक अकमें नेक महिला एलिजाबेथ फ्राइके कार्यकलापका वर्णन कर चुके है। जिस प्रकार उसने कैदियोंकी हालतमें परिवर्तन किया और उनके लिए अपना जीवन अर्पित किया, उसी प्रकार फ्लॉरेन्स नाइटिंगेलने फौजी सैनिकोके लिए अपने प्राण दिये। सन् १८५१ में[2] जब क्रीमियाकी जबरदस्त लड़ाई हुई तब ब्रिटिश सरकार अपनी परिपाटीके अनुसार सो रही थी। कुछ भी तैयारी नही थी। और जिस प्रकार बोअर युद्धमे हुआ था उसी प्रकार क्रीमियाकी लड़ाईमें भी आरम्भमें भूलें करनेके कारण करारी हार हुई। घायलोंकी सेवा-शुश्रूषा करनेके जितने साधन आजकल है, उतने पचास वर्ष पूर्व नही थे। सहायताकार्यके लिए आज जितने मनुष्य निकल पड़ते है, उतने उस समय नही निकलते थे। शल्य-चिकित्साका जोर जितना आज है उतना उन दिनोमें नही था। घायल मनुष्योकी सेवाके लिए जानेमे पुण्य है, वह दयाका काम है, ऐसा समझनेवाले उस समय बिरले ही थे। ऐसे समय इस महिला — फ्लॉरेंस नाइटिंगेल — ने इस प्रकारके काम किये मानो वह फरिश्ता ही बनकर आई हो। सैनिक कष्टमें हैं, इस बातका पता उसे चला तो उसका हृदय विदीर्ण हो गया। वह स्वय बड़े धनी कुलकी महिला थी। वह अपना ऐश-आराम छोड़कर रोगियोकी सेवा-शुश्रूषाके लिए चल पड़ी। फिर उसके पीछे-पीछे और भी वहुत सी महिलाएँ निकली। १८५४ के अक्टूबरकी २१ तारीखको वह घरसे चली। इंकरमैनकी लड़ाईमें[3] उसने जवरदस्त मदद पहुँचाई। उस समय घायलोके लिए न बिस्तर थे, न और कुछ सुविधा ही। अकेली इस महिलाकी देखभालमे १०,००० घायल थे। जब यह महिला वहाँ पहुँची तव मृत्यु-संख्या प्रति सैकड़ा ४२ थी। इसके पहुँचते ही वह एकदम ३१ तक आ गई और अन्तमे वह संख्या प्रति सैकड़ा ५ तक आ पहुँची। यह घटना चमत्कारी है, फिर भी सहज ही समझमे आ सकती है। इन हजारो घायल मनुष्योका रक्त बहना रोका जाये, घावपर पट्टी बाँधी जाये, और आवश्यक आहार दिया जाये तो निःसन्देह जान बच सकती है। केवल दया और सेवा-शुश्रूषाकी आवश्यकता थी, जो नाइटिंगेलने पूरी कर दी। यह कहा जाता है कि वड़े और मजबूत लोग जितना काम नही कर सकते थे उतना नाइटिंगेल करती थी। वह दिन-रातमें मिलाकर २०-२० घंटे काम किया करती थी। जब उसके हाथके नीचे काम करने-वाली महिलाएँ सो जाती तव वह अकेली मध्य-रात्रिमे मोमबत्ती लेकर रोगियोकी खाटोके पास जाती, उनको आश्वासन देती और अगर कुछ खुराक वगैरह आवश्यक होती तो उन्हे अपने हाथसे देती। जहाँ लड़ाई चलती होती वहाँ जानेमें भी नाइटिंगेल डरती नही थी। खतरेको वह कुछ समझती ही नही थी। भय केवल भगवानका मानती थी। कभी-न-कभी मरना ही है, ऐसा समझकर औरोंका दुःख कम करनेके लिए जो भी तकलीफ उठानी पडती, वह उठाती थी।

इस महिलाने कभी ब्याह नही किया। इसी प्रकारके भले कामोमें उसने अपना सारा जीवन बिताया। कहा जाता है कि जब उसकी मृत्यु हुई तब हजारों सैनिक छोटे बच्चोंके समान ऐसे फूट-फूटकर रोये मानो उनकी माँ मर गई हो।

१. (१८२०–१९१०), प्रसिद्ध परिचारिका और अस्पतालोंकी अग्रणी सुधारक।

२. वास्तवमें क्रीमियाकी लड़ाई २३ अक्तूबर १८५३ को शुरू हुई।

३. यह ५ नवम्बरको हुई।

जहाँपर ऐसी महिलाएँ पैदा होती हैं वह देश क्यों न फले-फूले। इंग्लैंड राज्य करता है, सो अपने बलके बूतेपर नहीं, बल्कि इस प्रकारके स्त्री-पुरुषोंके पुण्यबलपर।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-९-१९०५

८१. स्वर्गीय कुमारी मैनिंग[1]

'इंडिया' के ताज़ा अंकसे हमें यह शोकजनक संवाद मिला है कि राष्ट्रीय भारतीय संघ (नेशनल इंडियन असोसिएशन) की कर्मठ मन्त्री कुमारी मैनिंगका देहान्त हो गया। उस श्रेष्ठ महिलाके त्याग-पूर्ण कार्यसे ही इस संघमें जीवन आया था। जो तरुण भारतीय अध्ययनके लिए इंग्लैंड जाते थे उनकी वे सच्ची मित्र थीं और उनके स्वागतके लिए उनका द्वार सदा खुला रहता था।[2] वे उनको मार्ग प्रदर्शित करनेके लिए सदा तैयार रहती थी। उनके यहाँ जो बैठकें होती थीं वे एक वार्षिक कार्यक्रममें परिणत हो गई थी। वे बैठकें भारतीयों और आंग्ल-भारतीयोंको एक दूसरेके समीप लाती और इस प्रकार दोनोंमें पारस्परिक सद्भाव बढ़ाया करतीं। कुमारी मैनिंगमें दिखावा बिलकुल नहीं था। 'इंडिया' ने लिखा है कि वे सार्वजनिक प्रतिष्ठा प्राप्तिकी कोशिशें करनेकी अपेक्षा पीछे रहना अधिक पसन्द करती थीं। उनकी मृत्युसे, अध्ययन तथा अन्य कार्योंके लिए वर्ष-प्रतिवर्ष अधिकाधिक संख्यामें इंग्लैंड जानेवाले तरुण भारतीयोंकी निश्चित हानि हुई है। इनके सम्बन्धमें अधिक जानकारीके लिए हमारे पाठक हमारी लन्दनकी चिट्ठी पढ़ें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-९-१९०५

१. एलिज़ाबेथ एडेलेड मैनिंग, काउंटी अदालतके जज और विद्वान वकील जेम्स मैनिंगकी पुत्री थीं। वे फ्रावेल सोसाइटीकी मन्त्री और गर्टन कॉलेज, कैम्ब्रिजके संस्थापकोंमें से थीं। वे १८७७ में राष्ट्रीय भारतीय संघकी अवैतनिक मन्त्री चुनी गईं और १० अगस्त १९०५ तक, जब वे ७७ वर्षकी आयु पाकर मृत्युको प्राप्त हुईं, उस पदपर बनी रहीं। वे इंडियन मैगजीन ऐंड रिव्यूका सम्पादन करती थीं और भारतके समस्त सामाजिक आन्दोलनोंमें भाग लेती थीं।

२. प्रतीत होता है गांधीजी जब इंग्लैंडमें कानूनके अध्ययनके लिए गये थे, तब उनके घर प्रायः आते-जाते थे। देखिए, आत्मकथा भाग १, अध्याय २२।

८२. आगामी कांग्रेसका अध्यक्ष कौन?

'इंडिया' में खबर प्रकाशित हुई है[1] कि आगामी कांग्रेसके अध्यक्षके चुनावके लिए निम्नलिखित नाम सुने जा रहे हैं: माननीय श्री गोपालकृष्ण गोखले, श्री अरडली नॉर्टन[2], राव बहादुर मुधोलकर[3], सर गुरुदास बनर्जी[4], डॉ० रासबिहारी घोष[5] और बाबू कालीचरण बनर्जी[6]। ये सभी सज्जन बहुत योग्य हैं और इन्होंने भारतकी बड़ी सेवाएँ की हैं। उनमें भी श्री गोखलेका नाम आजकल तो सबसे आगे है। बड़ी लोकसभामें उन्होंने लॉर्ड कर्जनसे बहुत अच्छी टक्कर ली है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-९-१९०५

८३. बड़ौदाके महाराजा गायकवाड़ और उनके दीवान

महाराजा गायकवाड़ने श्री दत्तको[7] अपना दीवान नियुक्त किया है। यह कर्जन साहबको पसन्द नहीं आया। 'बंगाली' में दी गई खबरसे मालूम होता है कि इसलिए उन्होंने भारतके हर राजाके पास इस आशयका गुप्त परिपत्र भेजा है कि यदि भविष्यमें नौकरीसे इस्तीफा देनेवाले इंडियन सिविल सर्विसके व्यक्तिको कोई अपने यहाँ नियुक्त करनेका इरादा करे तो वह उसकी नियुक्तिसे पूर्व सरकारसे अनुमति ले। यह लॉर्ड कर्जनकी आखिरी लड़ाइयोंमें से एक जान पड़ती है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-९-१९०५

१. जैसी मद्रास मेलमें दी गई थी।

२. मद्रासके एक बैरिस्टर और लोकसेवक।

३. पीछे १९१२ में कांग्रेसके बांकीपुर अधिवेशनके अध्यक्ष बने। मूलमें अकोलकर दिया गया है।

४. भूतपूर्व न्यायाधीश और बंग जातीय विद्या-परिषदके अध्यक्ष।

५. सन् १९०८ में मद्रासके कांग्रेस अधिवेशनके अध्यक्ष हुए।

६. एक भारतीय ईसाई, जो कांग्रेसके कार्योंमें बहुत दिलचस्पी लेते थे।

७. श्री रमेशचन्द्र दत्त (१८४८-१९०९): भारतीय नागरिक सेवा (इंडियन सिविल सर्विस) के सदस्य, भारतकी प्राचीन संस्कृति और सभ्यताके सूक्ष्म अध्येता और **इकनॉमिक हिस्ट्री ऑफ इण्डिया सिन्स द एडवेन्ट आफ द ईस्ट इंडिया कम्पनीके** लेखक। १८९९ की लखनऊ कांग्रेसके अध्यक्ष हुए और अपने जीवनके अन्तिम पाँच वर्षोंमें बड़ौदाके राजकाजसे सम्बद्ध रहे। पहले मालमंत्री बने और बादमें दीवान। देखिये, खण्ड ४, पृष्ठ ४८७।

८४. ब्रिटिश मध्य आफ्रिकाके सम्बन्धमें समाचार

परिश्रमी लोगोंके लिए बढ़िया अवसर

ब्रिटिश मध्य आफ्रिकामें रेलकी पटरी बिछानेका काम चल रहा है। हमें खबर मिली है कि वहाँ मजदूरोंकी जरूरत है। इस सम्बन्धमें हम और भी जानकारी प्राप्त कर रहे हैं। तबतक जो लोग उधर जाना चाहते हों वे अपने नाम और पते साफ अक्षरोंमें लिखकर हमारे पास भेज दें। हम उनकी सूची बना लेंगे और यदि हमें वहाँकी परिस्थिति जानेके लिए अनुकूल जान पड़ेगी तो इस समाचारपत्रमें खबर दे देंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६–९–१९०५

८५. इटलीमें भूकम्प

कुछ दिन पहले इटलीके कैलेब्रिया[1] नामक स्थानमें एक भारी भूचाल आया था। उससे हजारों लोग बेघर-बार हो गये हैं और मददके लिए करुण पुकार कर रहे हैं। इटलीके राजाने चार हजार पौंड सहायतामें दिये हैं। पारगेली नामक स्थानमें तीन सौ, गेपलोमें दो सौ और मार-टेरेनोके पास दो हजार लोग मरे या सख्त घायल हुए हैं। भूचालके इस बड़े धक्केके दो-तीन दिन बाद, और एक साधारण-सा धक्का आया था। लोग घबराकर इधर-उधर भाग रहे हैं, और कुछ तो देश छोड़कर चले जा रहे हैं। मरे और घायल हुए लोगोंकी संख्या पाँच हजार कूती जाती है। १८५७ में जब विस्तृत क्षेत्रमें भूकम्पके धक्के लगे थे तब लगभग दस हजार लोगोंकी प्राणहानि हुई थी। कैलेब्रियापर इस प्रकारके संकट बहुत अर्सेसे पड़ते चले आ रहे है। १८५७ से ७५ वर्ष पहलेकी अवधिमें कुल मिलाकर एक लाख ग्यारह हजार लोगोंकी प्राणहानि हुई जिसकी औसत लगानेपर कहा जा सकता है कि प्रतिवर्ष पन्द्रह सौ लोगोंका विनाश हुआ। पिछले पचास वर्षोंमें कैलेब्रियामें अनेक बार भूचाल आ चुके हैं; परन्तु उनमें ऐसा विनाशकारी भूचाल एक भी न था। बहुत-से गाँव नष्ट हो गये हैं और प्रायः एक लाख लोग बेघर हो गये हैं। वहाँकी सरकार उन्हें सहायता पहुँचानेकी भरसक कोशिश कर रही है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६–९–१९०५

१. सुदूर दक्षिण पश्चिमी इटलीका पहाड़ी क्षेत्र।

८६. चीनी और भारतीय: एक तुलना[1]

जोहानिसबर्गमें बहुत-से चीनी रहते हैं। यह नहीं कहा जा सकता कि उनकी माली हालत भारतीयोंकी अपेक्षा अच्छी है। उनमेंसे अधिकतर तो कारीगर हैं। मुझे उनका रहन-सहन देखनेका अवसर कुछ दिन पहले मिला था। उसे देखकर और उससे अपने लोगोंके रहन-सहनकी तुलना करके मुझे खेद हुआ।

उन लोगोंने सार्वजनिक कामके लिए चीनी संघकी स्थापना की है। उसके लिए उनके पास एक बड़ा हाल है। उस हालको साफ-सुथरा और सुन्दर रखा जाता है। वह पक्की ईंटोंका बना हुआ है। वे लोग इसका खर्च, एक बड़ी किरायेकी जमीनको दुबारा किरायेपर उठाकर निकालते हैं। चीनियोंके लिए रहने आदिकी सुविधा न होनेके कारण उन्होंने 'कैंटनी क्लब' कायम किया है। वह मिलनेकी जगहका, रहनेकी जगहका तथा पुस्तकालयका काम देता है। इस क्लबके लिए उन्होंने लम्बे पट्टेपर जमीन ली है और उसपर एक पक्का दुमंजिला मकान बनाया है। इसमें सब लोग बड़ी स्वच्छतासे रहते हैं। वे जगहका लोभ नहीं करते। और बाहरसे तथा भीतरसे देखनेपर ऐसा प्रतीत होता है, मानो कोई बढ़िया यूरोपीय क्लब हो। उसमें बैठनेका कमरा, भोजनका कमरा, सभा करनेका कमरा, कमेटीका कमरा, मन्त्रीका कमरा और पुस्तकालयका कमरा इत्यादि जुदा-जुदा रखे गये हैं जिनका वे दूसरे कामोंके लिए उपयोग नहीं करते। इन कमरोंसे लगे हुए जो कमरे हैं, वे सोनेके लिए किरायेपर दिये जाते हैं। वह जगह ऐसी साफ और अच्छी है कि कोई भी आगन्तुक चीनी सज्जन वहाँ टिकाया जा सकता है। उन्होंने क्लबका प्रवेश-शुल्क ५ पौंड रखा है और वार्षिक शुल्क व्यक्तिके रोजगारके अनुसार होता है। इस क्लबमें लगभग १५० सदस्य हैं। वे हर रविवारको मिलते हैं और वहाँ खेलते-कूदते हैं। अन्य दिनोंमें भी सदस्य उसका उपयोग कर सकते हैं।

हम लोग ऐसी कोई भी संस्था नहीं दिखा सकते। किसी भी अजनबी भारतीयके ठहरने योग्य स्वतन्त्र जगह सारे दक्षिण आफ्रिकाके किसी शहरमें नहीं है। हमारी मेहमानदारी अवश्य अच्छी है, फिर भी वह सीमित होती है। अगर एक क्लब जैसी कोई जगह हो तो उसके कई अच्छे उपयोग किये जा सकते हैं। [एक-दूसरेके घर अपना समय बितानेके बदले लोग यदि सार्वजनिक स्थानपर समय बिता सकें तो उससे बहुत लाभ होता है।] किसी एक व्यक्तिके ऊपर बोझ नहीं पड़ता। मैत्री-सम्बन्ध बढ़ सकता है और इससे हमारी प्रतिष्ठामें वृद्धि होती है। स्वच्छता-सम्बन्धी नियमोंका भी पालन किया जा सकता है। यह काम बहुत कम खर्चमें किया जा सकता है और यह आवश्यक है, इसमें कोई सन्देह नहीं।

चीनियोंने जो क्लब स्थापित किया है वह बिलकुल ही सबक लेने योग्य और अनुकरणीय है। हमपर गन्देपनका जो आरोप है, वह बिलकुल अकारण नहीं है। इस प्रकारके क्लबकी स्थापना करना उस आरोपको मिटानेका एक अच्छा उपाय है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-९-१९०५

१. यह "हमारे जोहानिसबर्ग-संवाददाता द्वारा प्रेषित" रूपमें छपा था।

८७. ईश्वरचन्द्र विद्यासागर

हम इन स्तंभोंमें यूरोपके कुछ अच्छे स्त्री-पुरुषोंके जीवन वृत्तान्त संक्षेपमें छाप चुके है। इन जीवन वृत्तान्तोंको छापनेमें हमारा उद्देश्य यह है कि इनसे हमारे पाठकोंका ज्ञान बढ़े और वे अपने जीवनमें उनके उदाहरणोंका अनुकरण करके उसे सार्थक बनायें।

बंगालमें विलायती मालके बहिष्कारका जो जोरदार आन्दोलन चल रहा है वह मामूली नहीं है। बंगालमें शिक्षा बहुत है और लोग बहुत ही चतुर हैं, इसलिए वहाँ ऐसा आन्दोलन हो सका है। सर हेनरी कॉटन कह चुके है कि बंगाल कलकत्तासे पेशावर तक शासन चलाता है। इसका कारण जाननेकी जरूरत है।

यह निश्चित है कि प्रत्येक जातिकी उन्नति और अवनति उसके महापुरुषोंपर अवलम्बित है। जिस जातिमें अच्छे लोग पैदा होते हैं उसपर उन लोगोंका प्रभाव पड़े बिना नहीं रहता। बंगालमें जो विशेषता दिखाई देती है उसके कारण कई हैं। किन्तु उनमें एक मुख्य कारण यह है कि बंगालमें पिछली शताब्दीमें बहुत महापुरुष उत्पन्न हुए। राममोहन रायके[1] बाद वहाँ वीर पुरुषोंकी एक परम्परा आरम्भ हुई जिससे दूसरे प्रान्तोंके मुकाबले बंगालकी स्थिति बहुत अच्छी हो गई। यह कहा जा सकता है कि इन लोगोंमें ईश्वरचन्द्र विद्यासागर महानतम थे। 'विद्या-सागर' ईश्वरचन्द्रकी उपाधि थी। उनका संस्कृत भाषाका ज्ञान इतना ऊँचा था कि कलकत्तेके विद्वानोंने उसीके कारण उनको "विद्याके सागर" की उपाधि प्रदान की। परन्तु ईश्वरचन्द्र केवल विद्याके ही सागर नहीं थे, बल्कि दया, उदारता, और अन्य अनेक सद्गुणोंके सागर भी थे। वे हिन्दू थे और हिन्दुओंमें भी ब्राह्मण। परन्तु उनके मनमें ब्राह्मण और शूद्र तथा हिन्दू और मुसलमान समान थे। वे जो भी अच्छा काम करते थे, उसमें ऊँच और नीचका भेद नहीं करते थे। उनके प्राध्यापकको हैजा हुआ तो उन्होंने खुद सेवा-शुश्रूषा की। प्राध्यापक गरीब थे, इसलिए वे उनके लिए अपने खर्चसे ही डॉक्टर लाये और उनका मल-मूत्र भी उन्होंने खुद ही उठाया।

वे चन्द्रनगरमें अपने रुपयेसे कुलची[2] और दही खरीदकर गरीब मुसलमानोंको जिमाते और जिनको पैसेकी मददकी जरूरत होती उनको पैसा भी देते थे। रास्तेमें कोई अपंग या दुःखी मनुष्य मिलता तो उसको अपने घर ले जाकर उसकी सार-सँभाल खुद करते थे। वे पराये दुःखमें दुःख और पराये सुखमें सुख मानते थे।

उनका अपना जीवन अत्यन्त सीधा-सादा था। शरीरपर मोटी धोती, ओढ़नेकी वैसी ही मोटी चद्दर और स्लिपर — यह थी उनकी पोशाक। वे ऐसी पोशाक पहनकर ही गवर्नरोंसे मिलते और उसीको पहनकर गरीबोंकी आवभगत करते। यह व्यक्ति सचमुच एक फकीर, संन्यासी या योगी था। इसके जीवनपर विचार करना हमारे लिए बहुत ही उचित होगा।

ईश्वरचन्द्र मिदनापुर तालुकेके एक छोटेसे गाँवमें गरीब माँ-बापके घर पैदा हुए थे। उनकी माँ बड़ी साध्वी थीं और उनको बहुतसे गुण अपनी माँ से ही मिले थे। उन दिनों भी उनके पिता थोड़ी अंग्रेजी जानते थे। उन्होंने अपने पुत्रको अंग्रेजीकी उच्च शिक्षा दिलानेका निश्चय किया। ईश्वरचन्द्रका विद्यारम्भ पाँच वर्षकी आयुमें हुआ और आठ वर्षकी आयुमें उन्हें अध्ययनके लिए

१. (१७७४-१८३३) भारतके महान धर्म सुधारक, ब्रह्मसमाजकी स्थापना की, सती प्रथाका उन्मूलन करवाया, और भारतमें शिक्षा-प्रचारके लिए कठिन परिश्रम किया।

२. कुल्ची : एक प्रकारकी खमीरी या पाव रोटी।

साठ मील दूर पैदल कलकत्ता जाना पड़ा और वे वहाँ संस्कृत कालेजमें भर्ती हो गये। उनकी स्मरणशक्ति ऐसी अद्भुत थी कि उन्होंने यात्रामें मीलके अंकोंको देख-देखकर अंग्रेजी अंक सीख लिये थे। सोलह वर्षकी आयु तक वे संस्कृतका बहुत अच्छा अध्ययन कर चुके थे और संस्कृतके अध्यापक नियुक्त कर दिये गये थे। वे एक-एक सीढ़ी चढ़ते-चढ़ते अन्तमें उसी कॉलेजके आचार्यके पदपर जा पहुँचे जिसमें वे पढ़े थे। सरकार उनका अत्यन्त आदर करती थी। परन्तु स्वतन्त्र स्वभावके होनेसे उनको शिक्षा-विभागके निदेशककी बात सहन नहीं हो सकी; इसलिए उन्होंने इस्तीफा दे दिया। बंगालके लेफ्टिनेंट गवर्नर सर फ्रेड्रिक हैलीडेने उनको बुलाया और कहा कि वे अपना इस्तीफा वापस ले लें; किन्तु ईश्वरचन्द्रने उसको वापस लेनेसे साफ इनकार कर दिया।

इस प्रकार नौकरी छोड़नेके बाद ईश्वरचन्द्रकी महानता और मानवता अच्छी तरह विकसित हुई। उन्होने देखा कि बंगला बहुत अच्छी भाषा है; किन्तु उसमें नई रचनाएँ नहीं हैं; इसलिए वह निर्धन लगती है। अतः उन्होंने बंगला पुस्तकोंकी रचना शुरू की। उन्होने बहुत अच्छी पुस्तकें लिखी है। आज बंगला भाषा समस्त भारतमें विकसित हो रही है और उसका बहुत विस्तार हो गया है। इसका मुख्य कारण विद्यासागर ही है।

परन्तु उन्होने देखा कि पुस्तकें लिखना ही काफी नहीं है। इसलिए उन्होंने स्कूल खोले। कलकत्तेका मैट्रोपॉलिटन कॉलेज विद्यासागरका ही स्थापित किया हुआ है और उसको भारतीय ही चलाते है।

जिस प्रकार ऊँची शिक्षा जरूरी है, उसी प्रकार प्रारम्भिक शिक्षा भी। इसी कारण उन्होंने गरीबोंके लिए प्रारम्भिक शालाएँ स्थापित कीं। यह काम बहुत बड़ा था। उनको इसमें सरकारकी सहायताकी जरूरत थी। लेफ्टिनेंट गवर्नरने कहा कि इसका खर्च सरकार देगी। वाइसराय लॉर्ड ऐलनबरो[1] इसके विरुद्ध थे। इस कारण विद्यासागरने जो खर्चका चिट्ठा पेश किया वह मंजूर नही किया गया। लेफ्टिनेंट गवर्नर बहुत दुःखित हुए और उन्होंने ईश्वरचन्द्रको सूचित किया कि वे उनपर दावा कर दें। वीर ईश्वरचन्द्रने जवाब दिया: "साहब! मै अपने लिए इन्साफ हासिल करनेके उद्देश्यसे कभी अदालत नही गया। तब मैं आपके ऊपर दावा करूँ, यह कैसे हो सकता है।" उस समय दूसरे अंग्रेज ईश्वरचन्द्रकी मदद किया करते थे और उन्होंने उनको रुपये-पैसेकी अच्छी सहायता दी। वे खुद बहुत मालदार नही थे, इसलिए दूसरोंका दुःख दूर करनेकी खातिर वे बहुत बार खुद कर्जदार हो जाते थे। फिर भी उन्होने अपने लिए सार्वजनिक चन्दा करनेकी बात स्वीकार नहीं की।

उनको ऊँची शिक्षा और प्रारम्भिक शिक्षाकी मजबूत नींव रखकर सन्तोष नहीं हुआ। उन्होंने देखा कि स्त्री-शिक्षाके अभावमें लड़कोंको शिक्षा देना ही काफी नहीं है। उन्होने मनुस्मृतिमें से ढूँढ़कर एक श्लोक निकाला जिसका आशय था कि स्त्रियोंको शिक्षा देना कर्त्तव्य है। उसका उपयोग करके उन्होंने उनके लिए पुस्तकें लिखीं और बेथ्युन साहबके सहयोगसे स्त्रियोंकी शिक्षाके लिए बेथ्युन कॉलेजकी स्थापना की। परन्तु कॉलेजकी स्थापनाकी अपेक्षा उसमें स्त्रियोंको लाना ज्यादा कठिन था। वे स्वयं साधु-जीवन व्यतीत करते थे और महान् विद्वान थे। इस कारण सभी लोग उनका बहुत सम्मान करते थे। इसलिए उन्होंने प्रतिष्ठित लोगोंसे भेंट की और उनको अपनी लड़कियाँ कॉलेजमें भेजनेके लिए समझाया। इससे बड़े लोगोंकी लड़कियाँ पढ़नेके लिए आने लगी। आज इस कॉलेजमें बहुत-सी ऐसी प्रतिष्ठित, बुद्धिमती और सुशील स्त्रियाँ है, जो इसकी व्यवस्था भी चला सकती है।

१. १८४२-४४ में भारतके गवर्नर-जनरल।

किन्तु इतनेसे उनको सन्तोष नहीं हुआ। इसलिए उन्होंने उसके अन्तर्गत छोटी लड़कियोंकी प्रारम्भिक शिक्षाके लिए शालाएँ खोली। उनमें लड़कियोंको कपड़े-लत्ते, खाने-पीनेकी चीजें और पुस्तकें तक दी। फलस्वरूप आज कलकत्तामें हजारों विदुषी स्त्रियाँ दिखाई देती हैं।

शिक्षकोंकी भी कमी थी। उसकी पूर्तिके लिए उन्होंने स्वयं शिक्षक-प्रशिक्षण विद्यालय शुरू किये।

उन्होंने हिन्दू विधवाओंकी दयनीय स्थिति देखकर विधवा-विवाहका उपदेश शुरू किया। उसके लिए पुस्तकें लिखी और भाषण दिये। बंगाली ब्राह्मणोंने उनका विरोध किया; किन्तु उन्होंने उनकी परवाह नहीं की। लोग उनको मारनेके लिए खड़े हो गये; किन्तु उन्होंने अपने प्राणोंका भय नही किया। उन्होने सरकारसे विधवा-विवाहकी वैधताका कानून बनवाया। उन्होंने बहुत लोगोंको समझाया और प्रतिष्ठित लोगोंकी बाल-विधवा पुत्रियोंके विवाह कराये। अपने पुत्रको भी एक गरीब विधवा लड़कीसे विवाह करनेकी प्रेरणा दी।

कुलीन ब्राह्मण अनेक स्त्रियोसे विवाह कर लेते थे। उनको २०–२० स्त्रियोंसे विवाह करनेमें भी शर्म न आती। ऐसी स्त्रियोंके दु:खको देखकर ईश्वरचन्द्र रोया करते। उन्होंने इस कुप्रथाको बन्द करानेके लिए जीवन-भर उद्योग किया।

बर्दवानमें मलेरिया रोगसे हजारों गरीब पीड़ित होते देखे। उन्होंने अपने खर्चसे एक डॉक्टर रखा। वे उन लोगोंको खुद जाकर दवाएँ बाँटते और गरीबोंको घरोंमें जा-जा कर मदद पहुँचाते। उन्होंने इस तरह दो वर्ष तक सतत मेहनत की और सरकारकी मदद लेकर दूसरे डॉक्टर बुलाये।

यह सेवा-कार्य करते हुए उन्होंने औषधि-ज्ञानकी आवश्यकता अनुभव की। इसलिए होमियोपैथीका अभ्यास किया और उसमें कुशलता प्राप्त की। उसके बाद वे खुद ही दवा दे देते थे। गरीबोंकी मदद करनेके लिए लम्बे रास्ते तय करने पड़ते तो उन्हें कोई परवाह न होती थी।

वे बड़े-बड़े राजाओंके संकट दूर करनेमें भी उतने ही समर्थ थे। किसी राजाके साथ अन्याय होता अथवा उसपर गरीबी आ जाती तो वे अपने प्रभाव, ज्ञान और धनसे उसका संकट दूर करते थे।

इस प्रकारका जीवन व्यतीत करते हुए विद्यासागर सत्तर वर्षकी आयुमें सन् १८९० में चल बसे। दुनियामें इस प्रकारके लोग कम ही हुए है। कहा जाता है कि यदि ईश्वरचन्द्र किसी यूरोपीय राष्ट्रमें उत्पन्न हुए होते तो इंग्लैंडके लोगोंने नेल्सनका जैसा महान स्मारक खड़ा किया है वैसा ही स्मारक ईश्वरचन्द्रकी मृत्युके पश्चात् खड़ा किया जाता। किन्तु ईश्वरचन्द्रका स्मारक आज बंगालके छोटे और बड़े, गरीब और अमीर सभी लोगोंके हृदयोंमें स्थापित हैं।

अब हम समझ सकते है कि बंगाल किस प्रकार भारतके अन्य भागोंको अपने उदाहरणसे शिक्षा दे सकता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६–९–१९०५

८८. पत्र : लेफ्टिनेंट गवर्नरके निजी सचिवको

ब्रिटिश भारतीय संघ

बॉक्स नं० ६५२२
जोहानिसबर्ग
सितम्बर १८, १९०५

सेवामें
निजी सचिव
परमश्रेष्ठ लेफ्टिनेंट गवर्नर
प्रिटोरिया

महोदय,

मुझे आपके इसी १३ तारीखके पत्र, क्रमांक एलजी० ९७/३, की पहुँच स्वीकार करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। उसमें आपने मुख्य अनुमतिपत्र सचिवको[1] लिखे गये मेरे पहली सितम्बरके पत्रके बारेमें कुछ पूछताछ की है।

बीच-बीचमें कुछ दिनोंको छोड़कर इस पत्रका लेखक १८८३ से उपनिवेशमें रहा है और यहाँके भारतीय समाजसे उसका घनिष्ठ सम्पर्क रहा है। उसका प्रतिनिधित्व करनेका सौभाग्य प्राप्त करते हुए उसे अब बारह वर्षसे भी अधिक हो गये हैं। इसलिए, युद्धके पहले ट्रान्सवालमें १५,००० से अधिक ब्रिटिश भारतीय वयस्क पुरुष थे, इस वक्तव्यके समर्थनमें पहले सबूतके रूपमें लेखकका अपना अनुभव सेवामें प्रस्तुत है।

आगे मेरा संघ निम्नलिखित बातें इस वक्तव्यके समर्थनमें पेश करता है:

१. सन् १८९९ में तत्कालीन ब्रिटिश एजेंटने महामहिमकी सरकारको एक प्रतिवेदन पेश किया था जिसमें ब्रिटिश जनसंख्याके बारेमें मोटे आँकड़े दिये गये थे। ये आँकड़े समाचारपत्रोंमें प्रकाशित हुए थे। जहाँतक लेखकको याद है, उसमें ब्रिटिश भारतीयोंकी सख्या १५,००० दी गई थी।

२. सन् १८९५ में ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंने महामहिमके उपनिवेश-मन्त्रीकी सेवामें एक प्रार्थनापत्र प्रस्तुत किया था। वह दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंकी शिकायतोंसे सम्बन्धित सरकारी रिपोर्टमें प्रकाशित हुआ है। उस समय ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीयोंकी आबादीका जो मोटा अन्दाज दिया गया था उसके मुताबिक तब कमसे-कम ५,००० भारतीय वयस्क पुरुष थे। किन्तु सन् १८९५ और १८९९ के बीचमें जो दक्षिण आफ्रिकामें रहे हैं वे जानते हैं कि ट्रान्सवालमें भारतीयोंकी संख्यामें सर्वाधिक वृद्धि इसी अवधिमें हुई। यह वृद्धि इतनी भयजनक मानी गई कि आजके कुछ भारतीय-विरोधी आन्दोलनकारियोंने भूतपूर्व राष्ट्रपति क्रूगरसे कार्रवाई करनेकी प्रार्थना की; किन्तु जहाँतक भारतीय प्रवासका सम्बन्ध है, सौभाग्यसे भूतपूर्व

१. देखिए, "पत्र: मुख्य अनुमतिपत्र सचिवको", पृष्ठ ५७।

राष्ट्रपतिने उनके सुझावोंपर कान नहीं दिया। सन् १८९६ में भारतमें प्लेग फैला और उसके बाद लगातार दो असाधारण अकाल पड़े। उस समय भारतसे इतना बड़ा प्रव्रजन हुआ जितना लोगोंकी जानकारीमें पहले कभी न हुआ था। बम्बई और दक्षिण आफ्रिकाके बन्दरगाहोंके बीच 'कूरलैंड', 'नादरी', 'हुसैनी', और 'क्रीसेंट' नामके जहाज विशेष रूपसे चलाये गये और इनपर एक-एक बारमें चार-चार सौसे भी ज्यादा दक्षिण आफ्रिका जानेवाले भारतीय सवार हुए। तब सभीको मालूम था कि इन लोगोंमें से ज्यादातर ट्रान्सवालमें दाखिल हुए।

३. सन् १८९७ के शुरूमें नेटाल प्रवासी-अधिनियम पास हुआ। सन् १८९६ के दिसम्बर महीनेमें 'नादरी' और 'कूरलैंड' से सम्बन्धित डर्बन-प्रदर्शन[1] हुआ। ये जहाज कुल मिलाकर ८०० से अधिक यात्री लेकर आये थे जिनमें से ५०० यात्री उसी महीनेमें ट्रान्सवाल चले गये। इनमें से एक-एक जहाजने हर साल चार-चार खेवे किये। एक-एक खेवेमें इनपर, अधिवासी भारतीयोंके अतिरिक्त, तीन-तीन सौ यात्री भी आये हों तो सिर्फ चार जहाजोंसे भारतीयोंकी संख्यामें ४,८०० की वार्षिक अभिवृद्धि हुई होगी। किंग्सलाइन और ब्रिटिश इंडियन स्टीम नेवीगेशन कम्पनीके जहाज भारतके दूसरे हिस्सोंसे जिन लोगोंको लाये, सो अलग। इन जहाजोंमें से हर एकपर आनेवाले यात्रियोंकी तादादकी सचाई जहाजी कम्पनियों या नेटालके बन्दरगाह-अधिकारियोंसे पूछ कर जाँची जा सकती है।

लेखकके इस मतका अनुमोदन उन दूसरे ब्रिटिश भारतीयोंके मतसे भी होता है जो कि ट्रान्सवालके पुराने निवासी हैं।

४. हम जिसे भारतीय-विरोधी दल कह सकते हैं, उसके सार्वजनिक वक्तव्योंको यदि विरोधी मतके रूपमें पेश किया जाये तो उनमें जो-कुछ कहा गया है, उसपर संयम रखकर बात करना बहुत कठिन है। उस दलके लोगोंने जितने दोषारोपण किये हैं उनमें से हर एककी सचाईको बार-बार चुनौती दी गई है और वे गलत साबित भी किये जा चुके हैं। और इसके बाद भी वे उन्हें दुहराते रहने और ब्रिटिश भारतीयोंके खिलाफ लोगोंको भड़काते रहनेसे नहीं झिझके हैं। हम इसके केवल तीन उदाहरण लें। उन्होंने युद्धसे पहले और युद्धके बाद पीटर्सबर्गमें व्यापार करनेवालोंकी संख्याके कुछ आँकड़े दिये थे। इन दोनों आँकड़ोंको चुनौती दी गई है। युद्धसे पहले व्यापार करनेवालोंके नाम पेश कर दिये गये हैं; फिर भी पहला ही वक्तव्य दुहराया गया है। उन्होंने कहा है कि भारतीय युद्धसे पहले ट्रान्सवालमें आये हों और उन्हें अपने नाम दर्ज न कराने पड़े हों, यह असम्भव है। मेरे संघको यह कहनेमें कोई हिचक नहीं है कि इस कथनमें सचाई नहीं है। इस देशमें जो लोग दाखिल हुए, उनमें से सचमुच मुश्किलसे एक तिहाई लोग दर्ज किये गये। ये केवल वे लोग थे जिन्हें व्यापारके लिए परवाने लेने पड़े थे। फिर इनमें इनके साझेदार अवश्य ही शामिल नहीं थे। मेरा संघ इस बातके असंदिग्ध प्रमाण दे सकता है कि युद्धसे पहले ट्रान्सवालमें ऐसे ब्रिटिश भारतीय थे जिन्होंने कभी पंजीयन शुल्क नहीं दिया। उनमें कई जाने-माने लोग हैं जिनकी शिनाख्त गण्यमान्य यूरोपीय व्यापारियोंसे करायी जा सकती है।

१. देखिए, खण्ड २, पृष्ठ १६६।

उनका तीसरा वक्तव्य भारतीयोंके बड़ी संख्यामें नेटालसे पॉचेफस्ट्रूम आनेके बारेमें है। जिन्होंने यह वक्तव्य दिया है वे कुछ भी नहीं जानते कि नेटालमें गिरमिटिया मजदूरोंसे सम्बन्धित कानून किस तरह लागू किया जाता है, और फिर भी इस आशयका वक्तव्य दिया गया है कि पॉचेफस्ट्रूममे जो लोग बड़ी संख्यामें आये हैं वे इसी वर्गके है। जहाँतक मेरे संघको मालूम है, भारतीय-विरोधियोने जो बहुत-से वक्तव्य दिये है, उन्हे सिद्ध करने योग्य कोई प्रमाण देनेमें वे अभीतक सफल नहीं हुए। और सबसे बड़ी बात, जिसपर उन्होंने कभी ध्यान ही नहीं दिया, यह है कि युद्धसे पहले जोहानिसबर्गमें ही सबसे ज्यादा भारतीय रहते थे, और जोहानिसबर्गसे ही वे उपनिवेशके दूसरे हिस्सोंमें फैले है। जहाँतक भारतीयोंका सम्बन्ध है, युद्धसे पहले जोहानिसबर्गका व्यापार, चूँकि डच और वतनियोंके हाथमें था, बहुत ही अच्छा था। लेकिन आज डच और वतनी दोनोंका व्यापार बहुत बुरी हालतमें है। इसका नतीजा यह हुआ है कि जिन व्यापारियोंके लिए ट्रान्सवालमें अपनी जीविका चलाना असम्भव हो गया था वे अब ट्रान्सवालके दूसरे हिस्सोंमें जा बसे है। जोहानिसबर्गकी बस्ती बहुत-से भारतीय जमींदारोंका अवलम्ब थी। ये लोग न केवल निर्धन बना दिये गये है बल्कि इन्हें जोहानिसबर्ग छोड़कर उपनिवेशके दूसरे हिस्सोमें जानेपर मजबूर किया गया है। यदि जोहानिसबर्गकी हालत पहले जैसी हो जाये, और ब्रिटिश भारतीयोंको युद्धके पहले जमीनकी मिल्कियतके बारेमें जो संरक्षण प्राप्त था उसका फिरसे आश्वासन मिल जाये, तो जो भारतीय आबादी उपनिवेशमें इधर-उधर फैल गई है, वह सब जोहानिसबर्गमें आ जायेगी और भारतीय-विरोधी लोगोंको यह जानकर सन्तोष होगा कि बहुत-से नगर भारतीय-विहीन हो गये हैं।

इस बयानमें जो-कुछ भी कहा गया है उसके एक-एक शब्दको प्रमाणित करनेके लिए जाँच की जाये तो मेरे संघको सबूत देनेमें खुशी होगी। चूँकि मुख्य अनुमतिपत्र सचिवने मेरा १ सितम्बरका पत्र परमश्रेष्ठके पास निर्देशके हेतु भेजा है, इसलिए क्या मै यह आशा कर सकता हूँ कि यूरोपीयों द्वारा उल्लिखित जिन नियमोंको मेरे संघने असाध्य माना है, उन्हें अविलम्ब वापस ले लिया जायेगा? ब्रिटिश भारतीयोके सम्बन्धमें तरह-तरहके निराधार वक्तव्य पेश किये जानेसे निर्दोष और ईमानदार आदमियोंको बिना अपराध, असुविधा और हानि उठानी पड़ती है। वे जब पराये झंडेके नीचे थे तब भी उन्हें ऐसी कठिनाइयाँ नहीं झेलनी पड़ी थीं।

आपका, आदि,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काइव्ज : एल० जी० ९२/२१३२, पत्र संख्या ५०४

८९. हुंडामलके मामलेकी फिर चर्चा[1]

सर्वोच्च न्यायालयको नेटालके विक्रेता-परवाना अधिनियमके अन्तर्गत उठाये गये एक मुद्देपर फैसला देनेका एक दूसरा अवसर मिला था। इस बार डर्बन नगर-परिषदके उस फैसलेपर पुनर्विचार किया गया था जो कुछ समय पूर्व इन स्तम्भोंमें प्रकाशित किया जा चुका है। परवाना-अधिकारीने हुंडामलके परवानेका ग्रे स्ट्रीटसे वेस्ट स्ट्रीट स्थानान्तरण दर्ज करनेसे इनकार कर दिया था और परिषदने उसके इस निर्णयको पुष्ट किया था। विद्वान मुख्य न्यायाधीशने जो फैसला दिया है वह अत्यन्त निराशाजनक है। वह कानूनके अनुसार हो सकता है, परन्तु न्याय या औचित्यसे निःसन्देह मेल नहीं खाता। इसका प्रत्यक्ष उत्तर यह है कि न्यायाधीशोंका काम कानूनकी व्याख्या करना है, कानून बनाना नहीं। परन्तु हम आदरपूर्वक यह विचार व्यक्त करते हैं कि [यदि कानूनसे एक सर्वसम्मत बुराईका इलाज नहीं होता है तो कानूनकी यह स्थिति अवश्य ही गम्भीर है।] परवाना-अधिकारीको उपनिवेशमें व्यापारके परवाने देनेके सम्बन्धमें व्यापक अधिकार प्राप्त हैं। विद्वान मुख्य न्यायाधीशने कहा है कि कानूनके अनुसार उसे अदालती मामलोंमें अपनी इच्छाका उपयोग न करना चाहिए। अतएव, इसका आशय यह हुआ कि परवाना-अधिकारी अपने व्यक्तिगत शत्रुसे बदला लेनेके लिए किसीको परवाना देनेसे इनकार कर दे और अदालतें उसमें हस्तक्षेप करनेमें असमर्थ होंगी। जहाँतक ऐसे मुकदमोंका ताल्लुक है, राजनीतिक वैमनस्य और व्यक्तिगत शत्रुतामें बहुत ही कम अन्तर रह जाता है। विक्रेता-परवाना अधिनियम एक प्रशासनिक कानून है। अब वह किसी भी अर्थमें राजनीतिक कानून नहीं है। परवाना-अधिकारीने श्री हुंडामलको इसलिए परवाना नहीं दिया है कि वह, निःसन्देह, जिस जातिके हुंडामल हैं उससे राजनीतिक वैमनस्य रखता है। वस्तुतः उसने अपने कारणमें यह कहा भी है। वह कारण यह है कि वेस्ट स्ट्रीटमें एशियाइयोंको और अधिक परवाने देना हितकर नहीं है। किन्तु शरारत तो हो गई है। देशका सर्वोच्च न्यायालय इस बुराईको सुधारनेमें अपनेको असमर्थ पाता है। प्रत्येक भारतीय परवाना दाँव-पर चढ़ा है। यदि किसी प्रकारकी राहत प्राप्त करनी है तो ब्रिटिश भारतीय व्यापारियोंको अवश्यमेव कमर कस लेनी चाहिए, अवसरके अनुकूल काम करना चाहिए तथा जबतक यह लज्जाजनक कानून कानूनकी किताबसे हटा न दिया जाये तबतक लड़ाई बराबर जारी रखनी चाहिए। सरकार, स्थानिक संसद तथा उपनिवेश-सचिवके नाम प्रार्थनापत्र भेजे जाने चाहिए और उनका ध्यान इस मामलेकी ओर आकृष्ट करना चाहिए। यदि स्थानिक संसद, जिसके सदस्यगण, सर जॉन रॉबिन्सनके शब्दोंमें, प्रतिनिधित्वहीन ब्रिटिश भारतीयोंके न्यासी हैं, न सुनें तो भारत कार्यालय को, जो करोड़ों भारतीयोंके लिए सर्वोपरि न्यासी है, दखल देना चाहिए और नेटाल सरकारको इस बातके लिए राजी करना चाहिए कि वह भारतीयोंके साथ यह छोटा-सा न्याय करे जिसके वे अधिकारी हैं। स्वर्गीय सर हैरी एस्कम्बने इस विधेयकको पेश करते वक्त यह कहा था कि इस कानूनकी सफलता उसके अन्तर्गत प्रदत्त अधिकारोंके प्रयोगमें बरती गई नरमीके ऊपर निर्भर होगी। यदि स्थानीय अधिकारी नरमीके साथ अपने अधिकारोंका प्रयोग न करें तो सम्भवतः वे उनसे वापस ले लेने पड़ेंगे। यह कानून

१. देखिए, "हुंडामलका परवाना", खण्ड ४, पृष्ठ ३०० और ३२५।

आठ वर्षसे भी अधिक समयसे अमलमें आ रहा है और इस बातसे कोई भी इनकार नही कर सकता कि बहुत-से अवसरोपर इसका प्रयोग विवेकहीनताके साथ हुआ है और वह हमेशा ही उपनिवेशके भारतीय व्यापारियोके सिरपर नगी तलवारकी तरह लटकता रहा है। इस तलवारको हटा लेने और मुसीबतजदा लोगोंको यह अनुभव करनेका अवकाश देनेका समय आ गया है कि वे ब्रिटिश सांविधानिक शासनके अधीन हैं, रूसी निरंकुशताके अधीन नही।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-९-१९०५

९०. श्री गॉश और भारतीय

जोहानिसबर्गके महापौर श्री जॉर्ज गॉश एक सभामे भाषण देते हुए, यों कहें कि, बहक गये। सभा हाल ही मे ट्रान्सवाल प्रगतिशील संघके तत्वावधानमें पॉचिफस्ट्रूममे हुई थी। वे जब बोले तो स्वतन्त्र विचारोंके धनी केवल गॉशके रूपमे नही, बल्कि प्रगतिशील सघके प्रतिनिधिके रूपमें और ऐसे व्यक्तिके रूपमे जो सरकारी पक्षके विचार व्यक्त करनेके लिए बाध्य हो, फिर चाहे वे उनके अपने मतसे मेल खाते हो या नहीं। जिन थोड़े-से लोगोंने जोहानिसबर्ग नगरपालिकाकी कार्रवाईपर सन् १९०३ में ब्रिटिश भारतीयोके पक्षमें अपनी आवाज उठाई थी उनमें से एक श्री गॉश भी थे। तब उनका खयाल था कि एशियाइयोकी स्पर्धा बिलकुल स्वस्थ है। वे ब्रिटिश भारतीयोंको वांछनीय नागरिक मानते थे, क्योंकि वे उद्योगी, मितव्ययी और कानून-पालक थे। जोहानिसबर्गके महापौर उन झूठी बातोको दुहरानेमें भी नही झिझकते जो श्री लवडे और उनके मित्रोंने फैलाई थीं। ब्रिटिश भारतीयोंकी बदनामी करनेमें उनको हिचक नही मालूम होती। उनको भारतीयोमें गोरी जातिके लिए खतरा दिखाई देता है। परन्तु कुछ समय पहले उनका विचार यह था कि जिस समाजमें वे रखे जायेंगे उसको शक्ति ही प्रदान करेगे। उनकी दृष्टिसे, आज एशियाई लोग

> सामाजिक स्थितिमें गोरोंसे पूरी तरह भिन्न हैं। उनको गोरे व्यापारियोंसे स्पर्धा करने देना उचित नहीं है, क्योंकि वे एक-दूसरेसे होड़ नहीं कर सकते। एशियाई लोगोंमें देशकी नागरिकताका भार उठानेका भाव बहुत कम है। वे तो सभी जरूरी जिम्मेदारियों और कर्त्तव्योंसे बचते हैं और अन्तमें उनका बोझ गोरोंको उठाना पड़ता है।

और, फलत:, श्री गॉश गर्वसे कहते है:

> यह न्यायोचित नहीं है कि गोरे व्यापारियोंको एशियाई व्यापारियोंके सामने खड़ा कर दिया जाये और फिर उन्हें इस खींच-तानकी भावनाके आधारपर मिट जाने दिया जाये कि चूंकि एशियाई लोग साम्राज्यके किसी दूसरे भागमें रहनेवाले ब्रिटिश प्रजाजन हैं, इसलिए उन्हें हमारी सहानुभूति प्राप्त करनेका अधिकार है। (श्री गॉश स्वयं १९०३ में इस भावनाके शिकार हो गये थे।)

श्री गॉशने हमें यह नहीं बताया है कि नागरिकताके भारका अर्थ क्या है? क्या इसका अर्थ सार्वजनिक भोज देना और शेम्पेनकी बोतलें खोलना है? हम यह स्वीकार करते है कि यदि यह बात हो तब तो गरीब एशियाईमे ऐसा भार उठानेकी भावना बहुत कम है। किन्तु

यदि इसका अर्थ देशके कानूनोंका पालन करने, अपना कर चुकाने, जनतापर बोझ बननेके बजाय अपने गाढ़े पसीनेकी कमाईसे अपनी रोटी कमाने, समाजके नैतिक कानूनोंके अनुसार आचरण करने और अपने अधिवासके देशकी रक्षामें सहायता — चाहे वह कैसी और कितनी भी छोटी क्यों न हो — देनेकी तैयारी है, तब तो हमें यह कहनेमें कोई झिझक नहीं है कि भारतीयोंने अपना नागरिकताका भार भलीभाँति उठाया है। परन्तु हम समझते हैं कि जो लोग जानबूझकर भ्रम फैलाना चाहते हैं उनसे तर्क बेकार है। हम भारतीयोंके सम्बन्धमें अबतक जो-कुछ कहते आये हैं उसे श्री गॉश भलीभाँति जानते हैं। किन्तु उन्हें उस समय अपना मोर्चा बदलना अधिक अनुकूल पड़ता था और उनमें मत प्राप्त करनेके लिए उत्सुकता भी थी। श्री गॉशका उदाहरण बताता है कि वर्तमान अवस्थाओंमें सार्वजनिक जीवन कितनी नाजुक हालतमें पहुँच गया है। कुछ भी हो, प्रभावशाली व्यक्तियोंको सन्तुष्ट करना ही होगा। इनको सन्तुष्ट करनेके लिए पवित्रसे पवित्र वस्तुका बलिदान किया जा सकता है। यदि लोक-शासनका परिणाम यही है तब तो वह दिन दूर नहीं जब उससे तेज दुर्गन्ध उठने लगेगी और वह मक्कारी तथा बेईमानीका प्रतीक और घृणित बन जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-९-१९०५

९१. ऑरेंज रिवर उपनिवेशके भारतीय

हम अन्यत्र वह पत्र-व्यवहार[1] प्रकाशित करते हैं जो ऑरेंज रिवर उपनिवेशके ब्रिटिश भारतीयोंके सम्बन्धमें लॉर्ड सेल्बोर्न और जोहानिसबर्गके ब्रिटिश भारतीय संघके बीचमें हुआ था। लॉर्ड सेल्बोर्नका उत्तर अत्यन्त शिष्ट है, परन्तु है उतना ही निराशाजनक। गवर्नर प्रत्यक्षतः ब्रिटिश भारतीयोंको सान्त्वना देना चाहते हैं। फिर भी वे निश्चय ही उन स्थानीय अधिकारियोंकी रिपोर्टोंसे पथ-भ्रान्त हो गये हैं जो असली प्रश्नको बड़ी चतुराईसे घपलेमें डालनेमें सफल हो गये हैं। ब्रिटिश भारतीय संघने भारतीयोंको तमाम किस्मोंके रंगदार लोगोंके साथ, जिनमें दक्षिण आफ्रिकाके वतनी लोग भी शामिल हैं, वर्गीकृत करनेका स्वभावतः ही विरोध किया था। उसने जो कानून इस उपनिवेशके वतनी लोगोंके लिए बनाये गये हैं उनको उप-निवेशमें आनेवाले भारतीयोंपर लागू करनेपर नाराजगी जाहिर की थी। इस कानूनका प्रभाव अमली तौरपर बहुत थोड़े भारतीयोंपर पड़ता है अतः अन्याय और भी अधिक गम्भीर हो जाता है; क्योंकि परिस्थितियोंको देखते हुए उनपर यह कानून लागू करनेकी आवश्यकता ही नहीं है। नौकरोंके पंजीकरणकी आवश्यकताका विरोध हमने कभी नहीं किया। जो कानून समय-समयपर इन स्तम्भोंमें उद्धृत किये जाते रहे हैं उनके सम्बन्धमें हम दिखा चुके हैं कि उनसे वैयक्तिक स्वतन्त्रतापर प्रतिबन्ध लगता है और प्रभावित लोगोंका अपमान होता है। ब्रिटिश भारतीय संघने ऐसे ही कानूनोंके विरुद्ध शिकायत की है; और वह ठीक है। इसके बदलेमें उसे मिला क्या है? नौकरोंके पंजीकरणका औचित्य सिद्ध करनेके लिए श्रीलंकाका एक उदाहरण है जिसका विरोध कभी किया ही नहीं गया। संघने अपने अन्तिम उत्तरमें[2] लॉर्ड

१ और २. देखिए "पत्र : गवर्नरके निजी सचिव को", पृष्ठ ५६।

सेल्बोर्नका ध्यान इस बातकी ओर उचित ही खीचा है कि उन्हे अवश्य ही निकट भविष्यमें ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें प्रवेशका अधिकार प्राप्त होनेकी आशा है; और यदि उनकी यह आशा न्यायपूर्ण हो तो जो प्रतिबन्धक कानून भविष्यमे बनाया जायेगा उसपर आपत्ति की जा सकती है। यह मामला ऐसा है कि इसपर तुरन्त कार्रवाई करनेकी आवश्यकता है; और हमें आशा है कि लॉर्ड सेल्बोर्न कृपापूर्वक उन ब्रिटिश भारतीयोके प्रति, जो ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें बस गये है या जिन्हे निकट भविष्यमे वहाँ जाना पड़ सकता है, न्याय करानेकी व्यवस्था करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-९-१९०५

९२. उपनिवेशमें उत्पन्न प्रथम भारतीय बैरिस्टर[1]

हम श्री बर्नार्ड गैब्रियलका, जो हाल ही में इंग्लैंडसे पूर्ण बैरिस्टर बनकर लौटे है, हार्दिक स्वागत करते है। साधारण परिस्थितियोमें किसी नवयुवकके बैरिस्टर बन जानेपर खास तौरसे उल्लेख करनेका कोई कारण न होता, परन्तु जिस घटनामें इस समय हमारी दिलचस्पी है वह बहुत अर्थपूर्ण है। श्री गैब्रियलके माता-पिता उन भारतीयोमें से है जो इस उपनिवेशमें पहले-पहल आकर बसे थे और जो गिरमिटिया वर्गके थे। उन्होने और उनके बड़े पुत्रोने अपने सर्वस्वकी आहुति देकर अपने सबसे छोटे पुत्रको उच्च कोटिकी शिक्षा दिलाई है। यह उनके लिए बड़ेसे-बड़े श्रेयकी बात है। इससे उनकी सार्वजनिक भावना और पैतृक वत्सलता प्रकट होती है। उन्होने उन गरीब भारतीयोको, जिन्हे अपनी जीविकाके लिए गिरमिटिया बनकर काम करना पड़ा है, सब विचारवान लोगोकी दृष्टिमें ऊँचा उठाया है। श्री बर्नार्ड गैब्रियलने यह भी दिखा दिया है कि इन परिस्थितियोमें भी गरीब भारतीयोंके बालक ऊँची योग्यता प्राप्त करनेमें समर्थ है; और हमारा तो खयाल है कि इस घटनापर उपनिवेशियोको भी गर्व करना चाहिए। इसका एक दूसरा पहलू भी है। जहाँ एक भारतीयके नाते श्री बर्नार्ड गैब्रियलको कानूनकी शिक्षा पाकर बैरिस्टर बन जानेपर अपने आपको बधाई देनेका पूरा अधिकार है, वहाँ उन्हें मानना चाहिए कि यह उनके उपजीवनका आरम्भ-मात्र है। उन्हे चाहिए कि वे अपने आपको जीवनके उसी क्षेत्रके अपने साथी भारतीय युवकोंका न्यासी समझें। यदि उन्होने अच्छा उदाहरण उपस्थित किया तो अन्य माता-पिताओको भी अपने बालकोंको शिक्षा पूरी करनेके लिए इंग्लैंड भेजनेकी प्रेरणा मिलेगी। उन्होने एक सम्मानित पेशा अपनाया है, परन्तु यदि उन्होने इसे रुपया जोड़नेका साधन बनाया तो, सम्भव है, उनके हाथ असफलता ही लगे। यदि उन्होने अपनी योग्यताका उपयोग समाजकी सेवाके लिए किया तो वह अधिकाधिक बढ़ती चली जायेगी। अतः हमे आशा है कि श्री गैब्रियल अपने पेशेकी

१. इसी आशयका एक मानपत्र बर्नार्ड गैब्रियलको १९ सितम्बरको कांग्रेस भवनमें डर्बनके भारतीयोंकी एक सभामें दिया गया था। (*इंडियन ओपिनियन* २३-९-१९०५)। प्रतीत होता है कि गांधीजी उस सभामें सम्मिलित नहीं थे और हस्ताक्षरकर्ताओंमें भी उनका नाम नहीं था। फिर भी असम्भव नहीं कि मानपत्रका मसविदा बनानेमें उनका हाथ रहा हो। उसमें एक वाक्य यह है: "हमें इसमें कोई सन्देह नहीं कि आप दक्षिण आफ्रिकामें बड़े उत्साहसे अपने देशवासियोंके हितोंका समर्थन करेंगे और उनकी उन्नतिमें योग देंगे तथा आप अपने प्रभावका उपयोग उनकी सुख-सुविधाके निमित्त करेंगे।"

परम्पराओंकी सच्ची जानकारी अपने साथ लेकर आये हैं और वे जो-कुछ भी करेंगे वह विवेकपूर्ण, शान्त, विनम्र और देशभक्तिपूर्ण होगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३–९–१९०५

९३. ट्रान्सवालमें अनुमतिपत्र सम्बन्धी विनियम

ब्रिटिश भारतीय संघका कड़ा विरोधपत्र

अभी हालमें अनुमतिपत्र कार्यालयकी तरफसे कानून प्रकाशित हुआ है कि जिन लोगोंको अनुमतिपत्र चाहिए वे दो यूरोपीय गवाहोंके नाम पेश करें। उन्हें तभी अनुमतिपत्र मिल सकेगा। यह कानून अत्याचारपूर्ण है। इसके विरोधमें ब्रिटिश भारतीय संघने बहुत कड़ा पत्र लिखा है। उसमें कहा गया है कि यूरोपीय भारतीयोंको उनके नामसे पहचान सकते हों, ऐसे बहुत ही कम उदाहरण हैं। ऐसा नियम बनानेका अर्थ यह माना जायेगा कि सरकार अब किसी भी भारतीयको ट्रान्सवालमें आने देना नहीं चाहती। फिर इस नियमसे झूठको प्रोत्साहन मिलेगा। क्योंकि बहुत-से झूठे गोरे निकल आयेंगे और वे कुछ रकम लेकर शपथ लेनेमें जरा भी संकोच न करेंगे। अबतक ट्रान्सवालमें केवल १२,००० भारतीय दाखिल हुए हैं। युद्धसे पहले करीब १५,००० थे। अतः यह माननेका कारण है कि अब भी ३,००० पुराने भारतीयोंका लौटना बाकी है। वे सब बहुत कष्ट उठा रहे हैं और उनको अविलम्ब प्रवेशकी अनुमति देना सरकारका कर्त्तव्य है। अनुमतिपत्र-सचिवने यह पत्र परमश्रेष्ठ लेफ्टिनेंट गवर्नरको भेजा है। वे यह जानना चाहते हैं कि युद्धसे पहले १५,००० भारतीय थे, यह किस आधारपर कहा गया है। इसका जो उत्तर संघने दिया है उसमें निम्न सबूत पेश किये गये हैं:

(१) अध्यक्ष श्री अब्दुल गनीका निजी अनुभव।

(२) अन्य पुराने भारतीय निवासियोंकी निजी जानकारी।

(३) युद्धसे पहले ब्रिटिश एजेंटकी दी हुई रिपोर्ट, जिसमें भारतीयोंकी आबादी प्रायः १५,००० बताई गई है।

(४) सन् १८९५ में भारतीयोंकी आबादी ५,००० बताई गई थी। सन् १८९५ से १८९९ तक ट्रान्सवालमें १०,००० लोग आये हों तो आश्चर्यकी बात नहीं है। सन् १८९६ में भारतमें प्लेग हुआ। सन् १८९७–९८ में भीषण अकाल पड़े। उस समय भारतसे हजारों लोग बाहर गये। सन् १८९७ में, नेटालमें सख्त कानून बनाये गये। इन सबका यह परिणाम हुआ कि ट्रान्सवालमें बहुत-से भारतीय आये। यद्यपि उस समय विदेशी राज्य था तब भी भारतीयोंको आनेकी पूरी छूट थी। उन्हें रोकनेके सम्बन्धमें स्वर्गीय श्री क्रूगरसे प्रार्थना की गई थी। वह उन्होंने अनसुनी कर दी। उस समय 'नादरी', 'कूरलैंड', 'हुसैनी', 'क्रीसेंट' ये चार जहाज बम्बई तथा दक्षिण आफ्रिकाके बीच आते-जाते थे और प्रत्येक जहाज सैकड़ों भारतीयोंको दक्षिण आफ्रिकामें लाता था। प्रत्येक जहाज वर्षभर में चार फेरे करता था और यदि प्रत्येक जहाजमें तीन सौ भारतीय आये हों तो १६ फेरोंमें एक वर्षमें अवश्य ही ४,८०० भारतीय आये होंगे।

उत्तरमें इस प्रकारके सबूत सरकारको दिये गये हैं और यह भी बताया गया है कि श्री लवडे[1] तथा अन्य लोग जो विवरण देते हैं, वह बिलकुल झूठा है। इसलिए सरकारको उसपर ध्यान नहीं देना चाहिए और जो गरीब भारतीय अब भी बाहर हैं उनको तुरन्त प्रविष्ट होने देना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-९-१९०५

९४. पत्र: छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
सितम्बर २३, १९०५

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। किचिनके सम्बन्धमें तुमने जो लिखा है उससे आश्चर्य होता है। उसके स्वभावसे तुम्हारा कोई सम्बन्ध नहीं। वह तुम्हारे ऊपर तो है नहीं। वह जो-कुछ कहे, उसका तुम जवाब दे सकते हो। लेकिन इतना ही जरूरी है कि तुम गुस्सा न करो। तुम दोनों एक समान हो और परस्पर प्रश्नोत्तर कर सकते हो। वह जो-कुछ भी कहे उसे सहन करनेका अर्थ यह नहीं कि तुम उसे जवाब न दो, बल्कि इतना ही है कि तुम उसका आवेशपूर्वक विरोध न करो। वेस्टका किस्सा जानता हूँ। इसमें मुझसे भूल हुई है। मैंने उसे कहा था कि वह उनके यहाँ चला जाये। किन्तु मैं यह भूल गया कि किचिन साहब किसीका भी साथ बर्दाश्त नहीं कर सकते। उनमें यह अवगुण है। इसका खयाल नहीं करना चाहिए।

मैंने तुम्हें अच्छी तरह समझा दिया है कि किचिन या कोई और भी आदमी जाये तो मुझे उसकी परवाह नहीं। इससे छापाखाना बन्द न होगा। मेरा अन्तिम आधार तो तुम और वेस्ट हो। तुम दोनों जबतक बैठे हो तबतक छापाखाना बन्द नहीं होगा। इतनेपर भी यदि तुम्हारे मनमें शका उत्पन्न होती है तो मैं इसे तुम्हारी कमजोरी मानता हूँ।

छापेखानेमें बिजलीकी रोशनी वगैरापर कितना खर्च हो, यह मुझसे पूछे बिना तय नहीं होगा। फिर भी तुम बैठकमें कह सकते हो कि यह खर्च मुझसे पूछे बिना नहीं किया जायेगा। मैंने इस सम्बन्धमें ज्यादासे-ज्यादा ४० पौंड तक की स्वीकृति देनेको कहा है। मैंने उनके[2] घरमें छापेखानेके खर्चसे दफ्तर बनानेकी अनुमति नहीं दी है। टेलीफोनके लिए मैं इनकार नहीं करता।

मेनरिंगको पैसे दिये जायें।

कालाभाईको[3] तुम्हें कहना चाहिए। उसे कितने रुपये दिये गये थे, यह तो मुझे याद नहीं है। लेकिन उसने, सम्भवत, ५०० रुपये रेवाशंकर भाईसे लिये हैं। तुम कहो तो मैं फिर

१. ट्रान्सवाल विधान परिषदके सदस्य; देखिए "श्री लवडे और ब्रिटिश भारतीय", खण्ड ४, पृष्ठ २२२-२३।

२. किचिन के।

३. गांधीजीके चचेरे भाई परमानन्दके पुत्र गोकुलदास, उर्फ कालाभाई।

कालाभाईको कामके सम्बन्धमें लिखूँ। इस सम्बन्धमें तुम्हें डरना नहीं चाहिए। मैं रेवाशंकर भाईको लिखूँगा।

हेमचन्दको[1] कामसे हटाया न जाये। रामनाथको भी बहुत विचार किये बिना अलग न करना।

मोहनदास

[पुनश्च[

चि० गोकुलदासके सम्बन्धमें तार मिला। पता नहीं चलता, वह अपना अनुमतिपत्र साथ लाया है या कल्याणदासके पास छोड़ आया है।

हमने जिस रुपयेकी प्राप्ति स्वीकार की है, सुलेमान इस्माइल उसका बिल माँगते हैं। वह उन्हें भेज दो।

मूल गुजरातीकी फोटो-नकल (एस०एन० ४२५०) से।

९५. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
सितम्बर २७, १९०५

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला।

हेमचन्दका पत्र आज आया है। उसमें उसने लिखा है कि उसको नौकरीसे निकलनेकी अन्तिम सूचना दे दी गई है। उसपर मैंने तार दिया है कि उसको न निकाला जाये। रामनाथको हटाना भी मुझे अखरता है। लेकिन यदि उसकी व्यवस्था चि० जयशंकरके पास हो सकती हो तो कर देना। मेरा हेमचन्दको दोषके बिना अलग करनेका बिलकुल विचार नहीं है। मैं उसका विशेष उपयोग करना चाहता हूँ। मैं तुमको लिख चुका हूँ कि मैंने इस सम्बन्धमें किचिनको पत्र लिखा है।

मैंने वीरजीको आज पत्र[2] लिखा है। उसमें उसे उलाहना दिया है। वर्ष पूरा होने तक कालाभाईको रुपया चुकानेके लिए लिखा है।

मालूम होता है, हेमचन्दको मेरे पत्र नहीं मिलते। इसके साथ उसके लिए भी एक पत्र संलग्न[3] है। इसे पढ़कर उसको दे देना। ग्रे स्ट्रीटके पतेसे पत्र मिलते हैं या नहीं, लिखना।

हम अखबारमें जिस रकमकी प्राप्ति स्वीकार कर चुके हैं उसका बिल सुलेमान इस्माइलको भेजनेके लिए मैंने लिखा है; क्योंकि उन्होंने वह माँगा है। इतनेपर भी वे यह रुपया न देंगे तो हम उसे बट्टे खाते लिख देंगे।

मुझे नहीं लगता कि मैं चि० गोकुलदासको दो महीनेमें गुजरातीमें तैयार कर सकूँगा। उसका ज्ञान कच्चा मालूम होता है।

१. श्री राजचन्द्रके एक सम्बन्धी।
२ और ३. ये उपलब्ध नहीं हैं।

तुमने चि० मणिलालका समय-विभाजन ठीक रखा है। उसकी रुचि खेतीमें है तो उसको घरके आसपास काम करनेके लिए कहना। मुख्य बात तो है जमीनके उस बड़े टुकड़ेको साफ करनेकी और उसमे पानी देनेकी। वह पेडोंपर ध्यान रखेगा तो उसे अपने-आप विशेष बातें मालूम हो जायेंगी। वह क्या पढ़ता है? मैं उसे अंग्रेजीमे कम्पोज करनेके लिए लिखूँगा। वह गुजरातीमें भी प्रशिक्षण ले तो अच्छा होगा।

मुझे तुम्हारा मन कुछ कमजोर होता दिखता है। वास्तवमे कुछ महीने तुम्हारा यही रहना जरूरी है। लेकिन वह संभव नही दिखता। तुम छापेखानेमें रहनेके लिए कृतसंकल्प हो, इतना काफी नही है। मैंने तुमको दो और दो चारकी तरह असदिग्ध रूपमें बता दिया है कि छापा-खाना बन्द नही होगा। तुमने तब सहमति प्रकट की थी और अब लिखते हो कि परिस्थितियाँ दुस्सह और अनिश्चित हैं। मै इसीको निर्बलताका चिह्न समझता हूँ। छापेखानेमें क्या है, तुम्हारा अपना कर्तव्य क्या है और लोगोंको किस तरह सँभाला जावे, इसका विचार तुम नहीं कर सके। उसके लिए तुम्हे अवकाश नही मिला। और विपरीत परिस्थितियोके कारण तुम्हारी निर्बलता प्रकट हुई है। ऐसा होना भी मैं अच्छा समझता हूँ। लेकिन तुम स्वयं उसका तात्पर्य समझ सको तभी वह अच्छा है। यह सब मैं पत्र द्वारा नही समझा सकता। सिर्फ इतना ही लिखता हूँ कि (१) जबतक एक भी मनुष्यकी अनन्य भक्ति होगी, तबतक छापाखाना टूट नही सकता। (२) तुम्हारे और दूसरोके लिए मैं छापेखानेके सिवा दूसरे किसी कामको अनुकूल नही समझता। (३) मनुष्य कितना ही तीखे मिजाज़का हो, फिर भी यदि हम उसकी ओर मन, वचन और कायासे निर्मल प्रेम रख सकें तो वह तुरत ठिकानेपर आये बिना नही रहेगा। (४) लेकिन वह ठिकानेपर आये या न आये, हमारा कर्त्तव्य यही है कि हम निश्चित होकर एक ही दिशामे चलते रहें। मैं मानता हूँ कि तुम हेमचन्दको सिखा लो और चिंताओसे कुछ छूट जाओ तो बहुत अच्छा हो। मै यह चाहता भी हूँ।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ४२५२) से।

९६. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
सितम्बर २९, १९०५

चि० छगनलाल,

ऑर्चर्डने मुझे लिखा है कि तुमने रामको एक किताबकी जिल्द बाँधनेका ऑर्डर सीधा दे दिया और उनकी शिकायत है कि अगर वे फ़ोरमैन हैं तो यह अनियमित था। वे यह भी कहते हैं कि किताबकी जिल्द अच्छी नही बाँधी गई है। मैंने उनको लिखा है कि अगर तुमने ऐसा किया है और ऑर्डर सीधा दिया है तो यह अनियमित है, मगर इसमें सम्भवतः तुम्हारा इरादा उन्हे नाराज़ करनेका या नियम तोड़नेका नही हो सकता। मैंने उनसे यह भी कहा है कि वे तुमसे आमने-सामने बातचीत कर लें। इसलिए मैं चाहता हूँ कि तुम उनसे बातें कर लो और मामला क्या है, यह मुझे भी सूचित करो। यह बात बिलकुल ठीक है कि ऑर्डर

उन्हींके पास भेजे जाने चाहिए, सीधे अलग-अलग लोगोंको नहीं। करसनदासको[1] 'इंडियन ओपिनियन' की एक प्रति रानावाव[2] निःशुल्क भेज दिया करो।

मोहनदासके आशीर्वाद

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
मारफत 'इंडियन ओपिनियन'
फीनिक्स

मूल अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० ४२५३) से।

९७. ट्रान्सवालमें कानून बनानेकी सरगरमी

यद्यपि ट्रान्सवालके महान्यायवादी सर रिचर्ड सॉलोमनने कहा था कि ट्रान्सवालकी विधान-परिषदके चालू अधिवेशनमे कोई विवादास्पद कानून पेश नहीं किया जायेगा, तथापि 'गवर्नमेंट गजट' के ताजे अंकमे कई अध्यादेशोंकी एक सूची प्रकाशित हुई है। ये अध्यादेश समाप्तप्राय परिषद द्वारा पास किये गये हैं। अगर उन लोगोकी भावनाएँ कुछ भी महत्त्व रखती हों, जिनपर उनका असर पड़ेगा तो कहना होगा, इनमें से कुछ निस्सन्देह अत्यन्त विवादास्पद हैं। उदाहरणार्थ, उनमे एक नगरपालिका-कानून संशोधन अध्यादेश है, जिसके द्वारा ट्रान्सवालकी किसी भी नगर-परिषदको यह अधिकार मिलता है कि वह चाहे तो "लेफ्टिनेंट गवर्नरकी स्वीकृतिसे वतनी लोगोकी ऐसी किसी भी बस्तीको, जिसको उसने बसाया है, या जिसकी नियोजना की है, अथवा जो उसके नियन्त्रणमें है, उठा दे"। हाँ, लेफ्टिनेंट गवर्नर बस्तीको उठानेकी स्वीकृति देनेसे पहले परिषदको उसके लिए उपयुक्त अन्य जमीनका प्रबन्ध करनेका आदेश दे सकता है। इसमें वतनी लोगोंको उनकी झोंपड़ियों आदिका मुआवजा देनेकी व्यवस्था भी की गई है। खण्ड १० मे नगर-परिषदको पृथक एशियाई 'बाजार' स्थापित करने और कायम रखनेका अधिकार दिया गया है। और उसमें वतनी बस्तियोंसे सम्बन्धित उक्त व्यवस्था एशियाई 'बाजारोंपर' लागू करनेका विधान भी है। इसका अभिप्राय यह है कि दोनोमें अंतर केवल इतना रहेगा कि वतनी लोग बस्तियोंमें रहनेके लिए बाध्य किये जा सकेंगे, परन्तु एशियाई सम्भवतः उनमें जानेके लिए विवश नही किये जा सकेंगे, जिन्हें 'बाजारों' का नरम नाम दिया गया है। एशियाई 'बाजार'-सम्बन्धी यह कानून प्रिटोरिया-नगरपालिकाके उस संघर्षका परिणाम है जो उसने प्रिटोरियाके एशियाई बाजारको अपने नियन्त्रणमें लेनेके लिए किया था। सिद्धान्तकी दृष्टिसे चाहे सरकारके और नगरपालिकाके नियन्त्रणमें कोई अंतर न हो, परन्तु व्यवहारमें जिस नगरपालिकाका अधिकार होगा उसके मिजाजपर बहुत-कुछ निर्भर कर सकता है। इसलिए 'बाजारों' के सम्बन्धमें नीति एक-सी होनेके बजाय, प्रत्येक नगरपालिकाकी मर्जीके अनुसार भिन्न होगी। यह समझना बड़ा कठिन है कि सारे एशियाई प्रश्नपर ब्रिटिश सरकार और ट्रान्सवाल सरकारमें पत्र-व्यवहार चालू होनेपर भी, वर्तमान परिषदने अपने अन्तिम दिनोंमें इस प्रकारका कानून क्यों पास किया। अन्य बहुतसे महत्त्वपूर्ण और आवश्यक मामले स्वभावतः इसी कारण रोक लिये गये है कि अगले वर्ष निर्वाचित परिषदकी स्थापना होगी ही। संशोधित अध्यादेशोंमें नगरपालिकाओंको

१. गांधीजीके भाई।
२. पोरबन्दरके पास एक गाँव।

उन चायघरों या भोजन-गृहोंको परवाने लेनेके लिए बाध्य करनेका अधिकार दिया गया है, जिनका उपयोग सम्भवतः केवल एशियाई लोग करते हैं। हमारा खयाल है, इसके लिए ट्रान्सवालके एशियाइयोंको कुछ चीनी दूकानदारोंको धन्यवाद देना चाहिए। ये चीनी भोजन-गृह खोलनेके लिए तो उतावले थे, परन्तु इन्हें यह पता नही था कि उनके लिए परवाना लेनेकी आवश्यकता नही है। इन्होंने सरकारको प्रार्थनापत्र दिया कि उन्हें भोजन-गृह खोलनेकी सुविधाएँ दी जायें। सरकारने इनके साथ वही सलूक किया जिसके वे लायक थे। अब सब एशियाई भोजन-गृहोंके मालिकोंको छोटे-छोटे उपाहार-गृहो तक पर नगरपालिकाओंके नियन्त्रणका मजा चखना पड़ेगा। सफाईके विचारसे नगरपालिकाके नियन्त्रणकी बात हम समझ सकते है, और उसका स्वागत भी करते है; परन्तु जहाँतक ब्रिटिश भारतीयोंका सम्बन्ध है, जो रोजगार मुश्किलसे लाभप्रद हो सकते है उनके लिए भी परवानेकी शर्त रखना सर्वथा अनुचित है। परन्तु ब्रिटिश भारतीय भी तो एशियाई हैं; इसलिए ट्रान्सवाल सरकारका तर्क यह है कि यदि ४५,००० चीनियोंकी भोजन-व्यवस्था करनेवाले भोजन-गृहोंपर परवाना लेनेका नियम लागू किया जाता है तो १२,००० भारतीयोंके भोजन-गृहोंपर वह क्यों न लागू किया जाये? उसे यह नही सूझा कि भारतीय भोजन-गृह है ही बहुत कम, क्योंकि उनके रीति-रिवाज ऐसे है कि उन्हें भोजन-गृहोंकी आवश्यकता नही पड़ती। निश्चय ही वे इतने कम हैं कि उनकी ओर अबतक किसीका ध्यान नही गया था।

इसके अतिरिक्त, राजस्व-परवाना अध्यादेश है। उसके अनुसार फेरीवाले और ठेलोंपर सौदा बेचनेवाले लोग परवानोंके अधिकारी तभी हो सकेंगे, जब पहले वे मजिस्ट्रेटों, शान्ति-रक्षक न्यायाधिकारियो (जस्टिस ऑफ द पीस) या पुलिस अधिकारियोंसे प्रमाणपत्र प्राप्त कर लेंगे। अपवाद केवल उन लोगोंके लिए होगा जिनके पास पहलेसे परवाने होंगे, परन्तु इन भाग्यवान् लोगोको भी यह सुविधा तभी मिलेगी जब वे अपने परवाने मियाद खत्म होनेसे पहले चौदह दिनके भीतर अपने जिलेके राजस्व-अधिकारियोंको सौंप देंगे।

जोहानिसबर्गके भूमि अध्यादेशके अनुसार,

> लेफ्टिनेंट गवर्नर इस अध्यादेशके साथ सलग्न अनुसूचीमें वर्णित किसी भी भूमिको जोहानिसबर्ग नगरपालिकाकी परिषदको दे देता है तो वैसा करना कानून-सम्मत माना जायेगा, बशर्ते कि यह भूमि इस प्रकारसे, और ऐसी शर्तोंपर दी जाये जिस प्रकारसे, और जैसी शर्तोंपर नगरपालिका परिषद देना उचित समझे; और उस भूमिमें किसी व्यक्तिका उस समय कोई अधिकार हो तो उसका ध्यान रख लिया जाये।

जिन भूमियोंपर इसका प्रभाव पडेगा उनमें जोहानिसबर्गकी मलायी बस्ती भी है। यह बस्ती बारह वर्षसे या इससे भी अधिक समयसे वहाँ बसी है। इसके विरुद्ध, इसके निवासियोंकी आदतों या इसकी स्थितिके कारण, कभी किसीने कोई आपत्ति नहीं उठाई। युद्धसे पहले विभिन्न ब्रिटिश एजेंटोंने, जो यहाँ सरकारका प्रतिनिधित्व करते थे, इस बस्तीके निवासियोमें सुरक्षाकी भावना उत्पन्न कर दी थी, और इसीलिए उन्होंने वहाँ पक्के मकान बना लिये थे। परन्तु कानूनी दृष्टिसे वहाँ उनका अधिकार केवल मासिक किरायेदारके रूपमें है। अब यदि यह कल्पना की जाये कि उनको वहाँसे हटा दिया जायेगा तो प्रश्न यह उठता है कि उन्हें मुआवजा क्या मिलेगा? हम यहाँ यह जिक्र किये बिना नही रह सकते कि फ्रीडडॉर्पके एक भाग और दूसरे भागमें अत्यन्त ईर्ष्याजनक भेद-भाव किया गया है; क्योंकि यह सारी मलायी बस्ती फ्रीडडॉर्पका भाग है। जिस भागमें पुराने गरीब यूरोपीय नागरिक रहते हैं उसके साथ सरकारने

भारी रियायतका बरताव किया है। जैसा कि पाठकोंको इन स्तम्भोंसे ज्ञात हो गया होगा, इन लोगोंसे इनकी भूमि नहीं ली जायेगी। इतना ही नहीं, बल्कि उनकी मासिक किरायेदारी लम्बे पट्टोंमें बदल दी जायेगी। यही सुविधा मलायी बस्तीके निवासियोंको भी क्यों नहीं दी जानी चाहिए? इन लोगोंको चाहिए कि ये अपने अधिकारोंकी उचित रक्षाका प्रयत्न करें। जिन कानूनोंको निर्विवाद बताया जा रहा है उनके ये केवल कुछ उदाहरण हैं। इनके द्वारा किसी-न-किसी रूपमें रंगदार लोगोंके अधिकारोंपर प्रहार किया गया है; और उनको अपनी सरकारके चुनावका कोई अधिकार नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०–९–१९०५

९८. केप प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम

केपके १९ सितम्बर १९०५ के 'गवर्नमेंट गज़ट' में यह प्रकाशित हुआ है:

किसी 'निषिद्ध प्रवासी' को, अधिनियमका उल्लंघन करके उपनिवेशमें आजानेकी अवस्थामें, जिस जिलेमें वह मिला हो उसके मजिस्ट्रेट द्वारा तथ्योंकी आवश्यक जाँचके पश्चात्, उपनिवेशकी प्रादेशिक सीमाओंमें से निकाल देने तक, उस स्थानमें रोक लेने और रखनेकी आज्ञा देना कानूनकी दृष्टिसे उचित होगा जिसका निर्देश समय-समयपर मन्त्री करे। और उचित साधन सम्पन्न होनेपर उसको मन्त्री द्वारा निर्दिष्ट बन्दरगाह या स्थानमें भेजनेका पूरा या आंशिक व्यय उसीसे लिया जायेगा।

यह नियम बहुत कठोर है। प्रतिबन्धक अधिनियम यह मानकर पास किया गया है कि वह उपनिवेशके हितमें है। यह सर्वथा कल्पनागम्य है कि कोई आदमी अनजाने इस अधिनियमका उल्लंघन करके उपनिवेशमें आ जाये। तब यदि उसके पास वहाँसे जानेका खर्च देनेके लायक पर्याप्त रकम पाई जाये तो उसको उसका भार उठानेके लिए विवश करना उचित नहीं होगा। यद्यपि सिद्धान्ततः, कानूनसे अनजान होना दण्डसे बचनेके लिए उचित तर्क नहीं माना जाता, परन्तु शायद व्यवहारमें ऐसे मामले आ जाते हैं जिनमें वह उचित तर्क मान लिया जाता है। इस अधिनियममें पहलेसे ही इस आशयकी एक धारा मौजूद है कि जहाजोंके सब मालिक निषिद्ध प्रवासियोंको वापस ले जानेकी शर्तपर ला सकते हैं। यदि कोई निषिद्ध प्रवासी उपनिवेशमें प्रविष्ट हो जाता है तो इससे अधिकारियोंकी ओरसे निगरानीकी कमी सिद्ध होती है; और केपमें पूरी-पूरी निगरानी न होने अथवा यात्रियोंके चुनावमें जहाजोंके मालिकोंकी लापरवाहीके कारण किसी निरपराध व्यक्तिको दण्डित करना उचित नहीं जान पड़ता। इस कारण हमारा विश्वास है कि केपके ब्रिटिश भारतीय, जिनपर इस अधिनियमका प्रभाव सबसे अधिक पड़नेकी सम्भावना है, इसमें संशोधन करानेका आवश्यक प्रयत्न करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०–९–१९०५

९९. चीनी और अमेरिकी

चीनियों द्वारा अमेरिकी मालके बहिष्कारके फलस्वरूप अमेरिकाको प्राय: ५०,००,००० पौंडका नुकसान हो चुका है, ऐसा प्रतीत होता है। इससे अमेरिकी व्यापारियोंने सरकारसे प्रार्थना की है कि चीनियोंके खिलाफ जो कानून[1] हैं वे रद कर दिये जायें। इसके विरोधमें अमेरिकाके मजदूर-वर्गके लोगोंने बड़ी-बड़ी सभाएँ करके प्रस्ताव स्वीकार किये है कि व्यापारियोंको चाहे कितना ही नुकसान क्यों न हो, चीनियोंके खिलाफ बनाये गये कानून रद नहीं किये जाने चाहिए। इस प्रकार अमेरिकामें एक ओर व्यापारियों और कारीगरोंके बीच फूट चल रही है और दूसरी ओर तारों द्वारा प्राप्त समाचारोंसे पता चलता है कि चीनियोंने जो ऐक्य कायम किया है, वह और भी मजबूत होता जा रहा है। चीनियोंने जो प्रस्ताव किया है वह उन सब देशोंके सम्बन्धमें है, जिनमें चीनी-विरोधी कानून लागू हैं। यह भी कहा जाता है कि गोरोंके विरुद्ध दुर्भावना इस हद तक भड़क उठी है कि चीनके अन्दरूनी भागोंमें जिन गोरोंकी रिहाइश है उनके लिए खतरा मालूम दे रहा है। कहा नहीं जा सकता कि इन सारे आन्दोलनोंका क्या परिणाम होगा।

उन्नीसवी शताब्दीमें जो बड़े-बड़े काम हुए माने जाते हैं उन सबकी कसौटी इस बीसवीं शताब्दीमें हो रही है। और ऐसा प्रतीत होता है कि इस शताब्दीमें बहुत बड़ी उथल-पुथल होनेकी सम्भावना है। इस सारी हलचलमें यह बात दिखाई देती है कि जहाँ ऐक्य है, वहीं बल है और वहींपर जीत है। यह बात ऐसी है जो प्रत्येक भारतीयको अपने मनमें अंकित कर लेनी चाहिए। चीनी कमजोर होनेपर भी ऐक्यके कारण बलवान दिखाई देते हैं और "चीटियाँ मिलकर काले नागके भी प्राण ले लेती हैं", इस कहावतको चरितार्थ कर रहे हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०–९–१९०५

१००. नेटालमें उद्योगोंको प्रोत्साहन देनेका आन्दोलन

गवर्नर द्वारा नियुक्त आयोग

इस बारके 'गवर्नमेंट गजट' से पता चलता है कि नेटालमें एक आयोगकी नियुक्ति की गई, है जो यह बतायेगा कि नेटालमें जो-जो वस्तुएँ खपती है, वे कैसे बनाई जा सकती हैं और इसके लिए क्या-क्या उपाय करने चाहिए तथा इस प्रकार उत्पन्न की गई वस्तुओंकी खपतको बढ़ावा देनेके लिए चुंगीकी दरमें परिवर्तन किया जाये या नहीं। इस आयोगमें सदस्योंके रूपमें श्री मूअर, डॉ० गबीन्स, श्री अरनेस्ट ऐक्ट, श्री जेम्स किंग, श्री जॉर्ज पेइन, श्री सॉडर्स और श्री मैकेलिसककी नियुक्ति की गई है। हम समझते हैं कि इस आयोगके सामने हमारे व्यापारी गवाही दें तो बहुत अच्छा हो। ऐसी बहुत-सी चीजें हैं जो नेटालमें पैदा की जा सकती है और अनुभवी व्यापारी इस दिशामें सहायता कर सकते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०–९–१९०५

१. चीनी मजदूरोंका प्रवेश रोकनेके लिए बनाये गये।

१०१. नेटालकी पाठशालाएँ

शिक्षा-विभागके अधीक्षककी रिपोर्ट

नेटालके शिक्षा विभागके अधीक्षक श्री मुडीने अपनी वार्षिक रिपोर्टमें बताया है कि भारतीयों और अन्य काले लोगोंकी पाठशालाओंमें लड़कोंकी स्वच्छतापर आवश्यक ध्यान नहीं दिया जाता। श्री मुडीकी यह बात सदा ध्यानमें रखने योग्य है। यद्यपि श्री मुडी हमारे खैरख्वाह नहीं है, फिर भी वे जहाँ हमारी भूल बतायें वहाँ हमें विचार करनेकी जरूरत है। माता-पिताओंको इस बारेमें पूरा-पूरा ध्यान देना चाहिए। हम लोग स्वयं स्वच्छताके नियमोंका पालन न करते हों तो भी बच्चोंको वह सिखा देना जरूरी है। अगर वे सीखेंगे तो एक पीढ़ीमें ही बड़ा परिवर्तन होनेकी सम्भावना है। लड़कोंके सम्बन्धमें निम्नलिखित बातें याद रखने योग्य हैं:

(१) उनके दाँत साफ होने चाहिए। इसके लिए सुबह और सोनेसे पहले उनसे दंत-मंजन करवाना चाहिए।

(२) उनके बाल साफ होने चाहिए। इसके लिए उनके बाल सदैव छोटे, हमेशा धुले हुए और कंघी किये हुए रखने चाहिए। तेल डालना आवश्यक नहीं है।

(३) उनके नख स्वच्छ होने चाहिए, और समय-समयपर उन्हें काटना और हमेशा धोना चाहिए।

(४) जूते और कपड़े, चाहे कितने ही सादे हों, फिर भी साफ होने चाहिए।

(५) उनका बस्ता और उनकी किताबें भी उसी प्रकार साफ होनी चाहिए। और इसलिए उनको चाहिए कि हाथ साफ हों, तभी वे पुस्तकोंको उठायें।

यह कहनेकी आवश्यकता नहीं है कि इन सूचनाओंको याद रखने और लड़कोंसे उनका पालन करवानेसे लाभ होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०–९–१९०५

१०२. जोहानिसबर्गवासियोंको सूचना

हम जोहानिसबर्गके अखबारोंमें देखते हैं कि वहाँ बुखारका मौसम शुरू हो गया है। नगर-पालिकाने घोषित किया है कि जो लोग अपने पाखाने गन्दे रखेंगे उनपर मुकदमा चलाया जायेगा। वहाँ कायदा यह है कि प्रत्येक पाखानेमें, जब-जब उसका उपयोग किया जाये, मैलेपर सदैव सूखी मिट्टी अथवा राख अथवा जन्तु-नाशक भूसी डाली जाये, ताकि मैला ढँक जाये। पाखानेमें जरा भी सीलन अथवा बदबू न रहने दी जाये। यदि इसके अमलमें कोई कसर रहती है तो पाँच पौंड तक जुर्माना किया जाता है। यह नियम बहुत अच्छा है। राख अथवा सूखी मिट्टीका पैसा नहीं लगता। हम अपने पाठकोंसे खास सिफारिश करते हैं कि वे पाखानेमें मिट्टीका कनस्तर रखें और जब-जब पाखानेको काममें लायें तब-तब मैलेपर डिब्बेसे मिट्टी अथवा राख डालें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०–९–१९०५

१०३. जॉर्ज वाशिंगटन

अमेरिकाका पहला राष्ट्रपति

अंग्रेजीके छात्र पुस्तकोंमें पढ़ चुके हैं कि एक दिन बालक जॉर्जने एक बेरका पेड़, जो उनके पिताको अत्यन्त प्रिय था, खेल-खेलमें काट दिया था। पिताने जब अपने पेडका यह हाल देखा तब उसके बारेमे जॉर्जसे पूछा। जॉर्जने उत्तर दिया, "पिताजी, मुझसे झूठ तो नही बोला जा सकता। यह पेड़ मैंने काटा है।" पिताने यह प्रश्न बहुत क्रोधमें किया था। लेकिन जॉर्जने जब आँखोंमें आँसू भरकर निर्भीक उत्तर दिया तो वे खुश हो गये और उन्होंने अपने पुत्रके अपराधको दरगुजर कर दिया। उस समय जॉर्ज बहुत ही छोटा था।

जिस लड़केके मनमें सत्य इस तरहसे बद्धमूल था वह अपनी ५५ वर्षकी उम्रमें अमेरिकाका, जिसका नाम आज दुनियामें फैला हुआ है, पहला राष्ट्रपति बना। उसके राष्ट्रपति बननेके समय लोग उसे राजा बनाने तथा मुकुट पहनानेके लिए तैयार थे। लेकिन उसने वह प्रस्ताव ठुकरा दिया।

जॉर्ज वाशिंगटनका जन्म २२ फरवरी, १७३२ को वर्जिनिया राज्यके वेस्ट मोरलैंड शहरमे एक धनी घरमें हुआ था। उसके जीवनके पहले सोलह वर्षका हाल पूरी तरह किसीको मालूम नहीं है। १६ वर्षकी उम्र तक उसने बहुत कम पढा-लिखा था। उसके बाद वह एक जमीदारीका मैनेजर नियुक्त किया गया। इस समय उसने अपनी होशियारी और बहादुरी दिखाई। यहाँतक कि २३ वर्षकी उम्रमें वह वर्जिनियाकी फौजका प्रधान सेनापति बना दिया गया।

उस समय उत्तर अमेरिका इंग्लैंडके अधिकारमें था। लेकिन अमेरिकाके लोगो और इंग्लैंडके बीच संघर्ष चला करता था। अमेरिकामें कुछ कर लगाये गये। अमेरिकावासियोको वे ठीक नही लगे। इस समय और भी झगड़े थे। इससे आखिरमें अमेरिका और इग्लैंडके लोगोके मन इतने खट्टे हो गये कि लड़ाई शुरू हो गई। अंग्रेजी सेना कवायद सीखी हुई और तैयार थी। बेचारे अमेरिकी लोग देहातीं थे। उन्हे हथियारोंका प्रयोग करना भी पूरी तरह नही आता था। वे फौजके अनुशासित जीवन और कष्टोंसे अपरिचित थे। ऐसे लोगोंको काबूमें रखने, उनसे काम लेकर अमेरिकाको स्वतंत्र करने और अंग्रेजोके बन्धनोसे मुक्त होनेका काम वाशिंगटनपर आया। लोगोंने उसको प्रधान सेनापति बनाया। उस वक्त वाशिंगटनने कहा — "मैं इस सम्मानके योग्य बिलकुल नही हूँ। फिर भी आप मुझे नियुक्त करते है तो मै लोगोंकी सेवाके लिए यह पद बिना वेतन स्वीकार करता हूँ।" ऐसे ही शब्द उसने अपने एक मित्रको भी लिखे थे; इसलिए ये सिर्फ कहने भरके लिए कहे गये हों, यह बात नही थी। दरअसल, वह खुद मानता था कि उसमें पर्याप्त बल नहीं है। फिर भी जब उसपर जिम्मेदारी आ ही गई, तब उसने हर तरहकी जोखिम उठाकर और रात-दिन काम करके लोगोके मनोंपर इतना प्रभाव डाला कि लोग उसकी आज्ञाका पालन तुरन्त करते थे, और वह जो भी कष्ट सहन करनेके लिए कहता, सहन कर लेते थे। आखिर अंग्रेजी फौजें हारी और अमेरिका स्वतंत्र हुआ। अमेरिकाके स्वतंत्र होते ही जॉर्ज वाशिंगटनने अपना पद छोड़ दिया। लेकिन लोगोके हाथ तो हीरा लगा था, वे उसे छोड़नेवाले न थे। इससे वह स्वराज्य प्राप्त होनेपर सन् १७८७ में अमेरिकाका पहला राष्ट्रपति बनाया गया। इस पदपर बैठनेके बाद भी उसके मनमें स्वार्थ साधनेकी बात कभी नही आई। लड़ाईके बाद अपनी थैलियाँ भरनेवाले ढोंगी देशभक्त हमेशा खड़े हो जाते है। इन सबको वाशिंगटनसे

दबकर रहना पड़ता था। १७९२-९३ में[1] वह फिर राष्ट्रपति चुना गया। उसने जिस तरह युद्धमें वीरता दिखाई थी, उसी तरह अपने राष्ट्रपति-कालमें देश-सुधारके कामोंमें, लोगोंका संगठन करनेमें और देशकी प्रतिष्ठा बढ़ानेमें भी दिखाई। एक लेखकने लिखा है कि "वाशिंगटन जैसे युद्धकालमें अग्रणी था, वैसे ही शान्तिकालमें भी अग्रणी था और उसने लोगोंके मनोंमें सबसे ऊँचा स्थान प्राप्त कर लिया था।" उससे तीसरी बार भी राष्ट्रपति-पद लेनेके लिए आग्रह किया गया। लेकिन उसने इससे इनकार कर दिया और अपनी जमीदारीमें जाकर रहने लगा।

१४ दिसम्बर १७९९ को अकस्मात् बीमारीसे इस वीर पुरुषकी मृत्यु हो गई। वह कदमें बहुत ऊँचा था। उसकी ऊँचाई छः फुट तीन इंच मानी जाती है। उसके हाथ इतने लम्बे थे जितने कि उसके समयमें किसी अन्य व्यक्तिके नहीं थे। उसका स्वभाव हमेशा नम्र और दयालु था। उसकी देशभक्तिके फलस्वरूप आज अमेरिका इतना ऊँचा उठा है। और जब तक अमेरिका है तब तक वाशिंगटनका नाम भी रहेगा। हमारी प्रार्थना है कि भारत भी ऐसे वीर पुरुषोंको जन्म दे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-९-१९०५

१०४. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
सितम्बर ३०, १९०५

चि० छगनलाल,

चि० आनन्दलाल लिखता है कि मर्क्युरी लेनमें दफ्तर लेनेका निर्णय हुआ है। यदि यह बात सच है तो ऐसा किया नहीं जाना चाहिए। इस तरहके परिवर्तन करने हों तो पहले मुझसे पूछ लेना जरूरी है। मेरा खयाल है, ग्रे स्ट्रीट या फील्ड स्ट्रीटमें दफ्तर रखनेमें हर्ज नहीं है।

रामनाथको चि० जयशंकरके सुपुर्द कर दें, बशर्ते कि वह खुशीसे जाना चाहे। जयशंकरको उसके व्यापारमें कठिनाई होती होगी। मनसुखभाईका यहाँ आना संभव है। उनका एक लम्बा पत्र मेरे पास आया है। उससे प्रकट है कि वे यहाँ आनेको तड़प रहे हैं। वे केवल अपने माता-पिताकी आज्ञाकी प्रतीक्षामें हैं।

क्लार्क्संडॉर्पसे पत्र आया है। उसे मैं साथ भेज रहा हूँ। वहाँसे रुपया बिलकुल नहीं आया है। तुमने रुपयेकी प्राप्ति किस अंकमें स्वीकार की है? यह लिखते-लिखते मुझे याद आ रहा है कि पहले क्रूगर्संडॉर्पकी रकम एक मुश्त स्वीकार की गई थी। फिर जब मैंने लिखा तो एक-एक व्यक्तिकी रकमें स्वीकार की गईं। इसमें कुछ गड़बड़ी होना संभव है।

तुम्हारा पत्र दोपहर बाद मिला।

मुझे दफ्तरको फिलहाल मर्क्युरी लेन ले जाना ठीक नहीं मालूम होता।

क्रूगर्संडॉर्पसे तुम्हारे पास कोई पत्र आया हो तो भेजना। मुझे जितना भी रुपया मिला है उसकी प्राप्ति स्वीकार कर ली गई है।

१. मूलमें १८९२-३ दिया है जो स्पष्टतया भूल है।

इसके साथ सुमार लतीफका पत्र भेज रहा हूँ। उसपर जो लिखना हो लिखकर मुझे भेज देना।

मोहनदास

[पुनश्च]

आज मैंने शेख मेहताबकी[1] लिखी पुस्तक देखी। उसके सम्बन्धमें 'इंडियन ओपिनियन' में कोई टिप्पणी न दें।

मोहनदास

[पुनश्च]

गुजराती सामग्री भेज रहा हूँ। वहाँ दो जीवनियाँ इकट्ठी हो गई हैं इसलिए इस बार नही भेजता।

मोहनदासके आशीर्वाद

मूल गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ४२५४) से।

१०५. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
अक्टूबर २, १९०५

प्रिय छगनलाल,

मुझे श्री किचिनने सूचित किया है कि तुम लोगोंने अपनी एक बैठकमें, सर्वसम्मतिसे, हेमचन्दको वर्खास्त करनेका निर्णय किया है। जब हेमचन्दने मुझे लिखा कि उसे बर्खास्तगीकी सूचना मिली है तब मैंने तुरन्त उसे आश्वासन दिया कि सूचना वापस ले ली जायेगी, और मैंने श्री किचिन और छगनलालसे पत्र-व्यवहार शुरू कर दिया। जब हेमचन्द कामपर रखा गया था, तब मेरी उससे कुछ बातचीत हुई थी, और मैंने कहा था कि उसको प्रेसके कामोंका प्रशिक्षण दिया जायेगा, और जबतक उसका व्यवहार और काम अच्छा रहेगा, उसे अपने-आपको स्थायी कर्मचारी ही समझना चाहिए। मैं हेमचन्दको अच्छी तरह जानता हूँ, और उससे भी अच्छी तरह उसके परिवारको। मैं उसे अच्छा और उपयोगी कर्मचारी मानता हूँ। अगर छापेखानेको कठिन परिस्थितियोंमें होकर गुजरना पड़ा तो वह उसका साथ न छोड़ेगा। लेकिन, इसके अलावा, जब मुझे हेमचन्दकी बर्खास्तगीकी बात मालूम हुई तब मैंने अनुभव किया कि मेरा वचन दाँवपर लगा है। इसी कारण मैंने उसे यह आश्वासन दिया था।

क्या मैं तुम लोगोंसे कह सकता हूँ कि मैं अब जो कुछ कह रहा हूँ उसको खयालमें रखते हुए तुम उसकी बर्खास्तगीके सम्बन्धमें अपने फैसलेको वापस लेकर मेरे आश्वासनकी पुष्टि करो? यदि भविष्यमें ऐसे सभी मामलोंमें किसी अन्तिम निर्णयपर पहुँचनेके पूर्व मेरी सलाह ले लेनेका खयाल रखा जायेगा तो मैं इस बातको बहुत पसन्द करूँगा।

तुम्हारा शुभचिन्तक,
मो० क० गांधी

१. स्कूलमें गांधीजीके एक साथी। देखिए आत्मकथा भाग १, अध्याय ६ और ७।

२

[इसके बादका अंश गुजरातीमें हाथसे लिखा गया है।]

चि० छगनलाल,

इस पत्रको पढ़ लेना। ऐसा ही सबको लिखा है। मालूम होता है, किचिनने इस मामलेको बड़ा रूप दे दिया है। मैंने उन्हें तार भी दिया है। तुम्हें बैठकमें उपस्थित रहना आवश्यक जान पड़े तो रहना।

लच्छीरामको अभी अखबार नहीं मिल रहा है। किस पतेपर भेजते हो, यह लिखना।

मणिलालको पानी भरनेके लिए छोटी बहँगी बनवा देनी चाहिए। जान पड़ता है, उसे पानी उठानेमें कठिनाई मालूम होती है।

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्च]

गबरू, बॉक्स ५७०९, कहते है कि उन्हें 'ओपिनियन' एक ही हफ्ते मिला। अब नही मिलता। समझमें नही आया कि मदरसा[1] [-कोषके दानियों]के नाम क्यों नही छापे गये? अब आगे ऐसा नहीं होना चाहिए।

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त टाइप की हुई अंग्रेजी और स्वहस्त लिखित गुजराती दफ्तरी प्रति (एस० एन० ४३७७) से।

१०६. पत्र: छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
अक्तूबर ५, १९०५

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। मुझे दफ्तरके सरनामा-छपे कागज और उनके साथ जोड़े जानेवाले कोरे कागज भेज देना। उनमें "तारका पता—'गांधी'" छपा देना। नाम पंजीकृत करवा लिया है। यह काम जल्दी पूरा कराना।

चि० आनन्दलालके लिए घरके सम्बन्धमें मेरा खयाल यह था कि वह चि० अभयचन्दका मकान लेना चाहता है। यदि उसे नया ही मकान बनवाना हो तो मेरी राय है कि फिल-हाल खर्च न किया जाये। मैं इसी तरहका पत्र उसे लिखता हूँ।

श्री बीनके लिए घरमें रंग करा देनेमें ही छुटकारा देखता हूँ।

हेमचन्दसे बराबर काम लेना। वह कैसा चल रहा है, मुझे लिखते रहना। मेरी रायके बिना निकालने-रखने वगैराका फेरफार होना ही नहीं चाहिए। इस सम्बन्धमें कदम उठा चुका हूँ। ऑर्चर्ड और साम गुस्सा हुए हों तो उसकी चिन्ता नहीं।

मनसुखलाल फिलहाल तो हवापानी बदलनेके लिए ही आयेंगे। और यदि आये ही तो मैं उन्हें स्नान [चिकित्सा] वगैराके लिए कुछ समय ही अपने पास रखूँगा और फिर वे कुछ समय वहाँ रहेंगे।

१. दाभेल, गुजरातमें एक मुस्लिम स्कूल, जिसके लिए दक्षिण आफ्रिकामें चन्दा एकत्र किया जा रहा था।

कालाभाईने मुझे लिखा है कि वे हर महीने ३ पौंड देंगे। बसन्त पण्डितके बारेमें अखबारमें सूचना दे देना। क्या होता है, इसकी जानकारी मिलती ही नही।

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्च]

तुम अभी 'गजट'की सभी सूचनाएँ नही दे रहे हो। इस बारके 'गजटमें' १७०५ पृष्ठपर बहुत-सी सूचनाएँ है। सरसरी निगाहसे देखनेमें इतने लोगोके बारेमे सूचनाएँ निकली है: (१) ऐय्यर (२) रामस्वरूप (३) बोघा (४) गीसीआवन (५) पारम (६) हुसैन आमद (७) रांदेरी। सारी सूचनाएँ तीनो भाषाओमें आनी चाहिए; इसलिए अबसे 'गजट' बराबर देखते रहना। हेमचन्दको इसमें से कुछ काम सौंपा जा सकता है।

वहाँके सरनामा-छपे छोटे लिफाफे भेजना।

मोहनदास

गांधीजीके स्वाक्षरोमे मूल गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ४२५६) से।

१०७. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
अक्टूबर ६, १९०५

चि० छगनलाल,

वीरजीकी चिट्ठी तुम्हारी जानकारीके लिए नत्थी कर रहा हूँ। इसे वापस मेरे पास भेज देना। तुमने अपनी एक चिट्ठीमे जो घटना लिखी थी, मैं उसको उसीके सम्बन्धमे लिख रहा हूँ[1]। तुम सारी बात उससे कर लेना। मैं उसे यह भी लिख रहा हूँ कि मैंने अपने नाम लिखा उसका पत्र तुम्हे भेज दिया है। उसका यह पत्र, मेरे जिस पत्रका उत्तर है[2] उसमें मैंने लिख दिया था कि अगर वह तुमको सन्तुष्ट नही कर सका तो मैं इस वर्षके बाद उसको नही रख सकूँगा।

तुम यह किसलिए कहते हो कि आनन्दलालको जो २० पौंड दिये गये, वे पानीमे गये? अगर बात ऐसी थी तो तुम्हें आनन्दलालसे कहना उचित था। तुम्हारे पिछले पत्रसे मुझे मालूम हुआ कि वह तुमसे ३० पौंड शहरमें कुछ सामान खरीदनेके लिए लेना चाहता था और टोंगाटसे खरीदनेका इरादा छोड चुका था।

देसाईका पत्र वापस भेज रहा हूँ। गलती जब तुम्हे मिल गई थी तब मेरे पास पत्र भेजनेकी आवश्यकता नही थी।

तुम्हारा शुभचिन्तक,
मो० क० गांधी

नत्थी[3]
श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
मारफत 'इंडियन ओपिनियन'
फीनिक्स

मूल अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० ४२५७) से।

१, २ और ३. ये उपलब्ध नहीं है।

१०८. भारतमें अनिवार्य शिक्षा

जहाँ दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंकी शिक्षाको निरुत्साहित करनेका प्रत्येक प्रयत्न किया जा रहा है; स्वयं भारतमें ऐसे लक्षणोंकी कमी नही है जिनसे प्रकट होता है कि लोगोंके हृदयोंमें शिक्षा-प्रेमने गहरी जड़ पकड़ ली है, और सम्भवतः कुछ वर्षोंमें ही हम देखेंगे कि भारतके उन्नत भागोंमें अनिवार्य शिक्षा अपना ली गई है। मैकॉलेने शिक्षा-सम्बन्धी अपना प्रसिद्ध स्मरणपत्र १८३६ में लिखा था।[1] भारतमें शिक्षाको वास्तविक प्रोत्साहन तभी मिला था, परन्तु फिर भी "१९०१ की जनगणनामें पता लगा कि प्रति दस स्त्रियोंमें से केवल एक स्त्री साक्षर है।" बड़ौदा रियासतके लोकशिक्षा-निदेशक श्री एच० डी० काँटावालाने अगस्तके 'ईस्ट ऐंड वेस्ट' में एक मूल्यवान लेख लिखा है। उसके अनुसार १९०१ में, भारतमें सब वर्गोंके विद्यार्थियोंकी संख्या ३२,६८,७२६ थी, और उनके शिक्षणपर दो करोड़ रुपयेसे कम, अर्थात् कोई सवा तेरह लाख पौंड, व्यय हुए थे। इसमें से एक-चौथाईसे कुछ अधिक व्यय प्रारम्भिक शिक्षापर किया गया था। शिक्षापर व्यय सरकारकी सारी आमदनीका १.५ प्रतिशत है। यह स्वीकार किया जा चुका है कि भारतमे प्रारम्भिक शिक्षापर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है, और उसका प्रधान कारण यह है कि भारत-सरकारको अर्थाभावके कारण इससे अधिक व्यय करना असम्भव लगता है। हम फिलहाल इस प्रश्नपर विचार नहीं करेंगे कि शिक्षाकी अधिक प्रगतिके लिए धन क्यों उपलब्ध नही है, परन्तु हम यह कह सकते हैं कि यह मामला अब केवल सरकारके हाथमें नहीं रहा है।

जो लोग शिक्षाके सुफलका रसास्वादन कर चुके हैं वे उत्सुक हैं कि उसमें से उनके कम भाग्यशाली बन्धुओंको भी हिस्सा मिले। हालमें बम्बई नगर-निगमने अनिवार्य शिक्षा-पद्धतिको स्वीकार करते हुए एक प्रस्ताव पास किया है। महाविभव महाराजा गायकवाड़ने एक अमली कदम उठाया है; और श्री काँटावालाने अपने लेखमें प्रधानतया उसी प्रयोगकी चर्चा की है जो कि अनिवार्य शिक्षाके सम्बन्धमें इस समय बड़ौदामें किया जा रहा है। महाविभवने १८९२ में अपनी रियासतके कुछ भागोंमें अनिवार्य शिक्षा शुरू करनेका विचार प्रकट किया था और इस कामकी जिम्मेदारी श्री काँटावालाको सौंपी थी। उन्होंने स्वयं अपने मार्ग-प्रदर्शनके लिए निम्न सिद्धान्त स्थिर किये थे:

(१) किसी स्थानमें अनिवार्य शिक्षा-कानून लागू करनेसे पहले सरकार वहाँ शिक्षाके साधन उपलब्ध करे।

(२) अनिवार्य शिक्षा कानून बालकों और बालिकाओं, दोनोंपर लागू किया जाये।

(३) अनिवार्य शिक्षा कानून लागू करनेके लिए बालकोंकी आयु सातसे बारह और बालिकाओंकी सातसे दस वर्षतक रहे।

(४) पाठ्यक्रम प्रारम्भिक हो।

१. टॉमस बेबिंगटन मेकॉले (१८००–५९), भारत-सरकारकी सामान्य लोक शिक्षा-समितिके अध्यक्ष और गवर्नर–जनरलकी कार्यकारिणी परिषदके कानून-सदस्य थे। उन्होंने भारतमें अंग्रेजी शिक्षा शुरू करनेकी सिफारिश अपने २ फरवरी १८३५ के स्मरणपत्रमें की थी। किन्तु, जबतक विभिन्न विचार–पक्षोंमें इस सम्बन्धमें कोई निर्णय न हो गया तबतक सरकार भारतमें शिक्षाकी कोई एक-सी योजना आरम्भ नहीं कर सकी।

(५) अनिवार्य उपस्थिति वर्षमें १०० दिनसे अधिक नही हो।
(६) नियमके उल्लंघन-कर्त्ताओंके विरुद्ध कार्रवाई फौजदारी कानूनके अन्तर्गत नही, केवल दीवानी कानूनके अन्तर्गत की जाये और उनपर किये गये जुर्मानेकी वसूली भी दीवानी जाब्तेसे की जाये।

श्री काँटावालाने विशेष उत्साह दिखाया और वे उलझन-भरी गम्भीर कठिनाइयोंसे डरे नही। उन्होंने ऐसे दस गाँव चुने जो रियासतमें सबसे अधिक पिछड़े हुए थे (क्योंकि महाराजा गायकवाड़की इच्छा थी कि इस पद्धतिपर अधिकतम प्रतिकूल परिस्थितियोंमें अमल करके देखा जाये) और उनमे ऊपर लिखे सिद्धान्तोको लागू किया। शिक्षा-निदेशकने गाँवोके पटेलोसे कई बार भेंट की। उन्होंने लोगोंके विरोधका सामना किस प्रकार किया और उनकी जिद-भरी भावनाओंको अपने विचारोंके अनुकूल कैसे बनाया, ये सब घटनाएँ बड़ी रोचक है। परन्तु यहाँ हम केवल इस प्रयोगका परिणाम, लेखकके अपने शब्दोमें, बतायेंगे।

> इस प्रकार मैं बड़ौदा रियासतके सबसे पिछड़े हुए भागमें बहुत कम समयके भीतर अनिवार्य शिक्षा शुरू करनेमें समर्थ हो गया। मुझे इस योजनाको सफलतापूर्वक चलानेके लिए महीनों विशेष ध्यान देना पड़ा। वर्ष समाप्त होते-होते, अनिवार्य शिक्षाकी आयुके प्रायः सभी, अर्थात् ९९ प्रतिशतसे अधिक बच्चे स्कूलोंमें भर्ती हो गये। यह परिणाम ऐसा है जो इंग्लैंड तथा अन्य उन्नत देशोंमें भी प्राप्त नहीं हो सका है। इस कानूनपर सफलतापूर्वक अमल होनेसे महाराजाको, दस-दस नये गाँवोंके समूहोंमें अनिवार्य शिक्षा लागू करनेकी प्रेरणा मिली। अमरेली ताल्लुकेमें अनिवार्य शिक्षा बारह वर्षसे अधिक समय तक सफलतापूर्वक कसौटीपर कस कर देखी जा चुकी है, और सदा यह देखा गया है कि शत-प्रतिशत बच्चे स्कूलोंमें हाजिर रहे, और लोगोंने इसके विरुद्ध कभी कोई गम्भीर शिकायत नहीं की। हालमें महाराजाने एक योजना स्वीकृत की है कि रियासतके दो भागोंमें अनिवार्य शिक्षा कानून उन बच्चोंपर लागू किया जाये जिनके माता-पिताओंकी एक निश्चित वार्षिक आय है।

यह सफलता ध्यान देने योग्य है। फिर भी भारतके करोड़ों निरक्षर लोगोंका खयाल करते हुए यह एक छोटा-सा अंकुर-मात्र है। कोई भी यह भविष्यवाणी नहीं कर सकता कि कालान्तरमें यह अंकुर कितना बड़ा हो जायेगा। इस प्रयोगसे हम दक्षिण आफ्रिकी लोगोंको भी कुछ-न-कुछ शिक्षा अवश्य मिलती है। हम विभिन्न सरकारोंसे भारतीय बालकोंके लिए उपयुक्त शिक्षाकी व्यवस्था करनेकी आशा करें, यह उचित ही है। जिन भारतीयोंकी स्थिति अन्य भारतीयोंसे अच्छी है और जो शिक्षाके लाभोंसे परिचित है, उनका कर्तव्य है कि यदि दक्षिण आफ्रिकी सरकारें उनकी सहायता नही करती तो वे स्वयं भारतीय बालकोकी शिक्षाकी उपयुक्त व्यवस्था करें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–१०–१९०५

१०९. भारतके 'पितामह'[1]

भारतसे बदलेमें आये हुए समाचारपत्रोंसे हमें उन सभाओंकी खबर मिली है जो गत ४ सितम्बरको भारतके पितामह श्री दादाभाई नौरोजीका इक्यासीवाँ जन्मदिन मनानेके लिए देश-भरमें की गई थीं। हमारी नम्र सम्मतिमें, श्री नौरोजीकी भारतके प्रति की गई सेवाएँ उन सेवाओंसे बहुत अधिक हैं जो इंग्लैंडके "पितामह"[2] ने इंग्लैंडके प्रति की थी। श्री नौरोजीका काम अग्रणीका काम था। उन्होंने जब वह काम शुरू किया, तब निश्चय ही उनके सहायक बहुत कम थे। वे जिस त्याग और लगनसे अनुकूल और विपरीत — सभी परिस्थितियोंमें भारतके हितके लिए कार्य करते रहे, उसका जोड़ भारतमें कठिनाईसे मिलेगा; और क्या आश्चर्य कि उनको अपने करोड़ों देशवासियोंकी दृष्टिमें सबसे ऊँचा स्थान प्राप्त है! यह बात अत्यन्त करुण और गौरवास्पद है कि अस्सी वर्षसे भी ज्यादा आयुका यह वृद्ध ब्रिटेनके एक निर्वाचन क्षेत्रमें लोगोंको मत देनेके लिए मनाता फिरता है — अपने यश या सम्मानके लिए नहीं, बल्कि भारतकी सेवा और अधिक करनेके लिए। यदि उत्तरी लैम्बेथके निर्वाचक श्री नौरोजीको फिर संसदका सदस्य चुन लेंगे तो इसमें उनका अपना ही असाधारण सम्मान होगा। हम भी भारतके करोड़ों लोगोंकी भाँति श्री नौरोजीके दीर्घायुष्य और स्वास्थ्यके लिए प्रार्थनाएँ करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–१०–१९०५

११०. सर मंचरजीका अपमान

अभी हालमें कलकत्तामें सर मंचरजी भावनगरीका जो अपमान किया गया, उसे जानकर हमे भारी खेद हुआ है। बंग-भंग[3] के प्रश्नपर उनका मत [लोगोंके] मतसे भिन्न था; इस कारण कॉलेज चौकमें उनका पुतला जलाया गया। सर मंचरजी निश्चय ही अपना स्वतन्त्र मत रख सकते हैं, यद्यपि आजकल स्वतन्त्रताके उस मंदिर — ब्रिटिश लोकसभा — के सदस्योंको अपना वैयक्तिक मत रखनेकी स्वतन्त्रता क्वचित् दी जाती है। उस सभाका जो सदस्य भारतके हितमें अपने उत्साहका प्रमाण दे चुका है, उसका ऐसा खुला अपमान करना अबुद्धिमत्तापूर्ण — नहीं, मूर्खतापूर्ण है। भले ही सर मंचरजी और भारतीयोंका मत चाहे सदा न मिलता हो परन्तु वे इस बातसे इनकार नहीं कर सकते कि सर मंचरजीकी वफादारी सदा अपने देशके साथ रहती है और वे सदा हृदयसे उसका हित चाहते हैं। दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय इस अपमानको विशेष रूपसे अनुभव करेंगे, क्योंकि वे यहाँके हजारों प्रतिनिधित्वहीन भारतीयोंके सच्चे मित्र सिद्ध हो चुके हैं। भारतीय किसी व्यक्तिका मूल्य उसके अंग्रेजोंके विश्वासघातकी

१. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ५४–५।

२. विलियम एवर्ट ग्लैड्स्टन (१८०९–९८), इंग्लैंडके प्रधानमन्त्री १८६८–७४, १८८०–५, १८८६ और १८९२–४। देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ११४–५।

३. प्रशासनिक सुविधाके नामपर बंगालको दो प्रान्तोंमें विभक्त कर दिया गया था, जिनमेंसे एकमें हिंदुओंकी प्रधानता थी और दूसरेमें मुसलमानोंकी। इस विभाजनसे सारे भारतमें विरोधका तूफान खड़ा हो गया, जो ब्रिटिश मालके बहिष्कारके रूपमें प्रकट हुआ। अन्तमें सन् १९११में विभाजन रद कर दिया गया।

भर्त्सना और तीखी निन्दा करनेके सामर्थ्यसे लगाने लगेंगे तो यह उनकी भारी भूल होगी। सर मचरजी सरीखे व्यक्तियोकी अधिक नरम सम्मितियोका प्रभाव उत्तेजनशील परिवर्तनवादी लोगोंकी तीव्र अत्युक्तियोंसे कही अधिक होता है। भारतको पूर्ण न्यायकी प्राप्ति केवल शांति-युक्त तर्कजनित समाधानसे हो सकेगी; और इस कारण सर मंचरजी अपने देशवासियोंकी कृतघ्नताके भाजन होनेके तमाम लोगोंमे सबसे कम अधिकारी है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–१०–१९०५

१११. बहिष्कार

भारतसे हालमें आये हुए समुद्री तारो और अखबारोसे स्पष्ट है कि बंगालका बहिष्कार आन्दोलन यो ही अगौरवास्पद ढगसे बैठ नही जायेगा। यद्यपि अंग्रेजी मालके बहिष्कारके पीछे बहुत-कुछ जोर-जबर्दस्ती दिखाई देती है तथापि आन्दोलन इतना व्यापक है कि उससे पता चलता है कि वह जनताकी तीव्र भावनाका परिणाम है। बंग-भंगके विरुद्ध वर्तमान आन्दोलनका परिणाम चाहे जो हो, बहिष्कारका प्रभाव भारतके लिए हितकर ही होगा। इससे देशी उद्योगोको आश्चर्यजनक प्रोत्साहन मिला है। हमारा विश्वास है कि ये उद्योग निरन्तर बढ़ते ही जायेगे। यह परिणाम अप्रत्याशित है, परन्तु इसकी वाछनीयता तनिक भी कम महत्त्वपूर्ण नही है। भारतकी महती आवश्यकता यही है कि राष्ट्रीय विशेषताओको आश्रय दिया जाये और सुधारा जाये। यदि केवल भारतीय वस्तुओंके प्रयोगका सकल्प यथासम्भव स्थिर रखा जाये तो राष्ट्रीय भावनाके विकासमें इसकी सहायता कुछ कम नही होगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–१०–१९०५

११२. डॉक्टर बरनार्डो

गत मास डॉक्टर बरनार्डोके देहान्तकी खबर दुनिया-भरमें तारोंसे भेजी गई। ये डॉक्टर कौन थे, यह जाननेकी उत्सुकता हमारे पाठकोको अवश्य ही होगी। हम ऐसा समझकर उन भले डॉक्टरका जीवन वृत्तान्त इस अंकमें दे रहे है।

डॉक्टर बरनार्डो अनाथोके नाथ या पिता माने जाते थे। वे अपने जीवनके प्रारम्भ-कालमें बिना माँ-बापके बच्चोको देखकर बहुत निराश होते थे। परन्तु उनके पास कुछ भी साधन नही था। वे स्वयं गरीब आदमी थे। फिर भी उनके मनमें यह विचार आया कि अनाथ बच्चोंका पालन-पोषण करके उसीमें से अपना गुजर-बसर भी किया जाये।

"ऐरनकी चोरी करे, करे सुईको दान", इस कहावतके अनुसार हमारी इच्छा यह रहती है कि पहले बहुत-सा पैसा कमा लें और बादमें उसका अच्छा उपयोग करें। किन्तु ऐसा करते-करते बहुतोका पूरा जीवन ही निकल जाता है। कुछ लोग जब पैसे कमा लेते है तब अपने मनमें किया हुआ संकल्प भूल जाते हैं। दूसरे कुछ लोग पैसा कमा लेनेपर उन पैसोका अच्छा उपयोग क्या करें, यह नही समझ पाते और फिर उसे तरह तरहके कामोमें बरबाद करके

अच्छे काममें खर्च करनेका संतोष मान लेते हैं। चूँकि कोई अच्छा काम करनेका अनुभव नहीं होता; इसलिए वे स्वयं उनका कोई सदुपयोग नहीं कर पाते।

यह सब बुद्धिमान डॉक्टर बरनार्डोने देख लिया था। इससे उन्होंने यह विचार किया: "मेरा मन तो साफ है। जो लोग मुझपर विश्वास करके मुझे पैसा देंगे वे समझ सकेंगे कि मुझे अपना पेट भी इसके सहारे भरना चाहिए। लेकिन यदि मैं बिना माँ-बापके बालकोंका पालन-पोषण करूँगा तो उनकी अन्तरात्मा दुआ देगी। और लोग भी देख सकेंगे कि मेरा इरादा पैसा बटोरनेका नहीं है।" इस तरह दृढ़ सकल्प होकर ये बहादुर डॉक्टर काममें जुट गये और उन्होंने पहला अनाथाश्रम लन्दनके स्टीवेनी कॉजवेमें खोला। प्रारम्भमें तो सब लोगोंने उसका विरोध किया और कहने लगे कि यह तो धोखा देकर पैसे पैदा करनेका रास्ता निकाला गया है। डॉक्टर बरनार्डो इससे निराश नहीं हुए। उन्होंने अपनेपर श्रद्धा रखनेवाले लोगोसे चन्दा लेना शुरू किया। धीरे-धीरे बच्चे जमा होने लगे। वे आवारा बननेके बजाय पढ़े-लिखे, मेहनती तथा ईमानदार बने और रोजगारमें लग गये। इस प्रकार जितने भी बच्चे पले उन सभीने डॉक्टर बरनार्डोके आश्रमकी ख्याति बढ़ाई। उन बच्चोने महसूस किया कि स्वयं डॉक्टर बरनार्डो उनके माता-पिताकी अपेक्षा अधिक हिफाजत करते हैं। डॉक्टरने ऐसे आश्रम बढ़ाये और अन्तमें लन्दनसे छः मीलकी दूरीपर जंगलमें, एक गाँव बसाया। उस गाँवमें अच्छे मकानो और गिरजा-घर आदिका निर्माण किया और वह स्थान इस समय इतना प्रसिद्ध हो गया कि बहुत लोग उसको ऐसी पवित्र भावनासे देखने जाते हैं मानो तीर्थयात्रा करने जा रहे हों। उसकी ख्याति इतनी बढ़ गई है कि संसारके बहुत-से भागोंमें उस प्रकारके आश्रम बनाये गये हैं। इस प्रकार डॉक्टर बरनार्डोने अपनी जिन्दगीमें ५५,००० बालकोंकी परवरिश की थी। कुछ दुष्ट माँ-बाप इस सुविधाका अनुचित लाभ भी उठाते थे। वे अपने बच्चोंको रातमें मौका देखकर डॉक्टर बरनार्डोके अहातेमें डाल जाते थे। डॉक्टर बरनार्डो इससे भी हार नहीं मानते थे। वे उन बच्चोकी यत्नसे परवरिश करते और जब माँ-बाप अपने बालकोंको वापस माँगने आते तब उनको सौप देते थे। हर साल इन बच्चोंका मेला लन्दनके विशाल अल्बर्ट हालमें लगता है। हजारों मनुष्य इस मेलेको पैसे देकर देखनेके लिए हर साल आते हैं। डॉक्टरके देहान्तके बाद पता चला है कि उन्होंने अपने जीवनका ७०,००० पौंडका बीमा करवाया था। वसीयतनामेमें वह लिख गये हैं कि यह सारा धन उनके स्थापित किये हुए आश्रमोंके संचालनमें खर्च किया जाये।

डॉक्टर बरनार्डो ऐसे महान पुरुष थे। वे स्वयं धार्मिक और अत्यन्त दयालु थे। बीमा कराना आदि विचार हमारे धार्मिक मतसे अलग पड़ते हैं। फिर भी यह हमें कबूल करना चाहिए कि पश्चिमके उस प्रकारके रिवाजके अनुसार डॉक्टरने जो किया वह सूझ-बूझका काम था।

एक व्यक्ति गरीब होते हुए अपने उत्साह और अपने दया-भावके बलपर कितना काम कर सकता है, इसका डॉक्टर बरनार्डोने इस युगमें सर्वोत्तम उदाहरण उपस्थित किया है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७-१०-१९०५

११३. एक भारतीय कवि

श्री वार्डने हाली साहबके काव्योंका अनुवाद अंग्रेजीमें करके उनका नाम प्रसिद्ध किया है। कहा जाता है कि हाली साहबकी बराबरीका दूसरा कोई कवि नही है। उनका पूरा नाम मौलवी सैयद अलताफ हुसैन अनसारी है। उनका जन्म दिल्लीके पास पानीपतमें हुआ था। उनकी अधिकतर कविताएँ उर्दूमे है, यद्यपि फारसीमें भी उन्होने बहुत लिखा है। १८८७ की जयन्तीके[1] मौकेपर उन्होंने ऐसी उत्कृष्ट कविता लिखी कि वह सारे उत्तर भारतमे गूंज उठी। उन्होने जो कुछ लिखा है वह मौज-शौकके सम्बन्धमे नही लिखा वल्कि इस जमानेमे मुसलमानोका क्या फर्ज है, हिन्दू और मुसलमान दोनो आपसमे कैसा बरताव रखे और खुदाको किस तरह पहचाना जाये इत्यादि उपयोगी विषयोपर लिखा है। लाहौरके सेठ अब्दुल कादिर लिखते है कि वे जब मदरसेमे थे तब उनका काव्य पढते थे और जब बड़े हुए तब भी पढ़ते थे। वे उसे अपनी सभाओमे भी गाते थे और अब अपनी अंजुमनोमें भी सुनते है; फिर भी वे उसे पढ़ते और सुनते थकते नही है। हाली साहबने शेख सादीका[2] जीवन-वृत्तान्त बहुत सुन्दर भाषामें लिखा है। प्रोफेसर मॉरिसन उनकी रचनाओके सम्बन्धमे लिखते है कि अमीर मुसलमानोने कौमके लिए जितना किया है उससे ज्यादा इस एक गरीब कविने किया है। सरकारने उनकी कौमके प्रति की गई सेवाओंकी कद्र करनेके लिए उनको शम्स-उल-उलेमाका खिताब दिया है। हमें दुःख है कि उनके उर्दू काव्य हमारे हाथमे नही है। लेकिन हम अपने पाठकोसे सिफारिश करते है कि वे उनके काव्य मँगवा कर पढे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–१०–१९०५

११४. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
अक्तूबर ७, १९०५

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। कार्यालय बदल दिया, यह ठीक किया। प्लेगके बाबत स्वच्छता रखनेकी सीख देते रहना। हेमचन्दने कहाँ रहना तय किया है, सो लिखना। उसके सम्बन्धमे हमारे बीच गलतफहमी हो गई है। लेकिन मैने तुम्हे संक्षेपमें बताया था, इसलिए मै अपना दोष मानता हूँ। वेस्टको पत्र लिखा है। अधिक उसमें देख लेना। हेमचन्द काममें पूरा सन्तोष देता है या नहीं, लिखना। रामनाथ कहाँ है? उसे चि० जयशंकरके सुपुर्द किया या नही? जयशंकरके पास आदमियोंकी वड़ी तगी है। साथके पतेपर 'ओपिनियन' भेजो। उसके पैसे मै यहीं वसूल करूँगा। मेरे खाते नामे लिख लेना।

मर्क्युरी लेनमे कार्यालय ले जानेसे क्या हिन्दी ग्राहकोंकी संख्यामें फर्क नही पड़ेगा? अब्दुल-कादिर सेठने कुछ कहा? फील्ड स्ट्रीट या ग्रे स्ट्रीटमें कार्यालयके लिए जगह क्यो नही ढूँढ़ी?

गुजराती सामग्री आज भेज रहा हूँ। ज्यादा कल भेजूंगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोमे गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ४२५८) से।

१. महारानी विक्टोरियाके शासनकी स्वर्ण जयन्ती।

२. १३वीं शताब्दीका एक फारसी महाकवि।

११५. मानपत्र[1] : लॉर्ड सेल्बोर्नको

[पाँचेफस्ट्रम
अक्तूबर ९, १९०५ से पूर्व]

परमश्रेष्ठकी सेवामें,

हम नीचे, हस्ताक्षर करनेवाले, पाँचेफस्ट्रम-निवासी ब्रिटिश भारतीयोंके प्रतिनिधि, इस ऐतिहासिक नगरमें परमश्रेष्ठका हार्दिक और निष्ठाके साथ स्वागत करते हैं।

हम आशा करते हैं कि आप पाँचेफस्ट्रमके लोगोंके बीच अपने निवासकी सुखद स्मृतियाँ अपने साथ ले जायेंगे।

पाँचेफस्ट्रममें हम जिन कठिनाइयोंसे पीड़ित हैं वे ब्रिटिश भारतीयोंके लिए ट्रान्सवालमें सर्वत्र एक जैसी हैं। पाँचेफस्ट्रममें ब्रिटिश भारतीयोंके विरुद्ध, उनके रहन-सहनके तरीके और उनकी व्यापारिक जगहोंकी देखभालके बारेमें, एक अभियोग[2] लगाया गया है। इन जगहोंका निरीक्षण करने और उनके बारेमें स्वयं निष्कर्ष निकालनेके लिए हम परमश्रेष्ठको सादर निमन्त्रित करनेका साहस करते हैं। हम यथासम्भव अपना आचरण स्थानीय रीति-रिवाजोंके अनुसार बनाने और लोक-भावनाको सन्तुष्ट करनेके लिए अत्यन्त चिन्तित हैं। हम केवल इतना ही चाहते हैं कि वर्ग-विधान बनाये बिना, जरूरी समझे जानेवाले सामान्य सफाई तथा अन्य नियमित सामान्य विनियमोंके अन्तर्गत, हमें यात्रा, व्यापार, निवास और सम्पत्तिके स्वामित्वकी स्वतन्त्रता हो।

हम परमश्रेष्ठकी सेवामें इस सम्पूर्ण विश्वासके साथ उपस्थित हो रहे हैं कि श्रीमानके हाथों हमें न्याय मिलेगा।

हम आपसे प्रार्थना करते हैं कि आप परम दयालु महामहिम सम्राट और सम्राज्ञीकी सेवामें हमारे भक्तिपूर्ण भाव निवेदित कर दें।

एस० डी० रॉबर्ट, अध्यक्ष
ई० एच० गेट्टा
ई० एम० पटेल
एम० ई० नानाभाई
हाजी उमर
ए० ई० गंगाट
ए० एम० कासिम
हासिम तैयब
ए० जी० साले महम्मद
इब्राहीम ब्रदर्स
मूसा हसन
डी० आई० वरियावा
ए० रहमान, मन्त्री

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-१०-१९०५

१. यह मानपत्र पाँचेफस्ट्रमके भारतीय संघ द्वारा दिया गया था। ऐसे ही मानपत्र रस्टेनबर्ग, क्लार्क्सडॉर्प और क्रूगर्सडॉर्पमें दिये गये थे। देखिये, 'लॉर्ड सेल्बोर्नकी यात्रा', इंडियन ओपिनियन, १४-१०-१९०५।

२. पाँचेफस्ट्रमके पहरेदार संघ द्वारा।

११६. पाँचेफस्ट्रूमके भारतीयोंका वक्तव्य[1]

[पाँचेफस्ट्रूम
अक्टूबर ९, १९०५ से पूर्व]

परमश्रेष्ठकी सेवामें निवेदन है कि,

यदि हमें यह पता न होता कि तथाकथित एशियाई-विरोधी पहरेदार संघकी ओरसे आपकी सेवामें, विशेषत: पाँचेफस्ट्रूमके-ब्रिटिश भारतीयोंके सम्बन्धमें, प्रार्थनापत्र पेश किया जायेगा तो हम परमश्रेष्ठको किसी भी प्रकारका कष्ट न देते; विशेषत: इस कारण कि हम जानते हैं कि परम-श्रेष्ठ शीघ्र ही जोहानिसबर्गमें ब्रिटिश भारतीय संघके एक शिष्टमण्डलसे मिलनेवाले हैं।

श्री लवडेने कहा है कि पाँचेफस्ट्रूममें नेटालसे गिरमिटिया भारतीय उमड़े चले आ रहे हैं। इसका हम प्रबल प्रतिवाद करना चाहते हैं। हममें से कुछ लोग नेटालके कानूनसे परिचित हैं, और हम जानते हैं कि किसी भी गिरमिटिया भारतीयके लिए बच कर आना प्रायः असम्भव है। कुछ भी हो, इस बयानको सच्चा सिद्ध करनेके लिए अभीतक एक भी उदाहरण नहीं दिया गया है।

जोहानिसबर्गके महापौरने, जब वे यहाँ थे, एक और बात कही थी। उन्होंने कहा बताते है कि जहाँ एशियाइयोंको युद्धसे पहले व्यापारियोंके उन्नीस परवाने दिये गये थे, वहाँ अब उनको छियानवे परवाने व्यापारियोंके और सैंतीस फेरीवालोंके प्राप्त हैं। जहाँतक व्यापारियोंका सम्बन्ध है, यह कथन सत्य नहीं है। हमने युद्धसे पहले ब्रिटिश एजेंटको पाँचेफस्ट्रूम नगरके ब्रिटिश भारतीय व्यापारियोंकी एक सूची दी थी, और तब इस नगरमें ब्रिटिश भारतीयोंकी बाईस दूकानें थीं। जिलेके अन्य स्थानोंमें जो दूकानें थी सो अलग। ब्रिटिश एजेंटको जो सूची दी गई थी उसकी नकल हमारे पास है और हम आज भी न केवल उनके नाम बता सकते हैं, बल्कि प्रत्येकका पता भी दे सकते हैं। श्री गॉश युद्धसे पहलेके उन्नीस परवानोंके सिलसिलेमें अब व्यापारियोंके छियानवे परवानोंका जिक्र करते हैं। हम समझते है कि उनका मतलब यह है कि ये छियानवे परवाने पाँचेफस्ट्रूम नगरके ही हैं। यदि ऐसी बात हो तो यह सर्वथा असत्य है। आज इस नगरमें ब्रिटिश भारतीयोंकी केवल चौबीस दूकानें हैं। हम यह बात पूरी जिम्मेदारी और जानकारीके साथ कह रहे हैं, और अपने निन्दकोंको इसे अन्यथा सिद्ध करनेकी चुनौती देते हैं।

तीसरी बात जो पाँचेफस्ट्रूममें हमारे विरुद्ध कही गई है वह यह है कि हमारे मकान और दूकान गन्दे रहते हैं। यों तो इनकी हालत देखनेसे अपने आप मालूम हो जाता है, परन्तु जब यह आक्षेप किया गया तब हमने अपनी जगहें पाँचेफस्ट्रूमके जिला-सर्जनको दिखलाई थीं और उसने यह रिपोर्ट दी थी:

> मुझे यह कहते खुशी होती है कि विभिन्न अहातोंको देखनेपर, मेरे मनपर हर जगहका बहुत अच्छा असर पड़ा। मैंने अन्दरसे और बाहरसे भी देखा है। कुल बातोंका खयाल करते हुए, पीछेके ऑगन बिलकुल साफ और स्वास्थ्यकर हैं। मैंने कूड़ेके ढेर लगे नहीं

१. यह पाँचेफस्ट्रूम भारतीय संघके मन्त्री श्री अब्दुल रहमानने लॉर्ड सेल्बोर्नको मानपत्र देनेके बाद पढ़कर सुनाया था।

देखे। मुझे मालूम हुआ कि सारा कूड़ा रोजाना ठेकेदार ले जाया करता है। शहरके दूसरे हिस्सोंके समान यहाँ बाल्टी-पद्धति काममें लायी जाती है। इसकी भी कमाईका प्रबन्ध है, जो सफाई विभाग द्वारा किया जाता है। मैंने जो-कुछ देखा उसमें मैं कोई दोष नहीं बता सकता। जहाँतक सोनेके स्थानकी बात है, मुझे कोई भीड़-भाड़ दिखलाई नहीं पड़ती। प्रत्येक व्यापार-स्थानके पीछे, उससे अलग, मैंने एक प्रकारका भोजनगृह-सा देखा, जिसमें ५ से ८ आदमियों तक के बैठनेका स्थान है और हरएकमें उसका रसोईघर है। ये सब भी साफ-सुथरे रखे जाते हैं।

हमने इन बातोंका जिक्र यह दिखानेके लिए किया है कि हमें कैसी विपरीत परिस्थितियोंका सामना करना पड़ रहा है, और हमारे विरुद्ध कैसी-कैसी गलत बातें कही जाती हैं। हम निःसंकोच कह सकते है कि इस सारे एशियाई-विरोधी आन्दोलनका कारण व्यापारिक ईर्ष्या है। गोरे दूकानदारोंके साथ अनुचित प्रतिस्पर्धामे उतरनेकी हमारी तनिक भी इच्छा नहीं है।

हमारे रहन-सहनके तरीकोके विरुद्ध बहुत-कुछ कहा गया है। हमें इस बातका अभिमान है कि हमारी आदतें सीधी-सादी और संयत हैं, और यदि उनके कारण हमें प्रतिस्पर्धी गोरे व्यापारियोंकी तुलनामें कोई लाभ हो जाता है तो हम किसी प्रकार यह नहीं समझ सकते कि हमारी निन्दा करने और हमें गिरानेके लिए उसका उपयोग हमारे विरुद्ध क्यों किया जाता है। जो लोग हमारी निन्दा करते है वे इस प्रसगमें यह बिलकुल भूल जाते है कि गोरे व्यापारियोंको अनेक ऐसे लाभ होते है जिनको हम स्वप्नमें भी प्राप्त नही कर सकते। उदाहरणार्थ, यूरोपीयोके साथ उनके सम्बन्ध, उनकी अंग्रेजी भाषाकी जानकारी और उनकी अच्छी संगठन-शक्ति। इसके अतिरिक्त, हम अपना व्यापार, केवल इस कारण कर सकते है कि गरीब गोरोंकी हमारे प्रति सद्भावना है और हम गरीबसे गरीब ग्राहकोंको सन्तुष्ट कर सकते हैं। हमें थोकफरोश यूरोपीय व्यापारियोंकी सहायता भी प्राप्त है। कहा गया है कि हमारे मुकाबलेके कारण बहुत-सी यूरोपीय दूकानें बन्द हो गई। हम इसका खण्डन करते है। पहली बात तो यह है कि जो दूकाने बन्द हुई है उनमें से कई ऐसी थी कि उनसे सम्भवतः हमारी स्पर्धा हो ही नहीं सकती थी; जैसे कि नाइयोंकी दूकानें आदि। कुछ साधारण माल बेचनेवाली दूकानें भी अवश्य बन्द हुई है, परन्तु उनके बन्द होनेका सम्बन्ध एशियाई मुकाबलेके साथ जोड़ना वैसा ही अनुचित है जैसा कि इस शहरमें कुछ एशियाई दूकानोके बन्द होनेका सम्बन्ध यूरोपीय मुकाबलेके साथ जोड़ना। इस समय सारे दक्षिण आफ्रिकामें व्यापारिक मन्दी है, और इसका फल यह हुआ है कि युद्धके तुरन्त पश्चात् आवश्यकतासे अधिक जो व्यापार शुरू कर दिये गये थे वे समाप्त हो गये, क्योंकि उन्हें भारी अपेक्षाओंके आधारपर शुरू किया गया था, जो कभी पूरी नही हुईं।

क्या हम यह निवेदन कर सकते हैं कि हमारे विरुद्ध बहुत-सा आन्दोलन असली ब्रिटिश प्रजाजनों द्वारा नही किया जा रहा, प्रत्युत उन विदेशियों द्वारा किया जा रहा है जिन्हे वस्तुतः हमसे बहुत कम शिकायत हो सकती है। हमको नगरसे निकालनेके लिए जो नीति अपनाई गई है वह संताप और अपमानोकी नीति है, जो तुच्छ होनेपर भी इतने कटु है कि हम उन्हें बहुत ज्यादा महसूस करते हैं।

डाकघरोंमें तनिक भी कारणके बिना हमारे लिए पृथक् खिड़कियाँ नियत कर दी गई है। जिस उद्यानको "सार्वजनिक" उद्यान कहा जाता है और जिसकी सार-सँभाल अन्य नागरिकोके साथ-साथ हमसे भी वसूल किये गये करोसे की जाती है, उसकी खुली हवामें साँसतक

लेना हमारे लिए निषिद्ध है। हम इन उदाहरणोंका जिक्र परमश्रेष्ठका ध्यान उस विषम स्थितिकी ओर खींचनेके लिए कर रहे है जिसमें हम, निर्दोष होनेपर भी, डाल दिये गये है। हमें लांछित और अपमानित करनेका कोई भी अवसर हाथसे जाने नही दिया जाता। हम ऐसे अन्य उदाहरण देकर परमश्रेष्ठको परेशान करना नही चाहते। परन्तु हमारा निवेदन यह है कि ब्रिटिश सरकारसे यह आशा रखनेका हमें अधिकार है कि वह इस अपमानसे हमारी रक्षा करेगी और हमारे लिए उस स्वतन्त्रताको सुनिश्चित करायेगी जिसके उपभोगके हम, राजभक्त ब्रिटिश प्रजाकी हैसियतसे, जहाँ-कहीं भी ब्रिटिश ध्वज फहराता है वहाँ सर्वत्र, अधिकारी हैं।

परमश्रेष्ठने हमारा निवेदन धैर्यपूर्वक सुना, इसके लिए हम उनका नम्रतापूर्वक धन्यवाद करते है, और अन्तमें आशा करते है कि परमश्रेष्ठके इस नगरमें पधारनेके फलस्वरूप हमारी स्थिति सुधरेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-१०-१९०५

११७. लॉर्ड सेल्बोर्न और ट्रान्सवालके भारतीय

परमश्रेष्ठ उच्चायुक्तने अपने ट्रान्सवालके दौरेमें, इस उपनिवेशमें ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थितिके विषयमें दो बहुत महत्त्वपूर्ण भाषण दिये हैं। इनमें उनका पॉचेफस्ट्रूमका भाषण, जो अन्यत्र प्रकाशित किया गया है, अधिक महत्त्वपूर्ण है। लॉर्ड सेल्बोर्नने उसमें बताया है कि उन्होंने अपने अल्पवासमें इस प्रश्नका अध्ययन किया है। उन्हें सरकारकी प्रतिष्ठा बहुत प्यारी है, और वे मानते है कि युद्धसे पहले ब्रिटिश भारतीयोंको जो वचन दिये गये थे वे पूरे करने होंगे। यह देखकर हमें और भी प्रसन्नता हुई कि लॉर्ड महोदयने भारतीय घोषणा[1] का अर्थ यह लगाया है कि उससे सारी दुनियामें भारतीयोके पूर्ण ब्रिटिश प्रजाके अधिकार सुरक्षित होते हैं। इस सबके लिए, और इससे भी बहुत अधिकके लिए, हम सचमुच परमश्रेष्ठके कृतज्ञ है। जब परस्पर-विरोधी स्वार्थोंके बीच न्याय करनेकी इतनी स्पष्ट इच्छा विद्यमान है तब इस आशाके लिए भी काफी गुंजाइश है कि निकट भविष्यमें इस कठिन समस्याका ऐसा हल निकल आयेगा, जो सबको स्वीकृत होगा।

परन्तु एक बातसे, जिसका लॉर्ड सेल्बोर्नने वचन दिया बताते है, हमें बड़ी बेचैनी हो रही है। खबरके अनुसार, उन्होंने ये शब्द कहे:

> **युद्धसे पहले जो भारतीय यहाँ नहीं थे उन्हें यहाँ तबतक नहीं आने दिया जायेगा जबतक आपकी अपनी संसद नहीं हो जायेगी, और आप अपनी सम्मति अपने प्रतिनिधियों द्वारा प्रकट नहीं कर सकेंगे। यह वचन मैं आपको आपके गवर्नर और उच्चायुक्तकी हैसियतसे देता हूँ।**

हमें निश्चय है कि परमश्रेष्ठने जब यह वचन दिया तब वे इसकी पूर्तिके परिणामोका अन्दाज भली प्रकार नही लगा सके होंगे। जो भारतीय इस देशमें पहलेसे बसे हुए हैं और अबसे आगे जिनके आनेकी सम्भावना है, उनमें फर्क करनेकी परमश्रेष्ठको बड़ी चिन्ता है।

१. महारानी विक्टोरियाकी १८५८की घोषणा।

उन्होंने अपने श्रोताओंको पुराने बसे हुए भारतीयोंके साथ उचित व्यवहार करनेकी आवश्यकता समझाई। अब, भारतीय व्यापारी अपनी विश्वसनीय मुंशियों, प्रबन्धकों और अन्य विश्वासी कर्मचारियोंकी आवश्यकताकी पूर्ति भारतसे ही कर सकते हैं, इस सचाईका विश्वास करवानेके लिए इसका जिक्र-भर कर देना काफी है। इन सुविधाओंके बिना, उनके लिए सुरक्षापूर्वक व्यापार चलाते रहना प्रायः असम्भव है। तो क्या हम यह समझें कि जबतक ट्रान्सवालकी भावी संसद दूसरा निर्णय नहीं कर देती तबतक भारतीय व्यापारको, विश्वासी आदमियोंके अभावमें संकटग्रस्त रख, घुटने टेक देनेके लिए विवश किया जायेगा?

परमश्रेष्ठने यह भी कहा है कि भारतीयोंको गोरोंके साथ अनियंत्रित प्रतिस्पर्धा करते चले जाने देना व्यावहारिक राजनीतिज्ञताकी बात नहीं है। हमने इस प्रस्तावपर इस पत्रमें बहुधा विचार किया है, और हम समझते हैं कि हम इसका खोखलापन दिखला चुके हैं। इसमें जो कुछ सत्य है उसे भारतीय मान चुके हैं, और जो सत्य नहीं है, उसका एकमात्र कारण व्यापारिक ईर्ष्या है। यह स्पष्ट कर दिये जानेके बाद कि नये परवाने देनेका अधिकार, उचित संरक्षणोंके साथ, प्रधानतया व्यापारियों द्वारा गठित स्थानीय निकायोंको ही होगा, भारतीय स्थितिका औचित्य अत्यन्त विद्वेषी व्यक्तियोंके अतिरिक्त, सबको स्पष्ट हो जाना चाहिए। परन्तु वे एशियाई-विरोधी लोग, जो एक-एक भारतीयको इस उपनिवेशसे निकाल बाहर करने पर तुले हुए हैं, तबतक सन्तुष्ट नहीं होंगे जबतक उन्हें भारतीयोंका जीवन बिलकुल असह्य बनानेमें सफलता नहीं मिल जायेगी। लॉर्ड सेल्बोर्नसे इस प्रकारके प्रयत्नोंके विरुद्ध अपनी रक्षाकी आशा करना भारतीयोंका अधिकार है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-१०-१९०५

११८. लॉर्ड सेल्बोर्नका आगमन

सप्ताहका अधिकांश नेटालमें[1] व्यतीत करनेके बाद लॉर्ड सेल्बोर्न आज डर्बन पहुँच रहे हैं। ब्रिटिश भारतीय समाजके अन्य सदस्योंके साथ-साथ हम अत्यन्त विनम्र भावसे उनका नम्रतापूर्वक स्वागत करते हैं। लॉर्ड सेल्बोर्नको दक्षिण आफ्रिकामें आये थोड़ा ही समय हुआ है; परन्तु उनको अभीसे सभी श्रेणियोंके लोगोंका यह विश्वास प्राप्त हो गया है कि वे बिना किसी भय या मुलाहिजेके प्रत्येक व्यक्तिके प्रति अपना कर्तव्य निभायेंगे। परमश्रेष्ठ अनेक प्रकारसे नेटालको अन्य ब्रिटिश उपनिवेशोंसे भिन्न पायेंगे। नेटालमें अध्ययनके लिए कुछ मनोरंजक समस्याएँ उपस्थित हैं। इसका कारण यह है कि उसमें वतनी लोगोंकी बड़ी आबादी है और गोरे लोग अपेक्षाकृत बहुत कम संख्यामें हैं, जो अपने मुख्य उद्योग-धंधोंके लिए भारतीय गिरमिटियोंकी बहुत बड़ी आबादीपर निर्भर हैं। इन गिरमिटिया भारतीयोंकी उपस्थितिने स्वभावतः व्यापारी वर्गके भारतीयोंको इस उपनिवेशमें आकर्षित किया है। हमारा विश्वास है कि लॉर्ड सेल्बोर्न अपने अल्पकालिक प्रवासमें अपने बहुमूल्य समयके कुछ क्षण उन नेटालवासी ब्रिटिश भारतीयोंको समझनेमें लगायेंगे, जो सभीकी रायमें सम्राटकी प्रजाके सर्वाधिक राजभक्त और कानूनका पालन

१. स्पष्टतः, भूलसे "ट्रान्सवाल" के स्थानपर "नेटाल" लिखा गया है। लॉर्ड सेल्बोर्नने ट्रान्सवालके भ्रमणमें इस सप्ताहका प्रारंभिक भाग व्यतीत किया था। देखिए पिछला शीर्षक।

करनेवाले अंग हैं। शेष भारतीय समाजके साथ हम भी यह आशा करते हैं कि परमश्रेष्ठ तथा उनका परिवार इस सुरम्य उपनिवेशमें रहते हुए प्रसन्नता अनुभव करेंगे और अपने साथ इसकी मधुर स्मृतियाँ ले जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४–१०–१९०५

११९. गिल्टीवाला प्लेग

प्लेगने अड्डा जमा लिया है। यह एक वार्षिक दूत है, जो वर्ष-प्रतिवर्ष आकर अन्धकार, गन्दगी और अति घनी वस्तीके विरुद्ध चेतावनी दे जाता है। यह जहाँ-कहीं एक बार दिखाई पड़ा वहाँ अबतक, विना चूके, थोड़ी-बहुत नियमिततासे फिर-फिर आता रहा है। खबर मिली है कि यह चिन्दे[1] तक पहुँच गया है। वहाँसे डर्बन बहुत दूर नहीं है। इसलिए प्रत्येक अच्छे नागरिकको चाहिए कि वह इस राक्षसको पास न फटकने देनेके लिए आवश्यक एहतियात रखे। इस सचाईको छिपाना नहीं चाहिए कि भारतीय अन्य जातियोंकी अपेक्षा प्लेगकी विनाश-लीलाके शिकार ज्यादा होते हैं, ठीक वैसे ही जैसे गोरोको मोतीझरा होनेकी सम्भावना भारतीयोकी अपेक्षा ज्यादा रहती है। इस कारण भारतीयोंको दुगुनी सावधानी रखनी चाहिए। घरों और दूकानोंके आसपासके स्थान पूरी तरह साफ रखे जाने चाहिए। लोगोंको जितनी भी हो सके उतनी रोशनी, धूप और हवा मिलनी चाहिए; और सभी सन्दिग्ध मामले तुरन्त ही अधिकारियोको सूचित कर देने चाहिए। [रोग एक बार आ चुकनेके बाद बहुत-सा खर्च करने, बल्कि यों कहना चाहिए धन बरबाद करनेकी अपेक्षा ये कुछ सरल सावधानियाँ बरतना कहीं अधिक प्रभावशाली सिद्ध होगा। इस सम्बन्धमें भारतीय समाजके नेताओंका कर्तव्य स्पष्ट है। प्रत्येक शिक्षित भारतीयको एक अनुपम अवसर प्राप्त है; वह स्वास्थ्य और सफाईका प्रचारक बन सकता है।]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४–१०–१९०५

१२०. नमक-कर

अफवाह है कि आगामी नवम्बर मासमें युवराज (प्रिंस ऑफ वेल्स) की भारत-यात्राके समय उस राजकीय यात्राकी याद हमेशा कायम रखने और साथ-साथ भारतके लोगोंको सन्तोष देनेके लिए नमक-कर बिलकुल माफ कर दिया जायेगा। प्रत्येक भारतीय हृदयसे चाहेगा कि इस अफवाहकी बुनियाद मजबूत हो और यह सही निकले।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४–१०–१९०५

१. डर्बनसे कोई ८०० मील उत्तर पुर्तगाली पूर्वी आफ्रिकाका एक बन्दरगाह।

१२१. सर हेनरी लॉरेंस

इस महान पुरुषका जन्म श्रीलंकामे १८०६ के जूनकी २८ तारीखको हुआ था। वह मथुरा[1] शहरमें जन्मा था, इसलिए उसकी माँने विनोदमें उसका नाम "मथुराका रत्न" रख दिया और वह सचमुच हीरा ही निकला। सन् १८२३ मे वह कलकत्ता आया और बंगाल तोपची पल्टनमें नौकर हो गया। उसको जिम्मेवारीका पहला काम बर्माकी पहली लड़ाईमें[2] दिया गया। इस लड़ाईमें अपना कर्त्तव्य पूरा करते-करते वह बीमार पड़ गया और उसे विलायत जाना पड़ा। वहाँ उसने अपना समय खेल-कूदमें नष्ट करनेके बजाय अध्ययनमें बिताया। सन् १८३० में वह दुबारा भारतमें आया और अपनी पल्टनमें शामिल हो गया। उस समय उसने हिन्दुस्तानी और फारसीका अध्ययन किया। वह अपना निजी समय एकान्तमें बिताता। इसका एक कारण यह था कि वह अपनी माँ के लिए यथासम्भव रुपया बचाना चाहता था। उसको इस बार बहुत बड़ी जिम्मेदारीका काम दिया गया। उसने इसमे अपनी बीमारीके समय इंग्लैडमें जो कुछ सीखा था उसका पूरा उपयोग किया। उसको पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्तमें लोगोंपर कर लगानेके सम्बन्धमें सर्वेक्षणका काम सौपा गया। लॉरेंसके असली गुण इस समय प्रकाशमें आये। वह सैनिक था, फिर भी उसका हृदय बड़ा कोमल और दयालु था। उसे सर्वेक्षणका काम करते हुए गरीब लोगोंके सम्पर्कमें आनेका मौका मिला। इससे वह वहाँके लोगोकी भावना और रस्म-रिवाजोंको समझ सका। वह लोगोंके साथ समानताका भाव रखकर मिलता-जुलता था। वह स्वयं अत्यन्त परिश्रमी और बड़े जीवटका व्यक्ति था; इसलिए उसके मातहतोंमें जो लोग आलसी थे वे उससे द्वेष करते थे। जो आदमी काम न करता उसपर सख्ती करनेमें वह हिचकिचाता नहीं था। एक बार एक सर्वेक्षकने एक बड़ी भूल की। उस भूलको सुधारनेके लिए लॉरेन्सने उसको वहाँ दुबारा जानेका आदेश दिया। उसे जहाँ जाना था वह स्थान दस मील दूर था, इसलिए उसने वहाँ जानेमें आनाकानी की। तब लॉरेंसने उसे डोलीमे बैठाकर भिजवाया। किन्तु वह व्यक्ति जिद्दी था इसलिए इतना होनेपर भी उसने काम करनेसे इनकार कर दिया। तब लॉरेंसने उसको एक आमके पेड़पर बिठा दिया और नीचे नंगी तलवारें देकर दो पहरेदार खड़े कर दिये। सर्वेक्षक जब भूख और प्याससे व्याकुल हो गया तब उसने लॉरेंस साहबसे क्षमा माँगते हुए काम करना मंजूर किया और नीचे उतरनेकी अनुमति माँगी। इसके बाद वह सुधर गया और लॉरेंसकी मातहतीमें बहुत अच्छा काम करने लगा।

हम लोगोंने सुना है कि पुराने जमानेमें भाई-भाईके लिए, मित्र-मित्रके लिए, माँ-बेटेके लिए, बेटा माँ-बापके लिए और स्त्री पुरुषके लिए प्राण देनेको तैयार रहते थे। वही लॉरेंसने इस जमानेमें करके बताया है। अफगानिस्तानकी लड़ाईमें उसका बडा भाई गिरफ्तार हो गया। अफगान सरदारने उसको कुछ दिनकी छुट्टी दी। छुट्टी पूरी होनेपर वह लौटकर जानेके लिए बँधा था। भाईकी सेवाएँ अधिक उपयोगी है, ऐसा सोचकर लॉरेंसने उसके बदले खुद जेलमें जानेका प्रस्ताव किया। यह उसके भाईने स्वीकार नही किया; परन्तु लॉरेंस जो कह चुका था वह करके रहा।

१. श्रीलंकाके दक्षिण तटपर एक बन्दरगाह।

२. १८२४–६।

जब लॉरेंस नेपालमें राजदूत बना, उस समय उसकी भली पत्नी अपना जीवन भलाईके कामोंमें बिताया करती थी। उन दोनोंने मिलकर अपने धनसे यूरोपीय सैनिकोंके बच्चोंके संवर्धन तथा शिक्षा-दीक्षाके लिए हिमालयकी तराईमें एक विशाल सदन बनवाया। उसके बाद तो ऐसे सदन भारतमें जगह-जगह बनाये गये हैं; और उन सभीको "लॉरेंस सदन" कहा जाता है। सन् १८४६ में सिख-युद्ध हुआ। इसमें लॉरेंसने बड़ी बहादुरी दिखाई। इस समय उसकी पत्नी बीमार थी। उसे युद्धपर जानेका आदेश मिला। आदेशके मिलते ही बीमार स्त्रीको छोड़कर वह चौबीस घंटेके अंदर युद्धमें जानेके लिए तैयार हो गया। युद्धके बाद शाही राजदूतके रूपमें उसने लाहौरमें बड़ा अच्छा काम किया। इससे उसको 'सर' का खिताब दिया गया। सन् १८४९ में जब पंजाब जोड़ देनेका इरादा हुआ तब लॉर्ड डलहौजी जैसे गवर्नर जनरलके साथ अकेले लॉरेंसने टक्कर ली। वह अपनी बातमें सफल नहीं हुआ। फिर भी गवर्नर जनरलको उसपर इतना अधिक विश्वास था कि उसने पंजाबमें मुख्य उत्तरदायित्वका काम उसीको सौंपा। वह सिख लोगोंके बड़े घनिष्ठ सम्पर्कमें आया था। वे लोग उसे बहुत चाहते थे। इसीसे पंजाब शान्त हुआ।

लॉरेंसने सबसे महत्त्वपूर्ण काम १८५७ के विप्लवके समय किया। इस समय तक लॉरेंसका स्वास्थ्य टूट चुका था और उसको छुट्टी मंजूर कर दी गई थी। फिर भी गदर शुरू हो जानेसे वह अपनी छुट्टीका लाभ न लेकर लखनऊ गया। कहा जाता है कि उसकी सूझबूझ और बहादुरीकी बदौलत सैनिक उसे बहुत मानते थे। इसीसे लखनऊमें अंग्रेजोंकी इज्जत बची। लखनऊके घेरेमें ९२७ यूरोपीय और ७६५ देशी सैनिक थे। लॉरेंस दिन-रात काम करता था और घिरे हुए लोगोंसे भी काम लेता था। जिस कोठरीमें वह बैठकर काम करता था उसीपर गोले जाकर गिरते थे और वह उनकी परवाह नहीं करता था। १८५७ की जुलाईकी दूसरी तारीखको गोलेके एक टुकड़ेसे वह जख्मी हो गया। डॉक्टरोंने उससे कहा कि घाव घातक है और उसका ४८ घंटेसे अधिक जिन्दा रहना संभव नहीं है। इस समय उसको असहनीय कष्ट हो रहा था, फिर भी वह आदेश देता रहा और ४ तारीखको इस प्रार्थनाके साथ उसने अपने प्राण त्याग दिये: "हे परमेश्वर, तू मेरा दिल साफ रख। तू ही महान है। तेरा यह जगत किसी दिन जरूर पाप-रहित होगा। मैं स्वयं बालक हूँ, परन्तु तेरे बलसे बलवान बन सकता हूँ। तू मुझे सदैव नम्रता, न्याय, सुविचार और शान्ति सिखाना। मैं मनुष्योंके विचार नहीं चाहता। तू मेरा न्यायाधीश है और तू मुझे अपने विचार सिखाना, क्योंकि मैं तुझसे डरता हूँ।" वह भारतीयोंसे बहुत प्रेम करता था। विद्रोहके समय जो अत्याचार किये जाते थे वह उनकी बहुत निन्दा करता था और वह मानता था कि प्रत्येक अंग्रेज भारतका न्यासी है। न्यासीके रूपमें अंग्रेजोंका काम भारतको लूटना नहीं, बल्कि लोगोंको समृद्ध बनाना, स्वशासन सिखाना और देशको खुशहाल कर भारतीयोंको सौंप देना है। लॉरेंस जैसे व्यक्ति अंग्रेज जातिमें पैदा हुए हैं, इसीसे वह आगे बढ़ी है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-१०-१९०५

१२२. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
अक्टूबर १८, १९०५

चि० छगनलाल,

मुझे श्री किचिनका तार मिला है। वे चाहते हैं कि मैं यहाँसे ऐसे रवाना होऊँ जिससे कमसे कम रविवारको फीनिक्समें रह सकूँ। उनका कहना है कि उन्होंने पत्र भी भेजा है जो शायद कल शाम तक मिलेगा। मैं पत्र देख लेनेपर आने-न-आनेका निर्णय करूँगा। अगर आया तो शुक्रवारके सवेरे रवाना होकर वहाँ[1] दोपहरको १ बजकर १६ मिनटपर पहुँचूंगा और १–२० पर फीनिक्सकी गाड़ी पकड़ूँगा। तुम स्टेशनपर आ जाना और मेरा टिकिट लेकर तैयार रहना। अपना टिकिट वापसी खरीद सकते हो। सोमवारको पहली गाड़ीसे मुझे फीनिक्ससे चल देना चाहिए। डर्बनके मुवक्किल कुड़कुड़ायेंगे; मगर क्या किया जाये! तुम्हें मुझसे जो कुछ पूछना हो सब कागजपर लिख रखना, ताकि करने या कहनेकी कोई बात छूट न जाये। डर्बनमें लोगोंको खबर कर सकते हो कि मुझे सम्भवतः इस तरह लौटना है और उन्हें यह भी कहना कि सोमवारको कुछ घंटे छोड़कर उन्हें ज्यादा वक्त देना मुमकिन नहीं है। मेरे लिए अधिक रुकना गैर-मुमकिन है। मुझे कुछ और कहना जरूरी नहीं है। श्री वेस्ट और दूसरे लोगोंको सूचना दे देना।

तुम्हारा शुभचिन्तक
मो० क० गांधी

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
मारफत **इंडियन ओपिनियन**
फीनिक्स

मूल अंग्रेजीकी फोटो-नकल (एस० एन० ४२५९) से।

१२३. परवानेका एक और मामला

श्री दादा उस्मान[2] १५ वर्ष या इससे भी अधिक समयसे नेटालमें रहते हैं। वे जमीनके भी मालिक हैं और गणतन्त्र राज्यके जमानेमें एक सामान्य व्यापारीकी हैसियतसे फ्राईहीडमें आकर बसे थे। युद्ध छिड़नेतक तो उन्हें फ्राईहीडमें बिना किसी रोक-टोकके व्यापार करने दिया गया, परन्तु अब, तीन वर्षसे अधिक समय तक ब्रिटिश सत्ताके साथ अकेले संघर्ष करनेके बाद वे अपने-आपको विनाशके समीप खड़ा पाते हैं। और खूबी यह है कि दादा उस्मान ब्रिटिश प्रजा है! यदि कोई विदेशी यह पूछे कि किसी ब्रिटिश प्रजाजनके विरुद्ध, अपराधी न होते हुए भी उसको नागरिक अधिकारोंसे वंचित करनेके उद्देश्यसे, ब्रिटिश शासन-तन्त्रका प्रयोग क्यों

१. डर्बन।

२. देखिये खण्ड ३, पृष्ठ १८।

किया जाता है तो इसका उत्तर होगा — ब्रिटिश संविधान ही ऐसा है। जहाँ यह रक्षा करनेमें बहुधा बलशाली सिद्ध होता है, वही प्राय: प्रत्यक्ष अन्यायसे बचा सकनेमें असमर्थ भी होता है। इस बातपर विश्वासतक होना कठिन है कि उस व्यक्तिको, जो बहुत समयतक बाजाब्ता व्यापार करता रहा, उसके आधे दर्जन प्रतिस्पर्धियोके कहने मात्रसे, अपना व्यापार जारी रखनेके अधिकारसे वंचित कर दिया गया। ये प्रतिस्पर्धी इतने कायर है कि वे उसका खुली प्रतिस्पर्धामें मुकाबला नही कर सकते और इसलिए उसको बदनाम और बरबाद करनेके लिए अपने हाथोमें अस्थायी रूपसे आये हुए अधिकारोका प्रयोग करते है। वर्तमान मामलेमें ठीक यही हुआ है। नेटालके विक्रेता-परवाना अधिनियमका जिक्र इन स्तंभोंमें कई बार किया जा चुका है।[1] उसके अंतर्गत छोटे-छोटे दूकानदारों और भारतीय व्यापारियोंको, उन स्थानीय निकायोंकी दया-पर छोड़ दिया गया है जिनके सदस्य बड़े-बडे व्यापारी है। और बड़े व्यापारियोने इस प्रकार प्राप्त अधिकारोका प्रयोग निर्दयतापूर्वक करनेमें बिलकुल संकोच नही किया है। यह कानून बनाया ही गया था भारतीयोंको कुचलनेके लिए। जब उनका काम तमाम हो जायेगा या वे रास्ता नाप लेगे तब इसका प्रयोग छोटे गोरे व्यापारियोके विरुद्ध किया जायेगा। वह सघर्ष अत्यत विलक्षण होगा। बेचारे गरीब भारतीय तो वैधानिक ढंगसे लड़ते है। उस ढंगकी लड़ाईको स्थानिक निकाय तीव्रतम अवहेलनाकी दृष्टिसे देखते है, क्योकि उनके हाथोमे अकस्मात ही जो अधिकार आ गये है, उनके कारण वे मतवाले हो उठे है।

दादा उस्मानके मामलेमे फ्राईहीड निकायने जो कार्रवाई की है उसमें औचित्य रत्ती-भर भी नही है। उस नगरमे वे एकमात्र भारतीय व्यापारी थे। उनका प्रार्थनापत्र नये परवानेके लिए नही था। उनकी दूकान असाधारण रूपसे संतोषजनक अवस्थामें रखी जाती थी। परन्तु निकायके गोरे सदस्योंने उनकी दूकान केवल इस कारण कोई मुआवजा दिये बिना बन्द कर दी कि उनकी चमड़ीका रंग भूरा था। इतना ही नहीं, उन्होने उनके वकीलका यह प्रार्थना-पत्र भी अस्वीकृत कर दिया कि उनकी दूकान तबतक खुली रहने दी जाये जबतक वे ऊपरके अधिकारियोसे राहत पानेका यत्न कर रहे है। यह मामला निरा फ्राईहीड स्थानिक निकाय *बनाम* दादा उस्मानका नही है। यह मामला गोरी ब्रिटिश प्रजा और गोरे विदेशी *बनाम* ब्रिटिश भारतीय समाजका है। प्रत्येक भारतीय व्यापारीको यह मामला इसी दृष्टिसे देखना चाहिए और श्री लिटिलटनको भी इसी दृष्टिसे इसपर विचार करना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१–१०–१९०५

१. देखिये 'विक्रेता–परवाना अधिनियम', खण्ड ४, पृष्ठ १४७–८ और २९९।

१२४. सिगरेटसे हानि

दक्षिण आस्ट्रेलियाकी सरकारके देखनेमें आया है कि सिगरेट पीनेसे लोगोंके पैसे खर्च होते हैं और उनके शरीरोंको वहुत क्षति पहुँचती है। सिगार पीनेसे जितना नुकसान होता है उससे अधिक सिगरेट पीनेसे होता है, क्योंकि सिगरेट छोटी और सस्ती होनेके कारण हदसे ज्यादा पी जाती है। यह सोचकर दक्षिण आस्ट्रेलियाकी सरकारने सिगरेट-वनानेके कारखानोंकी वन्दी और सिगरेट वेचनेकी मनाहीका कानून वनानेका निश्चय किया है।

आजकल हम छोटे-बड़े सभी लोगोंमें सिगरेट पीनेकी लत वहुत घर कर गई है। यह रिवाज अंग्रेजोंकी नकल है। पिछले जमानेमें यद्यपि गाँवड़ी वीड़ी पीनेका रिवाज था, फिर भी लोग उसमें मर्यादा पालते थे। वे चाहे जहाँ वीड़ी पीनेमें शरमाते थे, इसलिए निश्चित समय एकान्तमें जाकर पीते थे। रास्तेमें अथवा चलते-फिरते पीना वुरा माना जाता था और घरसे वाहर पीनेका रिवाज कम था। इसीसे कहा है कि

खाये सो खून विगाड़े, पीये सो घरको;
सूँघेसो वसन विगाड़े, तमाखू विस तनको।

अव तो अंग्रेज लोग चाहे जहाँ सिगरेट पीनेमें कुछ विचार ही नहीं करते और हम लोग भी उनकी नकल करते हैं। दक्षिण आस्ट्रेलिया जैसे मुल्कमें सिगरेट पीनेकी हानियाँ समझमें आने लगी हैं, तो हमें आशा है कि हम लोग भी इस सम्वन्धमें कुछ विचार करेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१–१०–१९०५

१२५. राजा सर टी० माधवराव

सर माधवराव १८२८ में कुम्भकोणम[1] शहरमें जन्मे थे। उनके पिता श्री आर० रंगराव त्रावणकोरके दीवान थे और उनके चाचा राय आर० व्यंकटराव त्रावणकोरके दीवान तथा कमिश्नरके पदपर रहे थे। सर माधवरावने अपनी वाल्यावस्था मद्रासमें विताई और वहीं उन्होंने शिक्षा प्राप्त की। उन्होंने प्रेसिडेंसी कॉलिजमें श्री पॉवेलके पास अध्ययन किया था। माधवराव परिश्रमी विद्यार्थी थे और गणित तथा विज्ञानमें बड़े होशियार थे। उन्होंने खगोल-विद्या श्री पॉवेलके घरकी सीढ़ियोंपर वैठकर सीखी थी और उसके लिए खुर्दवीन तथा दूरवीन यन्त्र वाँससे स्वयं अपने हाथसे वनाये थे।

श्री पॉवेलने ऐसे होशियार शिष्यको अपने पाससे जाने देना नहीं चाहा, इसलिए उन्हें अपने यहाँ गणित और भौतिक शास्त्रके शिक्षकके स्थानपर नियुक्त कर दिया। इसके वाद उनको एकाउन्टेन्ट जनरलके दफ्तरमें एक अच्छी जगह मिल गई और कुछ समय वाद उनसे त्रावणकोरके राजकुमारके शिक्षककी हैसियतसे काम करनेका प्रस्ताव किया गया जिसे उन्होंने स्वीकार कर लिया। पहले-पहल वे इस प्रकार एक देशी रियासतकी सेवामें प्रविष्ट हुए। उनके मार्ग-दर्शनमें राजकुमारोंका विद्यार्थी जीवन वहुत ही सफल रहा, और शासन भी उन्होंने वहुत अच्छा किया।

१. मद्रासमें।

शिक्षकके रूपमें वह चार वर्ष रहे। बादमे दीवानके सहायकके रूपमे उत्तरदायित्वपूर्ण स्थानपर पहुँचे और इसके बाद वे पेशकार दीवान बने। उस पदपर इन्होंने अच्छी प्रतिष्ठा पाई, क्योंकि उस समय राज्यकी हालत बहुत खराब थी। स्वर्गीय श्री जे० ब्रूस नॉर्टनने उनके बारेमें कहा है कि "वे एक बड़े विद्वान और राज-काजके कुशल प्रशासक थे। उन्होंने एक वर्षके थोड़े-से समयमें राज्यमें काफी शान्ति स्थापित कर दी थी। उनके राज्य-कालमें हरएकको निर्भय, पक्षपात-रहित इनसाफ मिलता था और चोरी, गुडागिरी और जालसाजी बहुत ही कम हो गई थी।"

त्रावणकोरके दीवान बड़े कमजोर मनके थे और राजा भी बहुत ही नादान था। राज्यका कारोबार कैसे चल रहा है, इसका उन्हे कुछ भी पता नहीं था। राज्यके अधिकारी बडे गन्दे मनके और नीति-भ्रष्ट थे। वेतन भी उनको बहुत कम मिलता था और कभी-कभी तो महीनोका वेतन चढ़ जाता था। अंग्रेज सरकारने सहायताके रूपमें जो रकम दी थी वह अभी लौटाई नही गई थी, और कोषमें भी कुछ नही था। कर बहुत होनेसे व्यापार बड़ी खराब हालतमे था। इसलिए लोग बडे गरीब हो गये थे। इससे लॉर्ड डलहौजीका[1] ध्यान उस ओर गया। उन्होने राज्यका कारोबार अंग्रेज सरकारके हाथमें लेनेका निर्णय किया और रियासतको मद्रास इलाकेमें जोड देनेके लिए वे स्वय ऊटकमंड गये। इस समय महाराजाने माधवरावको दीवानकी जगह नियुक्त किया और राज्य-व्यवस्था सुधारनेके लिए अंग्रेज सरकारसे सात वर्षका समय माँगा। इस प्रकार माधवरावने अपनी मेहनत और प्रामाणिकतासे तीस वर्षकी युवावस्थामे प्रतिष्ठित पद प्राप्त किया। उनके कार्य-कालकी जानने योग्य बात राजस्व सम्बन्धी है। उनके दीवानका पद ग्रहण करते समय राज्यकी आर्थिक स्थिति बहुत ही खराब थी। फिर भी उन्होंने आते ही पहलेसे चले आ रहे भूमिकर और अन्य ऐसे कर जो राज्यकी समृद्धिके लिए हानिकर थे, रद कर दिये। माधवरावने इजारदारीकी प्रथाको हटा दिया। बाहर भेजे जानेवाले मालपर उन्होने १५ प्रतिशत कर लगाकर वार्षिक आयकी कमीको पूरा किया। ज्यों-ज्यो राज्यकी समृद्धि बढती गई, त्यों-त्यो वे उस करको घटाते गये और आखिर ५ प्रतिशतपर ले आये। इसके बाद उन्होने तम्बाकूका ठेका भी छोड़ दिया। पहले सरकार अपनी जिम्मेवारीपर ठेकेदारोसे तम्बाकू खरीद लेती थी और बादमें लोगोंको बेचती थी। उन्होंने इसके बजाय लोगोंको बाहरसे तम्बाकू खरीदनेकी इजाजत दे दी। कर बहुत कम होनेसे बाहरसे आनेवाले मालको बहुत उत्तेजन मिलता था। इसके बाद इन्होने और भी बहुत-से छोटे-छोटे कर समाप्त कर दिये। क्योकि उनसे राज्यको आमदनी नगण्य होती थी, किन्तु व्यापारियोंको नुकसान बहुत ज्यादा होता था। एक गाँवमे भूमि-कर बहुत ज्यादा था। उसे उन्होने एकदम कम करवा दिया। १८६५ में ब्रिटिश सरकार तथा कोचीन और त्रावणकोर राज्योंके बीच व्यापारिक समझौता किया। इससे जो माल ब्रिटिश और कोचीन राज्योसे आता था उसपर चुगी प्राय. समाप्त हो गई थी।

निपुणतापूर्वक राज्य-सचालन करनेसे उनको ब्रिटिश सरकारने के० सी० एस० आई० का खिताब दिया। मद्रासकी विशाल सभामें यह खिताब देते हुए लॉर्ड नेपियरने उनकी बहुत प्रशसा की। सन् १८७२ में उन्होने अपने पदसे त्यागपत्र दे दिया। उन्होंने राज्यमें अन्धेरगर्दीकी जगह सुशासन स्थापित किया और इस प्रकार प्रजाके जान और मालको सुरक्षित कर दिया। उन्होंने बड़ी-बड़ी इमारतें खडी की और कारीगरोको प्रोत्साहन दिया। उन्होने लोकोपयोगी अन्य निर्माणकार्य भी सम्पन्न कराये और कृषिको बढावा दिया। यदि माधवराव न होते तो त्रावण-कोरका राज्य राजाके हाथमें न रहता। पेरीक्लीज़ने एथेन्सकी और ऑलिवर क्रॉमवेलने इंग्लैंडकी

१. मार्क्विस डल्हौजी, (१८१२-६०), भारतके गवर्नर जनरल, १८४८-५६।

जैसी सेवाकी, माधवरावने त्रावणकोरकी वैसी ही सेवा की है। उन्हें वाइसरायकी परिषद्की सदस्यताके लिए कहा गया था, परन्तु उन्होंने उसे स्वीकार नहीं किया।

कुछ समय बाद इन्दौरके महाराजा तुकोजी राव होल्करने अंग्रेज सरकारसे एक अच्छा प्रशासक देनेकी दरखास्त की। इसपर अंग्रेज सरकारने माधवरावसे पूछा और उन्होंने दो वर्षके लिए वहाँ जाना स्वीकार किया। वहाँका सबसे अधिक उल्लेखनीय कार्य यह था कि उन्होंने "इन्दौर दण्ड-विधान" की रचना की। उन्होंने दो वर्ष तक यह पद सँभाला। इस बीच उन्होंने प्रजाके लिए बहुत अच्छे काम किये और राज्यको समृद्धिशाली बना दिया।

तभी बड़ौदाके मल्हारराव गायकवाड़को राज्य-व्यवस्थाकी खराबीके कारण पदच्युत किया गया और राज्यका काम-काज चलानेके लिए सर माधवरावकी माँग की गई। उन्होंने उसे स्वीकार किया। बड़ौदाकी हालत बड़ी भयानक थी। खून-खराबी, गुंडागिरी और मार-काट जहाँ-तहाँ दिखाई पड़ती थी। लोगोंका संगठन नहीं था। जान-मालकी रक्षाका प्रबंध नहीं था। इसलिए राज्यमें अमन कायम करनेके लिए एक मजबूत व्यक्तिकी आवश्यकता थी। राज्यके राजस्वका इजारा बड़े-बड़े सरदारोंके हाथमें था। साहूकार पुलिसकी सहायतासे लोगोंपर अत्याचार करते थे। फरेबियोंकी राज्यमें भरमार थी। अन्धेरगर्दीका अन्त नहीं था। परन्तु सर टी० माधवरावने इस स्थितिसे भी हार नहीं मानी। उन्होंने बड़ी दक्षतासे राज्यका काम सँभाला। उन्होंने बदमाशोंको राज्यसे निर्वासित कर दिया, सरदारों और साहूकारोंसे इजारे छीन लिये और राज्यके राजस्वको अच्छी बुनियादपर लाकर रख दिया। लगान-वसूलीमें लगे हुए सिपाहियोंको हटाकर दीवानी काममें लगाया। न्यायालयोंमें न्यायकी व्यवस्था की। वाचनालय स्थापित किये। बम्बई और मद्राससे योग्य व्यक्तियोंको बुलाकर कर्मचारी वर्गमें सुधार किया। बड़ौदामें छोटी-छोटी तंग गलियाँ थीं, उनको जलाकर गिरवा दिया, और उनकी जगह सुन्दर मकान बनवाये, बगीचे लगवाये और अजायबघर बनवाया। इस प्रकार अथक परिश्रम करते हुए वर्षों तक वे एकके बाद एक सुधार करते रहे। १८८२ में ब्रिटिश सरकारने उन्हें राजाका खिताब दिया। महाराजा गायकवाड़ने उन्हें अपनी सेवाओंके लिए तीन लाख रुपय पुरस्कार-स्वरूप भेंट किये। इसके बाद उन्होंने एक साधारण नागरिककी हैसियतसे जीवन बिताया। इस अवधिमें भी वे लोगोंके लिए उपयोगी काम करते रहते थे। उनका शिक्षा विभागकी ओर काफी ध्यान रहता था और वे लड़कियोंकी शिक्षापर विशेष ध्यान देनेके हेतु बहुत समझाया करते थे। उनका पत्र-व्यवहार बिस्मार्कके[1] साथ चलता था। उनकी प्रशासनिक योग्यताकी ख्याति भारतमें ही नहीं, यूरोपमें भी फैली हुई थी। उनके समान प्रशासक भारतमें विरले ही हुए हैं। १८९१ के अप्रैल मासकी ४ तारीखको भारतका यह रत्न ६२ वर्षकी आयुमें लुप्त हो गया।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१-१०-१९०५

१. प्रिन्स ओटो एडवर्ड लियोपोल्ड वॉन बिस्मार्क (१८१५-९८), अपने समयका एक सबसे बड़ा जर्मन राजनीतिज्ञ था, जिसने जर्मन राष्ट्रका निर्माण ही नहीं किया, उसे दुनियाकी सबसे बड़ी ताकत भी बना दिया।

१२६. मानपत्र : प्रोफेसर परमानंदको

जोहानिसबर्ग
अक्टूबर २७, १९०५[1]

सेवामें
प्रोफेसर परमानन्द, एम० ए०, इत्यादि
जोहानिसबर्ग

प्रिय महोदय,

हम लोग, जिनके हस्ताक्षर नीचे दिये हुए हैं, स्वागत समितिकी ओरसे आपके जोहानिसबर्ग पधारनेके अवसरपर आपका हार्दिक स्वागत करते हैं।

महोदय, आप उन स्वार्थत्यागी कार्यकर्ताओंमें से हैं जिन्हे भारतने आर्यसमाजसे पाया है। अपने साथियों और सहयोगियोकी भाँति आपने भी धर्म और शिक्षाके निमित्त अपना जीवन अर्पित कर दिया है। अतएव आपके प्रति आदर प्रदर्शित करनेमें हम लोग गौरव अनुभव करते हैं।

हम आशा करते है कि दक्षिण आफ्रिकामें आपके कुछ समयके लिए पधारनेके फलस्वरूप आर्यसमाज दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोके बीच काम करनेके लिए कुछ त्यागी शिक्षा-शास्त्रियोंको भेजनेका निर्णय करेगा। दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंकी एक सबसे बड़ी आवश्यकता ठीक ढंगकी शिक्षा है।

हमें आशा है कि आप जितने दिन यहाँ है उतने दिन आनन्दसे रहेंगे और लौटते समय अपने साथ यहाँकी कुछ सुखद स्मृतियाँ ले जायेंगे।

आपके विश्वस्त,

एम० एस० पिल्ले
वी० एम० मुदलियार,
अध्यक्ष
मूलजी पटेल
एन० वी० पिल्ले
जी० ए० देसाई
एन० ए० नायडू
बी० दयालजी
एस० ए० मुदलियार
सी० पी० लच्छीराम
एस० पी० पाथेर
वी० जी० महाराज
एम० ए० पदियाची
सी० केवलराम
त्रीकमदास ब्रदर्स
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४-११-१९०५

१. ४-११-१९०५ के इंडियन ओपिनियनसे मालूम होता है कि यह मानपत्र २८ अक्तूबरको एक सार्वजनिक सभामें दिया गया था। उस अवसरपर प्रोफेसर परमानन्दने अपना प्रथम भाषण दिया था। गांधीजी उस सभामें थे और उन्होंने अध्यक्षके भाषणका अनुवाद किया था।

१२७. जोहानिसबर्गमें प्लेगका इतिहास

गत वर्ष जोहानिसबर्गमें जो गिल्टीवाला प्लेग फैला था, उसकी चिर-वाग्दत्त रिपोर्ट अब प्रकाशित हो गई है। यह एक सौ तीन पृष्ठोंकी एक मोटी जिल्द है। इसमें अनेक नक्शों द्वारा इस महामारीका प्रत्यक्ष चित्र खीच दिया गया है। इसके लेखक डॉ० पेक्स हैं। उन्होंने इसे तैयार करनेमें भारी श्रम किया है, और जनताके सामने एक अति विद्वत्तापूर्ण विवेचन उपस्थित कर दिया है। अवश्य ही रिपोर्टका वह भाग सर्वाधिक रोचक होना चाहिए, जिसमें प्लेगकी उत्पत्ति बताई गई है। डॉ० पेक्सके तर्क ठीक होते तो उनके निकाले हुए निष्कर्ष उचित होते। परन्तु हमें सन्देह है कि उनके बहुतसे महत्त्वपूर्ण तर्क बिलकुल गलत हैं।

शायद यह अत्यन्त दुर्भाग्यकी बात है कि रिपोर्ट तैयार करनेपर इतना मूल्यवान समय और धन व्यय करनेसे पहले, प्लेगकी शुरुआतके बारेमें मुनासिब अदालती जाँच नही कराई गई। डॉ० पेक्सने इसका जो आश्चर्यजनक कारण बताया है वह वियना-आयोगके निष्कर्षोंके विरुद्ध तो है ही, नेटालमें पहले-पहल प्लेग फैलनेपर नेटाल-सरकार द्वारा नियुक्त आयोगकी रिपोर्ट और स्वर्गीय श्री एस्कम्बको प्राप्त भारत-सरकारके तारके भी विरुद्ध है। डॉ० पेक्सका दावा है कि "पहले-पहल बीमारी बम्बईसे आयातित उस चावलसे शुरू हुई जिसमें प्लेगकी छूत थी।" हमने अभी जिन अधिकारियोका हवाला दिया है वे सब इस निष्कर्षपर पहुँचे थे कि चावलसे प्लेगकी छूत नही फैलती। डॉ० पेक्सने जिन आधारोंपर अपने निष्कर्ष निकाले हैं उनमें से कुछ ये हैं: पहले-पहल यह बीमारी दूकानदारोंको हुई, भारतीय दूकानदार दिसम्बर १९०३ में बम्बईसे चावलका आयात करते थे और उन्होंने निश्चित रूपसे कहा कि "उस चावलमें चूहोंकी लेंड़ियाँ थी", और बम्बईसे उस चावलका निर्यात रोकनेकी कोई विशेष सावधानी नहीं बरती गई जिसमें शायद छूत थी।

अब डॉ० पेक्सके सिद्धान्तके लिए दुर्भाग्यकी बात यह है कि उनके ये सब तर्क निराधार हैं। पहली भूल रिपोर्ट तैयार करनेमें उन्होंने यह की है कि वे रोग फैलनेकी केवल सरकारी तारीखको मानकर चले हैं, और उन्होंने उससे पहलेके सारे ज्ञात इतिहासकी उपेक्षा कर दी है। तब यह कहा गया था, वस्तुतः असन्दिग्ध रूपसे सिद्ध कर दिया गया था, कि जोहानिसबर्गमें प्लेग १८ मार्चसे भी पहले वर्तमान था। जिस पत्र-व्यवहारकी[1] ओर प्लेग-अधिकारियोंका ध्यान, उनके पदकी हैसियतसे खींचा जा चुका था, उस सबको डॉ० पेक्सने अपनी रिपोर्टमें उपेक्षित कर देना ठीक समझा है। उन्होंने स्वर्गीय डॉ० मैरेसके मामलेकी भी उपेक्षा कर दी है, जिससे कि असन्दिग्ध रूपसे यह प्रगट हो जाता है कि यह रोग, प्लेगके कारण स्वयं उनका देहान्त होनेसे, बहुत पहले वर्तमान था। इसलिए यह सिद्धान्त कि प्लेगका आरम्भ दूकानदारोंसे हुआ, झूठा सिद्ध हो जाता है। इतना ही नही, जिन दो व्यक्तियोंके नाम डॉ० पेक्सने दिये है और कहा है कि वे दूकानदार थे, वे वस्तुतः दूकानदार थे ही नही, जैसा कि हमें संयोगसे मालूम हुआ है। यदि रोग १८ मार्चसे शुरू माना जाये तो इस रोगके पहले शिकार वे मजदूर हुए थे, जो खानोंसे आये थे।

हम जानना चाहेंगे कि यह सूचना उन्हें कहाँसे मिली कि चावलका आयात बम्बईसे किया जा रहा था। साधारणतया चावल बम्बईसे नहीं, कलकत्तेसे आयात किया जाता है, और जब

१. देखिए, "पत्र: डॉ० पोर्टरको", खण्ड ४, पृष्ठ १३८-९, १४३ तथा १५८।

यह बम्बईसे आता है तब भी इसकी बोरी-बन्दी कलकत्तेमें ही की जाती है। भारत सरकारपर यह एक गम्भीर आरोप है कि बम्बईमें उस चावलका निर्यात रोकनेके लिए कोई विशेष सावधानी नही बरती गई, जिसमें शायद छूत थी। जिन्हें भारतमें यात्रा करनेकी कुछ भी जानकारी है वे जानते है कि बम्बईमें कितनी कड़ी सावधानी बरती जाती है। इसलिए डॉ० पेक्सने जो निष्कर्ष निकाले है उनपर पहुँचानेवाले सभी महत्त्वपूर्ण तर्क, हमारी सम्मतिमें, सत्य सिद्ध नही किये जा सकते। फिर, चावलका आयात तो भारतीय पहले भी किया करते थे, उसके बावजूद जोहानिसबर्ग प्लेगसे कैसे बचा रहा? क्योंकि यह नहीं कहा जा सकता कि जोहानिसबर्गमें चावलका आयात पहले-पहल १९०४ में हुआ था। यह शायद कभी भी ज्ञात नही होगा कि इस महामारीके फैलनेका वास्तविक कारण क्या था, और जबतक यह ज्ञात नही होगा तबतक इसे फैलनेसे रोकनेके उपाय भी असफल होते रहेंगे। हम यह नही कहते कि जोहानिसबर्गमें प्लेग फिर फैल जायेगा। जोहानिसबर्ग इतनी ऊँचाईपर बसा है कि वहाँ, अत्यन्त गम्भीर परिस्थितियाँ उत्पन्न हुए बिना, प्लेगका फैलना अति कठिन है। डॉ० पेक्स साधारणतया निष्पक्ष हैं; परन्तु भारतीयोंने अधिकारियोंको सन्दिग्ध मामलोंकी सारी सूचना और बस्तीका प्रबन्ध नगरपालिकाके हाथमें आनेके बाद उसकी अवस्थाके विषयमें उन्हे चेतावनी देकर रोगको फैलनेसे रोकनेका जो भगीरथ प्रयत्न किया था उसकी सर्वथा उपेक्षा करके, डॉ० पेक्सने भारतीयोके साथ न्याय नही किया। हमें लगता है कि उन्होंने भारतीय बस्तीकी उस समयकी स्थितिके विषयमें अस्वच्छ क्षेत्र-आयोगके सामने दी हुई डॉ० पोर्टरकी गवाहीके अंश उद्धृत करके, असली बातको टाल दिया है। रोगको नष्ट करनेके लिए जो उपाय किये गये थे उन सबका वर्णन इस रिपोर्टमें ठीक-ठीक किया गया है, और उनसे योग्य डॉक्टर तथा उनके सहायकोंको बहुत अधिक श्रेय मिलता है। बस्ती और जोहानिसबर्ग मार्केटको जिस प्रकार सँभाला गया था वह भारी प्रशंसाके योग्य है, और निःसंदेह डॉ० पेक्स तथा उनके योग्य सहायक डॉ० मैकेंजी द्वारा की गई सरगर्म कार्रवाइयोंकी बदौलत ही रोग इतने शीघ्र उन्मूलित हो गया।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-१०-१९०५

१२८. भूल-सुधार

'पॉचेफस्ट्रूम बजट'ने लॉर्ड सेल्बोर्नके उस भाषणपर दी गई हमारी टिप्पणीपर अपना विचार प्रकट किया है जिसमें उन्होंने अपने पदकी हैसियतसे वचन दिया था कि ट्रान्सवालमें जबतक प्रातिनिधिक शासन कायम नही हो जाता तबतक, जो युद्धसे पहले यहाँ मौजूद थे उनके सिवा अन्य भारतीयोको यहाँ प्रविष्ट नही होने दिया जायेगा। हमारा सहयोगी लिखता है:

> यह 'शिकायतों' का एक नया चरण है, और स्पष्ट है कि एक ऐसी नीतिका सूत्रपात है जिसके कारण, यहाँ पहलेसे बसे हुए भारतीयोंके साथ गोरी आबादीका नरम-वर्ग जो सहानुभूति प्रकट करता आ रहा है वह नष्ट हो जायेगी। यदि वे समझदार हैं, तो स्वयं अपने लाभके लिए, हमें यह माननेके लिए विवश करनेसे बाज रहेंगे कि उनका अन्तिम लक्ष्य ट्रान्सवालमें हजारों भारतीय प्रजाजनोंको भर देना है। 'इंडियन ओपिनियन' बकवास करता है कि एक-एक भारतीयको इस उपनिवेशसे निकाल बाहर करनेका प्रयत्न किया

> जा रहा है। जहाँतक पाँचेफ्स्ट्रूमकी नीतिका सम्बन्ध है, यह बात सर्वथा मिथ्या है, क्योंकि यह भली भाँति सिद्ध किया जा चुका है कि पुराने जमे हुए व्यवसायके कारण जिन भारतीयोंके यहाँ निहित अधिकार हैं, इस जिलेके लोगोंकी इच्छा उनका अधिकसे-अधिक लिहाज करनेकी है। परन्तु जब हमको भारतीयोंके ऐसे नये प्रवासको सहन करनेके लिए कहा जायेगा, जिससे कि एक असन्दिग्ध बुराई और भी मजबूत होगी, तब हमें डर है कि रियायतकी भावना समाप्त हो जायेगी।

हमारी समझमें यह बात नहीं आती कि केवल कुछ जरूरी मुनीमोंको यहाँ बुलानेसे "ट्रान्सवालमें हजारों भारतीय प्रजाजन कैसे भर जायेंगे"? किन्तु शायद 'बजट'से यह आशा भी नहीं की जा सकती कि वह एशियाई समस्याको थोड़ी साधारण समझदारीकी नजरसे देखेगा। हमारी टिप्पणीकी न्याय्यता, निश्चय ही, स्वयं प्रकट है। नये भारतीयोंका आगमन सर्वथा बन्द करनेका मतलब यह होगा कि अन्तमें अधिकतर भारतीय उपनिवेशसे निकाल दिये जायें; और यह स्थिति ट्रान्सवालकी आबादीके एक हिस्सेको कितनी ही अभीष्ट क्यों न हो, वह हमसे इस मामलेको उसी दृष्टिसे देखनेकी आशा भला कैसे कर सकता है! हम दावेके साथ कहते हैं कि हमारी टिप्पणीमें ऐसी कोई बात नहीं है जिससे उपर्युक्त निष्कर्षको उचित माना जा सके। हमने कभी इस विचारका समर्थन नहीं किया कि ट्रान्सवालको भारतीयोंसे भर देना चाहिए। हाँ, अपनी इस बातपर हम अवश्य कायम हैं कि यदि मामूली न्याय भी करना हो तो ट्रान्सवालमें पहलेसे बसे भारतीयोंको, अपनी मुनीमों और ऐसे ही अन्य सहायकोंकी आवश्यकता, भारतसे पूरी करनेकी इजाजत होनी चाहिए — फिर चाहे वे ट्रान्सवालके पुराने निवासी हों, चाहे न हों। इन आदमियोंकी संख्या प्रतिवर्ष बहुत थोड़ी ही होगी। शायद हमारे सहयोगीको ज्ञात न हो कि यह सहूलियत केप और नेटालके स्वशासित उपनिवेशों तक में दी जाती है, यद्यपि वहाँ भी प्रतिबन्धक कानून मौजूद है। हमें यह कहनेमें संकोच नहीं कि कुशल सहायकोंकी आवश्यकता पूरी करनेके लिए भी भारतपर निर्भर रहनेका अधिकार भारतीय व्यापारियोंको न देनेका निश्चय ही यह अभिप्राय है कि यहाँ पहलेसे बसी भारतीय आबादीको धीरे-धीरे भूखा मारा जाये। हमने जो स्थिति यहाँ प्रकट की है वह किसी भी प्रकार नई नहीं है। हम 'बजट'का ध्यान लॉर्ड मिलनरके खरीतेकी ओर दिलाते हैं। उसमें उन्होंने स्पष्ट शब्दोंमें कहा है कि शिक्षित, साधन-सम्पन्न और योग्य भारतीयोंको — वे चाहे नये प्रवासी हों, चाहे नहीं — ट्रान्सवालमें आनेसे रोका नहीं जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-१०-१९०५

१२९. नेल्सन-शताब्दी महोत्सव : एक सबक[1]

पिछले हफ्ते जो नाम साम्राज्यके एक छोरसे दूसरे छोर तक गूंज उठा था, वह था — होरेशियो नेल्सन। इस महीनेकी २१ तारीखको हुए समारोहोसे बहुत ही गम्भीर विचार उत्पन्न होते हैं। भारतीयोको तो उनसे स्पष्ट ज्ञात हो जाना चाहिए कि ब्रिटेनकी सफलताका रहस्य क्या है। मैक्समूलर अपने लेखोंमें इस नतीजेपर पहुँचे है कि भारतीय दर्शनमें जीवनका अर्थ एक छोटेसे शब्द — स्वधर्म (कर्त्तव्य) — से सूत्ररूपमें व्यक्त किया गया है। परन्तु, कदाचित्, आजके औसत दर्जेके भारतीयके आचरणमें जीवनका यह अर्थ नही झलकता। ऐसी स्थितिमें लॉर्ड नेल्सनके जीवनके अनुशीलनसे आद्योपान्त स्वधर्म-पालनका अत्यन्त हृदयग्राही उदाहरण उपस्थित होता है।

"इंग्लैंड अपेक्षा करता है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्तव्यका पालन करेगा" — यह ऐतिहासिक मन्त्र ब्रिटिश हृदयोमें सुप्रतिष्ठित हो गया है। यह मन्त्र अपने उद्घोषकके अविचल कर्तृत्वसे पवित्र हो गया था, और अब एक सदी तक कार्यरूपमे परिणत होते रहनेसे समादरणीय बन गया है। इंग्लैंडकी सफलताका माप इसी बातका माप तो है कि अंग्रेजोने अपने जीवनमे इस मन्त्रको कहाँतक ग्रहण किया है। यदि उस साम्राज्यमें कभी सूर्य अस्त नही होता, जिसका एक संस्थापक स्वय नेल्सन था, तो इसका कारण यह है कि उसके सपूतोंने अबतक कर्तव्य-पथका अनुसरण किया है।

आज साम्राज्यमें नेल्सनकी जितनी पूजा होती है, उतनी और किसीकी नही — इसलिए नही कि वह एक बहादुर नौसैनिक था, इसलिए भी नहीं कि उसने कभी यह नही जाना कि भय क्या चीज है, बल्कि इसलिए कि वह कर्तव्य-निष्ठाकी सजीव प्रतिमा था। उसकी दृष्टिमें उसका देश पहले था, और अपना अस्तित्व पीछे। वह लड़ा, क्योंकि लड़ना उसका कर्तव्य था। फिर क्या आश्चर्य कि उसके अनुगामियोने, वह जहाँ-कहीं भी गया, उसका अनुसरण किया। इग्लैंडको समुद्रका स्वामी उसीने बनाया था। परन्तु, उसकी महानता इससे भी अधिक थी। उसकी सेवामें स्वार्थका लेश भी न था। उसकी देशभक्तिका स्वरूप शुद्धतम था।

दक्षिण आफ्रिका जैसे महादेशमें हम नेल्सनके बताये सही रास्तेसे बराबर भटकते रहते है। अतः, अच्छा हो, अगर हम उसके जैसे महत् चरितका स्मरण करें। उससे हमारे पूर्वग्रह कम होने चाहिए, और हमें अपने अधिकारोंकी अपेक्षा दायित्वोंका खयाल अधिक करनेकी प्रेरणा मिलनी चाहिए। विशेषतः यदि दक्षिण आफ्रिकाके कुछ-कुछ अरुचिकर जीवनसे भारतीयोके मनमें अपने साथ कठोर बरताव करनेवाले अंग्रेजोके प्रति कटुता पैदा हो गई है तो, उनको गत सप्ताहकी घटनाओसे यह भरोसा होना चाहिए कि अंग्रेज फिर भी नेल्सनके देशवासी है, और जबतक अपनी स्मृतिमें नेल्सनको सहेजे हैं, तबतक वे कर्तव्य-पथका सर्वथा त्याग नही कर सकते। इसमें हमारे लिए आशाका एक हेतु, और अंग्रेजोके दोषोके बावजूद, ब्रिटेनको प्यार करनेकी प्रेरणा निहित है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-१०-१९०५

१. यह "एक भारतीय द्वारा प्रेषित" संवादके रूपमें छपा था।

१३०. विक्रेता-परवाना अधिनियम

श्री दादा उस्मानपर अत्याचारोंकी जो वर्षा हुई है उसकी कहानी हम गत सप्ताह लिख चुके है।[1] ऐसी अन्धाधुन्ध वर्षासे किस तरह बचा जाये, इसका विचार समय-समयपर करना आवश्यक है। गोरोंने डटकर कमर कस ली है। आज फ्राईहीडमें अत्याचार किया गया वैसा कल दूसरी जगह किया जाये तो उसमें आश्चर्यकी बात न होगी। कोई भारतीय व्यापारी क्षणभरके लिए भी अपने मनमें यह घमण्ड नहीं कर सकता कि उसका परवाना तो साल-दर-साल मिलता ही रहेगा। हम अन्यत्र बता चुके है कि डॉ० कैम्वेल[2] जैसे जान-पहचानवाले व प्रभावशाली गोरे हमारे पीछे डंडा लेकर पड़े हैं। ऐसे समय यदि हम सोते रहेंगे तो हम बाढ़में बह जायेंगे। बहुत विलम्ब करके जागेंगे तो वह आग लगनेके बाद कुआँ खोदनेके समान होगा। छोटे या बड़े किसी भी भारतीय व्यापारीको परवानेके सिलसिलेमें परेशानी उठानी पड़े तो यह बात उसे तुरन्त प्रकट कर देनी चाहिए। कांग्रेसका कर्त्तव्य है कि एक विशेष परवाना समिति नियुक्त करके जहाँ-जहाँ परवाना छीना जाये वहाँ-वहाँ छानबीन करे। आवश्यक हो तो गाँव-गाँवमें जाकर उसे ऐसे उदाहरण इकट्ठा करना चाहिए। हम मानते हैं कि यह अखबार गाँव-गाँव पहुँचता और पढ़ा जाता होगा। जिन-जिनको परवाना न मिला हो उनके बारेमें हमारे पास निम्नलिखित तफसीलें भेजी जायें तभी हम यह काम सन्तोषजनक रूपसे पूरा कर सकेंगे :

(१) जिस व्यक्तिको परवाना न मिला हो उसका नाम।

(२) किस जगह परवानेकी माँग की?

(३) पहले व्यापार किया था या नहीं?

(४) पहले व्यापार किया हो तो कहाँ किया?

(५) दूकान किरायेकी है या अपनी है? किराया क्या देते है?

(६) दूकान ईंटकी बनी है या टीनकी? सम्भव हो तो साथ पेंसिलका बना नक्शा नत्थी किया जाये।

(७) यदि पूंजी बताई गई हो तो वह कितनी थी?

(८) बहीखाता रखनेका क्या इन्तजाम है?

(९) अगल-बगलमें गोरोंकी दूकानें है या नहीं? नजदीकसे नजदीक सबसे पहली गोरेकी दूकान कितनी दूर है?

(१०) उस शहरमें भारतीय व्यापारियोंकी संख्या कितनी है?

(११) परवाना-अधिकारी परवाना न देनेका कारण क्या बताता है?

(१२) आपने परवाना-अधिकारीके निर्णयके विरुद्ध स्थानीय निकायमें अपील की थी या नहीं?

(१३) इस सम्बन्धमें आपके पास जो कुछ कागजात अर्थात् अर्जी, जवाब आदि हों तो उन्हें या उनकी प्रतिलिपियाँ साथ भेजें।

(१४) यदि आपके पास किसी प्रतिष्ठित गोरेका प्रमाणपत्र हो तो वह भी भेजें।

१. देखिए "परवानेका एक और मामला", पृष्ठ १०८-९।

२. नेटालके यूरोपीयोंके एक नेता डॉ० एस० जी० केम्बेल।

(१५) इन सब कागजोंको एक लिफाफेमें बन्द करके उसपर "गुजराती सम्पादक, 'इंडियन ओपिनियन', फीनिक्स" का पता लिखें और ऊपरके कोनेमे गुजराती अक्षरोंमें "परवाने बाबत" लिखकर तुरन्त भेजें।

इस प्रकार जाने-पहचाने व्यक्ति प्रत्येक स्थानसे सावधानीपूर्वक समाचार भेजेंगे तो हमारी धारणा है कि बहुत लाभ होगा। यह काम बहुत सरल है और बिना परिश्रम तथा बिना पैसे हो सकता है। हम इस जानकारीका उपयोग अंग्रेजी लेखो और सरकारके साथ पत्र-व्यवहारमें करना चाहते है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-१०-१९०५

१३१. बहादुर बंगाली

जान पड़ता है कि इस समय बंगाल सचमुच जाग उठा है। हर सप्ताह समाचार आते है कि ज्यों-ज्यों सरकार बंगालके विभाजनके लिए तत्पर हो रही है त्यों-त्यों बंगाली उसके प्रतिरोधके लिए कमर कस रहे हैं। उधर सरकारने धूमधामके साथ ढाकामें नया गवर्नर बैठानेकी विधि सम्पन्न की, उसी दिन[1] कलकत्तेमें बंगालियोने हड़ताल की और विराट सभा करके, जिसमें १,००,००० लोग इकट्ठे हुए थे, अपनी एकताके सूचक एक संघ-भवनका शिलान्यास किया। स्वदेशी वस्तुएँ ही खरीदने और उन्हीको व्यवहारमें लानेका आन्दोलन जोर पकड़ता जा रहा है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-१०-१९०५

१३२. हमारा कर्त्तव्य

हमें मालूम हुआ है कि कुछ भारतीय हमारे प्लेग-सम्बन्धी लेखसे नाराज हुए हैं। इसका हमें खेद है लेकिन इससे आश्चर्य नही होता। [सामान्यत: लोगोंका ध्यान इस ओर दिलानेपर तो हमारी प्रशंसा की जानी चाहिए। ऐसा न करके हमारा दोष बताया जाता है, इसकी वजह यह है कि लोग दोष बतानेमें बिलकुल झिझकते नहीं।] भारतमें बहुत-से गाँव प्लेगसे बरबाद हो गये है, बहुत-से कुटुम्ब बिलकुल मिट गये है और लोगोंमें भगदड़ मची हुई है। भारतके बाहर जहाँ-जहाँ प्लेग पहुँचा है वहाँ उसका सबब अकसर हम लोग ही होते हैं। और उन इलाकोंमें से प्लेग जल्दी दूर होनेका सबब यह देखनेमें आता है कि उसे दूर करनेका इन्तजाम दूसरे लोगोके हाथोंमें होता है। ऐसे मौकोंपर पत्रकारोका यानी हमारा फर्ज क्या है? हम [लोगोंको खुश रखनेकी खातिर उनके दोषोको छिपाकर वाहवाही लूट सकते है, लेकिन ऐसा करके हम अपने कर्त्तव्यसे च्युत होगे।] [हमारा काम लोगोंकी सेवा करना है। उनके अधिकारोंकी रक्षा करते हुए जो भी दोष दिखाई दें वे हमें बताने ही चाहिए। अगर हम ऐसा न करें और झूठी चापलूसी करते रहे तो हमारा यह कार्य शत्रुके समान होगा। हम शुरूमें ही कह चुके है कि हमारे शत्रु जब हमारे बारेमें कोई गलत बात कहेंगे तब हम पूरी हिम्मतसे बचाव करेंगे। उसी तरह जब हम अपने लोगोमें ही दोष देखेंगे तब उसको भी साफ-साफ बतायेंगे और उसको दूर करनेकी बेखटके

१. अक्तूबर १६, १९०५को।

हिमायत और विनती करेंगे। अगर यह काम हम न करेंगे तो कौन करेगा? हमारा इरादा लोगोंको खुश करनेके मतलबसे कुछ करनेका न तो था और न है। कड़ुआ घूँट पिलाना हमारा फर्ज है। हम लोगोंमें प्लेग फैलता है और उससे जानें जाती हैं, यह तो साफ नजर आता है। लेकिन इससे सारी कौमको आघात पहुँचता है। जब डर्बन, केप टाउन और जोहानिसबर्गमें प्लेग हुआ था तब भारतीयोंपर जो आघात पहुँचा था,[१] वह भुलाया नही जा सकता। प्लेगको खत्म करनेका आसानसे आसान उपाय यह है कि किसीको प्लेगकी बीमारी हो तो उसे तुरन्त जाहिर कर दिया जाये। बम्बईमें सन् १८९६ में जब पहली बार प्लेग फैला तब जनता और डॉक्टरोंने उसे दबाया नही। उस मौकेपर जरूरी कार्रवाई की जाती तो मुमकिन था कि जो लाखों आदमी मरे वे बच जाते। अब भी अगर लोगोंको इस सम्बन्धमें समझाया जा सके तो प्लेग जड़से खत्म हो सकता है। भारतमें ऐसा नहीं किया जा सका, इसके कई कारण हैं। वहाँ जनता कंगाल और नासमझ है। यहाँ ऐसी स्थिति नही है। जो लोग पाँच हजार मीलका सफर करते हैं और दुश्मनोंके बीच रहकर अपनी रोटी कमा सकते हैं उनको नासमझ कहा ही नहीं जा सकता। अगर इस देशमें रहकर हम संक्रामक रोगोंमें तीमारदारी करना नही जानते तो इसका कारण केवल हमारा हठ है। इसलिए जो लोग अनपढ़ मनुष्योंका मार्गदर्शन करनेकी स्थितिमें हों, हमारी समझमें उनका इस सम्बन्धमें विशेष कर्त्तव्य यह है कि वे अनपढ़ लोगोंकी आँखें खोलें और उन्हें सही मार्ग दिखायें। यह कहनेमें हमें जरा भी डर नही है। अगर हम डरकर झूठी चापलूसी करें तो आजतक हमने जो कुछ लिखा है उसपर पानी फिर जायेगा। हम लोगोंको बार-बार अपनी टेक बनाये रखने, सभ्यताको कायम रखने और हिम्मतसे अपना फर्ज अदा करनेके लिए कहते हैं। हर हफ्ते सर हेनरी लॉरेंस, एलिजाबेथ फ्राइ वगैरह बहादुर स्त्री-पुरुषोंके जीवन-वृतान्त देते हैं और ऐसे वीरोंके समान बननेकी सिफारिश करते हैं। अन्तमें सभी पाठकोंसे हमारी यह विनती है कि वे हमारे लेखोंका सही-सही अर्थ लगायें। हम लोक-सेवा करनेमें कभी भूल भी कर सकते हैं; लेकिन वह जान-बूझकर न होगी। जिनकी निगाहमें हमारी ऐसी भूलें आयें वे हमको बता दें और हम इस तरह भूलें बतानेवालोंका अहसान मानेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–१०–१९०५

१३३. आस्ट्रेलिया और जापान

जान पड़ता है, आस्ट्रेलियाकी सरकारने जापानकी शक्तिको समझ लिया है। आस्ट्रेलियामें प्रवासके हेतु जानेवाले जापानी विद्यार्थी और व्यापारियोंको बिना रोक-टोक आने देनेका निर्णय जाहिर किया गया है और यह भी बताया है कि जापानकी भावनाको ठेस न पहुँचे, इस तरहका सुधार वह अपने प्रवास कानूनमें कर देगी। इसका लाभ भारतीयोंको भी मिलना सम्भव है। जापानकी जीतकी जड़ें इतनी फैली हुई हैं कि हम इस समय उसके समूचे फलोंको देख नही सकते। पूर्वी जनताकी खुमारी टूटती मालूम हो रही है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–१०–१९०५

१. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ६३ और ३८८।

१३४. एक जागरूक भारतीय

इंग्लैंडके प्रसिद्ध अखबार 'डेली मेल'में एक भारतीयकी भारतमें दिखाई गई ऊँचे दर्जेकी वफादारीका उदाहरण दिया गया है। खान बहादुर मुहीउद्दीन नामके एक सर्वेक्षक थे। उन्हें १९०३ में राजपूतानेके एक बहुत ही वीरान क्षेत्रमें पैमाइशका काम दिया गया। साथमें चार पथदर्शक, और चार सहायक सर्वेक्षक और दो ऊँट थे। वे रात-रातमें सफर करते थे। एक रातको उनकी मशकमें छेद हो जानेसे सारा पानी बह गया। पथ-दर्शकोंने लौटनेकी सलाह दी लेकिन बहादुर मुहीउद्दीन पीछे लौटनेवाले नही थे। उन्होने एक पथदर्शक पानीकी खोजमें भेजा। पानी आया, लेकिन वह बेहद खारा था। आगे बढ़नेपर थोड़ा और पानी मिला, लेकिन वह जल्दी ही खतम हो गया। खान बहादुर बहुत सोचमें पड़ गये। आखिर ऊँटवाले ऊँटोंपर बाँध दिये गये और ऊँटोंको उनके इच्छानुसार चलनेके लिए छोड़ दिया गया। इस बीच प्यासकी खुश्कीके मारे उन्हें बेहोशी आ गई। अन्तमें उन्हें पानीकी जगह मिली, और वे होशमें आये। किन्तु इस प्रयत्नमे मुहीउद्दीन और उनके साथी बिछुड़ गये थे और अन्तमें अपना फर्ज अदा करते हुए मुहीउद्दीनको अपने प्राणोका त्याग करना पड़ा। उनके साथियोपर उनके इस उत्साहका बहुत गहरा प्रभाव पड़ा और सबने बडी बहादुरीसे काम किया। ऐसी मिसाले बिरली ही मिलती है। खान बहादुरकी लाश बड़े सम्मानके साथ दफनाई गई, और जो आदमी जीवित बचे थे उनको सरकारने अच्छा इनाम दिया।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-१०-१९०५

१३५. इंग्लैंड कैसे जीता

"दादी, डर क्या चीज है? मैंने देखा नहीं है।" अपनी दादीसे यह सवाल करनेवाले बालकने ही इंग्लैंडको पृथ्वीमें जबरदस्त बनाया है।

हमारे मनमें बहुत बार आता होगा कि अंग्रेज हमपर क्यों राज करते हैं? इनको हम कई बार तिरस्कारकी दृष्टिसे देखते होंगे। हमारे मनोंमें आकाक्षा जगती है कि भारत स्वतन्त्र हो जाये तो कैसा अच्छा हो।

ऐसे प्रश्नोंका और ऐसी आकांक्षाओंका उत्तर हमें पिछले सप्ताह मिला है।

होरेशियो नेल्सन १८०५ के अक्टूबर मासकी २१ तारीखको मरा था। उसकी मृत्यु-शताब्दी, जहाँ भी अंग्रेजी झडा फहराता है, वहाँ सर्वत्र इस महीनेकी २१ वी तारीखको मनाई गई थी। वह १७५८ के २९ सितम्बरको जन्मा था। इसका अर्थ यह हुआ कि उसकी मृत्यु ४७ वर्षकी आयुमें हो गई थी। इतनी छोटी उम्रमें उसने जो काम किया, जो शौर्य प्रदर्शित किया और जो फर्ज अदा किया, वह दुनियामें कम लोगोने ही किया होगा। यह माना जाता है कि तोजोने[1] जापानके लिए ऐसा किया है। लेकिन तोजोकी जीतें अभी नई हैं। इसलिए इनका परिणाम हम देख नही सकते हैं। अभी हमारा मन शान्त नहीं है। इसलिए हम उनपर सही-सही विचार नही कर सकते।

१. जापानी नौसेनाध्यक्ष, जिसने १९०५ की रूस और जापानकी लड़ाईमें रूसी बेड़ेको हराया था। देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ४८८-९।

उसी नेल्सनने अपनी बारह सालकी उम्रसे पहले ही "डर क्या चीज है" यह प्रश्न अपनी दादीसे किया था। उसकी दादी जवाब नहीं दे सकी और वह मरा तबतक उसकी डरसे जान-पहचान नहीं हुई। उसने बारह वर्षकी उम्रसे समुद्रमें जाना और दूसरे मनुष्योंके लिए अशक्य बहादुरीके काम करना आरम्भ किया।

१७८९ में फ्रांसमें विप्लव हुआ। नेपोलियन बोनापार्ट उठ खड़ा हुआ। उसने समस्त यूरोपको जीत लेनेका निश्चय किया और कहा जाता है कि यदि उस समय नेल्सन न होता तो वह यूरोपको जीत लेता। नेपोलियनको केवल इंग्लैंड जीतना बाकी रह गया था। उसने अपने कप्तानोंसे कहा: "मेरे लिए छ: घंटे तक इंग्लिश चैनल मुक्त कर दो, और मैं इंग्लैंडको जीत लूँगा।" नेल्सनने उसकी आशाएँ पूरी नहीं होने दी। इस समय फ्रांसीसी बेड़ेके साथ अंग्रेजी बेड़ेका भयंकर युद्ध हुआ। तीन बड़ी-बड़ी लड़ाइयाँ लड़ी गईं। उनमेंसे एकमें नेल्सनका हाथ कट गया, दूसरीमें उसकी एक आँख जाती रही और तीसरीमें उसकी जान ही चली गई।

इनमें ट्रॉफालगरकी लड़ाई[1] सबसे बड़ी थी। अगर इस बार हार हो जायेगी तो इंग्लैंडकी इज्जत ही चली जायेगी। नेल्सन यह बात समझता था और यह समझकर उसने तैयारी की थी। उसके मातहत अधिकारी और सैनिक उसको पूजते थे। ऐसा कोई खतरा न था जो उसने अपने ऊपर लिया न हो। जब उसने नीलकी लड़ाईमें[2] अपना हाथ खोया तब वह बेपरवाह होकर स्वयं अपने घायल सैनिकोंकी सार-सँभालमें लगा था। उसने अपनी पीड़ाकी परवाह नहीं की। इसका अर्थ यह है कि नेल्सन बिलकुल बेखौफ था। उसका यह निश्चय था कि जबतक एक भी अंग्रेज नाविक जीवित रहता है, तबतक हार नहीं मानेंगे। उसकी फौजका जोश भी ऐसा ही था। अपने 'इनविंसिबल'[3] जहाजमें वह सिंहकी तरह गर्जता रहता था। अक्टूबरकी १९ तारीखको महत्त्वपूर्ण लड़ाई हुई। नेल्सनने झंडा फहरा कर घोषित किया कि "इंग्लैंड अपेक्षा करता है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्तव्यका पालन करेगा"। एक फ्रांसीसी जहाज और नेल्सनका जहाज एक-दूसरेसे भिड़ गये। गोलोंकी वर्षा होने लगी। नेल्सन घायल हो गया। उसने आदेश दिया, "मुझे मेरे केबिनमें पहुँचा दो।" उसने अपने हाथसे अपने बिल्ले और तमगे आदि ढँक दिये ताकि किसीको पता न चले कि नेल्सन घायल हो गया है। लड़ाई चलती रही। असहनीय वेदना सहते हुए भी उसने आदेश देना जारी रखा। उसे पता चला कि फ्रांसीसी जहाज हार रहे हैं और अंग्रेजोंकी जीत हो रही है। इस प्रकार उसने अपना फर्ज अदा करते हुए और ये अन्तिम शब्द कहते हुए अपने प्राण त्यागे: "हे ईश्वर, मैं तेरा आभारी हूँ कि मैंने अपना फर्ज पूरा किया।"

अंग्रेजी बेड़ा तबसे सर्वोपरि है। नेपोलियन निराश हो गया और अंग्रेजोंका जोर बढ़ गया। नेल्सन मर जानेपर भी अमर है। उसकी हर बात और हर नसीहत अंग्रेजोंके मनोंमें बस गई है और आज भी उसके गीत गाये जाते हैं। सौ वर्ष बाद नेल्सन मानो कब्रमें से उठ खड़ा हुआ हो, ऐसा पिछले सप्ताह दिखाई देता था।

जिस जातिमें इस प्रकारके हीरे पैदा हों और जो जाति इस प्रकारके हीरोंको इतने यत्नसे सँभाल कर रखे वह जाति आगे क्यों न बढ़ेगी और समृद्ध क्यों न होगी?

हमें उस जातिसे ईर्ष्या नहीं करनी है, परन्तु ऐसी बातोंमें उसकी नकल करनी है। जो लोग खुदा या ईश्वरमें श्रद्धा रखते हैं वे समझ सकते हैं कि उसकी मर्जीके बिना अंग्रेज राज नहीं

१. सन् १८०५में, जब फ्रांसीसी बेड़ा ध्वस्त कर दिया गया और नेल्सन मारे गये।

२. सन् १७९८में, जब नेल्सनने फ्रांसीसियोंको हराया।

३. नेल्सनके जहाजका नाम गांधीजीने गुजरातीमें 'अजीत' लिखा है।

करतें। वे राज्यका उपभोग अपने अच्छे कामोके बलपर कर रहे हैं। यह भी खुदाई नियम है। यदि हम ऐसे कामोंका अनुसरण करेंगे तभी हमारे मनोरथ पूरे हो पायेंगे।

हम नेल्सनके समान हिम्मतवर हो, उसके समान अपने फर्जोको समझें। नेल्सनकी जातिकी तरह हममें भी देशभक्ति पैदा हो। [मै हिन्दू, तुम मुसलमान, मैं गुजराती, तुम मद्रासी, ये सब भेद-भाव भूल जायें। मै और मेरा, यह खत्म हो और मै भारतीय, तुम भी भारतीय, बस यह बना रहे। दोनो साथ-साथ उबरेंगे अथवा साथ-साथ डूबेंगे, यह विशिष्ट निश्चय हम बहुत-से लोग करेंगे, तब स्वतन्त्र होंगे। हम जबतक पंगु रहेंगे तबतक लाठीका सहारा लिए बिना कैसे चल सकेंगे?]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-१०-१९०५

१३६. चायसे हानियाँ

इंग्लैंडमें साउथवर्ककी नगर-परिषदने चायके लाभों और अलाभोकी जाँच करवाई है। इनमें से कुछ जानने योग्य बातें हम नीचे दे रहे है।

नौवी शताब्दीमें चीनी लोगोने चाय पीना शुरू किया और तबसे वे लोग चाय पीते आ रहे हैं। सन् १६६० में इग्लैंडमें चायका प्रवेश हुआ। अठारहवीं शताब्दीमें वहाँ चाय फैल चुकी थी और उस शताब्दीके अन्तमें प्रतिवर्ष दो करोड़ रतल (पौंड) चाय वहाँ आती थी। १९ वी शताब्दीके पहले दशकमे इग्लैंडमें चायकी खपत प्रति व्यक्ति डेढ रतल थी; लेकिन अन्तिम दशकमे उसकी खपत इतनी ज्यादा बढ गई है कि अब प्रत्येक व्यक्तिके पीछे छः रतल चाय खपती है।

[चायके विरुद्ध सबसे पहली आवाज उठानेवाला सुप्रसिद्ध जॉन वेसली था। वह बहुत बड़ा धर्म-वक्ता था। उसे चक्कर आया करते थे; परन्तु उसने चायपर सन्देह नहीं किया। क्योंकि सब यही मानते थे कि चाय पीनेसे तो लाभ ही होता है। एक बार वह अचानक बेहोश हो गया। इसपर उसने चाय छोड़ देनेका निर्णय किया और उसके बाद उसको चक्कर आना बन्द हो गये। सुप्रसिद्ध डॉक्टर सर एड्रयू क्लार्कने लिखा है कि चायसे सब ज्ञानतन्तु कमजोर पड जाते हैं। इंग्लैंडमें हजारों स्त्रियाँ वर्षो दुखी रहती हैं; सिरमें दर्द रहता है, पैर टूटते हैं, चक्कर आते हैं। इस सबका मुख्य कारण चाय है, ऐसा माना जाता है। साउथवर्कमें जिस व्यक्तिने चायकी जाँच की वह लिखता है कि चायको उबालनेसे तो बड़ा नुकसान होता है। अगर चायके बिना काम चले तो अच्छा है। यदि चायकी आदत न छूट सके तो उसका कहना है कि चायपर उबलता हुआ गर्म पानी डालकर उसे तुरन्त गिलासमें छान लिया जाये। उसका रग जरा भी लाल नही होना चाहिए, बल्कि घासका-सा होना चाहिए।

हम लोगोमे चाय पीनेका चलन बिलकुल अभी-अभी चला है। भारतमें उसकी कुछ भी आवश्यकता नजर नहीं आती। फिर भी अगर लोगोंको गोरोकी नकल करके कोई-न-कोई चीज पीनी ही हो तो काफी या कोको पीना कम हानिकर है।]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-१०-१९०५

१३७. सर टॉमस मनरो

सर टॉम्स मनरो १७६१ के मई महीनेमें ग्लासगोमें उत्पन्न हुआ था। सन् १७८० में उसको ईस्ट इंडिया कम्पनीने मद्रासमें नियुक्त किया। इस समय अंग्रेजोंकी हालत बहुत खराब थी; हैदरअली अंग्रेजोंको निकाल बाहर करनेकी तैयारी कर रहा था। कम्पनीके अंग्रेज नौकर आपसमें ही लड़ रहे थे। ऐसे समयमें सर टॉमस मनरोने बहुत अच्छी सेवा की।

वह पाँच वर्ष तक लड़ाईकी कार्रवाइयोंमें व्यस्त रहा। उसके बाद उसने दीवानीमे सेवा की। वह बहरामपुर तहसीलमें राजस्व विभागमें नियुक्त किया गया। उसने भी सर हेनरी लॉरेंसकी तरह इस अवसरका पूरा लाभ उठाया। वह लोगोंके साथ रहने लगा। वह उनसे चाहे जब मिलता, उनके साथ टहलने जाता और गरीब किसानोंकी लम्बी-लम्बी बातें तथा सुख-दुःखकी कहानियाँ सुनता। जब वह लोगोंसे बातचीत करता तब अपने पास किसी भी गुमाश्ते या चपरासीको नही रखता था। वह बहुत सादा जीवन बिताता था। एक पत्रमें उसने लिखा है "आज मैंने जईके आटेके बदले गेहूँके आटेका दलिया बनाया और प्रतीत होता है कि कल भी केलेके सिवा कुछ नहीं खाऊँगा। आजकल मैं गाँव-गाँव फिरता और किसानोंका लगान निर्धारित करता हूँ। इस समय मुझे और कुछ करना सूझता ही नही। मुझे अपने निजी कामके लिए एक घंटा भी नही मिलता। यह पत्र लिखते समय मेरे पास दस-बारह लोग बैठे हैं। प्रातः सात बजेसे लोगोंने आना शुरू कर दिया है। इस समय बारह बजे हैं।" इस प्रकार मनरोने जिलोंमें सात वर्ष तक काम किया, लोगोंको खुश रखा और सरकारी मालगुजारीको मजबूत बुनियादपर रख दिया। अब उसकी बारी इससे भी अधिक उत्तरदायित्वका काम करनेकी आई। उसको कानरा तालुकेमें तालुकेदारकी जगह दी गई। कानराकी हवा बहुत खराब थी, फिर भी उसने वहाँ दम लिये बिना अपना कर्त्तव्य समझकर २६ महीने काम किया। वह लोगोंके दुःख सुननेमें प्रतिदिन दस-दस घंटे लगाता था। वह लिखता है कि मै समुद्रके किनारे किसी बढ़िया मकानमें रहनेकी अपेक्षा लोगोंके बीच छोटी-सी छोलदारीमें रहकर उनके मनोंको ज्यादा आकर्षित कर सकता हूँ। और आज वे लोग हमारी वफादार रैयत बन रहे हैं। वह सोनेके लिए एक बाँसकी चारपाई, एक हल्का गद्दा और एक तकिया रखता था। वह सवेरे-सवेरे उठनेपर बाहर निकलते ही, लोगोंके जो झुंड जमा हो जाते थे उनके साथ बातचीत करता था। फिर वह भोजनके पश्चात् तुरन्त नौकरोंको आदेश देता, चिट्ठियाँ लिखता और फिर कचहरी जाता। शामको पाँच बजे थोड़ा-सा कुछ खा लेता और फिर रातको आठ बजे तक कचहरीमें बैठता। और कभी-कभी आधी रात तक लोगोंकी बाते सुनता। उसने इस प्रकार कानरा तालुकेके लोगोंको सुख-शान्ति दी। उसके बाद उसको निजामके परगनेमें और भी महत्त्वपूर्ण काम दिया गया। वहाँ पिछले वर्षोंमें अकाल पड़नेके कारण लोग कंगाल हो गये थे। लूटपाट बढ गई थी। बदमाशोंका सब जगह बोल-बाला था। सर टॉमस मनरोने अपने सतत उद्योगसे इस राज्यको भी हरा-भरा कर दिया।

इस प्रकार सेवा करते हुए मनरोको २७ वर्ष हो गये थे। इसलिए वह छुट्टीपर इंग्लैंड चला गया और वहाँ उसने विवाह कर लिया। सन् १८१४ में मद्रास इलाकेमे न्याय-विभागकी जाँचके लिए एक आयोग नियुक्त किया गया। वह उसका अध्यक्ष बनकर फिर यहाँ आया। उसने इस समय हमारे देशवासियोंके प्रति अपनी सद्भावना भली भाँति व्यक्त की। और न्याय-विभागमे देशी लोगोंको ऊँचे पद देनेका परामर्श दिया। इस आयोगके काममें १८१७ के मराठोंके

युद्धके कारण विघ्न आ गया। वह इस लड़ाईमें फँस गया। उसकी फौज अप्रशिक्षित और कम थी, फिर भी उसकी प्रतिष्ठा सैनिकोमे इतनी अधिक थी कि वे प्रसन्नतापूर्वक उसके अनुशासनमे रहे। इस लड़ाईमे मनरो इतना अधिक व्यस्त रहा और उसने अपने शरीरको इतना अधिक कष्ट दिया कि उसका स्वास्थ्य गिर गया। इसलिए वह १८१९ मे लड़ाई समाप्त होते ही फिर इग्लैड लौट गया। १८२० मे उसको सरका खिताब दिया गया और वह मद्रास इलाकेका गवर्नर बना कर भेजा गया। इस पदपर वह अपनी मृत्युके दिन तक रहा। वह जितना कठिन श्रम अपने छोटे पदपर किया करता था उतना ही कठिन गवर्नर बन जानेके बाद भी करता रहा। तब भी उसकी सादगी पहले जैसी ही थी। वह स्वयं अकेला ही टहलने निकल जाता था और जो कोई उससे मिलना चाहता उससे मिलता था। जब कभी मौका मिलता तब भारतीयोको अधिकारी नियुक्त करता और आगे बढ़ाता। सन् १८२७ मे यह भला गवर्नर हैजेकी बीमारीसे चल बसा। उसने कभी अपने स्वार्थपर निगाह नही रखी। उसका अपना फर्ज क्या है और वह किस तरह अदा किया जाये, उसने सदा इसीपर ध्यान दिया। उसको भारतीयोसे बहुत प्रेम था और उसका सबसे सही खिताब था "रैयतका दोस्त"। ऐसे सीधे-सादे और रहमदिल अंग्रेज पहले जमानेमे हो गये और अब भी निकल आते हैं, इसीसे बहुत-से दोष होनेपर भी अंग्रेजी राज्यका सितारा जगमगाता रहता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–१०–१९०५

१३८. दुःखद प्रसंग

जेल-सुधार आयोग (प्रिजन्स रिफॉर्म कमिशन) की कार्रवाईके कारण नेटालकी कुछ जायदादोंमें गिरमिटिया भारतीयोकी दशाके विषयमे अनेक आशंकाएँ उत्पन्न हो गई हैं। 'ट्रान्सवाल लीडर' में प्रकाशित रायटरके एक तारमें बतलाया गया है कि हालमें, वेरुलममें जेल-अधिकारियोने इस आशयकी गवाही दी है कि कुछ जायदादें, जो भारतीयोको बड़ी सख्यामें नौकर रखती हैं, अपने कुलियोके बीमार हो जानेपर उन्हें किसी छोटे अपराधके लिए दण्डित करवा देती हैं, जिससे कि उनका इलाज सरकारी खर्चेपर हो जाये और वे अच्छे होकर कामपर लौटें। यह आक्षेप सुनने तक में इतना अमानुषिक और अविश्वसनीय लगता है कि इसे यदि किसी बाहरी व्यक्तिने लगाया होता तो उसे निश्चय ही फटकारके साथ अदालतसे बाहर निकाल दिया जाता। हम स्वय इसपर विश्वास करना नही चाहते, परन्तु जिन्होने यह गवाही दी है उन्होने अपनी जिम्मेवारी अच्छी तरह समझकर ही वैसा किया होगा। हम तो यह मानकर चलते हैं कि उन्होंने तथ्योंका वर्णन बढ़ाकर करनेके बजाय कुछ घटाकर ही किया होगा। यह मामला इतना संगीन है कि इसे जहाँका-तहाँ नहीं छोड़ा जा सकता। और यह भी गम्भीर बात है कि नेटालकी जनताको पहले-पहल इतने संगीन आक्षेपका समाचार अपनी सीमाओके बाहरसे मिला है। हमारा खयाल है कि नेटालके सब समाचारपत्र इस मामलेमें चुप्पी साधे रहे; केवल 'नेटाल मर्क्युरी' ने अपनी एक सपादकीय टिप्पणीमे वेरुलम जेलमें ऐसी चौका देनेवाली अवस्था होनेकी चर्चा की। आयोगकी रिपोर्टके प्रकाशित होनेमें साधारण समय लगेगा ही। तबतक हमें प्रतीक्षा करके ही सन्तुष्ट रहना पड़ेगा। उससे पहले हम ठीक-ठीक नही जान सकेंगे कि गवाही क्या थी।

हमने कहा है, हमें विश्वास नही कि इस आक्षेपको सत्य सिद्ध किया जा सकता है। परन्तु इसे कुछ असम्भावित मानते हुए भी हम उन भयंकर बातोको नही भूल सकते जिन्हें लगभग चालीस वर्ष पूर्व ब्रिटिश गियानामें गिरमिटिया भारतीयोंके प्रति व्यवहारके सम्बन्धमें एक आयोगने प्रगट किया था। तब सिद्ध हो गया था कि इससे भी कही अधिक अमानुषिक और अविश्वसनीय बातें हुई थी, और वे भी केवल एक-आध अपवादके रूपमें नहीं। खासकर बीमार भारतीयोके साथ विशेष बुरा बरताव किया जाता था, यद्यपि उनकी रक्षाके लिए बहुत अच्छे कानून बने हुए थे। जब हम सोचते है कि बीमार गिरमिटिया भारतीय अपने मालिकपर निरा बोझा हो जाता है तब यह बात कुछ-कुछ समझमें आने लगती है। आशा है कि स्वयं जायदादोके मालिक, बदनामीसे बचनेके लिए, इस मामलेकी पूरी-पूरी जाँच की जानेपर जोर देंगे। यह आक्षेप यदि सत्य सिद्ध हो जाये तो भी यह उचित नही कि एक या दो व्यक्तियोके दुष्कर्मोके कारण उन सबकी भी बदनामी हो, जिनका उद्देश्य अपने असहाय गिरमिटिया कर्मचारियोके साथ केवल न्यायोचित ही नहीं, बल्कि अच्छा बरताव करनेका रहता है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४–११–१९०५

१३९. फूट डालो और राज करो

इस लेखका शीर्षक एक कहावत है, जो पहाड़ो जैसी पुरानी है। जो नीति इस कहावतसे प्रकट होती है उसका श्रीगणेश भारतपर ब्रिटिश शासनके प्रसंगमे एक ब्रिटिश राजनीतिज्ञने किया था। हालमें, भारतसे आया हुआ जो तार समाचारपत्रोंमें प्रकाशित हुआ है, उससे इस कहावतका मतलब भली भाँति समझमें आ जाता है। बतलाया गया है कि बग-भंगसे बने नये प्रान्तकी राजधानी ढाकामें बीस हजार मुसलमानोंने इकट्ठे होकर विभाजनके लिए, और उसके फलस्वरूप हिन्दुओंके अत्याचारसे मुक्ति पा जानेके लिए खुदाकी इबादत की और उसका शुक्र माना। हमें विश्वास नहीं होता कि यह आन्दोलन अनायास ही हुआ होगा। यह देखनेमें ही भोंड़ा है। यदि मान भी लिया जाये कि हिन्दुओंकी ओरसे कोई अत्याचार होता था तो प्रान्तका विभाजन किये बिना भी उससे राहत मिल सकती थी; क्योंकि एक सम्प्रदायको दूसरेसे बचानेके लिए ब्रिटिश राज्यकी शक्ति वहाँ मौजूद थी। इसलिये हमारा खयाल है कि यह सब बंग-भंगके विरुद्ध चलते हुए अत्यन्त प्रबल आन्दोलनका जवाब देनेके लिए किया गया है। बहिष्कार अभूतपूर्व तीव्रताके साथ फैला है। वह खास और आम, दोनों समाजोमे घुस चुका है; और यदि काफी समय तक चलता रहा तो बंगालके समस्त सम्प्रदायोंको मिलाकर एक कर देगा; मुसलमान भी अलग नही रहेगे। इस कारण, जिन लोगोंका ऊपर उद्धृत कहावतमे विश्वास है उन्हें स्वभावतः ही किसी काटकी तलाश हुई; और उन्होंने उसे ढाकाके थोड़ेसे मुसलमानोमें पा लिया। [करोड़ो मनुष्योंपर शासन करनेके लिए, एक जातिको दूसरीके विरुद्ध खड़ा कर देनेका सिद्धान्त राजनीतिक कूपमण्डूकता है।] हम जानते है कि ऐसे सुझावका तीव्र विरोध किया जायेगा। हम यह भी जानते है कि शुद्ध ब्रिटिश राजनीति इस विचारके विरुद्ध विद्रोह करेगी। परन्तु साथ ही, इस नीतिकी जड़ें बहुत गहरी है, इसपर चलकर पहले अस्थायी सफलता प्राप्त की जा चुकी है, और ढाकाका तमाशा इसका विस्तारमात्र है। यदि आंग्ल-भारतीय शासक, जिन्होंने वास्तवमें भारतीय-साम्राज्यका निर्माण किया और जिनका विश्वास था कि यह जनताकी सद्‌भावनाके सहारे स्थायी हो जायेगा, आज अपनी कब्रोसे उठकर खड़े हो जायें,

तो, हमारी सम्मतिमें, वे प्रथम व्यक्ति होंगे जो बहिष्कार-आन्दोलनको प्रोत्साहन देंगे; और साथ ही वे उस लोकमतको शान्त करनेका यत्न करेंगे जो कि अब इतना भड़क चुका है। [इससे अधिक स्वाभाविक बात और क्या हो सकती है कि लोग अपने देशमें ही उत्पन्न और निर्मित हुई वस्तुओंसे अपना तन ढँकना, पेट भरना और भोगकी अपनी अन्य आवश्यकताएँ पूरी करना पसन्द करें?] हम देखते हैं कि इस प्रकारके आन्दोलन अन्य उपनिवेशोंमें इससे भी अधिक व्यापक रूपमें चल रहे हैं। जनतामें इन विचारोंका फैलना न्यायसंगत और शुभ है, और ब्रिटिश ताजके प्रति निष्ठाकी भावनासे नाममात्रको भी असगत नहीं है। यह उस भविष्यवाणीकी पूर्तिमात्र है जो भारतके विषयमें मैकॉलेने की थी।

परन्तु भारतके शासकोंको यदि यह आन्दोलन युक्तियुक्त दिखलाई नहीं पड़ता तो भारतीयोंको भी क्यों न दिखाई पड़े? [यह सत्य है कि एक हद तक भारतमें ब्रिटिश शासनका प्रवेश आन्तरिक फूटके कारण ही सम्भव हुआ था, परन्तु यह कर्तव्य और अधिकार भी तो ग्रेट ब्रिटेनका ही है कि वह भारतके दो बड़े सम्प्रदायोंमें मेल करा दे और उनके लिए ऐसी विरासत छोड़ जाये जिसके कारण न केवल करोड़ों भारतीय उसके प्रति कृतज्ञ रहें, अपितु सारा संसार निःसकोच भावसे प्रशंसा करे।] इसलिए [दोनों सम्प्रदायोंको चाहिए कि उन्हें जो अवसर मिला है उसका वे पूरा लाभ उठायें और अपने सामूहिक हितके लिए आपसी मतभेद तथा ईर्ष्या-द्वेष भुला दें। कोई तीसरा पक्ष उनके झगड़ेमें पड़कर दोनोंसे अपना फायदा कर ले जाये, इससे कहीं अच्छा तो यह है कि दोनों भाई एक-दूसरेके हाथों नुकसान उठा लें।] जो भी इन पंक्तियोंको पढ़े, उन सबसे हम अनुरोध करेंगे कि वे हमारे साथ मिलकर प्रार्थना करें कि बंगालका वर्तमान आन्दोलन बलशाली होता चला जाये, क्योंकि उसमें विभिन्न जातियोंमें एकता करा सकनेका अंकुर विद्यमान है; और ढाका तथा अन्य स्थानोंके लोगोंको, वे [चाहे हिन्दू हों चाहे मुसलमान, यह सुबुद्धि प्राप्त हो कि वे ऐसा कोई भी काम न करेंगे जिससे भारतकी जनताका भविष्य उज्ज्वल होनेकी सम्भावना नष्ट हो जाये।]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४-११-१९०५

१४०. दादा उस्मानकी अपील

इस अपीलके[1] विषयमें हमारे कथनको उद्धृत करनेके बाद 'फ्राइहीड हेराल्ड'ने कहा है कि प्रश्न यह नहीं है कि,

> दादा उस्मानको परवाना मिलना चाहिए या नहीं, बल्कि यह है कि उन्हें नगरके किसी भी भागमें व्यापार करनेका अधिकार है या नहीं। यद्यपि दादा उस्मानको कुछ बरस तक व्यापार करनेका परवाना प्राप्त था, फिर भी इतने मात्रसे सदाके लिए नगरमें रहनेका उनका निहित अधिकार सिद्ध नहीं होता। १८८६ से पूर्व कुछ भारतीय ट्रान्सवालमें आये थे तब उनको परवाने इस शर्तपर दिये गये थे कि वे केवल उन बस्तियों और स्थानोंमें व्यापार करेंगे जो सरकारने उन्हें बतला दिये हैं, और अब प्रश्न यह है कि दादा उस्मानको किसी बस्तीमें चला जाना चाहिए या नहीं।

१. देखिये, "परवानेका एक और मामला," पृष्ठ १०८-९।

इसके बाद हमारा सहयोगी कहता है कि यह प्रश्न गोरे या गेहुँए रंगवालोंका नहीं है। हमारे कथनको गलत बतलाया गया है। दुर्भाग्यवश, हमने उसके जिस कथनको ऊपर उद्धृत किया है उसके लिए हमें भी उसी शब्दका प्रयोग करना पड़ रहा है। दादा उस्मान परवाना पाने या व्यापार करनेके अधिकारी हैं या नहीं, यह प्रश्न यहाँ विचारणीय समस्यासे भिन्न है, और दोनोंमें अन्तर न होते हुए भी हमारे सहयोगीने उनमें अन्तर दिखला दिया है। सचाई यह है कि निकायके फैसलेके कारण श्री दादा उस्मान बरबाद हुए जा रहे हैं, और हमारे कथनमें जोर इसी बातपर दिया गया था। कानूनी अर्थोंमें प्रार्थीके कोई "निहित अधिकार" नहीं है, इस बातसे तो हमारी इस युक्तिका ही बल प्रकट होता है कि कभी-कभी ब्रिटिश संविधान इतना कमजोर पड़ जाता है कि वह अन्यायको सहारा देकर उसका समर्थन करने लगता है। इस मामलेमें ऐसा ही हुआ है। [जो आदमी कई वर्षों तक व्यापार करता रहा हो, उसके व्यापार करनेके अधिकारको बिना कोई मुआवजा दिये छीन लेना, किसी साधारण आदमीकी दृष्टिमें बहुत-कुछ डकैतीके समान होगा।] परन्तु यही काम जब सरकारी नियमकी आड़में किया जाता है तब उसे "कानून" का भ्रान्त नाम दे दिया जाता है। हमारा सहयोगी जब यह कहता है कि प्रश्न यह है कि दादा उस्मानको किसी बस्तीमें चला जाना चाहिए या नहीं, तब हम भी उसका समर्थन करते हैं। हम अपने सहयोगीको बतला दें कि बस्तियोंसे सम्बद्ध १८८५ के कानून ३ की व्याख्या ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयने यह की है कि वह ब्रिटिश भारतीयोंको बस्तियोंमें व्यापार करनेके लिए विवश नहीं करता। ट्रान्सवालमें किसी भी भारतीयको जहाँ वह चाहे वहाँ व्यापार करनेका अधिकार है, और वह रुपया देकर परवानेकी माँग कर सकता है। फ्राइहीडने ट्रान्सवालके कानून अपना लिये हैं, जिनमें भारतीयों-सम्बन्धी कानून भी शामिल है, और उसे उनके अनुसार चलना होगा। इसलिए यदि नेटालका विक्रेता-परवाना अधिनियम रुकावट न डालता तो आज श्री दादा उस्मान फ्राइहीडमें व्यापार करते होते। इसी विक्रेता-परवाना अधिनियमको उनके विरुद्ध लागू कर दिया गया है, और इसीके बलपर उनके प्रतिस्पर्धी व्यापारी, न्यायकी समस्त भावनाओंको ताकपर रखकर, एक गरीब आदमीको बरबाद करनेमें सफल हो गये हैं, क्योंकि, हम दुहराते हैं, "उसकी खालका रंग गेहुँआ है।" क्या परवाना-अधिकारीने परवाना देनेसे इनकार करते हुए यही दलील नहीं दी है कि मैं फ्राइहीडमें डंडीकी दशाकी पुनरावृत्ति होने देना नहीं चाहता? दूसरे शब्दोंमें, वे फ्राइहीड नगरमें एशियाई-व्यापारियोंकी संख्या इतनी अधिक होने देना नहीं चाहते जितनी कि डंडी नगरमें हो गई है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४–११–१९०५

१४१. लॉर्ड मेटकाफ़

भारतीय समाचारपत्रोंके तारक

"राज्यकर्ता प्रजाको सुख पहुँचाये तभी उसे राज्याधिकार शोभा देगा," यह कहनेवाले और इसके अनुसार आचरण करनेवाले चार्ल्स थेऑफिलस मेटकाफका जन्म कलकत्तेमें ३० जनवरी, सन् १७८५ को हुआ था। १५ वर्षकी आयुमें उन्होंने पढ़ाई छोड़ी। विलायतमें जैसी-तैसी शिक्षा लेनेके बाद १६ वर्षकी आयुमें वे कलकत्ता [आये][1]। इस समय ईस्ट इंडिया कम्पनी अपने कर्मचारियों-पर बहुत सख्ती बरतती थी। इसलिए जो युवक काफी पढ़े-लिखे न होते, उन्हें नौकरीमें नहीं लिया जाता था। अत: लॉर्ड मेटकाफ़को कलकत्तेके कॉलेजमें दाखिल होना पड़ा। इस प्रकार कुछ समय तक शिक्षा लेनेके बाद चार्ल्स मेटकाफ़को एक छोटीसी जगह मिली। १९ वर्षकी आयुमें वे जनरल लेकके सरिश्तेदार बने। जनरल लेक और उनके मातहत अधिकारी दीवानीके काममें इस कच्चे जवानकी नियुक्तिसे नाराज हुए। चार्ल्स मेटकाफ़ चेत गये और उन्होंने लड़ाईके मैदानमें अपनी बहादुरी बतानेका निश्चय किया। डिगके[2] किलेको तोड़नेमें उन्होंने पहल की और ऐसा अच्छा काम किया कि उनपर जनरल लेक खुश हो गये। तीन वर्ष बाद मेटकाफ़को बड़े गंभीर कामपर भेजा गया। पंजाबमें महाराजा रणजीतसिंहके साथ फ्रांसीसी लोग साँठ-गाँठ कर रहे थे। इस साँठ-गाँठको खतम कर देनेका काम मेटकाफ़को सौंपा गया और उनकी कोशिशसे अंग्रेज सरकार और रणजीतसिंहके बीच समझौता हो गया। इससे लॉर्ड लेक इतने प्रसन्न हुए कि उनको दिल्लीमें २६ वर्षकी आयुमें रेजिडेंटका काम सौंपा गया।

अब उन्होंने जनताको सुख पहुँचानेका काम शुरू किया। जमीदारोंके अधिकारोंको ठोस बुनियादपर कायम कर दिया। इस सम्बन्धमें उन्होंने इस प्रकार लिखा है:

> हमें लोगोंकी जमाबन्दी लम्बी मुद्दतके लिए मुकर्रर कर देनी चाहिए, ताकि लोग काफी मुनाफा कमा सकें और हम लोगोंको दुआ दें। उनकी जमीन आगे चलकर हाथसे निकल जायेगी, ऐसा डर बना रहनेके बजाय उनके मनमें यह विश्वास जमा देना चाहिए कि उनके हाथसे कोई जमीन लेनेवाला नहीं है। यह करेंगे तो लोगोंके मन शान्त होंगे और अपने ही स्वार्थके कारण वे ऐसा मानेंगे कि हमारा राज्य बड़ा अच्छा है। कुछ व्यक्तियोंकी धारणा है कि यदि लोग स्वतन्त्र और बन्धनमुक्त हो जायेंगे तो भविष्यमें अंग्रेजी राज्यको हानि पहुँचेगी। इस संभावनाको मान लिया जाये तब भी प्रजाके अधिकारोंको किस तरह छीना जा सकता है? उदार राज्यकर्ता इस प्रकारकी दलीलोंको महत्त्व कैसे दे सकते हैं? मनुष्यके राज्यके ऊपर खुदाका राज्य चलता है। वह महबूब इतना बड़ा है कि घड़ीमें राज्य छीन सकता है और घड़ीमें दे सकता है। उसके हुक्मके सामने इन्सानकी चतुराई काम नहीं दे सकती। इसलिए राज्यकर्ताओंका केवल यही फर्ज है कि प्रजाकी सुख-सुविधा बढ़ाते रहें। इस प्रकार हम अपना फर्ज अदा करेंगे तो भारतीय प्रजा हमारा उपकार मानेगी और दुनिया सदाके लिए हमारी

१. मूलमें यहाँ वाक्य अधूरा है।

२. आगरेके नजदीक एक किला; मूलमें 'डिग' दिया है।

तारीफ करेगी। ऐसा करनेपर भविष्यमें अगर बलवा उठा भी तो क्या हुआ? परन्तु आगे चलकर हमारे लिए कुछ खतरा है, ऐसे ओछे अन्देशोंको लेकर हम अपनी प्रजापर सितम ढायेंगे तो हमपर जो हमले हों, उनके हम लायक ही माने जायेंगे। और ऐसी दशामें जब हम पछाड़े जायेंगे तब जगत हमें धिक्कारेगा, हमपर थूकेगा और हमें गालियाँ देगा।

ऐसी उमदा बातें जवान मेटकाफ़ने प्रजाके दुःखोंके लिए अपने दिलमें दर्द रखकर लिखी है। मेटकाफ़को निज़ामके रेज़िडेंटकी जगह भी मिली थी। निज़ामकी सरकारके पास इस समय पैसेकी बड़ी कमी थी। कुछ धूर्त परन्तु वसीलेदार अंग्रेजोंने बहुत पैसा ब्याजपर दे रखा था। इससे मेटकाफ़के दिलको बड़ी चोट पहुँची। उन्होंने गवर्नर-जनरलकी परवाह न कर अपना फ़र्ज़ अदा किया और धूर्तोंको हटा दिया। १८२७ में मेटकाफ़ कलकत्तेकी कौंसिलके सदस्य बने। इस समय नेक लॉर्ड विलियम बेंटिक वाइसराय थे। लॉर्ड बेंटिकको अपना स्वास्थ्य खराब होनेके कारण एकाएक विलायत जाना पड़ा, इसलिए मेटकाफ़को स्थानापन्न गवर्नर-जनरलकी जगह मिली। मेटकाफ़ने सबसे बड़ा काम इस समय किया। उन्होंने भारतके समाचारपत्रोंको स्वतन्त्र करनेका कानून बनाया। इसके कारण उनके वरिष्ठ अधिकारी उनसे नाराज हो गये, परन्तु इस बातकी उन्होंने परवाह नहीं की। बड़े-बड़े अंग्रेजोंने उनका विरोध किया। उन्होंने उनको इस तरह उत्तर दिया:

यदि मेरा विरोध करनेवाले यह दलील देते हों कि ज्ञानका प्रचार होनेपर हिन्दुस्तानमें हमारे राज्यको धक्का पहुँचेगा, तो मैं कहता हूँ कि चाहे कैसा ही परिणाम क्यों न हो, लोगोंको ज्ञान देना हमारा कर्त्तव्य है। अगर लोगोंको अनपढ़ रखनेसे अंग्रेजी राज्य टिक सकता हो, तो हमारा राज्य इस देशपर एक कलंक है और उसे खत्म हो जाना चाहिए। मुझे तो लगता है कि यदि ये लोग अनपढ़ रहेंगे तो हमारे लिए अधिक डरकी बात होगी। मैं आशा करता हूँ कि उनको ज्ञान मिलनेसे उनके वहम दूर होंगे, अंग्रेजी राज्यसे होनेवाले लाभको वे समझेंगे, हमारी आपसकी सद्भावना बढ़ेगी और उनके और हमारे बीच जो अलगाव और असहयोग है वह दूर होगा। फिर भी हिन्दुस्तानके भविष्यके बारेमें खुदाई फरमान क्या है, यह हम नहीं जान सकते। हमारा कर्त्तव्य केवल इतना ही है कि हमारे हाथमें जो काम आया है, वह हमें लोगोंकी भलाईके वास्ते कर देना चाहिए।

मेटकाफ़ इसके बाद कैनेडाके गवर्नर-जनरल नियुक्त हुए। इस समय वे सख्त बीमार हो गये। उन्होंने अपनी बीमारीकी परवाह नहीं की और अपना कर्त्तव्य समझकर वे अन्त तक काम करते रहे। वे स्वयं बड़े धार्मिक व्यक्ति थे। सन् १८४० में अपनी रानीकी नौकरी वफ़ादारीके साथ बजाते हुए और लोगोंके प्रीति-पात्र बनकर वे परलोक सिधारे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४-११-१९०५

१४२. पत्र : छगनलाल गांधीको

[जोहानिसबर्ग]
नवम्बर ६, १९०५

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। रेवाशंकरके नामका पत्र वापस भेजता हूँ। अभयचन्दसे पत्रोंको वापस लेनेके लिए कहूँगा। वह प्रिटोरिया गया है।

तुमने किचिनके बारेमें लिखा सो ठीक किया है। तुम्हारी दलील गलत नही है। साधारणतः उन्हे जो सुविधाएँ दी गई है, वे आवश्यकतासे अधिक हैं। उन्हे जो रकम दी जा रही है वह उनकी निपुणताके लिए नही, बल्कि मेरी भूलके कारण दी जा रही है। और मेरी भूलको सुधारनेका कोई दूसरा रास्ता न था। मैंने उन्हे जानेकी छूट दे दी थी। परन्तु वे कहने लगे कि मुझसे अब कही कोई काम नही हो सकता। जोहानिसबर्गमें मै फिरसे काम शुरू नही कर सकता। उनका अपना बड़ा कारोबार था, उसे उन्होने बन्द कर दिया, इसमें जरा भी शक नही। ऐसी परिस्थितिमें, मुझे लगा, मै उन्हें एकदम बरखास्त कर दूँ, यह हो ही नही सकता। इसलिए सबसे अच्छा रास्ता यह दीख पड़ा कि उन्हें वेतन दिया जाये और वह केवल उनके खर्च-भरके लिए। फिर भी उनको और मुझे एक माहकी सूचनापर इस व्यवस्थाको भग करनेकी स्वतत्रता है। इसलिए मान लो कि प्रेसकी हालत बिगड़ जाये और आमदनी बिलकुल न हो तो मै एक माहकी पूर्व-सूचना देकर उन्हे हटा सकता हूँ। प्रेसकी हालत अच्छी हो तो भी उन्हे १० पौडसे अधिक देनेकी न तो बात है और न उसकी जरूरत ही है। इसलिए वे हमेशा इतना ही वेतन लिया करेंगे, ऐसा मान बैठनेका कोई कारण नही है। पोलकके लौटनेपर उनकी और इनकी नही बनेगी, यह भी हमें नही मानना चाहिए। यदि नही बनी तो इन्हे जाना पड़ेगा। पोलकको वहाँ आनेमें अभी कमसे-कम ढाई वर्ष लगेंगे। इसलिए इतने दूरकी हम आज चिन्ता न करे। तबतक मुझे लगता है कि हमारी स्थितिमें बहुत परिवर्तन होगे। किचिनको घर और जमीन दिये बिना कोई चारा न था। उनका मन फीनिक्समें है — वहाँका जीवन उन्हे निःसन्देह पसन्द है। उनके सम्बन्धमें तुमको अगर कुछ भी करनेकी जरूरत आ पडे तो जरा भी सकोच न करना। आदमीके अच्छे गुणोंका मनन करना है, उसके दोषोका खयाल हम नही रख सकते। अगर हमारे असुविधाएँ या संकट भोगनेसे दूसरे सुखी रहें, दूसरोंका कल्याण हो, तो हमें सन्तोष मानना है। दो एकड़ जमीन तो जिसे चाहिए उसे — जैसे तुमको तथा वेस्ट, बीन और आनन्दलालको — देनेमें जरा भी दिक्कत नही है। मुझे लगता है, यह मैंने पहले ही कह दिया है। पोलकने भी दो एकड़ जमीन माँगी है। मैं मानता हूँ कि यदि किचिन रह जायेंगे तो उनका स्वभाव बदल जायेगा और वे अच्छा काम करेंगे। यदि उनके स्वभावमें रद्दोबदल न हुआ तो वे खुद ही हट जायेंगे। और भी खुलासेकी जरूरत हो तो माँगना। हमेशा बेधडक होकर मुझे लिखना।

चिरंजीव गोकुलदास स्वभावका अच्छा है। परन्तु देशके सस्कारके कारण उसमें तेरा-मेरा बहुत आ गया है। तुम्हारे प्रति उसकी दृष्टि निर्मल नहीं है। मैंने उसे बहुत समझाया है, परन्तु मै देखता हूँ कि जवानीके नशेमें उसके दिलमें यह खयाल घर कर गया है कि "मामा पागल है"। उसका धन कमानेकी ओर अधिक ध्यान है। उसकी वृत्ति निर्मल बने, इस दिशामें हमें अधिक ध्यान देना है। तुम उसे सँभालना और धीरे-धीरे मोड़ना। मेरा खयाल है कि वह परिश्रम

करेगा। फिलहाल प्रेससे वह कुछ न लेगा। और उसी प्रकार वह पूरे दिन काम भी नही करेगा। वह अभी विद्यार्थी है, ऐसा ही उसे समझाया है; और ऐसा ही उससे बरताव करना है। इसलिए वह कुछ समय प्रेसमें काम करे, कुछ खेतमें और शेष समय अध्ययनमें लगाये। उसे गुजराती, अंग्रेजी और तमिल अच्छी तरह सीख लेनी चाहिए। मैंने उससे कहा है कि वह प्रेसमें तमिल टाइप [कम्पोज करने] का काम शुरू करे। इस विषयमें मैं पिल्लेको भी पत्र लिखूंगा। गोकुलदासके वहाँ पहुँच जाने और कामसे परिचित हो जानेके पश्चात् अब अगर तुम यहाँ बड़े दिनके अवसरपर आ सको तो आ जाना।

वेस्ट जॉबका काम किस तरह करते है? परेशान रहते है या प्रफुल्लित? समाचारपत्रका कम्पोजिग कौन-कौन करता है? वीरजीका बरताव कैसा है? सबकी स्थितिके बारेमें लिखना। बीनका काम कैसा चल रहा है? किताबोंकी स्थिति अब कैसी है? आनन्दलालका क्या हाल है? गोकुलदासके बारेमें मैंने उसे लिखा है। मुझे अभी तो लगता है कि तुम तीनों भाई साथ-साथ रहो तो अच्छा हो। परन्तु यदि ऐसा करनेमे अनबन हो जानेकी जरा भी सम्भावना हो तो मेरी लिखी बातोंपर अमल न करना। गोकुलदास तो तुम्हारे साथ ही रहेगा।

ऑर्चर्ड अभी घरमे है या चले गये है?

तमिलकी सामग्री भेजी है परन्तु मै देखता हूँ कि उसमें मुझे कठिनाई होगी। जिस व्यक्तिने अनुवाद किया है उसका ज्ञान अल्प ही है, ऐसा मैंने अनुभव किया। वह डर गया और कहने लगा, यह काम उसे न दिया जाये तो ठीक हो। गोकुलदास तथा पिल्ले दोनों अगर सिरपच्ची करके भी समझ ले तो बहुत ठीक होगा। गोकुलदासको कुछ आ गया है। मैं यहाँसे जो अंग्रेजी भेजूँगा उसका सिर्फ तर्जुमा ही करना पड़ेगा। तुम पिल्लेसे पूछ देखना। इस हफ्तेके अंकमें किसने लिखा है?

हेमचन्दसे सन्तोष है या नहीं? वह रकमकी वसूलीके लिए कहीं जाता है? उसे अच्छी तरह तालीम देना।

रामनाथका क्या हुआ है? अयोध्याको मैंने पत्र लिखा था।

जयशंकरको कोई आदमी मिला या अब भी तकलीफ ही है? बीनको जो फुटकर चीजें चाहिए सो दिला देना। मूनकी रिपोर्ट जब आये, भेज देना। जो जमीन जोती जा चुकी है उसमें बोवाई कौन करेगा? छत चूना बन्द हुआ या अब भी जारी है?

मर्क्युरी लेनमें कार्यालय ले जानेके बाद काममें अन्तर पड़ा है या नही, सो लिखना। गोरे लोग कुछ ज्यादा आते है क्या?

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्च]

गोविन्दजी कहते हैं कि उन्हें अखबार नियमित रूपसे नही मिलता।

कल मैंने और भी गुजराती सामग्री भेजी है।

पहले चार पन्नोंके पीछे भी लिखा है, सो देख लेना।

मूल गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ४२६२) से।

१४३. तार[1] : सम्राटको

[जोहानिसबर्ग
नवम्बर ९, १९०५ से पूर्व]

ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय कृपालु महामहिमका उनके पैंसठवें जन्मदिनके उपलक्षमे विनम्रतापूर्वक अभिनन्दन करते है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-११-१९०५

१४४. सम्राट चिरजीवी हों !

गुरुवार ९ तारीखको महामहिम सम्राटका पैंसठवाँ जन्मदिवस था। उस दिन उनके विशाल साम्राज्यके सब भागोसे उनकी सेवामें राजभक्तिपूर्ण बधाइयाँ अर्पित की गईं। आधुनिक युगका कोई राजा अपनी प्रजाओके प्रेम और प्रशंसाका इतना बड़ा अधिकारी नहीं बन सका जितने कि सम्राट एडवर्ड है। वे जब सिंहासनारूढ़ हुए तब उनकी स्थिति अत्यन्त कठिन थी, क्योंकि वे महान् विक्टोरियाके उत्तराधिकारी हुए थे; परन्तु अपने राजत्वके स्वल्पकालमें ही उन्होने उन परम्पराओंको कार्यान्वित किया जिन्हें वह उदात्त महारानी छोड़ गई थीं; और उन्होंने सिद्ध कर दिया है कि [वैधानिक प्रणालीसे शासित देशमें भी राजाके लिए अपनी प्रजाकी सेवा करनेके अनेक अवसर आते रहते हैं; परन्तु ऐसा वही कर सकता है जिसमें, महामहिमके समान, अपनी उच्च स्थितिके सही ज्ञानके साथ-साथ असाधारण योग्यता भी हो।] ठीक निर्णय कर सकनेकी अपनी शक्ति और कुशलताके द्वारा उन्होंने संसारमें शान्तिकी स्थापना करने और ब्रिटिश साम्राज्यको समृद्ध बनानेमें बहुत बड़ा योग दिया है। वे संसार-भरमें अपनी प्रजाके प्रेम-भाजन बन गये है, क्योकि सबके स्वामी होते हुए भी उन्होंने अपने-आपको सबका सेवक बनाया है। संसारके समस्त इतिहासमें अन्य कोई राजसिंहासन जनताके हृदयोंमें इतनी दृढ़तासे प्रतिष्ठित नही हुआ जितना कि हमारे वर्तमान सम्राटका। ब्रिटिश भारतीय उनकी प्रजाओमें सबसे निम्न होते हुए भी अपनी निष्ठा और भक्तिमें किसीसे भी कम नहीं है। उनकी हार्दिक प्रार्थना है कि सम्राट चिरजीवी हों और उस सिंहासनको और भी द्युतिमान बनायें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-११-१९०५

१. यह तार ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय संघने उपनिवेश-सचिव द्वारा भेजा था।

१४५. इंग्लैंड जानेवाला भारतीय प्रतिनिधिमण्डल

शाही संसदका आम चुनाव अब होनेवाला है। वह किसी भी दिन हो सकता है। श्री चेम्बरलेनने अपनी सम्मति प्रगट की है कि यह जितनी जल्दी हो जाये उतना ही अच्छा है। भारतीयोके लिए सबसे बड़ी दिलचस्पीकी बात वह प्रतिनिधिमण्डल है, जो भारतकी ओरसे ब्रिटिश मतदाताओके सामने भारतके पक्षकी वकालत करनेके लिए इंग्लैंड गया है। जो व्यक्ति इस प्रतिनिधिमण्डलमें गये हैं उनकी, और जिस प्रयोजनसे वे गये हैं उसकी, जानकारी शायद हमारे दक्षिण आफ्रिकाके यूरोपीय पाठकोंके लिए भी अप्रासंगिक नहीं होगी।

माननीय प्रोफेसर गोखले और लाला लाजपतराय[1] राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा भेजे हुए प्रतिनिधियोके रूपमें लन्दनमें मौजूद है, और इन दोनोंके शिरोमणि भारतके पितामह श्री दादाभाई नौरोजी है। उन्हें विशेष रूपसे भेजा नही गया। वे वही रहकर स्वेच्छांसे देश-निकालेका जीवन बिता रहे है। निरन्तर आत्मत्यागका यह जीवन बिताते उन्हें आधी शताब्दीसे भी अधिक हो चुका है। श्री गोखलेने उनके विषयमे कहा है:

> **क्या खूब वह जीवन रहा है! उसकी मधुर पवित्रता, उसकी सादगी, उसकी विनम्र सहिष्णुता, उसकी उच्च त्याग-वृत्ति, उसका असीम प्रेम, उच्च आदर्शोंके लिए उसकी दृढ़ प्रवृत्ति — इन सब गुणोंका जब ध्यान करते हैं तब अनुभव होता है, मानो किसी महत्तर विभूतिके सामने खड़े हों। जो राष्ट्र ऐसे व्यक्तिको जन्म दे सकता है, उसका भविष्य निश्चय ही आशापूर्ण है; भले ही, जैसा कि श्री रानडेने[2] एक बार कहा था, वह तीस करोड़ लोगोंमें अकेला हो।"**

ऐसा है दादाभाईका शीर्ष-स्थानीय व्यक्तित्व। वे भारतीय देशभक्तोंको मन्त्रणा देने और अपनी सलाहसे उनका पथ-प्रदर्शन करनेके लिए सदा लन्दनमें विद्यमान रहते है।

श्री गोखले अभी तो बिलकुल जवान ही हैं, फिर भी भारतकी आशा उनमें केन्द्रित है। वे अनेक बार यश प्राप्त कर चुके हैं और अभी और करनेवाले है। युवक होते हुए भी वे कलकत्तेकी शाही विधान-परिषद (इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल) में नाम कमा चुके हैं। जिन लोगोका उनसे मतभेद रहता है वे भी उनकी देशभक्ति और प्रभावशाली वक्तृत्व-शक्तिको मानते हैं। गणितपर उनका अधिकार अनुपम है। पूनाके फर्ग्युसन कॉलेजको बीस वर्षके लिए अपनी सेवाएँ पुरस्कारके बिना अर्पित करके, उन्होंने अपने प्रेममय जीवनको और भी पवित्र बना लिया है।

पंजाबके लाला लाजपतराय भी कुछ कम उदात्तमना नही है। वे पंजाबके माने हुए नेता हैं। वे अपनी कमाई और शक्ति, आर्य समाजके कार्योको बढ़ानेमें लगा रहे हैं — आर्यसमाजसे

१. (१८६५–१९२८), सुप्रसिद्ध राष्ट्रीय नेता जो 'पंजाब केसरी' कहलाते थे। १९०७ में ब्रिटिश सरकार द्वारा देशनिकाला दिया गया और कई वर्ष संयुक्त राज्य अमेरिकामें रहे। १९२० में कांग्रेसके विशेष अधिवेशन, कलकत्ताके अध्यक्ष। साइमन कमिशनके बहिष्कारके हेतु किये गये प्रदर्शनके समय पुलिसकी लाठियोंसे घायल, और बादमें उसीके कारण देहावसान।

२. बम्बई उच्च न्यायालयके न्यायाधीश और प्रसिद्ध समाज-सुधारक, जिन्हें गोखले अपना गुरु मानते थे। देखिए खण्ड २, पृष्ठ ४२०।

हमारे पाठक हालमें परिचित हो चुके हैं[1]। काँगड़ा जिलेमें भयंकर भूकम्पके कारण जो विपत्ति आ गई थी उससे लोगोंको राहत दिलानेका स्वेच्छया अंगीकृत कार्य उन्होंने पूरा ही किया था कि कर्तव्यकी पुकारपर वे इंग्लैंडके लिए चल पड़े। इंग्लैंडमें माननीय श्री गोखले समयपर उनके साथ नहीं हो सके, इस कारण वे अमेरिका चले गये और वहाँकी महान् जनतामें भारतीय परम्पराओंका प्रचार करते रहे।' 'बोस्टन ट्रान्सक्रिप्ट'ने उनके विषयमें लिखा है:

> बहुत सप्ताह नहीं हुए कि कर्नल यंगहस्बैंडने लन्दनमें घोषणा की थी कि अध्यात्मवाद और बौद्धिक जीवनकी सभी बातोंके लिए हम ऐंग्लो-सैक्सन लोगोंको हिन्दुओं तथा अन्य प्राच्य लोगोंके चरणोंमें विद्यार्थी बनकर बैठना होगा। जिन बातोंको हम सप्ताह-भरमें केवल एक बार गिरजाघरके एकान्तमें बिताये हुए एक घंटेके लिए पृथक् रख देते हैं उन्हें वे, कितने ही युगोंसे, मानव रुचियोंके उच्चतम और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अंगके रूपमें पोषित करते रहे हैं, और आज भी कर रहे हैं। स्वरूपवान और गुण-सम्पन्न हिन्दू युवक श्री राय . . . उच्च वर्गके हिन्दुओंकी सुन्दरता और शक्ति कितनी भव्य है! . . . भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसका यह प्रतिनिधि, जिसने इस सप्ताह यहाँ दो बार व्याख्यान दिया है, इंग्लैंड जा रहा है।

ऐसे हैं हमारे नेता जो इस समय भारतकी वकालत करने इंग्लैंड पहुँचे हुए हैं। वे वहाँ ब्रिटिश मतदाताओंको यह बतलाने गये हैं कि भारतको अधिक अच्छा प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए और शासकोंकी ओरसे उसकी सेवा अधिक अच्छी तरह होनी चाहिए। संसद-सदस्य श्री रवानके शब्दोंमें इन प्रतिनिधियोंके जिम्मे:

> भारतीय जनताकी आशाओं, आशंकाओं, महत्त्वाकांक्षाओं और सुधारकी अभिलाषाओंको मुखरित करनेका काम सौंपा गया है। भारतके लोगोंकी इच्छा अधिक अच्छी शिक्षा पाने, भारतके विभिन्न भागोंकी विभिन्न आवश्यकताओंके अनुसार जमीनका बन्दोबस्त करने, और स्वशासनके अधिक अधिकार पानेकी है; श्री गोखले जिन लोगोंके प्रतिनिधि हैं वे समझते हैं कि बहुत-से भारतीय अपने देशके शासनमें भाग लेनेके सर्वथा योग्य हैं।

यह प्रतिनिधिमण्डल और इस समय भारतमें घटित होनेवाली अन्य अनेक बातें, असन्दिग्ध रूपसे समयकी गतिकी सूचना दे रही हैं। कहीं ऐसा न हो कि उपनिवेशके राजनीतिज्ञ उनका गलत अर्थ लगायें अथवा उनकी उपेक्षा कर दें। यदि वे ब्रिटिश झंडेकी शरणमें रहना चाहते हैं तो भारतको उन्हें साम्राज्यका एक अविच्छेद्य अंग और, इसलिए, सब प्रकारके लिहाजका अधिकारी मानकर चलना होगा। साम्राज्य दृढ़तासे एक सूत्रमें ग्रथित रहेगा अथवा परस्पर विरोधी स्वार्थोंके कारण छिन्न-भिन्न हो जायेगा, इस प्रश्नका उत्तर बहुत-कुछ उस भावनापर निर्भर करेगा, जिससे प्रेरित होकर उपनिवेशी, ब्रिटिश और भारतीय राजनीतिज्ञ अपना कार्य करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-११-१९०५

१. इस विषयपर प्रो० परमानन्दके भाषण ४, ११ और १८ नवम्बर, १९०५ के 'इंडियन ओपिनियन' में प्रकाशित हुए थे।

१४६. नेटालका प्रवासी-अधिनियम

मुख्य प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिकारी, श्री हैरी स्मिथका ध्यान हम एक भावानुवादकी ओर आकृष्ट कर रहे हैं जो हमने दूसरे स्तम्भमें प्रकाशित किया है। इसमें उन कठिनाइयोंका उल्लेख है जो, कहा जाता है कि, भारतीय यात्रियोंको 'सोमाली' जहाजपर भुगतनी पड़ी हैं।[1] यदि इन आरोपोंमें कुछ भी सचाई है तो ये बड़ी गम्भीर स्थितिके द्योतक हैं। हमारे सामने जो शिकायत है, उसपर शिकायत करनेवाले यात्रीने हस्ताक्षर किये हैं। इस शिकायतको स्वीकार करने और प्रकाशित करनेसे पहले हमने उससे कड़ी जिरह की थी। हम जानते हैं कि श्री हैरी स्मिथ उन यात्रियोंको, जो प्रवासी-अधिनियमसे प्रभावित हों, अनावश्यक कठिनाइयोंसे बचानेके लिए उतने ही चिन्तित है जितने कि हम हैं। इसलिए हम निश्चयके साथ अनुभव करते है कि हमें उनका ध्यान केवल इस शिकायतकी ओर आकृष्ट कर देना चाहिये, और इसकी पूरी-पूरी तहकीकात हो जायेगी। हम यह उल्लेख कर देना चाहते है कि यह पहला ही अवसर नहीं है जब हमें इस प्रकारकी शिकायतें मिली हैं। परन्तु अभी तक हमने उनको छापना या शिकायत भेजनेवालोंको अपनी शिकायतें सम्बन्धित अधिकारियोंके पास भेजनेकी सलाह देनेके सिवा और कुछ करना उचित नहीं समझा। परन्तु इस बार हमें जो तथ्य ज्ञात हुए है वे इतनी अच्छी तरह सचाईके साथ रखे गये है कि उनकी ओर सार्वजनिक ध्यान आकृष्ट करना हम अपना कर्तव्य समझते है। प्रवासी-अधिकारियोंकी ओरसे इसके खण्डन, स्पष्टीकरण अथवा समर्थनमें कुछ आयेगा तो हम उसको भी इतने ही प्रमुख रूपसे सहर्ष प्रकाशित करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११–११–१९०५

१४७. लाल फीता

'नेटाल मर्क्युरी' ने प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम-सम्बन्धी पत्र-व्यवहारको छाप कर एक लोक-सेवा की है। अधिनियम जिस तरह अमलमें आ रहा है उसपर यह पत्र-व्यवहार बहुत प्रकाश डालता है। ज्ञात होता है कि श्री ई० वाज नामके एक सुशिक्षित भारतीयको, जब वे पिछले ३० सितम्बरको अपने किसी मित्रको एक जर्मन जहाजसे विदा करने गये थे, जहाजपर जानेसे रोक दिया गया था। श्री वाज जिस मित्रको विदाई देने गये थे उसे भी, दूसरे दर्जेका टिकट दिखानेके बावजूद, जहाजपर नहीं चढ़ने दिया गया। शिकायत है कि कामपर तैनात सिपाहीने उन दोनोंके साथ दुर्व्यवहार किया। इसपर श्री वाजने समुद्री पुलिस सुपरिटेंडेटको लिखा, जिसने जवाब दिया कि सिपाही उसके निर्देशोंका पालन कर रहा था। तब वे मामला उपनिवेश कार्यालयमें ले गये। उपनिवेश कार्यालयने भी वही रस्मी जवाब दिया और बताया कि निर्देश

१. इन आरोपोंका सार यह था कि २७ व्यक्ति, जो नेटाल बन्दरपर २५ अक्टूबरको पहुँचे थे, जहाजकी एक तंग कोठरीमें ३ दिन तक बन्द रखे गये थे। उनमेंसे अधिकांशको निराहार तथा बिना पानीके भी दिन बिताने पड़े थे। देखिए इसी खण्डमें, पृष्ठ १४१ ।

प्रवासी-प्रतिबन्धक विभागकी ओरसे दिये गये थे। इसपर श्री वाजने प्रधान प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिकारीके पास दरखास्त की। उसने निर्देशोके सम्बन्धमें श्री वाजको कोई भी जानकारी देनेसे इनकार करते हुए मामला खतम कर दिया, और कहा: "मै अन्तर्विभागीय प्रबन्धोंके सम्बन्धमें बाहरसे की गयी पूछताछका जवाब देना जरूरी नही समझता।" दुर्व्यवहारकी बातसे इनकार नही किया जाता; सिपाहीकी कार्रवाईको शुरूसे अखीर तक सही करार दिया जाता है; और जब लोग यह जानना चाहते है कि उनसे जिन विनियमोके पालनकी अपेक्षा की जाती है वे क्या है, तब जवाब मिलता है कि यह पूछना उनका काम नही है। यह प्रशासनका निराला ही तरीका है। अबतक तो लोगोको उन कानूनोंके स्वरूपसे परिचित करा दिया जाता था जिनके पालनकी उनसे अपेक्षा थी; परन्तु अब सरकारने निश्चय किया है कि प्रवासी विभाग अपने विनियमोंका प्रशासन गुप्त रूपसे करे और, जिन लोगोंपर इन विनियमोका असर पड़ता है, उनसे अपेक्षा की जाये कि वे, उन विनियमोंका अन्दाजा लगाकर, उनका पालन करें। हम सरकारका उल्लेख विशेष करते है, क्योंकि श्री हैरी स्मियने ऐसा अनुप्रेरित होकर ही लिखा है। जहाँतक हमें मालूम है, उन्होंने जनतासे कभी किसी जानकारीका दुराव नही किया है। हम नहीं जानते कि सरकार अपने बहुमूल्य विनियमोको गुप्त रखकर किस लाभकी आशा करती है। परन्तु, हम इतना अवश्य जानते है कि सिपाहीकी कार्रवाई, निसन्देह, गैर-कानूनी थी; और वादीको जानकारीसे वंचित रखकर किसी गैर-कानूनी कार्रवाईको शह देनेका प्रयत्न, कमसे-कम कहा जाये तो, घोर अब्रिटिश है।

हम अपने सहयोगीको एक ऐसी बातको, जो किसी निन्द्य प्रसंगसे जरा भी कम नहीं है, प्रकाशमें लानेके लिए बधाई देते है। वह इसलिए और अधिक बधाईका पात्र है कि उसने इसपर कड़े शब्दोमे सम्पादकीय टिप्पणी लिखी है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-११-१९०५

१४८. रूस और भारत

रूसमें इन दिनो जो खलबली मची हुई है, उससे हमें बहुत-कुछ समझना है। रूसका सम्राट[1] इस समय दुनिया-भरमें सबसे बड़ा तानाशाह है। रूसके लोग बहुत कष्ट भोग रहे है। गरीब लोग कर-भारके नीचे दबे है, पुलिस जनताको कुचल रही है और जारके मनमें जैसा झोंका आता है, लोगोंको उसीके मुताबिक करना पड़ता है। हाकिम सत्ताके नशेमें चूर है। जनताके सुखका उन्हे कतई खयाल नही है। अपना बल कैसे बढे, खुद ज्यादा पैसे कैसे बटोरे, इसे ही वे अपना कर्त्तव्य मानते है। जनताकी मन्शा बिलकुल नही थी, फिर भी जारने जापानसे[2] लड़ाई करके रूसी सिपाहियोके खूनकी नदी बहाई, और हजारों मजदूरोके गाढ़े पसीनेकी कमाईको जापानके समुद्रमे फेक दिया।

१. जार निकोलस द्वितीय (१८६९-१९१८), १८९४ में गद्दीपर बैठा।

२. रूस व जापानकी लड़ाई १९०४ की फरवरीमें शुरू हुई थी। इसमें रूसकी हारके बाद ५ सितम्बर १९०५ को सन्धि हुई।

यह सब रूसी प्रजा बहुत बरसोंसे सहन करती आ रही है। परन्तु अब तो उसके धैर्यका अन्त आ गया है। रूसी लोगोंने इन सारे अत्याचारोंको दूर करनेके लिए बहुत हाथ-पैर पटके हैं। लेकिन उन्हें सफलता नही मिली। उन्होंने विद्रोह किये, शाहंशाहोंके खून किये, पर इससे कुछ भी काम नही बना। अब उन्होने एक अन्य उपाय ढूँढ़ निकाला है। वह बड़ा सरल है, और विद्रोह व खूनके मुकाबले ज्यादा जोरदार है। रूसी कारीगर और दूसरे सब नौकरोने हड़ताल करके काम बन्द कर दिया है, सेवाएँ बन्द कर दी हैं और जारको खबर दी है कि जबतक न्याय नही मिलेगा तबतक वे लोग कामपर बिलकुल नहीं जायेंगे। इसके खिलाफ जार भी क्या कर सकता है? लोगोसे जबरदस्ती तो काम नही लिया जा सकता। काम न करनेवालोंको भालेकी नोंकपर चढ़ाना तो रूसके जारके भी अधिकारमें नहीं है। इसलिए अब जारने ढिंढोरा पीटकर ऐलान किया है कि राज्यके संचालनमें प्रजाको भी हिस्सा मिलेगा। प्रजाकी सम्मतिके बिना जार एक भी कानून नहीं बनायेगा। इन सब बातोंका अन्तिम परिणाम क्या होगा यह कुछ कहा नही जा सकता। लेकिन जार अपने वादेको अमलमें नहीं लायेगा तो उससे यह साबित नही होगा कि जनताने इस समय जो उपाय हाथमें लिया है वह ठीक नही है। उससे सिर्फ इतना ही साबित होगा कि लोगोंने अपने उपायमें दृढ़ता नहीं बरती; क्योंकि सत्ताधारी भी लोगोंकी मददके बिना अपनी सत्ताका उपभोग नही कर सकते। परन्तु यदि रूसी प्रजा कामयाब हो गई तो रूसमें होनेवाला परिवर्तन[1] इस शताब्दीकी बड़ीसे-बड़ी जीत और बड़ीसे-बड़ी घटना कहलायेगा।

हमने शीर्षकमें रूस और भारत दोनोंको जोड़ा है। इसलिए अब यह बताना शेष है कि रूसमें होनेवाली घटनाओंके साथ भारतका क्या सम्बन्ध है। भारतकी वर्तमान राज्य-व्यवस्था और रूसकी राज्य-व्यवस्थामें बहुत समानता है। वाइसरायकी सत्ता जारकी सत्तासे कुछ कम नही है। जिस प्रकार रूसके लोग कर देते हैं, उसी प्रकार हम दे रहे हैं। जैसे रूसके करदाताओंका राजस्वके उपयोगपर कोई अधिकार नहीं है, वैसे ही भारतके लोगोंका भी नही है। जिस तरह रूसमें सेनाका जोर है, उसी तरह भारतमें है। अन्तर केवल इतना है कि रूसमें भारतके मुकाबले राज्यसत्ताका उपयोग अधिक बेढंगे तौरसे किया जाता है। रूसी लोगोंने अत्याचारका सामना करनेके लिए जो उपाय किया है वह हम भी काममें ला सकते हैं। बंगालमें स्वदेशी माल इस्तेमाल करनेका आन्दोलन चल रहा है। उसका स्वरूप रूसके आन्दोलनके समान है। यदि भारतवासी संगठित हो जायें, धैर्य रखें, स्वदेशाभिमानी बनें और अपने स्वार्थको छोड़कर स्वदेशके सुखका खयाल करें, तो आज ही हमारे बन्धन छूट सकते हैं। भारतका राज्य-कार्य लोगोंकी नौकरीके द्वारा ही चल सकता है। रूसके लोगोंने जिस शक्तिका परिचय दिया वही शक्ति हम भी बता सकते हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-११-१९०५

१. १९०५ की क्रांति: जिसको बादमें लेनिनने १९१७ की क्रान्तिका पूर्वाभ्यास माना।

१४९. सर टी० मुतुस्वामी ऐयर, के० सी० आई० ई०

सर टी० मुतुस्वामी ऐयरका जन्म तंजोरके एक गरीब परिवारमें २८ जनवरी, १८३२ को हुआ था। बहुत ही छोटी उम्रमें पिताका देहान्त हो जानेके कारण बचपनसे ही उनपर पैसा कमानेका बोझा आ पडा। इससे वे एक रुपये मासिक वेतनपर ग्राम-शिक्षकके रूपमें काम करने लगे। सन् १८४६ तक यह सिलसिला चला। इस बीच इस बालककी बुद्धि और उद्योगशीलता देखकर मुतुस्वामी नायकर नामक एक सज्जनके मनमे स्नेह पैदा हो गया। एक बार किसी गाँवकी नदीका बाँध टूट जानेकी खबर मुतुस्वामी नायकरको मिली। उसने अपने मुंशीको बुलाया। वह हाजिर नही था; इसलिए बालक मुतुस्वामीने उत्तर दिया। नायकरने उसको जाँच करनेका काम सौपा। मुतुस्वामी सब जगह घूमकर, सारी जानकारी ले आये। श्री नायकरको उसपर विश्वास नही हुआ। लेकिन जल्दी थी, इसलिए उन्होने उसकी रिपोर्टको मजूरी दे दी। बादमे उन्हें खबर मिली कि मुतुस्वामीकी लाई सारी जानकारी सही थी। इसपर श्री नायकर बहुत प्रसन्न हुए।

मुतुस्वामीको अपने इस प्रकारके जीवनसे सन्तोष नही था। उसने दृढतापूर्वक आगे बढ़नेका निश्चय किया और जब-जब समय मिलता, वह पाठशालाओमें चला जाता। इससे श्री नायकरने उसको १८ महीने तक नेगापत्तम्के एक मिशन स्कूलमे रखा। फिर मद्रास हाई स्कूलमे भेजा और राजा सर टी० माधवरावके नाम परिचय-पत्र दिया। दिनों-दिन मुतुस्वामी पढ़नेमें प्रगति करने लगा। उस समय श्री पॉवेल मुख्य शिक्षक थे। उन्होंने मुतुस्वामीका मूल्य आँक लिया था और उसपर विशेष ध्यान देते थे। सन् १८५४ में एक अंग्रेजी निबन्ध लिखकर उसने ५०० रुपयेका इनाम लिया। हाई स्कूलमे अपना अध्ययन पूरा करनेके बाद उसको ६० रुपयेपर शिक्षककी जगह मिली। बादमें तरक्की करते-करते उसे शिक्षाके अधिकारीकी जगह मिली। इस बीच सरकारने वकालतकी सनदकी परीक्षा शुरू की। मुतुस्वामीने इस परीक्षाकी तैयारी की और उसमें पहले नम्बरपर उत्तीर्ण हुआ। मुनसफोकी जाँच करनेके लिए समय-समयपर न्यायाधीश दौरा किया करते थे। एक बार न्यायाधीश बोकॉम अकस्मात् आ पहुँचा। वह मुतुस्वामी ऐयरका काम देखकर इतना अधिक खुश हुआ कि उसने कह डाला कि मुतुस्वामी उसके बराबरीकी कुर्सी लेने योग्य है। मुतुस्वामीकी योग्यता इतनी अधिक प्रकट होने लगी कि उनको मद्रासमें मजिस्ट्रेटकी जगह दी गई। न्यायाधीश हॉलवे उनपर बडा प्रसन्न हुआ। उसने उनको और भी अध्ययन करनेको कहा। मुतुस्वामीने ऐसा ही किया। अध्ययनमें सहायता मिलनेकी दृष्टिसे उन्होने जर्मन भाषा सीखी। मुतुस्वामी अत्यन्त स्वतन्त्र प्रकृतिके व्यक्ति थे। एक बार एक भारतीयने उच्च न्यायालयके एक न्यायाधीशपर मार-पीटका इलजाम लगाया। मुतुस्वामीने बेखटके उक्त न्यायाधीशके नाम समन जारी कर दिया। बड़े मजिस्ट्रेटने सूचना की कि उस न्यायाधीशको पेश होनेके लिए बाध्य न किया जाये। मुतुस्वामीने इसकी परवाह नही की। न्यायाधीशको उपस्थित रहना पड़ा और उसपर तीन रुपये जुर्माना हुआ। इसके बाद मुतुस्वामी ऐयर "लघुवाद" न्यायालयके न्यायाधीश बने। सन् १८७८ मे उनको के०सी०आई०ई०का खिताब मिला और वे उच्च न्यायालयके न्यायाधीश नियुक्त हुए। इस न्यायालयके न्यायाधीश नियुक्त होनेवालोमे वे प्रथम भारतीय थे। उनके फैसले इतने उत्तम होते थे कि आज तक ऐसा कहा जाता है कि सर्वश्रेष्ठ अंग्रेज न्यायाधीशके साथ वे टक्कर ले सकते है। सुप्रसिद्ध श्री विटली स्टॉक्स कहते है कि मुतुस्वामी ऐयर और सैयद महमूदके फैसलोके मुकाबलेके फैसले उन्होने कम देखे

है। उनका काम सब प्रकारसे इतना अच्छा था कि १८९३ में उनको मुख्य न्यायाधीशकी जगह मिली। सन् १८९५ में सर मुतुस्वामी ऐयरकी केवल कामके बोझसे क्षीण हो जानेके कारण मृत्यु हो गई।

सर मुतुस्वामी ऐयर न्यायमें अद्वितीय थे, इतना ही नहीं, वे भारतीय जनताकी भलाईके कामोंमें जितना सम्भव हो सकता था उतना हिस्सा लेते थे। बाल-विवाह, विधवा-विवाह, विदेश-यात्रा, आदि विषयोंपर समय-समयपर व्याख्यान देते थे और सुधारकोंको प्रोत्साहन देते थे। वे स्वयं बड़े दयालु और सरल थे। सदा स्वदेशी पोशाक ही पहनते थे। ईश्वर-भक्तिमें लीन रहते थे। उन्होंने अपने सुयशसे मद्रास इलाकेको जगमगा दिया था।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११–११–१९०५

१५०. भारतीय स्वयंसेवक-दल

युद्ध-कालमें भारतीयोंपर सेवाकी जिम्मेवारी डालनेके सम्बन्धमें पिछले सप्ताह हमने, न्यूकैसिलकी एक राजनीतिक सभामें हुए कुछ प्रश्नोत्तर 'नेटाल विटनेस' से उद्धृत किये थे।

श्री थॉरल्डने जोर दिया कि यदि प्रतिरक्षाके लिए प्रथम पंक्तिके निर्माणका आह्वान किया जाये तो कुछ ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए जिससे कि अरबों और भारतीयोंको भी सहायता करनेके लिए कहा जा सके। जब यूरोपीय लोग मोर्चेपर लड़ रहे हों, तब अरबोंको अपनी दूकानोंमें बैठे रहकर व्यापार करते रहने देना स्पष्ट ही अनुचित होगा।

श्री थॉरल्ड यदि सरकारकी आन्तरिक कार्य-पद्धतिसे परिचित होते तो वे ऐसे शब्द न कहते जो उनके कहे बतलाये गये हैं। सरकार भारतीयोंको यह दिखलानेका 'मौका ही नहीं देना चाहती' कि वे भी उपनिवेशकी प्रतिरक्षामें अन्य लोगोंके समान भाग ले सकते हैं। स्मरण रहे कि बोअर युद्धके समय भारतीयोंने स्वयं यह इच्छा प्रकट की थी कि उन्हें जो भी काम दिया जायेगा उसे वे करनेके लिए तैयार हैं; परन्तु घायल सिपाहियोंको ढोकर लानेके काम तक के लिए अपनी सेवाएँ स्वीकृत करवानेमें उन्हें भारी कठिनाई हुई थी। जनरल बुलरने प्रमाणित कर दिया है कि नेटाल भारतीय आहत-सहायक दलने कैसा काम किया था। यदि सरकार केवल इतना अनुभव कर सकती कि कितनी सुरक्षित शक्ति व्यर्थ नष्ट हो रही है तो वह इसका उपयोग कर लेती और भारतीयोंको वास्तविक युद्धके लिए पूर्ण प्रशिक्षणका अवसर देती। कानूनकी पुस्तकमें इसी प्रयोजनका एक कानून भी है, परन्तु निरे विद्वेषके कारण उसे निकम्मा हो जाने दिया गया है। [हमारा तो विश्वास है कि उपनिवेशमें जन्मे भारतीयोंका एक बड़ा सुन्दर स्वयंसेवक-दल बन सकता है;] और वह चुस्ती और मुस्तैदीके लिहाजसे, शान्तिके दिनोंमें ही नहीं, युद्धके समयमें भी नेटालमें किसीसे भी पीछे नहीं रहेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १८–११–१९०५

१. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ १३८–९।

१५१. बन्दरगाहमें भारतीयोंके साथ दुर्व्यवहार

'सोमाली' जहाजके भारतीय यात्रियोके[1] साथ नेटाल बन्दरगाह पहुँचनेपर दुर्व्यवहार होनेकी जो बात कही गई है, उसके विषयमे गत सप्ताह हम लिख चुके है। इस तथ्यके समर्थनमे हमे एक दूसरे व्यक्तिका पत्र मिला है। उसने गुजरातीमें लिखा है। उसका भाव यह है :

> जिन लोगोंके पास ट्रान्सवालके अनुमतिपत्र नहीं थे, परन्तु जो लोग ट्रान्सवालके शरणार्थी थे, और जिन अन्य लोगोंके पास नेटालके पास नहीं थे, उन्हें बहुत तकलीफ दी गई। तीन दिन तक उन लोगोंको जहाजके गोदाममें रखा गया। वे अपने भोजनके लिए भी किन्हीं चीजोंका प्रबन्ध नहीं कर सके। तीसरे दिन डर्बनके व्यापारी श्री हासम जुमाने वकीलकी मारफत तजवीज की और लगभग पाँच लोगोंको उतरवाया। जब श्री हासम जुमा स्वयं जमानत दाखिल करने गये, वह मंजूर नहीं की गई। वकीलके आनेपर ही बड़ी मुश्किलसे वे उतारे गये। जो यात्री डेलागोआ-बेमें नहीं उतर सके थे, उन्हें भी तालेमें रखा गया, और उन्हें भोजन बनानेकी आज्ञा नहीं मिली।

हम ऊपर कही गयी बातकी ओर श्री हैरी स्मिथका ध्यान आकर्षित करते है। यदि यह सच है तो इस दु:खको शब्दोमें नही कहा जा सकता। और यदि यह सच हो कि किसी वकीलके हस्तक्षेपपर ही यात्राके पासोकी अनुमति मिली तो यह बहुत स्पष्ट है कि कही-न-कही कोई बड़ी खरावी जरूर है। वस्तुस्थिति यह है कि बेचारे भारतीयोंको उपनिवेशमें बसने या अस्थायी तौरपर रहनेके अपने अधिकारोंकी पूर्ति करानेके लिए बहुत परेशानी और खर्च उठाना पड़ता है। प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमको उचित ढगसे लागू करनेके खिलाफ हमे कुछ नही कहना है। किन्तु हम निश्चय ही यह सोचते है कि जिन्हे उपनिवेशमे उतरनेका अधिकार है अथवा जिन्हे किसी पड़ोसी उपनिवेशमें जानेके लिए नेटालसे होकर गुजरनेकी प्रत्येक सुविधा दी जानी चाहिए उनपर केवल नियम-निर्वाहके लिए वकील करनेका खर्च नही लादा जाना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १८-११-१९०५

१. देखिए "नेटालका प्रवासी-अधिनियम", पृष्ठ १३६।

१५२. जोहानिसबर्गमें भारतीय बस्ती

जोहानिसबर्ग नगर-परिषदने प्रस्ताव किया है कि आगामी वर्षकी पहली अप्रैलको मलायी बस्तीके निकट रहनेवाले काफिरोंको क्लिपस्प्रूट भेजा जायेगा। क्लिपस्प्रूट जोहानिसबर्गसे १३ मील दूर है। अतः इसमें शक है कि इतनी दूर काफिर कैसे रह सकेंगे। क्लिपस्प्रूटमें काफिरोंकी बस्तीके पास ही परिषद भारतीय 'बाजार' बसानेका विचार कर रही है और सोचती है कि इस सम्बन्धमें परिषदको जब सत्ता मिलेगी तब वह 'बाजार' बसाया जायेगा।

मलायी बस्ती ले लेनेकी हलचल चल रही है। इसलिए भारतीयोंको आजसे चेत जाना चाहिए। सबसे अच्छा रास्ता यह है कि जोहानिसबर्गमें ही सारे भारतीयोंका समावेश हो जाये, ऐसी व्यवस्था कर लेनी चाहिए, यद्यपि हम मानते हैं कि मलायी बस्तीको लेनेमें अभी कुछ समय लगेगा और आगामी जूनके पहले भारतीयोंके लिए नये कानून बनना सम्भव नहीं है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १८–११–१९०५

१५३. ट्रान्सवालके भारतीयोंको अनुमतिपत्रके सम्बन्धमें सूचना

हमें पता चला है कि अनुमतिपत्रकी अर्जी देनेवालोंसे जो गोरे गवाहोंके नाम माँगे जाते थे, वह तरीका अब बन्द कर दिया गया है; और अब पहलेकी तरह केवल भारतीयोंकी गवाहीसे काम चल जायेगा। आज तक भारतीय गवाहोंको बुलाकर पूछा नहीं जाता था, परन्तु अबसे भारतीय गवाहोंकी मौखिक गवाही शुरूसे ही ली जायेगी। इसलिए हमारी सिफारिश है कि बहुत सावधानीसे गवाह उपस्थित किये जायें।

लड़कोंके अनुमतिपत्रके सम्बन्धमें भी यह खुलासा हो गया दीखता है कि जिनके माता-पिता ट्रान्सवालमें हों और जो १६ वर्षकी आयुसे छोटे हों उनको अनुमतिपत्र मिल सकेगा। उसके सम्बन्धमें जो छपे हुए फार्म हैं उन्हें उनके अभिभावकों या पिताओंको भरना होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १८–११–१९०५

१५४. जापान और ब्रिटिश उपनिवेश

ब्रिटिश सरकार जापानके साथ अपने सम्बन्धोके बारेमें सकट अनुभव करने लगी है। ब्रिटिश सरकारने जापानके साथ सन्धि की है। जापान बड़ा राज्य है, यह उसने स्वीकार किया है। सन्धिपत्रसे जाहिर होता है कि जापान इग्लैंडकी बराबरीका है। नौसेनापति तोजोको अंग्रेज नेल्सनके बराबर मानते है और जापानके जो प्रजाजन इग्लैड जाते है उनका वे लोग आदर-मान करते हैं।

जब इग्लैडमे यह स्थिति है तब न्यूज़ीलैंड उपनिवेशके प्रधानमन्त्री श्री सेडन कहते है कि इंग्लैंड और जापानके बीच जो सन्धि हुई है, उससे हमारा कोई सम्बन्ध नही है। हम जापानके एक भी आदमीको न्यूजीलैंडमे घुसने नही देंगे।

पश्चिम आस्ट्रेलियामे जिस प्रकार एशियाके लोगोके लिए सख्त कानून है उसी प्रकार जापानी जनताके लिए भी हैं। इससे जापानका दिल दुखा है। जापानके राजदूतने लिखा-पढ़ी की है कि ये कानून रद हो जानें चाहिए। इसपर उपनिवेश-मत्री श्री लिटिलटनने लिखा है कि आस्ट्रेलियाके उस कानूनमें परिवर्तन किया जाना चाहिए। पश्चिम आस्ट्रेलियाके मत्रीने उत्तर दिया है कि उस कानूनमे परिवर्तन इस प्रकार किया जायेगा कि जापानका अपमान न हो; परन्तु उसका असर तो ज्यो-का-त्यों रहेगा। अर्थात्, अब जापानको कड़वी गोली चाँदीके वर्कमें लपेटकर दी जायेगी।

ऐसी हालतमें इग्लैड क्या करेगा? यदि एक ब्रिटिश उपनिवेशकी प्रजा इस प्रकार ब्रिटेनकी राजनीतिके विरुद्ध बरताव करती रहे तो या तो उस उपनिवेशको इग्लैडको छोड देना पडेगा या फिर उपनिवेशके साथ बँधकर उसे भी अपनी राजनीतिमे परिवर्तन करना होगा।

[जो बात जापानपर लागू होती है वही बात भारतपर भी लागू होती है। फिर भारतका हक तो और भी मजबूत माना जायेगा, क्योकि वह ब्रिटिश राज्यका एक हिस्सा है।]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १८–११–१९०५

१५५. केपका प्रवासी-कानून

केपके प्रवासी-कानूनमें सख्ती बढती जा रही है। अबतक सिर्फ समुद्री मार्गसे आनेवाले लोगोपर सख्ती होती थी। अब जो व्यक्ति ट्रान्सवाल पार करके आयेगा उसपर भी सख्ती की जानेवाली है। केपके 'गजट'मे कानून प्रकाशित हुआ है कि जो व्यक्ति ट्रान्सवालके रास्ते केप पहुँचे, उसके पास यह प्रमाण होना चाहिए कि वह केपका निवासी है। यदि वह केपमें प्रवेश पानेका अधिकार सिद्ध नही करेगा तो उसे वापस भेजनेमे जो व्यय होगा वह उसे केप सरकारको क्षति-पूर्तिके रूपमे चुकाना पड़ेगा। इसलिए[1] केपके सत्ताधीश यह सूचित करते है कि जो लोग केपमें जाना चाहते हों वे पहलेसे केपका पास प्राप्त कर लें। केपमें पास प्राप्त करनेमें बहुत कठिनाइयाँ होती है। जिस व्यक्तिके पास जमीन न हो और उसके बच्चे केपमें न हों, उसको

१. मालूम पड़ता है, मूलमें यहाँ छपाईकी भूल है। वहाँ 'अकेले'के अर्थका शब्द छपा है।

यह साबित करनेमें अनेक बाधाएँ आती है कि वह व्यक्ति केपका निवासी है। ऐसे व्यक्तिको तो, यों कहना चाहिए कि, पास मिलता ही नहीं है।

इस सम्बन्धमें ब्रिटिश भारतीय समितिको (ब्रिटिश इंडियन लीग) आवश्यक कार्रवाई करनी चाहिए, नहीं तो केपकी सख्ती दिनोंदिन बढ़ती जायेगी। केपमें मोर्चा लेनेकी कतिपय सुविधाएँ है। वैसी सुविधाएँ अन्यत्र नहीं है। और उन सुविधाओंका ब्रिटिश भारतीय समिति लाभ उठायेगी, ऐसा हमें विश्वास है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १८-११-१९०५

१५६. माउंटस्टुअर्ट एलफ़िन्स्टन

एलफ़िन्स्टन परिवार स्कॉटलैंडमे सुप्रसिद्ध है। अठारहवीं शताब्दीके अन्तमें उस परिवारका एक सदस्य माउंटस्टुअर्ट एलफ़िन्स्टन, सोलह वर्षकी आयुमे ईस्ट इंडिया कम्पनीकी नौकरीमें कलकत्ते आया। भारतमे समय-समयपर उपद्रव होते ही रहते हैं। वैसा ही १७९६ में भी हुआ। अवधका पदच्युत नवाब वजीरअली बनारसमें नजरबन्द था। उसने बनारसके रेज़िडेंटके स्थानपर हमला किया। बनारसके अंग्रेज न्यायाधीशने और कुमक पहुँचने तक भालेसे अपना बचाव किया। एलफ़िन्स्टन उस समय वहाँ मौजूद था। उसने भी अपना बचाव बहादुरीसे किया। सन् १८०० में[1] पूनाकी ओर उपद्रव हुआ। एलफ़िन्स्टनको वहाँ नौकरी मिली। इस बीच उसने भाषा-ज्ञान अच्छा प्राप्त कर लिया था। और लड़ाईमें भी शौर्य बताकर उसने जनरल वेलेसलीको[2] प्रसन्न कर लिया था। इसके बाद उसको नागपुरके रेज़िडेंटकी जगह मिली। यहाँ उसने अपना ज्ञान बढ़ाया। १८०९ में उसे काबुलके अमीरके पास भेजा गया था। उन्हीं दिनोंसे डरके कारण अमीरकी खुशामद करनेका सिलसिला चलता आ रहा है। उधरसे, अर्थात् काबुलके रास्तेसे, भारतपर आक्रमण किया जायेगा, यह भूत तबसे ही सवार है। और इस बेबुनियाद भयसे बचनेके लिए अंग्रेज सरकारने पानीके समान पैसा बहाया है। इसी डरके कारण अमीरके साथ करार करनेके लिए एलफ़िन्स्टनको भेजा गया था। परन्तु एलफ़िन्स्टनको ख़ाली हाथ लौट आना पड़ा। उसके स्थानपर यदि और कोई व्यक्ति होता तो उसे जो काम सौंपा नहीं गया, उसमें हाथ न डालता; और उसमें उसका कोई दोष भी नहीं माना जाता। अक्सर जो काम अपने वेतनपर निगाह न रखकर शौकके कारण किया जाता है वह सिर्फ वेतनवाले कामके मुकाबले ज्यादा अच्छा होता है। एलफ़िन्स्टनकी स्थिति ऐसी ही थी। काबुलके अमीरको मात देनेकी सत्ता उसके हाथमें नहीं थी तो क्या हुआ? अफगानिस्तानमे अपना समय और ढंगसे व्यतीत करनेका साधन उसके पास मौजूद था। उसने वहाँके लोगों और वहाँकी जगहोंके बारेमें यथावश्यक ज्ञान प्राप्त कर लिया। और इस ज्ञानका लाभ उसने अंग्रेज जनताको दिया। यद्यपि वह अफगानिस्तानसे असफल होकर वापस आया, फिर भी उसकी प्रतिष्ठामे तो वृद्धि ही हुई। १८११ में उसको पूनाके रेज़िडेंटकी जगह मिली। इस समय पिंडारी[3] लोग गरीबोंको बहुत सताते थे। उधर, सिंधिया,

१. मूल गुजरातीमें '१८ नी साल' है जिसका अर्थ है, वर्ष १८। यह छपाईकी भूल मालूम होती है।

२. बादमें ड्यूक ऑफ वेलिंग्टन।

३. तब दक्षिणकी रियासतोंमें सेनाके साथ-साथ अनियमित सवार रखनेकी प्रथा चली आती थी, जो युद्ध-कालमें तो शत्रु-देश पहुँचनेपर लूट-पाट करते ही थे, शान्ति-कालमें भी खेती-बाड़ीके अलावा अपना लूटपाटका काम जारी रखते थे। ये पिंडारी कहलाते थे। केन्द्रीय शक्तियोंके ह्रासके साथ ही इनका जोर बढ़ता गया।

होलकर आदि अंग्रेजोंपर चढ़ाई करनेके लिए अधीर हो उठे थे। पूनाका पेशवा अंग्रेजोंके पक्षमे था। परन्तु वह बहुत कमजोर था। उसका दीवान त्र्यंबकजी बड़ा खटरागी था। उसने कोई घोर कुकर्म किया था, इसलिए पेशवाकी मंशा न होनेपर भी उसे कैद कर दिया गया था। कैदसे वह भाग निकला था और हाथ नही आ रहा था। एलफ़िन्स्टनको पता चला कि स्वयं पेशवा अंग्रेजी राज्यके खिलाफ चाल चल रहा है। उसके पास बचावके लिए साधन-सामग्री बहुत कम थी, फिर भी वह डरा नही। यद्यपि उसकी जानकारीमें सारी बातें आती रहती थीं फिर भी वह इतनी गम्भीरतासे रहा कि उसकी तैयारियोंको कोई जान न सका। अन्तमें पेशवाने खुल्लम-खुल्ला विरोध किया। पेशवाई फौजने अंग्रेजी छावनीपर धावा बोल दिया और एलफिन्स्टनने अपने मुट्ठी-भर आदमियोंकी मददसे उस फौजको भगा दिया। इस बीच जनरल स्मिथ एलफ़िन्स्टनकी सहायताको आ गया। बाजीराव पेशवाकी पूरी हार हुई और पूना अंग्रेज सरकारने ले लिया। बाजीरावको पेंशन दी गई। एलफिन्स्टनकी इस समयकी बहादुरीके बारेमें विख्यात कैनिंग कह गया है:

"एलफिन्स्टन दीवानी अधिकारी है। हम अपने दीवानी अधिकारियोसे युद्धमे पराक्रमकी आशा नही रखते। हमारे पास योद्धा है। इन योद्धाओंमे एलफिन्स्टन शानदार योद्धा है, यह उसने पेशवाओंकी लड़ाईमे दिखा दिया है। वह दीवानी काममे सर्वप्रथम है यह सब जानते हैं।"

बाजीरावके साथकी लड़ाई समाप्त होनेपर एलफ़िन्स्टनका काम और भी कठिन हो गया। अब उसे लोगोपर राज्य करना था। उस समयके अंग्रेज शासक जनताके प्रति बड़ी सद्भावना रखते थे। जनतापर राज्य करते समय नये कानून बनाते थे। वे पहले यह विचार करते कि लोग किस प्रकारके राज्यसे परिचित हैं और उनको किस प्रकारका राज्य पसन्द आयेगा। एलफ़िन्स्टनने यही किया। पुराने मराठा परिवार किस प्रकार बने रहे, इस सम्बन्धमें उसने बहुत सावधानी बरती। उनकी जागीरोको हाथ नही लगाया और इसी विचारसे उसने शिवाजीके उत्तराधिकारियोंके लिए सतारा राज्यकी स्थापना की। मराठे लोग इससे बहुत खुश हुए। उसने लोगोकी भावनाओंको जाननेका प्रयत्न किया और उनको ठेस न पहुँचे, यह खयाल रखा।

इस प्रकार सहृदय एलफ़िन्स्टन सन् १८१९ में बम्बईका गवर्नर नियुक्त हुआ। उसने लोगोके मन हर लिये। शिक्षापर उसने बहुत ध्यान दिया। भारतमें लोगोंको शिक्षा देना अंग्रेज सरकारका प्रथम कर्त्तव्य है, ऐसा समझनेवालोंमें एलफ़िन्स्टन पहला व्यक्ति माना जा सकता है। इस समय बम्बईमें जो एलफिन्स्टन कॉलेज है वह इस लोकप्रिय गवर्नरकी स्मृतिमें स्थापित हुआ है। न्याय विभागमे भी उसने बहुत सुधार किये हैं। इस प्रकार उसने बम्बईमे आठ वर्ष तक राज्य सचालन किया। जब उसने बम्बईका राज्यपद छोड़ा तब हर कौमकी ओरसे उसका बहुत सम्मान किया गया। इसके बाद उसने अपना बाकी समय विलायतमें बिताया और भारतका इतिहास लिखा। उस पुस्तककी प्रशंसा आज भी की जाती है। उसको गवर्नर जनरलका पद देनेकी विलायतमें दो बार कोशिश की गई; परन्तु अपने स्वास्थ्यकी खराबीके कारण उसने यह बडा पद लेनेसे इनकार कर दिया। दिसम्बर २१, १८५९ को ८१ वर्षकी आयुमें इस महान पुरुषकी मृत्यु हो गई।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १८-११-१९०५

१५७. तार: सर आर्थर लालीको

[जोहानिसबर्ग
नवम्बर २४, १९०५ के बाद]

ब्रिटिश भारतीय संघ परमश्रेष्ठको मद्रासके गवर्नरके प्रदपर नियुक्त[1] होनेके उपलक्ष्यमें बधाइयाँ प्रदान करता है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २-१२-१९०५

१५८. व्यक्ति-कर

व्यक्ति-कर लगानेके विषयमें हमारे पास सैकड़ों भारतीयोंकी ओरसे जो शिकायतें आई है, उन्हे प्रकाशित न करना बुद्धिमानी न होगी। व्यक्तिगत रूपसे हमारा विचार है कि उपनिवेश जिन कठिनाइयोंसे गुजर रहा है उनमें प्रत्येक अच्छे नागरिकको हिस्सा बँटाना चाहिए, और वैसा करनेका एक सबसे अच्छा और सरल उपाय यह है कि उपनिवेशके राजस्वमें विशेष रूपसे अंशदान किया जाये। सरकारने व्यक्ति-कर लगानेका कानून पास करना उचित समझा है, और प्रत्येक व्यक्तिको, चाहे वह किसी सम्प्रदायका हो, उसके सामने सिर झुकाना और यथाशक्ति प्रसन्नतासे यह कर अदा करना चाहिए। यह प्रश्न गणितका हिसाब लगाने और ऐसा सोचनेका नहीं है कि गरीब लोगोंको भी उतना ही देना पड़ेगा जितना कि अमीरोंको। [व्यक्ति-कर कभी भी लोकप्रिय नहीं रहा है और इसका बोझ समाजके निर्धनतम लोगोंके लिए बहुत भारी हो जाता है।] दक्षिण आफ्रिकाके लिए यह किसी प्रकार कोई नई बात या नया अनुभव नहीं है। ट्रान्सवालमें यह तब भी प्रतिवर्ष वसूल किया जाता था जबकि देश समृद्धिके शिखरपर पहुँचा हुआ था; हाँ, वसूलीमें वहाँ बहुत सख्ती नहीं की जाती थी।

आजकल समय मन्दीका है। काम मिलना तो दुर्लभ है ही, नकद-धन और भी दुर्लभ है। इसलिए बाल-बच्चेदार मजदूर-पेशा गरीब आदमीके लिए एक साथ एक पौंडकी रकम भी अदा कर देना कोई छोटी बात नहीं है। स्पष्ट है कि अधिक गरीब वर्गके लोगोंको ही इस करका बोझ अखरता है। हजारों भारतीय ऐसे हैं जिनके लिए एक पौंडकी रकम मामूली बात नहीं है। उदाहरणार्थ, उन लोगोंको लीजिये जो हालमें गिरमिटसे छूटे हैं और जिन्होंने उपनिवेशमें बसनेका फैसला किया है। इस उपनिवेशमें बने रहनेकी अनुमतिके मूल्यके रूपमें उन्हें और उनके बालकोंको प्रति-व्यक्ति तीन पौंडका वार्षिक कर देना ही है; अब उन्हें उसके अतिरिक्त एक पौंड और देनेको कहा जायेगा। स्पष्ट है कि इन लोगोंसे यह रकम वसूल करना भारी अन्याय होगा। बहुत-से छोटे भारतीय किसानोंकी अवस्था भी लगभग ऐसी ही है। उन्हें अपनी रोटी कमानेके लिए रोजाना बहुत समय तक कठोर श्रम करना पड़ता है। उनकी इज्जत बढ़ानेके लिए उन्हें किसान कहना बिल्कुल गलत होगा। क्योंकि वे तो असलमें निरे मजदूर हैं। बहुधा यह दलील दी जाती है कि भारतीय इस उपनिवेशके राजस्वमें काफी हिस्सा नहीं देते। जिन लोगोंने ऐसा कहा है, उन्होंने यह दलील बिना सोचे-समझे दे डाली है। [संसारके किसी भी

१. सर आर्थर लाली नवम्बर २४, १९०५ को मद्रासके गवर्नर नियुक्त हुए थे।

देशमें श्रमपर कर नही लगाया जाता, क्योकि श्रम तो स्वयं सर्वोत्तम प्रकारका दान है। किसी भी देशकी समृद्धि श्रमपर ही निर्भर करती है।

इसमे सन्देह नही कि व्यक्ति-करका सबसे अधिक प्रभाव वतनी और भारतीय लोगोंपर पड़ेगा। हमारे ट्रान्सवालके सहयोगियोने इस बातको बिना कठिनाईके मान लिया है। यूरोपीयोको तो बीचमें केवल इसलिए लाया गया है कि यह सभी लोगोके लिए बनाया गया आम कानून प्रतीत हो; परन्तु हमारी इच्छा इसे उस दृष्टिसे देखनेकी नही है। कानून बन चुका है, और यद्यपि हम इसके लिए सरकारको उससे ज्यादा बधाई नही दे सकते, जितनी कि स्वय सरकार अपने-आपको दे सकती है, तथापि हम सबको इस निर्णयके सामने सिर झुकाना चाहिए। इसके साथ ही हम अधिकारियो और साधारण जनतासे अनुरोध करते है कि वे इसी अकमें प्रकाशित व्यक्ति-कर सम्बन्धी हमारे विशेष लेखको[1] ध्यानसे पढ़े।

परन्तु इस कानूनको बनानेमे, कानून बनानेवालोका इरादा चाहे कुछ भी रहा हो, हमारा काम शिकायत करनेका नही है; यद्यपि हमारी सम्मतिमे इस कानूनकी कल्पनासे, और जो सत्य हमने ऊपर प्रकट किये है, उनसे भी, असन्दिग्ध रूपसे यह स्पष्ट हो जाता है कि जो लोग सचमुच कर नही दे सकते, उन्हे इससे मुक्त रखनेमें सरकारको अपने अधिकारका विचारपूर्वक उपयोग करना पडेगा। इस कारण यह अत्यन्त आवश्यक है कि इस करकी वसूलीके लिए जो नियम प्रकाशित किये जा चुके है उनपर फिर विचार कर लिया जाये, और वसूल करनेवालोको यह अधिकार दे दिया जाये कि वे अपनी समझके अनुसार समाजके निर्धनतम व्यक्तियोको अदायगीसे बरी कर दें। इस प्रकारके करकी वसूली, सरकार और उससे प्रभावित समुदायोमे आपसी समझौतेसे ही की जा सकती है; वरना, जैसा कि हालमे एक वतनी वक्ताने चीफ मजिस्ट्रेट द्वारा बुलाई गई सभामे अर्थगर्भित शब्दोमें कहा था, "सरकारको कर न देने-वालोको बसानेके लिए उपनिवेशकी सड़कोको जेलोकी पँक्तियोसे युक्त करना पड़ेगा।"

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५-११-१९०५

१५९. श्री हैरी स्मिथ और भारतीय

'सोमाली' जहाजपर भारतीय यात्रियोके साथ हुए दुर्व्यवहारके विषयमें हमारी सम्पादकीय टिप्पणीके[2] उत्तरमे प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिकारीने जो पत्र लिखा था उसे हमने गत सप्ताह प्रकाशित किया था।

श्री स्मिथने इतना शीघ्र उत्तर दिया, इसके लिए हम उनके कृतज्ञ है। परन्तु हमे कहना पड़ेगा कि यह उत्तर निराशाजनक है। स्पष्ट है कि जो बातें हमारे संवाददाताने लिखी थी और जिनका समर्थन एक दूसरे सवाददाताने भी किया था, वे सब प्राय सत्य थी। श्री स्मिथने हमारे सवाददाताकी शिकायतोको छ भागोमे बाँटा है। उनमे से तीनका सम्बन्ध जहाजपर की व्यवस्थासे है। श्री स्मिथ इनमे से किसीकी भी जिम्मेवारी लेनेसे इनकार करते है और कहते है कि इनके लिए जिम्मेवार, लाने-ले जानेवालेकी हैसियतसे, जहाजी कम्पनी ही है। नि:सन्देह नियमोकी

१. देखिए "नेटालमें व्यक्ति-कर", इंडियन ओपिनियन, २५-११-१९०५।
२. देखिए "नेटालका प्रवासी-अधिनियम", पृष्ठ १३६।

दृष्टिसे श्री स्मिथकी बात ठीक है, परन्तु प्रवासी-प्रतिबन्धक कानून जिनपर लागू होता है उन सबके प्रति उचित व्यवहारके लिए जिम्मेवार प्रमुख पदाधिकारीकी हैसियतसे, हमारा खयाल है कि, उनके लिए उन कठिनाइयोंको इस प्रकार टाल देना सम्भव नहीं जोकि असंदिग्ध रूपसे इस कानूनपर अमल करनेके कारण खड़ी हो जाती है। यदि श्री स्मिथ द्वारा पेश की गई युक्ति ठीक होती तो वे दूसरे भागोंसे सम्बन्धित शिकायतोंकी जिम्मेवारी लेनेसे भी इनकार कर देते; क्योंकि कानूनकी लीकके अनुसार, जिन यात्रियोंको जहाजी कम्पनी मालखानेमें ठूँस दे, उनको उचित भोजन मिलता है या नहीं अथवा किनारेके लोगोंसे उनकी बातचीत हो सकती है या नहीं, यह देखना उनका काम नहीं है, क्योंकि जहाज-सम्बन्धी सब मामलोंका नियन्त्रण जहाजके मालिक करते हैं। परन्तु श्री स्मिथने ऐसी लचर दलील अपनाना ठीक नहीं समझा। यात्रियोंकी सब शिकायतोंको एक ही मानकर चलना उचित है; इसके अतिरिक्त उनपर विचार हृदयहीनतासे नहीं, बल्कि सहृदयता और सहानुभूतिसे करना चाहिए। श्री स्मिथमें हमने प्रायः सदा ही इस भावनाको विद्यमान पाया है। इसलिए उनका पत्र देखकर हमको धक्का लगा। उसमें हमें उनकी सहृदयता दिखलाई नहीं पड़ी, प्रत्युत उसके स्थानपर सरकारी विभागके ऐसे किसी हिसाबी-किताबी अधिकारीकी हृदयहीनताके दर्शन हुए जो लोगोंके कैसे भी कष्टोंको देखकर विचलित नहीं होता। कानून कुछ कहे या न कहे, श्री स्मिथकी प्रकृतिके अधिकारीसे तो हम अति उदार व्यवहारकी आशा करते हैं। इसलिए यह माननेके पश्चात् कि शिकायतोंकी सचाई सिद्ध हो चुकी है, प्रवासी विभागके लिए क्या यह सम्भव नहीं है कि वह जहाजी कम्पनियोंके साथ ऐसा समझौता कर ले (और अबसे पहले, कानूनकी लीकके अनुसार अनावश्यक होनेपर भी, ऐसे समझौते किये जा चुके हैं) जिससे यात्रियोंकी कठिनाइयोंका सर्वथा अन्त न हो तो भी वे कुछ कम तो हो ही जाये? आखिर जो यात्री जहाजकी तलीमें रखे गये थे वे केवल संदिग्ध ही तो थे; उनमें से बहुतोंको शायद इस उपनिवेशमें उतर सकनेका अधिकार भी था। उनमें से कइयोंको इस उपनिवेशमें से सुरक्षित गुजरनेका अधिकार भी था, और इसलिए प्रवासी विभागका उनके साथ इतना सम्बन्ध तो था ही कि वह, उनके मामलोंकी जाँच हो जाने तक, उनके साथ उचित व्यवहार होनेका ध्यान रखता। इन यात्रियोंको निगरानीमें रखनेकी कार्रवाई यदि भिन्न प्रकारसे की जाती, तो कोई असाधारण बात न हो जाती। इसके अतिरिक्त जब उन्होंने किनारेपर जानेके पास माँगे तब उन्हें इनकार क्यों कर दिया गया, और उन्हें वकीलोंकी सहायता क्यों लेनी पड़ी? निस्सन्देह, हम मानते हैं कि, कानूनपर नरमीसे अमल किया जाता तो शायद खर्च कुछ अधिक होता, धीरज अधिक रखना पड़ता और मूल्यवान समय भी नष्ट होता; परन्तु इससे यात्रियोंको जो सुख मिलता उसकी तुलनामें यह सारा व्यय बहुत न होता।

श्री स्मिथके पत्रमें एक गौण प्रश्न भी उठाया गया है। उसपर तुरन्त ध्यान देनेकी आवश्यकता है। जाहिर है कि नीचेके अधिकारियोंको विभागकी ओरसे कुछ हिदायतें दी गई हैं। परन्तु जनताको उनकी कोई जानकारी नहीं होती। जनतासे उनका निकट सम्बन्ध होता है, इसलिए यदि जनताको उनसे परिचित करा दिया जाये तो उससे कानूनका पालन होनेमें सहायता मिलेगी।

श्री स्मिथके पत्रके अन्तिम अनुच्छेदमें लिखा है कि प्रवासी और पुलिस विभागोंके अधिकारी भी कानूनके उतने ही पाबन्द हैं जितने कि और कोई। उसके सम्बन्धमें यह स्पष्ट है कि औसत गरीब भारतीय प्रवासीसे यह आशा शायद ही की जा सकती है कि वह ऐसे मामलोंको अदालतमें ले जायेगा। मुद्दा यह है कि किसीका तो कर्त्तव्य होना चाहिए कि वह अपमान और

अनुचित व्यवहारसे उनकी रक्षा करे। हम मानते हैं कि जिन भारतीयोंपर इस कानूनका प्रभाव पड़ता है उनमें से कई तुनुक-मिजाज भी होते हैं, परन्तु इसमें आश्चर्यकी बात कुछ नहीं है। शायद यह भी सत्य है कि अपने इस स्वभावके कारण वे कभी-कभी अनजाने ही ज्यादती कर बैठते हैं। परन्तु दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंको जिन परिस्थितियोंमें रहना पड़ता है उनमें रहनेवाले व्यक्ति इससे भी बहुत आगे बढ़ते देखे गये हैं। भारतीय उतना आगे न कभी बढ़े हैं और न उनसे वैसी सम्भावना की जा सकती है। [जिस अधिकारीको निरन्तर लोगोंकी स्वाभाविक स्वतन्त्रताको नियन्त्रित करते रहनेके अप्रिय कर्त्तव्यका पालन करते रहना पड़ता हो उसका स्वभाव ऐसा हो जाना सम्भव है कि वह उस कामको भी अपराध मान बैठे जो परेशानियों और पाबन्दियोंकी परिस्थितिमें किसी भी मनुष्यकी मानसिक अवस्थाका अति स्वाभाविक परिणाम हो सकता है।] भारतीयोंको जिस विचित्र परिस्थितिमें डाल दिया गया है उसमें रहनेवाले *लोगोंके साथ अंशमात्र भी न्याय करना हो तो सूक्ष्मदर्शी व्यक्तियों तक को उक्त बात सदा* अपने ध्यानमें रखनी होगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५-११-१९०५

१६०. बदरुद्दीन तैयबजी[1]

बदरुद्दीन तैयबजीका नाम भारतमें सुविख्यात है। बम्बई इलाकेमें तो उनका नाम सभी जानते हैं। बदरुद्दीन तैयबजीने बहुत छोटी उम्रमें ही अपनी शक्तिका परिचय दिया और पाठशालामें वे बहुत अच्छे विद्यार्थी थे। उनकी पढ़ाई इतनी अच्छी थी कि उनके बुजुर्गोंने उन्हें विलायत भेजनेका विचार किया। सर फीरोजशाह[2] और बदरुद्दीन तैयबजी हमजोलीके साथी थे और एक ही समयके विद्यार्थी थे।

बम्बईसे विलायत जानेवाले भारतीयोंमें वे लगभग पहले व्यक्ति थे। विलायतमें उन्होंने बहुत अच्छा विद्याभ्यास किया। वहाँ सम्मान प्राप्त करके वे बम्बई लौट आये और बैरिस्टरके रूपमें उन्होने बहुत ख्याति प्राप्त की। बदरुद्दीन तैयबजीकी तुलना सदैव बड़े अंग्रेज बैरिस्टरोंसे की जाती थी। उन्होंने सुप्रसिद्ध बैरिस्टर ऐन्स्टे तथा इनवेरारिटीसे टक्करें ली थी। जब वे बैरिस्टरी करते थे तब क्वचित् ही ऐसे बड़े मुकदमे होते थे जिनमें दोनों पक्षोंमें से किसी एकमें उन्हें न रखा गया हो। उनकी वक्तृत्व-शक्ति और कानूनी ज्ञान बड़े ऊँचे दर्जेका था; इसलिये वे न्यायाधीशोंको खुश करते थे और पंचोंका मन हर लेते थे। सौराष्ट्रमें बड़े रियासती मुकदमोंके लिए वे बहुत बार आये और विजयी हुए हैं। किन्तु नवाबजादा नसरुल्ला खाँके बचावका मुकदमा उनका सबसे बड़ा मुकदमा माना जायेगा। सूरतके कलेक्टर श्री लेलीने नवाबजादापर १०,००० रुपयेकी रिश्वत देनेका इल्जाम लगाया था। श्री लेलीने इस संबंधमें बहुत कड़ी गवाही दी और बम्बईके मुख्य मजिस्ट्रेट श्री स्लेटरने बड़ा कठोर निर्णय दिया और नवाबजादाको छः महीनेकी कैदकी सजा दे दी। इस निर्णयके खिलाफ अपीलमें जनाब बदरुद्दीन तैयबजीको खड़ा किया गया था। उन्होंने ऐसी बढ़िया कानूनी दलीलें पेश कीं कि न्यायमूर्ति

१. (१८४४-१९०६)।
२. देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३९५।

पार्सनने नवाबजादाकी सजा खारिज कर दी और श्री लेलीको बुरी तरह झिड़का। ऐसी जीते तो जनाब बदरुद्दीनकी अनेक हुई थीं, लेकिन एक इज्जतदार आदमीको बदनामीसे उबार कर जेल जानेसे बचा लिया, इससे बदरुद्दीन तैयबकी शोहरतमें चार चाँद लग गये। कुछ समय बाद बम्बई सरकारने उनको न्यायाधीशका पद दिया और उन्होंने उसे स्वीकार किया। यद्यपि जजका वेतन प्रति माह ३,७५० रुपया है फिर भी न्यायमूर्ति बदरुद्दीनको तो उस वेतनमें घाटा ही है। कहा जाता है कि वकालतमें उनकी वार्षिक आय १,००,००० रुपया थी। न्यायाधीशकी हैसियतसे न्यायमूर्ति बदरुद्दीनने जो काम किया वह बहुत उत्तम माना जाता है। वे अत्यन्त स्वतन्त्रतापूर्वक निर्णय देते हैं और वकील और मुवक्किल सबको सन्तुष्ट करते हैं।

न्यायमूर्ति बदरुद्दीनने जिस प्रकार विद्वत्ता और अपने पेशेमें नाम पाया है उसी प्रकार सार्वजनिक कार्योंमें भी नाम पाया है। भारतीयोंमें, और उनमें भी खासकर मुसलमानोंमें, शिक्षा फैलानेके लिए उन्होंने बड़ी मेहनत की है। स्त्रियोंकी शिक्षाको वे सदैव बढ़ावा देते हैं। उनकी धर्मपत्नी और बेटियाँ सभी अच्छी शिक्षित हैं। राजनीतिक कामोंमें उन्होंने काफी हाथ बँटाया है। न्यायमूर्ति रानडेके साथ उन्होंने बहुत काम किया है। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके वे अग्रणी रहे हैं और कांग्रेसके अध्यक्ष भी बने हैं[1]। उनका अध्यक्षीय भाषण इतना अच्छा था कि अबतक उसकी गणना उत्तम भाषणोंमें की जाती है। वे न्यायकी कुर्सीपर बैठे हैं, फिर भी देशाभिमान वैसा ही रखते हैं। शिक्षाके काममें योग देते हैं। स्वभावसे विनम्र और दयालु हैं। उनका अंग्रेजीका ज्ञान जितना उत्तम है उतना ही उत्तम उनका हिन्दुस्तानीका ज्ञान है। उर्दूमें भाषण करनेमें बम्बई इलाकेमें उनका मुकाबला विरले ही कर पायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५–११–१९०५

१६१. शिष्टमण्डल[2] : लॉर्ड सेल्बोर्नकी सेवामें

ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थितिपर वक्तव्य देनेके पहले, गांधीजीने लॉर्ड सेल्बोर्नके सामने निम्न निवेदन किया :

[जोहानिसबर्ग]
नवम्बर २९, १९०५

इस शिष्टमण्डलके विषयकी चर्चा आरम्भ करनेसे पूर्व, मैं परमश्रेष्ठका सम्मानपूर्वक धन्यवाद करता हूँ कि आपने इतने व्यस्त होते हुए भी इस शिष्टमण्डलसे मिलनेके लिए समय निकाल लिया। परमश्रेष्ठकी सेवामें जो प्रश्न उपस्थित किये गये उनमें से प्रत्येकमें आप व्यक्तिशः रुचि लेते रहे हैं, इसलिये हमने सोचा कि केवल प्रार्थनापत्र भेजते रहनेके स्थानपर हमें अपने भावों और विचारोंको अधिक प्रत्यक्ष रूपमें प्रगट करनेके अवसरकी तलाश करनी चाहिए।

१. सन् १८८७ में मद्रासमें हुए तृतीय अधिवेशनके।

२. शिष्टमण्डलके नेता गांधीजी थे और वह नवम्बर २९, १९०५ को दुपहरबाद ३ बजे लॉर्ड सेल्बोर्नसे मिला था। उसके सदस्य थे : सर्वश्री अब्दुल गनी, अध्यक्ष, ब्रिटिश भारतीय संघ; हाजी हबीब, मन्त्री, प्रिटोरिया समिति; श्री ई० एस० कुवाडिया, मूनस्वामी मूनलाइट और अय्यूब हाजी बेग मुहम्मद।

मैं परमश्रेष्ठको जो वक्तव्य दूँगा उसकी चर्चा करनेसे पहले मुझे ऐसी दो बातोंका जिक्र कर देनेके लिए कहा गया है, जो आपके हालके ट्रान्सवालके दौरेमें हुई थी। बताया जाता है कि परमश्रेष्ठने पॉचेफस्ट्रूममे कहा था कि "जबतक कि अगले वर्ष प्रातिनिधिक विधानसभा इस प्रश्नपर विचार नही कर लेगी तबतक किसी ऐसे ब्रिटिश भारतीयको उपनिवेशमें नही आने दिया जायेगा जो शरणार्थी न होगा।" यदि यह समाचार सत्य हो तो यह भारतीय समाजके निहित अधिकारोंके सम्बन्धमें भारी अन्याय होगा। मुझे आशा है कि मैं आज इसकी सत्यता प्रतिपादित कर सकूँगा। कहा जाता है कि एर्मेलोमें परमश्रेष्ठने "कुली दूकानदार" शब्दोका प्रयोग किया था। ये शब्द इस उपनिवेशके ब्रिटिश भारतीयोको बहुत बुरे लगे है। परन्तु ब्रिटिश भारतीय सघने उन्हे आश्वासन दिया है कि सम्भवत: परमश्रेष्ठने इन शब्दोका प्रयोग नही किया होगा; अथवा यदि किया भी होगा तो परमश्रेष्ठ जानबूझकर ब्रिटिश भारतीय दूकानदारोको बुरी लगनेवाली बात नही कह सकते। नेटालमें "कुली" शब्दके प्रयोगसे बडा अनर्थ हो चुका है। एक बार तो बात इतनी बढ़ गई थी कि उस समयके न्यायाधीश सर वाल्टर रैगको बीचमें पड़कर इस शब्दका प्रयोग गिरमिटिया भारतीयोकी चर्चाके अतिरिक्त, अन्य किसी भी प्रसंगमे रोक देना पड़ा था; क्योकि यह शब्द न्यायालय तक पहुँचा दिया गया था। परमश्रेष्ठ जानते ही होगे, इस शब्दका अर्थ है — "मजदूर" या "बोझ ढोनेवाला"। इसलिए, व्यापारियोंके संबंधमें इसका प्रयोग न केवल बुरा लगता है, बल्कि ये दोनो शब्द परस्पर-विरोधी भी है।

शान्ति-रक्षा अध्यादेश

अब मैं उस वक्तव्यपर आता हूँ जिसे ब्रिटिश भारतीय संघ परमश्रेष्ठकी सेवामे उपस्थित कर रहा है। मैं पहले शान्ति-रक्षा अध्यादेशको लेता हूँ। ट्रान्सवालके ब्रिटिश शासनाधीन क्षेत्रोका अंग बननेके तुरन्त पश्चात् उन सेवाओंकी चर्चा हर जबानपर थी, जो कि सर जॉर्ज व्हाइटके साथ आये हुए डोली-वाहको और भारतीय आहत-सहायक दलने नेटालमें की थी। सर जॉर्ज व्हाइटने प्रभुसिंहकी प्रशंसा शानदार शब्दोमें की थी। वह एक वृक्षपर चढकर बैठा रहता था और जब-जब अम्बलवाना पहाड़ीपर बोअर तोप चलती थी तब-तब बिना चूके घंटा बजाकर लोगोको चेतावनी दे देता था। जनरल बुलरने आहत-सहायक दलकी प्रशसामें जो खरीते[1] भेजे थे वे जब प्रकाशित हुए उस समय शासन उन सैनिक शासकोके हाथमे ही था जो कि भारतीयोंको जानते थे। इस कारण, शरणार्थियोका जो पहला जत्था बन्दरगाहोपर पड़ा प्रतीक्षा कर रहा था उसे देशके भीतर आनेमें कोई कठिनाई नही हुई; परन्तु शहरी जनता डर गई और उसने शरणार्थियो तक के आनेपर पाबन्दी लगानेकी पुकार मचा दी। परिणाम यह हुआ कि देशमे स्थान-स्थानपर एशियाई दफ्तर खुल गये, और भारतीय लोगोंको तबसे आजतक चैन नही मिला। जो प्रत्येक अर्थमे विदेशी थे उन्हे तो साधारणतया बन्दरगाहोपर, प्रार्थनापत्र देते ही, जहाँ-का-तहाँ अनुमतिपत्र मिल जाता था; परन्तु भारतीयोको शरणार्थी होनेपर भी एशियाइयोके निरीक्षकको लिखना पडता था, जिसे प्रार्थनापत्रोंको औपनिवेशिक कार्यालय भेजना पडता था, और तब जाकर परवाने जारी होते थे। इस कार्रवाईमें समय बहुत लग जाता था — दो से छ: महीने और कभी-कभी तो एक वर्ष या इससे भी अधिक तक समय निकल जाता था। तिसपर औपनिवेशिक कार्यालयने यह नियम कर दिया था कि ब्रिटिश भारतीय शरणार्थियोको

१. सर रेडवर्स हेनरी बुलरके कथनानुसार, बोअर युद्धके समय, स्पियन कॉपकी हारके बाद, भारतीय आहत-सहायक दलके स्वयंसेवकोंने खतरा उठानेके लिए बाध्य न होनेपर भी गोलाबारीकी सीमाके अन्दर और गोलोंकी सीधमें काम किया था। देखिए खण्ड ३, पृष्ठ २३८।

प्रति सप्ताह अमुक संख्यामें ही परवाने दिये जा सकते हैं। इस कार्य-प्रणालीका फल यह निकला कि सर्वत्र भ्रष्टाचार फैल गया और परवानोंके दलालोंका एक गिरोह खड़ा हो गया जो भोले शरणार्थियोंको नोचने-खसोटने लगा। यह बदनामी सब जगह फैल गई कि जो शरणार्थी ट्रान्सवालमें घुसना चाहे उसे १५ से ३० पौंड तक, या इससे भी अधिक, खर्च करना पड़ता है। ब्रिटिश भारतीय संघका ध्यान इस ओर गया, उसने प्रार्थनापत्रपर प्रार्थनापत्र दिये, और अन्तमें एशियाई दफ्तरोंको समाप्त कर दिया गया। परन्तु दुर्भाग्यवश अनुमतिपत्र देनेकी पद्धति जारी रही, और मुख्य अनुमतिपत्र-सचिव सदा औपनिवेशिक कार्यालयके निर्देशोंके अधीन ही रहा है। इस प्रकार जो शान्ति-रक्षा अध्यादेश खतरनाक लोगों और राजनीतिक अपराधियोंपर लागू करनेके लिए बनाया गया था वह औपनिवेशिक कार्यालयके प्रभावमें भारतीय प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम बन गया; और आजतक वैसा ही बना हुआ है। इसलिए, वर्तमान शासनमें भी, असली शरणार्थियों तक के लिए परवाना प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है। वह विरले लोगोंको ही मिल पाता है, वह भी महीनोंके विलम्बसे। प्रत्येक व्यक्तिको, उसकी हैसियत चाहे जो हो, एक विशेष फार्मपर प्रार्थनापत्र भरना, दो आदमियोंका हवाला देना, और फार्मपर अपना अँगूठा लगाना पड़ता है। इसके बाद जाँच की जाती है, और फिर अनुमतिपत्र दिया जाता है। मानो इतना पर्याप्त नहीं था, इसलिए श्री लवडे और उनके मित्रोंके आक्षेपोंके कारण, मुख्य अनुमतिपत्र-सचिवको हिदायत मिली कि वह यूरोपीयोंके हवाले दिये जानेका आग्रह रखे। यह ब्रिटिश भारतीय शरणार्थियोंसे देशमें प्रवेश करनेका अधिकार छीन लेनेके समान था। ऐसे बीस भारतीय भी खोज निकालना मुश्किल होगा जिन्हें सम्मानित यूरोपीय नाम और शकल-सूरत दोनोंसे जानते हों। ब्रिटिश भारतीय संघको सरकारसे पत्र-व्यवहार करना पड़ा; और इस बीच परवाने देना रोक दिया गया। हालमें जाकर यह अनुभव किया गया है कि यूरोपीयोंके हवाले देनेपर जोर देना भारी अन्याय था।

बच्चोंका प्रवेश

परन्तु यूरोपीय हवालोंके अतिरिक्त अन्य कठिनाइयाँ भी मौजूद हैं। अब १६ वर्षसे कम आयुके लड़कों तक को उपनिवेशमें आनेसे पहले परवाने लेनेके लिए कहा जाता है। फलतः, दस वर्ष और इससे भी कम आयुके बच्चोंका सीमावर्ती नगरोंमें अपने माता-पितासे पृथक् कर दिये जाना कोई असाधारण घटना नहीं रही है। समझमें नहीं आता कि ऐसा नियम क्यों गढ़ा गया है।

उच्चायुक्त : **क्या आपकी नजरमें कभी कोई ऐसा मामला आया है जिसमें माता-पिताने पहले ही बतला दिया हो कि हमारे साथ बच्चे हैं और फिर उन बालकोंको देशमें आनेका अनुमतिपत्र देनेसे इनकार किया गया हो?**

श्री गांधी : हाँ; और माता-पिताओंको हलफनामे देने पड़े, और उसके बाद ही बच्चोंको आने दिया गया।

जहाँतक मैं जानता हूँ, यदि माता-पिताको आनेका अधिकार हो तो प्रत्येक सभ्य देशमें नाबालिग बच्चोंका भी उनके साथ आनेका अधिकार माना जाता है। कुछ हो, १६ वर्षसे कम आयुके बच्चो तक को, यदि वे सिद्ध न कर सकें कि हमारे माता-पिताका देहान्त हो चुका है अथवा हमारे माता-पिता युद्धसे पहले ट्रान्सवालमें रहते थे, उपनिवेशमें आने या रहने नहीं दिया जाता। यह बड़ी संगीन बात है। जैसा कि परमश्रेष्ठ जानते हैं, संयुक्त कुटुम्ब प्रणाली सारे भारतमें प्रचलित है। भाई और बहन और उनके बच्चे पीढ़ी-दर-पीढ़ी एक ही मकानमें रहते चले आते हैं, और कुटुम्बका सबसे बड़ा व्यक्ति, नामको और वस्तुतः, दोनों प्रकार, सारे परिवारका कर्त्ता और पालक होता है। इसलिए यदि भारतीय अपने सम्बन्धियोंके बालकोंको अपने साथ उपनिवेशमें ले आते हैं

तो इसमें असाधारण बात कुछ नही है। हमारा निवेदन है कि यदि ऐसे बच्चोंको, जिन्हे अबतक छेड़ा नही गया था, देशसे निकाल दिया गया या उपनिवेशमें प्रविष्ट नही होने दिया गया तो यह बहुत गम्भीर अन्याय होगा। इसके अतिरिक्त, सरकार चाहती है कि जो भारतीय यहाँ रहते है उनकी सम्बन्धिनी स्त्रियोको भी पुरुषोंके समान ही पंजीकृत किया जाये। ब्रिटिश भारतीय संघने इस प्रकारकी कार्रवाइयोंका तीव्र प्रतिवाद किया है, और यहाँ तक कहा है कि हम इस प्रश्नपर अदालत तक में लड़नेको तैयार है, क्योंकि हमें सलाह दी गई है कि यहाँके निवासी भारतीयोंकी पत्नियोको अपना नाम पंजीकृत कराने और ३ पौंड देनेकी आवश्यकता नही है।

खास मुनीमों आदिका प्रवेश

किसीको कितनी ही आवश्यकता क्यों न हो, सरकार नये अनुमतिपत्र नही देती। हम सब समाचारपत्रोमे परमश्रेष्ठकी यह दृढ घोषणा पढकर अत्यन्त प्रसन्न हुए थे कि जो भारतीय पहलेसे इस देशमे बसे हुए है उनके निहित अधिकारोको छेड़ा या छुआ न जाये। बहुत-से व्यापारियोको अपना व्यापार चलानेके लिए विश्वस्त मुनीम आदि निरन्तर भारतसे बुलाते रहना पडता है। यहाँ बसी हुई आबादीमें से विश्वस्त आदमियोंको चुनना सरल नही होता। सभी स्थानों और जातियोके व्यापारियोंका अनुभव यही है। इसलिए यदि, जबतक प्रातिनिधिक शासन स्थापित नहीं हो जाता तबतक, नये भारतीयोंके लिए देशका द्वार बन्द रखा जायेगा तो यह कार्रवाई निहित अधिकारोमें भारी हस्तक्षेप होगी। यह भी समझमें नही आता कि योग्य और शिक्षित व्यक्तियोंको, उनके शरणार्थी होने-न-होनेका विचार किये बिना, प्रार्थनापत्र देनेपर अनुमतिपत्र क्यो न दिया जाये। इन सब कठिनाइयोके बावजूद, हमारे भारतीय-विरोधी मित्र यह कहते कभी नही थकते कि जो ब्रिटिश भारतीय ट्रान्सवालमें कभी नही रहते थे उनकी देशमें बाढ आ गई है। उनको यह कहनेकी आदत-सी पड़ गई है कि जो कोई भी भारतीय देशमे पहले मौजूद था वह पंजीकृत किया जा चुका था। मुझे इस प्रश्नपर अधिक कहनेकी आवश्यकता नही जान पडती, क्योकि परमश्रेष्ठको यह पहले बतलाया जा चुका है कि इस आक्षेपके सम्बन्धकी सब बातें झूठी है। परन्तु १८९३ के एक मामलेका ज़िक्र करनेके लिए परमश्रेष्ठ मुझे क्षमा करे। शायर और ड्यूमा मजदूरोंके दो बडे ठेकेदार थे। एक बार वे देशमे ८०० भारतीय मजदूर एक साथ लाये थे। और कितनोंको वे लाये, मुझे मालूम नही। उस समयके सरकारी न्यायवादीने जोर दिया कि उन सबको पंजीकरणका प्रमाणपत्र लेना और ३-३ पौड देना चाहिए। शायर और ड्यूमाने इस बातका उच्च न्यायालयमें परीक्षण किया। उस समयके मुख्य न्यायाधीश श्री कौट्जने फैसला दिया कि कानूनके अनुसार इन आदमियोको ३ पौड देनेकी आवश्यकता नही है, क्योंकि ये "व्यापार करनेके लिए" यहाँ नही आये; और यदि ये आदमी ठेकेकी मियाद खतम होनेके बाद यही रह गये तो भी मै सरकारकी सहायता नही कर सकूँगा। यह तो केवल एक उदाहरण है, जिसका खण्डन नही किया जा सकता। इसमें सैकड़ों भारतीय ३-३ पौड दिये बिना इस देशमें रह गये थे। ब्रिटिश भारतीय संघ निजी अनुभवके आधारपर बराबर यह कहता रहा है कि सैकड़ो भारतीय, जिन्होंने व्यापार करनेके परवाने नही लिए, अपने-आपको बिना पंजीकृत कराये और बिना ३-३ पौड दिये ही देशमें रह गये थे।

बाजार और बस्तियाँ

अब मै १८८५ के कानून ३ पर आता हूँ। बहुधा कह दिया जाता है कि इस देशमें ब्रिटिश सरकारकी स्थापनाके पश्चात् भारतीयोको व्यापारके परवानोंके विषयमें रियायत मिल गई है। परन्तु यह बात सत्यसे जितनी दूर है उतनी और कोई नही हो सकती। युद्धसे पहले, हम केवल

परवानेकी रकम देकर जहाँ चाहें वहाँ व्यापार कर सकते थे। उस समय ब्रिटिश सरकारकी लम्बी बाँह इतनी सशक्त थी कि वह हमारी रक्षा कर सकती थी; और युद्ध शुरू होनेके ऐन मौके तक, उस समयकी सरकारके लगातार यह धमकी देते रहनेपर भी कि ब्रिटिश भारतीय व्यापारियों-पर मुकदमा चलाया जायेगा, कोई कार्रवाई नहीं की गई थी। यह ठीक है कि अब सर्वोच्च न्यायालयके निर्णयके कारण भारतीय व्यापारपर कोई पाबन्दियाँ नहीं है, परन्तु ऐसा सरकारकी कार्रवाइयोंके बावजूद हो रहा है। सरकार अन्तिम क्षणतक कोई सहायता करनेसे इनकार करती रही और 'बाजार सूचना' के नामसे एक विज्ञप्ति प्रकाशित की गई, जिसमें कहा गया था कि एक नियत दिनके बाद जिस किसी भारतीयके पास युद्ध छिड़नेके समय वस्तियोंके बाहर व्यापार करनेका परवाना नहीं रहा होगा, उससे बस्तियोंमें चले जानेकी ही नहीं, बल्कि वहीं व्यापार भी करनेकी अपेक्षा रखी जायेगी। यह विज्ञप्ति प्रकाशित होनेके बाद प्रायः प्रत्येक नगरमें बस्तियाँ कायम कर दी गईं, और जब सरकारसे न्याय पानेका एक-एक प्रयत्न निष्फल हो गया तब, आखिरी सहारेके तौरपर, इस प्रश्नको अदालतमें परख देखनेका निश्चय किया गया। तब सरकारका सम्पूर्ण तन्त्र हमारे खिलाफ खड़ा कर दिया गया। युद्धके पहले भी ऐसा ही एक मुकदमा लड़ा गया था और तब ब्रिटिश सरकारने कानूनका अर्थ लगवानेमें भारतीयोंकी सहायता की थी। उसका फैसला वर्तमान सर्वोच्च न्यायालयसे अब प्राप्त हुआ है। ब्रिटिश शासनकी स्थापनाके पश्चात् ये सब शक्तियाँ हमारे विरुद्ध हो गईं। यह भाग्यकी क्रूर विडम्बना है, और इसे छिपानेका कुछ लाभ नहीं कि हमने इसे बहुत महसूस किया है। और मैं कह दूँ कि, जैसा कि अब प्रकट हुआ है, ऐसा उस समयके महान्यायवादीके सरकारको यह बतला देनेपर भी हुआ कि वह कानूनका जो अर्थ लगाना चाह रही है वह ठीक नहीं है, यदि यह मामला सर्वोच्च न्यायालयमें गया तो इसका निर्णय ब्रिटिश भारतीयोंके ही पक्षमें होगा। इसलिए यदि ब्रिटिश भारतीयोंको बस्तियोंमें नही भेजा गया और वे जहाँ चाहें वहीं उन्हें व्यापार करने और रहने दिया गया है तो, जैसा कि मैंने कहा है, यह सरकारके इरादोंके बावजूद हो रहा है[1]। जहाँतक भारतीयोंका सम्बन्ध है, १८८५ के कानून ३ का अर्थ, प्रत्येक मामलेमें, कठोरतापूर्वक हमारे विरुद्ध लगाया गया है और इस कानूनमें हमारे अनुकूल जो गुंजाइश रह गई है उसका लाभ भी हमें नही होने दिया गया। उदाहरणार्थ, जो "गलियाँ, मुहल्ले या बस्तियाँ सरकार द्वारा पृथक् किये जायें," उनमें भारतीयोंको जमीनका मालिक होनेकी मनाही नहीं की गई। परन्तु सरकार दृढ़तापूर्वक "गलियों और मुहल्लों" शब्दोंपर विचार करनेसे इनकार करती और "बस्तियों" शब्दको पकड़कर बैठी रही है; और ये बस्तियाँ भी मीलोंके फासलेपर कायम की गई है। हम बहुतेरा अनुरोध करते रहे हैं कि सरकारको गलियों और मुहल्लोंमें भी हमें जमीनका मालिक बननेका हक देनेका अधिकार है, और उसे उस अधिकारका प्रयोग हमारे पक्षमें करना चाहिए; परन्तु हमारा सारा अनुरोध व्यर्थ हुआ। जो जमीन जोहानिसबर्ग, हीडेलबर्ग, प्रिटोरिया और पॉचेफस्ट्रम आदिमें धार्मिक प्रयोजनोंके काम आती रही है उसे भी सरकारने न्यासियोंके नाम नही होने दिया, यद्यपि स्वास्थ्य-रक्षाकी दृष्टिसे मस्जिदोंके स्थानोंको सब प्रकार स्वच्छ रखा जाता है। इसलिए हमारा निवेदन है कि इस समय, जबकि नये कानून विचाराधीन हैं, हमें कुछ सुविधाएँ दे दी जायें।

वर्गीय कानून

सन् १८८५ के कानून ३ के स्थानपर जो कानून बनाया जानेवाला है उसके सम्बन्धमें सर आर्थर लॉली द्वारा तैयार किये गये खरीतेके कारण हमें बहुत अधिक कष्ट हुआ है। उसमें

१. यहाँ मूल अंग्रेजीमें कुछ भूल मालूम होती है। शायद इस अर्थकी शब्दावली रही होगी: "यह सरकारके अच्छे इरादोंके कारण नहीं, बल्कि उसके विरोधी इरादोंके बावजूद हो रहा है।"

ब्रिटिश भारतीयों अथवा एशियाइयोके लिए विशेष रूपसे कानून बनानेपर जोर दिया गया है। उसमें अनिवार्य पृथक्करणपर भी जोर दिया गया है और ये दोनों बाते ब्रिटिश भारतीयोंको बार-बार दिये गये आश्वासनोंके विरुद्ध हैं। मैं अधिकतम आदरके साथ कहना चाहूँगा कि सर आर्थर लालीने नेटालमें जो-कुछ देखा उससे वे पथभ्रान्त हो गये हैं। नेटालका उदाहरण देकर कहा गया है कि ट्रान्सवाल भी ऐसा ही हो जायेगा; परन्तु नेटालके जिम्मेदार राजनीतिज्ञ हमेशा मानते रहे है कि भारतीयोंके कारण ही नेटाल सँभला रहा। सर जेम्स हुलेटने[1] वतनी मामलोके आयोग (नेटिव अफेयर्स कमिशन) के सामने कहा था कि व्यापारीके रूपमें भी भारतीय अच्छा नागरिक है और वह थोकफरोश गोरे व्यापारियो और वतनी लोगोंमें अच्छे बिचौलियेका काम करता है। सर आर्थर लालीने यहाँ तक कहा था कि ब्रिटिश भारतीयोंके साथ यदि कोई वादे किये भी गये होगे तो वे उन हालातसे अनजान होनेके कारण कर दिये गये होगे, जो कि आज मौजूद है; और इसलिए उन्हे पूरा करनेकी अपेक्षा उन्हे तोड़ देना ही अधिक बडा कर्तव्य होगा। मै अत्यन्त आदरके साथ निवेदन करनेका साहस करता हूँ कि वादोके सम्बन्धमें ऐसा सोचना गलत है। यद्यपि हम महारानीकी १८५८ की घोषणापर महान प्रतिज्ञापत्र (मैग्ना कार्टा)के रूपमें विश्वास करते है, परन्तु इस समय हम पचास बरस पहले किये हुए वादोका जिक्र नही कर रहे है। उस घोषणाको एकाधिक बार पुष्ट किया जा चुका है। वाइसरायपर वाइसराय दृढतापूर्वक कहते रहे हैं कि इस प्रतिज्ञाका पालन किया जायेगा। औपनिवेशिक प्रधान मंत्रियोके सम्मेलनमे श्री चेम्बरलेनने इसी सिद्धान्तका प्रतिपादन किया था और प्रधान मंत्रियोंको बतला दिया था कि विशेषत: केवल ब्रिटिश भारतीयोको प्रभावित करनेवाले किसी कानूनको स्वर्गीया सम्राज्ञीकी सरकार सहन नही करेगी, ऐसा कानून सम्राटके करोडों राजभक्त प्रजाजनोंको सर्वथा अनावश्यक रूपसे अपमानित करनेवाला होगा. और इसलिए जो भी कानून पास किया जाये वह सर्व-सामान्य रूपका होना चाहिए। इसी कारणसे आस्ट्रेलियाके प्रथम प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमपर निषेधाधिकारका प्रयोग किया गया था। प्रथम नेटाल मताधिकार अधिनियम (नेटाल फ्रैंचाइज ऐक्ट) भी इसी कारण निषिद्ध ठहरा दिया गया था, और इसी कारण नेटालके उपनिवेशको, केवल एशियाइयोंपर लागू होनेवाला एक विधेयक पेश करनेके बाद, उसका मसविदा फिर तैयार करना पडा था। ये सब मामले पुराने जमानेके नही, हालके बरसोके है। यह भी नहीं कहा जा सकता कि इस सबको बदलनेके लिए आज कोई नये हालात सामने आ गये हैं। युद्धसे ठीक पहले भी मन्त्रियोने इस आशयकी घोषणाएँ की थीं कि युद्धका एक कारण ब्रिटिश भारतीयोके अधिकारोकी रक्षा करना भी है। अन्तिम बात यह है, परन्तु इसका महत्त्व कुछ कम नही है कि स्वयं परमश्रेष्ठने भी युद्ध छिड़नेसे ठीक पहले यही विचार प्रकट किया था। इसलिए यद्यपि हमारा विनम्र मत यह है कि सर आर्थर लालीने इस प्रश्नपर जिस प्रकार विचार किया वह अति अन्यायपूर्ण और ब्रिटिश परम्पराओसे असगत है, तथापि यह प्रमाणित करनेके लिए कि हम गोरे उपनिवेशियोके साथ सहयोग करना चाहते हैं. हमने पहले ऐसा कोई कानून न होते हुए भी यह सुझाव रखा है कि अब एक प्रवासी अधिनियम केप या नेटालके अधिनियमोके आधारपर बना दिया जाये; परन्तु उसमें ये दो अपवाद रखे जायें कि एक तो शिक्षणकी कसौटीमें प्रधान-प्रधान भारतीय भाषाओंको भी सम्मिलित कर लिया जाये और, दूसरे, पहलेसे जमे हुए ब्रिटिश भारतीय व्यापारियोंको यह सहूलियत दी जाये कि वे जिन व्यक्तियोंको अपना व्यापार चलानेके लिए आवश्यक समझें उन्हे अस्थायी रूपसे भारतसे बुला सकें। इससे वह भय एकदम दूर हो जायेगा जिसे कि एशियाई हमलेका नाम दिया गया है।

१. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ४८८।

हमने यह सुझाव भी दिया है कि व्यापारके जो परवाने इतनी अधिक शिकायतका कारण बने हुए हैं उन्हें जारी करने-न-करनेका अधिकार स्थानिक निकायों या नगर-परिषदोंको दे दिया जाये, परन्तु उनपर अन्तिम नियन्त्रण सर्वोच्च न्यायालयका रहे। वर्तमान सब परवानोंपर यह नया कानून लागू न हो, क्योंकि ये परवाने निहित अधिकारोंको प्रकट करते हैं। हम अनुभव करते हैं कि ये दो कानून बनाकर १८८५ के कानून ३ को वापस ले लिया जाता तो भारतीयोंके साथ कुछ, केवल कुछ, न्याय हो जाता। हमारा निवेदन है कि हमें जमीनका मालिक बनने, और स्वास्थ्य-रक्षा तथा इमारतोंकी बाहरी शकल-सूरत आदिके साधारण नगरपालिका-नियमोंका पालन करते हुए जहाँ चाहें वहाँ रहनेकी पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए; और जबतक नया कानून बने तबतक शान्ति-रक्षा अध्यादेशका प्रयोग नये कानूनकी भावनाके अनुसार करना और १८८५ के कानून ३ का अर्थ उदारतासे लगाना चाहिए। मुझे यह कानून ब्रिटिश संविधानकी उस भावनाके विरुद्ध लगता है जो कि बचपनसे मुझे सिखलाई गई है; और मेरे देशवासी यह नहीं समझ सकते कि जो ब्रिटिश झंडा विदेशियों तक की रक्षा करता है उसके नीचे उसीके प्रजाजनोंको फुट-भर जमीन तक का, जबतक वे उसका सदुपयोग करते है, मालिक होनेसे क्यों रोक दिया जाता है। इसलिए मेरे संघने जो शर्तें पेश की हैं उनके अनुसार सरकारके लिए यह सम्भव होना चाहिए कि वह इस उपनिवेशकी कानून-पुस्तकमें से ऐसे कानून निकाल दे, जिनसे ब्रिटिश भारतीयोंका अपमान होता है। जब हमें अपने खाने-कपड़े और जीवन-मृत्युके प्रश्नोंपर विचार करना पड़ रहा है तब मैं पैदल चलनेकी पटरियोंके नियमों जैसे प्रश्नोंकी चर्चा करना नहीं चाहता। राजनीतिक अधिकारोंकी चाह हमें नही है, परन्तु हम अन्य ब्रिटिश प्रजाजनोंके साथ शान्ति और मित्रतापूर्वक, शान और सम्मान सहित अवश्य रहना चाहते हैं। इसलिए हम अनुभव करते हैं कि जिस क्षण सम्राटकी सरकार विभिन्न वर्गोमें भेद-सूचक कानून बनानेका निश्चय करेगी उसी क्षण उस स्वतंत्रताकी समाप्ति हो जायेगी जिसे हमने ब्रिटिश सम्राटके शासनमें रहते हुए एक अमूल्य पैतृक सम्पत्ति मानना सीखा है।

वक्तव्य[1]

रंगदार लोगों और, इसी कारण, भारतीयोंपर लागू होनेवाले कानूनोंके अलावा ये कानून भी मौजूद है: शान्ति-रक्षा अध्यादेश तथा १८८६ में संशोधित १८८५ का कानून ३।

यद्यपि शान्ति-रक्षा अध्यादेश, जैसा कि नामसे ज्ञात होता है, खतरनाक लोगोंको उपनिवेशसे दूर रखनेके लिए बनाया गया था, तथापि उसका उपयोग मुख्यतया ब्रिटिश भारतीयोंका ट्रान्सवाल-प्रवेश रोकनेके लिए किया जा रहा है।

कानूनका उपयोग सदैव कठोर एवं अत्याचारपूर्ण ढंगसे किया जाता रहा है — और यह तब होता रहा है जबकि मुख्य अनुमतिपत्र-सचिव चाहते है कि ऐसा न किया जाये। उन्हे उपनिवेश-कार्यालयसे हिदायतें लेनी पड़ती है। इसलिए कानूनको कठोरताके साथ उपयोगमें लानेका कारण विभागका मुख्य अधिकारी नही, बल्कि वह प्रणाली है जिसके अन्तर्गत यह कानून उपयोगमें लाया जाता है।

(क) अभी सैकड़ों शरणार्थी आनेकी प्रतीक्षामें है।

(ख) लड़कोंके लिए, चाहे वे अपने माता-पिताओंके साथ हों या उनके बिना, अनुमतिपत्र लेना जरूरी है।

१. यह दिसम्बर २ के और इसके पूर्व आनेवाला वक्तव्य ९ दिसम्बर १९०५ के 'इंडियन ओपिनियन' में छपा था।

(ग) पुराने ३ पौंडी पंजीयनवाले जो लोग बिना अनुमतिपत्रोंके देशमें आते है, वे यद्यपि शरणार्थी है, फिर भी उन्हे वापस भेजा जा रहा है और उनसे बाकायदा अर्जियाँ माँगी जा रही है।

(घ) ट्रान्सवाल निवासियोंकी स्त्रियोसे भी आशा की जाती है कि वे, यदि अकेली है तो, अनुमतिपत्र ले और पंजीयनके लिए ३ पौंडी शुल्क अदा करे — चाहे वे अपने पतियोके साथ हो चाहे उनके बगैर। (अब इस सम्बन्धमें सरकार और ब्रिटिश भारतीय सघके बीच पत्र-व्यवहार हो रहा है।)

(ङ) सोलह वर्षसे कम आयुके बच्चोंको, यह सिद्ध न कर सकनेपर कि उनके माता-पिता मर गये है या वे ट्रान्सवालके निवासी है, वापस भेज दिया जाता है या अनुमतिपत्र देनेसे इनकार कर दिया जाता है। इस तथ्यकी ओर ध्यान ही नही दिया जाता कि उनकी परवरिश शायद ऐसे सम्बन्धी करते हों जो उनके अभिभावक है और जो ट्रान्सवालमे रहते है।

(च) गैर-शरणार्थी भारतीयोको, चाहे वे किसी भी हैसियतके क्यों न हो, उपनिवेशमे प्रवेश नही करने दिया जाता। (इस अन्तिम प्रतिबन्धके फलस्वरूप जमेजमाये व्यापारियोको अत्यन्त असुविधाका सामना करना पड़ रहा है; क्योकि इसी कारण वे विश्वासपात्र व्यवस्थापको और मुंशियोको भारतसे नही बुला सकते।)

१८८५ का कानून ३

स्वर्गीया सम्राज्ञीके मन्त्रियोंकी घोषणाओं और नागरिक शासन-व्यवस्था स्थापित करनेके बाद राहत देनेके उनके आश्वासनोके बावजूद कानूनकी पुस्तकमे यह कानून अभी मौजूद है और पूर्ण रूपसे अमलमें लाया जा रहा है, यद्यपि बहुत-से कानूनोको जिन्हे ब्रिटिश सविधानके प्रतिकूल समझा गया था, ट्रान्सवालमे ब्रिटिश सत्ताकी उद्घोषणा होते ही रद कर दिया गया था। १८८५ का कानून ३ ब्रिटिश भारतीयोके लिए अपमानजनक है और वह केवल गलतफहमीके कारण ही स्वीकार कर लिया गया था। यह भारतीयोपर निम्नलिखित पाबन्दियाँ लगाता है:

(क) यह उन्हे नागरिक अधिकारोके उपभोगसे वचित करता है।

(ख) यह, उन सडको, हलको या बस्तियोंको छोडकर जो कि भारतीयोके रहने-बसनेके लिए अलग छोड दी गई है, अन्यत्र अचल सम्पत्तिके स्वामित्वपर रोक लगाता है।

(ग) इसका उद्देश्य सार-सफाईके खयालसे बस्तियोमे भेजकर ब्रिटिश भारतीयोंका अनिवार्य पृथक्करण है।

और (घ) यह प्रत्येक भारतीयपर, जो व्यापार या इसी प्रकारके अन्य उद्देश्यसे उपनिवेशमें प्रविष्ट हो, ३ पौंडी कर लागू करता है।

ब्रिटिश भारतीय सघकी ओरसे सादर निवेदन किया जाता है कि शान्ति-रक्षा अध्यादेशको इस प्रकार अमलमें लाया जाये कि:

(क) इससे सभी शरणार्थियोको अविलम्ब प्रवेशकी सुविधा उपलब्ध हो जाये।

(ख) यदि १६ वर्षसे कम आयुके बच्चोंके माता-पिता या अभिभावक उनके साथ हों तो उन्हे हर तरहकी पाबन्दियोसे मुक्त कर दिया जाये।

(ग) भारतीयोके परिवारकी स्त्रियोको प्रवेशाधिकार-सम्बन्धी बाधा या पाबन्दीसे बिलकुल मुक्त रखा जाये। तथा

(घ) अधिवासी व्यापारियोंकी प्रार्थनापर सीमित संख्यामें ऐसे भारतीयोके लिए भी, जो शरणार्थी नहीं, सेवाके अनुबन्ध कालके लिए अनुमतिपत्र उपलब्ध किया जाये, बशर्ते कि

ये व्यापारी अनुमतिपत्र अधिकारीको यह तसल्ली दे सकें कि उन्हें ऐसे व्यक्तियोंकी सेवाओंकी आवश्यकता है।

और (ङ) शिक्षित भारतीयोंको, प्रार्थनापत्र देनेपर, उपनिवेशमें आनेकी अनुमति मिलनी चाहिए।

१८८५ का कानून ३ और शान्ति-रक्षा अध्यादेश इन दोनों कानूनोंको तथा ब्रिटिश भारतीयोंपर असर डालनेवाले अन्य रंग सम्बन्धी कानूनोंको, जितनी जल्दी हो सके, रद कर देना चाहिए। और उन्हें निम्नलिखित बातोंके बारेमें आश्वासन दिया जाना चाहिए:

(क) जमीन-जायदाद रखनेका उनका अधिकार।

(ख) उपनिवेशके स्वास्थ्य-सम्बन्धी आम कानूनोंका खयाल करते हुए वे जहाँ चाहें रह सकें।

(ग) किसी भी प्रकारके विशेष शुल्ककी अदायगीसे छूट।

और (घ) आम तौरपर विशेष कानूनोंसे मुक्ति तथा नागरिक अधिकारों एवं स्वतंत्रताका उसी हद तक उपभोग जिस हद तक कि दूसरे उपनिवेशी करते हैं।

यद्यपि ब्रिटिश भारतीय संघ यूरोपीय निवासियोंकी इस आशंकासे सहमत नहीं कि भारतसे होनेवाले अबाध आव्रजनसे वे संकटमें पड़ जायेंगे, फिर भी उनके साथ मेल-जोलसे काम करने तथा सौहार्द्र स्थापित करनेकी सच्ची भावनासे उसने सदैव यह निवेदन किया है:

(क) शान्ति-रक्षा अध्यादेशकी जगह केप या नेटालके आधारपर एक साधारण प्रवासी-कानून बनाया जाये, बशर्ते कि शैक्षणिक कसौटी महान भारतीय भाषाओंको मान्यता दे दे और ऐसे लोगोंको जिनकी जरूरत व्यापारमें पहलेसे ही जमे भारतीय व्यापारियोंको हो, निवास-सम्बन्धी अनुमतिपत्र देनेका अधिकार सरकारको दे दिया जाये।

(ख) एक ऐसा साधारण विक्रेता-परवाना कानून पास किया जाये जो समाजके सभी वर्गोंपर लागू हो और जिसके द्वारा नगर-परिषदें या स्थानिक निकाय नये व्यापारिक परवाने देनेपर नियन्त्रण रख सकें; बशर्ते कि इस प्रकारकी परिषदों या स्थानिक निकायोंके निर्णयोंकी समीक्षाके लिए सर्वोच्च न्यायालयमें अपील करनेका अधिकार हो। इस कानूनके अन्तर्गत, एक ओर तो, केवल उस हालतको छोड़कर जब कि मकान या दूकान स्वच्छ अवस्थामें न हो, तत्कालीन परवानोंका संरक्षण होगा और दूसरी ओर नये परवानेके लिए नगर-परिषदों या स्थानिक निकायोंकी स्वीकृति लेनी पड़ेगी। फलतः परवानोंकी अभिवृद्धि प्रायः उपर्युक्त संस्थाओं-पर निर्भर करेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २-१२-१९०५ और ९-१२-१९०५

१६२. कटौती और व्यक्ति-कर

गत मंगलवारको डर्बन नगर-परिषदकी बैठकमें महापौरने बताया कि नगरपालिकाके जिन विभागोंमें वतनी और भारतीय कर्मचारी काम करते हैं उन सबके अध्यक्षोंके साथ उन्होंने भेंट की और इस सुझावपर विचार किया कि वतनी और भारतीयोंकी मासिक मजदूरीमें दस प्रतिशतकी कमी कर दी जाये। इसे परिषदने भी स्वीकार कर लिया है और इसपर १० नवम्बरसे अमल शुरू हो जायेगा।

स्पष्ट है कि न तो परिषदने और न विभागीय अध्यक्षोंने इस बातपर विचार किया कि जिन अभागे व्यक्तियोंपर इस निर्णयका असर पड़ेगा उनकी कठिनाई कितनी अधिक बढ़ जायेगी। जो स्वतन्त्र भारतीय नगर-निगममें काम करते हैं वे प्राय: सभी गिरमिटिया वर्गसे आये हैं और उनको ब्रिटिश उपनिवेशमें "स्वतन्त्र" ब्रिटिश प्रजा कहलानेका विशेषाधिकार पानेके लिए ३ पौंड वार्षिक कर देना पड़ता है। अब इसके (गरीब आदमीके लिए तो यही बहुत अधिक है) अतिरिक्त १ पौंड वार्षिक कर और लगेगा। ये लोग इस अतिरिक्त बोझको कैसे उठायेंगे और अपने कर कैसे अदा करेंगे, यह तो अधिकारी ही जानें। हम केवल इतना ही कह सकते हैं कि वेतनमें कटौतीकी इस विधिसे परिषदकी मानव-भावनापर कोई अच्छा प्रकाश नहीं पड़ता, और यह कि इसपर अमल करनेका यह अवसर विशेष रूपसे असामयिक है।

उसी बैठकमें परिषदने निश्चय किया कि नगरके बिजली-इंजीनियरके सहायकका वेतन बढ़ाकर ४०० पौंड वार्षिक कर दिया जाये। कटौतीकी यह विधि सारे उपनिवेशमें लागू होती है। इसपर हमारे जागरूक सहयोगी 'ट्रेड ऐंड ट्रान्सपोर्ट' ने लिखा है:

> **अभीतक 'गज़ट' ने यह नहीं बताया कि सरकारने जिन नागरिक कर्मचारियों (सिविल सर्वेंट्स) को इसलिए चुना था कि आर्थिक कठिनाईमें उपनिवेशकी सहायता करनेके प्रयोजनसे वे अपने वेतनमें कटौती स्वीकृत कर लेंगे, उनमें एक ऐसा भी था जिसने ऐसा करनेसे एकदम इनकार कर दिया; और सरकार, दृढ़ रहनेके स्थान पर, इस व्यक्तिकी अपने साथियोंके साथ इस सम्मिलित बोझको उठानेमें भाग लेनेकी अनिच्छाके सामने झुक गई। इतना ही नहीं, उसके साथ यहाँतक रियायत की कि उसके वेतनमें अच्छी-खासी वृद्धि कर दी; और इस उदारताके लिए बहाना यह पेश किया कि इस आदमीने एक ऐसे आयोजनमें, जिसका इस कृपापात्रके खास विभागसे संलग्न कर्त्तव्योंसे कोई वास्ता नहीं था, उल्लेखनीय सेवा प्रदान की थी।**

यदि डर्बन नगर-परिषद पहले उन विभागीय अध्यक्षोंके, जो वतनी और भारतीय कर्मचारियोंकी कटौती करानेके लिए तैयार थे, ऊँचे-वेतनोंमें समुचित कमी करके अपने व्ययमें बचत करती, तो ३,००० पौंड प्रतिवर्षकी जो तुच्छ राशि उन्होंने अपने निर्धनतम कर्मचारियोंपर बोझ लाद कर बचाई है उसकी पूर्ति सुगमतासे हो जाती। उस अवस्थामें अधिकसे-अधिक बुरा यह होता कि अब जिस कठिनाईका सामना बहुतोंको करना पड़ेगा उसका सामना केवल थोड़ेसे व्यक्तियोंको करना पड़ता। परन्तु यह तो वही पुरानी कहानी है: "जिसके पास है, उसीको दिया जायेगा, और उसके पास और बहुतायत हो जायेगी; परन्तु जिसके पास नहीं है उससे वह भी ले लिया जायेगा जो उसके पास है।"

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–१२–१९०५

१६३. सर आर्थर लाली मद्रासके गवर्नरके रूपमें

हम सर आर्थर लालीको, उनके मद्रासका गवर्नर नियुक्त होनेपर बधाई देते हैं। परमश्रेष्ठ इस सम्मानके सर्वथा अधिकारी हैं। सर आर्थर सदा दयालु और शिष्ट व्यक्ति हैं, और जिन लोगोंका हिताहित उनके सुपुर्द किया जाता है उनकी भलाईका सदा खयाल रखते हैं। भारतीयोंके विषयमें उनके विचार विचित्र हैं; और उन्होंने इस प्रश्नपर विचार करते समय जो गलतियाँ[1] की है, उनकी हमें अक्सर आलोचना करनी पड़ती है। परन्तु हमारा सदा यह विश्वास रहा है कि उनके विचार ईमानदारीसे वैसे थे। फिर सर आर्थरका विश्वास था — यद्यपि हमारा खयाल है कि वह गलत था — कि वे ट्रान्सवालवासी यूरोपीयोंकी सेवा भारतीय-विरोधी नीतिपर चलकर अधिक कर सकेंगे। उनके ऐसे विचार रखनेका कारण यह था कि उनके हृदयमें ट्रान्सवालवासी यूरोपीयोंकी सेवा करनेकी इच्छा बहुत तीव्र थी। उनकी यही इच्छा मद्रासमें उनके बलका कारण हो सकती है; क्योंकि अब उनकी दयालुता, शिष्टता, सहानुभूति और चिन्ता उन करोड़ों भारतीयोंके प्रति परिवर्तित हो जायेगी जिनके वे अगले पाँच वर्षोंके लिए भाग्य-विधाता बने हैं। सर आर्थर लाली लॉर्ड ऐम्टहिल द्वारा रिक्त किये गये स्थानको ग्रहण कर रहे हैं। वे मद्रासकी जनतामें लोकप्रिय हो चुके थे। हमें आशा है कि सर आर्थर उत्तराधिकारमें प्राप्त उन परम्पराओंको जारी रखेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–१२–१९०५

१६४. भारतीय स्वयं-सैनिक

हमें यह देखकर प्रसन्नता हुई कि भारतीयोंको स्वयं-सैनिक[2] बनानेके विषयमें हमने जो टिप्पणी लिखी थी उसका 'नेटाल विटनेस' ने उत्साहके साथ समर्थन किया है और उसमें इस विषयपर कुछ पत्र भी प्रकाशित हुए हैं। हमें लगता है कि अब इस मामलेको समाचार-पत्रोंने अपना लिया है और इसको तबतक समाप्त नहीं होने दिया जायेगा जबतक सरकार अपनी नीतिके बारेमें अपनी सम्मति नहीं प्रगट कर देगी। १८७५ का कानून २५ विशेष रूपसे इसीलिये बनाया गया था कि "प्रवासी भारतीयोंका एक पैदल स्वयं-सैनिक दल जोड़कर उपनिवेशके स्वयं-सैनिक दलका बल अधिकतम बढ़ा दिया जाये।" इस कानूनके अनुसार गवर्नरको यह अधिकार प्राप्त है कि "जो प्रवासी भारतीय स्वेच्छासे स्वयं-सैनिक दलमें भरती होना चाहें, उन्हें वे उनके मालिककी अनुमतिसे भरती कर लें।" उन दिनों उस दलकी शक्ति एक हजार तीन सौ जवानों तक सीमित रखी गई थी। खेतों या बागानका कोई भी मालिक ऐसी सेना संगठित कर सकता था और गवर्नरकी अनुमतिसे उसका कप्तान नियुक्त हो सकता था। प्रत्येक कुशल स्वयंसेवकके लिए बीस शिलिंग प्रति व्यक्तिके हिसाबसे अनुदान नियत किया गया था,

१. देखिए "कुछ और बातें: सर आर्थरलालीके खरीतेके विषयमें", खण्ड ४, पृष्ठ २८६ तथा "सर आर्थर लाली और ब्रिटिश भारतीय", पृष्ठ ४५६–७।

२. देखिए "भारतीय स्वयंसेवक-दल", पृष्ठ १४०।

और ऐसे किसी भी स्वयंसेवकको

> कुशल नहीं माना जायगा, जो प्रतिवर्ष बारह दिन तक प्रतिदिन चार घंटेके हिसाबसे अथवा चौबीस दिन तक प्रतिदिन दो घंटेके हिसाबसे अथवा अड़तालीस दिन तक प्रतिदिन एक घंटेके हिसाबसे कवायद न कर चुका हो; और एक घंटेसे कमकी किसी भी कवायदकी गिनती नहीं की जायेगी।

प्रवासी भारतीयोंके स्वयं-सैनिकदलका जो सदस्य वास्तविक सैनिक-सेवा करते हुए घायल होगा अथवा अन्य प्रकारसे गम्भीर चोट खा जायेगा उसे मुआवजा देनेका, और जो स्वयंसेवक मैदानमें लड़ते हुए अथवा लड़ाईमें लगे हुए घावोंके कारण मर जायेगा उसके नेटालमें पीछे छूटे हुए बाल-बच्चोंको पेंशन देनेका विधान भी किया गया था। इस प्रकार, यदि सरकार इच्छा-भर करे कि प्रवासी भारतीय उपनिवेशकी प्रतिरक्षामें भाग लें, जिसके लिए कि वे अबसे पहले अपनी तत्परता प्रकट कर चुके हैं, तो उसके लिए कानूनकी व्यवस्था पहलेसे विद्यमान है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–१२–१९०५

१६५. डर्बन निगमके भारतीय कर्मचारी

हमने सुना है कि नगर-निगमके भारतीय कर्मचारियोंका वेतन प्रतिमास दो शिलिंगके हिसाबसे घटा दिया गया है। यदि यह खबर सही हो तो बहुत खेदजनक है। ऐसा क्यों होता है, यह समझमें नहीं आता। इसके अतिरिक्त यह भी सुना है कि गोरोंका वेतन उतना ही रखा गया है। अधिक निश्चित जानकारी मिलनेपर इस सम्बन्धमें हम विशेष लिखेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–१२–१९०५

१६६. हाल्का सुधार

काल कोठरी (ब्लैक होल) तो एक कलकत्तेकी[1] ही कही जाती है। लेकिन अब एक काल कोठरी स्टैंजरमें[2] बनी है। वह कलकत्तेकी काल कोठरीको भी मात देने लायक है। सरकारी जेलमें केवल ४० कैदियोंके रहने लायक जगह है। वहाँ पिछले सप्ताह २०० कैदी बन्द कर दिये गये थे। इसका असर इतना बुरा हुआ कि दुर्गंधके मारे जेलमें घुसना भी मुश्किल हो गया था। कैदी बड़े बेचैन थे। क्या यह सुधार है?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–१२–१९०५

१. लगभग २० फुट लम्बी, २० फुट चौड़ी एक बन्द जगह जहाँ, कहा जाता है, सिराजुद्दौलाने १७५६ में १४६ अंग्रेजोंको रात भर बन्द रखा था, जिनमें से १२३ की मृत्यु हो गई। अब ऐसा माना जाता है कि यह ईस्ट इंडिया कम्पनीके किसी अधिकारीके कल्पनाशील मस्तिष्ककी उपज मात्र थी।

२. डर्बनसे ४५ मील उत्तर-पूर्व बसा हुआ एक शहर।

१६७. पीली चमड़ीपर हमला

न्यूजीलैंडका एक गोरा चीनियोंसे इतना चिढ़ गया है कि उसने एक चीनीको दिन-दहाड़े बन्दूकसे मार डाला; फिर वह खुद ही पुलिस थानेमें जाकर गिरफ्तार हो गया। उसपर मुकदमा चलाया गया। अदालती पंचोंने उसको पागल समझकर मृत्यु-दण्ड न देनेकी राय दी। परन्तु इसपर वह बोल उठा कि मैंने खून पागलपनमें नहीं किया है। उसकी मान्यता यह है कि चीनियोंसे गोरोंको बहुत नुकसान पहुँचता है। इसलिए एक उदाहरण प्रस्तुत करनेके इरादेसे उसने खून किया है और वह स्वयं फाँसीपर चढ़नेके लिए तैयार है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–१२–१९०५

१६८. नेटाल प्रवासी-अधिनियम

'सोमाली' जहाजके यात्रियोंको जो तकलीफें उठानी पड़ी हैं उनके बारेमें श्री हैरी स्मिथने हमें लिखा है कि हमने जो शिकायतें की है वे सही हैं। लेकिन जो तकलीफें यात्रियोंको भुगतनी पड़ीं, उसमें अपना दोष स्वीकार करनेके बदले वे जहाज-मालिकोंको दोषी ठहराते हैं और लिखते हैं कि कुछ यात्री जानबूझकर अपने लिए तकलीफें बुलाते हैं। हम इन सब बातोंका ब्योरेवार जवाब दे चुके हैं। वह अंग्रेजी विभागमें छप भी चुका है[1]। श्री स्मिथ यह कहनेमें भूल करते हैं, क्योंकि वे प्रवासी-अधिनियमके अमलसे उत्पन्न कष्टोंका उत्तरदायित्व दूसरोंपर नहीं डाल सकते। जिन सवारियोंको जहाजसे उतरनेकी अनुमति न दी गई हो उनको तकलीफ न हो, इसका प्रबन्ध करना श्री स्मिथका कर्त्तव्य है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–१२–१९०५

१६९. वन्देमातरम् : बंगालका शौर्यमय गीत

पश्चिमके प्रत्येक राष्ट्रका एक अपना राष्ट्रगीत है। यह गीत अच्छे अवसरोंपर गाया जाता है। अंग्रेजीमें "गॉड सेव द किंग" गीत ही प्रसिद्ध है। उसको गाते समय अंग्रेजोंमें शौर्य जगता है। जर्मनीका राष्ट्रगीत भी प्रख्यात है। फ्रान्सका "मारसले" गीत इतने ऊँचे दर्जेका है कि वह जब गाया जाता है तब फ्रांसीसी लोग उन्मत्त हो जाते है। इस प्रकारके अनुभवोंसे बंगाली कवि बंकिमचन्द्रके मनमें बंगाली लोगोंके लिए एक गीत बनानेका विचार आया। उन्होंने "वन्देमातरम्" नामका गीत रचा है जो इस समय सारे बंगालमें फैला हुआ है। बंगालमें स्वदेशी मालके व्यवहार-सम्बन्धी आन्दोलनके सिलसिलेमें विराट सभाएँ की गई हैं। उनमें लाखों लोग एकत्रित हुए है और सभीने बंकिमचन्द्रका गीत गाया है। कहा जाता है कि यह गीत इतना लोकप्रिय हो गया है कि राष्ट्रगीत बन गया है। अन्य राष्ट्रोंके गीतोंसे यह मधुर है और इसमें

१. देखिए "श्री हैरी स्मिथ और भारतीय", पृष्ठ १४७–८।

विचार उत्तम है। दूसरे राष्ट्रोंके गीतोंमें अन्य राष्ट्रोंके बारेमें खराब विचार होते हैं। इस गीतमें ऐसी कोई बात नहीं है। इस गीतका मुख्य हेतु सिर्फ स्वदेशाभिमान पैदा करना है। इसमें भारतको माताका रूप देकर उसका स्तवन किया गया है। जिस प्रकार हम अपनी माँमें सभी गुणोंका भाव मानते हैं उसी प्रकार कविने भारत मातामें सभी गुण माने हैं। जिस प्रकार हम माँको श्रद्धापूर्वक पूजते हैं उसी प्रकार इस गीतमें भारत माताकी प्रार्थना की गई है। इसमें अधिकतर शब्द संस्कृतके हैं, किन्तु सरल हैं। भाषा बंगला है; परन्तु वह भी सरल ही रखी गई है। इसलिए इस गीतको सभी समझ सकते हैं। यह गीत इतने उच्च कोटिका है कि हम उसके शब्दोंको ज्यों-का-त्यों गुजरातीमें दे रहे हैं और साथ ही हिन्दी विभागमें भी।

[गुजरातीसे]

वन्दे मातरम्
सुजलां, सुफलां, मलयज-शीतलां,
शस्यश्यामलां मातरम् ——वन्दे मातरम् १
शुभ्रज्योत्स्नापुलकितयामिनीं
फुल्लकुसुमितद्रुमदलशोभिनीं
सुहासिनीं, सुमधुरभाषिणीं
सुखदां, वरदां मातरम् ——वन्दे मातरम् २
सप्तकोटि[1]कंठकलकलनिनादकराले
द्विसप्तकोटि[2]भुजैर्धृतखरकरवाले
के बोले मा तुमि अबले?
बहुबलधारिणीं नमामि तारिणीं
रिपुदल-वारिणीं मातरम् ——वन्दे मातरम् ३
तुमि विद्या, तुमि धर्म, तुमि हृदि, तुमि मर्म
त्वं हि प्राणाः शरीरे!
बाहुते तुमि मा शक्ति! हृदये तुमि मा भक्ति!
तोमारइ प्रतिमा गड़ि मन्दिरे मन्दिरे ——वन्दे मातरम् ४
त्वं हि दुर्गा दशप्रहरणधारिणी
कमला कमलदलविहारिणी
वाणी विद्यादायिनी, नमामि त्वाम्!
नमामि कमलां, अमलां, अतुलां,
सुजलां, सुफलां मातरम् ——वन्दे मातरम् ५
श्यामलां, सरलां, सुस्मितां, भूषितां,
धरणीं, भरणीं मातरम्
वन्दे मातरम्

[हिन्दी विभागसे उद्धृत]

इंडियन ओपिनियन, २–१२–१९०५

१–२. ये संख्याएँ तत्कालीन बंगालकी जनसंख्याको दृष्टिमें रखकर लिखी गई थीं। बादमें जब यह गीत सारे राष्ट्रने अपना लिया तब सम्पूर्ण भारतकी जनसंख्याको उद्दिष्टकर इनके स्थानपर क्रमशः 'त्रिंशत्कोटि' तथा 'द्वित्रिंशत्कोटि' संख्याएँ दे दी गईं।

१७०. लॉर्ड सेल्बोर्न और ब्रिटिश भारतीय

ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय संघकी ओरसे गत तारीख २९, बुधवारको एक शिष्टमण्डल लॉर्ड सेल्बोर्नसे मिला था। उस भेंटका विवरण[1] हम अन्यत्र प्रकाशित कर रहे हैं।

ब्रिटिश भारतीय संघने लॉर्ड सेल्बोर्नके सामने विस्तारसे परिस्थिति रखकर अच्छा किया है। ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी ओरसे लॉर्ड सेल्बोर्नके सामने जो बातें पेश की गई हैं, वे हमें बहुत उचित और नरम लगी हैं। परमश्रेष्ठको भी वे ऐसी ही प्रतीत हुई होंगी। वास्तवमें परम-श्रेष्ठने इस वक्तव्यकी इस "अत्यधिक तर्कसंगति" को स्वीकार किया कि जो प्रतिबन्ध हर दृष्टिसे अनिवार्य हों, केवल वही प्रभावकारी हो सकते हैं। यदि इस दृष्टिसे जाँच की जाये तो शिष्टमण्डलने परमश्रेष्ठके समक्ष जो निवेदन किया है, उसमें मुख्य रूपसे दो बातें सामने आती हैं। भारतीय इस बातको मानते हैं कि ट्रान्सवालमें उनके विरुद्ध पूर्वग्रह हैं; और वे यह भी मानते हैं कि इसका कारण भारतीय व्यापारियों द्वारा अनुचित व्यापारिक स्पर्धा और देशमें भारतीयोंके अनुचित प्रवेशका भय है (जहाँतक प्रस्तुत विषयका सम्बन्ध है, यह देखना आवश्यक नहीं है कि यह भय उचित या अनुचित है)। भारतीय इन दोनों आपत्तियोंका निराकरण जिस ढंगसे करना चाहते हैं, वह ढंग उन सब लोगों द्वारा प्रशंसित होगा जिन्होंने शक्तिशाली पूर्वग्रहके कारण अपनी न्यायदृष्टि खो नहीं दी है। यदि शैक्षणिक कसौटीके लिए भारतीय भाषाओंके पक्षमें व्यवस्था करके केप या नेटालके आधारपर सर्वसाधारण ढंगका प्रवासी-प्रतिबन्धक कानून बनाया जाये तो उससे सब उचित जरूरतें पूरी हो जाना सम्भव है। साधारणतया आत्मत्याग जैसी भावनाकी आशा नही की जा सकती। पर ब्रिटिश भारतीय संघ तो इससे भी आगे गया है और उसने सुझाया है कि सभी नये व्यापारिक अनुमतिपत्रोंपर उपनिवेशके सर्वोच्च न्यायालयमें सुनवाईके अधिकारके साथ स्थानीय निकायों और नगरपरिषदोंका नियन्त्रण स्वीकार किया जायेगा। यह ट्रान्सवालके भारतीय-विरोधी आन्दोलनकारियोंके सामने एक स्वीकृति योग्य शान्ति-प्रस्ताव है। यही लोग भारतीय अनुमतिपत्रोंके विरुद्ध चिल्लाते हैं और यही वे लोग हैं जो नगरपालिकाओंके प्रतिनिधि चुनते हैं अथवा स्वयं इस प्रकारके प्रतिनिधि चुने जाते हैं। भारतीय व्यापारियोंके समाजको इनकी ईमानदारी और न्याय-बुद्धिपर इतना भरोसा है कि वे अपना भविष्य उनके हाथोंमें सौंपते हुए हिचकते नहीं हैं। इससे अधिक करनेकी आशा उससे नहीं की जा सकती; और यदि कुछ अधिक किया जाता है और ऐसा मित्रतापूर्ण हाथ बढ़ानेके बावजूद वर्गभेदपर आधारित कानून जान-बूझ कर बनाया जाता है, तो यह सारी-की-सारी "तर्कसंगति" व्यर्थ चली जायेगी और, जैसा कि शिष्टमण्डलने कहा है, उस स्वतंत्रताका अन्त हो जायेगा जिसे ब्रिटिश झंडेके नीचे रहते हुए भारतीय अपनी अमूल्य विरासत समझने लगे हैं। शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अमलका ढंग जानकर बहुतोंको बड़ा दुःख और आश्चर्य होगा। लॉर्ड सेल्बोर्नका ध्यान उन बातोंकी ओर आकर्षित किया गया था और यद्यपि वे उन बातोंपर चुप रहे, हमारा खयाल है कि उन्होंने अवश्य ही उनमें से कुछको तीव्र असहमतिकी दृष्टिसे देखा होगा। १६ सालसे कम उम्रके बच्चोंसे ऐसी आशा रखना कि यदि उनके माता-पिता ट्रान्सवालके निवासी न हों तो उन्हें अपने साथ अनुमतिपत्र रखने चाहिए, अन्यथा उन्हें वापस भेज दिया जायेगा; और भारतीय स्त्रियोंसे भी पंजीकरणके प्रमाण-पत्र निकलवानेकी माँग करना — ये बड़ी ही शर्मनाक बातें हैं। इस तरहके प्रतिबन्धोंसे रूसी

१. देखिए "शिष्टमण्डल : लॉर्ड सेल्बोर्नकी सेवामें", पृष्ठ १५०-८।

तरीकोंकी तेज गन्ध आती है। हम आशा करते हैं कि साम्राज्यके उज्ज्वल नाम और यशको ध्यानमें रखते हुए लॉर्ड सेल्बोर्न अपने वचनके अनुसार मामलेकी छानबीन करेंगे और भारतीयोंको सन्तोष देंगे, जो उन्हें अधिकार और न्यायकी दृष्टिसे मिलना चाहिए; क्योंकि लॉर्ड सेल्बोर्न साम्राज्यके उज्ज्वल नाम और यशके योग्य संरक्षक हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९–१२–१९०५

१७१. उद्धरण : दादाभाई नौरोजीके नाम पत्रसे[1]

[जोहानिसबर्ग]
दिसम्बर ११, १९०५

ब्रिटिश भारतीय संघकी ओरसे लॉर्ड सेल्बोर्नसे[2] जो शिष्टमण्डल मिला था, उसका पूरा विवरण इस सप्ताहके 'इंडियन ओपिनियन' में आयेगा।

इस भेंटमें जो प्रश्न उठाये गये और जिनपर विचार हुआ वे मेरी विनम्र रायमें बहुत महत्त्वपूर्ण हैं और इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण सर आर्थर लाली द्वारा प्रतिपादित वर्ग-विधानके सिद्धान्तका प्रश्न और ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा उसका विरोध है। सर आर्थर लालीके सुझावोंका मंशा है, यूरोपीय विद्वेषसे समझौता कर लेना। ब्रिटिश भारतीय संघका भी यही प्रस्ताव है। यदि कोई बात है, तो ब्रिटिश भारतीय संघका प्रस्ताव सर आर्थर लालीके सुझावकी अपेक्षा अधिक पूर्णताके साथ यूरोपीय दृष्टिकोणको तुष्ट करता है। यह समझना कठिन है कि उन्होंने वर्गोंके बीच भेदभावपर इतना अधिक जोर क्यों दिया है। परन्तु यदि वह सिद्धान्त मान लिया जाये तो दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीयोंपर लगाये जानेवाले नियन्त्रणोंका कोई अन्त नहीं रहेगा। इसलिए यह सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण मुद्दा है। ब्रिटिश भारतीय संघने जिन मामलोंपर जोर दिया, उनपर लॉर्ड सेल्बोर्नने खुलकर विचार नहीं किया, इससे प्रकट होता है कि श्री लिटिलटनने सर आर्थरके सुझावोंको अभीतक अंगीकार नहीं किया है।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया ऑफिस : ज्यूडीशियल और पब्लिक रेकर्ड्स ४२८९/१९०६

१. इसे दादाभाई नौरोजीने भारत-मन्त्रीके नाम अपने जनवरी १, १९०६के पत्रमें उद्धृत किया था।
२. देखिए "शिष्टमण्डल : लॉर्ड सेल्बोर्नकी सेवामें", पृष्ठ १५०–८।

१७२. केपका प्रवासी-अधिनियम

केपके प्रवासी-अधिनियमके बारेमें हम दूसरे स्तम्भमें एक बहुत महत्त्वपूर्ण परीक्षात्मक मुकदमा उद्धृत कर रहे हैं। केपके ब्रिटिश भारतीयोंको, इस बारेमें बहुत सावधान रहना होगा कि यह अधिनियम कैसे लागू किया जाता है। नरोत्तम लालू नामका एक व्यक्ति, जो नौ वर्षोंसे नेटालमें रह रहा है, केपमें प्रवेश करनेसे इस आधारपर रोक दिया गया कि वह दक्षिण आफ्रिकाका अधिवासी नहीं है। यद्यपि उसके पास नेटालका प्रमाणपत्र था, उसका पूर्व अधिवासी होनेका दावा खारिज कर दिया गया। इसका कारण यह बताया गया कि उसके स्त्री-बच्चे उसके साथ नहीं थे, और न दक्षिण आफ्रिकामें ही थे। केपके प्रशासकोंने अपने अधिकारियोंको आदेश दिया है कि जबतक प्रार्थी यह न सिद्ध करें कि दक्षिण आफ्रिकामें उनकी अचल सम्पत्ति है अथवा उनके स्त्री-बच्चे दक्षिण आफ्रिकामें हैं, तबतक उनके दावे खारिज किये जायें। न्यायमूर्ति श्री मासडॉर्पने एक अच्छा-खासा निर्णय दिया है। उन्होंने कहा है कि दक्षिण आफ्रिकामें स्त्री और बच्चोंकी उपस्थितिकी शर्त, यद्यपि यह अधिवासी होनेके पक्षमें एक बहुत बड़ा तथ्य है, पूर्णतया आवश्यक नहीं है। विद्वान न्यायाधीशने यह भी निर्धारित किया है कि नेटालका अधिवासी होनेका प्रमाणपत्र पूर्व अधिवासी होनेका सबूत नहीं है; क्योंकि वह किसी न्यायाधीश या न्याय-सम्बन्धी अधिकारीके तय करनेका प्रश्न है। इस निर्णयका विशुद्ध परिणाम यह होगा कि केवल वे भारतीय, जो दक्षिण आफ्रिकामें अपना दीर्घकालीन निवास और वहाँ आगे भी बने रहनेका अपना इरादा सिद्ध कर सकेंगे, उन्हींके अधिवासी होनेके दावे माने जायेंगे। यहाँ तक यह संतोषजनक है। परन्तु, जैसा कि खयाल किया गया था, और वह बहुत उचित भी था, उसके विपरीत वे नेटालके अधिवासी होनेका प्रमाण दिखानेपर बिना किसी परेशानीके केपमें प्रवेश करनेमें समर्थ नहीं होंगे। अब, केपका कानून दक्षिण आफ्रिकाके किसी भी भागके अधिवासको मान्यता देता है। और इस कानूनके सही अमलके हकमें यह बहुत जरूरी है कि नेटाल सरकार द्वारा प्रदत्त प्रलेख केपमें भी स्वीकार किये जायें; नहीं तो अनन्त उलझनें और परेशानियाँ उठ खड़ी होंगी। जैसा कि प्रार्थीके वकीलने कहा है, अधिवाससे सम्बन्ध रखनेवाला कानून नेटालमें लगभग वैसा ही है जैसा कि केपमें है। इसलिए कोई कारण नहीं है कि अधिवासके जो प्रमाणपत्र, जैसा कि सब लोग जानते हैं, बड़ी जाँच-पड़तालके बाद नेटालमें जारी किये जाते हैं, वे शुभाशा अंतरीपके उपनिवेशमें स्वीकार न किये जायें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-१२-१९०५

१७३. मध्य दक्षिण आफ्रिकी रेल प्रणाली और यात्री

ट्रान्सवाल सरकारके इस महीनेकी ८ तारीखके 'गजट' में, मध्य दक्षिण आफ्रिकी रेल प्रणाली (सेंट्रल साउथ आफ्रिकन रेलवे) में यात्रियोके यातायातको नियन्त्रित करनेके लिए एक उपनियम प्रकाशित हुआ है। यह उपनियम लॉर्ड सेल्बोर्नकी उस जाँचका परिणाम है जो कि उन्होंने 'रैंड पायोनियर्स'[1] और, कुछ महीने हुए, रंगदार लोगोंके एक शिष्टमण्डलकी शिकायतपर की थी। यह उपनियम शुद्ध अवैयक्तिक है और जाहिरा तौरपर सर्वथा निर्दोष प्रतीत होता है। यह कहता है:

> **यात्रियोंको चाहिए कि वे, किस डिब्बेमें यात्रा करें या किस जगहपर बैठें, इस बारेमें स्टेशन मास्टर, गार्ड या अन्य सरकारी अधिकारियों द्वारा दी गई हिदायतोंको मानें और यदि ऐसा कोई अधिकारी किसी व्यक्तिको किसी डिब्बे या स्थानको रिक्त करनेके लिए कहे तो उसे वहाँसे चला जाना चाहिए। यदि परिस्थितिवश किसी यात्रीको उससे निचले दर्जेके डिब्बेमें यात्रा करनी पड़ जाये, जिसका कि उसके पास टिकट हो, तो यातायात-प्रबन्धकसे प्रार्थना करनेपर किरायेमें जो अन्तर होगा वह उसे रेलवे विभाग द्वारा वापस कर दिया जायेगा।**

इस उपनियमका पालन करनेसे इनकार करनेपर चालीस शिलिंग तक जुर्माने और सात दिन तक कैदकी सजा दी जा सकती है। रेल प्रणाली अधिकारियोंको ये सब अधिकार सदासे प्राप्त थे, परन्तु उपनियम वास्तविकतापर जोर देता है। प्रतीत होता है कि इस उपनियमके व्यावहारिक परिणामस्वरूप रंगदार यात्रियोके पास जिस दर्जेके टिकट होंगे उन्हें उससे निचले दर्जेके डिब्बेमें यात्रा करनेको बाध्य होना पड़ सकता है। इस नियमके पालनका परिणाम किसी दुष्टताके रूपमें प्रकट होगा या नहीं, यह बहुत कुछ उन लोगोंपर निर्भर करेगा जिन्हें यात्राओंका नियन्त्रण करनेका अधिकार सौंपा जायेगा; और यदि असुविधा और दुर्व्यवहारको टालना है तो बहुत बड़ी चतुराईसे काम लेना पड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-१२-१९०५

१. ट्रान्सवालमें बसे हुए अनुदार डच लोग।

१७४. लन्दन भारतीय समाज और प्रोफेसर गोखले

प्रोफेसर गोखलेने कुछ ही समयमें इंग्लैंडको हिला दिया है। उनके और भारतके पितामह दादाभाई नौरोजीके लिए लन्दन भारतीय समाज (लंदन इंडियन सोसायटी) ने एक सभा की थी[1]। उस समय प्रोफेसर गोखलेने जो भाषण किया था उसका सारांश हम नीचे दे रहे है, क्योंकि वह भाषण बड़ा ही जानने योग्य और विचार करने योग्य है। उसका मुख्य तात्पर्य यह है कि भारतमें शिक्षाका प्रचार किया जाये। उसी दौरानमें हम अंग्रेजीमें लेख[2] लिख चुके है। हम मानते है कि [शिक्षाके बिना दक्षिण आफ्रिकामें भी हम लोग सुखी होनेवाले नही है। इस युगमें शिक्षा ही सबसे बडा साधन है।] प्रोफेसर गोखलेने स्वयं अपने २० वर्ष फर्ग्युसन कॉलेजको अवैतनिक रूपसे दिये हैं; और इस समय वे जो देश-सेवा करते हैं, वह कंगाली भुगत कर ही। शाही विधान-परिषदके सदस्यकी हैसियतसे उनकी मासिक आय[3] १००० रुपये है। उसे भी वे अपने लिए खर्च नही करते, बल्कि देश-हितमें लगा देते है। अपने भाषणमें वे कहते है:

'२० वर्ष पूर्व जब मैंने विश्वविद्यालय छोड़ा और देशकी सेवा शुरू की तब राष्ट्रीय कांग्रेसका प्रथम अधिवेशन हुआ था। उस समय आप (श्री बनर्जी) उसके प्रथम अध्यक्ष थे। तबसे लेकर आज तक आप देश-सेवा करते है और आज भी अस्वस्थ होते हुए यहाँ उपस्थित हैं। आपकी इस सेवाको आपका देश कभी भूल नहीं सकता। मैं आज अधिक कहना नहीं चाहता। श्री बनर्जी और श्री दादाभाई भारतकी सेवा करते-करते वृद्ध हुए है। उनके समक्ष मैं क्या बोलूं? फिर भी दादाभाईकी जीवनीसे हमें क्या सीखना है, इस विषयपर बोले बिना मुझसे नहीं रहा जाता। इन्होंने हमसे जो शब्द कहे हैं वे सब तपे हुए हैं। उन्होंने स्वयं अपने अनुभवसे वे शब्द कहे हैं। इस प्रकार बोलनेका अधिकार केवल उनको ही है। आजके जमानेके हम लोगोंको इस तरह बोलनेका हक नही है।

हमारी हालत कैसी है यह आप सब जानते हैं। मैं तो यह भी कहता हू कि वह इससे भी ज्यादा खराब होनेवाली है। हमें अपने श्रमपर भरोसा रखना है। हम अपने देशके लिए जो आशा रखते हैं उसे सफल करना हो तो हमें अपने उत्तरदायित्वका खयाल करना होगा। हमपर मुसीबतें हैं, यह समझ कर बैठे रहनेसे मुसीबतें दूर होनेवाली नहीं हैं। जवानोंको जी-जानसे संघर्षमें कूद पड़ना है। हमपर बादल घिर आयें तो उनसे हमें डरना नही है। ऐसे ही समय खरे मनुष्यकी कसौटी होती है। यदि हम खरे रहेंगे तो परिणाम अच्छा ही होगा। जापान और रूसमें जो घटनायें हो रही है उनसे हमें सबक सीखना है। मेरा विचार है कि ऐसा समय आ गया है कि हमारे जवानोंको अपने देशके लिए सर्वस्वका त्याग करनेकी आवश्यकता है। यदि हम सब स्वार्थमें डूबे रहे और फिर देशकी हालत न सुधरे तो इसमें औरोंको दोष देनेका हमें हक नही है। देशमें सच्ची जरूरत शिक्षाकी है। शिक्षाका अर्थ ककहरा सीखकर बैठ जाना नही है, बल्कि यह

१. शनिवार, नवम्बर ११, १९०५ को श्री डब्ल्यू० सी० बनर्जीकी अध्यक्षतामें।

२. देखिए "भारतमें अनिवार्य शिक्षा", पृष्ठ ९४–५।

३. शाही विधान परिषदके सदस्योंका वेतन उस समय ५,००० रुपये वार्षिक था।

जानना है कि हमारे अधिकार क्या हैं; यह समझना है कि अधिकारोंके साथ हमारे उत्तर-दायित्व और कर्त्तव्य क्या हैं। इस प्रकारकी शिक्षा पाँच-पचीस व्यक्तियोंको मिल जाये, उतना बस नहीं है। उसे करोड़ो लोगोंमें फैलाना है। यह कैसे होगा? उसके लिए हमें तैयार होना होगा। उसके लिए हमें अपना समय देना होगा। सरकार इस प्रकारकी शिक्षा देगी, यह आशा नही रखनी है। ऐसे नौजवानोंकी संख्या दिनोदिन बढनी चाहिए। यह शिक्षा हमें दादाभाईकी जीवनीसे प्राप्त करनी है। तभी हमने उनका सम्मान किया, यह कहा जा सकता है। उनका नम्र स्वभाव, उनकी सादगी, उनका त्याग, उनकी आशा, उनकी दृढता — इन सब गुणोंका बखान करनेमें फायदा नही है, बल्कि उन गुणोका अनुशीलन करना है। हमें देशके लिए बलिदान होनेकी उमंग रखनी चाहिए। अगर इस तरहके जोशीले नौजवान बड़ी संख्यामें तैयार हो जायें तो इस दुनियामे ऐसा कोई नही है जो हमें सता सके। यह होगा तभी हमारे ऊपरसे घटाएँ टलेगी; तभी हम विजय पायेंगे, तभी भारत आगे बढ़ेगा, तभी हमारा दैन्य दूर होगा, और हमारा तेज संसारमें प्रकाशित होगा, और तभी आज हम जिसका स्वप्न देख रहे हैं, कल साकार होगा।'

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६–१२–१९०५

१७५. ट्रान्सवालके अनुमतिपत्र

भारतीयोको अनुमतिपत्र देनेके सम्बन्धमें बडे फेरफार हो रहे हैं। जो अनुमतिपत्र-कार्यालय जोहानिसबर्गमें चल रहा है, उसका कब्जा पूरी तरहसे औपनिवेशिक कार्यालयको देनेका आदेश लॉर्ड सेल्बोर्नने दिया है। जान पड़ता है, यह परिवर्तन ज्यादातर शिष्टमण्डलके[1] प्रयत्नोके कारण हुआ है। अब भारतीयोंकी स्थितिका सुधरना या बिगड़ना इस परिवर्तनके रूपपर निर्भर है। हमारी धारणा है कि वह सुधरेगी, भले फिलहाल थोड़े समयके लिए हमें कुछ परेशानियाँ भोगनी पड़ें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६–१२–१९०५

१. देखिए "शिष्टमण्डल: लॉर्ड सेल्बोर्नकी सेवामें", पृष्ठ १५०–८।

१७६. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
दिसम्बर २१, १९०५

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र और तार दोनों मिले। अगर हेमचन्द निकम्मा हो गया हो, या बर्खास्त कर दिया गया हो,[1] तो गोकुलदाससे काम ले सकते हो। मेरी जोरदार सिफारिश तो यह है कि गोकुलदास तमिल विभागमें चला जाये। अगर वह जाये तो फिर मैं कल्याणदासको भेज सकता हूँ।

यात्राका टिकट बहुत सस्ता है। मैं तुम्हारे अनुमतिपत्रकी कोशिश कर रहा हूँ और तुम्हारी तैयारी पूरी होने तक वह तुम्हें मिल जायेगा। मुझे बहुत खुशी है कि आखिर तुमने आना तय कर लिया है।

डेलागोआ-बेसे होरमसजी ईदुलजीने ३ पौंड ७ शिलिंग और ६ पेन्सका एक ड्राफ्ट भेजा है। वे लिखते हैं कि रसीद उन्हें सीधी प्रेससे मिले। तो तुम उन्हें इस रकमकी रसीद भेज देना। इसमें विज्ञापनका पैसा और चंदा दोनों शामिल हैं। उनकी शिकायत है कि कुछ दिनोंसे उनके पास पत्र नहीं पहुँचता। यह देख लेना।

तुमने लिखा कि तुमने एक टोकरी आड़ू भेजे थे। अभीतक तो वे मुझे नहीं मिले हैं।

वीरजी इस महीनेके अन्त तक चले जायेंगे। उन्हें उनका वेतन, छत (डेक) का किराया और जहाजमें भोजनके लिए कुछ दे देना। मामूली तौरपर क्या दिया जाता है, यह मैं नहीं जानता। तुम उनसे बात कर लेना। परन्तु बहुत दाम-दिरम करनेकी जरूरत नहीं है। इस महीनेके आखिरी दिन यह सब उन्हें मिल जाये।

तुम्हारा शुभचिन्तक,
मो० क० गांधी

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
फीनिक्स

[अंग्रेजीसे]

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४२६७) से।

१. देखिए "पत्र : छगनलाल गांधीको", पृष्ठ ९१–२।

१७७. पत्र : उच्चायुक्तके सचिवको

जोहानिसबर्ग
दिसम्बर २२, १९०५

महोदय,

मैं परमश्रेष्ठका ध्यान उन दो अध्यादेशोंके मसविदोंकी ओर दिलाना चाहता हूँ जो इस मासकी १५ तारीखके ऑरेंज रिवर उपनिवेशके सरकारी 'गज़ट' में प्रकाशित हुए हैं। उनके नाम ये हैं: "परवानोंके कानूनोंमें संशोधन करनेके लिए" और "ऑरेंज रिवर कालोनीकी सीमाके भीतर या बाहर काम या मजदूरी करनेके लिए रंगदार लोगोंकी भरती या नियुक्तिका नियमन और नियन्त्रण करनेके लिए" अध्यादेशोंके मसविदे।

मेरा संघ इन दो अध्यादेशोंके विवरणोंका विस्तारसे जिक्र करना नहीं चाहता है; परन्तु परमश्रेष्ठका ध्यान इस तथ्यकी ओर दिलानेका साहस करता है कि ब्रिटिश भारतीयोंके "रंगदार लोगों" संज्ञाकी व्याख्याके अन्तर्गत आनेके कारण ये दोनों अध्यादेश उनपर भी लागू होते हैं। व्यावहारिक रूपमें इनमेंसे कोई अध्यादेश ब्रिटिश भारतीयोंपर लागू नहीं होगा। इसलिए मेरे संघका खयाल है कि उक्त व्याख्यासे व्यक्त अपमान नितान्त अहेतुक है।

इसलिए यदि परमश्रेष्ठ ब्रिटिश भारतीय संघकी तरफसे हस्तक्षेप करनेकी तथा इस अध्यादेशको आपत्तिजनक परिभाषासे, जो उपनिवेशको कोई लाभ तो पहुँचाती नहीं है, उलटे ब्रिटिश भारतीयोंके लिए बहुत ही सन्तापजनक है, मुक्त करनेकी कृपा करें तो मेरा संघ आभार मानेगा।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ३०-१२-१९०५

१७८. फसल

[फसल तो बेशक बहुत अच्छी है, परन्तु काटनेवाले थोड़े हैं। कार्यकर्ताओंके बिना बहुत-से काम करनेको पड़े हैं, और उनमें से प्रत्येक परमावश्यक है। परन्तु, यदि हमें यह चुनाव करना हो कि इन सबमें सबसे पहले कौन-सा काम करना चाहिये तो भारतीयोंमें शिक्षा-प्रसारका स्थान सर्वप्रथम रहेगा।

अब बड़े दिनकी छुट्टियाँ चल रही हैं। यह वर्ष शीघ्र ही समाप्त हो जायेगा। बहुत-से ब्रिटिश भारतीयोंके लिए, जो इन शब्दोंको पढ़ेंगे, ये दिन गम्भीर आध्यात्मिक चिन्तनके हैं; अथवा होने चाहिए, क्योंकि ईसाइयोंके लिए ये दिन पवित्रताके दिन होते हैं। इसलिए हम उन भारतीय युवकोंके, जो दक्षिण आफ्रिकामें ही जन्मे और पोषित हुए हैं और दक्षिण आफ्रिका ही जिनका घर है, हृदयोंके कोमलतम तारोंको झंकृत करना चाहते हैं। उनमें से जो शिक्षित

हो चुके हैं, वे अपने माता-पिताके, जिनमें से अनेकको स्वयं अक्षरज्ञान तक नहीं है, विशेष ऋणी हैं। अब प्रश्न यह है कि ये शिक्षित युवक इसकी एवजमें अपने उन देश-भाइयोंके लिए क्या करेंगे जिन्हें शिक्षा और संस्कृति और उन सब बातोंकी जरूरत है जिनकी अभिव्यक्ति इन दो शब्दोंसे होती है? हम इस सचाईकी चर्चा पहले भी कर चुके हैं[1] कि भारतीय युवकोंकी शिक्षा बहुत उपेक्षित है। जो थोड़ा-बहुत किया जा रहा है, वह ईसाई पादरियों द्वारा। दक्षिण आफ्रिकी सरकारोंकी सहायता उसमें आंशिक ही है। एक भी महत्त्वपूर्ण स्कूल ऐसा उपलब्ध नहीं है जो पूर्णतया भारतीयों द्वारा चलाया जा रहा हो। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें हमें यह आशा करनेका अधिकार तो है ही कि सरकार पहले कदम उठाये, परन्तु हम अपने पैरोंपर खुद भी खड़े हो सकते हैं। यह केवल धनका प्रश्न भी नहीं है। प्रथम आवश्यकता तो है पर्याप्त संख्यामें ऐसे आत्मत्यागी युवकोंकी जो शिक्षाके कामके लिए निष्काम भावसे अपने आपको अर्पित करें। हमें यह शर्त एक अनिवार्य शर्त जान पड़ती है। यूरोपीय जगतमें रोमन कैथलिकोंमें सर्वोत्तम शिक्षक उत्पन्न हुए हैं, क्योंकि ये शिक्षक न तो वेतन लेते हैं और न लेनेकी आशा करते हैं। बर्मी बालकोंको बर्मी विचारोंके अनुसार पूर्ण शिक्षा मिलती है, क्योंकि उनके शिक्षक स्वयंसेवक होते हैं। प्राचीन भारतमें भी इसी नियमका पालन किया जाता था; और आज भी गाँवकी पाठशालाके गुरु गरीब ही होते हैं। प्रोफेसर गोखले और परांजपे[2] पूनाके जिस फर्ग्युसन कॉलेजके ऐसे ज्योतिर्मय नक्षत्र हैं, वह आधुनिक रूपमें उसी पुरानी प्रथाके पुनरुज्जीवनका उदाहरण है। दक्षिण आफ्रिकामें समग्र भारतीय प्रश्न उस प्रथाकी प्रतिष्ठा किये बिना कभी हल नहीं होगा। फलतः दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय युवकोंके सामने उनका कर्त्तव्य सरल और स्पष्ट है। उनके सम्मुख जो कार्य पड़ा है वह एक दिन या कुछ महीनोंका नहीं, बल्कि बरसोंका है; और वह बिना कठिन श्रमके पूरा नहीं किया जा सकता। उन्हे केवल निर्धनतामें ही सन्तुष्ट नहीं रहना है, बल्कि इस पेशेके लिए अपने आपको प्रशिक्षित भी करना है। इस लक्ष्य तक पहुँचनेके लिए कोई अन्य राजमार्ग नहीं है; परन्तु इसी कारणसे निराश हो जानेकी आवश्यकता नहीं। यदि एक भी युवक अपना जीवन भारतीय बालकोंकी उन्नतिके लिए अर्पित करनेका निश्चय कर ले तो वह इस कामको उठा सकता है। यद्यपि सहयोग और धन सदा ही बहुत सहायक रहेंगे, फिर भी शिक्षाका क्षेत्र ऐसा है जिसमें एक अकेला अध्यापक भी कई आदमियोंका काम कर सकता है। इसलिए किसीको भी यह प्रतीक्षा करनेकी आवश्यकता नहीं है कि दूसरे लोग आयेंगे और काम शुरू करेंगे। कोई भी अन्य धन्धा इतना पवित्र नहीं है। संस्कृतके एक श्लोकमें कहा गया है:

> **राजत्व और विद्वत्ता कदापि समान नहीं। राजा तो अपने देशमें ही पूजा जाता है; किन्तु विद्वानकी पूजा सर्वत्र होती है।**[3]

और भी:

> **धन खर्च करनेसे खत्म हो जाता है; किन्तु विद्या दूसरेको देनेसे बढ़ती है।**

१. देखिए "भारतमें अनिवार्य शिक्षा", पृष्ठ ९४–५।

२. ये दोनों "सर्वेंट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी" के सदस्य थे और इन्होंने निर्वाह-खर्च मात्र लेकर कॉलेजकी सेवा की थी। इस सोसाइटीकी स्थापना स्वर्गीय गोखलेने की थी और इसके सदस्य अपना जीवन त्यागपूर्वक नाना प्रकारकी समाज-सेवाओंके लिए अर्पण कर देते थे।

३. विद्वत्वं च नृपत्वं च नैवतुल्ये कदाचन।
स्वदेशे पूज्यते राजा, विद्वान् सर्वत्र पूज्यते॥

भारतीय युवकोसे यह अपील करते हुए हम उनका ध्यान उन ज्ञानोज्ज्वल शब्दोकी ओर आकर्षित करेंगे जो कि प्रोफेसर गोखलेने लदन भारतीय समाज (लन्दन इंडियन सोसाइटी) के सामने, श्री दादाभाई नौरोजीके और अपने सम्मानमें आयोजित एक स्वागत-समारोहके अवसरपर कहे थे। भारतके इन पितामहका उदात्त उदाहरण अपने श्रोताओके सामने स्पष्टतासे प्रस्तुत करनेके पश्चात्, उन्होंने कहा था :

हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारे चारों ओर बड़ी-बड़ी घटनाएँ घटित हो रही हैं, और यदि हम संसारके इतिहासमें अपनी भूमिका पूरी करना चाहते हैं तो हमें अपने आपको उसके योग्य बनाकर दिखलाना होगा। मेरा खयाल है कि अब समय आ गया है जब कि हमारे कुछ युवकोंको अपने देशकी सेवाके लिए सर्वस्व निछावर कर देना चाहिए। हमारे सामने जो कार्य पड़ा है उसकी विशालताका यह जबरदस्त तकाजा है। यदि हम सब अपने-अपने धन्धोंमें लगे रहें, अपना ध्यान मुख्यतः व्यक्तिगत स्वार्थोंमें लगायें और देशको भाग्य-भरोसे छोड़ दें तो काम जिस गतिसे चल रहा है उससे ज्यादा शीघ्रतासे न चलनेपर हमें शिकायत करनेका कोई अधिकार नहीं होगा। जबतक हमारे देशमें शिक्षाका व्यापक प्रसार नहीं होता — और शिक्षासे मेरा मतलब केवल शिक्षाकी प्रारम्भिक बातोंसे नहीं है, बल्कि अपने अधिकारोंके, अपने प्राप्तव्यके, और इन अधिकारोंके साथ जो जिम्मेवारियाँ लगी हैं, उनके ज्ञानसे है — जबतक इस शिक्षाका सर्वसाधारण जनतामें खूब प्रसार नहीं हो जाता, तबतक हमारी आशाएँ अनिश्चित काल तक निरी आशाएँ ही बनी रहेंगी। इसलिए हमारी कठिनाइयोंका एकमात्र हल यह है कि हम ऐसी शिक्षाकी आवश्यकता — परम आवश्यकताको भलीभाँति समझ लें, और हममें से जो इसका प्रसार करनेके योग्य हों वे अपना कर्त्तव्य समझकर आगे बढ़ें और इस कामको अपने कन्धोंपर उठा लें। मेरा खयाल है कि आज इससे अधिक देशभक्तिका काम दूसरा नहीं हो सकता। यही वह जिम्मेवारी है जो हमारे परम श्रद्धेय नेताके वचनोंसे हमपर पड़ी है, और मैं साहसपूर्वक कहता हूँ कि देशको ऐसी आशा रखनेका अधिकार है कि उसके कुछ युवक — वे आरम्भमें भले ही थोड़े हों, परन्तु उनकी संख्या निरन्तर बढ़ती जायेगी — कर्त्तव्यकी इस पुकारको पूरे ध्यानसे सुनेंगे और उसका प्रत्युत्तर देंगे। इतनी बात यदि पूरी हो जाये तो परिस्थिति समय-समयपर कितनी ही अन्धकारपूर्ण क्यों न प्रतीत हो, अन्तमें हमारे प्रयत्न अवश्य सफल होंगे, क्योंकि हमारी संख्या इतनी अधिक है कि यदि हम स्वयं ही न लड़खड़ा जायें तो संसारकी कोई भी शक्ति हमारी प्रगतिको नहीं रोक सकती।

स्मरण रखना चाहिए कि जो सचाई प्रोफेसर गोखलेके इन शब्दोंमें व्यक्त हुई है उसपर वे बीस वर्ष अपने जीवनमें अमल कर चुके है, और इन शब्दोंमें एक भी बात ऐसी नही जो हम दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंपर लागू न होती हो। तो क्या कोई समयकी पुकार सुनकर आगे आयेगा? जो फसल पककर कटनेको तैयार है वह प्रभूत और समृद्ध है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-१२-१९०५

१७९. नेटाल-सरकार रेल-प्रणाली और भारतीय

नेटाल-सरकार रेल-प्रणालीके कुछ स्टेशनोंपर भारतीय यात्रियोंको अनावश्यक असुविधाओंका सामना करना पड़ता है। इस सम्बन्धमें हमारे पास तीन भारतीयोंके हस्ताक्षरसे एक शिकायत आई है। उसे हम इस पत्रके गुजराती-स्तम्भोंमें प्रकाशित कर रहे हैं। पत्र-लेखकोंने लिखा है:

हमें आशा है कि आप हमारी शिकायतोंकी ओर अधिकारियोंका ध्यान खींचेंगे। १३ दिसम्बरको हमारे मित्र श्री वली आरिफ़ चार बजेकी डाक-गाड़ीसे जा रहे थे। हम उन्हें विदा करनेके लिए केन्द्रीय स्टेशनके प्लेटफॉर्मपर जाना चाहते थे, परन्तु वहाँ खड़े पुलिस सिपाहीने हमें वहाँ जानेसे असभ्यतापूर्वक रोक दिया। जब हमने उससे पूछा कि तुम हमें क्यों रोकते हो, उसने कठोरतासे जवाब दिया कि मैं तुम लोगोंको नहीं जाने दूँगा।

पत्र-लेखकोंने ऐसा ही और लिखा है। हम मानते हैं कि ऐसे अवसर हो सकते हैं जब यात्रियोंको विदाई देनेके लिए मित्रोंको असीमित संख्यामें भीतर जाने देना सम्भव न हो, परन्तु हमारा कहना है कि जब कभी लोगोंको प्लेटफॉर्मपर जानेसे रोका जाये, उन्हें समुचित उत्तर पाने और कारण जाननेका अधिकार तो होना ही चाहिए। हमें निश्चय है कि रेल-प्रणालीके प्रबन्धकर्ता भी हमारी यह बात मानेंगे। आशा है कि इस मामलेकी जाँच की जायेगी और हमारे पत्र-लेखकोंने जिस व्यवहारकी शिकायत की है उसकी पुनरावृत्ति न होने दी जायेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३–१२–१९०५

१८०. केपके भारतीय व्यापारी

पिछले सप्ताह हमारे केप-संवाददाताने भारतीय व्यापारियोंके प्रश्नपर लिखा था। हमें अपने पाठकोंको यह बतलानेकी आवश्यकता नहीं कि हमारे विशेष संवाददाताओंके लिए जरूरी नहीं कि वे इस पत्रके विचारों या नीतिके समर्थक ही हों। नियमानुसार हम किसी भी प्रश्नके सब पहलुओंको प्रकट करनेका यत्न करते हैं। यदि हमारे केप-संवाददाताने भारतीय व्यापारियोंके प्रश्नपर विस्तारसे चर्चा न की होती तो हमें इस बातपर जोर देनेकी जरूरत न पड़ती। हमारा विचार है कि छोटे भारतीय व्यापारियोंसे उपनिवेशको लाभ पहुँचा है। इस सम्बन्धमें हम, हालमें सर जेम्स हलेट और कुछ वर्ष पूर्व सर वाल्टर रैग, स्वर्गीय सर हेनरी बिन्स, और अन्य कई सज्जनों द्वारा प्रकट किये हुए विचारोंसे सहमत हैं कि, छोटा भारतीय व्यापारी उसी वर्गके अपने साथी व्यापारीकी अपेक्षा बहुत अच्छा आदमी है, और वह एक बहुत बड़ी आवश्यकताकी पूर्ति करता है। इसलिए उसकी स्वतन्त्रतापर कोई भी पाबन्दी लगाना उसके साथ भारी अन्याय होगा और केपके भारतीयोंको चाहिए कि इस दिशामें जो भी आक्रमण किया जाये, उसका वे डटकर मुकाबला करें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३–१२–१९०५

१८१. हिन्दू-मुसलमानोंके बीच समझौता

श्री हाजी हबीबने इस विषयपर हमें एक पत्र लिखा है। उसे हम अन्यत्र प्रकाशित[1] कर रहे हैं। कराचीके महाजनोंके बारेमें उन्होंने जो-कुछ लिखा है[2] वह यदि सही हो तो हमें खेद है। हम यह भी मानते हैं कि हिन्दुओंकी संख्या बड़ी होनेके कारण उन्हें अधिक नम्रतासे चलना है। श्री हाजी हबीबका कहना है कि अगर हिन्दू-मुसलमानोंके बीच एकता रही होती तो भारतीय कांग्रेस जिन-जिन अधिकारोंको माँगती है वे कभीके प्राप्त हो गये होते। यह हम भी मानते हैं।

इसमें कोई शक नहीं कि ऐसी बातोंमें सब कौमोंके मुखियोंको मिलकर कोई समझौता कर लेना चाहिए। और हमें ऐसे आसार भी नजर आ रहे हैं कि कुछ समयमें ऐसा होकर रहेगा।

फिर भी हम जो-कुछ इससे पहले कह गये हैं उस बातपर तो हमें जोर देना चाहिए। वह बात यह है कि दोनों कौमोंके बीच, चाहे जैसा झगड़ा हो, उसका इन्साफ तीसरेके हाथमें नहीं जाना चाहिए। भाई-भाई आपसमें लड़ मरें, यह बर्दाश्त करना ज्यादा आसान है। लेकिन दोनोंके पास जो कुछ हो वह तीसरा व्यक्ति ले जाये, यह बर्दाश्त नहीं किया जा सकता। हम सबकी भावना इसी तरहकी होनी चाहिए। जैसाकि जनाब रसूलने बताया है,[3] तीसरे आदमीके बीचमें पड़नेसे झगड़नेवालोंमें से किसीको भी फायदा होना सम्भव नहीं है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-१२-१९०५

१८२. ईश्वरकी लीला अद्भुत है[4]

एक रोचक कहानी

बड़े दिनके अवसरपर तमाम यूरोपमें तरह-तरहकी पुस्तिकाएँ प्रकाशित होती हैं। उनमें बहुतसी जानने योग्य बातें होती हैं। इंग्लैंडके प्रख्यात श्री स्टेडने जो पुस्तिका प्रकाशित की है उसमें उन्होंने काउंट टॉल्सटॉयका जीवन-वृतान्त दिया है।[5] हम इस पत्रमें काउंट टॉल्सटॉयका परिचय दे ही चुके हैं। वे यद्यपि लखपती हैं, फिर भी अत्यन्त गरीबीकी हालतमें रहते हैं। संसारमें उन जैसे विद्वान बहुत कम हैं। उन्होंने जो कुछ लिखा है, यह बतानेके लिए कि मनुष्योंका

१. ३०-१२-१९०५ के अंकमें।

२. श्री हाजी हबीबने शिकायत की थी कि हिन्दू व्यापारियोंने मुसलमान व्यापारियोंके लिए गो-रक्षा-निधिमें चन्दा देना अनिवार्य कर दिया है।

३. "मराठा"में प्रकाशित समाचारके अनुसार, श्री ए० रसूलने मुसलमानोंकी एक आम सभाकी अध्यक्षता करते हुए बंगालके हिन्दुओं और मुसलमानोंसे अपील की थी कि वे बंग-भंग और स्वदेशी-आन्दोलन सहित सभी प्रश्नोंपर एक हो जायें।

४. ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस द्वारा प्रकाशित अंग्रेजी अनुवाद — टॉल्स्टॉय शताब्दी स्मारक ग्रन्थ (टॉल्स्टॉय सैंटिनरी एडिशन) — में इस कहानीका शीर्षक "गॉड सीज दि ट्रुथ, बट वेट्स" दिया गया है।

५. देखिए "काउंट टॉल्स्टॉय", पृष्ठ ५९-६०।

जीवन किस प्रकार सुधर सकता है। इस दृष्टिसे उन्होंने छोटी-छोटी कहानियाँ भी लिखी हैं। उनमें से एक अच्छी मानी जानेवाली कहानीका अनुवाद हम नीचे दे रहे हैं। उसका नाम वही है, जो हमने इस लेखके शीर्षकमें दिया है। इस कहानीके सम्बन्धमें हम अपने पाठकोंकी सम्मति चाहते हैं। यदि यह पाठकोंको सरस लगी और इससे फायदा मालूम हुआ तो हम इसी तरहकी और कहानियाँ भी देंगे। कहा जाता है कि इस कहानीकी मुख्य घटनाएँ सच्ची हैं।

[इसके बाद मूल अंग्रेजी कहानीका गुजराती अनुवाद दिया गया है।]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-१२-१९५०

१८३. पर्यवेक्षण

हम प्रतिवर्ष इस समय दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय मामलोंकी स्थितिका पर्यवेक्षण किया करते हैं। यह पत्र निकाला ही इसलिए गया है, और इस स्थितिको सुधारना ही इसका उद्देश्य है।

हम चाहते तो यह थे कि अपने पाठकोंके सामने उत्साहजनक तलपट पेश कर सकते, परन्तु परिस्थितियाँ जैसी है उनमें ऐसा नहीं हो सकता। भारतीयोंके भाग्यमें ही मेहनत करना, दुःख सहना और बाट जोहते रहना बदा है, और हम यह नहीं कह सकते कि गत वर्ष वे अपने कुछ बोझ उतार फेंकनेमें सफल हो गये। नेटाल, ट्रान्सवाल, केप या ऑरेंज रिवर कालोनी, चाहे जिसे देखें, हमें ऐसी किसी बातकी याद नही आ सकती जिसकी गिनती सफलताओंमें की जा सके। हमें जो लेखा पेश करना है, वह नये घाटेको रोकनेका लेखा है। भारतीय समाजकी शक्ति नई दस्तन्दाजीको रोकनेमें ही लगी है।

नेटालमें, मानो भारतीयोंके लिए मानव-जनित कष्ट ही पर्याप्त नहीं थे, स्वयं प्रकृति भी उनके लिए क्रूर सिद्ध हुई है। भारतीयोमें ही सबसे अधिक लोग भयंकर बाढ़के शिकार हुए हैं। इस विपत्तिमें जिन लोगोंकी जानें गई हैं उनकी कुल संख्याका पता तो शायद कभी नहीं लगेगा। परन्तु इससे यह प्रकट हो गया कि भारतीय क्या कर सकते हैं। भारतीय समाजके नेताओंने ही प्रायः सारा सहायता-कार्य हाथमें लिया और कुशलतापूर्वक सम्पन्न किया था।

नागरिकताके मामलोंमें — राजनीतिक स्वतन्त्रता तो नेटालमें भारतीयोंको है ही नहीं — विक्रेता-परवाना अधिनियम पूर्ववत् कष्टका सबसे बड़ा कारण बना हुआ है। हुंडामल[1] और दादा उस्मानके[2] दो मामले इसके प्रमुख उदाहरण हैं। उनसे भली भाँति स्पष्ट हो जाता है कि नेटालमें प्रत्येक भारतीय व्यापारीकी स्थिति कितनी अनिश्चित्त है।

नगरपालिका कानून संग्राहक विधेयक (म्यूनिसिपल लॉज कन्सॉलिडेशन बिल) भारतीयोंको नगरपालिका मताधिकारसे वंचित कर देता है। व्यक्ति-कर कानून लागू तो सबपर होता है, परन्तु उसका सबसे अधिक विपरीत प्रभाव भारतीयोंपर ही पड़ता है। प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमका प्रयोग बहुत कठोरतासे किया जा रहा है, और जैसा कि इस पत्रके स्तम्भोंमें हालमें ही प्रमाणित किया गया है, भारतसे जहाजमें आनेवाले भारतीय यात्रीकी अवस्था भी किसी प्रकार ईर्ष्यायोग्य नहीं है।

१. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ३०१, ३२५ और ३३७।

२. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ १८।

केपम सरकार प्रवासी-अधिनियमकी प्रतिबन्धक धाराओंकी गलत व्याख्या करके भारतीय लोगोको अधिकाधिक जकड़ती जा रही है। "अधिवासी" शब्दकी व्याख्या इस प्रकार की गई है कि पुराने बसे हुए भारतीय व्यापारी तक उस गिनतीमें न आने पायें। प्रसन्नताकी बात इतनी ही है कि सर्वोच्च न्यायालयने रक्षा कर ली है, और अब इन व्यक्तियोके लिए उपनिवेशमे फिर प्रवेश करना या वहाँ बने रहना सम्भव हो गया है।

ट्रान्सवालमें, जहाँ कि मुख्य संघर्ष चल रहा है, स्थिति वैसी ही अनिश्चित है जैसी कि गत वर्ष थी। भारतीयोका जो शिष्टमण्डल लॉर्ड सेल्बोर्नसे मिला था उसे वे कोई निश्चित उत्तर नहीं दे सके हैं। हाँ, उन्होने शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अमलसे उत्पन्न शिकायतोंको दूर करनेका वचन दिया है।

जहाँतक ऑरेंज रिवर कालोनीका सम्बन्ध है, कुछ महीने पूर्व लॉर्ड सेल्बोर्नने ब्रिटिश भारतीय संघके[1] प्रार्थनापत्रका जो उत्तर दिया था उससे प्रकट होता है कि इस उपनिवेशके द्वार भारतीयोके लिए — वे चाहे कोई भी क्यो न हो — अब भी नही खोले जायेंगे।

परन्तु भारतीय जनताके सामाजिक जीवनमे उन्नतिके लक्षण स्पष्ट दिखाई देते हैं। लोगोमें परस्पर अधिक मिलकर काम करने और भारतीय युवकोंको अधिक अच्छी शिक्षा देनेकी उत्सुकता है। श्री बर्नार्ड गैब्रियल प्रथम भारतीय हैं जिन्हे उपनिवेशमें जन्म लेनेपर भी ऊँची शिक्षा मिली है और जो इंग्लैंडसे बैरिस्टर बनकर आये हैं। समाजको अधिकार है कि वह उनसे अच्छे कामकी आशा रखे।

प्रोफेसर परमानन्दका आगमन और यहाँ हुआ उनका स्वागत इस बातके सूचक हैं कि भारतीय समाज चाहता है कि शिक्षित और सुसस्कृत भारतीय उसके बीच ज्यादा आयें। आशा है कि समाजकी यह इच्छा निकट-भविष्यमे ही कार्यान्वित हो जायेगी और समाजकी शिक्षा-सम्बन्धी आवश्यकताएँ स्वय ही पूरी करनेकी दिशामें केन्द्रित प्रयत्न किये जाने लगेंगे।

यह पर्यवेक्षण निराशापूर्ण तो बहुत है, परन्तु इसमें आशाके चिह्नोंका अभाव नही है। अनिवार्य पृथक्करणके सिद्धान्तकी स्थापना करके भारतीय समाजको नीचा दिखानेके प्रयत्न, बार-बार किये जानेपर भी अबतक असफल रहे हैं। समाचारपत्र भारतीय शिकायतोको पहलेसे अधिक मुस्तैदीसे प्रकाशित करने लगे हैं। भारतीयोसे स्वयंसैनिकका काम लिया जानेका प्रश्न पहले उठाया तो हमने था, परन्तु अन्य समाचारपत्रोने भी उसका अच्छा स्वागत किया।

नेटाल जेल-आयोगके सामने गिरमिटिया भारतीयोकी दशाके विषयमें जो बातें प्रकट की गई थी उनका भी नेटाली पत्रो द्वारा कुछ प्रचार हुआ है; और यद्यपि स्वयं ये घटनाएँ असलियतको बहुत कम प्रकट करती है तथापि इतना तो निश्चित रूपसे बतला ही देती है कि समाजको उसी मार्गपर चलना होगा जो उसने संघर्षके आरम्भ होनेपर अपने लिए निर्धारित कर लिया था अर्थात् संघर्षको औचित्यके साथ — जैसा कि लॉर्ड सेल्बोर्नने भी माना है — धैर्यके साथ और फिर भी दृढ़तासे जारी रखना।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-१२-१९०५

१. देखिए "पॉचेफ्स्ट्रूमके भारतीयोंका वक्तव्य", पृष्ठ १०१-३।

१८४. ऑरेंज रिवर कालोनी

हम जिम्मेदार अधिकारियोंका ध्यान उन कुछ अध्यादेशोंके मसविदोंकी ओर, जो ऑरेंज रिवर कालोनीके १५ दिसम्बर १९०५ के सरकारी 'गजट' में प्रकाशित हुए हैं, और कुछ नगर-विनियमोंकी ओर आकृष्ट करना चाहते हैं। प्रथम अध्यादेशका शीर्षक है, "परवानोंके कानूनोंमें संशोधन करनेके लिए"। इसके अनुसार प्रत्येक रंगदार व्यक्तिको एक नियत अवधि तक अपने पास एक परवाना रखना पड़ेगा जो समय-समयपर फिर नया कराया जा सकेगा। एक और अध्यादेश "ऑरेंज रिवर कालोनीकी सीमाके भीतर या बाहर, काम या मजदूरी करनेके लिए रंगदार लोगोंकी भरती या नियुक्तिका नियमन और नियन्त्रण करनेके लिए" है। जिस प्रणालीसे अध्यादेशके निर्माता रंगदार मजदूर उपलब्ध कर सकेंगे वह है मजदूर एजेंटोंका परवाना देना। ये एजेंट "रंगदार मजदूर भरती करने, उन्हें दूसरोंको देने और उनकी तलाश करनेके लिए हरकारे या सन्देशवाहक रख सकेंगे।" उन हरकारोंको भी ५ शिलिंगका परवाना लेना होगा। मजदूर एजेंटोंको जो परवाने दिये जायेंगे उन्हें नियमित करनेवाली धाराओंके अतिरिक्त, इस अध्यादेशमें परवानोंका दुरुपयोग अथवा मजदूर एजेंटों द्वारा गलत इस्तेमाल रोकनेके लिए भी साधारण सावधानियाँ बरती गई है। हमारा खयाल है कि दक्षिण आफ्रिकामें "काफिरोंको काम करनेके लिए राजी करनेको" इस प्रकार मजदूर एजेंट नियत करनेका रिवाज ही पड़ चुका है। कुछ लोग तो इस रिवाजको नरमीसे समझाने-बुझानेका नाम देते हैं, और दूसरे इसे बेगारका सुथरा हुआ रूप बतलाते हैं। जो नीति इतने लम्बे अरसेसे चली आ रही है उसकी आलोचना हम नहीं कर सकते, और वैसा करना हमारे क्षेत्रका विषय भी नहीं है। परन्तु दुर्भाग्यवश, सदा "रंगदार व्यक्ति" शब्दोंका जो मतलब ऑरेंज रिवर कालोनीमें समझा जाता है वह है: "वे रंगदार व्यक्ति जो कानून या रीति-रिवाजके अनुसार रंगदार कहलाते हों, या जिनके साथ ऐसा व्यवहार किया जाता हो, फिर उनकी जाति या राष्ट्रीयता चाहे कुछ भी हो।" इसलिए इन शब्दोंमें एशियाई, मलय और दूसरे लोग भी आ जाते हैं। उपर्युक्त दोनों अध्यादेश, उक्त कारणसे, अत्यन्त आपत्तिजनक हैं। हम समझ नहीं सकते कि इन शब्दोंमें निहित सोचा-समझा अपमान जारी रखकर खीझ क्यों बढ़ाई जाती है। ब्रिटिश भारतीय संघको जवाब देते हुए लॉर्ड सेल्बोर्नने माना है कि ऑरेंज रिवर कालोनीमें बहुत कम एशियाई हैं। इस स्थितिमें यह आपत्तिजनक परिभाषा क्यों कायम रखी जानी चाहिए? यदि व्यवहारमें इसका उपयोग कुछ नहीं है तो इसे जारी रखनेका एकमात्र प्रयोजन ऑरेंज रिवर कॉलोनीके निवासियोंका वह स्वैर आनन्द हो सकता है, जो कि उन्हें एशियाई जातियोंको इस प्रकार अपमानित और पराजित और अपने आपको विजेता माननेमें मिलता है। ये वही महानुभाव हैं जो गणराज्यके जमानेमें भारतीयोंके विषयमें यह कहकर खुश हुआ करते थे कि वे अपनी स्त्रियोंको आत्मारहित समझते है और उन घिनौनी बीमारियोंके लिए बदनाम हैं जिनसे वे पीड़ित है। क्या मूर्खता तथा अज्ञानपूर्ण पूर्वग्रहकी यह आग सुलगाते रहना अधिकारियोंके लिए उचित है?

हमने ऊपर नगर-नियमोंका भी जिक्र किया है। हम देखते है कि डैवेट्सडॉर्प और ब्रैडफोर्ड जैसे सुन्दर नामवाले दोनों नगरोंकी नगरपालिकाओंमें वही पुरानी कहानी दुहराई जा रही है। ये नियम वैसे ही है जैसे हमने बहुधा इन स्तम्भोंमें उद्धृत किये है। इनकी रचना रंगदार लोगोंका, और यहाँतक कि उनके ढोरों, घोड़ों, खच्चरों और भेड़-बकरियोंका भी आवागमन

नियन्त्रित करनेके लिए की गई है। कोई रंगदार व्यक्ति "नगरकी शामिल जमीनपर चारसे अधिक ढोरों, घोड़ो या खच्चरोको और आठसे अधिक भेड़ों या बकरियोको नही रख सकता; और उसे इसके लिए प्रतिमास प्रति बड़ा पशु १ शिलिंग और प्रति भेड़ या बकरी ३ पैनी देने पड़ेगे।" बस्तीका कोई भी रगदार निवासी, टाउन क्लार्कको सूचना दिये बिना, अपने पास किसी अजनबीको नही रख सकता, और न पहले इजाजत लिये बिना अपने यहाँ किसी मनोरंजन या जलसेका आयोजन ही कर सकता है। वह रातको ग्यारह बजेके बाद, "सिवा किसी जरूरी कारणके", बस्तीके अन्दर भी घूम-फिर नही सकता। हमने अपने पाठकोको अन्य नगरोके इसी प्रकारके उपनियमोंकी याद दिलानेके लिए बहुत कुछ कह दिया है। हम एक बार फिर पूछते है कि जहाँतक ब्रिटिश भारतीयोका सम्बन्ध है, क्या बहुसंख्यक जातिकी रक्षाके लिए इन नियमोकी आवश्यकता है?

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-१२-१९०५

१८५. हीडेलबर्गकी जमातमें फूट और मारपीट

कुछ अरसेसे हीडेलबर्गकी जमातमें मसजिदके प्रश्नको लेकर फूट पड़ गई है और दो पक्ष बन गये हैं। जमातका झगड़ा अदालतमें गया और वहाँसे फैसला हो गया, तब भी अभी ऐक्य नही हुआ है।

यह बहुत ही खेदजनक है। [हमारा मत है कि मसजिदके झगड़ेका अदालतमे जाना ही शर्मकी बात है। लेकिन अदालतमे जानेके बाद भी झगड़े जारी रहना और भी शर्मनाक है।] इस सम्बन्धमे दोष किसका है, इसका विचार करने न बैठकर दोनों पक्षोसे हमारा यही कहना है कि इस तरहके झगड़ेसे पूरी कौमको कलंक लगता है। इस देशमें हमपर सबकी आँखें हैं। ऐसी हालतमे अपनी पीठ खोलकर दिखाना, हम मानते है कि, हमारे लिए बहुत नुकसानदेह होगा। हमें आशा है कि अब भी दोनो पक्षोके लोग समझ जायेंगे और आपसमें समझौता कर लेंगे।

बात कितनी गम्भीर है यह बतानेके लिए हम यहाँ २३ तारीखके 'ट्रान्सवाल लीडर' में प्रकाशित विशेष संवाददाताके एक समाचारका अनुवाद दे रहे हैं:

> 'हमारे हीडेलबर्गके संवाददाताने अरबोके[1] गम्भीर मुकदमेके बारेमें एक तार भेजा है। खुशकिस्मतीसे जितना डर था उतना नुकसान नही हुआ। लेकिन झगड़ा बड़ा था। हीडेलबर्ग जैसे शान्त शहरमे दोपहरके समय अरबोके व्यवहारसे शान्ति भंग हुई। अदालतमें मस्जिदके न्यासियोकी बैठक थी। उसमें झगड़ा शुरू हुआ। दोनों पक्षोके बीच तकरार यहाँ तक बढ़ी कि खून-खराबीकी नौबत न आने देनेके लिए पुलिसको बुलानेकी जरूरत पड़ी। इस घटनाकी खबर बस्तीमें फैल गई और बाजारके चौकमें बहुतसे तमाशबीन यह मारधाड़ देखनेके लिए इकट्ठा हो गये। श्री कुटसी और श्री गिसोने झगड़ा मिटानेकी बड़ी कोशिश की, परन्तु शान्ति भग करनेवाले ठडे नही हुए। कुछ देर तक मामला गम्भीर दिखाई दिया। लाठी और पत्थर चल रहे थे। बैठकमें कोलाहल मच गया था। कटु शब्दोके बाद मुक्केबाजी होने लगी और पुलिस न आ पहुँचती तो क्या होता, यह कहा

१. भारतीय मुसलमान व्यापारी।

नही जा सकता। एक अरबका सिर फट गया था। इस समय पुलिसने लोगोंको कमरेसे बाहर निकाला और उत्तेजित अरब पुलिसकी शक्तिके आगे इस तरह तितर-बितर हो गये जैसे हवाके आगे तिनके उड़ जाते हैं। पुलिसके बीच-बचावसे ऐसा मालूम हुआ कि झगड़ा खत्म हो गया, लेकिन बाहर जाते ही दुबारा मारपीट शुरू हो गई और आग बुझानेकी सब कोशिशें बेकार गई। यह झगड़ा क्यों हुआ, इसका केवल अनुमान ही किया जा सकता है। परन्तु यह मामला अवश्य ही बड़ा होगा, क्योंकि हमारा संवाददाता लिखता है कि अभी यह होली ठंडी नही हुई है। टाउन हॉलके पास अब भी पुलिस खड़ी है। इससे कोई डरनेकी बात नही है। झगड़ा सिर्फ अरबोंमें है इसलिए गोरोंके घबरानेका कोई कारण नही है। दोनों पक्षोके लोग कहते है कि वे बाहर मैदानमें लड़ाई करेंगे। कल रात सब-कुछ शान्त था। लेकिन अभी भी झगड़ा नही मिटा है। इसलिए डर है कि उपद्रव और भी होगा।'

इस खबरको पढ़नेके बाद किसे शर्म नहीं आयेगी? हमें यह अनुवाद करते हुए शर्म आ रही है और हम आशा करते है कि हीडेलबर्गके भाई वस्तुस्थितिको समझकर लज्जित होंगे और शान्त हो जायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-१२-१९०५

१८६. वतनियोंमें शिक्षण-कार्य

वतनियोके लिए केप कालोनीमे 'इन्वो' नामका एक अखबार निकलता है। उसके मालिक श्री टेंगो जबावु नामके एक वतनी है। वे अपने भाइयोंके लिए बहुत परिश्रम करते जान पड़ते है। आजकल वतनियोंमें शिक्षाका अधिक प्रसार करनेके सम्बन्धमें चर्चा चल रही है। इसलिए श्री टेंगो जबावु दक्षिण आफ्रिकामें एक विशाल वतनी महाविद्यालयकी स्थापनाके सम्बन्धमें घूम रहे हैं। उसमें उनके दो हेतु है: एक तो महाविद्यालयके लिए चन्दा इकट्ठा करना और दूसरा ऐसी अर्जीपर लोगोंके हस्ताक्षर प्राप्त करना कि महाविद्यालय होना चाहिए और सरकारको उसके लिए मदद देनी चाहिए।

श्री टेंगो जबावुने 'ट्रान्सवाल लीडर'के सम्पादकसे मुलाकात की है। और इस पत्रमें उसका सारा विवरण प्रकाशित किया गया है। वे वतनियोंमें से ५०,००० पौंड एकत्रित करनेकी आशा करते है और अर्जीपर २,००,००० वतनियोंके हस्ताक्षर लेना चाहते हैं।

श्री टेंगो जबावु चाहते हैं कि वतनियोंकी लवडेल-स्थित मौजूदा सरकारी-पाठशाला तथा उसके आसपासकी जमीन खरीदकर उसमें महाविद्यालय बनाया जाये और वहाँ ऊँची शिक्षा दी जाये।

१८८६ से १९०० तक लवडेलसे ८३६ वतनियोंने केप विश्वविद्यालयकी परीक्षा उत्तीर्ण की है। इनमें से १३ लड़के मैट्रिकमें उत्तीर्ण हुए हैं। लवडेलकी पाठशालामें ७६८ आफ्रिकी शिक्षक तैयार हुए हैं। उपर्युक्त अवधिमें आफ्रिकियोंने लवडेलमें शुल्क आदि मिलाकर ६३,७३४ पौंड दिये हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-१२-१९०५

१८७. चीनकी जागृति

जान पड़ता है कि जापानकी जीतके कारण चीनमें जितना हम मानते हैं उससे ज्यादा कोलाहल हो रहा है। वहाँके लोगोंने अपनी सेनाको बहुत अच्छी स्थितिमें रखनेका इरादा किया है। इस समय शाही परिवारके सात विद्यार्थी तोप आदि बनानेके कारखानोंमें काम करनेके लिए लन्दन गये हुए हैं। वहाँ वे काम सीख रहे हैं। कुछ लोग क्रुपकी तोपें बनाना सीखनेके लिए जर्मनी गये हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०-१२-१९०५

१८८. पत्र : उच्चायुक्तके सचिवको

जोहानिसबर्ग
जनवरी ३, १९०६

सेवामें
निजी सचिव
परमश्रेष्ठ उच्चायुक्त, दक्षिण आफ्रिका
जोहानिसबर्ग

महोदय,

मुझे आपके गत मासकी २० तारीखके उस पत्रकी प्राप्ति स्वीकार करनेका सम्मान प्राप्त है जो ऑरेंज रिवर कालोनीके 'गवर्नमेंट गजट' के अभी हालके अंकमें प्रकाशित कुछ प्रस्तावित अध्यादेशोंके सम्बन्धमें है।

मैं परमश्रेष्ठका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करता हूँ कि उक्त अध्यादेश ब्रिटिश भारतीयोंपर लागू नहीं होते, यह मेरे गत मासकी २२ तारीखके पत्रमें नहीं कहा गया है। मेरे संघका कहना यह है कि उक्त अध्यादेश ब्रिटिश भारतीयोंपर सिद्धान्ततः तो अवश्य लागू होते हैं, किन्तु व्यवहारतः नहीं। और इसी कारण पुराने कानूनमें से ली गई परिभाषाओंपर [आपत्ति है और] मेरे संघका निवेदन है कि इन परिभाषाओंको कायम रखना भारतीय समाजका अनावश्यक अपमान करना है। 'रंगदार लोग' शब्दोंका जैसा अर्थ ऑरेंज रिवर कालोनी और दक्षिण आफ्रिकाके दूसरे हिस्सोंमें समझा जाता है, उस दृष्टिसे उसमें ब्रिटिश भारतीयोंके लगातार समावेशके फलस्वरूप उनके साथ बहुत गम्भीर अन्याय हो रहा है। इसलिए मेरे संघका यह विनम्र विचार है कि जो भी नये कानून बनाये जायें, कमसे-कम उनमें इस परिभाषामें सुधार कर दिया जाये ताकि उसमें भावनाओंको ठेस पहुँचानेवाली वह बात न रहे जिसको यह समाज, जिसका प्रतिनिधित्व मेरा संघ करता है, इतनी तीव्रतासे अनुभव करता है। इसके अलावा, मैं नम्रतापूर्वक परमश्रेष्ठका ध्यान इस तथ्यकी ओर भी आकर्षित

करता हूँ कि ऑरेंज रिवर उपनिवेशकी विधि-संहितामें पहलेसे ही एक ऐसा विशेष कानून है जिसका प्रभाव एशियाइयोंपर, इसलिए ब्रिटिश भारतीयोंपर भी, पड़ता है।

आपका आज्ञाकारी सेवक
अब्दुलगनी
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०–१–१९०६

१८९. पत्र : म० ही० नाजरको

[जोहानिसबर्ग]
जनवरी ५, १९०६

प्रिय श्री नाजर,

मै हिन्दी और तमिलके सम्पादनके प्रश्नपर छगनलालसे चर्चा करता हूँ। मै देखता रहा हूँ, पिल्लेको तो जाना ही होगा। उसकी जगह लेनेवाला कोई है नही। मैं जितना सोचता हूँ उतना अधिक यही लगता है कि फिलहाल हमें हिन्दी और तमिल दोनोंको अलग कर देना चाहिये। हम ठीक सामग्री नहीं देते। हम ऐसा करनेकी स्थितिमें ही नहीं है। मैं जानता हूँ कि इसमें बाधाएँ है। किन्तु मुझे लगता है, बाधाओंको स्वीकार कर लेना चाहिए क्योंकि हिन्दी और तमिल छोड़नेके लाभ भी बहुत होंगे। जब हम ऐसा निश्चित वक्तव्य दे रहे हैं कि ठीक कार्यकर्ताओंके मिलते ही हम फिरसे हिन्दी और तमिल विभाग शुरू करनेका इरादा करते हैं, तबतक मेरी समझमें डरनेकी कोई बात नहीं है। मैं खुद तमिलके कामके लिए तैयार होनेकी पूरी कोशिश कर रहा हूँ। मगनलाल और गोकुलदास भी यही करेंगे किन्तु उस वक्ततक तो मेरे खयालसे दोनों स्थगित कर देना बहुत जरूरी है। तमिल तो हर हालतमें छोड़नी है, तब हिन्दी भी उसके साथ चली जाये। इस बारेमें जितनी जल्दी बने, अपनी राय देनेकी कृपा करें।

आपका शुभचिन्तक,

श्री मनसुखलाल हीरालाल नाजर
पो० ऑ० बॉक्स १८२
डर्बन

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४२९५) से।

१९०. भविष्यकी थाह

पिछले हफ्ते हमने अभी समाप्त सालमें दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंकी स्थितिका पर्यवेक्षण[1] किया था। इस हफ्ते हम भविष्यमें पैठकर देखना चाहते हैं कि शुभतर आशाकी कोई सम्भावना है या नही। हमारा खयाल होता है, ऐसी सम्भावना है। पहले तो इसलिए कि भारतीय पक्ष न्यायपूर्ण है और [हर न्यायपूर्ण पक्ष अपना बल आप ही होता है।] अतएव, स्वयं भारतीय ही उसको अपनी निराशा और तज्जनित निष्क्रियतासे नष्ट कर सकते हैं। दूसरे, यद्यपि लॉर्ड सेल्बोर्नने अपनी ब्रिटिश भारतीय-सम्बन्धी नीतिका कोई सकेत नही दिया है, फिर भी उन्होंने सम्राटकी सम्पूर्ण प्रजाकी निष्ठापूर्वक सेवा करनेकी इच्छा व्यक्त की है। उनकी यह इच्छा इस बातकी आशा रखनेका एक बहुत अच्छा आधार है कि जब ट्रान्सवालमे वास्तविक कानून बनेगा, तब वे उसे ऐसा रूप दे देंगे जिससे कमसे-कम वर्तमान असह्नीय अनिश्चितता तो समाप्त हो ही जायेगी और वर्तमान एशियाई कानूनमे निहित मनमाने अपमानका भी अन्त हो जायेगा। अगर ट्रान्सवालमे ऐसी हालत कायम हो जायेगी तो शायद यह खयाल करना अनुचित न होगा कि इससे दक्षिण आफ्रिकाके दूसरे हिस्सोंमें भी भारतीयोंकी स्थिति एक हद तक सुधर जायेगी, क्योकि अन्य आफ्रिकी उपनिवेश ट्रान्सवालका अनुकरण करते हैं। किन्तु हमें अधिकार है कि इन सबसे पहले हम नई ब्रिटिश सरकारसे स्थितिमें सुधारकी आशा करे। श्री जॉन मॉर्ले[2] कोटि-कोटि भारतीयोके हितोंके रक्षक है। हमारे पास यह खयाल करनेका पर्याप्त आधार है कि यह सरकार अगले आम चुनावको झेल ले जायेगी और ब्रिटिश लोकसभामे अच्छा-खासा कामचलाऊ बहुमत प्राप्त कर लेगी। श्री जॉन मॉर्लेने जिस कामको भी हाथमे लिया है उसको अबतक कभी बेमनसे नही किया है। सभी जानते हैं कि उनकी सहानुभूति दुर्बल पक्षके साथ रहती है। इसलिए वे दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंकी विनम्र अपीलको अवश्य ही भली भाँति सुनेगे। स्वशासित उपनिवेशोकी स्वतन्त्रतामें हस्तक्षेप कितना ही अकर्तव्य क्यों न हो, दुर्बल पक्षपर बलवान पक्षके अत्याचारको रोकनेका उपाय अवश्य ही उनके हाथमें है। और यह आशा करनेका आधार भी है कि लॉर्ड एलगिन[3] ब्रिटिश भारतीयोंके हितोंका बलिदान न करेंगे। परन्तु, अवश्य ही, सबसे ज्यादा जरूरी है भारतीय समाजका आन्तरिक प्रयत्न। हमने बाह्य परिस्थितियोकी ओर सकेत यह दिखानेके लिए किया है कि दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति बिलकुल खराब नही है, किन्तु उस स्थितिमें किसी प्रकारके सुधारका प्रमुख उपाय स्वावलम्बन ही हो सकता है। [जबतक स्वयं भारतीय हार्दिक सहयोग न दें तबतक कोई भी उपनिवेश-मंत्री, या भारत-मंत्री, या उच्चायुक्त, भारतीयोकी कोई बडी भलाई नहीं कर सकता, चाहे वह उनसे कितनी ही सहानुभूति रखता हो और उनकी कितनी ही सहायता करना चाहता हो।] [भारतीयोको अपनी लड़ाइयाँ लड़नेमें अपने उद्देश्यकी उपयोगिता, सहकार और अथक श्रमका परिचय देना ही चाहिए।] हमारे गुजराती स्तम्भोसे प्रकट है कि समस्त दक्षिण आफ्रिकामें लोग इन गुणोको अधिकाधिक मात्रामें प्राप्त करनेकी आकाक्षा रखते हैं। आज बंगालमे जो कुछ हो रहा है[4] उससे हमें अधिक प्रयत्न करनेका पर्याप्त प्रोत्साहन मिला है। उस प्रान्तके भारतीय अत्यन्त प्रतिकूल परिस्थितियोंमें भी सहकार, आत्मत्याग और धैर्यकी अभूतपूर्व भावनाका

१. देखिए "पर्यवेक्षण", पृष्ठ १७६-७।
२. (१८३८-१९२३), भारत-मन्त्री, १९०५-१०।
३. उपनिवेश मन्त्री, १९०५-८।
४. यह संकेत बंग-भंगके विरुद्ध आन्दोलनकी ओर है

प्रदर्शन कर रहे हैं। इंग्लैंडमें अपने प्रचारके दौरानमें प्रोफेसर गोखले और लाला लाजपतरायने यह दिखा दिया है कि किसी सदुद्देश्यके निमित्त केवल दो सच्चे कार्यकर्त्ता भी कितना काम कर सकते हैं। तब भला यह कैसे हो सकता है कि जो प्रगतिशील धारा आज भारतीय राष्ट्रको अपने लक्ष्यकी ओर आगे बढ़नेके लिए प्रेरित कर रही है, उसके साथ-साथ दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय साहसपूर्वक आगे न बढ़ें और अन्यथा आचरण करें?

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–१–१९०६

१९१. ब्रिटिश भारतीयोंका दर्जा

जैसी कि हमने आशा की थी, भारतीय राष्ट्रीय महासभाने अपनी हालमें हुई बनारसकी बैठकमें, इस महादेशके निवासी ब्रिटिश भारतीयोंके साथ होनेवाले बर्तावके बारेमें एक प्रस्ताव पास करके दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंके प्रति अपने कर्तव्यका पालन किया है। इस प्रस्तावमें निवेदन किया गया है कि मुसीबतोंसे राहत पानेके एक साधनके तौरपर नेटालमें गिरमिटिया मजदूर भेजना तबतक बन्द रखा जाये जबतक कि यह "सर्वाधिक ब्रिटिश" उपनिवेश भारतीयोंकी वर्तमान असहनीय निर्योग्यताओंको दूर करने और उन्हें साम्राज्यमें बराबरीका सदस्य माननेको तैयार नहीं हो जाता। हम, एक बार फिर, इस तरह सार्वजनिक रूपसे इस विषयकी ओर ध्यान दिलाने और शिमलामें लॉर्ड कर्जन द्वारा अपने बजट-भाषणमें इस सम्बन्धमें घोषित नीतिका अनुमोदन करनेपर कांग्रेसको हृदयसे बधाई देते हैं।

जो लोग भारतमें होनेवाली घटनाओंसे अपनेको परिचित रखते आये हैं, उनके ध्यानमें यह बात आई होगी कि खास तौरसे १८९७ से सम्पूर्ण भारतीय प्रजाने, जिसमें आंग्ल-भारतीय और भारतीय दोनों शामिल हैं, और भारतके समस्त समाचारपत्रोंने, चाहे वे अंग्रेजीमें निकलते हों अथवा देशी भाषाओंमें, निरन्तर उन्हीं भावनाओंको प्रकट किया है जो कांग्रेसके इस प्रस्तावमें व्यक्त की गई हैं। दुर्भाग्यवश, भारतमें शासन प्रणाली कुछ ऐसी है कि जिम्मेदार अफसरोंको सार्वजनिक मामलोंपर अपनी राय खुले-आम जाहिर करनेके मौके बहुत ही कम मिल पाते हैं — फिर वे विषय कितने भी गम्भीर क्यों न हों। इसका स्वाभाविक नतीजा यह है कि उनकी रायोंको जानना बहुत कठिन होता है। मुख्यतः इसी कारण ब्रिटिश संसदके दोनों सदनोंके सदस्योंको हम भारत-मंत्रीसे प्रश्न पूछते और इस प्रकार भारत-सरकारके मनमें क्या है, उसकी झलक पानेका प्रयत्न करते देखते हैं। दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय उनके पक्षका जोरदार समर्थन करनेवाले पूर्व भारत संघ, सर मं० मे० भावनगरी, सर विलियम वेडरबर्न और सर चार्ल्स डिल्कके कुछ कम कृतज्ञ नहीं हैं जिन्होंने निरन्तर पत्र-व्यवहार और सामयिक प्रश्नों द्वारा उपनिवेशोंमें ब्रिटिश भारतीयोंके दर्जेके बारेमें भारत सरकारकी कुछ-न-कुछ राय जाननेमें सफलता प्राप्त की है। हमारे पाठक उक्त संघकी उन कई बैठकोंको भूले न होंगे जो खास तौरसे इसी विषयपर बातचीत करनेके लिए बुलाई गई थीं, और जिनमें वक्ताओंने यह बताया था कि उनकी भारत-मन्त्री तथा उपनिवेश-मन्त्रीसे व्यक्तिशः क्या बातचीत हुई थी। पर इस विषयमें भारत सरकारके विचारोंपर उचित प्रकाश तभी डाला गया जब एक प्रभावशाली प्रतिनिधिमण्डल लॉर्ड जॉर्ज हैमिल्टनसे[1] मिला और लॉर्ड महोदयने उसे

१. भारत-मंत्री, १८९५–१९०३।

एक स्पष्ट उत्तर दिया। तबसे बराबर जोरदार कोशिशें की जाती रही हैं और उनका नतीजा यह निकला है कि लॉर्ड कर्जनने भारतीय जनताको सब स्थिति बताना मुनासिब समझा और पिछले बजट सम्बन्धी भाषणके अवसरका उपयोग इस मामलेकी गोपनीयताको भंग करनेमें किया (यद्यपि नेटाल सरकार न जाने किस कारण इसकी गोपनीयताकी रक्षा अब भी तत्परताके साथ कर रही है)। उन्होंने इस मामलेमें अपनी सरकारका रुख और रवैया सार्वजनिक रूपसे घोषित कर दिया। इस तरह अपने संरक्षणमें स्थित लाखों लोगोंको लॉर्ड कर्जनने यह संतोष प्रदान किया कि वे और उनके सलाहकार स्थितिकी गम्भीरताके प्रति पूर्णरूपसे सजग हैं और सम्राटके उन लाखों 'वफादार और प्यारे' प्रजाजनोंके हकमें इन्साफ हासिल करनेके प्रयत्नोंमें कोई भी कसर बाकी न रखेंगे जो साम्राज्यके अन्दर अपनी साम्पत्तिक स्थिति सुधारनेके अभिप्रायसे इन उपनिवेशोंमें आये हैं।

उस अवसरपर लॉर्ड कर्जनने अपनी महत्त्वपूर्ण घोषणामें ये शब्द कहे थे:

> **हमने नेटाल सरकारको सूचित कर दिया है कि उस उपनिवेशमें प्रवासके बारेमें जो भी कार्रवाइयाँ हमें जरूरी मालूम हों, उन्हें किसी भी समय करनेका हम अपना पूरा अधिकार सुरक्षित रखते हैं। हेतु यह है कि हमारे भारतीय प्रवासियोंके प्रति उचित व्यवहार किया जाये। और हमने हालमें ही गिरमिटके अन्तर्गत मजदूरोंका प्रवास सरल बनानेकी कार्रवाइयोंमें तबतक योग देनेसे पुनः इनकार कर दिया है जबतक कि नेटालके अधिकारी अपने रुखमें बहुत-कुछ सुधार नहीं कर लेते।**

लेकिन इस मामलेमें एक मुद्देकी बात है — और वह मुख्य बात है — जिसपर अभी तक काफी जोर नहीं दिया गया है। ऐसा जान पड़ता है कि दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंके प्रति व्यवहारके प्रश्नको सौदेकी सतहसे जरा भी ऊपर नहीं उठाया गया है और नेटाल सरकारने गिरमिटकी शर्तोंके अन्तर्गत विशेष सेवाओंके परे ब्रिटिश प्रजाके रूपमें भारतीयोंके अधिकारोंकी भी यथासम्भव उपेक्षा की है और भारत सरकारने भी इस पहलूपर यथोचित जोर नहीं दिया है। लॉर्ड कर्जनने यह माना है कि "दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंके प्रति सामान्यतः अधिक अच्छा बरताव प्राप्त करनेके लिए गिरमिटियोंकी जरूरत हमारे हाथमें एक प्रबल साधन सिद्ध हो सकती है"; परन्तु जैसा हमने कहा है, इस रियायतका अर्थ होगा जोर-जबर्दस्तीसे कुछ राहत पाना, न कि उच्च साम्राज्यीय भावनाके आधारपर। इससे तो यह प्रतीत होता है कि अगर गिरमिटिया मजदूरोंकी उपलब्धि बन्द कर दी जाये तो भारत सरकार अपने दक्षिण आफ्रिकावासी प्रजाजनोंकी रक्षा करनेमें अपनेको असहाय अनुभव करेगी। यदि ऐसी बात हो तो ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति सचमुच सोचनीय हो जायेगी। लेकिन ब्रिटिश झंडेके नीचे ऐसा होना बहुत ही असगत होगा। इस समय हमें श्री जॉन मॉर्ले जैसे हमदर्द, ईमानदार और बहुत ही योग्य भारत-मन्त्री मिले हैं और लॉर्ड एलगिन जैसे उदार-विचार तथा परम अनुभवी राजनीतिज्ञ उपनिवेश-मन्त्री, जो स्वयं, भारतके वाइसराय भी रह चुके हैं। जब हम याद करते हैं कि भारतके वर्तमान वाइसराय लॉर्ड मिंटो कभी कैनडाके गवर्नर-जनरल थे तब उचित रूपसे यह आशा की जा सकती है कि ब्रिटिश भारतीयोंके दरजेका सवाल निकट भविष्यमें ही निश्चित और संतोषजनक रूपसे हल हो जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६-१-१९०६

१९२. ऑरेंज रिवर कालोनीमें भारतीय

लॉर्ड सेल्बोर्नने ब्रिटिश भारतीय संघके आवेदनपत्रका[1], विलम्ब किये बिना, शिष्टतापूर्ण उत्तर दिया है। इस आवेदनपत्रमें 'रंगदार लोग' शब्दोंकी परिभाषाके प्रति, जो ऑरेंज रिवर उपनिवेशके सरकारी 'गज़ट' मे चन्द अध्यादेशोंके मसविदोंमें अभी हालही प्रकाशित हुई है, विरोध प्रकट किया गया है। हमारा खयाल यह है कि लॉर्ड सेल्बोर्नने संघके आवेदनपत्रको गलत समझ लिया है। आवेदनपत्रमें यह नही कहा गया है कि "जिन अध्यादेशोंका इसमें जिक्र है उनमें से कोई भी अध्यादेश ब्रिटिश भारतीयोंपर लागू नहीं होता है।" उसमें तो यह कहा गया है कि "व्यवहारतः" वे लागू न होंगे। ये दो वक्तव्य बिलकुल भिन्न है। फिर, परमश्रेष्ठने इस आधारपर, कि यह पुरानी सरकारकी विरासत है, 'रंगदार लोग' की परिभाषाका औचित्य स्थापित किया है। परन्तु ब्रिटिश भारतीय इस परिभाषापर आपत्ति उसी कारण करते है। उनकी स्थिति इस प्रकार है। अध्यादेश व्यवहारतः उनपर लागू न होगा। बोअर सरकारने भारतीयोंको काफिर लोगोंका समकक्ष बतलाकर उनका अपमान किया था। अब उस अनावश्यक अपमानको जारी रखनेका कोई अवसर नहीं रहा। यह तर्क अकाट्य मालूम होता है। दुःखकी बात है कि परमश्रेष्ठ दूसरोंका चित्त न दुखानेकी इच्छा रखते हुए भी संघकी बहुत मुनासिब प्रार्थनाको स्वीकार न कर सके।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–१–१९०६

१९३. व्यक्ति-करकी अदायगी

व्यक्ति-करका आजतक जैसा क्षीण स्वागत हुआ है, उसे देखते हुए यह नही जान पड़ता कि लोग उसको कुछ उत्साहके साथ चुका रहे हैं; और आशा भी ऐसी ही थी। गड़बड़ी तो अगले महीनेके अन्तमें शुरू होगी। अधिकारियोंको कर देनेमें समर्थ और असमर्थ लोगोंमें भेद करना आसान नहीं होगा। लेकिन हर हालतमें एक बात तो साफ है: सरकार बालूसे भी तेल निकालनेके लिए कृतसंकल्प प्रतीत होती है। कुछ समय पहले, एक भारतीयने उपनिवेश सचिवसे पूछा था कि जो लोग आवश्यक 'पौंड' की प्राप्तिके लिए अपनी अल्प फसलोंपर निर्भर करते है, क्या सरकार उनको करकी अदायगीके लिए कुछ और समय देगी। उसको इसका उत्तर यह दिया गया कि सरकार ऐसा करनेके लिए तैयार नहीं है; अलबत्ता, वे लोग चाहें तो अपनी खड़ी फसलोंको गिरवी रखकर कर्ज ले सकते हैं। प्रत्येक व्यक्ति यही खयाल करेगा कि एक सभ्य देशमें जो व्यक्ति "रोज कमाता और रोज खाता" है और जिसके पास फसल बोनेके बाद कुछ नहीं बचता, उससे कर अदा करनेकी उम्मीद नहीं की जायेगी। किन्तु ऐसी दीनावस्था अधिकारियोंको अपेक्षाकृत समृद्धिके रूपमें दिखाई पड़ती है। जिस राज्यको ऐसे नीचे स्तरपर उतर आना पड़ता है उसमें, स्पष्टतः, कोई बड़ी खराबी है। अधिकारी

१. देखिए "पत्र: उच्चायुक्तके सचिवको", पृष्ठ १७१।

इससे भी एक कदम आगे जा सकते हैं और कह सकते हैं कि निर्धनतम व्यक्ति कर चुकानेके लिए चीर-फाड़के निमित्त अपना तन गिरवी रखकर रुपया प्राप्त कर सकता है। परन्तु हम यहाँ यह बता दें कि इस कानूनकी धारा १४ (४) के अनुसार,

> **जो व्यक्ति यह साबित कर देगा कि वह गरीबीके कारण कर नहीं चुका सकता, वह फिलहाल इस करसे मुक्त कर दिया जायेगा, किन्तु बादमें कर चुकाने योग्य होनेपर भी यदि वह कर नहीं चुकायेगा तो सरकार उसके इस बहानेके कारण उसपर मुकदमा चलाने या उसके विरुद्ध कार्रवाई करनेसे न रुकेगी।**

इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि वे लोग, जिनकी स्थिति ऐसी है जैसी संवाददाताने बताई है, अपनेको गरीब बता सकते हैं और बादमें अपनी फसलोंकी बिक्रीसे कर चुका सकते हैं। उन्हे अपनी कच्ची फसलोंपर कर्ज लेने (और बेजा ब्याज देने) की जरूरत नही होगी, क्योंकि कानूनमें ऐसी ही अनिश्चित स्थितिके लिए व्यवस्था की गई है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०–१–१९०६

१९४. मनसुखलाल हीरालाल नाजर[1]

दिसम्बर १८९६ के कुसमयमें, जब मनसुखलाल हीरालाल नाजर डर्बनमें उतरे तब वे बिलकुल अजनबी थे। वे यहाँ शान्तिपूर्ण जीवन बिताना चाहते थे, परन्तु जब उन्होंने देखा कि उस कठिन कालमें उनके स्वदेशवासियोंको पथदर्शककी आवश्यकता है तो उन जैसा देशभक्त चुप बैठा न रह सका। उस समय डर्बनमें भारतीय-विरोधी प्रदर्शन[2] जोरपर था। भारतीयोंके प्रवेशके खिलाफ नगर सभा भवनमें विरोध सभाएँ की गईं। 'नादरी' तथा 'कूरलैंड'[2] जहाजोंके भारतीय मुसाफिरोंको धमकियाँ दी गईं कि वे नेटालके तटपर उतरनेका प्रयत्न करेंगे, तो परिणाम भयानक होगा। तभी नाजर घटना-स्थलपर पहुँचे और भारतीयोंने उनका स्वागत अपने त्राताके रूपमें किया। कोई भी नही जानता था कि वे कौन है, किन्तु भारतीय नेता उनके आकर्षक व्यक्तित्वसे और उस अधिकारमय ढंगसे जिससे वे लोगोंके तत्कालीन कर्तव्यके बारेमें बोलते थे, तुरन्त उनकी ओर आकर्षित हो गये। यह कहना कठिन है कि यदि श्री नाजर उस समय न आये होते तो भारतीय समाजने क्या किया होता। वे श्री लॉटनके साथ, जो भारतीयोंके सलाहकारके रूपमें काम कर रहे थे, आवश्यक परामर्श करते रहे और मुझे खुद श्री लॉटनने बताया है कि श्री नाजरने उस समय उनको जो सहायता और सलाह दी वह अत्यन्त मूल्यवान सिद्ध हुई। उस दिनसे लेकर मृत्यु पर्यन्त श्री नाजरने सदा लोकहितको अपने हितोंके मुकाबले पहला स्थान दिया। उनका एकान्त जीवन बितानेका स्वप्न कभी पूरा नही हुआ और यद्यपि लोगोंको यह जाननेका मौका कभी नही मिला, परन्तु अपने देश-बन्धुओंके हितार्थ वे मरते वक्त तक कंगाल ही रहे। वे कभी-कभी बहुत दिनों तक लगातार डर्बनसे दूर सिडनहमके[3] एक एकान्त

१. जनवरी २०, १९०६ को स्वर्गवास हुआ।

२. देखिए खण्ड २, पृष्ठ १६६ और आगे।

३. डर्बनका एक उपनगर।

गृहमें पड़े रहते थे और थोड़ेसे दूध और बिस्कुटोंसे ही दिन काट देते थे। श्री नाजरने किसी प्रकारका दिखावा किये बिना जो सेवाएँ की हैं, उनका स्वरूप और मूल्य केवल समय आनेपर ही प्रकट होगा।

वे उन्नीसवीं सदीके छठे दशकके आरम्भमें पैदा हुए थे। वे कायस्थ जातिके थे जो भारतकी एक अत्यन्त सुसंस्कृत जाति है। उनके वंशकी परम्पराएँ ऊँची थीं। जैसा कि उनके पारिवारिक नामसे प्रकट है, नाजर लोग पहले मुगल बादशाहोंके विश्वसनीय कर्मचारी रहे होंगे। इस संस्मरणके नायकके पिता स्वर्गीय श्री हीरालाल नाजर पश्चिमी सूबेके[1] उन लोगोंमें से थे जिन्होंने सबसे पहले अंग्रेजी शिक्षा पाई थी और वे सरकारके एक परखे हुए सेवक थे। वे सिविल इंजीनियर थे और उन्होंने अपनी योग्यतासे तथा चरित्र-बलसे इतना विश्वास प्राप्त कर लिया था कि सरकारने उनको बम्बईके किलेकी गुप्त रक्षा-व्यवस्थाकी जानकारी हासिल कर लेनेकी इजाजत दे दी थी। श्री नाजर स्वर्गीय न्यायमूर्ति नानाभाई हरिदासके बहुत नजदीकी रिश्तेदार थे। उनकी शिक्षा बम्बईमें हुई थी और मैट्रिककी परीक्षा विशेष योग्यताके साथ पास करनेके बाद वे बम्बईके एलफिन्स्टन कॉलेजमें पढ़े थे। वे प्रायः अपने दर्जेमें अव्वल आते थ और लक्षणोंसे लगता था कि वे जीवनमें बहुत उन्नति करेंगे। परन्तु उनके मनमें बेचैनी थी; इसलिए उन्होंने अपना अध्ययन कभी पूरा नहीं किया। उन्होंने श्री दादाभाई नौरोजी और उस जमानेके दूसरे महान भारतीय देशभक्तोंसे अपना जीवन देशकी सेवामें लगा देनेकी प्रेरणा प्राप्त की थी। इसलिए उन्होंने एक उपस्नातक संघ (अंडर ग्रैजुएट्स असोसिएशन) नामकी संस्था खोली, जो सर फीरोजशाह मेहता[2] जैसे तेजस्वी व्यक्तिकी अध्यक्षतामें पहलेसे मौजूद स्नातक संघ (ग्रैजुएट्स असोसिएशन) का मुकाबला करती थी। उन्होंने विश्वविद्यालय सम्बन्धी सुधारके बारेमें जो प्रार्थनापत्र लिखे और सरकारको भेजे थे उनसे उनकी ओजपूर्ण लेखन-कला और राजनीतिक मनोवृत्तिका पता लगता है। उन्होंने ग्रैंट मैडिकल कॉलेजमें भी चार साल तक शिक्षा प्राप्त की थी। इससे उन्हें चिकित्सा-शास्त्रका अच्छा ज्ञान हो गया था, जो उनके जीवनके पिछले दिनोंमें बहुत उपयोगी साबित हुआ। श्री नाजर नौकरी करना नहीं चाहते थे। वे श्री दादाभाई नौरोजीके विचारोंके कायल थे; इसलिए उनकी धारणा थी कि भारतकी मुक्ति आन्तरिक और बाह्य दोनों ओरसे ही होनी जरूरी है। वे यह भी मानते थे कि शिक्षाको पद-प्राप्तिका साधन नहीं बनाना चाहिए और न उसे व्यापारसे ही अलग रखना चाहिए। इसलिए वे और उनके योग्य भाई इंग्लैंड चले गये और पूरी शक्तिसे व्यापारिक संघर्षमें कूद पड़े। परन्तु श्री नाजर सदा राजनीतिज्ञ पहले थे और अन्य सब कुछ बादमें। इसलिए उन्होंने लन्दनमें भी अपनी सार्वजनिक-सेवा जारी रखी। वे कई उपयोगी संस्थाओंसे घनिष्ठ रूपसे सम्बद्ध थे और क्रिश्चियानियामें[3] जो प्राच्य विद्या परिषद (ओरिऐंटल कांग्रेस) हुई उसके प्रतिनिधि चुने गये थे। वे स्वर्गीय प्रोफेसर मैक्समूलर तथा दूसरे कई प्राच्य विद्या-विशेषज्ञोंके सम्पर्कमें आये और प्राच्य साहित्यके अपने प्रामाणिक ज्ञानकी बदौलत उनकी निगाहोंमें ऊँचे उठे। लेकिन श्री नाजर इसके अलावा कुछ और भी थे। वे बहुत ऊँचे दरजेके पत्रकार थे। किसी समय 'एडवोकेट ऑफ इंडिया' पत्रसे उनका बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध था और उसमें उन्होंने पारिश्रमिक लिये बिना बहुत-से लेख लिखे थे। वे भारतके बहुतसे प्रसिद्ध पत्रोंको भी संवाद भेजते रहते थे, मानो नेटालमें इसी तरहका जीवन बितानेकी तैयारी कर रहे हों।

१. बम्बई।
२. भारतीय कांग्रेसके एक प्रमुख नेता, देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३९५।
३. १९२५से इसका नाम ओस्लो है और यह नार्वेकी राजधानी है।

उन्होंने एकसे अधिक बार यूरोपका भ्रमण किया था। किन्तु उनको वहाँ व्यापारिक मामलोंमें वांछित सफलता नहीं मिली। इसलिए वे दक्षिण आफ्रिकामें आ गये। उन्होंने नेटालको अपना देश बना लिया था और यहाँ उन्होंने जो कुछ किया वह सबको मालूम ही है। वे अपने व्यवसायका विकास करनेके बजाय तन-मनसे सार्वजनिक कामोंमें जुट पड़े। १८९७ में वे ब्रिटिश भारतीयोंकी शिकायतोंको व्यक्त करनेके लिए विशेष प्रतिनिधि बनाकर इंग्लैंड भेजे गये। वहाँ वे स्वर्गीय सर विलियम विल्सन हटर[1], सर लेपेल ग्रिफिन[2], माननीय दादाभाई नौरोजी, सर मंचरजी भावनगरी और दूसरे कई लोक-नेताओंसे मिले। सर विलियम हंटर तो श्री नाजरकी योग्यता और सौम्यतासे इतने अधिक प्रभावित हुए कि उन्होंने 'टाइम्स' में श्री नाजरके कार्यका जिक्र करते हुए एक विशेष लेख लिखा। स्वर्गीय लॉर्ड नॉर्थब्रुक, लॉर्ड रे तथा दूसरे आंग्ल भारतीयोंने धीरजसे उनकी बातें सुनी और उनके परिश्रमका फल यह निकला कि पूर्व भारत संघने बड़ी सरगर्मीसे ब्रिटिश भारतीयोंके मामलेको हाथमें ले लिया। मैं इस सम्बन्धमें श्री नाजरके कार्यपर जोर देना नहीं चाहता। मैं कोई मतभेदकी बात कहना नहीं चाहता। उनका सबसे अधिक अमर कार्य तो गुप्त रूपसे ही किया गया था और वह काम था दक्षिण आफ्रिकाकी दो जातियोंके बीच पारस्परिक सद्भावके कोमल पौधेको सींचना। उन्होंने दोनोंके बीच कड़ीका काम किया। वे एक ऊँचे दर्जेके राजनीतिज्ञ थे। उनकी प्रवृत्ति उत्तेजना फैलानेकी तनिक भी न थी। उनका सब कार्य शान्तिपूर्ण होता था। वे एक जातिकी खूबियाँ दूसरीको बताया करते थे। उन्होंने हर मौकेपर अपने देश-बन्धुओंके अधिकारोंकी जोरदार वकालत की, परन्तु साथ ही उनका ध्यान उनकी जिम्मेदारियोंकी ओर भी खींचा और उनको सदा बुद्धिमत्ता और धीरजसे काम करनेकी सलाह दी। वे विशेष रूपसे गरीबोंके मित्र थे। भारतीयोंके सबसे गरीब वर्गको उनके रूपमें एक सच्चा सलाहकार और मित्र मिला था। उन दिनों जब नेटाल भारतीय आहत-सहायक दलका[3] संगठन किया गया तब उनको दिलकी बीमारी थी। इसलिए उनको सभीने यह सलाह दी कि दलके काममें उनका अमली हिस्सा लेना जरूरी नहीं है। परन्तु उन्होंने किसीकी नहीं सुनी और उसके लिए सदस्यके रूपमें अपनी सेवाएँ अर्पित कीं। वहाँ उन्होंने अपने चिकित्सा शास्त्र-ज्ञानका एक सत्कार्यमें प्रयोग किया।

उनकी मददके बिना यह पत्र कभी न निकल पाया होता। श्री नाजरने इसकी प्रारम्भिक संकटावस्थामें लगभग समस्त सम्पादकीय भार अपने ऊपर ले रखा था और उन्होंने इसके सम्बन्धमें जो कार्य किया, बहुत कुछ उसके कारण ही यह पत्र उदार नीति और गम्भीर विचारोंके लिए प्रसिद्ध है।

मेरा कथन है कि वे एक सच्चे योगी और विश्व-प्रेमी हिन्दू थे, जो जाति और धर्म-सम्बन्धी भेदोंको मानते ही न थे। इससे जो भारतीय इस विवरणको पढ़ेगा, वह भली भाँति समझ जायेगा कि वे क्या थे। उनको जीवनमें शान्ति देनेवाली एक-मात्र पुस्तक थी 'भगवद्-गीता'। उनको उसके तत्वज्ञानसे प्रेरणा मिली थी। मूल गीता उनको लगभग कण्ठस्थ थी और इस लेखके लेखककी यह निजी जानकारी है कि वे गीताकी शिक्षाओंके प्रभावसे ही कठिन-तम परीक्षाओंमें भी लगभग पूर्णतः शान्त चित्त बने रह सकते थे। और वे ऐसी बहुत-सी परीक्षाओंमें से निकले थे। एक कट्टर हिन्दूको उनके कुछ तौर-तरीके विचित्र मालूम होंगे; किन्तु

१. (१८४०–१९००), भारतीय मामलोंके विशेषज्ञ और कांग्रेसकी ब्रिटिश समितिके एक प्रमुख सदस्य। देखिए खण्ड १; पृष्ठ ३९६।

२. भारतीय नागरिक सेवाके सदस्य और पंजाबके एक अधिकारी।

३. १८९९–१९०२ के बोअर युद्धमें गांधीजीने इसका संगठन किया था। देखिए खण्ड ३, पृष्ठ १४७–५२।

निस्सन्देह उनमें भिन्न-भिन्न बातोंका विचित्र मिश्रण था। उस मृतात्माके चरित्रकी छानबीन करना इस लेखके लेखकका उद्देश्य नहीं है। श्री नाजरकी टक्करका व्यक्ति भारतीयोंको बहुत खोजके बाद ही मिल सकेगा। वे प्रशंसासे घृणा करते थे और अपनी प्रशंसा नहीं चाहते थे। कोई उनकी प्रशंसा करता या निन्दा, उससे उनकी सार्वजनिक प्रवृत्तियोंपर कोई असर नहीं पड़ता था। ऐसे निःस्वार्थ कार्यकर्त्ता हमें सर्वत्र सुगमतासे नहीं मिलते। सभी जातियोंमें वे इने-गिने ही होते है। समय ही बतायेगा कि श्री नाजरकी मृत्युसे भारतीय समाजको और, क्या मैं कहूँ कि, यूरोपीय समाजको भी कितनी हानि उठानी पड़ी है।

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २७-१-१९०६

१९५. काले और गोरे लोग

उक्त शीर्षकसे इसी[1] महीनेकी ५ तारीखको श्री एच० डब्ल्यू० मैसिंघमने 'डेली न्यूज' में रंगदार जातियोके प्रति दक्षिण आफ्रिकी गोरोंके रुखके बारेमें एक जोरदार लेख लिखा है। श्री मैसिंघमने मानव हितकी उसी भावनाके साथ, जिसे हम उनके नामसे सम्बद्ध करनेके आदी हैं, रंग-भेदके प्रश्नपर लोगोंमें फैले हर एक भ्रमका निराकरण किया है और दक्षिण आफ्रिकाकी रंगदार जातियोंकी बहुत बड़ी सेवा की है। हम उनके इस विषयपर विचारनेके तरीकेमें कोई भी दोष नहीं पाते, परन्तु उनके लेखके उस हिस्सेमें, जहाँ उन्होंने ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके सवालका जिक्र किया है, कुछ त्रुटियाँ है। हम उनको ही यहाँ बताना चाहते हैं। प्रकट है कि श्री मैसिंघमकी रायमें १८८५ के कानून ३ में भारतीयोंके द्वारा जमीनकी मिल्कियत लेनेका निषेध नहीं है। निस्सन्देह उनकी यह दलील बिलकुल गलत है। श्री मैसिंघमकी यह मान्यता भी गलत है कि भारतीयोंको "अब भी शहरोंमें पैदल-पटरियोंपर चलनेकी अनुमति" है। यह कानूनकी दृष्टिसे सही नहीं है, क्योंकि एक विख्यात कानूनी फैसलेके अनुसार किसी भारतीयको नगरपालिकाकी पैदल-पटरियोंका इस्तेमाल करनेका अधिकार नहीं है और पुलिसका कोई भी सिपाही, जो उसे पैदल-पटरीपर चलता देखे, उसको अशिष्टतासे बीच सड़कपर चलनेकी आज्ञा दे सकता है। यहाँ बसी हुई रंगदार जातियोंके बारेमें विचार करते वक्त दक्षिण आफ्रिकी गोरोंमें अहम्मन्यताके साथ उपहास करनेकी दुर्भाग्यपूर्ण परम्परा पड़ गई है। श्री मैसिंघमने उसका जो सामयिक विरोध किया है उसका मूल्य उपर्युक्त त्रुटियोंसे कदापि कम नहीं होता।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३-२-१९०६

१. "इसी" शब्दसे स्पष्ट है कि यह लेख प्रकाशनसे कमसे-कम तीन दिन पूर्व जनवरीमें लिखा गया था। देखिए श्रीमैसिंघमके लेखका परिशिष्ट।

१९६. सर डेविड हंटर

हमें यह लिखनेमें प्रसन्नता होती है कि सर डेविड हंटरने नेटालमें ही अपना अधिवास जारी रखनेका इरादा किया है और यह रजामंदी भी जाहिर की है कि दौरेसे लौटनेपर साथी नागरिक कहेंगे तो वे अपनी मर्जी ताकपर रखकर भी संसदमें प्रवेश करनेका विचार करेंगे। लोग उनसे अपना प्रतिनिधित्व करनेका अनुरोध करेंगे, यह निश्चित है; क्योंकि सभी मानते हैं कि वे संसदीय सेवाके लिए विशेष रूपसे उपयुक्त हैं। यद्यपि उनके निर्वाचनमें नेटालके भारतीय अधिवासी मत न दे सकेंगे, फिर भी वे श्री हंटरके समर्थनमें अपनी आवाज उठायेंगे ही। भारतीय सर डेविडके बहुत ऋणी हैं, क्योंकि वे देख चुके हैं कि सर डेविड नेटाल गवर्नमेंट रेलवेके जनरल मैनेजरकी हैसियतसे उनके साथ सदा शिष्ट व्यवहार ही न करते थे बल्कि उनका खयाल भी रखते थे। मुख्यतः उन्हींकी न्यायभावनाके फलस्वरूप भारतीयोंको रेलवेमें सामान्य सुविधाएँ प्राप्त हुई हैं, अन्यथा जैसी उपनिवेशके अनेक लोगोकी इच्छा थी, उनको सिर्फ तीसरे दर्जेके डिब्बोमें ही सफर करनेको मजबूर होना पडता। अगर कुछ रेलवे अधिकारियोका बर्ताव वैसा नहीं है जैसा होना चाहिए, तो इसमें सर डेविडका कोई दोष नही है। उन्होंने भारतीयोकी शिक्षामें भी सक्रिय और व्यावहारिक दिलचस्पी ली है। सर डेविड एक भले अंग्रेज हैं और इस उपनिवेशने उनका सम्मान करके अपना ही सम्मान किया है। हमारी कामना है कि सर डेविडकी जल और थल-यात्रा सुखमय हो और वे शीघ्र वापस लौटें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३-२-१९०६

१९७. हमारे तमिल और हिन्दी स्तम्भ

हमें यह घोषणा करते हुए खेद होता है कि हम फिलहाल अपने पत्रके तमिल और हिन्दी स्तम्भ बन्द करनेके लिए विवश हो रहे हैं। चूँकि आवश्यक सम्पादको और कम्पोजीटरोकी स्थायी सेवाएँ प्राप्त करना मुश्किल था, इसलिए हमें इन स्तम्भोंको जारी रखनेके लिए बड़ी-बडी कठिनाइयोसे संघर्ष करना पड़ा है। हम इस बातको दुःखके साथ अनुभव करते रहे हैं कि कुछ समयसे हमारे तमिल और हिन्दी स्तम्भोंका स्तर वैसा नही रहा है जैसा हम चाहते हैं। इसलिए हम तबतक अनिच्छापूर्वक यह मार्ग ग्रहण करनेके लिए मजबूर हो गये हैं, जबतक हमारे कार्यकर्ता-मण्डलके कुछ सदस्य, जो अभी यह काम सीख रहे हैं, तैयार नही हो जाते और दोनो महान भाषाओके प्रति न्याय करनेके योग्य नही बन जाते।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३-२-१९०६

१९८. ईरानके शाह

ईरानके शाहने अपनी प्रजाको नया संविधान दिया है और कहा है कि जिस तरह राज्य पश्चिमी देशोंमें चलता है उसी तरह नियमित ढंगसे वे भी चलाना चाहते हैं। उन्होंने लोगोंको शासन-व्यवस्थामें हिस्सा दिया है। यदि इस प्रकार ठीक काम चला तो सम्भव है ईरानकी बादशाही बहुत बढ़ जायेगी। इसमें सन्देह नहीं कि यह सब जापानकी जीतका[1] ही असर है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३-२-१९०६

१९९. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

जोहानिसबर्ग
फरवरी ९, १९०६

सेवामे
उपनिवेश-सचिव
प्रिटोरिया

महोदय,

मेरे संघको अनेक सूत्रोंसे सूचना मिली है कि अनुमतिपत्र-कार्यालयमें परिवर्तन[2] होनेके बाद, भारतीय समाजको मेरे संघके द्वारा अथवा अन्य किसी प्रकारसे किसी प्रकारकी चेतावनी दिये बिना निम्नलिखित रद्दोबदल किये गये है :

(१) उन बच्चोंकी नाबालिगीकी उम्र, जो इस देशमें प्रवेश करना चाहते है, सोलह वर्षसे नीचेके बदले बारह वर्षसे नीचे कर दी गई है।

(२) अभिभावकोंके हलफनामे स्वीकार नहीं किये जाते हैं। दूसरे शब्दोंमें, वे ही बच्चे, जिनके माता-पिता ट्रान्सवालमें रहते है, यहाँ प्रवेश पा सकते है।

(३) अब प्रिटोरियासे बाहरके शरणार्थियोंके गवाहोंसे भिन्न-भिन्न जिलोंके आवासी मजिस्ट्रेटों द्वारा जिरह की जा रही है। परिणामस्वरूप अनेक शरणार्थियोंके प्रार्थनापत्र अभी अनिश्चित् समयके लिए लटक गये हैं।

भारतीय समाजपर जो इस प्रकार अचानक ही ये तब्दीलियाँ लाद दी गई हैं, उनका मेरा संघ आदरपूर्वक विरोध करता है। जो भी परिवर्तन विचाराधीन रहे हैं उनके सम्बन्धमें, साधारणतया मेरे संघको सूचना मिलती रही है और कुछ मामलोंमें सरकारने मेरे संघसे सलाह-मशविरा करनेका सौजन्य भी दिखाया है। अतएव मेरे संघको इस घटनासे अप्रिय आश्चर्य हुआ है कि अनुमतिपत्र सम्बन्धी विनियमोंमें भारतीय समाजपर असर करनेवाले भारी परिवर्तन कर डाले गये है और ऐसा करनेके पूर्व किसी प्रकारकी सूचना नही दी गई। और इतनेपर भी भारतीय समाजको इन बातोंका पता तभी चल पाया है जब वास्तविक घटनाएँ सामने आई हैं।

१. रूस और जापानके युद्धमें; देखिए "रूस और भारत", पृष्ठ १३७-८।

२. देखिए "ट्रान्सवालके भारतीय और अनुमतिपत्र", पृष्ठ २०१-२।

स्वयं तब्दीलियोंके बारेमें, संघकी ओरसे निवेदन है कि उनका मंशा समाजको गहरी क्षति पहुँचाना ही है। यह समझ पाना कठिन है कि नाबालिगीकी उम्र और भी कम क्यों कर दी गई है। मेरा संघ आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करता है कि ब्रिटिश साम्राज्यके और किसी भी हिस्सेमें, जहाँ-कहीं माता-पिताओंको प्रवेशका अधिकार दिया गया है, १६ वर्षसे कम उम्रवाले बच्चोंका प्रवेश वर्जित नहीं है।

भारतीय समाजके लिए यह बात बहुत बड़ा महत्त्व रखती है कि अधिवासी भारतीयोंको अपने बच्चे साथ लानेमें किसी प्रकारकी बाधा या कठिनाई न हो। उदाहरणार्थ, यह बात समझमें नहीं आती कि तेरह या पन्द्रह वर्षके बालकको अपने माता-पिताके पास आकर रहने और उनकी संरक्षतामें शिक्षा प्राप्त करनेसे क्यों रोका जाये। मेरा संघ आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर भी दिलाता है कि यह नियम ट्रान्सवालकी गैर-एशियाई जातियोंपर लागू नहीं होता।

जहाँतक दूसरे परिवर्तनकी बात है, अबतक अनाथ बच्चोंको अपने अभिभावकोंके साथ आनेकी अनुमति थी। नये क़ानूनके अनुसार ऐसे बच्चोंको भी ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेसे रोका जायेगा। मेरे संघके लिए इस बातकी ओर ध्यान दिलाना जरूरी नहीं कि ऐसा नियम केवल मुसीबतें ही ढा सकता है।

तीसरे रद्दोबदलके बारेमें निवेदन है कि यदि आवासी मजिस्ट्रेटोंको जाँच-पड़तालका काम करना है तो उससे लगभग अनन्त विलम्ब होगा। ऐसे शरणार्थी भी हैं जिनकी अर्जियाँ पिछले नौ महीनेसे पड़ी हुई हैं, और यदि इस प्रकारके सभी प्रार्थनापत्र भिन्न-भिन्न जिलोंमें आवासी मजिस्ट्रेटोंको सौंपे जायेंगे, तो बहुत ज्यादा देर लग जायेगी। और फिर अगर प्रत्येक नगरका काम पृथक्-पृथक् उठाया जायेगा तो गवाहियाँ ली जानेकी विधिमें कोई एकरूपता न रह जायेगी।

मेरा संघ आगे निवेदन करता है कि जब गवाह लोग प्रिटोरियाके बाहरके निवासी हैं तब अगर सभी जगहोंके गवाहोंके बयान लेने और उनसे पूरी जिरह करनेके लिए एक ही अधिकारी नियुक्त किया जाये तो मामलोंका निपटारा बहुत कुछ शीघ्रतासे होगा और कार्य-विधिमें एकरूपता सुलभ होगी।

इसके अतिरिक्त मेरा संघ आपको यह बतलाना चाहता है कि यह देखते हुए कि लगभग ७५ फी सदी शरणार्थी जोहानिसबर्ग या उनके आसपासके जिलोंमें आकर बसेंगे, न्यायकी खातिर यह आवश्यक है कि जोहानिसबर्गमें अनुमतिपत्र चाहनेवालोंकी जरूरतें रफा करनेके लिए किसी-न-किसी अधिकारीको समय-समयपर वहाँ जाते रहना चाहिए। मेरे संघकी विनम्र सम्मतिमें, जहाँतक जोहानिसबर्गके शरणार्थियोंका सम्बन्ध है, केन्द्रीय कार्यालय भले ही प्रिटोरियामें रहे, लेकिन अनुमतिपत्र देने और अँगूठेका निशान लेनेका यान्त्रिक कार्य जोहानिसबर्गमें किया जाये।

इस प्रश्नके सम्बन्धमें कुछ भी मालूम नहीं हो पाया है कि भारतीय स्त्रियोंके पास अलगसे अनुमतिपत्र रहें या नहीं।

मेरा संघ निवेदन करता है कि इस आवेदनपत्रमें कही हुई बातें अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं, और वह विश्वास करता है कि उनपर समुचित ध्यान दिया जायेगा। सविनय निवेदन है कि उत्तर शीघ्र भेजा जाये।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७-२-१९०६

२००. पत्र : टाउन क्लार्कको

जोहानिसबर्ग
फरवरी १०, १९०६

सेवामें
टाउन क्लार्क
जोहानिसबर्ग

महोदय,

मेरे संघका ध्यान जोहानिसबर्ग ट्रामवे प्रणालीके प्रबन्धककी कुछ सिफारिशोंकी ओर आकर्षित किया गया है कि जो उन्होंने रंगदार लोगों द्वारा बिजलीकी ट्रामोंके उपयोगके सम्बन्धमें नगर-परिषदसे उसकी मंजूरीके लिए की है।

मेरे संघका खयाल है कि इन सिफारिशोंको करते वक्त प्रबन्धकने रंगदार लोगोंकी, विशेषतः ब्रिटिश भारतीय समाजकी, जिससे मेरे संघका सम्बन्ध है भावनाओका कोई ध्यान नही रखा है। मेरा संघ अनुभव करता है कि इन सिफारिशोंका उद्देश्य ब्रिटिश भारतीयोंकी जरूरतें पूरी करना नही है। यदि रंगदार नौकर अपने मालिकोंके साथ यात्रा करते समय ट्रामोंकी छतोंका उपयोग कर सकते हैं तो यह समझना बहुत कठिन है कि दूसरे रंगदार लोग उनका उपयोग क्यो नही कर सकते। विशेष ट्रामगाड़ियाँ चलानेका सुझाव व्यावहारिक नहीं है, क्योकि तब रंगदार लोगोंको उसी प्रकारकी सेवा उपलब्ध न रहेगी जिसका उपयोग यूरोपीय समाज करेगा। मेरे संघकी विनम्र सम्मतिमें यह सिफारिश बहुत ही अपमानजनक है कि मामूली ट्रामोके पीछे रंगदार लोगोके उपयोगके लिए और पार्सले ढोनेके लिए छकड़े जोड़ दिये जायें। मेरा संघ निवेदन करता है कि ट्रामोके उपयोगके संबंधमें ब्रिटिश भारतीयोंको वे ही सुविधाएँ प्राप्त करनेका अधिकार है जो जोहानिसबर्गकी दूसरी जातियोको प्राप्त हैं। साथ ही, मेरा संघ द्वेषभावके वर्तमान अस्तित्वको पूरी तरह स्वीकार करता है और इसलिए सुझाव देता है कि ट्रामोंका भीतरी भाग केवल यूरोपीयोंके लिए सुरक्षित कर दिया जाये। इससे छतें दूसरी जातियोंके लिए रह जायेंगी। असलमें तो, ट्रामगाड़ियोके भीतरी भागोंमें भी विभाग क्यो न बनाये जायें, इसका कोई कारण नहीं। किन्तु यदि वे न बन सकें तो, मेरे संघका विश्वास है, ऊपर दिया गया सुझाव नगर-परिषद द्वारा मंजूर कर लिया जायेगा। मैं यह उल्लेख कर दूँ कि इस समय जैसी स्थिति है, रंगदार लोग नगरपालिकाकी ट्रामोंका उपयोग करनेके लिए कानून द्वारा पूरी तरह स्वतन्त्र हैं। वे ट्रामोंका उपयोग नहीं करते, इसमें केवल उनकी सहनशीलता ही बाधक है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

महाप्रबन्धककी जिन सिफारिशोंका ऊपर उल्लेख किया गया है वे निम्नलिखित हैं:

१. रंगदार लोग जब घरेलू नौकर हों और अपने मालिक या मालकिनके साथ हों तो उनको उन्हीं गाड़ियोंमें यात्रा करने दी जाये जिनमें गोरे लोग करते हैं और यह

जरूरी कर दिया जाये कि वे गाड़ीकी छतपर बैठें और पीछेकी सीटका उपयोग करें जो हर जीनेके अखीरमें होती है, अर्थात् हर एक सिरेपर बनी चार सीटोंपर बैठें। उनसे किराया मामूली लिया जाये।

२. जहाँ किसी मार्गपर रंगदार लोगोंके लिए विशेष गाड़ियाँ फायदेके साथ चलानेके लायक काफी आमदरफ्त हो वहाँ एशियाई लोगोंको गाड़ियोंके भीतर और काफिरोंको बाहर बिठानेकी, या इसके विपरीत, व्यवस्था की जा सकती है। इसका प्रयोग अभी फोर्ड्सबर्ग और न्यूटाउनके मार्गोंपर किया जाये।

३. यदि बादमें यह मालूम हो कि विशेष गाड़ियोंको फायदेके साथ चलानेके लायक रंगदार लोगोंकी काफी आमदरफ्त नहीं है तो मामूली गाड़ियोंके साथ इकमंजिले छकड़े जोड़नेका प्रयोग किया जाये और ये छकड़ानुमा गाड़ियाँ और मामूली गाड़ियाँ, जो रंगदार लोगोंके लिए प्रयुक्त होंगी, पार्सलें बाँटनेके काममें भी लाई जायें। प्रस्ताव है कि यह काम किसी बादकी तारीखको आरम्भ किया जाये।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–२–१९०६

२०१. ईसाइयों और मुसलमानोंके सम्बन्धमें लॉर्ड सेल्बोर्नके विचार

लॉर्ड सेल्बोर्नने अभी हालमें गिरजेकी एक सभामें यह कहा बताते हैं:

ऐसा जान पड़ता है कि हमारी जातिके लोग दो बातें भूल जाते हैं और इसलिए वे धर्मकी जितनी परवाह वस्तुतः करते हैं उससे बहुत कम परवाह करनेके दोषी ठहराये जाते हैं। जो आचार उनके धर्मको व्यक्त करते हैं उनके बारेमें वे बहुत उदासीन रहते हैं। और उनको यह खुलेआम जतानेमें संकोच होता है कि वे हैं किस पक्षमें। ऐसा अक्सर हुआ है कि मेरे मित्र अपनी पूर्व यात्रामें मुसलमानोंकी धर्मनिष्ठासे प्रभावित हुए हैं। मुसलमान दिनमें खास वक्तपर जहाँ भी होता है, अपना मुसल्ला बिछा लेता है और घुटने टेककर नमाज पढ़ता है। मेरे मित्रने उसकी इसी बातपर कहा कि मुसलमान ईसाईसे बहुत ज्यादा अच्छा आदमी होता है। मेरे साथ ऐसी घटना अनेक बार हुई है। परन्तु उसके इस निष्कर्षका समर्थन तथ्योंसे नहीं होता। सम्भावना यह है कि मुसलमान अधिकांश ईसाइयोंसे बहुत ज्यादा बुरा आदमी हो; पर उसने एक बात पकड़ ली है, जिसे हम भूल जाते हैं; और वह है कि अगर किसीको दुनियामें अपना प्रभाव जमाना है तो उसे लोकमतसे नहीं डरना चाहिए और यह प्रकट करनेमें भी संकोच नहीं करना चाहिए कि वह किस पक्षमें है।

अगर परमश्रेष्ठके भाषणकी यह रिपोर्ट सही है, तो हमें खेदके साथ कहना पड़ता है कि वे एक बड़े अविवेकके दोषी हैं। "सम्भावना यह है कि मुसलमान ज्यादातर ईसाइयोसे बहुत ज्यादा बुरा आदमी हो", ऐसी बात सम्राटके प्रतिनिधिको सम्राटकी मुस्लिम प्रजाके बारेमें न कहनी चाहिये। अपने पदके कारण परमश्रेष्ठको भाषणकी वह स्वतंत्रता प्राप्त नहीं है, जिसका दावा उनसे कम हैसियतके लोग कर सकते हैं और उनके द्वारा प्रकट किये गये इस विचारसे

नवीके बहुतेरे अनुयायियोंको दुःख होगा। किन्तु अविवेक लॉर्ड सेल्वोर्नके सार्वजनिक भाषणोंकी विशेषता नहीं है और यह कहना ही उचित होगा कि शायद यह उनके भाषणकी सही रिपोर्ट नही है। शायद "संभावना यह है" के बजाय उन्होंने कहा हो कि "यह संभव है"। अगर पिछली बात सही है तो उनका कथन बिलकुल आपत्तिजनक नहीं है। बहरहाल अभीतक यह समाचार हमें नहीं मिला है कि परमश्रेष्ठने अपने वक्तव्यमें संशोधन किया है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–२–१९०६

२०२. ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय

ऐसे समय, जब कि किसीको आशा नही थी कि श्री दादाभाई नौरोजीको हमारे मामलोंपर ध्यान देनेकी जरा भी फुरसत होगी, उन्होंने हमारे पक्षमें जो चिन्ता दिखाई है उससे हमारे ऊपर उनके अहसानोंका भार और भी बढ़ गया है। पिछली डाकसे 'इंडिया' का जो अंक आया है उसमें वह पत्र फिर प्रकाशित हुआ है जो भारत-मन्त्री और उपनिवेश-मन्त्रीको एक साथ भेजा गया था। पत्रमें ब्रिटिश भारतीय संघके उस शिष्टमण्डलके[1] सम्बन्धमें विचार व्यक्त किये गये हैं जो कुछ समय पूर्व लॉर्ड सेल्वोर्नसे मिल चुका है। इससे हमें यह स्मरण हो आता है कि भारतका यह प्रहरी चुनावोंके भीषण संघर्षके बीचमें भी, दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंके हितोंके सम्बन्धमें जागरूक रहा है। उन्होंने दोनों मन्त्रियोंको पत्र भेजनेके लिए चुनाव-परिणामोंकी घोषणांका इंतजार नहीं किया, बल्कि जो अत्यल्प अवकाश पाया उसका भी एक भाग ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा अपनाये गये रुखका औचित्य बतानेमें लगाया। भारतके इस महान देशभक्तने अपने देशवासियोंकी हित-साधनाके लिए जो प्रयत्न किये हैं, हमारे लिए उनकी सराहनाका प्रयास करना व्यर्थ है, परन्तु हम दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंसे अनुरोध करते है कि वे श्री दादाभाईके कार्यमें सहायक होकर अपना तात्कालिक कर्त्तव्य पूरा करें। इसके लिए अपने संगठनकी त्रुटियाँ दूर करके वे अपनी उद्योग और एकताकी भावनाका और भी अधिक विकास करें, जिसके बिना श्री दादाभाईका समस्त कार्य ही विफल हो जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–२–१९०६

१. देखिए "शिष्टमण्डल : लॉर्ड सेल्बोर्नकी सेवामें", पृष्ठ १५०–५८।

२०३. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
फरवरी १३, १९०६

चि० छगनलाल,

मैंने तुम्हें कुछ दिन हुए कुमारी नायफ़लीसका नाम ग्राहकोंमें दर्ज करनेके लिए भेजा था। अगर अभीतक दर्ज न किया हो तो कर लेना। उनका पोस्ट ऑफिस बॉक्स ५८८९, जोहानिसबर्ग है। जनवरी १ से, सारे पिछले अंक भी उन्हें मिलने चाहिए।

मानजी एन० गेलानीने मुझे लिखा है कि उन्हें इस सालके दूसरे और तीसरे अंक नहीं मिले हैं। उन्हे हालमें पत्र नियमित रूपसे मिलता रहा है। इसलिए तुम उन्हे अंक दो और तीन भेजकर मुझे सूचित करना कि अंक भेज दिये हैं। उनका पता बॉक्स ११०, प्रिटोरिया है।

लन्दनके श्री रिचका पता बदलकर ४१ स्प्रिंगफील्ड रोड, सेंट जॉन्स वुड, लन्दन कर दिया जाये।

श्री नाजरके सामानकी बिक्रीका पैसा किसने अदा नहीं किया है, इसकी सूचना दो।[1]

मै आगेसे ऐसे परिवर्तनोंकी इत्तिला तुम्हें दूँ या उनके बारेमें हेमचन्दको लिखा करूँ? मै तुम्हे बहुत-से ऐसे यान्त्रिक कामकी जिम्मेदारीसे बरी करना चाहता हूँ, किन्तु ऐसा सावधानीके साथ करना चाहता हूँ। अगर अन्तमें ये हिदायतें हेमचन्दके पास जानेवाली हैं तो सीधे उसके पास भेजनेसे कुछ बचत होगी। तुम्हारा आजका मुख्य काम गुजराती सम्पादनकी देख-भाल, और जितने जल्दी बने हिसाबके खातेको बाकायदा करके रोकड़-बाकी निकालना और हर इमारतकी लागत जानना है। इमारतोंकी लागत जानकर आजतककी खतौनीको बाकायदा करनेके कामकी प्रगतिकी सूचना देना।

'इंडियन ओपिनियन' का यह अंक मैंने कल तुम्हें सुधार कर भेजा है। मै चाहता हूँ कि इन सब सुधारोंको सावधानीसे देखो और भविष्यमें उन्हें टालो। हमें चाहिए कि गुजराती-विभागको एकदम अद्वितीय बनायें और अगर इसके लिए हिसाबको छोड़कर केवल इसपर ही अपनी शक्ति तुम्हें लगानी पड़े तो सब कुछ छोड़कर इसीपर जुटना चाहिए। गुजरातीके केवल सात पृष्ठ हैं। ऐसा क्यो? अब गोकुलदास कितनी गुजराती कंपोजिंग कर पाता है? लगकर काम करता है? उससे कहो, मुझे लिखे।

श्री मदनजीतको २ पौंड १० शिलिंग देनेके तुम्हारे सुझावके बारेमें मेरी समझमें उन्हे उतना तो देना ही चाहिए और अगर वे हमसे सम्पर्क बनाये रखें तो ज्यादा भी दे सकते हैं। यदि वे ऐसा न करें तो कुछ भी देना असम्भव होगा। वे दूर हिन्दुस्तानमें काम कर रहे हैं, यह तो मै खूब समझ सकता हूँ, लेकिन उनके लेख 'ओपिनियन' में आने चाहिए। मैंने उनसे साफ कहा था कि उनसे पत्रको मदद पहुँचानेकी आशा रखी जायेगी। अगर वे ऐसा

१. देखिए "मनसुखलाल हीरालाल नाजर", पृष्ठ १८७–९०।

न करें तो मैं नहीं समझता, हम उन्हें कुछ भी देनेके लिए बँधे हैं। उन्होंने मुझे नहीं लिखा।

प्रिटोरियासे कल दो कागज भेजे है, जरूरत पड़े तो उन्हें छापना।[1]

तुम्हारा शुभचिन्तक,
मो० क० गां०

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
मारफत 'इंडियन ओपिनियन'
फीनिक्स

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३०७) से।

२०४. पत्र : टाउन क्लार्कको

२१-२४ कोर्ट चेम्बर्स
नुक्कड़, रिसिक व ऐंडर्सन स्ट्रीट्स
पो० ऑ० बॉक्स ६५२२
जोहानिसबर्ग
फरवरी १३, १९०६

सेवामें
टाउन क्लार्क
पो० ऑ० बॉक्स ३४४
क्रूगर्संडॉर्प

महोदय,

आपकी इसी महीनेकी १० तारीखकी चिट्ठी, संख्या २४९/६५५८/०६ मिली।

मुझे आशा है कि आप उपनियम मंजूर होते ही मुझको इत्तिला देंगे। इस बीच, जैसा मैं आपको सूचित कर चुका हूँ, मेरे मुवक्किलका भोजनालय चालू है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

क्रूगर्संडॉर्प नगर-परिषदके रेकर्ड्स से।

१. यह पंक्ति गुजरातीमें गांधीजीके हाथकी लिखी हुई है।

२०५. पत्र : कार्यवाहक मुख्य यातायात प्रबन्धकको

जोहानिसबर्ग
फरवरी १४, १९०६

[सेवामें]
कार्यवाहक मुख्य यातायात प्रबन्धक
जोहानिसबर्ग

महोदय,

श्री एम० एम० मूसाजीने मेरे संघको उस पत्र-व्यवहारकी प्रतिलिपियाँ दी हैं जो आपके विभाग और उनके बीचमें साढ़े आठ बजे जोहानिसबर्गसे रवाना होनेवाली गाड़ीके सम्बन्धमें हुआ है।

आपने श्री मूसाजीको इत्तिला दी है कि "रंगदार यात्रियोंको साढ़े आठ बजे प्रिटोरियासे जोहानिसबर्ग जानेवाली गाड़ीसे यात्रा करनेकी इजाजत नही है।" और मेरा खयाल है, वापसी यात्रापर भी यही बात लागू होती है।

इस इत्तिलासे मेरे सघको आश्चर्य भी हुआ है और दुःख भी। यह मनाही भारतीय व्यापारी समुदायके लिए अधिकारका ऐसा अपहरण है जिससे उसकी गतिविधिमे गम्भीर बाधा पड़ेगी। आम भारतीय समाजके लिए यह अत्यन्त अपमानजनक है।

मेरा संघ इस परिणामपर पहुँचे बिना नही रह सकता कि एक बड़े प्रशासन द्वारा स्थानीय लोगोके द्वेषभावकी तृप्तिकी इस पद्धतिके फलस्वरूप रगदार लोगोंकी स्थिति बिलकुल असहनीय हो जायेगी। यदि आप मुझे यह बतानेकी कृपा करेंगे कि क्या आपका इरादा यही है, तो मेरा सघ कृतज्ञ होगा, और यदि ऐसा हो तो क्या आप कृपया मुझे यह बतायेंगे कि यह रोक किस कानून या कायदेके मुताबिक लागू की गई है। प्रसंगवश मुझे यह कहनेकी इजाजत दी जाये कि जिस तरीकेसे समय-समयपर ऐसे प्रतिबन्धक नियम सम्बन्धित समाजके इस भागपर किसी चेतावनी या सूचनाके बिना लगा दिये जाते हैं उससे बहुत खीज और असुविधा होती है। मेरे संघका खयाल है कि ब्रिटिश भारतीयोंको उन कानून-कायदोंकी जानकारी पहलेसे पानेका हक है जो उनके सम्बन्धमें बनाये जायें।

मैं उत्तर शीघ्र देनेकी प्रार्थना करता हूँ।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, २४–२–१९०६

२०६. 'लीडर' को जवाब

जोहानिसबर्ग
फरवरी १६, १९०६

सेवामें
सम्पादक
'लीडर'

महोदय,

मेरे देशबन्धुओं द्वारा ट्रामोंके उपयोगके प्रश्नपर मेरे संघने टाउन क्लार्कको जो पत्र[1] भेजा है उसके विषयमें आपने छोटा-सा अग्रलेख लिखा है। उसपर मैं चन्द बातें कहनेकी स्वतन्त्रता लेता हूँ। आपने क्रोधमें लिखा है और धमकियोंका प्रयोग किया है। मैं ये दोनों बातें नहीं कर सकता; परन्तु आपके सामने कुछ तथ्य रखनेकी धृष्टता करूँगा — आप चाहे उन्हें मानें, चाहे उनका निराकरण कर दें:

(१) मेरे संघने कभी दावा नहीं किया कि सब भारतीयोंको ट्राम गाड़ियोंका उपयोग करने देना चाहिए। इस अधिकारका दावा तो सिर्फ उन्हींके लिए किया गया है जो अच्छे और स्वच्छ वस्त्र पहनते हों।

(२) भारतमें जो भी स्थिति हो, मुझे आपके सामने यह प्रदर्शित करनेकी जरूरत नहीं कि कोई आदमी पैदाइशी "कुली" नहीं होता; और जहाँतक ट्राम गाड़ियोंके उपयोगका सवाल है, मुसाफिरोंकी वेशभूषा ही उसकी कसौटी हो सकती है।

(३) ट्रामोंके प्रश्नपर दो जातियोंके बीच बराबरीका सवाल उठाना क्या आपको निरर्थक नहीं लगता?

(४) मेरे संघने जोर देकर अस्वीकार किया है कि अत्यधिक सुसंस्कृत भारतीयोंसे भी अनिच्छुक यूरोपीयोंका, चाहे वे कोई हों, सम्पर्क स्थापित करानेका उसका कोई इरादा है; और इसीलिए उसने सुझाव रखा है कि गाड़ियोंका भीतरी भाग केवल यूरोपीयोंके लिए सुरक्षित कर दिया जाये। उसका दावा है कि जो भारतीय अच्छी पोशाकमें हों, वे गाड़ियोंकी छतोंका उपयोग "असमानता" के पवित्र सिद्धान्तका उल्लंघन किये बिना, वाजिब तौरसे कर सकते हैं।

(५) मेरे संघने सहनशीलताकी जो बात कही है वह बिलकुल तर्कसंगत है। जैसा कि मेरे संघको बताया गया है, "जनताकी इच्छा", जहाँतक वह कानूनके रूपमें परिणत की गई है, भारतीयोंको ट्रामगाड़ियोंपर चढ़नेके अधिकारका दावा करनेकी छूट देती है इसलिए यह दावा कानून-सम्मत होनेके कारण "बेहूदा" नहीं समझा जा सकता।

इस बारेमें क्या मैं आपसे कुछ सवाल पूछ सकता हूँ? क्या ट्रान्सवालके गोरोंके लिए केप टाउन या नेटाल जाते ही रंगदार लोगोंके साथ ट्रामपर चढ़ना तर्कसम्मत हो जाता है? क्या यह तर्कसंगत है कि रंगदार नौकर, जो "ऊँची जातियों" के न हों, इन शब्दोंका चाहे जो भी मतलब हो, ट्रामगाड़ियोंपर चढ़ें? क्या यह तर्कसम्मत है, जैसा कि नगर-परिषदकी बैठकमें श्री साउटरने कहा, कि टट्टू गाड़ियोंकी सवारी करनेवाले गोरे रंगदार कोचवानोंकी बगलमें बैठें?

१. देखिए "पत्र : टाउन क्लार्कको", पृष्ठ १९४–५।

हीरक जयन्तीके अवसरपर उपनिवेशोंके प्रधान मन्त्रियोंके सम्मेलनमें[1] श्री चेम्बरलेनने जिस नीतिकी रूपरेखा बताई थी, वही मेरे संघके दावेका आधार है। परम माननीय महानुभावने कहा था:

> हम आपसे यह भी कहते है कि आप अपने मानसमें उस साम्राज्यकी, जो किसी प्रजाति या रंगके पक्ष या विरोधमें कोई भेद नहीं करता, परम्पराओंका ध्यान रखें। और सम्राज्ञीकी सम्पूर्ण भारतीय प्रजाओंको, या सम्पूर्ण एशियाइयोंको ही, उनके रंग या जातिके कारण, बहिष्कृत करना उन लोगोंके लिए एक ऐसा अपमानजनक कार्य होगा कि सम्राज्ञीके लिए उसपर स्वीकृति देना अत्यन्त व्यथाजनक हो जायेगा। . . . यह बात नहीं कि कोई आदमी हमसे भिन्न रंगका होनेके कारण ही आवश्यक रूपसे अवांछनीय आव्रजक है, बल्कि वह तो इसलिए अवांछनीय है कि वह गन्दा है या दुराचारी है, या कंगाल है, या उसमें कोई ऐसी आपत्तिजनक बात है जिसकी किसी संसदीय अधिनियमके अनुसार व्याख्या की जा सकती है और जिसके द्वारा उन सब लोगोंके सम्बन्धमें, जिन्हें आप वस्तुतः अलग रखना चाहते हैं, पृथक्करणकी व्यवस्था की जा सकती है।

आपका, आदि,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष,
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, २४–२–१९०६

२०७. ट्रान्सवालके भारतीय और अनुमतिपत्र

निश्चय ही ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीयोंकी दशा बड़ी ही अनिश्चित और दुःखपूर्ण है। हम दूसरे स्तम्भमें एक पत्र[2] प्रकाशित करते है जो ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्षकी ओरसे ट्रान्सवालके उपनिवेश-सचिवको भेजा गया है। इसे पढ़कर बहुत दुःख होता है। भारतीयोंके अनुमतिपत्र सम्बन्धी नियम समय-समयपर बदले जाते रहे हैं और इससे उनको बड़ी असुविधाएँ हुई हैं। लेकिन नये परिवर्तन बिलकुल आकस्मिक और रहस्यमय है। उपर्युक्त पत्रमें जिन नियमोंका हवाला दिया गया है वे, श्री अब्दुल गनीके कथनानुसार, भारतीय समाजपर किसी पूर्व सूचनाके बिना ही थोप दिये गये है और, अगर श्री अब्दुल गनीको प्राप्त जानकारी सही है तो, ये सभी भारतीयोंपर लागू होंगे। इसका नतीजा यह होगा कि जो लोग ऐसे किन्हीं नियमोंकी जानकारीके बिना दक्षिण आफ्रिकामें आ गये है उनपर बहुत विपरीत प्रभाव पड़ेगा। उनको शायद न नेटालमें कोई संरक्षण मिलेगा और न केपमें ही। वे ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेके निश्चित इरादेसे आये होंगे और यदि ये नियम लागू किये गये और गत कालसे प्रभावकारी समझे गये तो उनसे सम्बन्धित लोगोंको बीमारी, मुसीबत, खर्च और परेशानीका सामना करना पड़ेगा। एक

१. १८९७ में, देखिए खण्ड २, पृष्ठ ३९१।
२. देखिए "पत्र : उपनिवेश-सचिवको", पृष्ठ १९२–३।

ब्रिटिश उपनिवेश या अधीनस्थ राज्यमें कमसे-कम इतनी उम्मीद तो की ही जाती है कि कानून काफी सोच-विचार और उचित चेतावनीके बाद बनाये जायेंगे। केप और नेटालके स्वशासित उपनिवेशोंमें भी, जब प्रवासी-प्रतिबन्धक कानून पास किया गया, तब सम्बन्धित लोगोंको काफी पहले चेतावनियाँ दी गई और कानून बन जानेके बाद भी वह तुरन्त सख्तीके साथ लागू नहीं किया गया। दोनोंमें जहाजी कम्पनियोंको और उस कानूनसे प्रभावित समाजको कानूनका अमली रूप समझनेका समय दिया। केपके अधिकारियोंने कहीं अब जाकर, अर्थात् पास होनेके दो साल बाद, सूचना दी है कि अब उनका इरादा कानूनपर पूरे तौरसे अमल करनेका है। परन्तु जाहिर है कि ट्रान्सवालमें अधिकारी उतावलीसे काम करनेमें विश्वास रखते हैं। शान्ति-रक्षा अध्यादेश सैनिक कानूनके समयका अवशेष है, इसलिए वह सरकारको स्वच्छन्द सत्ता प्रदान करता है। युद्धकालमें तो ऐसी सत्ताका प्रयोग प्रायः उचित ठहराया जाता है, परन्तु जब ट्रान्सवालमें शान्ति है, तब एक निरापद समाजके विरुद्ध उस अध्यादेशका उक्त पत्रमें वर्णित ढंगसे प्रयोग करना ब्रिटिश संविधानसे सम्बद्ध तरीकोंके अनुकूल नहीं है। उसमें रूसी तरीकोंका आभास मिलता है। खुद नियमोंको कसौटीपर कसा जाये तो वे निस्सन्देह कष्टप्रद हैं। ऐसा लगता है कि बच्चोंकी नाबालिगीकी उम्र एकाएक घटाकर बारह सालसे भी नीचे कर दी गई है और अब आगे वे अनाथ, जिनके रिश्तेदार ट्रान्सवालमें बसे हों, ट्रान्सवालमें बिलकुल प्रवेश न करने पायेंगे। इसके अतिरिक्त नियमोंके अनुसार, किसी शरणार्थीके दावेके समर्थनमें जो गवाह पेश किये जायेंगे उनकी जाँच एक ही अधिकारीसे करानेके बजाय, अब यह अधिकार विभिन्न जिलोंके मजिस्ट्रेटोंको हस्तान्तरित कर दिया गया है। जाँचकी कार्रवाई पूरी हो जानेके बाद भी, अनुमतिपत्र प्राप्त करनेके मामूली कामके लिए, सब शरणार्थियोंको प्रिटोरिया जाना होगा। अभी उस दिन परमश्रेष्ठ लॉर्ड सेल्बोर्नने भारतीय शिष्टमण्डलसे कहा था कि सभी प्रतिबन्धात्मक कानून उचित होने चाहिए। वे तभी स्वीकार करने योग्य और प्रभावकारी हो सकते हैं। जैसे ये कानून हैं वैसे कानून क्या कभी उचित माने जा सकते हैं, भले ही हम कितनी ही खींचतान क्यों न करें?

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–२–१९०६

२०८. जोहानिसबर्गकी ट्रामें और भारतीय

अन्यत्र वह पत्र[1] छापा जा रहा है जो ब्रिटिश भारतीय संघ, जोहानिसबर्गके अध्यक्षने टाउन क्लार्क, जोहानिसबर्गको लिखा है। वह रंगदार लोगों द्वारा बिजलीसे चलनेवाली ट्रामोंका उपयोग करनेके सम्बन्धमें प्रस्तावित विनियमोंके विषयमें है। हमें श्री अब्दुल गनीकी दलीलका समर्थन करनेमें कोई हिचकिचाहट नहीं है। महाप्रबन्धकने जो सिफारिशें की हैं वे बिलकुल मनमानी हैं, और इस बातसे कि उन्हें अस्थायी रूपसे वापस ले लिया गया है, भारतीयोंको सुरक्षाकी झूठी भावनामें पड़कर शिथिल नहीं हो जाना चाहिए। वे इसलिए नहीं वापस ले ली गई हैं कि नगर-परिषदको जनरल मैनेजरकी अपेक्षा भारतीयोंका अधिक लिहाज है, बल्कि इसलिए कि, जैसा कहा जाता है, अभी उनके लिए समय ही उपयुक्त नहीं है — क्योंकि अभी कुछ समय तक ट्रामें चलेंगी ही नहीं। जोहानिसबर्ग या अन्य स्थानोंमें सार्वजनिक ट्रामोंके उप-

१. देखिए "पत्र : टाउन क्लार्कको", पृष्ठ १९४–५।

योगका सवाल सिर्फ भावनाका सवाल नहीं है, बल्कि उसका आर्थिक महत्त्व भी है। भारतीय व्यापारियों और दूसरे रंगदार लोगोंका सार्वजनिक वाहनोंपर वही अधिकार है जो जोहानिसबर्गके किसी भी दूसरे समाजका है। वे देशका अंग हैं; करदान इत्यादिके रूपमें उनसे भी नागरिकताका भार-वहन करनेको कहा जाता है, और जोहानिसबर्ग नगरपालिका, नगरपालिकाकी ट्रामोंका उपयोग करनेके अधिकारसे उनको वंचित करनेमें कठिनाई महसूस करती है। जो भी नियम बनाये जायेंगे उनपर लेफ्टिनेंट गवर्नरकी मंजूरी लेनी होगी; और हमें आशा है कि जिन नियमोंकी ओर हमने सार्वजनिक ध्यान आकर्षित किया है वे अगर परमश्रेष्ठके पास भेजे ही गये तो वे उन्हें नामंजूर करनेके अपने विशेषाधिकारका प्रयोग करनेमें हिचकिचायेंगे नहीं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–२–१९०६

२०९. पत्र : छगनलाल गांधीको

[जोहानिसबर्ग]
शनिवार, फरवरी १७, १९०६

चि० छगनलाल,

थोड़ी गुजराती आज भेज रहा हूँ। और कल भेजी जायेगी। जहाँतक बनेगा, हर हफ्ते "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी" भेजूँगा। उसका स्थान तो एक ही रखना ठीक होगा। जहाँतक बने, गुजराती विभागके हिस्से कर लेने चाहिए और हमेशा हर जगह उसी किस्मके लेख आयें, ऐसा प्रयत्न करना चाहिए।

तुम हफ्तेमें एक दिन कहीं बाहर जानेके लिए जरूर रखो, जिससे उस स्थानका पत्र भी दिया जा सके। मुझे हर हफ्ते एक पत्र अवश्य तफसीलवार लिखा करो। हेमचन्द कैसा चल रहा है?

सारी गुजराती सामग्री ढंगसे सुधारी जाये। नेटालके 'गजट' से जायदादोंकी विज्ञप्ति भी किसी हफ्तेमें नहीं चूकनी चाहिए।

तुमने जो गुजराती टाइप मँगाया है, वह कितना मँगाया है, सो लिखना। यानी कितने पृष्ठ बढ़ाये जा सकेंगे? अगले वर्ष १२ पृष्ठ दे सकने योग्य टाइप हमें चाहिए। इस हिसाबसे यदि और आवश्यकता हो, तो मुझे सूची भेजना, ताकि टाइप मँगाया जा सके।

ब्रायन गैब्रियलके बारेमें पत्र पढ़ा होगा। मेरा खयाल है कि वह आये तो ठीक होगा।

तुम उर्दूकी बात ध्यानमें रखना। कम्पोज करनेमें तुम्हारी आँखोंको तकलीफ हो तो बिलकुल मत करना।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस०एन० ४३१०) से।

२१०. पत्र : छगनलाल गांधीको

[जोहानिसबर्ग]
रविवार, फरवरी १८, १९०६

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। कल सामग्री भेजी है। आज भी भेज रहा हूँ। मैंने "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी" भेजी है। उसमें "रायटरके तारसे जान पड़ता है कि . . . " यहाँसे अलग शीर्षक देना। "रायटरके तार-समाचार" — इस स्तम्भमें जितना बनेगा, उतना हर हफ्ते दूँगा। तुम उसमें और जोड़ सकते हो। "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी" तो अलग ही दूँगा, और जहाँतक होगा उसमें केवल स्थानीय समाचार ही दूँगा। ऐसे पत्रोंके लिए मैंने दूसरी जगह भी लिखा है।

हेमचन्दको मैंने नहीं लिखा, यह ठीक हुआ। उसका वही पूरा उपयोग करना। और मैं भी उसे लिखूँगा। तुम्हारे नीचे एक आदमी चाहिए ही, और वह समझदार होना चाहिए। हेमचन्द कुछ बिगाड़े, तो उसकी फिक्र नहीं, किन्तु तुम उसपर जिम्मेदारी डालते रहना। अपने ऊपर बहुत बोझा पड़े तो हमें अपने कामोंमें पहले कौन-सा काम करना है, उसके बाद कौन-सा काम करना है — इस प्रकार विचार कर देखना चाहिए; फिर जितना बने उतना करना चाहिए। यदि ऐसा विचार करोगे, तो सब सरल हो जायेगा। तब, पहले तो तुम्हें गुजराती अखबार सुधारना है। वह तुम्हारा ही काम है। दूसरा है हिसाब, वह भी तुम्हें ही सँभालना है। तीसरा, वसूली; चौथा, फुटकर छपाईका काम (जॉब); पाँचवाँ, फिलहाल गुजराती [टाइप] केसोंको बन्द रखना, हालाँकि इसका खयाल हमेशा रखना है। उर्दू फिलहाल छोड़ देना। तुम्हें अपनी जमीनके लिए अमुक समय देना ही चाहिए। वसूली तथा दूसरा जो भी काम हो, उसके लिए तुम्हें दो दिनसे अधिक जाना ही नहीं है। फिलहाल पैसेकी आमदकी तरफ ध्यान नहीं देना है। हिसाब नियमित हो जानेपर ही दूसरा कुछ करनेका विचार करना है। गुरुवार प्रूफके लिए, तथा मंगल और बुध केवल अध्ययन करने और गुजराती लिखनेमें लगाओगे तो ठीक होगा। सोमवार तथा शुक्रवार या शनिवार गाँवमें जानेके लिए रखो, तो काम चल सकेगा। फिलहाल एकदम परगाँव न जा सको, तो चिन्ता नहीं। बाहरके अखबारोंमें से तुम थोड़ा अनुवाद करो, तो काम चलेगा। तुम्हें मुख्य खबरें नेटालकी देनी चाहिए। वे मेरे देखनेमें नहीं आतीं। वहाँकी स्थानीय खबरें आयेंगी तो ठीक होगा। यहाँकी खबरें और अखबारोंके अनुवाद मैं भेजता रहूँगा। विशेष खूबी सामग्रीके संयोजनमें है। बने तो केवल बुधवार ही अध्ययनमें लगाओ, तो भी काम चल जायेगा। या, मैं भूल रहा हूँ, तुम सोमवार दो तो अच्छा। क्योंकि सोमवारको जब टाइपका वितरण (डिस०)[1] हो तब तुम सामग्रीसे लैस हो सकते हो। ज्यादा कामसे बिलकुल घबराना नहीं है। तुमने सबके सामने अपनी बातें रख दीं, यह अच्छा किया। बिना माँगे माँ भी रोटी नहीं देती। उनसे कहोगे तो करेंगे।

छापाखानेकी जमीन साफ रखने और वह भी अपने ही हाथसे साफ करनेकी मैं बड़ी ही जरूरत समझता हूँ। छापाखानेके समयके बाद भी यदि आधा घंटा दिया जाये, तो ठीक। यदि दूसरे समय न दें, तो तुम भाइयोंको ही देना है। हेमचन्द देगा, और उसे मैं लिखूँगा। वेस्ट भी देंगे। सैमसे और भी बात करके उसके गले उतारना। वीन रफ्ता-रफ्ता ही इसे समझेंगे। यह काम तुरन्त शुरू होनेकी आवश्यकता मानता हूँ।

१. डिस्ट्रिब्यूशन, अर्थात् टाइप-अक्षरोंको उनके विभिन्न खानोंमें बाँटनेका काम।

मैं अब भी इस रायपर निश्चित हूँ कि फुटकर काम छोड़ दिया, उसीमें अच्छा है। और तुम प्रेसमें हो, यह ठीक है। अब चूंकि फुटकर कामकी चिन्ता नही रही इसलिए दफ्तरमें आदमी न हो, उसकी भी चिन्ता नही रही। वतनियोके बदले जहाँतक बने, भारतीय हो, तो ठीक मानता हूँ। फिर भी जैसा ठीक हो, वैसा ही करना। उसमें मेरी अक्लपर निर्भर न रहना। श्री आइजकको समझाऊँगा।

श्री ब्रायनके बारेमें जैसा तुम कहते हो वैसा ही मेरे मनमे भी है। यदि वे आयें, तो फिलहाल तो कम्पोजिंगका काम ही करे। तुम आनन्दलालसे भी दिक्कतोकी पूरी बात करना और उससे हमदर्दी प्राप्त करना। उसकी सलाह भी लेना। उससे वह खुश भी रहेगा। मन खुला रखना।

कालाभाईको अभीतक कमरा न मिला हो, तो तुरन्त ही प्रबन्ध करना।

विज्ञापन हमारे हाथसे निकल गया, उसके बारेमें जाँच-पड़ताल करूँगा।

तुम्हारे जूते इत्यादिकी खोज कल (सोमवारको) करूँगा। बाहरके पत्रोको पढ़कर व्यवस्था करनेका काम हेमचन्दको ही सौंपना। वीरासामीसे कहना कि मुझे हुक्म अभीतक नही मिला। जैसे ही मिला, मैं तुरन्त भेजूंगा।

अब मुझे लिखनेको नही बचता। तुम वेस्टके साथ विशेष रूपसे मिलना। पहले तुम दोनोको एक-जी हो जाना है; क्योकि तुम दोनों ही योजनाको ज्यादा समझते हो। आनन्दलालको, जैसे बने, अपने साथ मिलाना। सैमको समझाना और बीनपर धीरे-धीरे सिंचन करना। वे मुझे चाहते है। योजना नही समझते। भले आदमी है, इसलिए छोड़ते नही है। पैसेकी तरफ ज्यादा ध्यान है, क्योकि उनमें सच्ची सादगी नही है। फिर भी पैसेके लिए मरते हो, सो नही। वे आगे चलकर अच्छा करेंगे। हमेशा हर हफ्ते कमसे-कम एक पत्र नियमित लिखते रहना, जिसमें तुम्हारे मनकी सब बातें हों।

मोहनदास

[पुनश्च]

मेरा इस महीनेमें आना सम्भव नहीं होगा।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस०एन० ४७८३) से।

२११. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
फरवरी १९, १९०६

चि० छगनलाल,

चर्चापत्र वापस भेज रहा हूँ। सभीके ऊपर टीपें लिख दी हैं। उन्हें देखना। वली मुहम्मद हालीका उन्हींसे सम्बन्धित पत्र पोरबन्दर भेज देना और उन्हे लिखना कि ऐसा पत्र 'ओपिनियन' में नहीं छापा जाता; फिर भी तुमने उसे पोरबन्दरके निदेशक (डायरेक्टर) को भेज दिया है। सारे पत्र मेरे पास देखनेके लिए भेजना जरूरी नही है। उनमें से जिन पत्रोंमें शंका हो, केवल वही मुझे भेजे जायें।

प्राय: नीचेके नियमोंका पालन पर्याप्त होगा :

(१) जो अपने विरोधमें हों उनको छापनेकी परिपाटी रखना — जैसे हबीब मोटनका, हाजी हबीबका।

(२) लम्बे व्याख्यानोंसे डरना।

(३) लिखनेवालेपर ध्यान रखना। उसकी सामग्री लेनी ही चाहिए, ऐसा लगे और वह लम्बी हो, तो संक्षेप करना।

(४) स्थानीय समाचारोंके पत्र लेना।

नाईके टंटेसे[1] सम्बन्धित पत्रोंको लेनेके लिए मैंने इसलिए लिखा कि वह बात डंडीके लोगोंके लिए उपयोगी है। उसे एकदम बन्द करना ठीक नहीं।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस०एन० ४३११) से।

२१२. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
फरवरी २१, १९०६

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। रेलवे नोट नहीं मिला। केप टाउनके विज्ञापन जायें, तो कोई हर्ज नहीं। मैं उन्हें लिखता हूँ। श्री नाजरका बाकी सामान पड़ा है। उसकी बाबत मोतीलालसे मिलकर फैसला करना। भट्ट और आदमजी सेठको भी लिखता हूँ। 'ओपिनियन' के लिए पढ़नेका काम बुधवारको फीनिक्समें रखना अधिक ठीक मानता हूँ। उससे तुम बुधवार तक की सामग्री पढ़ सकोगे। लिखने योग्य जो बात पढ़नेमें आये उसे एक कागजपर टाँक लिया जाये और लिखने और समाचारपत्रोंको पढ़नेका काम बुधवारसे ही शुरू किया जाये। ऐसा विभाजन करनेसे, मेरा खयाल है, ठीक होगा। सोमवार अथवा मंगलवार और शनिवार गाँवके लिए रखना ठीक जान पड़ता है। बुध, गुरुके सिवा दूसरे दिनोंमें मेरे लिखे हुए के सिवा कुछ दूसरा, विशेषकर 'ओपिनियन' के लिए, न पढ़नेका नियम रखनेसे तुम बहुत समय बचा सकोगे, ऐसा लगता है। अब हिसाब-किताबकी स्थिति कैसी है?

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्च]

तुम्हारे जूते और कपड़े बहुत करके आज अब्दुल गनी सेठके हाथ भेजूँगा। हेमचन्द तुम्हारे अथवा आनन्दलालके साथ रहे, तो बहुत अच्छा।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस०एन० ४३१२) से।

१. एक यूरोपीय ग्राहकके आ जानेसे डंडीके एक भारतीय नाईने एक भारतीय व्यापारीकी हजामत अधूरी छोड़ दी। इसपर वहांके भारतीय समाजने उस नाईका बहिष्कार करनेका निश्चय किया।

२१३. दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीय[1]

ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें ब्रिटिश भारतीयोंके सम्बन्धमें वक्तव्य

जोहानिसबर्ग
फरवरी २२, १९०६

चूँकि नई सरकार आ गई है, राज्याज्ञा वापस ले ली गई है और ट्रान्सवाल तथा ऑरेंज रिवर उपनिवेशके लिए एक नया शासन-विधान तैयार किया जा रहा है, इसलिए मुझे भारतीय प्रश्नको नई सरकारके समक्ष प्रमुख ढंगसे प्रस्तुत करना अत्यावश्यक प्रतीत होता है।

ऐसा लगता है कि निषेध-सम्बन्धी अधिकार सम्राटके लिए सुरक्षित रखे जाने तथा किसी भी प्रकारके वर्गीय कानूनको सम्राटकी स्वीकृतिके लिए उठा रखनेसे सम्बन्ध रखनेवाली साधारण धाराएँ पर्याप्त नहीं हैं। यह देखते हुए कि रंगदार लोगोंके विरुद्ध तीव्र द्वेषभावना — इतनी तीव्र कि लगभग सनक जैसी — फैली हुई है, इन दकियानूसी कानूनोंसे, जो भूले-भटके ही कार्यान्वित किये जाते हैं, काम चलनेका नहीं। अगर ब्रिटिश भारतीयोंकी रक्षाका उचित खयाल रखे बिना उत्तरदायी शासन-व्यवस्था स्वीकृत कर दी गई तो उसके अन्तर्गत उनकी दशा आजकलकी अपेक्षा कहीं बदतर हो जायेगी।

नेटालका अनुभव बतलाता है कि [किसी स्वशासित समाजमें किसी वर्ग विशेषको मताधिकारसे वंचित रखनेका अर्थ उसको पूर्ण रूपसे मिटा देना है।] केवल वे ही सदस्य चुने जाया करते हैं जो मतदाताओंकी भावनाओंका प्रतिनिधित्व करते हैं। इसलिए ब्रिटिश भारतीयोंको कुछ प्रभावकारी प्रतिनिधित्व देना होगा या वहाँ रहनेवाले भारतीयोंके नागरिक अधिकारोंका दूसरे ढंगसे पूर्ण संरक्षण करना होगा।

ट्रान्सवालमें स्थिति दिनपर-दिन बिगड़ती जा रही है। परवाना-सम्बन्धी प्रतिबन्ध केवल भारतीयोंपर ही लागू किये जा रहे हैं और, जैसा कि 'इंडियन ओपिनियन' के पृष्ठोंसे प्रकट होगा, वे बहुत ही ज्यादा कष्टकर हैं।

रेलवे प्रशासनने रंगदार लोगोंके लिए मनाही करना शुरू कर दिया है कि कुछ रेलगाड़ियोंसे वे कतई यात्रा न करें। जिन ब्रिटिश भारतीय व्यापारियोंको रेलगाड़ियोंके इस्तेमालकी आवश्यकता निरन्तर पड़ा करती है, उनके हकमें इस निषेधका क्या अर्थ होगा, इसकी कल्पना सहज ही की जा सकती है। जोहानिसबर्ग बड़े-बड़े फासलोंवाला स्थान है। वहाँ बिजलीकी ट्रामगाड़ी अभी हालमें ही चालू की गई है। रंगदार लोग, जिनके लिए घोड़ागाड़ियोंका किराया चुकाना मुश्किल है, व्यवहारतः इन ट्राम-गाड़ियोंका इस्तेमाल नहीं कर पाते।

१. यह वक्तव्य गांधीजी द्वारा श्री दादाभाई नौरोजीको भेजा गया था और उन्होंने उसकी एक प्रति भारत-मंत्रीको २० मार्चको प्रेषित की थी।

ये मामले भावुकता-रंजित नहीं है, बल्कि ऐसे है जिनका ब्रिटिश भारतीय समाजपर गहरा असर पड़ता है। अगर सम्राटकी सरकार द्वारा कोई दृढ़ कार्रवाई नहीं की जाती तो घटनाओंके मौजूदा रफ्तारसे चलते रहनेका नतीजा यह होगा कि बोअर-शासन व्यवस्थाके अन्तर्गत जो-कुछ भी थोड़ी-बहुत सुविधा उन्हें सुलभ थी, जाती रहेगी। जायदादकी मिल्कियतके बारेमें निषेधाज्ञा, विशेष पंजीकरणका तीन पौंडी कर, पैदल-पटरी नियम इत्यादि अब भी ट्रान्सवालके विधि-ग्रन्थको विरूप कर रहे है।

जहाँतक ऑरेंज रिवर कालोनीकी बात है, वहाँ उन भारतीयोंको छोड़कर, जो घरेलू नौकरी कर रहे हैं, अन्य किसी भी भारतीयके प्रवेशको वर्जित करार देनेवाला पुराना कानून आज भी प्रचलित है और समूचे उपनिवेशमें ऐसे उपनियम गढ़े जा रहे हैं जो उस उपनिवेशमें रहनेवालोंकी गतिविधिपर और अधिक प्रतिबन्ध लगानेवाले हैं।

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काइव्ज़ : एल०जी०फाइल संख्या ९२-९४; एशियाटिक्स (१९०२-१९०६)

२१४. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
फरवरी २२, १९०६

चि० छगनलाल,

मैंने पिछले हफ्ते श्री किचिनको एक चिट्ठी[1] भेजी थी; उसके जवाबमें उनका पत्र मिला है। उन्होंने त्यागपत्र दे दिया है और वे अगले महीनेके अन्तमें सम्पादकीय विभागसे अलग हो जायेंगे। मैंने श्री वीनको एक चिट्ठी लिखी है; मेरा खयाल है, वह चिट्ठी तुम पढ़ोगे। फिर भी मैं चाहता हूँ कि तुम श्री किचिनसे सम्पर्क बनाये रखो, क्योंकि उनके पास बहुत-सी बातें सीखनेकी है। मैंने उनका पत्र तुम सबको दिखानेकी इजाजत उनसे माँगी है— यदि हुआ तो तुम वह पत्र देखोगे ही।

श्री उमर यहाँ है। वे कहते है डेलागोआ-बेके पास माबेलीके कुछ ग्राहकोंको अखबार नियमित नहीं मिलता, एक ही बारमें कई अंक मिल जाते हैं। ऐसा क्यों होता है, जानते हो?

नीचे दिये गये लोगोंके नाम नये ग्राहकोंमें लिख लो — श्री इब्राहीम अब्दुल्लाकी पेढ़ी, बॉक्स २८ डेलागोआ-बे; श्री अब्दुल गनी मूसा, अमरेली, काठियावाड़, भारत। मेरा खयाल था कि जिसका पहले नाम लिया, वह पेढ़ी ग्राहक है ही किन्तु श्री उमरका कहना है कि वह ग्राहक नहीं है। इन दोनोंका पैसा तुम्हें श्री उमर डर्बनसे लौटनेपर देंगे।

केप टाउनके श्री गुलका पत्र आया है। वे चाहते हैं कि मैं उन्हें केप टाउनकी सूची भेज दूँ, ताकि वे वहाँ वसूली कर सकें। ग्राहकोंकी सूची पतेके साथ और विज्ञापनदाताओंकी सूची उनपर जो रकम निकलती है, उसके उल्लेखके साथ मेरे पास भेजो।

१. यह उपलब्ध नहीं है।

तुम्हारा भेजा हुआ पत्र-व्यवहारका दस्ता मिला है; उसे देखकर शनिवारको आगे रवाना कर दूँगा।

तुम्हारा शुभचिन्तक,
मो० क० गांधी

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
मारफत 'इंडियन ओपिनियन'
फीनिक्स

टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३१३) से।

२१५. सम्राट्का भाषण

सम्बन्धित व्यक्तियोके कथनानुसार जीवित मानवोकी स्मृतिमे, सम्राट्के भाषणकी प्रतीक्षा इतनी चिन्ता अथवा आशाके साथ शायद कभी नही की गई, जितनी इस सप्ताह साम्राज्यीय संसदके उद्‌घाटनके अवसरपर सम्राट् एडवर्ड द्वारा दिये गये भाषणकी। और इसमें सन्देह नही कि वह एक दूरगामी महत्त्वकी घोषणा है। जिनको उदार दलकी नीतिसे भय है, उनकी चिन्ता और भी गहरी हो जायेगी, और जिनको उदार दलसे बहुत बड़ी आशाएँ थीं उनकी आशाएँ, जहाँतक वादोका सम्बन्ध है, पूर्ण होंगी।

भारतके पल्ले निराशा पड़ेगी। भारतके बारेमे तो उसमें फक्त इतना ही जिक्र है कि सैनिक प्रशासन विषयक कागजात प्रकाशित कर दिये जायेंगे। बंग-भंगका बिलकुल उल्लेख नही है; और यदि आये हुए समुद्री तारमें सब बाते संक्षेपमें पूरी दी गई है तो अकालका भी कोई जिक्र नही है। परन्तु यह विश्वास करनेका पूरा कारण है कि जब एक आमूल सुधारवादी प्रधानमन्त्रीके[1] हाथमें बागडोर है और जॉन मॉर्ले जैसे योग्य राजनीतिज्ञ भारत-मन्त्री हैं तब भारत पूर्ण रूपसे उपेक्षित नही रहेगा।

परन्तु हमारे लिए तात्कालिक महत्त्वका विषय यह है कि सनदोकी वापसीका और ट्रान्सवाल तथा ऑरेंज रिवर उपनिवेश — दोनोंको तुरन्त स्वायत्तशासन देनेका, जिसका प्रस्ताव किया गया है, दक्षिण आफ्रिकाके इन हिस्सोके निवासी ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थितिपर क्या प्रभाव पड़ेगा। यह मान लेना तो उचित ही होगा कि जो संविधान उदारदलीय मन्त्रियों द्वारा बनाया जायेगा, वह यथासम्भव गोरे अधिवासियोंके अनुकूल होगा। यह अन्यथा हो ही नही सकता। उनको अपने आन्तरिक मामलोंका यथासम्भव पूर्ण नियन्त्रण दे दिया जायेगा। दुर्बल पक्षोंके अधिकारोकी पूर्ण सुरक्षाकी नीति भी इन्ही उदार सिद्धान्तोंके आधारपर बनाई जानी चाहिए। इसलिए, हमारे विचारसे, भारतीयोके प्रतिनिधित्वके सवालपर सबसे पहले ध्यान दिया जाना चाहिए। एक पूर्ण प्रातिनिधिक सरकारमें भारतीयोंको सर्वथा प्रतिनिधित्व न देना उनको उन विधायकोकी दयापूर्ण देखरेखमे छोड़ देना होगा, जिनके हृदयोंमें उनके लिए कोई दया नही होगी; क्योंकि उन्हे अपने आश्रितोंके कल्याणमें कोई दिलचस्पी न होगी। स्वर्गीय सर जॉन रॉबिन्सनके इस सुन्दर तर्कके[2] बावजूद, कि ऐसी प्रणालीमे प्रत्येक सदस्य भारतीयोंका सदस्य

१. सर हेनरी कैम्बेल-बैनरमैन, इंग्लैंडके प्रधान-मन्त्री १९०५–८।
२. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ३८७।

होगा, प्रतिनिधित्व-हीनताका परिणाम नेटालमें बहुत प्रतिकूल हुआ है। यदि भावी संविधानमें भारतीयोंका ध्यान न रखा गया तो उक्त दोनों उपनिवेशोंमें भारतीयोंके साथ कभी भी न्याय होनेकी आशा समाप्त हो जायेगी। ट्रान्सवालमें भारतीय हितोंके विरुद्ध आन्दोलनकी लहर चल रही है। ऑरेंज रिवर कालोनीके द्वार भारतीयोंके लिए बिलकुल बन्द ही कर दिये गये हैं और यदि उनके बारेमें कानून बनानेका अधिकार इन उपनिवेशोंके उत्तरदायी विधायकोंको सौंप दिया जायेगा तो आज भारतीयोंको जिन कठिनाइयोंका सामना करना पड़ रहा है, वे और भी बढ़ जायेगी। दोनोके संविधानोमें परम्परागत निषेधाधिकार तथा गैर-यूरोपीय जातियोंके लिए विशेष धाराके रूपमें सरक्षण होंगे, परन्तु अमलमें ये संरक्षण बहुत ही अप्रभावकारी सिद्ध हुए हैं, क्योकि ब्रिटिश मन्त्रियोंने महामहिम सम्राट्को निषेधाधिकारका प्रयोग करनेकी सलाह देनेमें सदैव अनिच्छाका अनुभव किया है। ऐसी परिस्थितिमें, अगर भारतीयोंको अन्य जातियोके समान ही साम्राज्यका महत्त्वपूर्ण अंग समझना है तो, हमारी समझसे यह निहायत ही जरूरी है कि, उनके तथा अन्य दुर्बल जातियोंके हकोंकी हिफाजत खास तौरपर की जाये।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४-२-१९०६

२१६. ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय

ब्रिटिश भारतीयोकी स्थिति किसी तरह ईर्ष्या-योग्य नहीं है। वे चारों ओरसे अत्यन्त अपमानजनक प्रतिबन्धोसे घेरे जा रहे हैं। अगर कोई भारतीय ट्रान्सवालका स्थायी निवासी है और इस देशमें पुनः प्रवेश करना चाहता है तो उसको हर कदमपर निराशाका सामना करना पड़ता है और वह अपना दावा उसी हालतमें साबित कर सकता है जब उसके पास धीरज और धनका बाहुल्य हो। इस देशमें निवासका अनुमतिपत्र प्राप्त करनेसे पूर्व उसको मारा-मारा फिरना पड़ता है। उसको गहरी जाँच-पड़तालमें से गुजरना होता है और उसकी बातकी कोई कीमत नही मानी जाती। इसलिए ट्रान्सवालकी पवित्र भूमिपर पाँव रखनेसे पूर्व उसको अपनी बात गवाहोके बयानों और कागजोंके सबूतोंसे पुष्ट करनी होती है। अगर संयोगसे उसकी पत्नी उसके साथ है, तो उसे साबित करना पड़ता है कि वह उसका पति है। अगर उसके बच्चे उसके साथ हैं तो, चाहे जितने छोटे क्यों न हों, उनके अलग अनुमतिपत्र लेने होंगे और साबित करना पड़ेगा कि वह उनका पिता है। अगर उसके बच्चे बारह सालसे कम उम्रके नही है तो वे किसी हालतमें भी उसके साथ नहीं आ सकते। ये वे प्रारम्भिक झंझटें हैं जिनमें होकर ट्रान्सवालमें पुनः प्रवेश करनेसे पूर्व प्रत्येक भारतीयको गुजरना पड़ता है — उस ट्रान्सवालमें, जो अब उसका अपना देश बन गया है। और इस देशमें पहुँचकर वह क्या देखता है?

बिजलीकी ट्रामोंके बारेमें जोहानिसबर्ग नगर-परिषदकी बैठकके विवरणसे स्पष्ट मालूम पड़ जाता है कि उसको किस स्थितिका सामना करना है। अगर वह किसी गोरे मालिकका नौकर है तब तो उसको ट्रामोंका उपयोग करने दिया जायेगा, अन्यथा उसे सामान्य गाड़ियों तक का उपयोग नही करने दिया जायेगा। नगर-परिषदकी बैठकमें दिये गये भाषण पढ़नेमें तो बहुत अच्छे लगते है, परन्तु वे है बहुत दुःखद। यात्राकी सीधी-सादी सहूलियतके मामलेमें, कई

वक्ताओंने जातियोंकी समानताका पूरा सवाल ही उठा लिया। अगर कोई रंगदार आदमी न्याय पानेकी चेष्टा करता है, तो तुरन्त शोर मच जाता है कि वह ट्रान्सवालमें गोरोंकी बराबरीका दावा करना चाहता है। स्थिति बिलकुल उपहासास्पद है। जोहानिसबर्गमें एक शक्तिशाली समाज है। उसके पास साहस, व्यवसाय-बुद्धि और साधन हैं पर जब रंगका सवाल आता है तो वह अपनी विवेक-बुद्धि खो बैठता है, और वहाँ खतरेका सन्देह करने लगता है, जहाँ कोई खतरा है ही नहीं। जोहानिसबर्गके लोग शंकित हैं कि अगर उनके साथ ट्रामोंमें रंगदार लोग भी यात्रा करने लगेंगे तो उनकी प्रधानता और श्रेष्ठता खतरेमें पड़ जायेगी। इससे हमें विद्रोहके उस निराधार भयकी याद आ जाती है जो भारतके गवर्नर जनरल लॉर्ड एलनबरोके[1] जमानेमें व्याप्त था। उस जमानेमें, अगर कोई छोटी-सी बात भी हो जाती थी तो तुरन्त हाय-तोबा मच जाती और घबराहट फैल जाती थी। यहाँतक कि अपने खरीतेमें परमश्रेष्ठने बड़ी सजीव भाषामें लिखा था कि सैनिक पत्तियोंकी खड़खड़ाहट या झींगुरोंकी झनकार भी सुनते हैं तो डर जाते हैं। लॉर्ड एलनबरोने शताब्दीके पाँचवें दशकके प्रारम्भमें सैनिकोंके सम्बन्धमें जो लिखा है, उससे जोहानिसबर्गके कुछ लोगोंकी हालत ज्यादा भिन्न नहीं है। श्री मैकी निवेन और उनके पाँच समर्थकोंने थोड़ा न्याय करनेकी वकालत व्यर्थ ही की। सवालके आर्थिक पहलूके बारेमें उनका तर्क अमान्य कर दिया गया और छः के विरुद्ध सोलहके बहुमतसे नगर-परिषदने उस अन्यायको स्थायी रूप देनेका फैसला किया, जो ट्राम-प्रणालीके मुख्य प्रबन्धकने, अपनी सिफारिशोंके रूपमें, रंगदार समाजके प्रति किया था।[2] एक वक्ताने कहा कि रंगदार लोग कोई कर नहीं देते, इसलिए उन्हें ट्रामोंका उपयोग करनेका कोई अधिकार नहीं है। ऐसी विद्वत्ताका लाभ सुसंस्कृत जोहानिसबर्गको नगर-परिषदके सदस्योंसे मिलता है। उक्त सदस्य आसानीसे यह बात भूल गया कि भारतीय जोहानिसबर्गमें मकानोंमें ही रहते हैं, और उनके लिए उनको किराया और कर दोनों ही देने पड़ते हैं। हम उनको सूचित करना चाहते हैं कि लगभग ४,००० रंगदार लोगोंको, जो मलय बस्तीमें रहते हैं, अपने कब्जेके बाड़ोंका मामूलीसे ज्यादा किराया और कर अदा करना पड़ता है। उनमें और जोहानिसबर्गके दूसरे अधिवासियोंमें फर्क यह है कि उनको ज्यादा कर देकर भी वे सेवाएँ प्राप्त नहीं हैं जो दूसरोंको हैं। मलय बस्तीकी सड़कोंसे जो भी गुजर चुका है, इसकी तसदीक कर सकता है। ट्रान्सवालमें स्थायी रूपसे आबाद भारतीयको, जो अभी लौटा है, यहाँ पहुँचनेपर पता चलेगा कि वह न केवल ट्रामोंके उपयोगसे वंचित कर दिया गया है, बल्कि अपनी पसन्दकी किसी रेलगाड़ीसे यात्रा भी नहीं कर सकता, क्योंकि रेल-प्रशासनने भी रंगदार लोगों द्वारा कुछ सार्वजनिक रेलगाड़ियोंका उपयोग वर्जित कर दिया है। एक अन्य स्तम्भमें हम वह पत्र-व्यवहार छाप रहे हैं जो कार्यवाहक मुख्य यातायात प्रबन्धक और ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्षके बीच हुआ है।[3] इससे यह मालूम होता है कि रेल-प्रशासनने स्टेशन-मास्टरोंको सूचना दे दी है कि वे जोहानिसबर्ग और प्रिटोरियाके बीच चलनेवाली कुछ रेल-गाड़ियोंमें भारतीयों तथा दूसरे रंगदार लोगोंको बैठनेकी इजाजत न दें। श्री अब्दुल गनीने रेलवे-प्रशासनको इसके सम्बन्धमें कड़ा विरोधपत्र भेजा है और हम केवल आशा कर सकते हैं कि भारतीयोंको अपमानित करनेका यह बिलकुल नया तरीका खत्म कर दिया जायेगा। किन्तु इसमें सवाल सिर्फ व्यापारियोंकी बेइज्जतीका ही नहीं है, उनकी असुविधा और हानिका भी है।

१. १८४२–४४।
२. देखिए "पत्र : टाउन क्लार्कको", पृष्ठ १९४–५।
३. देखिए "पत्र : कार्यवाहक मुख्य यातायात प्रबन्धकको", पृष्ठ १९९।

इस तरह वर्ण-द्वेषने एक नया रूप ले लिया है; अर्थात् अब सामाजिक अपमानके साथ-साथ भारतीयोंकी आर्थिक क्षति भी होने लगी है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४–२–१९०६

२१७. प्रतिबन्धकी लहर

ऐसा जान पड़ता है कि दुनिया-भरमें विभिन्न राज्य प्रतिबन्धकी नीतिका अनुसरण कर रहे हैं। तीस साल पहले, अमेरिकी प्रजातन्त्रके तत्कालीन राष्ट्रपतिने[1] यह सिद्धान्त निश्चित किया था कि हर आदमीका अमेरिकामें स्वागत है और वह उसकी धरतीपर पग रखते ही उसका नागरिक हो जाता है। आज अमेरिका दूसरी ही नीतिपर चल रहा है। इंग्लैंड तक ने विदेशियोंके आगमनपर प्रतिबन्ध लगाना जरूरी समझा है और हमने दैनिक समाचारपत्रोंमें प्रकाशित समुद्री तारोंमें पढ़ा है कि कुछ दिन पहले रूसियोंके अत्याचारोंसे भाग कर आये हुए कुछ यहूदियोंको इंग्लैंडमें प्रविष्ट नहीं होने दिया गया। इनमें से एक यहूदीने कहा: "मैं रूस लौटनेकी अपेक्षा आत्महत्या कर लेना अधिक पसन्द करता हूँ। इस स्थितिसे बचनेके लिए ही मैंने अपना सब धन खर्च कर दिया है।" तारीख १३ के 'नेटाल गवर्नमेंट गजट' में जर्मन दक्षिण-पश्चिम आफ्रिकी संरक्षित राज्यके एक आज्ञापत्रका अनुवाद छपा है। इसके अनुसार यदि दूसरी बातोंके साथ, प्रवेशार्थी रंगदार जातिका है तो "जर्मन दक्षिण-पश्चिम आफ्रिकी संरक्षित राज्यमें उसका प्रवेश उपयुक्त अधिकारियों द्वारा वर्जित किया जा सकता है।" उसमें और भी सामान्य निषेधात्मक धाराएँ हैं। इस प्रकार समस्त आफ्रिकामें, किसी-न-किसी रूपमें, रंग-भेदकी समस्या गम्भीर रूप लेती जा रही है। इस सम्बन्धमें यहाँ एक बात स्मरण करना उपयोगी होगा। कुछ समय पहले, जर्मन सम्राट्ने ही यह विचार प्रचारित किया था कि जापानकी विजयमें पीतवर्णकी प्रभुत्व-वृद्धिके प्रयत्न बीज रूपमें छिपे हैं। यद्यपि यूरोपके कुछ हिस्सोंमें अभीतक इस विचारको मान्यता प्राप्त है फिर भी सामान्य धारणा यह है कि जर्मन सम्राट्का यह कथन अविवेकपूर्ण था और इस प्रकारका कोई भय है ही नहीं। इसके साथ ही अगर यूरोपके बड़े-बड़े राष्ट्रों द्वारा रंग-भेदका युद्ध चलाया जायेगा तो यह कहना असम्भव है कि जापान अपने नागरिकोंका खुल्लमखुल्ला अपमान होता देख कर भी सदा मौन बैठा रहेगा। यूरोपके लिए यह बात तर्क-विरुद्ध होगी कि वह एक ओर जापानको प्रथम कोटिकी शक्ति मानता रहे और दूसरी ओर उसके अधिवासियोंके साथ ऐसा व्यवहार करे, मानो वे असभ्य हों।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४–२–१९०६

१. यूलीसिस सिमोर ग्रांट (१८२२–८५), संयुक्त राज्य अमेरिकाके १८वें राष्ट्रपति (१८६९–७७) थे। मार्च ३०, १८७० को संविधानका १५वाँ संशोधन हुआ। इसके द्वारा व्यवस्था की गई कि जाति, रंग अथवा पूर्व-दासताके कारण किसीको मताधिकारसे वंचित नहीं किया जा सकता।

२१८. अनुमतिपत्रका काठ[१]

ट्रान्सवालम प्रवेशके अनुमतिपत्र प्राप्त करनेमें गरीब शरणार्थियोंके रास्तेमें जो कठिनाइयाँ उपस्थित की जाती है, उनके बारेमें हम इतना सुनते और पढते है कि हमने अगले हफ्तेसे उपर्युक्त शीर्षकसे एक नया स्तम्भ आरम्भ करनेका निश्चय किया है। हम इसमें उन सब ब्रिटिश भारतीय शरणार्थियोकी नामावली छापेंगे जिनको आवेदनपत्र भेजे दो माससे अधिक हो जानेपर भी अभी-तक अनुपतिपत्र नही दिये गये है। यह बात नहीं है कि हम ऐसे आवेदनपत्रोंपर विचार करनेके लिए दो मासका समय उचित समझते हैं, लेकिन चूँकि हमारे सुननेमें आता है कि बहुतसे आवेदन-पत्रोंको छः माससे ज्यादा समय हो गया है, इसलिए हमनें अपेक्षाकृत बड़ी बुराईको चुनने और प्रकाशित करनेका निश्चय किया है। तुलनात्मक दृष्टिसे दो मास पुराने आवेदनपत्र, फिलहाल, सामान्य समझे जा सकते है; किन्तु उनसे पुराने आवेदनपत्रोंके विषयमें यह कहनेमें हमें हिचकिचाहट नही है कि उनकी मुद्दत ही शरणार्थियोंके हितोंके प्रति अधिकारियोंकी घोर उदासीनता प्रकट करती है। इसलिए जो लोग ट्रान्सवालके अनुमतिपत्र-अधिकारियोंकी सनकोंसे परेशान हैं उन सबसे हमारा निवेदन है कि वे हमें अपने नाम, पते और आवेदनपत्रोंकी तिथियाँ भेजकर अपनी मदद स्वयं करे। हम यह नहीं कहते कि ये सब लोग प्रामाणिक शरणार्थी है, पर हम यह अवश्य कहते हैं कि इन सबको एक निश्चित और स्पष्ट उत्तर पानेका हक है, जिससे उन्हें अनिश्चि-तताकी अवस्थामें न रहना पड़े। हमें मालूम हुआ है कि कुछ ऐसे लोग भी है जिनके पास पुरानी डच सरकार द्वारा जारी किये गये पंजीकरण-प्रमाणपत्र हैं। उनको आज अपने अपनाये मुल्कसे देश-निकाला मिला हुआ है। लॉर्ड सेल्बोर्नने दो वादे किये हैं। उन्होने एक वादा गोरे समाजसे यह किया है कि कोई गैर-शरणार्थी भारतीय ट्रान्सवालमें न बसने दिया जायेगा और इसका पालन धर्माचारकी भाँति किया जा रहा है। परमश्रेष्ठने दूसरा वादा भारतीय समाजसे किया है और वह है कि शरणार्थियोके सब आवेदनपत्रोंपर अत्यन्त शीघ्रतासे विचार किया जायेगा और उनको देशमें प्रवेश करनेकी पूरी सुविधाएँ प्रदान की जायेंगी। हमें जो जानकारी प्राप्त है, वह यदि सही है तो उनका पिछला वादा अभी पूरा होना शेष है। हमें आशा है कि हमारे पाठक एक ऐसी स्थितिको, जो असह्य हो गई है, सुलझानेमें हमारी मदद करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४–२–१९०६

२१९. लंदनकी मैट्रिक परीक्षामें तमिल[२]

इस उपनिवेशके तमिल अधिवासियोंने लन्दन विश्वविद्यालयको इस आशयका प्रार्थनापत्र भेजा था कि विश्वविद्यालयकी मैट्रिक परीक्षाके वैकल्पिक विषयोंमें तमिलको भी एक विदेशी भाषाके रूपमें मान्य किया जाये। हमें उसका उत्तर लन्दन विश्वविद्यालयके वैदेशिक पीठ-स्थविर (रजिस्ट्रार) के सचिवसे प्राप्त हो गया है। यद्यपि इस विषयमें संयुक्त परिषदें प्रमुख सभा-

१. ब्रिटेन, फ्रांस, चीन और अमेरिकामें उन्नीसवीं शताब्दीमें प्रचलित विशिष्ट अपराधियोंको दण्ड देनेका उपकरण, जो अंग्रेजीमें "पिलरी" कहा जाता है। इसमें बन्द अपराधीके सिर और हाथ छेदोंसे बाहर निकाल दिये जाते थे ताकि आम लोग उसको देखें और उसका उपहास करें।

२. खण्ड ४, पृष्ठ ४४३ भी देखिए।

(सिनेट)से कोई सिफारिश नहीं कर पाई है तथापि हमारा यह विचार है कि इस कारणसे मामलेको यहीं छोड़ देनेकी आवश्यकता नहीं है। लन्दन विश्वविद्यालय जैसी पुरानी संस्थाओंसे कोई परिवर्तन कराना बहुत कठिन है, किन्तु यदि संसार-भरका तमिल समाज अपने प्रयत्नको दृढ़तापूर्वक जारी रखेगा, तो हमें सन्देह नहीं कि तमिल भाषा, जिसमें भव्य साहित्य है और जो भारतकी इटालियन है, लन्दनकी मैट्रिक परीक्षाके पाठ्यक्रममें शामिल कर ली जायेगी। हम विश्व-विद्यालयसे प्राप्त उत्तर दूसरे स्तम्भमें छाप रहे हैं।[1]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४–२–१९०६

२२०. पत्र : दादाभाई नौरोजीको

ब्रिटिश भारतीय संघ

२५ व २६ कोर्ट चेम्बर्स
रिसिक स्ट्रीट
जोहानिसबर्ग
फरवरी २६, १९०६

सेवामें
माननीय दादाभाई नौरोजी
२२ कैनिंगटन रोड
लन्दन

प्रिय महोदय,

मैं ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर कालोनीमें भारतीयोंकी स्थितिका परिचय देनेवाला एक विवरण[2] साथ भेज रहा हूँ।

मेरा खयाल है कि एक संयुक्त शिष्टमण्डलको इस स्थितिके बारेमें नये मन्त्रियोंसे[3] भेंट करनी चाहिए।

आपका विश्वासपात्र,
मो० क० गांधी

नत्थी–१

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (जी० एन० २२७०) से।

१. यह यहाँ नहीं दिया जा रहा है।
२. देखिए "दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीय", पृष्ठ २०७–८।
३. जॉन मॉर्ले और लॉर्ड एलगिन।

२२१. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी[1]

फरवरी २६, १९०६

ट्रामका मुकदमा

आजकल जोहानिसबर्गमें भारतीयोंके बीच ट्रामकी चर्चा चल रही है। फोर्ड्सबर्गमें बहुत-से भारतीय रहते हैं; और फोर्ड्सबर्गसे मार्केट स्क्वेयर तक बिजलीकी ट्राम चलती है। इसलिए लोग सहज ही सवाल पूछते हैं कि भारतीय ट्राममें क्यों नहीं बैठ सकते। और काले लोगोंको ट्रामसे दूर रखना अधिकारियोंको भी मुश्किल जान पड़ रहा है। जोहानिसबर्गकी परिषदने जो विचार किये थे वे ठंडे पड़ गये हैं। और 'काले लोग इस ट्राममें बैठ सकते हैं', इस आशयकी तख्तियाँ लगी हुई ट्रामें चलाई जा रही हैं। एक ओर गोरे यह जताते हैं कि उन्हें भारतीयोंके साथ बैठनेमें आपत्ति है और दूसरी ओर उक्त तख्तियोंवाली ट्रामोंमें काले लोगोंके साथ बहुतेरे गोरे भी बैठते दिखाई देते हैं। इस सम्बन्धमें श्री कुवाडियाके नामसे एक परीक्षात्मक मुकदमा चलानेकी तजवीज हो रही है। श्री कुवाडिया परीक्षात्मक मुकदमा बनानेके विचारसे श्री मैकिनटायरके साथ बिना तख्तीवाली ट्राममें बैठने गये थे। उन्हें एक ट्राममें बैठने दिया गया। दूसरी ट्राममें बैठते समय कंडक्टरने कहा कि अगर वे श्री मैकिनटायरके नौकर हैं, तो बैठ सकते हैं, लेकिन यदि एक साधारण नागरिकके नाते बैठना हो, तो बैठनेकी इजाजत नहीं मिलेगी। इस विषयपर अखबारोंमें भी चर्चा चल रही है। 'स्टार' अखबारमें श्री दारूवालाने जो लेख लिखा था, उसके विरुद्ध एक गोरेने कड़ा लेख लिखा। श्री दारूवालाने उसका माकूल जवाब दिया है। और दूसरे दो गोरोंने भी लिखा है। उनमें से एकने विरोधमें और दूसरेने पक्षमें लिखा है।

ट्रान्सवालके लिए उत्तरदायी शासन

ट्रान्सवालको जल्दी ही उत्तरदायी शासन प्राप्त हो जायेगा। इसके कारण अंग्रेज गोरोंमें खलबली मच रही है; क्योंकि, डर यह है कि, उत्तरदायी शासनाधिकार मिलनेसे डच लोगोंका बल बढ़ेगा, और इसके कारण खानवालोंको धक्का पहुँचेगा। इसके बावजूद सारे जोहानिसबर्गमें सब कहीं इमारतें बाँधनेके काम हो रहे हैं। इससे पता चलता है कि यहाँके लोगोंने अभी हार नहीं मानी है, बल्कि आशा लगाये हैं कि सम्पन्नता आयेगी। व्यापार बिलकुल मन्द है, वह और भी मन्द होगा। पहले वतनी लोग और डच लोग हर शनिवारको रुपये पैसेका भारी लेनदेन करते थे। डच लोग तो कंगाल बन गये हैं, और वतनी भी पहले जितने खुले हाथों पैसा खर्च करते थे, उतना अब नहीं करते।

लॉर्ड सेल्बोर्नको निवेदनपत्र

ब्रिटिश भारतीय संघने लॉर्ड सेल्बोर्नको अनुमतिपत्रों, ट्रामों और रेलगाड़ियोंके विषयमें लिखा है। लॉर्ड सेल्बोर्नने उसका जवाब अपने हस्ताक्षरोंसे निजी तौरपर दिया है। उन्होंने लिखा है कि वे इन तीनों मामलोंकी पूरी जाँच करेंगे और फिर पत्र लिखेंगे। इससे यह आशा की जा सकती है कि लॉर्ड सेल्बोर्न कुछ-न-कुछ सुनवाई जरूर करेंगे।

१. ये संवादपत्र "जोहानिसबर्ग संवाददाता द्वारा प्रेषित" रूपमें इंडियन ओपिनियनमें समय-समयपर प्रकाशित किये जाते थे।

मलय बस्ती

मलायी बस्तीकी स्थिति बहुत शर्मनाक हो गई है। गन्दगी खूब रहती है। धनका झूठा लोभ करके एक ही कोठरीमें बहुत-से लोग भरे रहते हैं। पाखानों तथा अहातोंमें बड़ी बदबू रहती है। ऐसी हालतमें अगर लम्बे समय तक बारिश होती रहे, तो प्लेग शुरू हुए बिना रह नहीं सकता। यह जरूरी है कि समझदार लोग इसपर अच्छी तरह विचार करें। यह काफी नहीं है कि वे अपने-अपने मकान साफ रखें, बल्कि उन्हें दूसरोंको भी वैसा करनेके लिए समझाना चाहिए। अगर ऐसा न हुआ तो हम भारतीय बस्ती तो खो ही बैठे हैं, मलायी बस्ती भी हमारे हाथसे निकल जायेगी। यही नहीं, बल्कि तेरह मील दूर क्लिपस्प्रूटमें रहने जाना पड़ेगा। यह अपेक्षा नहीं रखनी चाहिए कि अधिकारीगण खास तौरपर मेहनत करके सफाई रखवाया करेंगे। उनका स्वार्थ तो इस बातमें है कि हमारे घर किसी तरह अधिक गन्दे रहें, क्योंकि मकान गन्दे होंगे तो वे हमपर गन्दगीका आरोप लगाकर हमें हटा सकते हैं।

जोहानिसबर्गमें नई मस्जिद

जोहानिसबर्गमें इधर कई सालोंसे भारतीय मुसलमानोंकी एक ही मस्जिद थी, लेकिन अब सूरतके खोजा लोगोंने एक बड़ी निधि इकट्ठा करके अपनी बस्तीमें एक जमीन खरीदी है और उसपर नई मस्जिद बनानेकी तैयारियाँ हो रही है।

ट्राम गाड़ियाँ

डॉक्टर क्राउज यहाँकी नगर-परिषदके सदस्य हैं। उन्होंने अपने मतदाताओंसे भेंटके समय कहा है कि उनका बस चले तो वे भारतीयोंको और काले लोगोंको ट्राममें बैठने न दें, लेकिन कानूनन् वे उन्हें रोक नहीं सकते। इसलिए वे स्वयं विरोध करनेमें असमर्थ हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३-३-१९०६

२२२. अभिनन्दन-पत्र[१]: अब्दुल कादिरको

डर्बन

[फरवरी २८, १९०६]

आप भारत जा रहे हैं। आपने नेटाल भारतीय कांग्रेसके अध्यक्ष रहते हुए भारतीय समाजकी जो सेवाएँ की हैं उनको अंकित किये बिना ही इस अवसरको निकल जाने देना हम नेटाल भारतीय कांग्रेसके सदस्योंके लिए सम्भव नहीं है।

आप एक ऐसे अध्यक्षके बाद पदासीन हुए थे, जिन्होंने अपनी कर्मठतासे कांग्रेसका बहुत कार्य किया था। और हमें यह कहनेमें कोई संकोच नहीं है कि आप उस उत्तराधिकारको निभानेमें योग्य सिद्ध हुए। कांग्रेसकी आर्थिक स्थिति आज सुदृढ़ है। उसे ऐसा बनानेमें आपने थोड़ा योगदान नहीं किया है। आपके अध्यक्ष-कालमें हमने अनेक राजनीतिक लड़ाइयाँ लड़ी

१. यह अभिनन्दनपत्र एक रजत-मंजूषामें रखा गया था और इसे नेटाल भारतीय कांग्रेसकी एक बैठकमें आदमजी मियाँखाँने पढ़ा था। बैठक पद-विरत होनेवाले अध्यक्षके भारत जानेके अवसरपर उनका विदाई-सत्कार करनेके लिए आयोजित की गई थी। इसी तरहका अभिनन्दनपत्र उन्हें डर्बनके हायर ग्रेड भारतीय स्कूलकी ओरसे भी दिया गया था।

है। और तमाम संकटोंमें हमने आपको सदा एक तत्पर नेता पाया है। आपने कांग्रेसकी बैठकोंकी अध्यक्षता सदैव कुशलता और दूरदर्शितासे की है। और जब-जब धनकी माँग हुई समाजके नेताकी हैसियतसे आपने सदा अपना योग दिया है।

अब आप अपने सु-अर्जित विश्रामका उपभोग करनेके लिए भारत जा रहे हैं। इसलिए हम कामना करते हैं कि हम सबकी जन्म-भूमिमें आपका और आपके आत्मीयोंका अल्पवास सुखमय तथा सफल हो। हम आशा करते हैं कि आप शीघ्र ही हमारे बीच लौटकर फिरसे अपने समाजके कल्याणके कार्य उठा लेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३–३–१९०६

२२३. भाषण : अब्दुल कादिरकी विदाईपर

श्री अब्दुल कादिरको मानपत्र भेंट करनेके बाद गांधीजीने जो भाषण दिया उसका विवरण नीचे दिया जा रहा है :

डर्बन
[फरवरी २८, १९०६]

श्री मो० क० गांधीने सभामें पहले अंग्रेजीमें और फिर गुजरातीमें भाषण दिया। उन्होंने कहा कि श्री अब्दुल कादिर एक ऐसे पुरुष हैं, जिन्होंने नेटालके भारतीय समाजकी बहुत सेवा की है। उन्होंने राजनीतिक मामलोंमें जो हिस्सा लिया है उसका ज्ञान कदाचित् आज शामकी इस सभामें उपस्थित अनेक सज्जनोंकी अपेक्षा मुझे अधिक है। उनसे पूर्व कांग्रेसकी अध्यक्षताका भार जिन्हें उठाना पड़ा वे योग्य और समर्थ व्यक्ति थे, जिन्होंने समाजके लिए उत्तम काम किया था; और उनका अनुसरण करना कोई सरल काम नहीं था। परन्तु मुझे यह कहते हुए बिलकुल संकोच नहीं कि यह उत्तरदायित्व योग्य व्यक्तिके कन्धोंपर पड़ा। कांग्रेसकी आर्थिक स्थिति दृढ करनेके लिए श्री अब्दुल कादिरने बहुत परिश्रम किया, और यह अधिकतर उनकी कोशिशोंका ही फल है कि हमें इतनी सफलता प्राप्त हुई है।

श्री गांधीको इस सिलसिलेमें एक घटना याद आई। जब श्री अब्दुल कादिर और कांग्रेसके अन्य सदस्य चन्दा इकट्ठा कर रहे थे, वे टोंगाट गये। वहाँ उनके एक देशवासीने चन्दा देनेमें आनाकानी की। परन्तु श्री अब्दुल कादिर हार माननेवाले नहीं थे। इसलिए सुबह तक वे और उनके साथी वहीं डटे रहे। रातको भूमिपर बिछे हुए टाटपर सोये। सवेरे जब "शत्रु" ने "हार" मान ली, उन्हें अपने धैर्यका फल मिल गया[1]।

ऐसा है हमारे अतिथिका चरित्र। जब-कभी कोई काम आ पड़ा, श्री अब्दुल कादिर अपना समय और ध्यान देनेके लिए तत्पर मिले। श्री गांधीने कामना की कि श्री अब्दुल कादिर और उनके परिवारकी भारत-यात्रा आनन्दमयी हो और वे कुशलतापूर्वक लौटें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३–३–१९०६

१. देखिए, खण्ड ३, पृष्ठ १०६।

२२४. राजवंशके सदस्योंका आगमन

हम महाविभव ड्यूक ऑफ कनॉट, उनकी पत्नी और राजकुमारी पैट्रीशियाका हार्दिक स्वागत करते हैं। यह बात ध्यान देने योग्य है कि राज-कुटुम्बके तीन सदस्य विदेशोंमें हैं — दो तो महामहिम सम्राट्के उपनिवेशोंमें गये हैं और तीसरे एक ऐसे देशमें जो इंग्लैंडका मित्र है। इंग्लैंडके भावी राजा और रानी भारतमें भ्रमण कर रहे हैं और अपने दयालु तथा मधुर स्वभावसे भारतीयोंके प्रेम-भाजन बन रहे हैं। राजकुमार ऑर्थर जापान और ब्रिटेनके बीच मित्रताका सम्बन्ध दृढ़ कर रहे है। और हमारे राजकीय मेहमान, अपने सामान्य चातुर्यसे दक्षिण आफ्रिकियोंके प्रिय बनते जा रहे हैं। राज-कुटुम्बके तीन सदस्योंको लगभग एक ही समय इंग्लैंडसे बाहर जानेकी आज्ञा देकर महामहिम सम्राट् और साम्राज्ञीने यह प्रकट कर दिया है कि जिस साम्राज्यपर वे इतनी योग्यतासे शासन करते हैं उसके कुशल-क्षेमका उनको कितना ध्यान है। यह साम्राज्यके उज्ज्वल भविष्यका एक सुखद लक्षण है कि स्वर्गीया महारानी विक्टोरियाके उत्कृष्ट गुण उनके बच्चोंमें आ गये हैं। हम सर्वशक्तिमान प्रभुसे, जो हम सबका पिता है, प्रार्थना करते हैं कि वह उनको दीर्घायु करे, ताकि वे साम्राज्यकी परम्पराओंका पालन करते रहें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३–३–१९०६

२२५. भारतीय और उत्तरदायी शासन[1]

ट्रान्सवालको पूर्णतम और अत्यन्त व्यापक रूपका उत्तरदायी शासन दिया जायेगा; इसलिए ट्रान्सवालका खानों और खेतोंमें चीनी मजदूरोंको कामकी अनुमति देने या न देनेका निर्णय करने और उद्योगपर सामान्य तौरपर नियन्त्रण रखनेका अधिकार विवादसे परे हैं; लेकिन यह निहायत जरूरी है कि वर्तमान अध्यादेश उसको विरासतमें न मिले। नये विधानमें ऐसी निर्योग्यता रखना अनुपयुक्त और असम्मानजनक होगा जिससे यह ध्वनि निकलती जान पड़े कि हम मानते हैं, ट्रान्सवाल हमारी अधिकार-कल्पनाके विपरीत कार्य करेगा। किन्तु हर एक स्वयंशासित उपनिवेशके संविधानमें रक्षित सत्ताके अनुसार गवर्नरको यह हिदायत करनेका प्रस्ताव किया गया है कि बाहरसे लाये गये श्रमिकोंके बारेमें जो भी कानून बनाये जायें, वे साम्राज्यीय संसदमें विचार तथा स्वीकृतिके लिए सुरक्षित रखे जाने चाहिए। वर्तमान अध्यादेशसे मिलते-जुलते कानूनका निषेध किया जा सकता है, यद्यपि हम कल्पना नहीं करते कि ऐसी विशेष स्थिति उत्पन्न होगी।

ये बातें श्री एस्क्विथने चीनी विवादके अवसरपर कही। उनसे भारतीय प्रश्नसे मिलते-जुलते एक प्रश्नके बारेमें इंग्लैंडकी सरकारकी स्थिति संक्षेपमें स्पष्ट हो जाती है। चीनी श्रमिक अध्यादेश साम्राज्यकी परम्पराओंके प्रतिकूल है; और ऐसे ही भारतीय-विरोधी कानून भी है। फर्क केवल यह है कि भारतीय-विरोधी कानून अधिक आपत्तिजनक है और उसको रद करना अपेक्षाकृत

१. यह 'इंडिया' के अप्रैल ६, १९०६ के अंकमें भी प्रकाशित हुआ था।

सरल भी है, क्योंकि यह डच सरकारकी देन है परन्तु चीनी श्रमिक अध्यादेश पिछली सरकार की रचना है। फिर भी उदारदलीय कोष-मन्त्रीको यह कहनेमें हिचकिचाहट नहीं हुई कि यह नेटालकी शीघ्र स्थापित होनेवाली उत्तरदायी सरकारको विरासतके रूपमें नहीं सौंपा जाना चाहिए। तब, यदि ट्रान्सवालको "एक पूर्णतम और अत्यन्त व्यापकरूपका उत्तरदायी शासन" देना ही है, तो जहाँतक एशियाई-विरोधी कानूनका सम्बन्ध है, उसके सम्मुख बिलकुल कोरा क्षेत्र उपस्थित किया जाना चाहिए। जैसा कि दो साल पहले सर विलियम वेडरबर्नने श्री चेम्बरलेनसे अत्यन्त स्पष्ट रूपसे कहा था, सम्राट्की सरकारका कर्त्तव्य डच सरकारके उन सब कानूनोंको खत्म कर देना है जिनसे युद्धकी उत्तेजना प्राप्त हुई थी। फिर यह ट्रान्सवालके लोगोंपर छोड़ देना चाहिए कि वे ब्रिटिश सरकारके विचारार्थ, जैसा पसन्द करें, वैसा कानून पेश करे। अगर यह सुझाव मंजूर नहीं किया जाता, तो फिर भारतीय स्थितिकी रक्षाका दूसरा एक यही उपाय रह जाता है कि निषेधाधिकारकी सामान्य धाराके साथ ही नये संविधानमें एक रक्षात्मक धारा जोड़ दी जाये। श्री एस्क्विथके शब्दोंमें, ऐसा करना अनुपयुक्त और असम्मानजनक होगा, क्योंकि इससे ट्रान्सवालके विरुद्ध इस आरोपका आभास मिलेगा कि वह साम्राज्यकी "अधिकार-कल्पना" के "विपरीत कार्य" करना चाहता है। अगर इस सवालपर साम्राज्य-सरकार निर्हस्तक्षेपकी नीतिका अनुसरण करना चाहती है और उत्तरदायी शासनकी स्थापनासे पूर्व भारतीय-विरोधी कानून वापस नहीं लिया जाता है तो उत्तरदायी सरकार उस कानूनको मिटानेसे इनकार करनेकी पूर्ण अधिकारी होगी, जिसको सम्राट्की सरकारने छूनेका भी साहस नहीं किया।

पुनरावृत्तिका खतरा होनेपर भी भारतीय स्थितिपर विचार कर लेना ज्यादा अच्छा होगा। १८८५ के कानून ३ और सिर्फ एशियाइयोंके लिए बनाये गये अन्य कानूनों और उपनियमोंको रद कर देनेकी माँग भारतीय हमेशा करते आये हैं। किन्तु उनकी इस माँगके साथ इस शर्तकी जोरदार घोषणा भी जुड़ी रहती है कि वे देशमें, जैसा कि कहा जाता है, भारतीयोंको भर देना नहीं चाहते और न गोरोंका व्यापार, विशेषतः काफिरोंके साथ चालू व्यापार, ही हथियाना चाहते हैं। उन्होंने अपने लिए केवल उचित क्षेत्र माँगा है, कोई रियायत नहीं। अपनी सचाई प्रमाणित करनेके लिए उन्होंने सामान्य ढंगके प्रतिबन्धात्मक कानूनका सिद्धान्त भी स्वीकार कर लिया है। केप या नेटालमें जिस ढंगका प्रवासी-प्रतिबन्धक कानून है, उस ढंगके कानूनसे नये लोगोंके प्रवेशका सवाल पूर्ण रूपसे हल हो जायेगा, बशर्ते कि उसमें प्रमुख भारतीय भाषाओंको मान्यता दी गई हो और वर्तमान व्यवसायोंको चलानेके लिए जितने लोगोंकी आवश्यकता हो, उतने लोग देशमें लानेकी छूट रहे। जहाँतक व्यापारकी बात है, भारतीयोंका सुझाव है कि व्यापारके नये अनुमतिपत्र देनेका नियन्त्रण स्थानीय निकायोंके हाथमें रहे और उनके निर्णयोंपर सर्वोच्च न्यायालयको पुनर्विचार करनेका अधिकार हो। अधिकसे-अधिक इस सीमा तक न्यायोचित रूपसे प्रतिबन्ध लगाये जा सकते हैं। एशियाई-विरोधी आन्दोलनके मूलमें व्यापारिक ईर्ष्या और भारतीय आक्रमणका हौआ ही है। यदि ये दो "खतरे" दूर कर दिये जायें तो भारतीयोंकी स्वतन्त्रताको और भी कम करने अथवा उनको "अनावश्यक रूपसे अपमानित करनेका" कोई औचित्य नहीं रह सकता। भारतीयोंको भू-सम्पत्ति खरीदने अथवा स्वतन्त्रतापूर्वक चलने-फिरनेसे वंचित रखना या उनके साथ प्राचीन गुलामोंकी तरहका सलूक जारी रखना निश्चय ही अंग्रेजोंकी उचित-अनुचितकी कल्पनासे असंगत होगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३-३-१९०६

२२६. केपके भारतीय व्यापारी

हमारे केपके संवाददाताने केपके छोटे भारतीय दूकानदारोंकी कुछ आलोचना की थी। उसपर हमने अपने विचार कुछ समय पूर्व इन स्तंभोंमें प्रकाशित किये थे। हमारे इन विचारोंके उत्तरमें उक्त संवाददाताने हमें एक पत्र भेजा है। इसको हम सहर्ष छाप रहे हैं। निश्चय ही हमारा यह खयाल है कि सर जेम्स हलेटकी[1] गवाही केपपर भी उसी प्रकार लागू है जिस प्रकार नेटालपर। भारतीय वहाँ भी वैसे ही हैं जैसे नेटालमें। और यदि उनके व्यापारसे नेटालको आम तौरपर लाभ हुआ है तो केपमें भी, जहाँ आर्थिक स्थितियाँ उसी प्रकार हैं, उनसे लाभ हुए बिना नही रह सकता। किन्तु खास मुद्दा, जिसकी ओर हमने निरन्तर ध्यान दिलाया है, यह है कि निन्दकों द्वारा भारतीय व्यापारियोंपर लगाये गये बहुत-से आरोप सत्य सिद्ध नही किये जा सकते हैं। हमने दक्षिण आफ्रिका अथवा उसके किसी भी हिस्सेमें भारतीयों अथवा दूसरे व्यापारियोंको भर देनेकी नीतिका समर्थन कभी नहीं किया है; किन्तु हमारा यह विश्वास अवश्य है कि यह मसला प्रतिबन्धात्मक कानूनोंके बिना भी तय किया जा सकता है। अगर हमारे संवाददाता केप कालोनीके विभिन्न जिलोंके यूरोपीय और भारतीय व्यापारियोंका तुलनात्मक विवरण तैयार कर सकें तो इससे निश्चय ही सवालको हल करनेमें मदद मिलेगी। हमारे पास जो जानकारी है, उससे तो हमारा खयाल यही होता है कि केपमें भारतीय व्यापारी बहुत अल्पमतमें हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३–३–१९०६

२२७. मध्य दक्षिण आफ्रिकी रेल-प्रणालीमें[2] भारतीय यात्री

एक संवाददाताने हमारे गुजराती स्तंभोंमें लिखा है कि पिछली २६ फरवरीकी शामको जोहानिसबर्गसे डर्बनको जो गाड़ी रवाना हुई, उसके दूसरे दर्जेके एक डिब्बेमें उसने सात भारतीय यात्री बैठे देखे। उनमें एक भारतीय महिला भी थी। वह आगे कहता है कि उसमें आठवाँ यात्री जर्मिस्टनमें आ गया, जिससे दूसरे यात्रियोंको बड़ी तकलीफ हुई। रातको यात्रामें दूसरे दर्जेके एक सामान्य डिब्बेमें मुश्किलसे छः यात्री समा सकते हैं। हम समझते हैं, यात्रियोंको लम्बी यात्राओंमें रातकी गाड़ियोंमें सोनेकी जगह लेनेका हक होता है। हमारे संवाददाताने यह नही लिखा कि उसने जिसका उल्लेख किया है उस अवसरपर गाड़ीमें असाधारण भीड़ थी। किन्तु जो भी हो, इतने यात्रियोंको, जबकि उनमें से एक नारी थी, पशुओंकी तरह भर देनेके औचित्य-पर हम सन्देह किये बिना नही रह सकते। ऐसे मामलोंमें भारतीय महिलाको भी हक है कि उसका कुछ विशेष ध्यान रखा जाये। भारतीयलोगोंको वह स्थान पानेका अधिकार है, जिसके

१. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ २६८।

२. सी० एस० ए० आर० या सेंट्रल साउथ आफ्रिकन रेल्वे।

लिए वे पैसा देते हैं। उनको नाम भरके लिए दूसरे या पहले दर्जेकी सुविधाएँ देना और वस्तुत. उनसे वंचित रखना हास्यास्पद होगा। हम रेलवे अधिकारियोका ध्यान अपने संवाददाता द्वारा की गई शिकायतकी ओर आकर्षित करते हैं और हमें इसमें कोई सन्देह नहीं है कि वे, ऐसी शिकायते भविष्यमें न हों, इसके लिए जरूरी कदम उठायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३–३–१९०६

२२८. मिडिलबर्गसे गुजरनेवाले भारतीयोंको सूचना

सुननेमें आया है कि मिडिलवर्ग स्टेशनसे गुजरनेवाले भारतीयोका परवाना हमेशा देखा जाता है। साधारणतया ट्रान्सवालकी सरहदपर बसे हुए स्टेशनोंके सिवा और कही ऐसा नही होता; सिर्फ मिडिलवर्गमे ही इस तरहकी कार्यवाही होती पाई जाती है। इस विषयमे मिडिलबर्गके हमारे पाठक अधिक जानकारी भेजेंगे, तो हम उसे छापेंगे। इस बीच मिडिलवर्ग जानेवाले मुसाफिरोको ऊपर दी हुई हकीकत ध्यानमें रखनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३–३–१९०६

२२९. जोहानिसबर्ग की चिट्ठी

मार्च ३, १९०६

ट्रामका मुकदमा

इस पत्रके छपनेसे पहले बहुत करके ट्रामके परीक्षात्मक मुकदमेका[1] फैसला हो चुका होगा। कई कठिनाइयोके बाद धर्मके वकीलने श्री कुवाडियाका हलफनामा मंजूर करके जिस ट्रामवालेने उन्हे वैठनेसे रोका था उसके नाम सम्मन जारी किया है। यह मामला ७ मार्चको चलनेवाला है। इस बीच अखबारोंमें ट्रामपर विवाद चल रहा है। एक गोरेने श्री दारूवालाको एक उद्धत पत्र लिखकर यह जताया है कि गोरे ट्राममें काले लोगोंको कभी अपने साथ नही बैठने देंगे। दूसरे कुछ लोगोने लिखा है कि अगर काले लोगोंको ट्राममें बैठने दिया गया, तो यह माना जायेगा कि उन्हे गोरोकी बराबरीका दर्जा दिया गया है। इसलिए उन्हे कभी बैठने नही देना चाहिए। इस तरह दो-चार मुफ्तखोर अखबारोंमे लिखते रहते है। इस बीच खास काले लोगोके लिए चलनेवाली ट्रामगाड़ीमें गोरे बिना किसी दुरावके बैठते है। ऐसे शहरकी बलिहारी!

चीनी मजदूर

इस समय सब लोगोंके मनमे यह सवाल चल रहा है कि चीनी लोगोंको निकाल देंगे या रखेंगे। विलायतके तारसे पता चलता है कि जिसे पसन्द न हो, उस चीनीको सरकारने

१. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ २१५–६।

वापस भेजनेका हुक्म दिया है। इस परिस्थितिके कारण खानोंके मालिक घबरा गये हैं और उन्होने अपनी थैलियोके मुँह सिकोड़ लिये हैं। इससे व्यापार भी मन्द हो गया है। इसके साथ ही नेटालके काफिरोकी बगावतका असर यहाँके काफिरोंपर पड़ा है। इससे किसी भी तरफ सहूलियत[1] नही रही।

उपनिवेश-सचिवकी सेवामें शिष्टमण्डल

भारतीयोके अनुमतिपत्रोंके बारेमें एक शिष्टमण्डल उपनिवेश-सचिवके पास जानेवाला है। धारणा है कि कुछ राहत तो मिलेगी ही। सम्भव है कि अनुमतिपत्र वगैरह देनेके लिए कोई अधिकारी एक बार जोहानिसबर्ग आयेगा।

एशियाइयोंके सरक्षक श्री चैमने आ पहुँचे हैं, और उन्होने अपना पद सँभाल लिया है।

लेफ्टिनेंट गवर्नरने मलायी बस्तीके बारेमें शिष्टमण्डलसे मिलना स्वीकार किया है। कुछ दिनोंमें मिलेंगे।

लॉर्ड सेल्बोर्न

लॉर्ड सेल्बोर्न मसेरूसे वापस लौट आये हैं। उनसे मिलनेके लिए मसेरूमें लगभग २०,००० बसूटो काफिर इकट्ठे हुए थे। ये काफिर बहुत होशियार हैं। इनकी अपनी संसद है, जो 'पीटसो' कहलाती है। पीटसोका शीघ्रलिपिक (शॉर्टहैंड रिपोर्टर) एक बसूटो है। लॉर्ड सेल्बोर्नने जो भाषण किया था, उसका विवरण उस काफिर लिपिकने तैयार किया था।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–३–१९०६

२३०. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
रविवार, [मार्च ४, १९०६]

चि० छगनलाल,

अपने कर्तव्यमें जरा भी मत चूकना। बहीखातोंकी स्थिति ठीक रखनेकी पूरी जरूरत है। सिलक वगैरह निकलनी चाहिए। चिट्ठी-पत्रमें श्री बीनकी मदद लो। गुजरातीमें हेमचन्दको लगा दो। हेमचन्दको डर्बनमें रखना बिलकुल जरूरी नहीं है। कल्याणदासको अभी तुरन्त नहीं भेज सकता। ब्रायन गैब्रियल बहुत करके आयेगा। जो वैसा हो जाये, तो ठीक है। हमें आदमियोंकी कुछ कमी रहती है, वह मिटेगी। तुम्हारा बोझा किस तरह हलका किया जाये, सो तुम्हीं अधिक जान सकोगे। डर्बन केवल एक ही दिन जाओ तो भी फिलहाल काफी है। मुख्य काम वसूलीका है।

गुजराती सम्पादन जैसा अंग्रेजीमें है, वैसा रखना चाहिए। सम्पादकीय, अर्थात् अग्रलेख, पहले, उसके बाद छोटी-छोटी सम्पादकीय टिप्पणियाँ। इसके बाद बड़े विषयोंके अनुवाद आदि। बादमें जोहानिसबर्गकी चिट्ठी और दूसरे पत्र और अन्तमें रायटरके तार।

१. व्यापारको पुनरुज्जीवित करनेके लिए। देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ २१५–६।

'वतनियोंका विद्रोह' शीर्षक लेख तुमने पहले दिया। वैसा नही होना चाहिए था। क्योंकि उसे खबरोके विभागमें आना चाहिए था। वतनियोके विद्रोहका सवाल मैंने तुम्हे सौंपा है, इसलिए मै उसपर ध्यान नही देता। किन्तु तुम्हे उसके सम्बन्धमे पूरा अध्ययन करना चाहिए। यदि तुम उसे टाँक लिया करो तो गुरुवारकी ताजीसे ताजी खबरोका एक स्तम्भ या उससे अधिक दे सकते हो। उपर्युक्त नियमके अनुसार इस बार अग्रलेख "नेटाल भारतीय कांग्रेस" है।

अन्तमें हमे गुजरातीकी अनुक्रमणिका देनी है।

हाजी सुलेमान शाह मुहम्मदका विज्ञापन हमे नही मिलेगा, इसलिए उसे निकाल देना। श्री गुलका आधा कर देना। उन्होने आजिजीसे इसके लिए कहा है। उनकी स्थिति अभी अच्छी नही है। मुझे ऐसा दीखता है कि अब केप टाउनके बहुत-से विज्ञापन निकल जायेंगे। किन्तु उससे मै तनिक भी नही घबराता। दूसरे मिलेंगे। मै अपना प्रयास जारी ही रखता हूँ।

श्री आइजक इस महीनेमें वहाँ आ पहुँचेंगे। उनके लिए मेज-कुर्सी अपने कार्यालयमे रखना।

मोहनदास के आशीर्वाद

[पुनश्च]

श्री अ० कादिरके भाषणका अनुवाद तुम करोगे, ऐसा मानकर मैंने नही किया। तुम कर लेना।

मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३१४) से।

२३१. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
मार्च ५, १९०६

चि० छगनलाल,

कल्याणदासके नाम तुम्हारा पत्र मैंने पढ़ लिया है। मुझे मालूम हुआ है कि आर० पीरखाँ नहीं चाहते कि अव, बहुत समय बीत जानेकी वजहसे कोई भी ऑर्डर पूरा किया जाये। मुझे सूचित करो कि ट्रान्सवालके किन-किन ऑर्डरोंको अभीतक पूरा नहीं किया गया। मुझे यह भी बताओ कि किन ऑर्डरोकी दरोंमें, बाहर करवानेके कारण, हेर-फेर करना पड़ेगा और इन दरोंका अन्तर क्या होगा।

कुमारी नायफ़्लीस कल शाम मुझसे मिली। उन्होंने मुझसे कहा कि उन्हे पिछले अंको समेत पहले हफ्तेका 'इंडियन ओपिनियन' का अक मिल चुका है और अब कोई अंक नहीं मिल रहा है। तुम्हे याद होगा, मैंने एक भारतीय उपाहारगृहके मालिकका आर्डर तुम्हे भेजा था। उसी सम्बन्धमें एक तार किया है। मैंने तुमसे कहा था, आज या आजके पहले उसका इश्तहार उसे मिल जायेगा, ऐसा मैंने उससे वादा किया है। इसलिए उसने आज आकर पूछ-ताछ की। जब मैं फीनिक्समें था तब तुमने इसकी चर्चा नही की और दफ्तरके नाम तुम्हारी कोई चिट्ठी भी मैंने नही देखी। मेरा खयाल है, मैंने अपने पत्रमें तुम्हें लिखा था कि अगर तुम [वक्तपर वह काम न कर पाओ तो उसे लेना ही नही चाहिए]। यदि तुमने अबतक तार न दे दिया हो तो सूचित करो कि क्या किया जाये। आज मैं एक नाटकका इश्तहार भेजूंगा। मण्डली खेल अगले बुधवारको करेगी। स्वाभाविक है कि इश्तहार और कार्यक्रम उसे इसके पहले मिल जाये। इसलिए अगर यह

काम लेना असम्भव हो तो काम शुरू करनेके पहले मुझे तार कर देना। [एक बार वचन देनेपर उन्हें पूरा करना मैं बहुत ही जरूरी मानता हूँ।]

मोहनदासके आशीर्वाद

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
मारफत 'इंडियन ओपिनियन'
फीनिक्स

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३१५) से।

२३२. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
मार्च, ५, १९०६

चि० छगनलाल,

श्री गुल लिखते हैं कि वे केप टाउनके ग्राहकों और विज्ञापनदाताओंकी सूचीका इन्तजार कर रहे हैं। आशा करता हूँ कि यदि अबतक न भेजी गई हो तो तुम उसे तत्काल रवाना कर दोगे।

दादा उस्मान तुमसे इंग्लैंड, भारत और दक्षिण आफ्रिकाके प्रमुख समाचारपत्रोंके नाम माँगेंगे। तुम हेमचन्दसे कह सकते हो, हम जिन पत्रोंको 'इंडियन ओपिनियन' भेजते हैं उनकी सूची बना दे। श्री दादा उस्मानको वह सूची दे देना।

छपाईका फुटकर काम लेते वक्त इस बातका बहुत खयाल रखना है कि नकद पैसा मिले बिना अजनबियोंके ऑर्डर स्वीकार न किये जायें। इनकार करनेमें हिचकनेकी जरूरत नहीं है। उधारखाता काम सिर्फ ऐसे आसूदा और नियमित ग्राहकोंका ही लिया जाये जो पत्रके मददगार भी हों। इस मामलेमें दुविधाका काम नहीं है।

देखता हूँ, श्री उमरका डेलागोआ-बेके बारेमें लिखा गया लेख प्रकाशित नहीं हुआ। वह इस हफ्ते प्रकाशित होगा, ऐसा मानकर चलता हूँ। कल उनका लिखा हुआ दूसरा लेख भी मैंने भेजा था। वह अगले हफ्तेके लिए सुरक्षित रखा जाये, यह तो साफ ही है।

अब्दुल कादिरवाली बैठकके[1] विवरणकी सूचना तुमने घोषित नहीं की और इस हफ्तेके अंकमें भाषणका[2] अनुवाद दिया जायेगा। भरोसा है कि तुम यह कर रहे हो।

मोहनदासके आशीर्वाद

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
मारफत 'इंडियन ओपिनियन'
फीनिक्स

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३१६) से।

१. और २. देखिए क्रमशः "भाषण : अब्दुल कादिरकी विदाईपर" और "अभिनन्दन-पत्र : अब्दुल कादिरको", पृष्ठ २१६-७।
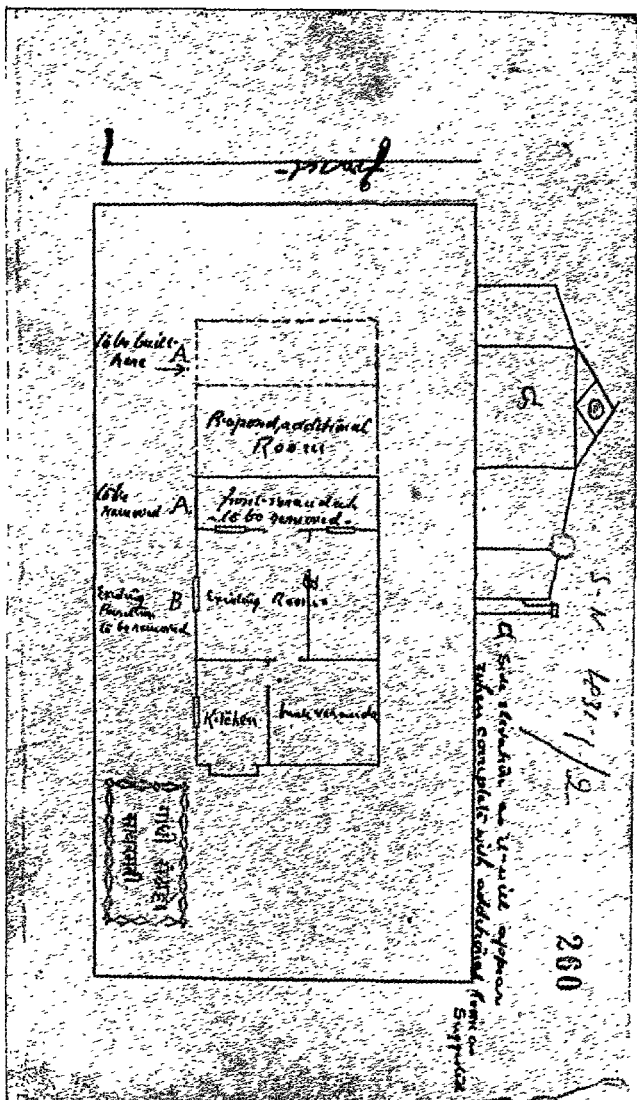
घरका नक्शा

२३३. पत्र : ए० जे० बीनको

जोहानिसबर्ग
मार्च ५, १९०६

प्रिय श्री बीन,

मेरा खयाल है ब्रायन गैब्रियल महीनेके अन्त तक कामपर आ जायेंगे। उन्होंने साथका नक्शा[1] मेरे पास भेजा है। वे, जिस घरमें आर्चड थे उसमें, इसके मुताबिक परिवर्तन कराना चाहते हैं। कृपया आप इन्हे समझकर मुझे लिखिए कि इन परिवर्तनोंमें कितना खर्च आयेगा। मेहरबानी करके मुझे सूचित करें कि क्या उस घरमें स्नानघर, पाखाना और टंकी है। क्या मकानकी दीवारे पक्की है? मैं जानबूझकर यह काम आपके सुपुर्द इसलिए कर रहा हूँ कि छगनलालपर और बोझ न पड़े; उसे कामके अधिक होनेकी शिकायत है। अगर मुमकिन हो तो वापसी डाकसे इसका जवाब दें। उम्मीद करता हूँ कि आप मेरे पत्रपर[2] विचार कर रहे हैं और उसका अनुकूल उत्तर मुझे देंगे।

कूनेकी किताब[3] शनिवारको चली जानी थी। उसे अब आज भेजा जा रहा है।

आपका शुभचिन्तक,
मो० क० गांधी

श्री ए० जे० बीन
मारफत 'इंडियन ओपिनियन'
फीनिक्स

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३१७) से।

१. बाँये पृष्ठपर उद्धृत।

२. यह उपलब्ध नहीं है।

३. लुई कूने कृत द न्यु साइंस ऑफ हीलिंग ऑर द डॉक्ट्रीन ऑफ द वननेस ऑफ ऑल डिज़ीज़ेस (नवीन चिकित्सा शास्त्र अथवा समस्त रोगोंकी एकताका सिद्धान्त)।

२३४. पत्र : ए० जे० बीनको

जोहानिसबर्ग
मार्च ७, १९०६

प्रिय श्री बीन,

श्री मैनरिंगके बारेमें आपका पत्र मिला। मुझे अफसोस है कि वे अपने साथ हुई बातचीतकी वजहसे अपनी स्थिति अनिश्चित समझ रहे हैं। जब मैं वहाँ गया तब मेरा इरादा उनसे बातें कर लेनेका था; किन्तु समय नहीं मिला और मैं बातें नही कर सका। मैंने सभी लोगोंसे जो कुछ कहा था, वह मैं सोचता रहा हूँ। परिस्थिति ऐसी थी कि मैं उस समय पिल्ले या और किसीके बारेमें बात कर रहा था। निःसन्देह मैंने यह कहा था कि कोई सिखाता है या और कुछ करता है, इस कारण उसे ऐसा नहीं मानना चाहिए कि जैसे ही वह काम उसने पूरा किया कि उसे जाना पड़ेगा; प्रेसके लोगोंमें से हरएक, जबतक छापाखाना सचमुच निठल्ला नही हो जाता, अपनेको पूरी तरहसे सुरक्षित समझ सकता है। मैं यह नहीं जानता कि तब श्री मैनरिंग वेतनके आधारपर वहाँ थे या योजनाके अंग थे। जब श्री मैनरिंगने योजनाको छोड़ दिया और फिर बादमें लौटे तब उन्हें कोई आश्वासन नहीं दिया गया था। मैं सोचता हूँ, जब वे लिये गये, मैंने छगनलालसे कहा — वह पत्र[1] उसके पास होगा — कि अब अगर श्री मैनरिंगको कामपर लें तो मासिक आधारपर। मेरा कहना ठीक न हो; किन्तु ऐसा मुझे ध्यान है। किसी भी हालतमें मेरा इरादा लोगोंको ऐसा आश्वासन देनेका हरगिज नही था कि जो योजकोंमें नही है, वे सारी परिस्थितियोंमें अपनेको सुरक्षित मान सकते है। मैं इतना ही कहना चाहता था कि किसीके स्थानपर दूसरेको कर देनेका अर्थ उसे निकाल बाहर करना बिलकुल नही है। उस रायपर मैं अब भी कायम हूँ। मैं नही जानता, श्री मैनरिंग क्या करनेकी बात सोच रहे हैं। मेरी हद तक, मैं पूरी तरह रजामंद हूँ कि वे ३ पौंड मासिकपर बने रहें, कमसे-कम इस वर्षके अन्त तक। मुझे मालूम है, आप चाहते है कि उन्हें इससे अधिक मिले, और अगर योजक सहमत हों तो मुझे तनिक भी आपत्ति नहीं है। और यदि योजक इस बातको मंजूर करें तो आप मान सकते हैं कि मैं इस पत्रसे बँधा हुआ हूँ और श्री मैनरिंग निश्चिंत रहें कि मेरी व्यक्तिगत राय चाहे जिस तरह बदल जाये, वे अपने आपको कमसे-कम इस वर्षके अन्त तक बहाल समझें। मैं श्री मैनरिंगको इस विषयमें अलगसे लिख रहा हूँ।[2]

आपका शुभचिन्तक,
मो० क० गांधी

श्री ए० जे० बीन
मारफत 'इंडियन ओपिनियन'
फीनिक्स

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३१८) से।

१. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।
२. यह उपलब्ध नहीं है।

२३५. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
मार्च ९, १९०६

चि० छगनलाल,

तुमने मुझसे उन लोगोके नामोंकी सूची माँगी है जिन्होंने श्री नाजरकी जायदादका पैसा अदा नही किया है। क्या तुमने सारे मामलेकी सूची नही बनाई थी? १५ पौंड ५ शिलिंगका मतलब मेरी समझमें नही आया। मुझे कुछ ऐसा ध्यान है कि तुमने मुझसे कहा था कि सारे बिल तुमने काट दिये हैं। यदि सूची तुम्हारे पास नही है तो मैं भेज दूँगा; मगर यह नही कह सकूँगा कि पैसा किसने दिया है, किसने नही। बेशक थानू महाराजसे तुम्हे लेना है। भट्ट और सुभावको परेशान मत करना, किन्तु कमसे-कम वह मुनाफा तो उन्हें दिया ही जायेगा। मियाँखाँसे तुम्हे ले लेना है। कागज वापस कर रहा हूँ।

आज गुजरातीमें तुम्हारा जो पत्र मिला उसमें तुमने जिस पत्र-व्यवहारकी चर्चा की है वह नही मिला। अभी-अभी वह मिल गया।[1]

मैं उस्मान आमदको लिखूँगा।

नि.सन्देह हम 'इस्लाम गजट' से उद्धरण लेना नहीं चाहते।

नाटकवालोका काम तुम कर सकोगे तुम्हारा ऐसा तार मिल गया। तुम न करते तो भी मुझे पूरा सतोष रहता। मैं चाहता यह हूँ कि तुम इस बातके प्रति सावधान रहो कि वचन देनेपर पूरा किया जाये। मैं यहाँसे बिना यह जाने कि तुम कर सकोगे या नहीं, काम भेज दे सकता हूँ; मगर यदि तुम उसे न कर पाओ तो तुम्हें हमेशा उसे न करनेका अधिकार है।

अगर उस्मान आमदसे तुम्हें सन्तोष नही मिलता तो तुम्हें काम स्वीकार करनेसे इनकार कर देना चाहिए। यह परिस्थिति उन्हें बिलकुल साफ-साफ समझा देनी चाहिए कि हमें बाहरसे कराये गये कामका नकद चुकाना करना पड़ता है। [डर कर हम कुछ भी न करे। हम सिर्फ उचित ढँग अपनाये रह कर ही लोगोंको सन्तोष देना चाहते है और उस मर्यादामें रहकर यदि कोई सन्तुष्ट नही हो पाता तो दोष हमारा नही है। इसलिए हमको इतना ही करना है कि दूसरोंके खयालसे असुविधाएँ स्वीकार करें, सदा शिष्ट रहे और जहाँ आवश्यक हो कष्ट उठायें।] इससे अधिक कुछ करणीय नही है।

मुझे अभीतक कुंवाडिया और पटेलके पत्र नही मिले हैं। वे जब मिलेंगे तब उन्हें नामँजूर कर दूँगा; किन्तु उनके जवाबमें एक टिप्पणी तुम्हे भेज दूँगा।

कांग्रेस या ब्रिटिश भारतीय संघसे उन्हे नि:शुल्क भेजी जानेवाली प्रतियोंका खर्च न हम ले सकते है, न लेना चाहते हैं।

मगनलालका तार नही आया, यह परेशानीकी बात है।

हम अभी तो श्री दाउद मुहम्मदका चित्र नहीं देना चाहते। मगर अब्दुल कादिरका दे देना चाहिए — भले ही अगले सप्ताहमें दें।

१. यह वाक्य गांधीजीके स्वाक्षरोंमें है।

उपाहार-गृहके विज्ञापनके सिवाय तुमने उसके नाम कोई बिल मुझे नहीं भेजा है। मैंने तुम्हें बिल भेजनेको भी लिखा था। मेहरबानी करके भेजो। जब कोई काम करो तो उसका बिल भेजनेकी खबरदारी भी रखनी चाहिए। काम देते ही मुझे नकद पैसे मिलनेवाले थे। तुम्हारे पाससे बिल ही न आये तो नकद पैसे कैसे ले सकता हूँ[?]

मोहनदासके आशीर्वाद

संलग्न[1]

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
मारफत **'इंडियन ओपिनियन'**,
फीनिक्स

गांधीजीके हस्ताक्षर-युक्त टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३२१) से।

२३६. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
मार्च ९, १९०६

चि० छगनलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। श्री वीनके विषयमें मैं समझ गया हूँ। तुमने सैमको पत्र नहीं दिया, यह ठीक किया है। ऐसे विषयोंमें मैं हमेशा तुम्हारे विचार जानना चाहता हूँ। श्री वीन सत्याग्रह करें यह मैं नहीं चाहता हूँ। मैंने अन्तिम पत्र[2] कल ही लिखा है। उसके बाद और नहीं लिखूँगा। श्री किचिनको भी औपचारिक रूपसे ही लिखा है।[3] उनके लिए मुझे जरा दुःख होता है। क्योंकि, उनके कहनेके मुताबिक, उन्हें अपनी सब व्यवस्था उलट देनी पड़ेगी। उन्होंने बहुत खर्च किया है। मेरे मनमें यह बात थी कि वे फीनिक्ससे नहीं जायेंगे। इसलिए यदि वे रहें तो ठीक--ऐसा मनमें होता रहता है। फिर भी उनको दुराग्रहपूर्वक रखनेका इरादा नहीं है। तुम अब श्री वीनको अधिक समझाना छोड़ दोगे, यह ठीक है। मैं अपनी जो भावनाएँ व्यक्त करता हूँ उनमें से जितना योग्य जान पड़े उतनेपर ही अमल करना चाहिए। यह समझ कर ही मैं अत्यन्त स्वतंत्रतापूर्वक, मेरे मनमें जैसे विचार आते हैं वैसे व्यक्त करता हूँ।

सारे बहीखाते तुम्हीं रखते हो, इसलिए इसका कामपर क्या असर हुआ है। बहीखाते तुरन्त तैयार हो जायें, ऐसा चाहता हूँ।

ब्रायन गैब्रियल इस महीनेके अन्तमें वहाँ आयेंगे, वे ऐसा लिखते हैं।

चि० कल्याणदासको अभी वहाँ भेज सकना मुश्किल दिखता है। मुझपर बहुत बोझ रहता है और उसे भेज देनेसे बहुत ही बढ़ जाना सम्भव है। इसके सिवाय वह खुद भी

१. यह उपलब्ध नहीं है।
२. और ३. ये पत्र उपलब्ध नहीं हैं।

वहाँ प्रफुल्लित रहेगा या नहीं, 'इसमें भी शंका है। फिर भी यदि बने तो जाड़ेके दिनोंमें भेजूँगा, वह भी थोड़ी मुद्दतके लिए।

'ओपिनियन' की फाइल भेजना। श्री आइज़कका उपयोग खूब करना।

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्च]

चिट्ठियाँ मिल गई है। उनमें से कुछ छापने योग्य नही है। दोनों पटेलोंको नीचेके अनुसार लिख देना। "आपका पत्र मिला। ऐसी सामग्री बहुत आती है। उसे 'ओपिनियन' में छापनेकी जरूरत नही जान पड़ती। उससे एक दूसरेके विरोधमें लिखा-पढी चलती है और क्लेश बढता है। 'ओपिनियन' मुख्यत: राजनीतिक और सामाजिक प्रश्नोंकी चर्चासे सम्बन्धित पत्र है। इसलिए ज्यादा धर्म सम्बन्धी विषय दाखिल करना अनुचित मालूम होता है।" उन्हे ऐसा पत्र बालाबाला लिख देना। इस बाबत उन्हें अखबारमें जवाब देना जरूरी नही है। उस्मान आमदको लिखना कि मैंने सीधे उन्हें पत्र लिखा है।

साथमें नया नाम है। उसका पैसा नही आया।

मोहनदास

गाधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३२०) से।

२३७. पत्र: उपनिवेश-सचिवको

[डर्बन
मार्च १०, १९०६ से पहले]

सेवामें
उपनिवेश-सचिव
मैरित्सबर्ग

महोदय,

नेटाल भारतीय कांग्रेसकी समितिको गत मासकी २७ तारीखके 'नेटाल गवर्नमेंट गज़ट' में प्रकाशित उस सरकारी सूचना. संख्या १५० को पढ़कर बहुत व्यथा और चिन्ता हुई है जिसके अनुसार १९०६ के कानून ३ द्वारा संशोधित १९०३ के प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम सख्या ३० के अन्तर्गत जारी पासो और प्रमाणपत्रोके सम्बन्धमें विभिन्न शुल्क लगाये गये है।

हमारी समिति सूचनामें दी गई शुल्क सूचीके विरुद्ध सादर, किन्तु तीव्र, विरोध प्रकट करती है।

निवेदन है कि यह शुल्क उन ब्रिटिश भारतीयोंपर करके समान है जिनको इस उपनिवेशमें रहने या इसमें होकर गुजरनेका अधिकार है।

सुविदित है कि यह कानून पूरी तरहसे नहीं तो बहुत-कुछ ब्रिटिश भारतीयोके विरुद्ध लागू किया गया है। उसके अन्तर्गत विभिन्न पास और प्रमाणपत्र देनेमे उन लोगोके हितका उतना खयाल नही रखा जाता जो उसकी धाराओसे प्रभावित होते है; बल्कि उन्हीका ज्यादा खयाल रखा जाता है जिनको उनका अमलमें लाया जाना अभीष्ट है।

हमारी समिति अत्यन्त आदरपूर्वक यह विचार व्यक्त करती है कि जो शुल्क लागू करने हैं, वे बहुत ज्यादा हैं।

हमारी समिति सरकारको इस तथ्यका स्मरण दिलाती है कि परम माननीय स्वर्गीय हैरी एस्कम्बके जीवन-कालमें अभ्यागत पासोंपर एक पौंड शुल्क लगानेका प्रयत्न किया गया था। इसपर उस शुल्कको लागू करनेके विरुद्ध आपत्ति करते हुए एक आदरपूर्ण आवेदनपत्र भेजा गया और उन महानुभावने शुल्क लगानेके सम्बन्धमें निकाली गई सूचना तुरन्त वापस ले ली।

उस समय अधिवास प्रमाणपत्र एक पौंडी शुल्कसे मुक्त था।

इसके अतिरिक्त हमारी समिति आपका ध्यान इस तथ्यकी ओर भी आकर्षित करती है कि जो ब्रिटिश भारतीय समुद्र-तटसे दूरस्थ उपनिवेशोंमें रहते हैं उनको नेटालमें से गुजरनेके विशिष्ट अधिकारके लिए १ पौंड शुल्क दिये बिना कमसे-कम इस उपनिवेशमें से गुजरनेका हक है।

दर असल, स्वार्थकी दृष्टिसे भी, इस तथ्यको ध्यानमें रखते हुए, कि ऐसे भारतीयोंसे नेटालकी सरकारी रेलवेको कुछ निश्चित आमदनी होती है, सरकारको कोई निषेधक शुल्क न लगाना चाहिए।

सन् १९०६ के कानून ३ में १ पौंडका शुल्क उचित समझा गया है। मेरी समिति निवेदन करती है कि अभ्यागत पास, नौकारोहण पास या अधिवास प्रमाणपत्रका १ पौंड शुल्क कभी उचित नहीं माना जा सकता। और, यदि किसी अधिवासी ब्रिटिश भारतीयकी पत्नीको उपनिवेशमें रहने या प्रवेश करनेका अधिकार है, और यदि शिक्षा-सम्बन्धी परीक्षामें उत्तीर्ण भारतीय भी उपनिवेशमें अधिकारसे प्रवेश कर सकता है तो, मेरी समितिकी विनीत सम्मतिमें, यह कठोर ही नहीं, बल्कि अपमानजनक भी प्रतीत होता है कि अधिवासी भारतीयकी पत्नीको या शिक्षित भारतीयको इसलिए ५ शिलिंग देना पड़े — जो आखिरकार कर ही है — कि उसे कानूनके अर्थके अन्तर्गत निषिद्ध प्रवासी न माना जाये।

हमारी समिति निकासी-पास (ट्रान्ज़िट पास) का अर्थ नहीं समझती।

हमारी समितिका विश्वास है कि सरकार सूचनाको वापस लेनेकी और अबतक लागू शुल्कको चालू रहने देनेकी कृपा करेगी।

हमारी समिति आशा करती है कि चूँकि यह मामला आवश्यक है, आप इसपर जल्दी ध्यान देंगे।

आपके आज्ञाकारी सेवक,
ओ० एच० ए० जौहरी
एम० सी० आंगलिया
संयुक्त अवैतनिक मन्त्री, ने० भा० कां०

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–३–१९०६

२३८. "एशियाइयोंकी बाढ़"

दक्षिण आफ्रिकाके सहयोगी व्यापार-मण्डलोंकी कांग्रेस पिछले हफ्ते डर्बनमें हुई थी। उसने फिर भारतीयोंके बारेमें एक प्रस्ताव पास किया है। प्रिटोरियाके श्री ई० एफ० बोर्कने यह प्रस्ताव किया था:

> **दक्षिण आफ्रिकी व्यापार-मण्डलोंकी यह कांग्रेस सम्पूर्ण दक्षिण आफ्रिकाके व्यापारपर एशियाइयोंकी निरन्तर बाढ़के प्रभावको, जो अधिकाधिक हानिकर होता जा रहा है, भयके साथ देखती है और विश्वास प्रकट करना चाहती है कि दक्षिण आफ्रिकाकी गोरी आबादीके हितोंके रक्षार्थ इस सम्बन्धमें यथासम्भव न्यूनतम समयके भीतर विविध सरकारोंकी संगठित कार्रवाई अत्यन्त आवश्यक है।**

श्री जी० मिचलने प्रस्ताव किया कि "निरन्तर" शब्द निकाल दिया जाये और प्रस्ताव इस संशोधनके साथ पास हो गया। सहयोगी-व्यापार-मंडलोंकी कांग्रेस-जैसी महत्वपूर्ण संस्था द्वारा पास किये हुए इस प्रकारके प्रस्तावका वजन होना ही चाहिए, और आशंका है कि तथ्योंकी दृष्टिसे बिलकुल निराधार होते हुए भी प्रस्तावका उपयोग दक्षिण आफ्रिकाके व्यापार-मण्डलोंकी ओरसे प्रकट की गई प्रामाणिक सम्मतिके रूपमें किया जायेगा।

अगर प्रस्तावपर शांतिके साथ विचार किया जाये तो जान पड़ेगा कि एशियाइयोंकी बाढ़से सम्पूर्ण दक्षिण आफ्रिकाके व्यापारपर हानिकारक प्रभाव नहीं पड़ सकता, क्योंकि भारतीय प्रवासी चाहे कितने ही गरीब हों, आखिर उपभोक्ता तो होंगे ही। किन्तु हमारे खयालसे प्रस्ताव निर्माता यह कहना चाहते होंगे कि भारतीयोंकी बाढ़के कारण भारतीय व्यापारियोंकी संख्या बढ़ी है और उसका ऐसा प्रभाव पड़ा है। यद्यपि भारतीयोंकी बाढ़, और भारतीय व्यापार, दोनों सवालोंपर इन स्तम्भोंमें कई बार पूरी तरह विचार किया जा चुका है, फिर भी हम यह दिखानेके लिए इनपर पुनः विचार करना चाहते हैं कि वास्तविक स्थितिके सम्बन्धमें वक्ताओंकी जानकारी कितनी कम थी। जहाँतक केप कालोनी और नेटालका सम्बन्ध है, और जैसा प्रवास-कार्यालयके रोजाना कागजातसे मालूम पड़ता है, भारतीय प्रवासियोंपर बड़ी प्रभावपूर्ण रोक है और प्रतिबन्धोंको लागू करनेका तरीका दिन-ब-दिन अधिकाधिक कष्टप्रद बनाया जा रहा है। प्रोफेसर परमानन्दके पत्रसे, जिसे हम दूसरे स्तम्भमें छाप रहे हैं, पता चलेगा कि प्रवासी-अधिकारी व्यक्तिका कोई लिहाज नहीं करते। विद्वान प्रोफेसरको, जिनका नाम और यश उनसे पहले ही यहाँ पहुँच चुका था, एलिजाबेथ बन्दरगाहमें, धरतीपर पग रखनेकी इजाजत देनेसे पहले शिक्षा-सम्बन्धी कसौटीसे गुजरनेके लिए मजबूर किया गया। क्या इससे भी ज्यादा सख्ती सम्भव है?

ऑरेंज रिवर कालोनी तो इस नाप-जोखमें कहीं आती ही नहीं, क्योंकि किसीने कभी यह नहीं कहा कि वहाँ कोई उल्लेखनीय भारतीय आबादी या भारतीय व्यापार है। फिर भी हम देखते हैं कि प्रस्ताव सारे दक्षिण आफ्रिकापर लागू किया गया है।

ट्रान्सवालके सम्बन्धमें तो लॉर्ड सेल्बोर्न तथा दूसरे सरकारी अधिकारियोंने कई बार स्पष्ट शब्दोंमें कहा है कि किसी भी गैर-शरणार्थी ब्रिटिश भारतीयको ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेकी अनुमति नहीं दी जा रही है। हमारा "अनुमतिपत्रका काठ"[1] स्तम्भ यह प्रमाणित करेगा।

१. देखिए "अनुमतिपत्रका काठ", पृष्ठ २१३।

एक वक्ताने कहा कि परामर्शदाता-मण्डलोंकी नियुक्ति प्रवासियोंकी बाढ़ जारी होनेका प्रमाण है। क्या हम उन्हें बतायें कि ये मण्डल इसलिए नहीं स्थापित किये गये हैं कि प्रवासियोंकी बाढ़ जारी है, बल्कि उस आन्दोलनके उत्तरमें स्थापित किये गये हैं जो ट्रान्सवालके कुछ स्वार्थी दलोंने खड़ा किया था। और इसमें भारतीय शरणार्थियोंकी भावनाओं और सुविधाओंकी पूर्णतः उपेक्षा की गई। ये मण्डल उससे अधिक प्रभावकारी ढंगसे काम नहीं कर सके जितने प्रभावकारी ढंगसे अबतक अनुमतिपत्र-अधिकारियोंने किया है। उसी वक्ताने यह भी कहा कि "वह इस बातका प्रमाण दे सकता है कि कुछ एशियाई गैर-कानूनी रूपसे आ रहे है, यह बात सरकार पहलेसे ही जानती थी।" यह वक्तव्य या तो सत्य है या असत्य। अगर यह सत्य है तो सरकारके प्रति, और भारतीय जनताके प्रति भी, वक्ताका कर्त्तव्य है कि वह नामोंके साथ विस्तृत जानकारी दे। अगर यह असत्य है तो उसे एक सम्मानित व्यक्तिकी तरह इसको वापस ले लेना चाहिए। इस प्रकारके गम्भीर वक्तव्योंका, जिनका समर्थन करनेके लिए कोई तथ्य न हों, और जो संयुक्त व्यापार संघकी कांग्रेस-जैसी सार्वजनिक संस्थाके सामने रखे गये हों, खण्डन करना आवश्यक है; और हम जोरोंके साथ कहना चाहते है कि ट्रान्सवालमें भारतीयोंकी कोई ऐसी गैर-कानूनी बाढ़ नही आई है, जिसका उल्लेख वक्ताने किया है। हम यहाँ जनताका ध्यान इस तथ्यकी ओर खींचना चाहते हैं कि जोहानिसबर्गके ब्रिटिश भारतीय संघने इस विषयमें सार्वजनिक जाँचकी माँग की थी। किन्तु वह सरकारने इस कारण मँजूर नहीं की कि सरकारको पूर्ण विश्वास था कि भारतीयोंकी ऐसी कोई बाढ़ नहीं आई। जहाँतक नेटालमें भारतीय व्यापारमें कथित वृद्धिकी बात है, भारतीय परवानोंपर अत्यन्त प्रभावकारी एवं अत्याचारमूलक रोक लगी हुई है। जैसा कि कांग्रेसके सदस्योंको अवश्य ज्ञात होगा, नेटाल विक्रेता-परवाना अधिनियमके अन्तर्गत प्रत्येक भारतीय परवाना-अधिकारीकी दयापर निर्भर है। उन्हें यह भी मालूम होगा कि दो सम्मानित भारतीयोंके[1], जो बहुत पुराने व्यापारी है, परवाने मनमाने तौरपर छीन लिए गए है, यद्यपि वस्तुस्थिति यह है कि व्यवसायमें यूरोपीयोंसे उनकी कोई प्रतिद्वन्द्विता नहीं थी।

ट्रान्सवालमें भी स्थिति इससे अच्छी नहीं है; फिर इसका कारण यही क्यों न हो कि ट्रान्सवालमें भारतीयोंकी आबादी इतनी ज्यादा नही है जितनी नेटालमें है, और उस उपनिवेशमें शरणार्थियोंको भी प्रवेश करनेमें कठिनाईका अनुभव होता है। साथ ही, हमें यह स्वीकार करनेमें कोई बाधा नहीं कि परीक्षात्मक मुकदमेमें, सर्वोच्च न्यायालयने जो निर्णय दिया है उससे भी एक हद तक — यद्यपि किसी उल्लेखनीय संख्यामें नहीं — भारतीय परवानोमें वृद्धि हुई है। किन्तु भारतीयोंने कहा है कि १८८५ के कानून ३ तथा सम्पूर्ण वर्गीय कानूनोंको रद कर दिया जाये तो वे नये व्यापारिक परवानोंका नियन्त्रण नगरपालिकाओंको दे देनेका सिद्धान्त मान लेंगे। इसमे उन्होंने बहुत बड़े संयमका परिचय दिया है। यह बात ध्यान देने योग्य है कि उक्त प्रस्तावकी बहसमें जिन आठ वक्ताओंके भाग लेनेकी खबर है, उनमें केवल दो केप टाउनके थे और भारतीय व्यापार यूरोपीय व्यापारपर कोई प्रभाव डाल रहा है यह सिद्ध करनेके लिए उन्होंने कोई तथ्य या आँकड़े प्रस्तुत नहीं किये प्रतीत होते। इस तरह हर दृष्टिसे जाँच करनेपर प्रस्ताव बिलकुल अनावश्यक है, और निश्चय ही वह तथ्योंपर आधारित नहीं है। इसका एक ही उपाय है और वह ट्रान्सवालके लोगोके पास है; किन्तु उन्होंने अभीतक तो उसको माननेसे इनकार ही किया है। यह भी ध्यान देने योग्य है कि आठ वक्ताओंमें से पाँच ट्रान्सवालके थे और

१. दादा उस्मान और हुंडामल; देखिए क्रमशः खण्ड ३, पृष्ठ १८, और खण्ड ४, पृष्ठ ३८५–८६।

यह बात स्पष्ट है कि यह प्रस्ताव — जैसा कि उसमें कहा गया है — सामान्यतः दक्षिण आफ्रिकाके हितमें नहीं, वरन् केवल ट्रान्सवालके हितमें पास किया गया है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–३–१९०६

२३९. एक अन्तर

हम सहयोगी व्यापार-मण्डलोंकी कांग्रेसकी कार्रवाईपर अपने विचार प्रकट करते हुए प्रोफेसर परमानन्दकी उन कठिनाइयोंकी ओर ध्यान आकर्षित कर चुके हैं, जो केप कालोनीमें से गुजरते हुए, उनके सामने आई थी।[1] जैसा कि विदित होगा, उनको ईस्ट लन्दनमें उतरनेकी अनुमति देनेके पूर्व परीक्षा लेकर नाहक ही अपमानित किया गया।

हम एक दूसरे स्तम्भमें श्री उमर हाजी आमद जौहरीका एक पत्र[2] छाप रहे हैं। उससे पता चलता है कि अत्यन्त प्रतिष्ठित भारतीयोंको भी दक्षिण आफ्रिकामें कितना अपमान सहना पड़ता है। श्री जौहरी दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंके एक नेता हैं। वे नेटालकी प्रसिद्ध पेढी ई० अबूबकर आमद ऐंड ब्रदर्सका प्रतिनिधित्व करते हैं। वे एक सुसस्कृत भारतीय हैं और यूरोप तथा अमेरिकाकी यात्रा कर चुके हैं। किन्तु फोक्सरस्टके अनुमतिपत्र-अधिकारीके लिए इन बातोंका कोई महत्व न था। उसने श्री जौहरीके अनुमतिपत्रकी जाँच-मात्रसे सन्तुष्ट न होकर गुस्ताखीसे उनको अपने रजिस्टरमें अँगूठेकी निशानी लगानेके लिए कहा। हम स्वीकार करते हैं कि हमें इस प्रकारकी कार्रवाईका कोई कारण दिखाई नहीं देता। श्री जौहरी उचित रूपसे यह पूछ सकते हैं कि किसी जुर्मका, सिवा इसके कि उनकी चमड़ीका रंग भूरा है, दोषी न होते हुए भी क्या उनके साथ अपराधीके समान व्यवहार किया जायेगा।

और अभी कुछ पहले जब एक जापानी प्रजाजनके साथ अभद्र व्यवहार किया गया था तब दक्षिण आफ्रिकाके लोगोंमें बहुत रोष फैला था। हमारे सहयोगी 'ट्रान्सवाल लीडर' ने, एक रोषपूर्ण सम्पादकीयमें, श्री नोमूराको अनुमतिपत्र देनेमें विलम्ब करने और उनको अँगूठेकी निशानी देनेकी अपमानजनक प्रक्रियामें से गुजारनेपर अधिकारियोंकी बड़ी लानत-मलामत की थी और ट्रान्सवालके लोगोंकी ओरसे उक्त सज्जनसे सार्वजनिक रूपसे क्षमा माँगी थी।

हमारा विश्वास है कि श्री नोमूरा इस क्षमा-याचनाके अधिकारी थे। परन्तु हम जिन घटनाओंकी ओर अब ध्यान आकर्षित कर रहे हैं, उनके प्रति और इस घटनाके प्रति जनताके रुखमें जो फर्क है उसको स्पष्ट किये बिना नहीं रह सकते। हमें भय है कि प्रोफेसर परमानन्द या श्री जौहरीके पक्षमें एक हल्की-सी आवाज भी न उठाई जायेगी। निष्कर्ष स्पष्ट है। श्री नोमूरा जिस राष्ट्रके हैं वह स्वतन्त्र है और ब्रिटेनका मित्र है। परन्तु प्रोफेसर परमानन्द और श्री जौहरी आखिर ब्रिटिश भारतीय ही हैं। किन्तु थोड़ासा विचार करनेसे प्रकट हो जायेगा कि ब्रिटिश प्रजाजन भी जनताकी कमसे-कम उतनी ही परवाहके अधिकारी हैं। और, यदि जैसी नीतिकी ओर हमने ध्यान खींचा है वैसी ही पर अमल होता गया तो अन्तमें साम्राज्य छिन्न-भिन्न हुए बिना न रहेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–३–१९०६

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

२४०. लज्जाजनक

पिछली २७ फरवरीके 'नेटाल गवर्नमेंट गज़ट' में प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमके अन्तर्गत एक विज्ञप्ति प्रकाशित हुई है। कानूनसे प्रभावित लोगोंको इसके सम्बन्धमें कई कागज-पत्र लेने पड़ते हैं। विज्ञप्तिके द्वारा इन कागज-पत्रोंको लेनेकी कई तरहकी फीसें लगा दी गई हैं। हम नाममात्रकी फीसकी कोई परवाह नहीं करते, यद्यपि ऐसी तुच्छ-सी फीस भी वसूल करनेकी वैधतापर हमें सन्देह है। परन्तु उपर्युक्त विज्ञप्ति तो नेटालके खाली खज़ानेको भरनेकी लज्जा-जनक चेष्टा मात्र है, और कुछ नहीं है। अधिवास (डोमीसाइल) प्रमाणपत्र, अभ्यागत (विज़िटिंग) पास या नौकारोहण (एम्बार्केशन) पास — हरएकका एक पौंड देना होगा। शिक्षा-सम्बन्धी परीक्षा पास करनेकी योग्यताका प्रमाणपत्र, पत्नीकी छूटका प्रमाणपत्र और निकासीका पास (इसका अर्थ जो भी हो) — इनमें से हरएककी फीस पाँच शिलिंग होगी। इस प्रकार यद्यपि कानूनकी रूसे कोई भारतीय नेटालमें प्रवेश करने या इस उपनिवेशमें रहनेका अधिकारी भले ही हो, किन्तु वह अबसे उसका मूल्य दिये बिना ऐसा कर नहीं सकता।

१८९७ में इस तरहका कर लगानेकी कोशिश की गई थी, परन्तु स्वर्गीय परममाननीय एच० एस्कम्बने[1] इसके विरुद्ध नेटाल भारतीय कांग्रेसका विरोध उचित समझकर उस करको तुरन्त वापस ले लिया था।

इस विज्ञप्तिके बनानेवालोंको यह नहीं सूझा प्रतीत होता कि उनकी भारतीयोंसे इतनी भारी फीसें ऐंठनेकी कोशिशसे उपनिवेशका घाटा कम होना आवश्यक नहीं है। एक ट्रान्सवाल-वासी भारतीय भारतको लौटना चाहता है। इसके लिए उसे केप, डर्बन या डेलागोआ-बे से गुजरना ही पड़ेगा। सबसे ज्यादा लोग डर्बनके रास्तेसे जाते हैं। भारतीय मुसाफिरोंका याता-यात अच्छा खासा होता है। नेटाल सरकारको इस बातकी सावधानी बरतनी चाहिए कि वह कहीं भारतीयोंसे एक पौंड ज्यादा ऐंठनेके प्रयत्नमें उस मुर्गीको न मार डाले जो नेटालसे गुजरनेवाले भारतीय यात्रियोंके यातायातके रूपमें सोनेका अंडा देती है। उसकी स्वार्थ वृत्तिसे हमारा इतना अनुरोध काफी है।

इन्साफकी दृष्टिसे तो मामला सोलहों आने भारतीयोंके पक्षमें है। प्रवासी-अधिनियम सभी लोगोंपर एक-सा लागू माना जाता है, फिर चाहे वे किसी देशके हों। परन्तु वस्तुतः वह, एकमात्र नहीं तो मुख्यतः, भारतीयोंके विरुद्ध लागू किया जाता है। इसलिए विज्ञप्तिमें जिन फीसोंको लगानेकी तजवीज है वे भारतीय समाजपर विशेष करके रूपमें हैं। हम इस आर्थिक परेशानीमें सरकारके साथ सहानुभूति प्रकट करते हैं। किन्तु उसने राज्यका खजाना भरनेका जो तरीका अपनाया है, उसका समर्थन नहीं कर सकते।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–३–१९०६

१. सर हैरी एस्कम्ब (१८३८–९९), नेटालके सर्वोच्च न्यायालयके एक प्रमुख वकील, और बादमें महान्यायवादी। १८९७ में नेटालके प्रधानमंत्री थे।

२४१. व्यक्तिकर सम्बन्धी शिकायत

हमारे गुजराती स्तम्भोसे प्रकट होता है कि व्यक्तिकर देनेवाले भारतीयोको यूरोपीय एवं भारतीय करदाताओके बीच कथित व्यवहार-भेदके कारण बहुत खीज होती है। एक पीड़ित व्यक्ति कहता है:

जब कोई यूरोपीय व्यक्तिकर देने जाता है, उसे पाँच मिनट भी रुकना नहीं पड़ता। इसके विपरीत भारतीयको प्रायः सारा दिन लगा देना पड़ता है, तब कहीं उससे करकी रकम ली जाती है और उसका काम निबटाया जाता है।

अगर यह सच है कि जो भारतीय कर-दाता कर देना चाहते है उनको कर अदा करने तथा उसकी रसीद पानेमें करीब-करीब पूरा दिन बिताना पड़ता है, तो सरकार द्वारा की गई व्यवस्थामे कोई जबरदस्त खराबी है और हम अधिकारियोंका ध्यान इस शिकायतकी ओर आकर्षित करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–३–१९०६

२४२. जर्मन पूर्वी आफ्रिका जहाज प्रणालीके भारतीय यात्री

हमारे गुजराती स्तम्भों द्वारा एकाधिक सवाददाताओने उस असुविधाकी ओर ध्यान दिलाया है जो डर्बनकी पिछली यात्रामे 'सोमाली' जहाजके मुसाफिरोको हुई थी। उनमें से एक लिखता है:

'सोमाली' जहाजके, जो २० जनवरीको रवाना हुआ, मुसाफिरोंको भोजन बनाने वगैरहकी अनेक कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा। जहाजके खलासी मुसाफिरोंके आरामके बारेमें बिलकुल लापरवाह थे, और कप्तानसे शिकायतें की जातीं तो वह सुनता ही नहीं था।

हम जर्मन पूर्वी आफ्रिका जहाज प्रणालीके एजेंटोका ध्यान उपर्युक्त शिकायतोकी ओर आकर्षित करते हैं। अगर वे कोई खुलासा देना चाहे तो उसे छापनेमें हमें खुशी होगी। कुछ भी हो, हमें विश्वास है कि इसकी पूरी जाँच की जायेगी; और इस तथ्यको देखते हुए कि भारतीयोसे इस जहाज-प्रणालीको काफी मदद मिलती है, स्वार्थकी नीतिसे भी भारतीय यात्रियोका लिहाज करना जरूरी होगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–३–१९०६

२४३. नेटाल भारतीय कांग्रेस

नेटाल भारतीय कांग्रेसमें बहुत फेरफार हुए हैं। श्री अब्दुल कादिर आठ साल तक कांग्रेसका सभापति-पद सँभालनेके बाद देशको विदा हो गये हैं। उनकी मुरादें पूरी हों, और वे सही-सलामत वापस आयें, यही हमारी कामना है। भारतीयोंने श्री अब्दुल कादिरका अच्छा सम्मान किया। वह उनके योग्य ही था। उनका सम्मान करके कौमने अपना मान बढ़ाया है। कई वक्ताओंने श्री अब्दुल कादिरकी उदारतापर जोर दिया था और वह बिलकुल उचित था।[1] श्री अब्दुल कादिरने गम्भीरता और नम्रताके साथ कुर्सीकी प्रतिष्ठाका निर्वाह किया है। कांग्रेसको अच्छी बुनियादपर खड़ा करनेमें उनका पर्याप्त हाथ रहा है। इस सबके लिए उन सज्जनको जितना भी मान दिया जाये, थोड़ा ही होगा।

श्री अब्दुल कादिरके जानेके साथ ही श्री आदमजी मियाँखाँने भी अपना अवैतनिक संयुक्त मन्त्रीका पद छोड़ दिया। श्री आदमजी भारतीय व्यापारी-समाजमें जो बहुत थोड़े पढ़े-लिखे लोग है, उनमे से एक है। वे कांग्रेसकी स्थापनाके समयसे ही उसकी सेवामें हाथ बँटाते रहे है। सन् १८९६ में, जब हमारे लोगोंकी हालत बहुत गम्भीर थी, श्री आदमजीने बड़े चातुर्य, उत्साह और सौम्यताके साथ काम किया था। उनके जमानेमें कांग्रेसके सदस्योंमें बड़ा उत्साह था। श्री आदमजीने थोड़ेसे समयके अन्दर १,००० पौंड इकट्ठा करनेमें मुख्य भाग लिया था। इतना ही नही, बल्कि राजनीतिक मामलोंमें भी उन्होंने उतनी ही लगनका परिचय दिया था। जब 'कूरलैंड' और 'नादरी' जहाजोंके खिलाफ डर्बनके लोगोंने प्रदर्शन[2] किया था, तब श्री आदमजीने धैर्य और दृढ़तासे काम लिया। बादमें जब स्वर्गीय श्री नाजरने और श्री खानने कांग्रेसके मन्त्रीका पद छोड़ा तब श्री उमर हाजी आमद झवेरीके साथ श्री आदमजी मियाँखाँ संयुक्त मन्त्री बनाये गये, और उस समयसे पिछले हफ्ते तक उन्होंने श्री झवेरीके साथ रहकर कांग्रेसकी सेवा की है। श्री आदमजीके पदत्यागका एक कारण उनकी अस्वस्थता है, और दूसरा सूरती भाइयोंको मौका देनेकी इच्छा है। श्री आदमजी मियाँखाँकी अस्वस्थताके लिए हमें खेद है और हम ईश्वरसे यह प्रार्थना करते है कि वह उन्हें तन्दुरुस्ती दे। श्री आदमजीके पदत्यागका दूसरा कारण उनके लिए अधिक गौरवास्पद है। उनकी एक ही इच्छा रही है कि देशका कल्याण हो।

श्री अब्दुल कादिरकी जगह श्री दाउद मुहम्मद सभापति नियुक्त हुए हैं, और श्री आदमजीकी जगह श्री मुहम्मद कासिम आंगलियाकी नियुक्ति की गई है। कांग्रेस-भवनमे हुई विराट सभाने जोरके हर्षनादके साथ उनका स्वागत किया है। व्यापारी-समाजमें विशेष भाग सूरतियोंका है। इसलिए इस बार दो सूरती सज्जनोंका एक साथ बड़े पदोंपर आना ठीक ही हुआ है। श्री अब्दुल कादिर और श्री आदमजी जैसे जागरूक लोगोंकी जगह सम्भालना मुश्किल काम है, लेकिन हमें उम्मीद है कि दोनों नये सज्जन अपना काम भली-भाँति सँभालेंगे।

श्री दाउद मुहम्मद शुरूसे ही कांग्रेसके मुख्य सदस्योंमें रहे हैं। उन्होंने कांग्रेसकी बहुत अच्छी सेवा की है। वे सबसे पहले कांग्रेस-मण्डलके अधिकारी बने थे। उनकी होशियारी किसीसे छिपी नहीं है। उनमें कई गुण हैं। यदि अपने इन सब गुणोंका उपयोग वे कांग्रेसकी सेवामें करेंगे, तो हमें विश्वास है कि उनके कारण कांग्रेसका तेज बढ़ेगा।

१. देखिए "अभिनन्दन-पत्र: अब्दुल कादिरको", पृष्ठ २१६–७।

२. १३ जनवरी, १८९७को; देखिए खण्ड २, पृष्ठ १६६–७८।

श्री मुहम्मद कासिम आंगलिया शिक्षित हैं। उन्हें राजनीतिक कार्यकी जानकारी है। यद्यपि कांग्रेसमें उन्होंने अभीतक अधिक काम नही किया है, तो भी उनमे मन्त्रीकी योग्यता है। अभी तो कांग्रेसके सदस्योंमे खूब उत्साह है। हमें आशा है कि इस उत्साहसे लाभ उठाकर श्री दाउद मुहम्मद, श्री उमर हाजी आमद झवेरी और श्री मुहम्मद कासिम आंगलिया कांग्रेसका काम अच्छी तरह करेंगे।

एक अरसेसे कांग्रेसमे उगाहीका काम नही हुआ है। कुछ राजनीतिक काम करने जरूरी है। ये सब काम मेहनत करनेपर आसानीसे हो सकते है। जिस तरह इंग्लैंडमें नया मन्त्रि-मण्डल है, उसी तरह कांग्रेसमें भी नया मन्त्रिमण्डल है। संयोग ऐसा है कि जिससे भलाईकी आशा करनेका हमें हक है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–३–१९०६

२४४. फ्राइहीडको नेटालसे अलग करनेके लिए आन्दोलन

विलायतमें उदारदलीय मन्त्रिमण्डल बननेसे डच लोगोंमें बड़ी हिम्मत आ गई है, और वे यह मानने लगे है कि अब वे जो माँगेंगे, सो मिल सकेगा। जब फ्राइहीडको ट्रान्सवालसे हटाकर नेटालमें जोड़ा गया था तब डच लोगोंने विरोध किया था, पर सुनवाई नही हुई। अब उन लोगोंने फिरसे बड़ी अर्जी भेजनेका निर्णय किया है। उन्हे नेटालके कानून पसन्द नही है, और ट्रान्सवालके साथ रहना उन्हें अच्छा लगता है। अगर फ्राइहीड ट्रान्सवालमें मिलाया जाये तो उससे भारतीयोंको बहुत लाभ होगा। आज तो ट्रान्सवाल और नेटाल दोनोके बुरे कानून उनपर लागू होते हैं और दोनोंमें से एकके भी अच्छे कानूनोका लाभ उन्हे नही मिलता।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०–३–१९०६

२४५. श्री जॉन मॉर्ले और भारत

श्री जॉन मॉर्ले भारतके बारेमें बोल दिये हैं। श्री रॉबर्ट्सने उनसे बंगालके विभाजनके बारेमे पूछा था। जवाबमें उन्होंने कहा कि बंगालके टुकड़े हो चुके है। उसकी सीमा निश्चित करनेके बारेमें लोगोंकी भावनाको ठेस नहीं पहुँचानी चाहिए थी। लेकिन अब जो हो चुका है, उसमे फेरफार करनेकी जरूरत नही मालूम होती। राज्य-कारोबारमें बहुत दिनोंसे एक उत्तेजना चली आ रही थी, अब उसके शान्त होनेकी आवश्यकता है। शासनके काम-काजमें लोगोंको हिस्सेदार बनानेका समय अभी आया नहीं है।

ये वचन निराशा पैदा करनेवाले है। इसका मतलब यह हुआ कि बंगालकी जनताको इन्साफ नहीं मिलेगा। अगर लगाम शुरूसे ही श्री मॉर्लेके हाथमें होती, तो विभाजन होता ही नही। इससे मालूम होता है कि श्री मॉर्लेसे जो यह आशा रखी जाती थी कि वे बहुत हिम्मतके साथ, बिना डरे जो करना चाहिए सो करेंगे, वह टूट गई है। फिर भी इसका सार यह

निकलता है कि उनके कार्यकालमें नये कानून बनाते समय भारतीय प्रजाकी भावनाका ध्यान रखा जायेगा। किन्तु श्री मॉर्लेने बताया है कि हम शासनके काम-काजमें हाथ बँटाने योग्य नहीं हैं। उनकी इस बातका यह अर्थ निकल सकता है कि हम स्वराज्यके लायक अभी नही बने है। ऐसी बातोंपर से यह अनुमान लगाना उचित न होगा कि श्री मॉर्लेसे भारतको कोई लाभ नही पहुँचेगा। श्री मॉर्लेके विचार साधारण आंग्ल-भारतीयोके विचारोंसे मिलते-जुलते है। उनके इन विचारोंको बदलनेके लिए हम पूरा प्रयत्न करेंगे तभी कुछ फर्क हो सकता है। यह आशा रखना कि चूँकि उन्होने आयरलैंडके लिए बहुत मेहनत की है, इसलिए हमारे लिए भी जरूर करेंगे, व्यर्थ प्रतीत होता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-३-१९०६

२४६. नेटालमें अधिवासी-पास आदिके नये नियम

२७ फरवरीके 'नेटाल गवर्नमेंट गज़ट' में निम्नलिखित नियमावली प्रकाशित हुई है।

प्रवासी कानूनके अनुसार जिन लोगोंको प्रमाणपत्र इत्यादिकी जरूरत होगी उनसे नीचे लिखे अनुसार शुल्क लिया जायेगा :

	पौं०	शि०	पें०
शुल्क-मुक्ति पत्र (एक्ज़ेम्पशन सर्टिफिकेट) का यानी किसी व्यक्तिको उपनिवेशमें प्रविष्ट होनेकी विशेष अनुमतिका शुल्क	०	५	०
भाषा-ज्ञान प्रमाणपत्र शुल्क	०	५	०
अधिवासी प्रमाणपत्र (डोमिसाइल सर्टिफिकेट) का	१	०	०
अभ्यागत पास (विज़िटिंग पास) का	१	०	०
नौकारोहण या जहाजपर चढ़नेकी अनुमति (एम्बार्केशन पास) का	१	०	०
स्त्रीके लिए अलग पासका	०	५	०
नेटालमें होकर जानेके प्रमाणपत्रका	०	५	०

अगर ये कर जारी रहे, तो बहुत बुरा होगा। हमें आशा है कि नेटाल भारतीय कांग्रेस इस मामलेको तुरन्त हाथमें लेगी।

इस तरहका कर लगानेका विचार स्वर्गीय श्री हैरी एस्कम्बने किया था, पर कांग्रेसने सख्त लिखा-पढ़ी की, जिससे वह वापस ले लिया गया था।

नेटाल भिखारी बन गया है। इसलिए अब सरकार जहाँ-तहाँसे पैसा बटोरनेके लिए हाथ-पैर पटक रही है। सरकारने इन करोंको लगानेका नया रास्ता खोज निकाला है। यह अपने हाथसे अपने पैरों कुल्हाड़ी मारने जैसी बात हुई है। ट्रान्सवालमें रहनेवाले भारतीयोंको देश जानेके लिए नेटालका रास्ता आसान पड़ता है। उनके नेटाल होकर जानेसे सरकारी रेलवेकी आमदनीमें वृद्धि होती है। अगर वे लोग डेलागोआ-बेके रास्ते जायें, तो नेटाल सरकारको उतना घाटा होनेकी सम्भावना है। हमें आशा है कि अगर इस तरहका दण्ड जारी रहा तो भारतीय मुसाफिर नेटाल रेलवेका बहिष्कार करेंगे और डेलागोआ-बेके रास्ते जाया करेंगे।

नेटाल सरकारको इस तरहका कर लगानेका कोई अधिकार नही है। नेटालवालोके स्वार्थके लिए इस कानूनको अमली रूप दिया गया है। इसलिए अगर इसका बोझ किसीपर डालना है, तो गोरोपर डालना चाहिए। अगर कोई भारतीय थोड़े समयके लिए नेटाल आता है, तो नेटाल सरकारका फर्ज है कि उसकी मदद करे, न कि उसे दण्ड दे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १०–३–१९०६

२४७. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

मार्च १०, १९०६

ट्रामका परीक्षात्मक मुकदमा

ट्रामके परीक्षात्मक मुकदमेकी सुनवाई पिछले बुधवारको मजिस्ट्रेट श्री कारकी अदालतमे हुई। वादी श्री कुवाडियाकी ओरसे श्री गाधी वकील थे और प्रतिवादीकी ओरसे नगर परिषदके वकील श्री हाइल हाजिर थे। मुकदमा धर्मके वकील [सरकारी वकील] श्री ब्लेनके हाथमे था। उन्होने काले-गोरेका भेद न रखते हुए मुकदमेकी पैरवी अच्छी तरह की। श्री कुवाडियाने अपने बयानमें बताया कि प्रतिवादीने उन्हे ट्राममे बैठनेसे रोका और कहा कि काले लोगोंकी ट्राममें बैठना। इस कारण यह मुकदमा चलाना पड़ा है। नगर-परिषदके वकीलने इस तथ्यको कबूल कर लिया, इसलिए श्री मैकिनटायरके बयान लेनेकी जरूरत नही रही। प्रतिवादीने बयान देते हुए कहा कि उसे नगर-परिषदका हुक्म है कि भारतीय अथवा दूसरे काले आदमीको, अगर वह किसी गोरेका नौकर न हो, अथवा नौकर होनेपर भी अपने मालिकके साथ न हो, तो उसे ट्राममें न बैठने दिया जाये। इसलिए उसने मना किया था। इसके बाद श्री ब्लेनने अदालतसे निवेदन किया कि जोहानिसबर्गके ट्राम प्रणालीके उपनियमोंके अनुसार भारतीयोको किसी भी ट्राममें बैठनेका हक है, इसलिए प्रतिवादीने अपराध किया है।

श्री हाइलने अपने निवेदनमें स्वीकार किया कि ट्राम प्रणालीके उपनियमोमें भारतीयोको बैठनेकी मनाही नही है। पर बोअरोके समयकी सफाई-समितिका कानून है, जिसके अनुसार किसी भी काले आदमीके लिए ट्राम या मोटर या बग्घी या जो भी सवारी खास कर गोरोके लिए हो, उसमें बैठना गुनाह है। वह कानून अभीतक रद नही हुआ है। इसलिए उसके आधारपर भारतीयोको ट्राममें बैठनेसे रोका जा सकता है। जवाबमें श्री ब्लेनने कहा कि वह कानून अब लागू नही हो सकता और परिषदने जो उपनियम स्वीकार किये है, उनके अनुसार भारतीयोको हक है। श्री कारने इस मामलेका फैसला सोमवार तक मुल्तवी रखा है। अगर सोमवारको परिणामका पता चला, तो मै सूचना दूंगा।

बादमें खबर मिली है कि हम ट्रामवाले मामलेमें जीत गये है, और नगरपालिकाने अपील की है।

ट्रान्सवालके लिए उत्तरदायी शासन

जोहानिसबर्गमें उत्तरदायी शासन सम्बन्धी हलचल अभी चल रही है। बोअर लोगोकी समिति और उत्तरदायी दल (रिस्पॉन्सिबल पार्टी) तथा प्रगतिशील दल (प्रोग्रेसिव पार्टी) के मुखिया सर जॉर्ज फेरारके घरपर मिले थे। इसमें उनका इरादा यह था कि तीनो पक्षोंके

बीच एकता स्थापित हो जाये, तो ठीक हो। इस बैठकमें क्या हुआ, सो अभी मालूम नहीं हो सका है। लेकिन ऐसा माना जाता है कि उनमें एकमत नही हो पाया, इसलिए वे बिना किसी फैसलेके उठ गये।

इस बीच यहाँ एक दूसरी बड़ी हलचल हो रही है। गोरे लोगोंका एक शिष्टमण्डल विलायत भेजने और सम्राट् एडवर्डको एक बहुत बड़ी अर्जी देनेका फैसला किया गया है। उसपर हजारों दस्तखत कराये जा रहे हैं। प्रार्थियोंकी माँगके अनुसार, जो भी विधान बने उसमें यह शर्त होनी चाहिए कि हर मतदाताको समान हक रहे और सदस्योंका चुनाव मतदाताओंकी संख्याके अनुसार हो।

इस अर्जीका हेतु यह है कि इससे अंग्रेज जनताका बल बढ़े। अंग्रेजोंकी तुलनामें संख्याकी दृष्टिसे बोअर लोग कम हैं। बोअर लोगोंकी माँग है कि सदस्य गाँवके हिसाबसे बनने चाहिए। यदि ऐसा हो, तो बहुत-से गाँवोंमें बोअरोंकी आबादी अधिक होनेसे उनकी सत्ता बढ़ सकती है। इस तरह उन्होंने लड़ाईमें जो कुछ खोया है, वह उत्तरदायी व्यवस्थामें उन्हें वापस मिल जायेगा। यह कशमकश बड़ी तगड़ी है। मेहनत और लगनमें कोई किसीसे कम बैठनेवाला नही है। बोअरोंको उदार मन्त्रिमण्डलका बहुत जोर है। "साँड साँड लड़ें बिरवाई कौ चूरा होय" वाली कहावतके अनुसार इसमें बेचारे काले लोग कुचल न जायें तो अच्छा। मगर नगाड़ोंकी आवाजमें तूतीकी आवाज कौन सुनेगा?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन १७-३-१९०६

२४८. "कानून-समर्थित डाका"[1]

हम एक दूसरे स्तम्भमें एक ऐसे मुकदमेका विशेष विवरण[2] प्रकाशित कर रहे हैं जिसमें ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयके सामने पिछले सोमवारको बहस हुई थी। हमारे संवाददाताने उसे "कानून-समर्थित डाका" कहा है और इस टिप्पणीके लिए यह शीर्षक ग्रहण करनेमें कोई हिचकिचाहट नहीं है। १८८५ के कानून ३ के सम्बन्धमें ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा अनेक शिकायतें प्रस्तुत की गई हैं। किन्तु हमारे संवाददाताने जिस मुकदमेका विवरण भेजा है, उसके समान निर्दय या कठोर एवं अन्यायपूर्ण कोई अन्य मामला हमारे ध्यानमें नही आता। जिस कानूनके अन्तर्गत ऐसा स्पष्ट अन्याय किया जा सकता है, नरम भाषामें कहें तो भी वह कानून नितान्त अमानवीय है। जब श्री ल्यूनार्डने अपने जोरदार भाषणमें जजोंसे कानूनका दयापूर्ण अर्थ लगाने और यदि सम्भव हो तो, अभागे अभियुक्तोंको न्याय प्रदान करनेकी प्रार्थना की तब स्पष्टतः उनके खयालमे कानूनकी निर्दयताकी बात थी। स्वर्गीय श्री अबूबकर आमद उन भारतीयोंमें से थे जो *दक्षिण आफ्रिकामें सर्वप्रथम आकर बसे थे।* वे एक अग्रगण्य भारतीय व्यापारी थे, और नेटाल तथा दक्षिण आफ्रिकाके दूसरे हिस्सोंमें उनकी बहुत बड़ी भू-सम्पत्ति थी। अपने समयमें यूरोपीयों और भारतीयों दोनोंमें उनका आदर था — और वह आदर बहुत

१. यह १३-४-१९०६ के इंडियामें भी प्रकाशित हुआ था।

२. यहाँ नहीं दिया जा रहा है।

उचित भी था। वे सभी अर्थोमें सुसंस्कृत थे। ट्रान्सवालमें भी उनकी कुछ जमीन-जायदाद थी। वे उसकी वसीयत अपने भाई और लड़केके नाम कर गये। ये दोनों प्रसिद्ध और सुशिक्षित हैं। वसीयत करनेवालेने वारिसोंके लिए जो कुछ छोड़ा था, उसको उनसे छीन लेना अब सम्भव हो गया है। और विपरीत इच्छाके बावजूद ट्रान्सवाल सर्वोच्च न्यायालयके न्यायाधीश इस अन्यायका निराकरण करनेमें असमर्थ रहे। ट्रान्सवालकी जनताको अपने सर्वोच्च न्यायालयमें जैसे जज प्राप्त हैं उनसे अधिक पवित्र और स्वतन्त्र जजोंको पाना कठिनतासे ही सम्भव है। वे किंचिन्मात्र भी विद्वेषमें नहीं बहे हैं और हम जानते हैं कि वे आजसे पहले भी निर्भय फैसले देते आये हैं। इस मामलेमें पैरवी भी दक्षिण आफ्रिकाके योग्यतम वकीलने की और उन्होंने उसमें पूरे हृदयसे मेहनत की। फिर भी, जैसा कि जजोंने स्वयं ही स्वीकार-सा कर लिया है, वे न्याय करनेमें असमर्थ ही रहे। कारण खोजने दूर नहीं जाना है। १८८५ का कानून ३ एक ऐसे विधानमण्डलका पास किया हुआ है जिसको ब्रिटिश भारतीयोंकी ही नहीं, किसी भी रंगदार व्यक्तिकी भावनाओंका, कोई खयाल नहीं था। स्पष्टतः जो-कुछ हुआ वह अब्रिटिश था और सभ्यताके समस्त ज्ञात नियमोंका उल्लंघन-मात्र था। बोअर-युद्धके पहले ब्लूमफॉटीनमें जो सम्मेलन[1] हुआ था उसमें भी यह विचारका एक विषय था और जब स्वर्गीय राष्ट्रपति क्रूगर मताधिकारकी बात माननेके लिए तैयार प्रतीत होते थे, तब लॉर्ड मिलनरने ही श्री चेम्बरलेनको इस आशयका समुद्री तार भेजा था — "रंगदार लोगोंका क्या होगा?" युद्धसे पहले तो उन्हें उनकी इतनी फिक्र थी, किन्तु समयके साथ-साथ लॉर्ड महोदयके विचार भी बदल गये। आशा तो यह थी कि वे शासन सँभालते ही जो काम करेंगे उनमें से एक इस घृणित कानूनकी वापसीका भी होगा। किन्तु लॉर्ड महोदय निर्णयको टालते गये। ब्रिटिश भारतीयोंने उनसे भेंट की, और उन्होंने उनको तबतक टाला जबतक कि ट्रान्सवालके गोरे अधिवासियोंके आन्दोलनके फलस्वरूप उनके लिए विधान संहितामें से १८८५ के कानून ३ को निकालना असम्भव हो गया; और आजतक वह ट्रान्सवालके उस ब्रिटिश शासनपर, जिसके प्रधान परमश्रेष्ठ थे, अमिट कलंकके रूपमें मौजूद है। ब्रिटिश भारतीय जिस भयानक अन्यायके नीचे जिन्दगी बसर कर रहे हैं, क्या उसको उदारदलीय सरकार स्थायित्व प्रदान करेगी?

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–३–१९०६

१. ट्रान्सवालके श्वेतेतर गोरोंको मताधिकार देनेके विवादास्पद विषयपर १८९९ में केपके गवर्नर लॉर्ड मिल्नर और ट्रान्सवालके राष्ट्रपति क्रूगरके बीच बातचीत हुई थी।

२४९. व्यक्ति-कर

लेडीस्मिथका एक संवाददाता हमारे गुजराती स्तम्भोंमें लिखता है:

फरवरी २८के 'गवर्नमेंट गज़ट' में व्यक्तिकरके बारेमें एक सूचना छपी है। उसके अनुसार वतनियोंके सिवा बाकी लोगोंको, जो उस तिथि तक कर न चुकायेंगे, जुर्माना देना होगा। इससे भारतीयोंमें आतंक फैल गया है। लेडीस्मिथवासी भारतीयोंने तो कर चुका दिया है, परन्तु वे गरीब भारतीय जो अभी-अभी गिरमिटसे मुक्त हुए हैं, और खेतों तथा दूर-दराज जगहोंमें रह रहे हैं, इसका आशय नहीं समझ सकते और व्यक्ति-कर अदा नहीं कर पाये है। इन लोगोंको सूचित करना लाजिमी है। पुलिस अफसर (सार्जेंट-इन-चार्ज) व्यक्तिकर ले लेता है और उन्हें रसीद दे देता है। तब वह उनको मजिस्ट्रेटके सामने ले जाता है और वहाँ उनपर जुर्माने किये जाते हैं। अगर वे जुर्माना नहीं अदा करते तो उन्हें जेल जाना पड़ता है। एक घटना मेरी उपस्थितिमें ही हुई। मोतई नामक एक भारतीय लेडीस्मिथसे पाँच-सात मील दूर रहता था। एक मित्रने उसे सूचित किया कि उसे कर चुका देना चाहिए। इसलिए उसने अपने कानकी बालियाँ ढाई शिलिंग मासिक ब्याजपर एक पौंडमें गिरवी रख दीं और कर अदा कर दिया। उसको रसीद दे दी गई और तब वह मजिस्ट्रेटके पास ले जाया गया। उसपर दस शिलिंग जुर्माना किया गया। अब वह रकम कहाँसे लाये? उसके पास एक पास था। वह उसको अदालतमें छोड़ गया है और जुर्मानेकी रकम लानेका वादा कर गया है. . . अबतक लगभग बारहसे लेकर पन्द्रह लोगोंपर जुर्माना किया जा चुका है।

हम इस ओर सरकारका ध्यान आकर्षित करते है। यदि हमारे संवाददाता द्वारा दी गई सूचना ठीक है, तो यह व्यक्तिकरकी वसूलीसे सम्बन्धित अधिकारियोके लिए अत्यन्त वदनामीकी बात है। इन गरीब लोगोंको न केवल कर चुकानेके लिए बाध्य करना, वल्कि जव वे कर देने आयें तब उनपर जुर्माना ठोंक देना, हमें अन्यायकी पराकाष्ठा मालूम होती है। हमारी रायमे दण्डात्मक धारा उनपर लागू नही होती जो अपनी इच्छासे कर दे देते हैं; वल्कि उनपर लागू होती है जो उसकी अदायगीसे बचना चाहते हैं। दैनिक पत्रोंमें इस आशयके समाचार छपे हैं कि भारतीय अत्यन्त शीघ्रतासे कर चुका रहे हैं। जैसा कि हमारे संवाददाताने लिखा है, दूर-दराज जगहोमें रहनेवाले लोगोंसे यह आशा करना निर्दयता है कि वे विज्ञापित समयसे पूर्व अदायगीकी जगहोंमें पहुँचकर कर चुका देंगे। हमे इस सम्बन्धमें सन्देह नहीं है कि वहुतोंको अपनी इस जिम्मेदारीका पता भी नहीं है, और जैसा कि हमारे संवाददाताने लिखा है, यदि यह सत्य है कि उन्हें सूचित किया जाना लाजिमी है तो सरकारसे अधिकारियोंको यह आदेश देनेकी उम्मीद करना उचित ही होगा कि जो लोग कर दें उनसे वे रकम ले लें और उनको व्यक्ति-कर कानून भंग करनेके कथित अपराधमें गिरफ्तार करके उनपर जुर्माने न करायें। हमें सरकारकी दया-भावनामें काफी विश्वास है और हम अनुभव करते हैं कि वह इस अन्यायको बन्द कर देगी, जो कानूनके नामपर किया जा रहा है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–३–१९०६

२५०. भारतीय स्वयंसेवकोंकी आवश्यकता

नेटालका वतनी आन्दोलन[1] मन्द गतिसे जारी है। इसमें सन्देह नही कि इसके भड़कनेका तात्कालिक कारण व्यक्ति-कर लगाना है, यद्यपि इसकी आग सम्भवतः अरसेसे सुलग रही थी। गलती चाहे जिसकी हो, खबर है कि इसपर उपनिवेशको दो हजार पौंड प्रतिदिन खर्च करना पड़ रहा है। गोरे उपनिवेशी उसको काबूमे लानेकी चेष्टा कर रहे है और अनेक नागरिक सैनिकोने शस्त्र धारण कर लिये है। शायद आज और किसी सहायताकी जरूरत न पड़े; परन्तु इस उपद्रवपर सरकारको और प्रत्येक विचारवान उपनिवेशीको भी विचार करना चाहिए। नेटालमें भारतीयोकी आबादी एक लाखसे ज्यादा है। यह भी साबित किया जा चुका है कि वे युद्धकालमे अत्यन्त कुशलतापूर्वक काम कर सकते है।[2] आकस्मिक संकटोंमें वे बेकार है, इस भ्रमका निवारण हो चुका है। इन अकाट्य तथ्योके बावजूद क्या सरकारके लिए शक्तिके इस स्रोतको, जिसे वह चाहे जिस काममे ले सकती है, बेकार जाने देना बुद्धिमत्ताकी बात है? हमारे सहयोगी 'नेटाल विटनेस' ने भारतीय समस्यापर हालमे ही एक बहुत ही विचारपूर्ण अग्रलेख लिखा है और यह प्रमाणित किया है कि उपनिवेशियोंको भारतीय प्रतिनिधित्वके सवालपर किसी-न-किसी दिन, गम्भीरतासे विचार करना ही होगा। यद्यपि भारतीय उपनिवेशमे किसी राजनीतिक सत्ताकी आकांक्षा नही रखते, फिर भी हम उक्त मतसे सहमत है। वे इतना ही चाहते है कि उनको उपनिवेशके साधारण कानूनोके अन्तर्गत पूर्ण नागरिक अधिकारोका आश्वासन दिया जाये। यह ब्रिटिश प्रदेशवासी प्रत्येक ब्रिटिश प्रजाजनका जन्मसिद्ध अधिकार होना चाहिए। किन्ही परिस्थितियोमे किसीको भी शरणार्थी माननेसे इनकार करना उचित हो सकता है; किन्तु शिष्ट और शारीरिक दृष्टिसे सक्षम शरणार्थियोपर निर्योग्यताएँ थोपना आर्थिक या राजनीतिक, किसी भी दृष्टिसे उचित नही ठहराया जा सकता। इसलिए, जब कि भारतीय प्रतिनिधित्वका सवाल निस्सन्देह बहुत ही महत्वपूर्ण है, हमारे खयालसे भारतीयोको स्वयसेवक बनानेका सवाल और भी ज्यादा महत्वका है, क्योकि वह अधिक व्यावहारिक है। आजकल यह बात पूरी तरह मानी जाती है कि ऐसे बहुत-से काम हैं जिनके लिए शस्त्र धारण करना जरूरी नही है; किन्तु फिर भी जो उतने ही उपयोगी और सम्मानप्रद है जितना राइफल उठानेका काम है। अगर सरकार, भारतीयोंको उपेक्षित रखनेके बजाय स्वयंसेवकोंके काममें नियुक्त करेगी तो वह नागरिक सेनाकी उपयोगिता बहुत कुछ बढ़ा सकेगी और उपद्रवके समय, भारतीयोपर विश्वास रख सकेगी कि वे अच्छा काम करेंगे। हमे इसमे कोई सन्देह नही कि भारतीयोको देशसे बाहर खदेड़ देना असम्भव है, सरकार यह बात समझती है। तब जो सामग्री उपलब्ध है, वह उसका सर्वोत्तम उपयोग क्यो नही करती और इस प्रकार एक उपेक्षित समाजको राज्यकी स्थायी एवं परम मूल्यवान पूंजी क्यो नहीं बना लेती?

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७-३-१९०६

१. बम्बाटाके नेतृत्वमें जुलू विद्रोह; देखिये, "भाषण: कांग्रेसकी सभामें", पृष्ठ ३०१।

२. इससे बोअर युद्धमें भारतीय आहत-सहायक दल द्वारा किये गये कार्यकी ओर संकेत है। देखिए खण्ड ३, पृष्ठ १३८-३९।

२५१. अन्तर्राज्य वतनी महाविद्यालय

वर्तमान लवडेल संस्थाको केन्द्र-विन्दु वनाकर एक अन्तर्राज्य वतनी कॉलेजके निर्माणके लिए 'इम्वो'के सम्पादक श्री टेंगो जवावुने कुछ मास पहले जो आन्दोलन चलाया था उससे काफी उत्साह पैदा हुआ है। श्री जवावु और आन्दोलनके संघटनमन्त्री श्री के० ए० हॉवर्ट हॉटन, दोनों दक्षिण आफ्रिकाका दौरा कर रहे हैं। उनके तीन उद्देश्य हैं — विभिन्न दक्षिण आफ्रिकी सरकारोंका सहानुभूतिपूर्ण सहयोग प्राप्त करना; विवेकपूर्ण व्याख्या और उदाहरण द्वारा इस विषयपर वतनियोंमें स्वस्थ जनमत उत्पन्न करना; और, इनमें सवसे महत्वपूर्ण है, निकट भविष्यमें इस गम्भीर कार्यको आरम्भ करनेके लिए धन एकत्र करना। अमेरिकाकी टस्केजी संस्थामें श्री वुकर टी० वाशिंगटनने[1] जो उत्तम और शिक्षाप्रद कार्य किया है उसकी ओर इन स्तम्भों द्वारा हम पहले भी ध्यान आकर्षित कर चुके हैं। यह प्रस्ताव है कि इस नये महाविद्यालयको जो कार्य सौंपा जायेगा उसे अमेरिकी संस्थाके समान ही औद्योगिक प्रशिक्षणकी दिशामें विकसित किया जाये। इस सवसे अच्छा ही परिणाम निकल सकता है और इसमें आश्चर्यकी कोई वात नहीं कि दक्षिण आफ्रिकी महान वतनी प्रजातियोंके जैसे जागृत होते हुए राष्ट्रोंमें एक ऐसा उत्साह व्याप्त हो रहा है जो धार्मिक जोशसे कुछ कम नहीं। उनके लिए यह कार्य निश्चय ही पुनीत और पुण्यमय है; क्योंकि इससे विचारोंमें प्रगतिके द्वार खुलते हैं और आध्यात्मिक विकासको वहुत वल मिलता है। इस कार्यमें दिलचस्पी लेनेवाली विभिन्न धार्मिक संस्थाओं और राज्योंसे मिलनेवाली सहायताके अलावा केवल वतनियोंसे ही ५०,००० पौंडकी भारी रकम एकत्र करनेका विचार है। आत्मत्यागके इस उदाहरणसे दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंको वहुत कुछ सीखना है। अगर अपनी सम्पूर्ण आर्थिक अक्षमताओं और सामाजिक असुविधाओंके वावजूद दक्षिण आफ्रिकाके वतनी इस स्थानीय कार्यको पूर्ण कर सकते हैं तो क्या ब्रिटिश भारतीय समाजके लिए यह लाजिमी नहीं कि वह इससे हृदयमें शिक्षा ग्रहण करे और शैक्षणिक सुविधाओंको आगे वढ़ानेके लिए जिस शक्ति और उत्साहसे अवतक काम होता रहा है उससे कहीं अधिक शक्ति और उत्साहसे काम करे? शैक्षणिक मामलोंमें सुधार स्वयं हमें ही करना होगा और हम अपने पाठकोंपर जोर देंगे कि वे प्रश्नके इस पहलूपर गौर करें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–३–१९०६

१. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ४६८–७१।

२५२. सर विलियम गैटेकर

हमें यह लिखते हुए दुःख होता है कि मिस्रमें लू लगनेके कारण मेजर-जनरल सर विलियम गैटेकरकी मृत्यु हो गई है। सर विलियमका भारतीयोंकी कृतज्ञतापर एक खास हक था। वे बम्बईमें बनाई गई प्रथम प्लेग-समितिके अध्यक्ष थे। उन्होंने कठिनसे-कठिन मामलोंमें कौशल और सावधानीसे काम लिया, जिससे सारा संघर्ष और कड़वाहट टल गई। आंग्ल-भारतीय चरित्रमें जो-कुछ उत्तम है और जिसका प्रतिनिधित्व माउंटस्टुअर्ट एलफिन्स्टन, मनरो, टॉड, स्लीमन, फॉर्ब्स, लॉरेंस तथा ब्रिटिश शासनके अन्य अनेक उत्साही और शिष्ट व्याख्याता करते हैं, उसके वे अनुपम उदाहरण थे। जबतक ब्रिटेन स्वर्गीय सर विलियमके माद्देके उदात्त महापुरुषोंको जन्म दे सकता है, तबतक यह आशा शेष है कि भारत अपने शासकोंसे वह सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार, जिसकी उसे आवश्यकता है, प्राप्त करेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–३–१९०६

२५३. आस्ट्रेलियामें बस्तीकी कमी

आस्ट्रेलियाके गोरे उस टापूपर उतरनेवाले किसी भी व्यक्तिसे ईर्ष्या करते हैं। वे अपने जाति-भाइयोंको भी नहीं आने देते। काले लोगोंके तो वे शत्रु हैं। इसका परिणाम यह हुआ है कि उत्तरी हिस्सेमें केवल ८२० गोरे आबाद हैं। अर्थात् प्रति ७०० मीलपर एक गोरेकी बस्ती हुई। आदमी जमीनको बटोरकर तो नहीं रख सकता। अगर लोग पर्याप्त संख्यामें न हों। तो जमीन उजाड़ पड़ी रहती है, यानी उसे निकम्मी दौलत कहना होगा। इस कारण आस्ट्रेलियाके लोग अब जागने लगे हैं। राष्ट्रपति रूजवेल्टने[1] आस्ट्रेलियाके लोगोंको लिखा है कि उनके देशको खाली रखनेसे नुकसान होगा। संसद-सदस्य श्री रिचर्ड आर्थरने कहा है कि आस्ट्रेलिया और एशिया एक दूसरेके पड़ोसी हैं, इसलिए आस्ट्रेलियामें एशियाके लोगोंको जगह दी जानी चाहिए। ये विचार फैलने लगे हैं। इस बातसे यह अनुमान किया जा सकता है कि धीरे-धीरे ऐसे देशोंमें भारतीय जाकर बस सकेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–३–१९०६

१. थियोडॉर रूज़वेल्ट (१८५८–१९१९), अमेरिकाके गणतंत्रीय राष्ट्रपति, १९०१–९।

२५४. ट्रान्सवालके भारतीयोंपर निर्योग्यताएँ[1]

उपनिवेश-सचिवसे शिष्टमण्डलकी भेंट

पिछले शनिवार १० तारीखको एक भारतीय शिष्टमण्डल सहायक उपनिवेश-सचिवसे मिलनेके लिए गया था। उसके सदस्य श्री अब्दुल गनी, श्री हाजी हबीब और श्री गांधी थे। श्री चैमने और श्री बर्जेस मौजूद थे। शिष्टमण्डलकी बातचीत सवा ग्यारहसे एक बजे तक चली। उसमें उसने नीचे लिखी माँगें की थीं:

१. अनुमतिपत्र प्राप्त करनेमें बहुत समय जाता है। वह नहीं लगना चाहिए। अनुमतिपत्र जल्द जारी होने चाहिए।

२. जाँचके लिए अर्जियाँ मजिस्ट्रेटके पास भेजी जाती हैं। इससे बहुत तकलीफ होती है। जाँच होती नहीं और अर्जियाँ पड़ी रहती हैं।

३. वास्तवमें अलग-अलग गाँवोंमें पहुँचकर एक ही अधिकारीको जाँच करनी चाहिए, जिससे एक-सी जाँच हो, और जल्दी निर्णय हो। गाँवके लोगोंको उज्र करना हो तो वे खुशीसे करें। लेकिन फैसला तुरन्त होना चाहिए।

४. जिनके पास पुराने प्रमाणपत्र हों उनके लिए गवाहोंकी जरूरत नहीं रहनी चाहिए; प्रमाणपत्रकी जानकारी देते ही उन्हें फौरन अनुमतिपत्र मिलना चाहिए।

५. औरतोंके लिए अनुमतिपत्रकी कोई जरूरत नहीं होनी चाहिए। औरतें तो गोरोंके साथ कोई होड़ नहीं करतीं। और उनकी जाँच करना तो उनका घोर अपमान करने-जैसा है। भारतीय औरतें ट्रान्सवालमें बहुत कम हैं, और वे सब अपने मर्दोंके साथ हैं, इसलिए इस सम्बन्धमें शक नहीं करना चाहिए।

६. सरहदपर अनुमतिपत्र और प्रमाणपत्र दोनों माँगे जाते हैं। यह जुल्म कहा जायेगा। जिसके पास अनुमतिपत्र हो, उसे तुरन्त निकल जाने देना चाहिए। इसी तरह जो प्रमाणपत्र दिखाये उसे भी जाने देना चाहिए।

७. सरहदपर अनुमतिपत्रवालोंसे अँगूठेके निशान लिये जाते हैं। यह व्यर्थका अपमान कहा जायेगा।

८. कानून बना है कि बारह सालसे कम उम्रके लड़के भी उसी हालतमें आ सकेंगे, जब उनके माँ-बाप ट्रान्सवालमें हों। यह कानून अत्याचारपूर्ण माना जायेगा। शुरूसे ही १६ सालसे कम उम्रके लड़के आते रहे हैं, इसलिए उन्हें आने देना चाहिए। अगर इसमें कोई परिवर्तन करना हो तो भी जो लड़के इस कानूनके अनुसार आ ही पहुँचे हैं उन्हें तो किसी अड़चनके बिना अनुमतिपत्र मिलना ही चाहिए। नये कानूनकी सूचना काफी समय पहले देनेकी जरूरत है। जिसके माँ-बाप मर गये हो, उसके रिश्तेदारोंको ही अभिभावक मानना चाहिए।

९. जिसने अनुमतिपत्र खो दिया हो, उसके लिए प्रमाणपत्र अथवा दूसरा दाखिला देना जरूरी है। ऐसे लोगोंको यदि भारत जाना हो तब तो उन्हें खास तौरपर यह हथियार मिलना ही चाहिए, नहीं तो उन्हें वापस लौटनेमें बहुत परेशानी होती है। यदि सरकारको

१. यह लेख "विशेष रूपसे प्रेषित", रूपमें छपा था।

शक हो, तो लोगोंको बन्दरगाहपर प्रमाणपत्र भेजनेकी व्यवस्था करे। ट्रान्सवालमें अनुमतिपत्रके खो जानेपर परवाने वगैरह प्राप्त करनेमे बड़ी परेशानी होती है।

१०. मुद्दती अनुमतिपत्र तो माँगते ही मिल जाने चाहिए। लोगोको काम-काजके सिलसिलेमे जाने-आनेकी पूरी छूट जरूरी है।

११. जोहानिसबर्गमे अनुमतिपत्र देनेके लिए हर हफ्ते एक बार किसी अधिकारीको आना चाहिए। लोगोको जहाँतक हो सके उतनी कम तकलीफ होनी चाहिए। बहुतेरे लोगोको अनुमतिपत्रोके लिए ही प्रिटोरिया जानेकी आवश्यकता पड़ती है।

१२. रेलवेमे जोहानिसबर्ग या प्रिटोरियासे [भारतीयोको] सुबह ८।। बजेकी गाड़ीके टिकट देना बन्द हो गया है। यह बहुत अनुचित बात है। विश्वास है कि इसकी सुनवाई तुरन्त होगी।

१३. रेलगाडीके एक ही डिब्बेमें औरत-मर्द दोनोको बैठाया जाता है और बहुत लोगोको भर दिया जाता है, इसे तो सरासर बुरा माना जायेगा।

१४. प्रिटोरियाकी ट्रामके बारेमे श्री मूअरने कहा था कि खुलासा किया जायेगा। अब उसमे फेरफार करनेकी जरूरत है। अखीरकी एक या दो बेंचोंपर भारतीय बैठें, तो गोरोको उसपर कोई एतराज़ नही करना चाहिए।

१५. जोहानिसबर्गमें परीक्षात्मक मुकदमा चलाया गया है। उसमे सफलता न मिले तब भी ट्राममे बैठनेका अधिकार तो मिलना ही चाहिए।[1]

१६. प्रिटोरियाके बाजारसे काफिरोको निकाला जा रहा है। यह गलत चीज है। कानून कुछ भी क्यो न हो, पर कई सालोसे भारतीयोंको वतनी किरायेदारोसे आमदनी होती रही है। इसमें नुकसान न हो, इसका खयाल रखना सरकारके लिए लाजिमी है।

इन बातोका जवाब देते हुए श्री कर्टिसने[2] कहा कि सारी बातें मैं श्री डंकनके सामने रखूँगा। मै अभीसे कोई फैसला नही दे सकता। सरकार भारतीयोको तकलीफ देना नही चाहती। जैसे भी बनेगा, राहत पहुँचाई जायेगी। बहुत करके मजिस्ट्रेटोसे कहा जायेगा कि वे १५ दिनमें शरणार्थियोकी अर्जियाँ जाँच लिया करें। इस बीच न जाँचें, तो सरक्षक (प्रोटेक्टर) फैसला दे देगा। हम मानते है कि औरतोको भी तीन पौड देने चाहिए।

इसके जवाबमे शिष्टमण्डलने कहा कि अगर औरतोके बारेमें सरकारका यह खयाल है, तो हम मुकदमा लड़नेको तैयार हैं।

श्री कर्टिसने कहा कि अगर दसो अँगुलियोंकी निशानी अनुमतिपत्रपर दी जाये तो बहुत सुविधा होगी।

शिष्टमण्डलने इसे माननेसे साफ इनकार किया। आखिर श्री कर्टिसने कहा कि सारी बातोका खुलासा यथासम्भव शीघ्र ही किया जायेगा। इसके बाद शिष्टमण्डल आभार मानकर विदा हुआ।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–३–१९०६

१. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ २१५–६।

२. लॉयनेल कर्टिस, सहायक उपनिवेश-सचिव।

२५५. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

मार्च १७, १९०६

जोहानिसबर्गमें आग

इस हफ्ते जोहानिसबर्गकी रिसिक स्ट्रीटमें बहुत बड़ी आग लग गई थी। उसमें मोटरकार वगैरह बनानेका बहुत-सा कीमती सामान जल गया है। लगभग ३०,००० पौंडका नुकसान हुआ है। पूरा बीमा नहीं कराया गया था, इसलिए मालिककी भारी हानि हुई है।

अनुमतिपत्र

अनुमतिपत्र-सम्बन्धी तकलीफ ज्यादा बढ़ गई है। अब संरक्षक मियादी अनुमतिपत्र देनेसे भी इनकार करता है। हालमें ऐसे दो उदाहरण सामने आये हैं। हॉविकके एक व्यापारीने थोड़ी मुद्दतका अनुमतिपत्र माँगा। संरक्षकने देनेसे साफ इनकार किया है। इसी तरह डेलागोआ-बेके सुपरिचित व्यक्ति श्री मंगाके भतीजेको[1] भी अनुमतिपत्र देनेसे इनकार किया गया है। इस मामलेमें कार्रवाई चल रही है। लेकिन अनुभव यह हो रहा है कि अनुमतिपत्रकी लड़ाई पूरी तरह लड़नी पड़ेगी।

इस बीच जोहानिसबर्गमें भारतीयोंकी आबादी दिनपर-दिन घटती जा रही है। कमाईके जरिये कम हो जानेसे लोगोंको लौटना पड़ रहा है।

चीनी मजदूर

चीनियोंके आनेपर प्रतिबन्ध लगनेके समाचारसे यहाँके खान-मालिकोंको बहुत चिन्ता हो गई है। उनका मन उचट गया है, इसलिए जनतामें निराशा छा गई है। इस नगरका भविष्य क्या होगा, कहा नहीं जा सकता।

इस स्थितिके कारण भुखमरी बढी है। बहुतेरे लोग बेरोजगार होकर बैठ गये है, और उन्हें सूझ नहीं पड़ रहा है कि पेट कैसे पालें।

किसीका अपराध किसीको दण्ड

यहाँकी अदालतमें एक जानने योग्य मुकदमा चला है। डॉक्टर किन्केड स्मिथकी मोटर उनका नौकर चला रहा था। श्री क्लार्क डाकर्टी नामक इंजीनियर अपनी बाइसिकलपर थे। इतनेमें डॉक्टर स्मिथके चालकने गाड़ी जरा अपनी तरफको घुमाई, जिससे गाड़ी श्री डाकर्टीकी बाइसिकलसे टकरा गई और श्री डाकर्टी गिर पड़े। उन्हें ऐसी चोट आई कि अस्पतालमें जाना पड़ा। मोटरकी टक्करके समय डॉक्टर खुद गाड़ीमें नहीं थे। श्री डाकर्टीने डॉक्टर स्मिथपर यहाँके उच्च न्यायालयमें २,००० पौंडके हर्जानेका दावा किया। न्यायमूर्ति ब्रिस्टोने फैसला दिया है और श्री डाकर्टीको ७५० पौंड दिलाये हैं। फैसला सुनाते हुए माननीय न्यायाधीशने कहा है कि कसूर डॉक्टर स्मिथका नही है, पर उनके आदमीने गलती की है, इसलिए उन्हें उसकी सजा भुगतनी होगी। लोगोंको चाहिए कि वे बहुत सावधानीसे नौकर रखे। नौकरसे कोई गफलत हो और उसके कारण किसी तीसरे आदमीको नुकसान पहुँचे तो उसकी भरपाई मालिकको

१. श्री सुलेमान मंगा, एक नवयुवक भारतीय वकील।

करनी पड़ती है। अगर डॉक्टर स्मिथका नौकर उनके ही कामसे न जा रहा होता, और तब उसने गफलत की होती, तो डॉक्टर स्मिथको रकम न चुकानी पड़ती।

जो नौकर रखते हैं उन्हें इस मामलेसे नसीहत लेनी चाहिए। खास तौरपर मोटरके मामलेमें देखा यह गया है कि चालक अक्सर अपनी उद्धतता अथवा अप्रवीणताके कारण गलती करते हैं। इससे नुकसान मालिकको भोगना पड़ता है। यह हमेशा याद रखने योग्य है।

डॉ० अब्दुर्रहमान

केप टाउनके सुपरिचित डॉक्टर अब्दुर्रहमान आगामी मगलवारको यहाँ आनेवाले हैं। वे यहाँ तथा प्रिटोरियामें काले लोगोंकी सभामें भाषण देंगे और तुरन्त ही केप टाउन लौट जायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४–३–१९०६

२५६. पत्र : दादाभाई नौरोजीको[1]

ब्रिटिश भारतीय संघ

२५ व २६ कोर्ट चेम्बर्स
रिसिक स्ट्रीट
जोहानिसबर्ग
मार्च १९, १९०६

सेवामें
माननीय श्री दादाभाई नौरोजी
२२ कैनिंगटन रोड
लन्दन
इंग्लैंड

[महोदय,]

मैं आपका ध्यान 'इंडियन ओपिनियन' के १० मार्चके अंकमें नेटाल सरकारके नाम प्रकाशित एक विरोधपत्रकी[2] ओर खींचना चाहता हूँ। यह विरोधपत्र प्रवासी-प्रतिबन्धक कानूनके अन्तर्गत दिये जा रहे प्रमाणपत्रों और पासोंपर वंशके बाहर लगाये गये शुल्कके सम्बन्धमें नेटाल भारतीय कांग्रेसने नेटाल-सरकारको भेजा है।

यह शुल्क सरासर अन्यायपूर्ण है और उसका लेशमात्र औचित्य नहीं है, यह तो कहनेकी आवश्यकता ही नहीं है।

दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय समाजको दूसरा गम्भीर आघात ट्रान्सवालमें पहुँचाया गया है।[3] आप १७ मार्चके 'इंडियन ओपिनियन' के अंकमें १८८५ के कानून ३ के अन्तर्गत ट्रान्सवालके

१. इस पत्रका मसविदा दादाभाई नौरोजीने सदैवकी तरह भारत-मंत्री और उपनिवेश मंत्रीको भेजा था।
२. देखिए "पत्र : उपनिवेश-सचिवको", पृष्ठ २२९–३०।
३. देखिए "कानून समर्थित डाका", पृष्ठ २४०–१।

सर्वोच्च न्यायालयके समक्ष सुने गये मुकदमेका अहवाल देख सकेंगे। 'ओपिनियन' में मुकदमेका पूरा विवरण और उसपर टिप्पणियाँ दी गई हैं।

इन दोनोंपर तत्काल ध्यान देना आवश्यक है।

आपका विश्वस्त,
मो० क० गांधी

टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रति (जी० एन० २२७१) से।

२५७. नेटालका शीघ्र दूकानबन्दी अधिनियम

शीघ्र दूकानबन्दी अधिनियमका असर अब महसूस होने लगा है। हमारा कभी यह मत नहीं रहा कि शीघ्र दूकानबन्दी अधिनियम किसी भी परिस्थितिमें उपयुक्त नहीं होगा। इसके प्रतिकूल हमारी धारणा है कि एक सुचिन्तित कानून समाजके लिए सदैव बड़ा लाभप्रद होगा; किन्तु वर्तमान अधिनियम उपभोक्ताओं अथवा छोटे फुटकर विक्रेताओंकी सुविधाका पर्याप्त विचार किये बिना बनाया गया है। नतीजा यह हुआ है कि गरीब गृहस्थोंको बड़ी असुविधा हो गई है और छोटे व्यापारियोको बहुत बड़ी क्षति पहुँची है। सम्भवतः इससे केवल उन लोगोंको लाभ पहुँच सकता है, जो बड़े फुटकर विक्रेता हैं। हम 'नेटाल मर्क्युरी' के प्रतिनिधिके इस कथनसे पूरे सहमत हैं:

> **बड़े व्यापारी धीरे-धीरे छोटे व्यापारियोंको निगलते जा रहे हैं और इन बड़े व्यापारियोंकी तादाद अँगुलियोंपर गिनी जा सकती है। वास्तवमें यदि इस प्रकारके कानूनसे भले उपनिवेशियोंको एक ओर ढकेल कर उन्हें ईमानदारीके साथ जीविकोपार्जनसे वंचित कर दिया गया, तो यह एक दुर्भाग्यकी बात होगी।**

इसके लिए जो प्रतिकार सुझाया गया है वह है अधिनियमको स्थगित करना। अनुभवसे यह ज्ञात हुआ है कि दूकानोंको साढ़े पाँचके बादतक खुला रहने देना चाहिए और शनिवारको दूकान बन्द करना एक भयानक भूल है। इस मामलेमें 'नेटाल विटनेस' ने जो रुख ग्रहण किया है उसे एक तरहसे विद्वेषपूर्ण ही कहा जा सकता है। वह यह कहकर इस विषयपर अपना मन्तव्य समाप्त करता है:

> **यह एक सुविदित तथ्य है कि नगरके अरब और भारतीय दूकानदारोंको बहुत हानि पहुँची है। यूरोपीय इसे भली-भाँति याद रखें।**

हमारा सहयोगी यूरोपीयोंसे अनुरोध करता है कि वे सिर्फ इस बिनापर इस अधिनियमके खिलाफ आन्दोलन न करें कि इसका भारतीय व्यापारपर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। भारतीयोंको क्षतिग्रस्त देखनेकी जल्दीमें 'विटनेस' यह बात पूर्णतः भूल गया है कि भारतीयोंको क्षति पहुँचानेमें उन छोटे-छोटे गोरे व्यापारियोंको, अकेले जिन्हें ही भारतीय प्रतियोगिता महसूस हो सकती है, न केवल हानि पहुँचेगी बल्कि वे पूर्णतः मिट जायेंगे, क्योंकि भारतीयोंका मितव्ययी स्वभाव उन्हें तो मुसीबतसे किसी प्रकार बचा सकता है पर छोटे गोरे व्यापारी, जो बचत करनेकी असमर्थताके लिए बुरी तरह प्रसिद्ध हैं, सर्वथा असहाय हो जायेंगे।

असली इलाज भारतीयोंको चोट पहुँचानेके लिए छोटे गोरे फुटकर व्यापारियोंको नष्टकर देना नही है, बल्कि भारतीयों और यूरोपीयों — दोनोंके लिए दूकान बन्द करनेके उचित समयका निर्धारण करना है, जिससे बड़ी फुटकर दूकानोके बन्द हो जानेके बाद वे जीविकोपार्जनका अवसर पा सकें। बड़ी फुटकर दूकानोको सदा ही छोटी फुटकर दूकानोके मुकाबले बहुत पहले बन्द करना पड़ेगा। 'विटनेस' ने स्थितिको पूर्वग्रहपूर्ण दृष्टिसे देखा है, इसलिए वह यह कल्पना करनेकी भूल भी कर बैठा है कि बिजलीका खर्च बचनेसे दूकानदारोंको कोई लाभ होगा। हम 'विटनेस' को यह बात समझ लेनेका श्रेय प्रदान करते हैं कि कोई दूकानदार बिजली जलानेका खर्च तबतक बर्दाश्त नही करेगा जबतक कि वह उतने घंटोमे होनेवाले व्यापारके लाभसे खर्च निकालनेके अलावा कुछ बचा भी न सकता हो।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४-३-१९०६

२५८. रंगदार लोगोंका प्रार्थनापत्र

'केप ऑफ गुड होप, ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर कालोनीके निवासी' रंगदार ब्रिटिश प्रजाजनोने जो प्रार्थनापत्र सम्राटकी सेवामे भेजा है, उसकी एक प्रति हमको भी भेजनेकी कृपा की गई है।

जान पड़ता है कि प्रार्थनापत्र दूर-दूरतक प्रचारित किया जा रहा है और उसपर उक्त तीनो उपनिवेशोके सब रगदार लोगोके हस्ताक्षर कराये जा रहे है। प्रार्थनापत्रका स्वरूप अ-भारतीय है, यद्यपि रंगदार लोग होनेके कारण ब्रिटिश भारतीयोपर इसका बहुत गहरा असर पड़ता है। हम समझते हैं कि समस्त दक्षिण आफ्रिकामे ब्रिटिश भारतीय इस देशकी अन्य रगदार जातियोसे पृथक् और प्रभिन्न रहे है, यह एक बुद्धिमत्तापूर्ण नीति थी। यह ठीक है कि ब्रिटिश भारतीयों और अन्य रंगदार जातियोंकी बहुत-सी शिकायतें लगभग एक समान है, किन्तु जिन दृष्टिकोणोसे दोनों वर्ग अपनी-अपनी माँगें पेश कर सकते है, उनमें कोई समानता नही है। जहाँ ब्रिटिश भारतीय अपनी माँगोके समर्थनमें १८५८ की राजकीय घोषणाका उपयोग कर सकते है और प्रभावकारी रूपमें करते भी है, वहाँ अन्य रंगदार लोग ऐसा करनेकी स्थितिमे नहीं है। जहाँ ऑरेंज रिवर कालोनीमें कुछ वर्गोके रगदार लोग सम्पत्ति और यातायातके मामलेमें पूरे अधिकारोकी माँग कर सकते है वहाँ ब्रिटिश भारतीयोको किसी प्रकारका आधार उपलब्ध नही है। इसी प्रकार, ट्रान्सवालमे दूसरी रंगदार जातियोके कई वर्ग, भू-सम्पत्ति रखनेके अधिकारी है, परन्तु १८८५ के कानून ३ के अनुसार ब्रिटिश भारतीयोंको ऐसा करना वर्जित है। इसलिए यद्यपि भारतीय और अ-भारतीय रंगदार समाजोको अलग-अलग रहना चाहिए, और वे अलग-अलग रहते भी है एवं उनके अलग अलग सगठन भी है, तथापि दोनो अपने सामान्य अधिकारोपर जोर देनेमे एक दूसरेको निस्सन्देह शक्ति प्रदान कर सकते है। इसलिए, जो कागज हमारे सामने है हमें उसका स्वागत करनेमे कोई सकोच नही है। जिन्होने प्रार्थनापत्र तैयार किया है उन्होने इसमे केवल शुद्ध तथ्योका ही समावेश किया है। हमें इसके लिए उनको बधाई अवश्य देनी चाहिए। हमें सदैव ही यह लगा है कि दक्षिण आफ्रिकाके रगदार लोगोका मामला इतना अधिक सुदृढ और न्यायसंगत है कि उसके सम्बन्धमे केवल तथ्य दे देना अन्य किसी भी तर्कसे कही ज्यादा प्रभावकारी है। प्रार्थनापत्रमें बहुत-सी बाते नही दी गई है, किन्तु उसमे वक्तव्योसे

निकाले जानेवाले निष्कर्ष काफी स्पष्ट हैं। प्रार्थियोंने स्पष्ट रूपसे सिद्ध कर दिया है कि दक्षिण आफ्रिकाके एक हिस्से, अर्थात् केप ऑफ गुड होप उपनिवेशमें, उनको प्रातिनिधिक संस्थाओंके आरम्भसे ही मताधिकार प्राप्त है। उन्होंने यह भी सिद्ध किया है कि १८९२ में मताधिकार कानूनपर पुनर्विचारके समय भी उसमें रंगके कारण निर्योग्यता लगानेके उद्देश्यसे कोई परिवर्तन नहीं किया गया। परिणामस्वरूप, इस समय, केपमें १४,००० कानून-सम्मत रंगदार मतदाताओंके नाम सूचीमें दर्ज हैं। प्रार्थियोंने आगे कहा कि :

> **उन्होंने इस अधिकारका उपभोग आवश्यक जायदाद और शिक्षा प्राप्त करनेमें प्रलोभन माना है और, उनका नम्रतापूर्वक निवेदन है कि, उन्होंने उस अधिकारका उपयोग धर्म एवं रंगके भेद बिना सम्पूर्ण समाजके हितके लिए गौरवास्पद रूपसे और औचित्यकी भावनाके साथ किया है।**

परन्तु उनका कहना है कि ज्योंही वे ऑरेंज रिवर कालोनी या ट्रान्सवाल उपनिवेशमें प्रवास करते हैं त्योंही उनपर और उनकी सन्तानोंपर, रंगभेदके कारण निर्योग्यताका प्रतिबन्ध लगा दिया जाता है। प्रार्थियोंने मताधिकारको अपने कार्यक्रममें सर्वोच्च स्थान दिया है। यह उचित ही किया है क्योंकि, उन्हींकी भाषामें,

> **इन अधिकारोंसे वंचित होनेपर महामहिम सम्राटके रंगदार प्रजाजन एक बड़ी हद तक अपनी उन शिकायतोंको, जिनसे वे पीड़ित हों, सार्वजनिक रूपसे प्रकट करने और वैधानिक साधनोंसे दूर करानेके अधिकारसे भी वंचित हो जाते हैं। और ये शिकायतें ऐसी नहीं है जो कानूनी अदालतकी शरणमें जाकर दूर कराई जा सकती हों।**

इस बयानकी सचाई बहुत-से उदाहरण देकर सिद्ध की जा सकती है। [जिस देशमें लोक-संस्थाएँ हैं उसमें वे लोग अभागे हैं जिनको लोक-प्रतिनिधियोंके चुनावमें मत देनेका अधिकार प्राप्त नहीं है। मताधिकार वंचित लोग अपना या अपने प्रतिनिधियोंका कोई दोष न होते हुए भी धीरे-धीरे दब जाते है, क्योंकि शासनमें स्वार्थ उभर आते है।] ब्रिटिश भारतीयोंने अपने बारेमें भ्रम दूर करनेके उद्देश्यसे यह स्पष्ट कर दिया है कि उनको राजनीतिक सत्ताकी आकांक्षा नही है, परन्तु उनको इससे हानि हुई है और अब उन्होंने यह जाना है कि चूंकि नेटाल और दूसरे उपनिवेशोंमें लोक-प्रतिनिधियोंके चुनावमें उनकी कोई आवाज नहीं है, इसलिए उनकी नागरिक स्वतन्त्रतामें भी बहुत कमी हो गई है। रंगदार लोगोंका प्रार्थनापत्र महत्वपूर्ण दस्तावेज है। उसपर बहुत लोग हस्ताक्षर कर रहे हैं, और आशा की जाती है कि उसमें निहित प्रार्थनापर ध्यान दिया जायेगा और विचार किया जायेगा, जिसके वह निःसन्देह योग्य है। उदारदलीय मन्त्रियोंने अनेक बार साम्राज्यके दुर्बल सदस्योको सहायता देनेकी इच्छा प्रकट की है। नये उपनिवेशोंको संविधान देनेमें उनका विवेक मुक्त है और उनको अपने सिद्धान्तोंको आचरणमें उतारनेका एक अलभ्य अवसर प्राप्त है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४–३–१९०६

२५९. 'कलर्ड पीपुल्' का प्रार्थनापत्र

प्रिटोरियामें "कलर्ड पीपुल्" [रंगदार लोगों] की बैठक हुई थी। इस अंकमें हम उसका विवरण दे रहे हैं। उनके द्वारा दी गई अर्जीका अनुवाद भी छाप रहे हैं। हम "कलर्ड पीपुल्" शब्दका प्रयोग कर रहे हैं, क्योंकि उसका अनुवाद "काले लोग" करनेसे उसमें वतनियोंका समावेश हो जाता है। इस बैठकमें वतनी नहीं थे। उसमें खास तौरपर "केप बॉय" कहलानेवाले लोग थे, और वे लोग थे, जिनके माँ-बापमें से कोई-न-कोई गोरा है। उसमें कुछ मलायी भी शरीक हुए हैं।

"कलर्ड पीपुल्" के इस संघमें भारतीयोंका समावेश नहीं है। भारतीय हमेशा इस बैठकसे दूर रहे हैं। हम मानते हैं कि भारतीयोंने इसमें समझदारीसे काम लिया है। यद्यपि उनकी और भारतीयोंकी मुसीबतें लगभग एक ही प्रकारकी हैं, फिर भी दोनोंके इलाज एक नहीं हैं। इसलिए मुनासिब यह है कि दोनों अपने-अपने ढँगसे लड़ाई लड़ें। हम १८५७ की[1] घोषणाका उपयोग अपने पक्षमें कर सकते हैं। "कलर्ड पीपुल्" नहीं कर सकते। वे अपने पक्षमें यह जबरदस्त दलील दे सकते हैं कि वे इसी देशकी सन्तान हैं। उनकी रहन-सहन बिलकुल यूरोपीय है। वे इस तथ्यका उपयोग भी अपने पक्षमें कर सकते हैं। हम भारत-मन्त्रीके नाम अर्जी भेज सकते हैं। वे यह नहीं कर सकते। चूँकि वे अधिकतर ईसाई हैं, इसलिए अपने पादरियोंकी मदद ले सकते हैं। हमें उनकी मदद नहीं मिल सकती। स्पष्ट ही "कलर्ड पीपुल्" ने एक बड़ी लड़ाई छेड़ी है। अतएव हमारे लिए इतनी टिप्पणी लिखना जरूरी हो गया है।

प्रिटोरियामें उनकी जो बैठक हुई थी, उसमें उन्होंने कुछ अतिरेकपूर्ण बातें की थीं और लॉर्ड मिलनरके बारेमें अपमानजनक शब्दोंका उपयोग किया था। 'टाइम्स ऑफ नेटाल' ने इसकी कड़ी आलोचना की है। उनके सभापतिने कहा कि काले लोगोंपर जुल्म ढानेसे बोअरोंने राज्य खोया, और अगर काले लोगोंपर जुल्म जारी रहा, तो अंग्रेज राज्य खोयेंगे। यह धमकी बेकार है। इसमें बोलनेवालेका मंशा यह था कि "कलर्ड पीपुल्" मुकाबला करेंगे। उनमें मुकाबला करनेकी ताकत भी नहीं है। [मनुष्यको हमेशा अपनी ताकतका ध्यान रखकर ही काम करना चाहिए।]

"कलर्ड पीपुल्" का प्रार्थनापत्र बहुत अच्छा है। उसमें उन्होंने पर्याप्त जानकारी दी है, और उसके सिवा और कुछ नहीं दिया। जो जानकारी दी है, वह इतनी ठोस है कि उसके विषयमें दलील देनेकी जरूरत नहीं। उन्होंने यह सिद्ध करके दिखाया है कि आजतक वे केप कालोनीमें पर्याप्त अधिकारोंका उपभोग करते आये हैं। तो फिर ट्रान्सवालमें और ऑरेंज रिवर कालोनीमें उन्हें वे अधिकार क्यों न मिलें?

इस प्रार्थनापत्रपर समर्थन प्राप्त करनेके लिए वे लोग डॉक्टर अब्दुर्रहमानको[2] विलायत भेजना चाहते हैं। यह कदम बहुत अच्छा और जरूरी है। इस समय हर समाजको अपनी बात सुनानेके लिए जितना हो सके उतना प्रयत्न करना चाहिए। इस प्रयत्नके लिए यहाँसे एक-दो व्यक्तियोंको जाना चाहिए।

हमें यह देखना चाहिए कि "कलर्ड पीपुल्" के इस आन्दोलनका परिणाम क्या होगा। हो सकता है कि जब वे लोग इतनी मेहनत कर रहे हैं, तो एक हद तक उसका कुछ अच्छा फल

१. स्पष्टतः १८५८ के स्थानपर भूलसे १८५७ लिखा गया है।
२. आफ्रिकी राजनैतिक संघके अध्यक्ष और केप टाउनकी नगरपालिकाके एक सदस्य।

निकले। और अगर उनकी सुनवाई हुई, तो सम्भव है कि उसमें बहुत हद तक भारतीयोंका भी समावेश होगा।

वे जैसा कर रहे हैं हमें भी वैसा करनेकी बहुत आवश्यकता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४-३-१९०६

२६०. हीडेलबर्गकी जमातको दो शब्द

हीडेलबर्गकी जमातके बीच जो अनबन चली आ रही है, उसके विषयमें हम कई पत्र छाप चुके हैं। दोनों पक्षोंको जो कहना था, सो हमने कहने दिया है। अब इस विषयमें और भी चिट्ठी-पत्री छापते रहना, मानो केवल कलह जारी रखना है। इसलिए इस सप्ताहके बाद हम इस प्रश्नकी चर्चा करनेवाले पत्र छापना बन्द कर देंगे।

हम जो पत्र छाप चुके हैं उनसे पता चलता है कि दोनों पक्षोंमें थोड़ा-बहुत दोष हो सकता है। हम उसका विवेचन नहीं करना चाहते। दोष किसीका भी हो, पर हम यह देख सकते हैं कि कलह एक न-कुछ बातपर है और चलता रहता है। इसका मुख्य कारण जिद है। हम दोनों पक्षोंसे विनती करते हैं कि [मुखियोंको ऐसा प्रयत्न करना चाहिए जिससे कलहके कारण समाप्त हो जायें और लोग परस्पर मिलजुल कर रहने लगें।] घरके झगड़ोंके अलावा इस देशमें हमपर इतने अधिक संकट हैं कि हमें उन संकटोंमें घरके झगड़े दाखिल करके और वृद्धि नहीं करनी चाहिए। दोनों पक्ष आपसमें समझौता करके सब्रसे काम लें तो कलह शीघ्र समाप्त हो जायेगा। हम उम्मीद करते हैं कि दोनों पक्षोंके सेठिए आपसमें मिलकर हीडेलबर्गकी जमातमें पैठे हुए इस कलहको मिटायेंगे, और दोनों पक्षोंको फिरसे मिला देंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४-३-१९०६

२६१. केपमें चेचक

केपका समाचार है कि वहाँ काले लोगोंमें चेचक फैल गई है। इस सम्बन्धमें केपके मुखियोंको जाँच करके तत्काल परिणाम देनेवाले उपाय करने चाहिए। चेचकके बीमारकी सार-सँभाल कुछ नियमोंका ध्यान रखनेसे सहज ही हो सकती है। दूसरोंको छूत न लगे, इसके लिए अलग कोठरीमें रखकर सावधानीके साथ बीमारकी शुश्रूषा करनेसे छूतका डर बहुत-कुछ दूर किया जा सकता है। ऐसी बीमारीको छिपानेसे कोई फायदा नहीं होता बल्कि आखिर जिस समाजमें यह बीमारी फैलती है उसे नुकसान सहना पड़ता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४-३-१९०६

२६२. सिडनीमें प्लेग

तारसे समाचार मिला है कि सिडनीमे प्लेगके पाँच केस हो चुके है। जहाजपर दो केस होनेकी खबरका तार भी इसी हफ्ते मिला है, और उसमें कहा गया है कि ये केस रंगदार लोगोमे हुए है। फिर भी अनुभव यह रहा है कि जब भारतके बाहर कही दूर प्लेगके केस हुए है, तब कई जगहोंमें एक साथ केस होने लगे है। और, जहाँ हम लोगोंको तंग करनेके लिए ऐसे केसका बहाना ही खोजा जाता हो, वहाँ हमें बहुत सोच-समझकर चलना चाहिए। हम कई दफा कह चुके है कि अधिकतर प्लेगके मुख्य कारण गन्दी और खराब हवा हुआ करते है। अतएव घर साफ रखना, पाखानोंमें गन्दगी न होने देना, पाखानेपर हर बार राख अथवा रेत डालना, सारी जमीनको कृमिनाशक पानीसे धोना, घरमे हवा-प्रकाश खूब आने देना और नियमित रूपसे सादा भोजन करना — इन सूचनाओंको ध्यानमें रखते हुए इनके अनुसार व्यवहार करनेवालेको डरनेकी जरूरत नही है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४–३–१९०६

२६३. साबुनके लिए प्रमाणपत्र

२१–२४ कोर्ट चेम्बर्स
नुक्कड़, रिसिक व ऐंडर्सन स्ट्रीट्स
पो० ऑ० बॉक्स ६५२२
जोहानिसबर्ग
मार्च २६, १९०६

यह प्रमाणित किया जाता है कि मैं कुछ समयसे न्यू सोप मैन्युफैक्चरिंग कम्पनी, बम्बई द्वारा निर्मित साबुनका इस्तेमाल कर रहा हूँ और मैंने इसे गुणमें पूरा-पूरा सन्तोषजनक पाया है। मुझे मालूम हुआ है, इस साबुनको तैयार करनेमें पशुओंकी चर्बी इस्तेमाल नही की जाती। मेरी रायमें इस कारणसे इस साबुनकी उपयोगिता बहुत ज्यादा बढ जाती है।

मो० क० गांधी

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रति (सी० डब्ल्यू० ९१५) से।
सौजन्य : वेणीलाल गांधी।

२६४. प्रार्थनापत्र : लॉर्ड एलगिनको

डर्बन
मार्च ३०, १९०६

सेवामें
परममाननीय अर्ल ऑफ़ एलगिन
महामहिम सम्राटके प्रधान उपनिवेश-मन्त्री
लन्दन

नेटाल उपनिवेशके फ्राइहीड-निवासी दादा उस्मानका प्रार्थनापत्र

नम्र निवेदन है कि,

१. आपका प्रार्थी एक ब्रिटिश भारतीय प्रजा है।

२. आपका प्रार्थी पिछले २४ वर्षोंसे दक्षिण आफ्रिकाका अधिवासी है।

३. आपके प्रार्थीने १८९६ में फ्राइहीडके उस भागमें सामान्य दूकानदारके रूपमें अपना व्यापार शुरू किया था, जो उस समय भारतीय बस्तीके नामसे प्रसिद्ध था।

४. आपके प्रार्थीने वहाँ मकान बनवाया, जिसके मूल्यका अनुमान ३०० पौंड है।

५. भूतपूर्व बोअर सरकारने उक्त स्थानसे आपके प्रार्थीको हटाकर एक नई बस्तीके लिए निश्चित स्थानमें भेजनेकी कई बार चेष्टा की, किन्तु ब्रिटिश सरकारके हस्तक्षेपके कारण आपके प्रार्थीके लिए उसी स्थानपर अपना व्यापार जारी रखना सम्भव हुआ।

६. आपके प्रार्थीने नियमित परवाना लेकर उसके अनुसार सदा फ्राइहीडमें व्यापार किया है।

७. आपके प्रार्थीके पास लगभग ३,००० पौंड कीमतका कपड़ा तथा किरानेका भण्डार था।

८. ऐसी स्थिति थी आपके प्रार्थीकी, जब फ्राइहीड नेटालमें सम्मिलित किया गया।

९. फ्राइहीडको नेटालमें मिलानेकी शर्तोंमें व्यवस्था है कि १८८६ मे संशोधित १८८५ का कानून ३, जो ट्रान्सवालके एशियाई-विरोधी कानूनके नामसे प्रसिद्ध है, बना रहेगा।

१०. ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयने इस कानूनकी जो व्याख्या की है,[1] उसके अनुसार तो व्यापारके सम्बन्धमें ब्रिटिश भारतीयोंके लिए कोई क्षेत्र सीमित नहीं है और वे अन्य ब्रिटिश प्रजाजनोंकी तरह ही व्यापार-सम्बन्धी परवाने लेनेके लिए स्वतन्त्र है।

११. परन्तु फ्राइहीड स्थानिक निकायने उक्त स्थानपर आपके प्रार्थीका परवाना नया करनेसे इनकार कर दिया। उसने आपके प्रार्थीको इस शर्तपर फ्राइहीडमें व्यापार करने देनेकी इच्छा प्रकट की कि प्रार्थी एक पृथक् बस्तीमें निकाय द्वारा निश्चित स्थानमे जाकर व्यापार करे।

१२. उक्त स्थान फ्राइहीडसे बहुत दूर है और व्यापारके लिए बिलकुल उपयुक्त नहीं है।

१३. आपके प्रार्थीके लिए ऐसे स्थानपर व्यापार करना असम्भव है जो कस्बेके व्यापारिक भागसे दूर है।

१४. आपके प्रार्थीने अपने उक्त स्थानपर अच्छी साख पैदा कर ली है।

१५. आपके प्रार्थीने अपने परवानेको नया करानेकी कई कोशिशें कीं; परन्तु उसे नया करनेसे इनकार कर दिया गया।

१. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ १२६।

१६. आपके प्रार्थीको उक्त स्थानपर व्यापार करनेसे रोकनेके लिए स्थानिक निकायने नेटालका १८९७ का कानून १८ जारी किया, जिसे विक्रेता-परवाना अधिनियम कहा जाता है।

१७. इसलिए आपके प्रार्थीको दोहरे प्रतिबन्धोंका सामना करना पड़ रहा है — अर्थात् ट्रान्सवाल कानूनका भी और नेटाल कानूनका भी। इनसे फ्राइहीडमें ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति उससे भी ज्यादा खराब हो गई है, जितनी ट्रान्सवाल तथा नेटालके दूसरे भागोंमें है।

१८. १८९७ के कानून १८ के अनुसार आपके प्रार्थीको अपने परवानेके लिए परवाना-अधिकारीको आवेदनपत्र देना पड़ा। वही अधिकारी टाउन क्लार्क भी है; इसलिए स्वभावतः वह स्थानिक निकायसे आदेश ग्रहण करता है।

१९. परवाना-अधिकारीने परवाना नया करनेसे इनकार कर दिया।

२०. इसलिए, आपके प्रार्थीने कानूनके अनुसार स्थानिक निकायसे अपील की।

२१. स्थानिक-निकायके ज्यादातर सदस्य हमारे प्रतियोगी व्यापारी तथा आपके प्रार्थीसे द्वेष माननेवाले व्यक्ति हैं। उसने परवाना-अधिकारीके निर्णयको पक्का करार दे दिया है।

२२. परवाना-अधिकारीने अपनी अस्वीकृतिके निम्नलिखित कारण बताये हैं :

> **१. कस्बेकी भूमिपर बने मकानोंके लिए परवाना देनेका अधिकार परवाना-अधिकारीको नहीं है — और ऐसी भूमिपर बने मकानोंके लिए परवाने देनेका अधिकार तो और भी नहीं है जो स्थानीय निकाय द्वारा पहले कभी पट्टेपर नहीं दी गई।**
>
> **२. मेरी अस्वीकृतिका दूसरा कारण यह है कि ऐसा करनेसे मुझे १४ मार्च १९०५ के 'गवर्नमेंट गजट' में प्रकाशित सरकारी विज्ञप्ति संख्या १९१ तथा उसके अनुसार बने और उत्तरी जिलोंमें जारी कानूनोंके एकदम विरुद्ध कार्य करना पड़ता। उनमें भारतीयोंको पृथक् बस्तियोंके अतिरिक्त अन्यत्र परवाने देनेकी स्पष्ट मनाही की गई है।**
>
> **३. मैंने परवाना देनेसे इसलिए भी इनकार किया कि ऐसा करनेमें मैंने समस्त समाजके सर्वोत्तम हितों और उसकी अभिव्यक्त भावनाओंके अनुकूल कार्य किया है — भले इसमें प्रार्थीके वकील अपवाद रूप हों।**

साथ नत्थी किये गये कागजातसे[1] यह बात अधिक पूर्ण रूपमें प्रकट होगी।

२३. परवाना-अधिकारीने जो पहला कारण बताया है वह पूर्णतः भ्रामक है; क्योंकि आपके प्रार्थीको पृथक् बस्तीके अतिरिक्त और सर्वत्र व्यापार करनेका परवाना अस्वीकार किया गया है।

२४. दूसरा कारण भी, ट्रान्सवालके सर्वोच्च-न्यायालयके उपर्युक्त निर्णयके अनुसार निकम्मा है।

२५. तीसरा कारण ही असली कारण है — अर्थात् यह कि आपका प्रार्थी एक ब्रिटिश भारतीय है।

२६. १८९७ के उक्त कानून १८ के अन्तर्गत उपनिवेशके सर्वोच्च न्यायालयमें अपील भी नहीं हो सकती; और स्थानिक निकायका निर्णय ही अन्तिम समझा जाता है।

२७. आपके प्रार्थीने स्थानिक निकायसे उसके ऐसे निर्णयका कारण जानना चाहा, पर निकायने कोई कारण बतानेसे इनकार कर दिया — जैसा कि प्रार्थीके वकील और टाउन क्लार्कके बीच हुए पत्र-व्यवहारसे प्रकट होता है। पत्र-व्यवहारकी एक प्रति इसके साथ नत्थी है।[2]

२८. इसपर आपके प्रार्थीने तबतक व्यापारके लिए एक अस्थायी परवाना जारी करनेकी अर्जी दी, जबतक कि प्रार्थी राहतके लिए अन्य कार्रवाइयाँ नहीं कर लेता। स्थानिक निकायने यह भी अस्वीकार कर दिया।

१. और २. यहाँ नहीं दिये गये हैं।

२९. आपके प्रार्थीको बताया गया कि उसे स्थानिक निकायकी कार्रवाईके विरुद्ध कानूनन कोई राहत नहीं मिल सकती।

३०. इसलिए आपके प्रार्थीको अपनी दूकान बन्द कर देनेको विवश होना पड़ा है और इससे उसपर सारे माल, ऋण और उसके नौकरोंका बोझ आ पड़ा है।

३१. जहाँतक निकायका सम्बन्ध है, आपका प्रार्थी सम्मानपूर्वक निवेदन करता है कि स्थानिक निकायका कार्य ज्यादतीभरा, अन्यायपूर्ण तथा निरंकुश है; क्योंकि आपके प्रार्थीके परवानेको नया करनेसे इनकार करके उसको, बिना किसी अपराधके, और बिना किसी क्षति-पूर्तिके, जीविकाके साधनोंसे वंचित कर दिया गया है।

३२. आपके प्रार्थीका यह भी निवेदन है कि उसे जो स्पष्ट क्षति पहुँची है वह, ब्रिटिश विधानके अन्तर्गत, लाइलाज् नहीं रहनी चाहिए।

३३. इसलिए आपका प्रार्थी प्रार्थना करता है कि सम्राटकी सरकार प्रार्थीकी ओरसे हस्त-क्षेप करे और जिस रूपमें उसे उचित प्रतीत हो, प्रार्थीका कष्ट दूर कराये।

और न्याय तथा दयाके इस कार्यके लिए प्रार्थी सदैव दुआ करेगा, आदि।

दादा उस्मान

डर्बन, तारीख ३०
मार्च, १९०६

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४–४–१९०६

२६५. शीघ्र दूकानबन्दी अधिनियम

कुछ लेखक शीघ्र दूकानबन्दी अधिनियमको लेकर नेटालके अखबारोंमें तिलका ताड़ बना रहे हैं। उनमेंसे अनेक खुशीसे फूले नहीं समाते कि अन्ततः उनकी स्थिति ऐसी हो गई है कि वे भारतीय व्यापारियोंको क्षति पहुँचा सकते हैं। हमारा सहयोगी 'नेटाल ऐडवर्टाइजर', हमसे सहमत होकर, कहता है कि अगर शीघ्र दूकानबन्दी अधिनियम भारतीय समाजको अहितकर ढंगसे प्रभावित करनेको है तो छोटे-छोटे गोरे व्यापारियोंपर वह और भी अधिक गम्भीर असर डालने-वाला है। अगर वह इतनेपर ही रुक जाता तो हमें कुछ न कहना होता। परन्तु, वह आगे सुझाता है:

> इस विषयपर विचार-विमर्श करने और एशियाई आव्रजन तथा स्पर्धापर कोई कारगर प्रतिबन्ध लगानेका उपाय सोचनेके लिए व्यापारियों और कामकाजी लोगोंकी एक आम सभा नगर-भवनमें बुलाई जानी चाहिए। अगर ऐसा किया गया तो हमें कोई सन्देह नहीं कि परिस्थितिके वास्तविक तथ्य इस तरह प्रकट होंगे कि कुछ लोग आश्चर्यमें पड़ जायेंगे; और उनसे कोई सचमुच कारगर तथा उपयोगी कार्रवाई की जा सकेगी। हमारा विचार है, यह बात हँसी-खेलमें उड़ा देनेकी नहीं है। यह आत्म-रक्षाका — नेटालके सभी वर्गोंके गोरे लोगोंके लिए जीवन-मरणका सवाल है।

हम इस सुझावपर शान्तिपूर्वक विचार करेंगे।

नगर-भवनमें आम सभा हो, इसमें हमें कोई आपत्ति नही है। लेकिन, क्या इससे हमारे सहयोगीका अभिलषित लक्ष्य सिद्ध हो जायेगा? क्या जन-समुदायने कभी भी किसी विषयपर ठंडे दिलसे विचार किया है? [आम सभा तो किसी ऐसे आन्दोलनको ही बल दे सकती है जो तथ्योंपर आधारित हो; परन्तु वह कभी छान-बीन करके सच्चे तथ्योको प्राप्त करनेकी चेष्टा नही करती। अक्सर यह गाली-गलौज और मनोवेगोको उभाड़नेवाली बातोसे परिचालित होती है। अतएव, जब सार्वजनिक सभाओका आयोजन किसी ऐसी परिस्थितिपर विचार करनेके लिए किया जाता है, जिसे पहले ही निश्चत रूपसे जान नही लिया गया है, तब वे खतरनाक साबित होती है।] हम इस कथनको स्वीकार कर लेंगे कि प्रश्न "गोरे लोगोके लिए आत्मरक्षा और सच्चे जीवन-मरणका है।" तो फिर, तथ्योकी खोज और उनपर कारगर कार्रवाई करनी होगी। अभी जो एक बात बिलकुल स्पष्ट है, वह यह है कि भारतीय व्यापारी पूरी तरह परवाना-अधिकारी और स्थानिक निकायोकी दयापर निर्भर हैं। दूसरा तथ्य भी सर्वथा स्पष्ट है; अर्थात् अनेक मामलोंमें परवाना-अधिकारी और स्थानिक निकायोंने अत्यन्त मनमाने और अन्यायपूर्ण ढगसे काम किया है। तीसरा तथ्य यह है कि श्री हैरी स्मिथ उत्तरोत्तर बढ़ती सतर्कतासे भारतीय आव्रजकोके प्रवेशकी निगरानी कर रहे हैं; और कोई भी भारतीय, अपना पूर्व अधिवास सिद्ध किये बिना, न जल-मार्गसे और न थल-मार्गसे उपनिवेशमें प्रवेश कर सकता है। इससे अधिक और क्या चाहिए? अगर यह इन दो कानूनोके अमलका सवाल है तो, निश्चय ही, किसी आम सभासे बात बननेकी नही है। इसका एकमात्र उपचार है कोई जाँच-आयोग; और हम खुले दिलसे इसका स्वागत करेंगे। अगर नेटालकी यूरोपीय आबादी, दरअसल, यह महसूस करती है कि भारतीय व्यापारी फूल-फल रहे है, वे अनुचित स्पर्धा कर रहे है और सख्त कानून पर्याप्त सख्तीसे लागू नही किये जा रहे हैं, तो कुछ निष्पक्ष व्यक्तियोकी एक छोटी-सी समिति तथ्योको शीघ्र ही स्पष्ट कर देगी। और अगर वह सिद्ध कर दे कि हमारे सहयोगी द्वारा आशंकित परिस्थिति जैसी कोई चीज मौजूद है, तो वह उपयुक्त अवसर होगा कि ऐसे आयोगके निष्कर्षोपर विचार-विमर्श करनेके लिए आम सभाका आयोजन किया जाये।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-३-१९०६

२६६. न्यायका दुर्ग

पॉचेफस्ट्रूमकी दौरा-अदालतके सामने अभी हालमें एक बहुत महत्वपूर्ण मुकदमेकी सुनवाई हुई है। पॉचेफस्ट्रूममें दो यूरोपीयोने एक भारतीय व्यापारीसे रुपया ऐंठनेकी कोशिश की। तरीका यह अपनाया गया था कि भारतीय उन दोनोमें से एककी पत्नीके पास ले जाया गया और वहाँ उसपर बलात्कारकी चेष्टा करनेका इल्जाम लगाया गया। यह षड्यंत्र करीब-करीब सफल हो गया। जालसाजोंने भयत्रस्त भारतीयसे ३०० पौंड चेकसे वसूल कर लिए, परन्तु सौभाग्यसे भारतीयने तत्काल अपने वकीलसे कानूनी सहायता ली। वकीलने उसको चेककी अदायगी रोक देने और मामलेकी सूचना पुलिसको देनेकी सलाह दी। उसने इसपर तुरन्त अमल किया। दोनों यूरोपीय गिरफ्तार कर लिये गये और साथ ही वह स्त्री भी। परिणाम हुआ, न्यायमूर्ति वेसेल्सके सामने एक सनसनीखेज मामलेकी पेशी और भारतीयकी प्रतिष्ठाकी पुनःस्थापना। रकम ऐंठनेका आरोप साबित हो गया और दोनों मुलजिमोंको तीन-तीन वर्षके कठोर कारावासकी

सजा हो गई। रुपया ऐंठनेके सम्बन्धमें भारतीयके वक्तव्यके समर्थनमें कोई गवाही नहीं थी, किन्तु उसके विरुद्ध दो डच कैदी थे जिन्होंने जोर देकर कहा था कि उक्त भारतीय उस नारीपर बलात्कारकी चेष्टा कर रहा था। भारतीयने दृढ़तासे यह बात झूठ बताई और कहा कि उसे पहले मकानमें धोखेसे ले जाया गया और तब उसपर झूठा इल्जाम लगाया गया।

ऐसी विषम परिस्थितियोंमें एक भारतीयको न्याय मिल सका, यह सार्वत्रिक बधाईका विषय है। क्योंकि इससे ब्रिटिश भारतीयोंको बहुत सन्तोष प्राप्त हुआ है। अत्यन्त प्रभावपूर्ण ढंगसे एक बार फिर साबित हो गया है, कि [जहाँतक उच्च न्यायालयका सम्बन्ध है, ब्रिटिश न्यायका स्रोत यथा-संभव शुद्धतम है। निर्भय और निष्पक्ष न्यायाधीशोंकी एक दीर्घ शृंखलाके फलस्वरूप परम्पराएँ बन गई है और ब्रिटिश विधानका आन्तरिक भाग हो गई है। हमें यह कहनेमें कोई संकोच नही है कि साम्राज्यकी सफलताके बहुत बड़े रहस्योंमें से एक रहस्य है उसकी निष्पक्ष न्याय देनेकी क्षमता।] जैसे मामलेका उल्लेख हमने ऊपर किया है, वैसे मामलोंसे विविध ब्रिटिश उपनिवेशोंमें प्रचलित न्याय-व्यवस्थाकी अनेक त्रुटियोंकी पूर्ति होती है। ऐसी बातें प्रकाश-स्तम्भकी भाँति भारतीयों और उन लोगोंको, जो अस्थायी निर्योग्यताओंसे पीड़ित और उनके परिणामस्वरूप संतप्त हों, संकेत देती हैं कि उनको [तबतक आशा न छोड़नी चाहिए, जबतक तोड़े हुए वादोंकी ठंडी सतहपर शुद्ध न्यायकी तेज धूप पड़ रही है।]

न्यायमूर्ति वेसेल्सने मुकदमेका खुलासा करते हुए न केवल इस मामलेपर विचार किया है बल्कि उनको क्षुद्रसे-क्षुद्र ब्रिटिश प्रजाजनोंके पूर्ण एवं निष्पक्ष सुनवाई पानेके अधिकारका भी साधारण जिक्र करना आवश्यक जान पड़ा। उन्होंने कहा: (हम यह विवरण 'पॉचेफस्ट्रूम बजट' पत्रमें से उद्धृत कर रहे हैं):

> जब मैंने इस देशमें यह सुना — उन्होंने यह उसी अदालतमें उसी दिन सुना था — कि गोरे और कालेकी साक्षीमें जब भेद पाया जाये तब हमें गोरेकी साक्षी सत्य माननी चाहिए, तो मुझे दुःख हुआ। यह एक भ्रान्ति है, एक असत्य है। मैं समझता हूँ कि यदि अदालती पंच आज कालेके विरुद्ध गोरेके बयानको सत्य मानेंगे तो वे बहुत अनुचित काम करेंगे। हमें काले लोगोंकी स्वतन्त्रता और सम्पत्तिकी रक्षा अपनी पूर्ण शक्तिसे करनी चाहिए। जब हम गोरे और काले लोगोंके हितोंपर विचार करें तो हमारे लिए एक क्षणके लिए भी न्याय-भावनासे विचलित होनेसे बढ़कर घातक बात और कोई न होगी। इस देशमें बड़ेसे-बड़े गोरेको जो न्याय सुलभ है वही सच्चा न्याय कालेको भी प्राप्त होना चाहिए। उसमें इस सिद्धान्तको सदा अपने सामने रखना चाहिए और अगर वादी काला आदमी है तो हमें बन्दीको छोड़ न देना चाहिए।

प्रत्येक सच्चे साम्राज्य प्रेमीको ब्रिटिश न्यायकी गौरव-रक्षा इतने श्रेष्ठ ढंगसे करनेके लिए न्यायाधीश वेसेल्सका हृदयसे कृतज्ञ होना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-३-१९०६

२६७ भारतीय स्वयंसेवक

हाल ही में नागरिक सेनाके बारेमें जो सभा हुई थी, उसमें भाषण करते हुए प्रतिरक्षा-मन्त्री श्री वॉट ने "अपना बाँध तोड़ दिया" है। उनसे यह प्रश्न किया गया था:

> **उपनिवेशके विविध भागोंमें जिन अरबोंकी दूकानें हैं क्या सरकार उनको नागरिक सेनाकी सुरक्षित टुकड़ियोंमें भरती करनेका विचार कर रही है; और यदि ऐसा कर रही है तो क्या वह उन्हें बन्दूकें भी देगी?**

हमें बताया गया है कि श्री वॉटने इसका जो उत्तर दिया उसपर हर्ष-ध्वनि की गई। बताया जाता है कि उन्होंने कहा:

> **मुझे यह कहते हुए प्रसन्नता होती है कि नागरिक सेनामें केवल यूरोपीय ही हैं। अगर मुझे अपनी एवं अपने कुटुम्बकी रक्षाके लिए अरबोंपर निर्भर रहना पड़े तो निश्चय ही दुःख होगा। किन्तु मुझे यह कहते हुए प्रसन्नता है कि सरकारके हाथमें यह अधिकार है कि वह युद्धकालमें समस्त रंगदार आबादी — भारतीयों, वतनियों और अरबोंको किसी भी आवश्यक काममें लगा दे।**

इसके बाद उनसे एक और प्रश्न पूछा गया:

> **क्या सरकार यह मानती है कि जब यूरोपीय व्यापारी सेवाके लिए बुला लिए जायेंगे तो सभी जिलोंका व्यापार अरबोंके हाथोंमें चला जायेगा? इसके सम्बन्धमें वह क्या करना चाहती है?**

श्री वॉटका उत्तर पहले उत्तरसे मेल खाता हुआ ही था:

> **मेरी समझसे यह मामला ऐसा है जिसमें नेताओंकी राय ली जानी चाहिए। अगर मैं नेता होता तो सरकारको सलाह देता कि वह दूकानोंके खुलने और बन्द होनेका समय नियमित कर दे। मैं यह ध्यान रखता कि यूरोपीयोंके साथ अरबोंकी अपेक्षा बुरा बरताव न किया जाये। मैं यह व्यवस्था भी करता कि अरबोंसे उनके हिस्सेका काम लिया जाये — बन्दूकें उठानेका नहीं तो खाइयाँ खोदनेका ही सही।**

हमें सन्देह नहीं है कि श्री वॉट प्रतिरक्षा-मन्त्रीकी हैसियतसे यह जानते हैं कि [युद्धमें खाइयाँ खोदना भी उतना ही जरूरी है जितना बन्दूक उठाना। फिर यदि वे अपने और अपने कुटुम्बकी सुरक्षाके लिए अरबोंपर निर्भर रहना नहीं चाहते तो वे उनसे खाइयाँ खुदवाना क्यों चाहते हैं? स्वर्गीय श्री हैरी एस्कम्बके अनुसार, जो प्रतिरक्षामंत्री ही थे, दोनों काम एक जैसे सम्मानपूर्ण हैं। चाहे श्री वॉट, पुनर्विचारके पश्चात्, अरबों अथवा भारतीयोंसे अपनी अथवा उपनिवेशकी रक्षाका काम खाइयाँ खुदवानेके रूपमें या किसी अन्य रूपमें करवाना पसन्द करें या न करें, उनसे वे तबतक युद्ध-सम्बन्धी काम लेनेकी आशा कैसे कर सकते हैं जबतक उनको पहलेसे उसका प्रशिक्षण न दें? सेनाके असैनिक शिविर अनुचरोंमें भी उचित अनुशासनकी आवश्यकता होती है, अन्यथा वे मददगार होनेके बजाय एक निश्चित मुसीबत बन जाते हैं।] लेकिन एक ऐसे मन्त्रीसे हमें सामान्य विवेक अथवा न्यायसे काम लेनेकी आशा नहीं हो सकती जो अपने-आपको इतना भूल जाता है कि निर्दोष लोगोंके पूरे समाजको व्यर्थ ही अपमानित कर बैठता है।

एक मंत्रीके रूपमें उनका काम यह है कि वे अपनी व्यक्तिगत द्वेष-भावनाको अपने मनमें ही रखें। उनके विविध अवसरोंपर दिखाये गये रुखके मुकाबले हम हालमें प्रकाशित 'नेटाल ऐडवर्टाइजर' के सम्पादकीय लेखका स्वागत करते हैं। हम इस लेखको अन्यत्र छाप रहे हैं। हमारा सहयोगी भारतीयों तथा अन्य रंगदार लोगोंको वह श्रेय देकर उचित ही करता है जिसके वे अधिकारी हैं। उसने नागरिक सेना कानूनकी धारा ८३ की ओर संकेत करते हुए कहा है कि रंगदार टुकड़ीका कोई साधारण सदस्य तबतक बारूदी हथियारसे सज्जित न किया जायेगा **जबतक ऐसी टुकड़ियोंको यूरोपीयोंके अलावा दूसरोंके विरुद्ध लड़नेकी आज्ञा न दी जाये।** इससे अब स्पष्ट हो जाता है कि यदि अभाग्यवश किसी भारतीय दलको सशस्त्र करनेकी आवश्यकता आ ही गई तो [अनुभवहीन लोगोंके हाथोंमें, वे हथियार व्यर्थ साबित होंगे।] अधिकारी कुछ समय पूर्व दिये गये हमारे सुझावोंको[1] क्यों नहीं मान लेते और भारतीयोंका एक स्वयंसेवक दल क्यों नहीं संगठित करते? हमें विश्वास है कि विशेषकर उपनिवेशमें उत्पन्न भारतीय — जो नेटालके उतने ही अपने बच्चे हैं, जितने कि गोरे लोग — अपना फर्ज भली-भाँति अदा करेंगे। उपनिवेशी लोग यह आग्रह क्यों नहीं करते कि उनको अपने जीवटका प्रमाण देनेका मौका अवश्य दिया जाये।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-३-१९०६

२६८. ट्रान्सवालका संविधान

ट्रान्सवालके मामलोंके सम्बन्धमें जिस जाँच-समितिकी बहुत चर्चा थी, उसको नियुक्त करनेमें ब्रिटेनकी सरकारने जरा भी विलम्ब नहीं किया है। इसके सदस्योंमें से दो — सर वेस्ट रिजवे[2] और लॉर्ड सैंडहर्स्टको[3] भारतीय मामलोंका अनुभव है। जाँचका दायरा यह पता लगाने तक सीमित है कि नये संविधानका आधार क्या हो। सरकारके लिए "बिना जानकारीके संविधान बना देना सम्भव नहीं है और यह जानकारी वह आपसे पानेकी आशा करती है।" अन्य बातोंके साथ सदस्योंको इस बातपर भी विचार करना पड़ेगा कि, "किन हितोंमें सामंजस्य और किनमें विभेद है", एवं राजनीतिक तथा सामाजिक स्थितियाँ कैसी हैं। यद्यपि यह कहना कठिन है कि जाँचकी सीमामें रंगदारोंके मताधिकारका प्रश्न आता है या नहीं, फिर भी आशा की जानी चाहिए कि आयुक्तोंको इस कठिन और नाजुक सवालपर सलाह देनेका पूरा अधिकार होगा। ट्रान्सवालमें तथा अन्यत्र जो घटनाएँ घट रही हैं उनसे इन स्तंभोंमें व्यक्त किये गये इन विचारोंकी गुरुता प्रकट होती है कि भारतीय अधिकारोंकी रक्षाके किसी अन्य उपायके अभावमें, भारतीयोंको प्रतिनिधित्व देना आवश्यक जान पड़ता है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-३-१९०६

१. देखिए "भारतीय स्वयंसेवकोंकी आवश्यकता", पृष्ठ २४३।
२. श्रीलंका (सीलोन) के भूतपूर्व गवर्नर।
३. बम्बईके भूतपूर्व गवर्नर।

२६९. ट्रान्सवालकी खानोंके लिए भारतीय मजदूर

प्रस्ताव है कि भारतसे मजदूर मंगानेके लिए भारत-सरकारसे वार्ता की जाये। इस सम्बन्धमें समुद्री तारोंसे ट्रान्सवालके अखबार भरे पड़े हैं। हमें खुशी है कि जो आंग्ल-भारतीय इग्लैंडमे है वे इस प्रस्तावके विरुद्ध हैं। और इसके दो कारण हैं: पहला कारण यह है कि भारतीय खान-मजदूरोंमे मृत्यु-संख्या बहुत ज्यादा होगी; और दूसरे भारतको स्वयं अपने खान-उद्योगके लिए सभी भारतीय खान-मजदूरोंकी आवश्यकता है। यह स्मरणीय है कि, जब लॉर्ड मिलनरने लॉर्ड कर्जनसे रेल-निर्माणके लिए दस हजार भारतीय माँगे थे, तब लॉर्ड कर्जनने कहा था कि वे तबतक कोई सहायता नही देंगे जबतक ट्रान्सवालवासी ब्रिटिश भारतीयोकी शिकायतें दूर नही कर दी जातीं।[1] यह दो साल पहलेकी बात है। लॉर्ड कर्जनकी इनकारीके वक्त ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति जैसी थी आज उससे बेहतर नही है। इसलिए तीन पर्याप्त कारण है जिनके आधारपर ट्रान्सवालकी खानोंके लिए भारतीय मजदूर नही दिये जाने चाहिए। हम समझते है कि किसी भी हालतमें ट्रान्सवालके प्रवासी ब्रिटिश भारतीयोंकी निर्योग्यताओंके निवारणके बदले भारतीय श्रमिकोंकी स्वतंत्रताको बेच देना कोई श्रेयस्कर कार्य न होगा और उससे बहुत बुरी मिसाल कायम होगी। हमारी सम्मतिमे, [हर सवालपर उसके गुणावगुणके आधारपर ही विचार किया जाना चाहिए।] हमें इसमें कोई सन्देह नही कि ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय अपनी स्वतंत्रतामें वृद्धि करवानेसे इनकार कर देंगे यदि उसके कारण उनके ज्यादा गरीब देशवासियोंकी स्वतन्त्रतापर अन्यायपूर्ण और अस्वाभाविक प्रतिबन्ध लगते हों। हम यह भी अनुभव करते हैं कि हजारो भारतीय खान-मजदूरोंको ट्रान्सवालमें लानेसे स्थिति, जो आज भी अनेक कठिनाइयोसे भरी हुई है, और भी जटिल हो जायेगी इसलिए हम आशा और विश्वास करते है कि श्री मॉर्ले और लॉर्ड मिटो अपने सरक्षितोके हितोकी हानि करके ट्रान्सवालकी सहायता करनेके प्रत्येक प्रस्तावका दृढतापूर्वक विरोध करेगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१–३–१९०६

२७०. केपके भारतीय

मार्च १६ के केप 'गवर्नमेंट गजट' में १९०२ के केप प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम संशोधनका विधेयक छपा है। जहाँतक ब्रिटिश भारतीयोंका सम्बन्ध है, यह विधेयक निश्चय ही एक प्रतिगामी कदम है।

१९०२ के कानूनकी संकल्पना गुप्त रूपसे की गई थी और जनताके सामने उसे अशोभनीय जल्दबाजीके साथ लाया गया था — यहाँतक कि, केप विधानसभाके अनेक सदस्योने सदनसे उसको पास करानेमें इतनी उतावलीपर आपत्ति की थी। फिर भी कानून पास कर दिया गया। अब इस विधेयक द्वारा उसे संशोधित करनेका प्रस्ताव किया गया है। ब्रिटिश भारतीयोने सरकारसे इसके सम्बन्धमे निवेदन किया तो उनको करीब-करीब विश्वास करा दिया गया कि सरकार शीघ्र ही कानूनको उनकी सुझाई दिशामें बदलेगी और शायद सदनसे महान भारतीय भाषाओंको

१. देखिये खण्ड ४, पृष्ठ १०९–१० ।

शैक्षणिक परीक्षाके लिए मान्यता देने और जो लोग उपनिवेशमें बस चुके हैं उनके हितके लिए घरेलू नौकरों तथा दूसरोंके प्रवेशकी उचित व्यवस्था करनेके लिए कहेगी। लेकिन क़ानूनमें ऐसा कोई सुधार करनेके बजाय इस विधेयकसे ब्रिटिश भारतीयोंकी स्वतंत्रतापर और भी अधिक प्रतिबन्ध लगेगा, ऐसा खयाल है। यह कहनेसे कि यह सभीपर एक-सा लागू है, भारतीयोंपरसे इसका घातक प्रभाव चला नहीं जाता। यह मुख्यतः उन्हींके लिए बनाया गया है। वर्तमान कानूनमें प्रवासीकी कोई परिभाषा नहीं है। इसलिए उसमें यह सामान्य कानूनी परिभाषा लागू होती है कि प्रवासी वह है जो यहाँ बसनेकी नीयतसे प्रवेश करता है। इससे निष्कर्ष यह निकलता है कि क़ानूनमें मन्त्रीको पूरा अधिकार है कि वह यात्रियोंको अभ्यागत पास दे दे, और जो भारतीय या दूसरे लोग अस्थायी रूपसे, उपनिवेशमें आना चाहें उनको परेशान किये बिना प्रवेश करने दे। विधेयकमें यह सब बदल दिया गया है, और प्रवासीकी परिभाषा इस प्रकार की गई है — "कोई भी व्यक्ति जो इस उपनिवेशमें खुश्की या समुद्रकी राह बाहरसे आकर प्रवेश करता है अथवा प्रवेश करनेकी माँग करता है।" हमारी समझसे ऐसी परिभाषामें, जो बिलकुल अस्वाभाविक है, उन यात्रियोंके लिए, जो उपनिवेशसे गुजरना या इसमें अस्थायी रूपसे रहना चाहते हों, व्यवस्थाकी कोई गुंजाइश न रह जायेगी। इससे एक दूसरा भी बहुत बड़ा अन्तर होता है। जब कि १९०२ का कानून दक्षिण आफ्रिकामें स्थायी रूपसे आबाद लोगोंपर लागू नहीं होता, इस विधेयकमें सिर्फ उन लोगोंको छूट है, "जो मन्त्रीको सन्तोष दिला दें कि वे उपनिवेशमें स्थायी रूपसे बस गये हैं और पूर्ववर्ती धाराकी क, ङ और च उपधाराओंके अन्तर्गत नहीं आते।" इसलिए प्रतिबन्ध और कठोर हो गये हैं और उनसे इस उपनिवेशमें ब्रिटिश भारतीयोंके प्रवेशके मार्गमें अनन्त बाधाएँ आती हैं। 'अधिवास' का प्रश्न सर्वोच्च न्यायालयकी व्याख्यापर छोड़नेके बजाय अब मन्त्रीके हाथमें छोड दिया जायेगा। अभी कुछ ही दिन पहले हमने एक ऐसे मामलेपर टीका की थी कि जो केपमें हुआ था और जिसके सर्वोच्च न्यायालयमें ले जा पानेके कारण एक भारतीय दक्षिण आफ्रिकामें अपना अधिवासका दावा सिद्ध कर सका था। अगर वह बेचारा मन्त्रीकी दयापर छोड़ दिया गया होता तो उसको बहुत मुसीबतें झेलनी पड़तीं। फिर इसमें 'अधिवास' सिर्फ केप उपनिवेश तक सीमित है। इसलिए जो भारतीय अब भी ट्रान्सवाल या नेटालमें है, वे इस उपनिवेशमें प्रवेश नहीं कर सकेंगे। हम विश्वास करते हैं कि केप टाउनकी ब्रिटिश भारतीय समिति इस मामलेको अपने हाथमें लेगी और लोगोंको उचित राहत दिलानेका प्रयत्न करेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१–३–१९०६

२७१. कुमारी बिसिक्सकी[1] मृत्यु

हम कर्त्तव्यवश यह दु:खद समाचार दे रहे है कि एक ऑपरेशनके बाद जोहानिसबर्गकी कुमारी ऐ० एम० बिसिक्सकी मृत्यु हो गई। कुमारी बिसिक्स एक सुयोग्य अंग्रेज महिला थी। उन्होने जोहानिसबर्ग शाकाहार आन्दोलनमे प्रमुख भाग लिया था और वे थियोसॉफिकल सोसाइटीकी एक प्रधान सदस्या थीं। भारतीयोंके प्रति वे अनेक प्रकारसे गहरी सहानुभूति रखती थी। उनकी मृत्युपर बहुत शोक प्रकट किया जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-३-१९०६

२७२. ट्रान्सवालमें अनुमतिपत्र सम्बन्धी जुल्म

हमें पता चला है कि ट्रान्सवालमें अनुमतिपत्र सम्बन्धी जुल्म दिन-दिन बढ़ता जा रहा है। मालूम होता है कि अब अस्थायी अनुमतिपत्र देना बिलकुल बन्द कर दिया गया है। श्री इस्माइल मगाके भतीजे श्री सुलेमान मंगा ने, जो हाल ही विलायतसे डर्बन आए थे, डेलागोआ-बे जानेके लिए अस्थायी अनुमतिपत्र माँगा था। लेकिन उपनिवेश-सचिवने उनकी अर्जी मंजूर नही की और श्री सुलेमान मंगाको समुद्री मार्गसे जाना पड़ा। यह जुल्म कुछ कम नही कहा जायेगा।

जापानके श्री नोमूराको अस्थायी अनुमतिपत्र मिलनेमे दिक्कत हुई थी, और उन्होने इसके लिए समूचे ट्रान्सवालको थर्रा दिया। श्री नोमूराकी तुलनामे श्री सुलेमान मंगाका अधिकार ज्यादा था, क्योकि वे ब्रिटिश प्रजा है। शिक्षाके लिहाजसे भी श्री नोमूराकी तुलनामें श्री सुलेमान मंगाका हक अधिक था, फिर भी उन्हे ट्रान्सवालसे गुजरनेकी इजाजत नही मिली।

यह तो मौजूदा तकलीफोका केवल एक नमूना है। जो खबरे हमारे पास आ रही है, वे सब सच हो तो कहना होगा कि लॉर्ड सेल्बोर्नने जो वचन दिया है, उसका पालन होनेके बजाय भंग हो रहा है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-३-१९०६

१. देखिए पादटिप्पणी, पृष्ठ ३६।

२७३. लड़ाईके दावे

जिन लोगोंको लड़ाईके कारण क्षति पहुँची थी, उन्होंने सरकारके सामने अपने दावे पेश किये थे। इन दावोंकी जाँचके लिए जो आयोग नियुक्त किया गया था, उसके सदस्योंने जाँच पूरी कर ली है। उनकी रिपोर्टसे पता चलता है कि लगभग ९०,००० दावे दायर हुए थे, और दावेदारोंने २०,००,०००[1] पौंडका दावा किया था। उन्हें ९५,००,०००[1] पौंड दिये गये हैं। इनमें से ५०,००,००० पौंड ऑरेंज रिवर कालोनीके डच नागरिकों (बर्गर्स) और २०,००,००० पौंड ब्रिटिश प्रजाजनोंको तथा दूसरोंको दिये गये हैं। शेष रकम ट्रान्सवालके और फ्राइहीडके डच नागरिकोंको मिली है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१–३–१९०६

२७४. भारतीय मामलोंके लिए ब्रिटिश संसद-सदस्योंकी नई समिति

सर विलियम वेडरबर्न भारतका हित करनेका एक भी अवसर चूकते नहीं हैं। 'इंडिया' समाचारपत्रके पिछले अंकसे पता चलता है कि उन्होंने सभा करके भारत सम्बन्धी एक संसद-समिति (इंडियन पार्लमेंटरी कमिटी) को फिर खड़ा किया है। ऐसी एक समिति कुछ साल पहले थी, जो पिछली संसदके समय लगभग टूट गई थी। इस समितिमें भारतका हित चाहनेवाले सदस्य सम्मिलित होते हैं। इस बार जो समिति बनी है वह बहुत जबरदस्त है। उसमें कई प्रख्यात सदस्य सम्मिलित हुए है। सर हेनरी कॉटन, श्री हरबर्ट रॉबर्ट्स, श्री पिकर्स- गिल, श्री ओ'डोनल आदि सुप्रसिद्ध सदस्य इस समितिमें दाखिल हुए है, और उनका यह खयाल है कि नई संसदमें भारतके साथ न्याय होगा। इस सबके लिए हमें सर विलियम वेडरबर्नका आभार मानना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१–३–१९०६

२७५. सर जॉर्ज बर्डवुडकी बहादुरी और एक क्लबका हल्कापन

लन्दनमें सेंट स्टीवन्स क्लब एक बहुत पुराना और मशहूर क्लब है। सर जॉर्ज बर्डवुड उसके एक प्रसिद्ध सदस्य थे। उन्होंने भारतमें कई वर्षो तक नौकरी की है, और भारतीयोंके प्रति सदा प्रेमभाव रखा है। उन्होंने एक बहुत ही प्रसिद्ध भारतीयका नाम स्टीवन्स क्लबकी सदस्यताके लिए पेश किया, पर दूसरे सदस्योंने इसपर आपत्ति की। इस कारण उन्होंने सेंट स्टीवन्स क्लबकी सदस्यतासे त्याग-पत्र दे दिया है। सर जॉर्ज बर्डवुड धन्य हैं। ऐसे आँग्ल भारतीयोंके कारण ही भारतवासी अंग्रेजी राज्यको सहन कर रहे हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१–३–१९०६

१. इसमें कुछ भूल है क्योंकि जो रकम चुकाई गई वह दावोंसे अधिक नहीं हो सकती।

२७६. कैडबरी बन्धुओंकी उदारता

नौकरोंको कैसे रखना चाहिए

[कैडबरी कोकोवाले कैडबरी बन्धुओंकी पेढ़ी सारी दुनियामें मशहूर है। उन्होंने एक छोटेसे कामसे जबर्दस्त धन्धा खड़ा कर लिया है। वे आजकल लन्दनके 'डेली न्यूज' पत्रके मालिक हैं और क्वेकर सम्प्रदायके हैं। वे जो मुनाफा कमाते हैं, उसमें से अपने नौकरोकी स्थिति बराबर सुधारते चले आ रहे हैं। उन्होंने ६०,००० पौंडकी एक रकम निकालकर अपने नौकरोको पेंशन देनेके लिए एक बड़ी निधि कायम की है। उनके यहाँ बहुत नौकर है, और उन नौकरोंमें कई बहुत पुराने और वफादार हैं। जब इस प्रकार नौकरोकी चिन्ता की जाती है, तो इसमें आश्चर्य ही क्या कि नौकर बड़ी लगनके साथ, अपना ही काम समझ कर, अपने मालिकका काम करे?]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-३-१९०६

२७७. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

डॉ० अब्दुर्रहमानका भाषण

गत २१ मार्चको रंगदार लोगोंकी एक बड़ी सभा मिलनर हालमें हुई थी। डॉक्टर अब्दुर्रहमान इस सभाके लिए खास तौरपर पधारे थे। डॉक्टर अब्दुर्रहमान आफ्रिकी राजनीतिक सघ (आफ्रिकन पॉलिटिकल ऑर्गनाइजेशन) के सभापति है। वे केप टाउन नगरपालिकाके सदस्य भी है। श्री डैनियल इस सभाके सभापति थे। हाल खचाखच भर गया था। लगभग ५०० व्यक्ति हाजिर थे। उनमें कुछ भारतीय भी थे। श्री अब्दुल गनी, श्री उमर हाजी आमद झवेरी, श्री हाजी वजीर अली, श्री गांधी वगैरह भी हाजिर थे।

उनके भाषणकी खास-खास बातें नीचे देता हूँ।

सभाका उद्देश्य

"आज हम इसलिए इकट्ठे हुए हैं कि हमे सम्राट्के नाम अपने अधिकारोके विषयमे अर्जी भेजनी है। इसके लिए एक अर्जी तैयार की गई है, जिसपर सब 'रंगदार लोगो' की सहियाँ ली जा रही हैं। जब ट्रान्सवालमें और ऑरेंज रिवर कालोनीमे होनेवाली तकलीफोका हमें केपमें पता चला, तब हमने सोचा कि हमे आपके लिए जितनी बने उतनी मेहनत करनी चाहिए। इसमें हमारा भी स्वार्थ है, क्योकि अगर आपके अधिकार छीने जायेंगे, तो आखिर केपमें भी वैसा ही हो सकता है।

दु:खोंकी कथा

"ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर कालोनीमे रंगदार लोगोको बहुत दु:ख उठाने पड़ते हैं। लेकिन उनमें मुख्य दु:ख यह है कि 'रंगदार लोगों' को मतदानका हक नहीं है और दीवानी हक तो बहुतेरे छीन लिए गये है। हम हमेशा गुलामीकी हालतमें रहेंगे, तो हमारी परिस्थिति

दिन-ब-दिन खराब होती जायेगी। [आदमीपर उसकी मर्जीके खिलाफ कर लगानेमें और उसकी जेबमें हाथ डालकर पैसोंकी चोरी करनेमें कोई फर्क नहीं है।] इसलिए अगर रंगदार लोगोंको मतदानका हक न हो, तो उनसे कर बिलकुल न लिए जाने चाहिए।

दुःखका इलाज

"अब इस तरहकी तकलीफोंको मिटानेका सबसे अच्छा रास्ता सम्राट्के नाम अर्जी भेजनेका है। यहाँ हम बहुत-कुछ कर चुके हैं। इंग्लैंडमें इस समय नया मन्त्रिमण्डल है। सबको अपनी तकलीफोंके दूर होनेकी आशा बँध रही है। हम आज ही से महान प्रयत्न करेंगे, तो इसमें शक नहीं कि धीरे-धीरे हमें अपने अधिकार मिल जायेंगे।

अधिकार मिलनेके कारण

"हम ऐसे अधिकारोंके योग्य हैं। दक्षिण आफ्रिकाकी लड़ाईमें ईसो बहुत बड़ा आदमी हुआ है। उसने ब्रिटिश सरकारकी वफादारीके लिए अपनी जान गँवा दी। जब बहुतेरे बोअरोंने ब्रिटिश सरकारका विरोध किया तब काले लोग वफादार बने रहे। केपमें काले लोग गोरोंकी भाँति ही मतदानका उपभोग कर रहे हैं, पर उन्होंने कभी उसका दुरुपयोग नहीं किया। ब्रिटिश अधिकारी कह गये हैं कि जो लड़ाई हुई वह भी हमारी खातिर ही हुई। ऐसी हालतमें हमपर जुल्म नहीं होना चाहिए।

एक दिक्कत

"हमारी स्थिति इतनी मजबूत है कि सम्भवतः हमें ये अधिकार मिलने ही चाहिए। लेकिन इसमें एक दिक्कत मालूम होती है। जब डच लोगोंके साथ सन्धि हुई, तब उसमें यह शर्त रखी गई कि उत्तरदायी शासन मिलनेसे पहले वतनी लोगोंको मताधिकार नहीं देना चाहिए। सारा दारोमदार इसपर है कि वे "वतनी" का अर्थ क्या करते हैं। जितने लोग दक्षिण आफ्रिकामें पैदा होते हैं वे सब "वतनी" कहे जाते हों, तो जो गोरे यहाँ पैदा होते हैं वे भी "वतनी" कहलायेंगे। लेकिन ऐसा अर्थ तो कोई नहीं करेगा। "वतनी" शब्दका अर्थ सब जगह एक ही होता है। और वह यह है कि, जिसके माता-पिता वतनी हों वह "वतनी" है। अगर यह अर्थ सही हो, तो डच लोगोंके साथ हुई सन्धिमें हमारा समावेश बिलकुल नहीं है। डचोंके साथ जो सन्धि हुई, उसमें इतनी गुंजाइश भी जो रह गई, सो लॉर्ड मिलनरकी बदौलत ही। फिर भी जब ब्लूमफॉंटीनमें सभा हुई थी तब लॉर्ड मिलनरने कहा था—'यदि सबका भला हो, तो भी रंगदार लोगोंका क्या होगा?' यही सवाल हमें अभी पूछना शेष है।"

सभाके प्रस्ताव

इस प्रकार भाषण हो जानेके बाद दो प्रस्ताव पास हुए। एक रंगदार लोगोंकी अर्जी मंजूर करनेका और दूसरा डॉक्टर अब्दुर्रहमानको प्रतिनिधिकी तरह लॉर्ड सेल्बोर्नके पास भेजनेका।

इन दोनों प्रस्तावोंके मंजूर हो जानेपर 'गॉड सेव द किंग' का गीत गाकर सभा समाप्त हुई।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३१-३-१९०६

२७८. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

मार्च ३१, १९०६

डॉ० अब्दुर्रहमान

डॉक्टर अब्दुर्रहमान ग्यारह दिन रहकर केपको रवाना हो गये है। प्रिटोरियामें वे सर रिचर्ड सॉलोमन और जनरल स्मट्ससे मिले थे। और ३० मार्चको वे जोहानिसबर्गमे लॉर्ड सेल्बोर्नसे मिले। डॉक्टरने उनके सामने ट्रान्सवाल तथा ऑरेंज रिवर उपनिवेशमे रहनेवाले केपके रगदार लोगोकी शिकायते पेश की। लॉर्ड सेल्बोर्नके उत्तरका सार यह था कि वे अभी तत्काल तो कुछ भी कर सकनेमें असमर्थ है, जब नया विधान बनेगा तब यथासम्भव सहायता करेंगे। वे बड़े विनयशील है और सद्भावना रखते हैं। लेकिन सवाल यह है कि जब नया विधान बनेगा तब वे यहाँ होगे भी या नही।

डॉक्टर अब्दुर्रहमानसे मिलनेके लिए ब्लूमफॉटीन स्टेशनपर केपके बहुतसे रगदार लोग हाजिर थे।

ट्रामका मुकदमा

ट्राम प्रणालीका जो मुकदमा मजिस्ट्रेटकी अदालतमे जीता था, उसपर नगर-परिषदने अपील करनेकी सूचना दी थी।[1] अब उसके वकीलने सूचित किया है कि नगर-परिषद अपील नही करना चाहती। लेकिन ऐसा मालूम होता है कि अभी एक और मुकदमा लड़नेके बाद भारतीयोको ट्राममे चलनेकी छूट मिलेगी। क्योकि नगर-परिषदका खयाल है कि पिछले मुकदमेमें उसने अच्छी तरह मोर्चा नही लिया। इसलिए मुझे डर है कि हमारे लोगोको अभी और राह देखनी होगी।

घरोंकी जांच

डॉक्टर पोर्टरने घरोकी कड़ी जाँच शुरू की है। डोरनफॉटीन जैसे मुहल्लेमें एक गोरेका पूरा मकान बन्द करवा दिया है और उसे अपना मकान गिरा देनेके लिए मजबूर किया है। इसलिए जहाँ-जहाँ भारतीयोके घर खराब हो वहाँ मकान-मालिकोको चेतकर चलना है।

चीनी मजदूर

चीनियो सम्बन्धी खलबली अभीतक जारी है। खानवालोके मन अस्थिर हैं। इस कारण व्यापार दिनपर-दिन कमजोर होता जा रहा है, और सम्भव है कि अभी कमसे-कम एक साल तक व्यापारकी हालत ऐसी ही रहेगी।

सैकड़ों गोरे मजदूर, राज, चित्रकार आदि कामके अभावमे बैठे हुए हैं। ब्लूमफॉटीनके रेलवे विभागमें ५०० मजदूर थे। अब उनमे से ३०० बचे है। उनमे से १५० को सरकारने चले जानेकी सूचना दी है।

झूठे अनुमतिपत्रसे अथवा बिना अनुमतिपत्रके दाखिल होनेके बाबत दो भारतीय गिरफ्तार हुए है। उनके मुकदमे ९ अप्रैलको शुरू होनेवाले हैं। दोनों जमानतपर छूटे हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७-४-१९०६

१. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ २३९-४०।

२७९. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
अप्रैल ६, १९०६

प्रिय छगनलाल,

तुम्हारी चिट्ठी मिली। क्या तुम्हारी चिट्ठीका यह अर्थ निकालूँ कि मेरी भेजी हुई गुजराती सामग्री तुम्हें बुधवारको जाकर मिली? अगर ऐसा हो तब तो कहीं कोई बहुत बड़ी गड़बड़ी है; क्योंकि मैंने इसका बहुत खास प्रबन्ध किया था कि इतवारको लिखी हुई सामग्री चार बजेसे पहले डाकमें छोड़ दी जाये। शनिवारको लिखी गई सामग्री समयपर रवाना की गई थी। मैंने तुमसे तारीखकी मोहरवाले लिफाफे भेजनेको कहा था; ताकि बातकी यहाँ जाँच-पड़ताल कराई जा सके।

पूरे पृष्ठ, आधे पृष्ठ और चौथाई पृष्ठके विज्ञापनोंकी दरें देनेमें दिक्कत क्यों होनी चाहिए? मेरी समझमें ये दरें कितना टाइप लगता है, इसपर तो निर्भर नहीं करतीं। कोई व्यक्ति निश्चित स्थानका पैसा देता है तो फिर हमें चाहिए कि हम जहाँतक बने, उतनी ही जगहमें उसकी जरूरतकी सब बातें दे दें। ऐसी स्थितिमें जगहकी दरें देना कठिन नहीं होना चाहिए। तुमसे दरें मिलते ही केप टाउनसे खासा विज्ञापन मिलनेकी संभावना है। इसलिए इसमें देरी मत करना।

श्रीमती मैकडॉनल्डके बारेमें तुम्हारे निर्णयकी राह उत्सुकतासे देख रहा हूँ।

मगनलाल अच्छा हो रहा है, जानकर खुशी हुई। उसे अपनी शक्तिसे अधिक काम नहीं करना चाहिए। इसलिए अगर उसे बहुत कमजोरी लगे तो अभी और एक-दो दिन काम न करे; क्योंकि अगर फिर पटकनी खा गया तो उसकी तबीयत पहलेसे भी ज्यादा खराब हो जायेगी और उसको कमजोरीका अनुभव होगा।

मैंने तुम्हें बता ही दिया है कि श्री भायातका पत्र प्रकाशित मत करना। पिछले हफ्ते मैंने वह पत्र यह लिखकर वापस कर दिया था कि इसे छापना नहीं है। श्री भायातका जो पत्र तुमने मुझे भेजा है, मैं उसे अब नष्ट कर रहा हूँ।

कुछ ध्यानमें नहीं आता, आर० के० नायडू कौन हैं। लॉरेंसकी मारफत यह पैसा पानेका प्रयत्न करो। मैंने यह तो तुमसे कह ही दिया है कि जो लोग पैसा चुकानेमें लगातार लापरवाही कर रहे हैं, तुम उन्हें अपनी मर्जीसे तकाजेके पत्र भेज सकते हो।

तुम्हारा शुभचिंतक,
मो० क० गांधी

संलग्न : १

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
मारफत **इंडियन ओपिनियन**
फीनिक्स

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३४५) से।

२८०. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

डर्बन
[अप्रैल ७, १९०६ के पूर्व]

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

महोदय,

हमे आपके गत मासकी २४ तारीखके पत्रकी प्राप्ति-सूचना देनेका मान प्राप्त हुआ है। पत्रमे आपने उस विषयपर, जिसकी हमने अपने पिछले मासकी १० तारीखके पत्रमें[1] चर्चा की थी, विस्तारसे लिखा है। इसके लिए हमारी कांग्रेसकी समिति आपकी आभारी है।

हमारी समिति खुले तौरपर स्वीकार करती है कि उन पासों और प्रमाणपत्रोंका, जिनकी चर्चा हमारे पत्रमे की गई है, उद्देश्य इस तरहके पास रखनेवाले लोगोके गमनागमनको सुविधा-जनक बनाना है।

हमारी समितिका निवेदन है कि ऐसे पास उन लोगोंके सन्तोषके लिए दिये जाते है, जो अधिनियम लागू करनेके पक्षमें है।

हमारी समितिका दावा है कि यद्यपि अधिनियमसे प्रभावित कुछ लोगोंका आव्रजन वर्जित है, तथापि उनका उपनिवेशसे होकर गुजरना, निकलना या यहाँ अस्थायी रूपमें रहना वर्जित नही है। यद्यपि वे लोग, जो उपनिवेशमे रहनेके अधिकारी है, अधिवासी प्रमाणपत्र आदि लेनेके लिए बाध्य नही है, फिर भी जिस सख्तीसे अधिनियम लागू किया जा रहा है उससे भारतीयोके लिए प्रमाणपत्र रखना नितान्त आवश्यक हो गया है।

हमारी समिति यह जानती है कि ज्यादातर ट्रान्सवालके भारतीय ही अभ्यागत पास लेते है। यह स्वाभाविक है, क्योकि दोनो उपनिवेशोंमे परस्पर काफी व्यापार होता है।

हमारी समितिकी नम्र राय है कि अभ्यागत-पास देकर ट्रान्सवालके भारतीयोंको हर तरहकी सुविधा देनी चाहिए। अभ्यागत और नौकारोहण — दोनो किस्मके पास जिनपर इतना शुल्क लगा दिया गया है कि वह दिया ही न जा सके, रेलवेके लिए अधिक राजस्व प्राप्त करनेके साधन है। स्वर्गीय श्री एस्कम्बके प्रशासन-कालमें जब इसी प्रकारके शुल्क लगाये गये थे, यह सारा सवाल उठाया गया था, और हमारी समितिके निवेदन करनेपर, उन्हें तत्काल वापस ले लिया गया था।

हमारी समिति महसूस करती है कि पत्नियोंके पासों तथा नौकारोहण एवं अभ्यागत पासोके लिए शुल्क लेना एक अत्यन्त गम्भीर बात है। इसलिए वह इसपर पुनर्विचार करनेकी प्रार्थना करती है।

आपके आज्ञाकारी सेवक,
ओ० एच० आमद जौहरी
एम० सी० आंगलिया
अवैतनिक सयुक्त मन्त्री, नेटाल भारतीय कांग्रेस

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ७–४–१९०६

१. देखिए "पत्र: उपनिवेश-सचिवको", पृष्ठ २२९–३०।

२८१. पत्र : 'लीडरको'[1]

भारतीय कब भारतीय नहीं होता?

[जोहानिसबर्ग
अप्रैल ७, १९०६ के पूर्व]

सेवामे
सम्पादक
'लीडर'
जोहानिसबर्ग

महोदय,]

कुछ दिन पहले जापानी प्रजाजन श्री नोमूरासे आपने सार्वजनिक रूपसे माफी माँगी थी, क्योंकि मुख्य अनुमतिपत्र-सचिवने उक्त सज्जनको अस्थायी अनुमतिपत्र देनेसे इनकार कर दिया था। क्या मै एक ब्रिटिश प्रजाके लिए आपकी सहानुभूति प्राप्त कर सकता हूँ? मुझे मालूम हुआ था कि श्री सुलेमान मंगा[2] एक ब्रिटिश भारतीय हैं। वे बैरिस्टरीका अध्ययन कर रहे हैं। डेलागोआ-बेमें बसनेवाले अपने रिश्तेदारोंसे मिलनेके लिए इंग्लैंडसे आये थे। मुझसे उनके लिए अनुमतिपत्रकी अर्जी देनेके लिए कहा गया था, जिससे डर्बनसे डेलागोआ-बे जाते हुए वे ट्रान्सवालसे गुजर सकें। सरकारने अनुमतिपत्र देनेसे इनकार कर दिया और अपने निर्णयका कोई कारण बतानेसे भी वह अबतक इनकार ही करती गई है। श्री नोमूराका प्रतिनिधित्व करनेका श्रेय भी मुझे मिला था। उनका दर्जा निश्चय ऊँचा था; परन्तु सम्भवतः श्री मंगाका दर्जा ज्यादा ऊँचा है। वे डेलागोआ-बेके एक बहुत ही प्रसिद्ध भारतीय व्यापारीके पुत्र हैं और स्वयं मिडिल टेम्पलके एक सदस्य हैं। फिर भी, ब्रिटिश भारतीयके रूपमें वे ट्रान्सवालसे गुजर नहीं सके।

अब मुझे मालूम हुआ है कि श्री मंगाको ब्रिटिश भारतीय समझनेमें मैंने भूल की थी। समुद्रकी राह डेलागोआ-बे पहुँचकर उन्होंने सरकार द्वारा अनुमतिपत्र पानेके लिए दूसरा निष्फल प्रयत्न किया; सरकार अपना निर्णय बदलनेको तैयार न हुई। वे पुर्तगाली भारतमें पैदा हुए थे, इसलिए उन्होंने पुर्तगाली नागरिकके अधिकारोंका दावा किया। इस हैसियतसे उन्होंने डेलागोआ-बेकी सरकारके सचिवको लिखा, और उक्त सचिवके हस्तक्षेपसे ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेका अस्थायी अनुमतिपत्र उन्हें मिल गया है। पोर्तुगाली प्रजा श्री मंगाकी विजय हो गई है; ब्रिटिश प्रजा श्री मंगा अपमानित किये गये हैं। ऐसा है वह पुरस्कार जो अपने असाधारण धैर्य और सहनशीलताके लिए ब्रिटिश भारतीय समाजको सरकारकी ओरसे मिला करता है।

[आपका, आदि,
मो० क० गांधी]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-४-१९०६

१. बिना तिथिका यह पत्र "निरर्थक भेद-भाव" (डिस्टिंक्शन विदाउट डिफरेंस) शीर्षकसे लीडरके ७ अप्रैलके अंकमें प्रकाशित हुआ था।

२. देखिए "ट्रान्सवाल अनुमतिपत्र अध्यादेश", पृष्ठ ३८८-९ और "पत्र: विलियम वेडरबर्नको", पृष्ठ २८३-६।

२८२. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
अप्रैल ७, १९०६

चि० छगनलाल,

श्री बीनकी मारफत मुझे पार्सल मिल गया है। मैं चाहता हूँ, तुम हेमचन्दसे काम लो और उसे कहो कि दफ्तरी बातोंके बारेमें वह मुझे लिखा करे। मुझे सब बातोंकी ठीक खबर मिलती रहना बहुत जरूरी है। तुमपर कितना बोझ है, इसका मुझे पूरा भान है; मगर जो सहयोग तुम्हे प्राप्त है, उसका लाभ उठाकर बोझ हल्का करना-न-करना तुम्हारे हाथमें है। बेशक गोकुलदाससे भी तुम कह सकते हो कि वह मुझे थोड़ा-सा लिख दिया करे। मेरी भेजी हुई सारी सामग्रीकी पहुँच मुझे मिलनी चाहिए, ताकि अगर कुछ गड़बड़ हो जाये और समय हो तो मैं और सामग्री भेज सकूँ। श्रीमती मैकडॉनल्डके बारेमें तुम्हारी सम्मति जाननेको बहुत ही उत्सुक हूँ। सो हेमचन्द या गोकुलदास या आनन्दलालके जरिये भी सूचित की जा सकती है। कितनी तफसीलें हैं, जिनपर मुझे ध्यान देना चाहिए; मगर तुम्हारी तरफसे जानकारी पाये बिना मैं वैसा नहीं कर सकता। मोतीलालने लिखा है कि बम्बईसे कोई नया आदमी आया है। नाम धोरीभाई है। उसका कहना है कि उसे छापाखानेका काम अच्छी तरह आता है। वह रहनेकी जगह और ४ पौंड माहवारपर काम करनेको तैयार है। अगर तुम्हे लगे कि काम बहुत है तो इस आदमीको देखना चाहिए। कुछ भी हो, तीन बातें निहायत जरूरी हैं:

(१) हिसाब बा-कायदा रखा जाये।
(२) अखबारमें सामग्रीकी कमी न रहे।
(३) तुमपर अत्यधिक बोझ न पड़े।

इन तीनमें से एककी भी उपेक्षासे सब उलट-पुलट हो जायेगा। तुम्हारे जरूरतसे ज्यादा काम करनेका एक परिणाम दफ्तरी लिखा-पढ़ीकी उपेक्षा है। जैसे, दरें तुम्हे एकदम भेजनी चाहिए थी। तो मैं चाहता हूँ कि इसपर सावधानीसे सोचो और परिस्थिति ठीक करो। इसी विचारसे मैंने श्रीमती मैकडॉनल्डका नाम सुझाया है। वे बहुत उत्तम काम करनेवाली हैं। व्यवस्थित है और परिश्रममें तुम्हारा या श्री वेस्टका मुकाबिला करती हैं। मुझे इसमें कोई सदेह नहीं कि वे हिसाब-किताब सँभाल सकेंगी। शायद मैं अगले हफ्ते वहाँ आऊँगा। ईस्टरकी छुट्टियाँ खत्म होनेके पहले मैं टिकट खरीद लेना चाहता हूँ; मगर आनेके पहले श्रीमती मैकडॉनल्डके बारेमें तय कर लेना चाहता हूँ, ताकि अगर जरूरत हो तो उन्हे साथ ला सकूँ। आज कुछ गुजराती सामग्री भेज रहा हूँ। आशा करता हूँ कि सोमवार तक तुम्हें मिल जायेगी। अगर तुम और श्री वेस्ट दोनों, और दूसरे भी, किसी निर्णय तक पहुँचकर इस मामलेमें तार कर दो तो बहुत अच्छा हो। आनन्दलाल, मगनलाल और सैमसे भी पूछ लेना। अगर बदलेमें 'वीकली

स्टार' या 'साप्ताहिक लीडर' या 'साप्ताहिक रैंड डेली मेल' आये तो श्री आइज़क्के पास भिजवाना।

मोहनदासके आशीर्वाद

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
मारफ़त 'इंडियन ओपिनियन'
फीनिक्स

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३४७) से।

२८३. शरण-स्थल

दक्षिण आफ्रिका जिस उथल-पुथलमें से गुजर रहा है, उसमें विभिन्न उपनिवेशोंके न्यायालय प्रमुख सुरक्षा स्थलोंका काम कर रहे हैं। हम एक भारतीयके मुकदमेमें न्यायमूर्ति वेसेल्सका फ़ैसला छाप चुके हैं।[1] इस अंकमें हम एक चीनीके मुकदमेमें न्यायमूर्ति मेसनका फ़ैसला 'ट्रान्सवाल लीडर' से उद्धृत करते हैं। चूंकि ट्रान्सवाल इस समय बहुत ही अत्याचारपूर्ण कानूनोंसे पीड़ित है, इसलिए इस उपनिवेशमें न्यायाधीशोंको अपनी परम्परागत स्वतन्त्रताका प्रयोग करने और प्रजाकी स्वाधीनताकी रक्षा करनेकी आवश्यकता है।

विदेशी श्रम-विभागमें पुलिसका एक चीनी सिपाही तकलीफदेह साबित हुआ है। इसलिए, ऐसा जान पड़ता है, वह विदेशी श्रम-विभागके अधीक्षककी आज्ञासे वारंटके बिना गिरफ्तार कर लिया गया। उसको हथकड़ियाँ पहनाई गईं और एक काल-कोठरीमें बन्द कर दिया गया। फिर चीनी श्रम-अध्यादेशकी एक धाराके अन्तर्गत उसको उसके देश वापस भेजनेका हुक्म जारी कर दिया गया। डर्बन भेजे जानेसे पूर्व उस अभागे सिपाहीको कानूनी सहायता लेने अथवा अपने मित्रोंसे भेंट करनेकी अनुमति नहीं दी गई। अगर वह छुपे तौरपर और अधीक्षकके पीठ पीछे वकालत-नामेपर हस्ताक्षर न कर देता तो उसको शायद राहत न मिलती और वह अपने मामलेकी सुनवाईके बिना ही चीन चला गया होता। सिपाही खतरनाक आदमी था या नहीं, यह अप्रासंगिक है। हम मामलेकी सत्यता और असत्यतापर भी विचार नहीं करते। हमने जो तथ्य ऊपर दिये हैं, वे स्वीकार किये जा चुके हैं।

विदेशी श्रम-विभागके अधीक्षकको सूचित कर दिया गया था कि अभियुक्त द्वारा नियुक्त वकील सर्वोच्च न्यायालयमें बन्दी-प्रत्यक्षीकरणकी आज्ञा निकालनेकी दरख्वास्त देंगे। तिसपर भी न्यायालयका आदेश निकलनेके पूर्व ही वह आदमी डर्बनको रवाना कर दिया गया। तथापि, अधीक्षकको सर्वोच्च न्यायालयमें स्वयं हाजिर होने तथा सिपाहीको भी हाजिर करनेका आदेश दिया गया। मुकदमेकी सुनवाई प्रिटोरियामें ३० मार्चको न्यायमूर्ति मेसनके समक्ष हुई। उस अवसरपर अधीक्षकने यह कहकर आवेदनपत्रको विफल करनेकी पुनः चेष्टा की कि चीनी श्रम-अध्यादेशके अनुसार परवानेके बिना इस देशमें, किसी भी चीनीका प्रवेश निषिद्ध है और चूंकि अब ऐसे परवाने बन्द कर दिये गये हैं, इसलिए उसके लिए सिपाहीको पेश कर सकना बिलकुल असम्भव है।

[1] देखिए "न्यायका दुर्ग", पृष्ठ २५९-६०।

उस चीनीकी तरफसे श्री स्मट्सने बहस की, और न्यायमूर्ति मेसनने फैसला देते हुए अधीक्षककी कार्रवाईकी तीव्र भर्त्सना की। उन्होंने कहा,

तत्वतः और वस्तुतः इस मुकदमेकी एक अत्यन्त गम्भीर बात यह है कि विदेशी श्रम-विभागके अधीक्षकने चीनी सिपाहीसे किसीको नहीं मिलने दिया और इस प्रकार अपनी सत्ताका अत्याचारपूर्ण प्रयोग किया। मैं इसे निस्सन्देह एक बहुत ही गम्भीर बात मानता हूँ। मेरे खयालसे इस प्रकार किसी भी व्यक्तिके गैरकानूनी ढंगसे हटाये जाने और उसके साथ गैरकानूनी व्यवहारको रोकनेका एकमात्र उपाय प्रत्येक व्यक्तिके इस अधिकारको मान्य करना है कि उसका जो भी मित्र उससे मिलना चाहे वह उससे मिल सके। . . . अधीक्षकके कार्यका परिणाम इस प्रकारकी किसी भी कार्रवाईको विफल करनेवाला था और उसने कुलीको, उस सूचनाके बावजूद जो कुलीके वकीलोंने उसको दी थी, उपनिवेशके बाहर भेज कर अनुचित काम किया।

विद्वान न्यायाधीशने अधीक्षकको आदेश दिया है कि वह उस चीनीको हाजिर करे और यह बताये कि जब चीनीकी रक्षाके लिए अदालतके सामने आवेदनपत्र दिये जानेकी बात उसको मालूम थी, तब वह उक्त चीनीको उपनिवेशसे निर्वासित करके अदालतकी मान-हानि करनेके अपराधमें दण्डित क्यों न किया जाये? न्यायाधीशने यह भी आदेश किया है कि मुवक्किलने वकीलके सम्बन्धमें दरखास्तपर जो खर्च किया है वह सब श्री जेमिसन[1] देंगे। उन्होंने यह भी कहा कि "यह आदेश, जैसा कि मैं पहले भी कह चुका हूँ, मैंने इसलिए दिया है कि अधीक्षकने किसी भी आदमीको आवेदक तक न पहुँचने देनेमें अपनी शक्तिका अन्यायपूर्ण प्रयोग किया है।"

यहाँ एक तरफ एक अधिकारी है — बहुत प्रभावशाली पदपर आसीन; दूसरी तरफ पुलिसका एक गरीब सिपाही है। फिर भी सिपाही ट्रान्सवालमें सर्वोच्च न्यायाधिकरणके सामने अपनी फरियादकी सुनवाई करनेके अपने अधिकारका उपयोग कर सका है। खुद अधीक्षकको ऐसी संस्थापर गर्व होना चाहिए जो सम्राट्के छोटेसे-छोटे प्रजाजनके स्वातन्त्र्यकी इस प्रकार रक्षा करती है; क्योंकि यह बात सहज ही कल्पनामें आ सकती है कि उसने उस चीनीके साथ जो कुछ किया, वही उसके साथ उससे बड़े अधिकारियों द्वारा किया जा सकता है। सम्भव है यह श्री जेमिसनकी समझकी भूल हो परन्तु प्रजाके स्वातन्त्र्याधिकारकी रक्षा न हो, इसके बजाय यह ज्यादा अच्छा है कि उन्हें स्वयं हानि उठानी पड़े।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–४–१९०६

१. अधीक्षक, विदेशी श्रम-विभाग।

२८४. गिरमिटिया कर

पिछले सप्ताह हमने 'टाइम्स ऑफ नेटाल' से एक ऐसे अभियोगकी रिपोर्ट उद्धृत की थी, जो तीन पौंडी वार्षिक कर वसूल करनेके लिए उपनिवेशके प्रवासी कानूनके अन्तर्गत चलाया गया था। हमें 'नेटाल विटनेस' को पढ़नेसे पता चलता है कि अभियोग खुद उसपर ही नहीं था, बल्कि उसकी पत्नीपर भी था। कानूनमें कर वसूल करनेके लिए केवल एक विधि दी गई है: "परवानेकी रकम प्राप्त करनेके लिए नियुक्त किसी भी अफसर या क्लार्क ऑफ पीस द्वारा सरसरी कार्रवाई।" मालूम होता है कि इस कार्रवाईके दरमियान अदालतकी आज्ञासे मुकदमा चलानेवाले सार्जेंटने भारतीय स्त्रीके निजी गहने जमानतके तौरपर ले लिए हैं। उसको करकी अदायगीके लिए तीन महीनेकी मुहलत दी गई है। अगर इस मियादके अन्दर कर न चुकाया गया तो उसके जेवर बेच डाले जायेंगे। न्यायाधीश और मुकदमा चलानेवाला सार्जेंट दोनों लिहाज करनेवाले व्यक्ति थे, फिर भी इस अभियोगसे यह बात स्पष्टतः प्रकट हो गई है कि गिरमिटिया मजदूर जब मुक्त हो जाते हैं तो उनको इस करके लग जानेसे कितनी गम्भीर कठिनाईका सामना करना पड़ता है। जबतक गरीब स्त्रीके पास कुछ भी गहना या निजी सामान है, तबतक उसे कर देना ही पड़ेगा — फिर चाहे वह कुछ कमा रही हो या न कमा रही हो, या अन्यथा दे सकती हो या न दे सकती हो। नेटालमें पाँच वर्ष सेवा करनेके बाद गिरमिटिया मजदूरोंको यह इनाम दिया जाता है!

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–४–१९०६

२८५. नेटालमें राजनीतिक उपद्रव

पिछले सप्ताह नेटालमें जबरदस्त घटनाएँ घटी हैं। उनका प्रभाव बरसों तक मिटनेवाला नहीं है। परिणामस्वरूप, नेटालका दिमाग चढ़ गया है। स्वराज्यकी जीत हुई है। लेकिन अंग्रेजी राज्यको धक्का लगा है।

नेटालमें व्यक्ति-करके कारण काफिरोंने विद्रोह किया। सार्जेंट हंट और आर्मस्ट्रांग[1] इस विद्रोहमें मारे गये। नेटालमें फौजी कानूनकी घोषणा हुई और वतनियोंके साथ सख्ती होने लगी। फौजी कानूनके अनुसार कुछ वतनियोंकी जाँच-पड़ताल हुई और उनमें से १२ को तोपसे उड़ा देनेकी सजा दी गई। आसपासके वतनियों और उनके राजाको अपने लोगोंको तोपसे उड़ते हुए देखनेके लिए बुलाया गया। यह काम २९ मार्चको होनेवाला था।

इस बीच विलायतसे लॉर्ड एलगिनने नेटालके गवर्नरको तार किया कि फिलहाल वतनियोंको तोपसे उड़ाना मुल्तवी रखा जाये। नेटालके राज्यकर्त्ताओंको यह बात अच्छी नहीं लगी। उन्होंने गवर्नरको अपने त्यागपत्र सौंप दिये। गवर्नरने उनसे कहा कि जबतक लॉर्ड एलगिनका दूसरा जवाब न आये, तबतक वे ठहरें। उन्होंने यह बात मान ली।

१. नेटालके पुलिस सब-इन्सपेक्टर हंट और ट्पर आर्मस्ट्रॉग।

इस सारी बातके प्रकट होते ही समूचे दक्षिण आफ्रिकामें एक शोर मच गया। समाचारपत्रोंने कड़े लेख लिखे कि लॉर्ड एलगिनके हस्तक्षेपके कारण स्वराज्यके संविधानको आघात पहुँचा है। अगर नेटालको स्वतन्त्र सत्ता प्राप्त है, तो फिर नेटालके राजकाजमें बड़ी सरकार दखल नही दे सकती। नेटालके राज्यकर्त्ताओंके त्यागपत्रपर उन्हे सब ओरसे शाबाशी दी गई। चारो तरफ सभाएँ हुईं, और बड़ी सरकारके विरुद्ध भाषण हुए।

साम्राज्य-सरकारकी मान्यता यह थी कि विद्रोहको समाप्त करनेमें उसने नेटालकी मदद की थी। इसलिए वतनियोंको न्याय मिलता है या नही, इसे देखनेका काम उसीका था। अतः सजा मुल्तवी करनेके लिए लिखनेमे कोई गलती नही हुई। लेकिन दक्षिण आफ्रिकाको उत्तेजित देखकर बड़ी सरकारकी सारी दलीलें सो गईं और लॉर्ड एलगिन दब गये।

उन्होंने गवर्नरको लिखा है कि जाँच करनेसे पता चला है कि वतनियोको उचित न्याय मिला है। अब सरकार नेटालके राज्यकर्ताओंके काममें दखल देना नही चाहती। वे जो ठीक समझें सो करे। लॉर्ड एलगिनने गवर्नरको दोषी ठहराया है। उन्होंने कहा है कि अगर गवर्नरने शुरूमें ही पूरी हकीकत भेज दी होती, तो इस प्रकार हस्तक्षेप करनेकी नौबत न आती। दो प्राणियोके लिए बारह प्राण गये है। बारह वतनियोको सोमवारके दिन तोपसे उड़ा दिया गया है।

इस उपद्रवमें केवल एक ही व्यक्तिने अपना दिमाग ठंडा रखा है, और वे है श्री मोरकम। श्री मोरकमने मैरित्सबर्गकी सभामें कहा था कि लॉर्ड एलगिनने सही कदम उठाया था। प्राण बचानेकी बात थी। इसपर राज्यकर्ताओंको त्यागपत्र देनेकी कोई जरूरत न थी। फौजी कानूनके जारी होनेसे पहले हंट और आर्मस्ट्रांग मारे जा चुके थे। अतएव वतनियोकी जाँच सर्वोच्च न्यायालयके सम्मुख होनी चाहिए थी। सारी सभा श्री मोरकमके विरुद्ध थी। लोग चिल्ल-पों मचा रहे थे, पर बहादुर श्री मोरकमको जो कुछ कहना था, वह उन्होंने कहा ही।

इस सबका परिणाम क्या होगा? काफिर मारे गये, यह बात भुला दी जायेगी। उन्हें न्याय मिला है या नही, यह नही कहा जा सकता। लेकिन जहाँ-जहाँ स्वराज्य दिया गया है, वहाँ-वहाँ लोगोके दिमाग और अधिक चढ़ जायेंगे। वे अधिक मनमानी करेंगे और अब साम्राज्य सरकार दखल देते हुए डरेगी। कहावत है कि साँपका डसा रस्सीसे डरता है, इसलिए साम्राज्य सरकार अब शायद ही कभी हस्तक्षेप करे। इसमें नुकसान काले लोगोंका ही है। उन्हें मताधिकार नहीं है। जहाँ मताधिकार है वहाँ वे उसका पूरा उपयोग नहीं कर पाते। इस कारण उपनिवेशी उनपर अधिक प्रतिबन्ध लगायेंगे और जो उपनिवेशियोंको खुश रखकर न्याय पाना चाहेंगे, वे ही पा सकेंगे। आनेवाले वर्षोंमें दक्षिण आफ्रिकामें बहुत उथल-पुथल होने को है। भारतीयों और दूसरे काले लोगोंको बहुत सोचना और सोच-समझकर चलना है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७-४-१९०६

२८६. ट्रान्सवालमें जमीनका कानून

एक महत्वपूर्ण मुकदमा

ट्रान्सवालमें, पृथक् बस्तीके बाहर, एक ही जमीन एक भारतीयके नामपर पंजीकृत थी। वह थी प्रसिद्ध सेठ स्वर्गीय अबूबकर आमदके नामपर, प्रिटोरियाकी चर्च स्ट्रीटमें। स्वर्गीय श्री अबूबकरने वह जमीन १८८५ के जून महीनेमें खरीदी थी। उसके दस्तावेज पंजीयक कार्यालयमें १८८५ के जून महीनेकी १२ तारीखको दाखिल हुए थे। भारतीयोंके विरुद्ध जो कानून बना, वह १७ जूनसे अमलमें आया। उपर्युक्त दस्तावेजके पंजीकृत होनेमें कुछ अड़चन पैदा हुई। तिसपर ब्रिटिश एजेंटने हस्तक्षेप किया और उस समयके स्टेट अटर्नीने एक पत्र लिखा, तब पंजीयकने २६ जून को दस्तावेज पंजीकृत किये। सन् १८८८ में श्री अबूबकर गुजर गये। तबसे अबतक उस जमीन-पर श्री अबूबकरके वारिसोंका अथवा उनके न्यासियोंका कब्जा था और वे ही उसका उपभोग करते थे। कानूनके अनुसार व्यक्तिके मर जानेपर उसकी मिल्कियतका प्रबन्ध सरकारके द्वारा होना चाहिए। लेकिन इस मिल्कियतके मामलेमें ऐसा नहीं हुआ, और जमीन वारिसोंके नाम-पर दर्ज हुए बिना ज्यों-की-त्यों पड़ी रही। जमीन बेकार पड़ी थी इसलिए सन् १९०५ में यह तय हुआ कि उसपर घर बनानेके लिए उसे लम्बी मुद्दतके पट्टेपर दे दिया जाये। ट्रान्सवालके कानूनके अनुसार हर लम्बी मुद्दतके पट्टेका पंजीयकके दफ्तरमें पंजीयन होना चाहिए। अतएव जमीन वारिसोंके नामपर दर्ज करानेकी कार्रवाई शुरू करनी पड़ी, क्योंकि कानूनके अनुसार जमीन मृत मनुष्योंके नामपर दर्ज नहीं रह सकती। चूँकि वारिस भारतीय थे, इसलिए पंजीयकने जमीन उनके नामपर दर्ज करनेसे इनकार कर दिया। इसपर पंजीयकके खिलाफ न्यायालयमें अपील की गई। पंजीयकने वारिसोंके नामपर जमीन दर्ज न करनेके दो कारण बताये। पहला यह कि, जमीन १८८५ का कानून ३ पास होनेके बाद पंजीकृत हुई और चूँकि उस कानूनके अनुसार भारतीय अपने नामपर जमीन नहीं रख सकता इसलिए स्वर्गीय श्री अबूबकरके नामपर जो दस्तावेज पंजीकृत हुआ वह गैर-कानूनी था। अतः वह रद होना चाहिए। दूसरा कारण यह कि, स्वर्गीय श्री अबूबकरके नामका दस्तावेज कानून-सम्मत माना जाये, तो भी चूँकि वारिस भारतीय हैं, इसलिए १८८५ के कानून ३ के मुताबिक वे जमीन अपने नामपर नहीं करा सकते। पंजीयककी दूसरी दलील मान्य करके न्यायमूर्ति फॉक्सने, जिनके सामने यह अपील पेश हुई थी, अपील रद कर दी। इसपर वारिसोंकी ओरसे सर्वोच्च न्यायालयमें अपील की गई। वारिसोंकी तरफसे श्री लेनर्ड और श्री ग्रेगोरस्की बैरिस्टर किये गये थे। वारिसोंकी ओरसे यह माँग की गई थी कि सर्वोच्च न्यायालय यदि वारिसोंके नामपर जमीन दर्ज करनेकी आज्ञा न दे, तो भी २१ वर्षकी मुद्दतका पट्टा पंजीकृत करने और इस बीच दस्तावेज स्वर्गीय श्री अबूबकरके नाम रहने देनेका आदेश दे। श्री लेनर्डने बहुत जोरदार दलीलें दीं, और न्यायाधीशोंने भी बहुत सहानुभूति दिखाई, लेकिन लाचारी प्रकट करते हुए कहा कि वे वारिसोंको न्याय नहीं दे सकते। न्यायाधीशोंने बताया कि १८८५ का कानून ही बहुत बुरा है। और उस कानूनके विरुद्ध जाकर न्याय प्राप्त करना हो तो केवल संसदसे ही प्राप्त किया जा सकता है। इस तरहका फैसला हो जानेसे वारिसोंके पास जमीनको बचानेका तत्काल एक ही उपाय रह गया था; और वह था, जमीन किसी भी गोरेके नामपर दर्ज कराकर कब्जा अपने हाथमें रखना। यह कार्रवाई उन्होंने की है। इससे उनके उपभोगमें कोई बाधा नहीं आयेगी। फिर भी सर्वोच्च न्यायालयके फैसलेकी दृष्टिसे वह उनके नामपर नहीं लिखी जा सकती, इससे उन्हें अत्याचारकी अनुभूति हुए बिना नहीं

रहेगी। अब केवल संसदके द्वारा राजनीतिक लड़ाई लड़नी रह गई है। हम जानते हैं कि वे यह लड़ाई लड़ेंगे। उपर्युक्त फैसलेसे यह तो स्पष्ट हो गया है कि सन् १८८५ का कानून बड़ा जुल्मी कानून है। न्यायाधीशोंने भी इसे कबूल किया है। सर हेनरी कॉटनने इस सम्बन्धमें एक सवाल संसदमें पूछा है। देखें, उसका नतीजा क्या निकलता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ७–४–१९०६

२८७. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

अप्रैल ७, १९०६

अनुमतिपत्र

अनुमतिपत्रकी तकलीफ अभी बढ़ती ही जा रही है। लोगोंकी कहीं सुनवाई नहीं होती। शरणार्थियोंकी अर्जियाँ जहाँ-की-तहाँ पड़ी धूल खा रही हैं। फेरफार होते ही रहते हैं। इस तरह जलती आगमें घी होमा गया है। श्री सुलेमान मगा डेलागोआ-बेके प्रसिद्ध व्यापारी श्री इस्माइल मगाके रिश्तेदार हैं। वे इंग्लैंडमें बैरिस्टरीकी परीक्षाके लिए पढ़ रहे हैं। वे अपने रिश्तेदारोंसे मिलनेके लिए, कुछ दिन हुए, विलायतसे यहाँ आये हैं। उनका डर्बनमें उतरकर ट्रान्सवालके रास्ते डेलागोआ-बे जानेका इरादा था। उनकी तरफसे श्री गांधीने मुद्दती अनुमतिपत्रके लिए अर्जी दी, लेकिन उपनिवेश-सचिवने अनुमतिपत्र देनेसे इनकार कर दिया। कुछ दिन डर्बनमें राह देखनेके बाद श्री मंगा समुद्रके रास्ते डेलागोआ-बे गये। वहाँसे उन्होंने फिर खुद ही अर्जी दी, पर इनकारीका जवाब मिला। अबतक इस खयालसे काम होता रहा कि श्री मंगा ब्रिटिश प्रजाजन हैं। श्री मंगा विलायतका जोश लेकर आये थे। वे चुपचाप बैठे रहनेवाले नहीं थे। दमनमें[1] जन्म होनेके कारण पुर्तगाली प्रजा होनेका लाभ उठाकर, वे डेलागोआ-बे में सरकारी सचिवके पास पहुँचे और उससे उन्होंने अपने लिए अनुमतिपत्रकी माँग की। इसपर सचिवने तत्काल ब्रिटिश वाणिज्य-दूतके नाम पत्र लिखा और उन्होंने फौरन ही अनुमतिपत्र दिलवा दिया। मतलब यह कि अगर श्री मंगा ब्रिटिश प्रजाजन होते तो वे ट्रान्सवालकी स्वर्णभूमिपर पैर नहीं रख सकते थे, लेकिन पुर्तगाली प्रजा होनेके कारण तुरन्त आ सके।

श्री मंगा एक दिन जोहानिसबर्गमें रहकर वापस डेलागोआ-बे चले गये हैं। शासनके ऐसे बेहूदे व्यवहारके बारेमें संघने[2] सरकारको और लॉर्ड सेल्बोर्नको भी लिखा है। लॉर्ड सेल्बोर्नने पत्रकी पहुँच भेजते हुए उत्तर दिया है कि वे इस मामलेकी जाँच कर रहे हैं। श्री गांधीने भी 'ट्रान्सवाल लीडर'[3] में पत्र लिखा है। श्री सुलेमान मंगाके मामलेमें ऐसा अन्याय हुआ है कि उससे, सम्भव है, सोती हुई अंग्रेज सरकारकी आँखें कुछ तो खुलेंगी ही। जापानी प्रजाजन श्री नोमूराको अनुमतिपत्र देनेसे इनकार किया गया था तो समूचा ट्रान्सवाल थर्रा उठा था।[4] लेकिन उसी हैसियतके ब्रिटिश प्रजाजनका क्या कोई हाल पूछनेवाला ही नहीं है?

१. भारतमें पुर्तगाली अधिकृत क्षेत्र।
२. ब्रिटिश भारतीय संघ।
३. देखिए "पत्र : 'लीडर' को", पृष्ठ २७२।
४. देखिए "ट्रान्सवालमें अनुमतिपत्र सम्बन्धी जुल्म", पृष्ठ २६५।

रेलवेकी अड़चन

अलीवाल नॉर्थके[1] प्रसिद्ध व्यापारी श्री मुहम्मद सूरती दो दिन जोहानिसबर्गमें रह गये हैं। उन्हें जर्मिस्टनसे आनेवाली रेलगाड़ीमें तकलीफ हुई। वे पहले दर्जेके एक डिब्बेमें बैठे थे। वहाँ उनका अपमान करके उन्हें दूसरे डिब्बेमें बैठाया गया। श्री मुहम्मद सूरतीको पता नहीं था कि ट्रान्सवालमें काले लोगोंके लिए अलग डिब्बे होते हैं। फिर वे खुद जिस डिब्बेमें बैठे थे उसमें कोई गोरा नहीं था, फिर भी गार्डने उन्हें तंग किया। इसपर उन्होंने रेलवेसे न्यायकी माँग की है।

प्रिटोरियासे ८-३० बजे जोहानिसबर्ग आनेवाली और जोहानिसबर्गसे प्रिटोरिया जानेवाली गाड़ीमें भी, भारतीय यात्रियोंको नहीं चलने दिया जाता। इसके सम्बन्धमें ब्रिटिश भारतीय संघका शिष्टमण्डल रेलवेके महाप्रबन्धकसे मिलने गया था। उसने माँग की कि यह गाड़ी सिर्फ गोरोंके लिए सुरक्षित रखी गई है, इसलिए भारतीय इसमें बैठनेका आग्रह न रखें, तो अच्छा हो। महाप्रबन्धकके पास इसका कानूनन कोई बचाव नहीं था। शिष्टमण्डलने जवाब दिया कि इस मामलेमें भारतीय जनता पीछे नहीं हट सकती। जिस तरह गोरोंको सुविधा चाहिए उसी तरह भारतीयोंको भी चाहिए। इसका अगले आठ-दस दिनोंमें निबटारा होना सम्भव है।

ट्रामका मुकदमा

जोहानिसबर्गके ट्रामवाले मामलेका अभी अन्त नहीं हुआ है। हमारे लोगोंको ट्राममें नहीं बैठने दिया जाता, इसलिए उन्होंने फिर मुकदमा दायर किया है। श्री कुवाडिया जब ट्राममें बैठ रहे थे, उन्हें बैठनेसे रोका गया। इसलिए उन्होंने फिरसे हलफनामा पेश किया है। मुकदमेकी तारीख एक-दो दिनमें निश्चित होगी।

पृथक् बस्तीमें गन्दगी

मलायी बस्तीमें बसे हुए भारतीयोंपर डॉ० पोर्टरने इस हफ्ते छापा मारा था। चूँकि लोग बहुत घिचपिच रहते हैं, इसलिए उनमें से बहुत-से लोगोंको पकड़ कर ले जाया गया। इस सम्बन्धमें तथा अपना घर-आँगन और पाखाना साफ रखनेके विषयमें हमारे लोग बहुत ही लापरवाह होते हैं। इसका फल सभीको भोगना पड़ता है। जबतक हम इसमें पक्का सुधार नहीं करेंगे, तबतक हमारी मुसीबतें दूर नहीं होंगी। और अगर इस बीच प्लेग या छूतसे फैलनेवाले कोई और रोग आ घेरें, तो बहुत अधिक मुसीबतें भोगनी होंगी। ऐसा लगता है कि हमारे लोग १९०४ के प्लेगके अनुभव भूल गये हैं।[2]

गोरोंका उत्साह

नये संविधानके बारेमें गोरोंने सम्राट्के नाम जो अर्जी तैयार की है, उसपर बहुत थोड़े समयमें ३५,००० हस्ताक्षर हो चुके हैं और अब भी हो रहे हैं। ऐसे ही [उत्साहकी छूत हमें भी लगनेकी जरूरत मालूम होती है। फूटकी छूतकी अपेक्षा यदि हमें यह छूत लगे तो हमारी हालत कुछ और ही हो सकती है।]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-४-१९०६

१. ऑरेंज नदीके तटपर स्थित एक नगर।

२. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ १५८-९, १८७-८ और ३८९-९१।

२८८. उद्धरण : दादाभाई नौरोजीके नाम पत्रसे[1]

[जोहानिसबर्ग
अप्रैल १०, १९०६]

[प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमके अन्तर्गत दिये जानेवाले पासों और प्रमाणपत्रोंकी प्राप्तिके लिए लगाया गया निषेधार्थक शुल्क] एक सर्वथा अन्यायपूर्ण शुल्क, जिसे लगानेका किंचिन्मात्र भी औचित्य नहीं है। . . . . . दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय समाजपर एक दूसरी गहरी चोट ट्रान्सवालमें की गई है।

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स्, सी० ओ० ४१७, जिल्द ४३४, व्यक्तिगत।

२८९. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
अप्रैल १०, १९०६

चि० छगनलाल,

हुसैन खाँका पत्र वापस कर रहा हूँ। इसपर अंग्रेजीके स्तम्भमें लिखा जायेगा। गुजराती स्तम्भमें कह दो कि इस मामलेपर अंग्रेजी स्तम्भमें विचार किया जा रहा है।

कलतक तुम्हारा पत्र आयेगा, ऐसा कुछ अन्दाज लगाये हूँ। मैं शायद शुक्रवारको सवेरेकी गाड़ीसे रवाना हूँगा।

श्री किचिनसे अभीतक स्थितिके सम्बन्धमें बात कर रहा हूँ। वे शायद फिरसे काम करने लगें।

आशा है, मगनलाल पहलेसे बहुत अच्छा होगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

सलग्न : १

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
मारफत 'इंडियन ओपिनियन'
फीनिक्स

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३४९) से।

१. दादाभाईको लिखा गांधीजीका पत्र उपलब्ध नहीं है। उनके पत्रके इस उद्धरणको दादाभाई नौरोजीने उपनिवेश-मंत्रीके नाम अपने १० अप्रैलके पत्रमें प्रयुक्त किया है। पत्रके साथ उन्होंने १७-३-१९०६ का **इंडियन ओपिनियन** का अंक प्रेषित किया था और उसमें १०-३-१९०६ के **इंडियन ओपिनियन** का हवाला भी दिया था।

२९०. पत्र : छगनलाल गांधीको

२१–२४ कोर्ट चेम्बर्स
नुक्कड़, रिसिक व ऐंडर्सन स्ट्रीट्स
पो० ऑ० बॉक्स ६५२२
जोहानिसबर्ग
अप्रैल ११, १९०६

चि० छगनलाल,

तुम्हारी चिट्ठी मिली। जवाबमें बहुत नही लिख रहा हूँ। मैं शुक्रवारको सवेरेकी गाड़ीसे रवाना हो रहा हूँ। शनिवारकी दुपहरको वह मुझे वहाँ[1] पहुँचा देगी। फीनिक्सके लिए जोहानिसबर्गकी गाड़ीके आनेके बाद जो गाड़ी छूटती है उसीको पकड़ लूँगा।

लगता है, विज्ञापनकी दरोंके बारेमें तुमसे जो पूछा था वह तुम अभीतक ठीकसे नहीं समझे हो। जब मैं वहाँ पहुँचूँ तो याद दिलाना; मैं तुम्हें परिस्थिति समझा दूँगा। इसी बीच तुम अपने विचार लिखकर रख छोड़ो — जो तुम्हें कहना है और जो तुम सुझाना चाहो, वह सब। गलतफहमीका कोई डर न रखो, क्योंकि तुम जो कुछ लिख रखोगे मैं उस सबके विषयमें प्रश्न कर सकूँगा और तुम सब समझाकर कह सकोगे। मैं यह भी चाहता हूँ कि स्वतन्त्र रूपसे, बिना दूसरेसे सलाह-मशविरा किये तुम अपने विचार लिख डालो, और मेरा मंशा है कि सबसे ऐसा ही करनेको कहूँ। यह पत्र मगनलालको दे देना; ताकि अगर वह इस लायक तन्दुरुस्त हो गया हो तो जो-जो उसे सूझे, वह भी विस्तारसे लिख डाले; और, किसी भी हालतमें, तुम जो प्रश्न मुझसे पूछना चाहो उन्हें भी लिख रखना।

कार्यक्रम नहीं बदला तो तार करनेका विचार नहीं है।

मोहनदासके आशीर्वाद

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
फीनिक्स

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३४८) से।

१. डर्बन।

२९१. पत्र: विलियम वेडरबर्नको[1]

ब्रिटिश भारतीय संघ

२५ व २६ कोर्ट चेम्बर्स
रिसिक स्ट्रीट
जोहानिसबर्ग
अप्रैल १२, १९०६

सर विलियम वेडरबर्न
पैलेस चेम्बर्स
लन्दन

महोदय,

ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति दिन-प्रति-दिन अधिक असुरक्षित एवं दुःखद होती जा रही है। यह आवश्यक है कि जो-कुछ यहाँ हो रहा है उसे संक्षेपमें दोहरा दूँ और ठोस काम करनेकी अपील करूँ।

यह तो सत्य है कि ब्रिटेनकी सरकार सम्राटके ट्रान्सवाल उपनिवेशमें हस्तक्षेप करनेमें सोच-विचारसे काम लेगी, किन्तु मेरा विचार है कि हस्तक्षेप न करनेवाली इस नीतिकी अवश्यमेव कोई सीमा होनी चाहिए। ट्रान्सवालमें एक शान्ति-रक्षा अध्यादेश जारी है जिसके अन्तर्गत ब्रिटिश भारतीयोंके आव्रजनको अत्यन्त स्वेच्छाचारिताके साथ नियन्त्रित किया गया है।

(क) अध्यादेशका उद्देश्य शान्ति-रक्षा करना, और, इसीलिए, बागियों तथा ऐसे लोगोंको, जो ब्रिटिश सरकारसे द्वेष रखते हों, दूर रखना था। किन्तु आज, वस्तुतः, उसका उपयोग केवल ब्रिटिश भारतीयोंके आव्रजनपर रोक लगानेके लिए किया जाता है।

(ख) ब्रिटिश भारतीय संघने इस स्थितिको स्वीकार कर लिया है कि उन भारतीयोंको, जो शरणार्थी नहीं हैं और जिनमें शैक्षणिक योग्यता नहीं है, बाहर ही रखा जाये।

(ग) वास्तवमें उन शरणार्थियोंका भी, जो युद्धके पहले उपनिवेशमें थे और जिन्होंने उपनिवेशमें रहनेकी अनुमति प्राप्त करनेके लिए ३ पौंड मूल्य चुकाया था, प्रवेश रोका जा रहा है; केवल अत्यन्त कठिन परिस्थितियोंमें ही उन्हें आने दिया जाता है।

(घ) ऐसे लोगोंको अनुमतिपत्र-अधिकारी द्वारा अनुमतिपत्र जारी किये जानेसे पहले महीनों तटवर्ती नगरोंमें इन्तजार करना पड़ता है।

(ङ) देशमें प्रवेश करनेके लिए अनुमतिपत्र प्राप्त करनेसे पहले उन्हें अत्यन्त कष्टकर जाँच-पड़तालसे गुजरना पड़ता है। फिर वे अँगूठेका निशान लगानेके लिए बुलाये जाते हैं और उनके साथ अन्य सख्तियाँ बरती जाती हैं।

(च) ट्रान्सवालमें प्रवेशकी अनुमति देनेसे पहले उनकी पत्नियोंसे भी माँग की जाती है कि वे लिखित प्रमाणपत्र पेश करें।

१. यह एक परिपत्र जान पड़ता है। इसकी एक नकल दादाभाई नौरोजीको भेजी गई थी। उन्होंने अन्तिम अनुच्छेद निकालकर एक वक्तव्यके रूपमें इसे ८ मई १९०६ को उपनिवेश-मन्त्रीके पास भेजा था।

(छ) उनके ११ वर्षसे अधिक आयुके बच्चोंको साथ जानेसे सर्वथा रोक दिया जाता है।

(ज) ऐसे शरणार्थियोंके बारह वर्षसे कम उम्रके बच्चोंको आनेकी अनुमति देनेसे पहले अनुमतिपत्र लेनेके लिए बाध्य किया जाता है। अभी हालमें एक छः वर्षके बच्चेको — बावजूद इसके कि उसके पिताके पंजीयन-प्रमाणपत्रमें यह लिखा था कि उसके दो पुत्र हैं — उसके पितासे जबरन अलग कर फोक्सरस्टमें रोक दिया गया, क्योंकि उसके पास अलग अनुमतिपत्र नहीं था।

(झ) केवल तीन मास पूर्व १६ वर्षसे कम आयुके बच्चोंको ट्रान्सवालमें प्रवेशकी स्वतन्त्रता थी, बशर्ते कि उनके माता-पिता, या यदि उनके माता-पिता मर गये हों तो वे अपने जिन संरक्षकोंके साथ हों, वे ट्रान्सवालके अधिवासी हों। अब, जैसा कि ऊपर कहा गया है, सहसा भारतीयोंपर नया विनियम लागू कर दिया गया है और केवल उन बच्चोंको, जो बारह वर्षसे कम आयुके हैं, प्रवेशकी अनुमति दी जाती है। इसका परिणाम है कि १६ वर्षसे कम आयुके वे बहुत-से लड़के, जो काफी खर्च करके दक्षिण आफ्रिकामें आये है, अपने ट्रान्सवालके अधिवासी माता-पिताके पास रहनेके बजाय भारत वापस जानेके लिए बाध्य है।

(ञ) करीब तीन मास पूर्व उन भारतीयोंको, जो दक्षिण आफ्रिकाके अन्य भागोंमें जानेके लिए ट्रान्सवालसे गुजरना चाहते थे या जो कोई काम करना चाहते थे, अनुमतिपत्र खुले आम और बड़ी संख्यामें दिये जाते थे। अब इस तरहके अनुमतिपत्र अत्यधिक जाँच-पड़तालके बाद ही दिये जाते हैं। डेलागोआ-बेके एक प्रसिद्ध भारतीय व्यापारीके पुत्र श्री सुलेमान मंगा,[1] जो इस समय इंग्लैंडमें बैरिस्टरी पढ़ रहे हैं, हालमें ही डेलागोआ-बेमें अपने सम्बन्धियोंसे मिलनेके लिए वहाँसे वापस आये थे। वे डर्बनमें उतरे और उन्होंने अनुमतिपत्र प्राप्त करनेके लिए प्रार्थनापत्र दिया ताकि वे ट्रान्सवाल होते हुए डेलागोआ-बे जा सकें। उन्हें अनुमतिपत्र देनेसे इनकार कर दिया गया। उनके मामलेपर इस दृष्टिसे विचार किया गया जैसे कि वे एक ब्रिटिश भारतीय हों। इसलिए वे जल-मार्गसे डेलागोआ-बे गये। वहाँ उन्होंने फिर ट्रान्सवाल सरकारकी मारफत एक अस्थायी अनुमतिपत्र प्राप्त करनेका प्रयत्न किया, क्योंकि वे जोहानिसबर्ग और प्रिटोरिया देखना चाहते थे। किन्तु उनका प्रार्थनापत्र अस्वीकार कर दिया गया। इसलिए उन्होंने विचार किया कि उनका जन्म पुर्तगाली भारतमें हुआ है, इसलिए उन्हें पुर्तगाली सरकारसे प्रार्थना करनी चाहिए। उन्होंने वसा ही किया और उन्हें तुरन्त अनुमतिपत्र दे दिया गया। इसलिए इसका अर्थ यह हुआ कि एक ब्रिटिश भारतीय, चाहे वह किसी भी स्थितिका क्यों न हो, ट्रान्सवालसे सही-सलामत नहीं गुजर सकता, किन्तु यदि कोई भारतीय विदेशी सत्तासे सम्बन्ध रखता है तो उसे माँगते ही अनुमतिपत्र मिल जाता है।

(ट) ऊपरके कथनसे यह निष्कर्ष निकलता है कि अच्छी स्थितिके भारतीय ट्रान्सवालमें बसनेके लिए अनुमतिपत्र प्राप्त करनेमें असमर्थ है, अर्थात् शान्ति-रक्षा अध्यादेशको इस तरह अमलमें लाया जाता है कि जहाँ युद्धके पूर्व कोई भी भारतीय ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेको स्वतन्त्र था, वहाँ अब सम्राट्के उपनिवेश ट्रान्सवालमें उस भारतीयका भी प्रवेश वर्जित है जो स्वशासित उपनिवेश केप या नेटालकी शैक्षणिक परीक्षा उत्तीर्ण करनेमें समर्थ होनेके कारण वहाँ प्रवेश कर सकता है। यहाँ सवाल ब्रिटिश सरकार द्वारा युद्ध-पूर्वका कानून विरासतमें प्राप्त करनेका नही है, बल्कि एक ऐसे अधिनियमको जानबूझकर अमलमें लानेका है जो फौजी कानूनके ठीक बाद पास किया गया था और जिसका भारतीयोंसे कोई सम्बन्ध नहीं था।

स्वर्गीय श्री अबूबकर आमदने, जो दक्षिण आफ्रिकामें सर्वप्रथम बसनेवाले भारतीयोंमें से थे, अपने ब्रिटिश भारतीय उत्तराधिकारियोके लिए जो सम्पत्ति छोड़ी थी उसे १८८५ के कानून ३ के

१. "ट्रान्सवाल अनुमतिपत्र अध्यादेश", पृष्ठ २८८-९ भी देखिए।

अन्तर्गत उनके उत्तराधिकारियोको अपने नाम पंजीयन करानेसे रोक दिया गया है।[1] भारतीयोके स्वामित्वके सम्बन्धमें कानून इस तरह अमलमें लाया जाता है। यह ध्यान रखना चाहिए कि ट्रान्सवालके वतनी, जैसा कि सर्वथा उचित है, जहाँ चाहे, कही भी जमीन-जायदादका स्वामित्व प्राप्त करनेको स्वतंत्र है। केपके रंगदार लोग भी ट्रान्सवालमे अचल सम्पत्ति रखनेको स्वतंत्र है। पाबन्दी केवल एशियाइयोपर लगाई गई है।

युद्धके पहले भारतीय ट्रान्सवालकी किसी भी रेल-सेवाके उपयोगसे वंचित नही थे। अब रेल-मार्ग निकाय (रेलवे बोर्ड) ने स्टेशन मास्टरोंको सूचनाएँ भेजी है कि वे प्रिटोरिया और जोहानिसबर्गके बीच चलनेवाली एक्सप्रेस गाड़ीके लिए भारतीयो तथा रंगदार लोगोको टिकट न दें।[2] इस प्रकार भारतीय व्यापारियोंके लिए भारी असुविधा खड़ी कर दी गई है। बहुत अधिक सम्भव है कि अन्ततः राहत मिलेगी ही, किन्तु यह सूचना बताती है कि सरकारका झुकाव किस ओर है।

प्रिटोरियाके समान ही जोहानिसबर्गमें ब्रिटिश भारतीय तथा रंगदार लोग नगरपालिकाकी ट्रामगाडियोका उपयोग करनेमे असमर्थ है।[3]

नेटालमे स्थिति संक्षेपमे इस प्रकार है: विक्रेता-परवाना अधिनियम सबसे अधिक शरारतकी जड है। मुद्दतसे जमे हुए श्री दादा उस्मान नामक एक ब्रिटिश भारतीय व्यापारीकी युद्धके पहले फ्राइहीडमे, जब वह ट्रान्सवालका एक भाग था, एक दूकान थी, [और] वे वहाँ बिना किसी रुकावटके व्यापार करते थे। जब फ्राइहीड नेटालमे मिलाया गया तब वहाँके एशियाई-विरोधी कानूनोकी विरासत भी नेटालने पाई। इस प्रकार फ्राइहीडमे १८८५ का कानून ३ तथा नेटाल विक्रेता-परवाना अधिनियम दोनो ही लागू है। इनके अन्तर्गत कार्रवाई करके श्री दादा उस्मानका परवाना छीन लिया गया है और उनका फ्राइहीडका व्यापार बिलकुल ठप हो गया है।[4] इस प्रकारकी भीषण कठोरताका एक मामला लेडीस्मिथ जिलेमें भी हुआ। वहाँ कासिम मुहम्मद नामक एक व्यक्ति एक खेती (फार्म) में कुछ समयसे व्यापार कर रहा है। गत वर्ष उसके नौकरने रविवासरीय व्यापार कानूनका उल्लघन किया था। उसने पड़ोसके एक दूकानदार द्वारा भेजे गये जाली ग्राहकोको एक साबुनकी टिकिया और चीनी बेची थी। यह साबित हो गया था कि दूकानदार खुद गैरहाजिर था। इस अपराधके कारण इस वर्षका उसका परवाना नया नही किया गया।[5] अपील निकायने परवाना-अधिकारीके निर्णयको बहाल रखा। निकायका कहना था कि उसने एक गोरेके मामलेमें जिन सिद्धान्तोका अवलम्बन किया था उन्हीके अनुसार परवाना-अधिकारीने फैसला दिया है। किन्तु यह सत्य नहीं है। उक्त गोरेके बारेमे यह पाया गया था कि उसने अपने उपकिरायेदारोंको शराबका व्यापार करनेकी अनुमति दी थी और यह शराब वतनियोको बेची जाती थी। उसपर यह इल्जाम भी लगाया गया था कि उसने अपने अहातेमें अफीम बेची थी। गोरे व्यक्तिने जानबूझकर उपर्युक्त कानूनका जो उल्लघन किया था उसके मुकाबले रविवासरीय-व्यापार कानूनका प्राविधिक उल्लंघन वास्तवमें कानून-भंग ही नही था।

तीसरा मामला श्री हुडामलका है। उन्हें डर्बनमें एक स्थानका परवाना दूसरे स्थानके लिए बदलनेसे इनकार कर दिया गया था।[6] विक्रेता-परवाना अधिनियमके अन्तर्गत बीसियो मामलोमें

१. देखिए "कानून समर्थित डाका", पृष्ठ २४०–१।
२. देखिए "पत्र : कार्यवाहक मुख्य यातायात प्रबन्धकको", पृष्ठ १९९।
३. देखिए "पत्र : टाउन क्लार्कको", पृष्ठ १९४–५।
४. देखिए "प्रार्थनापत्र : लॉर्ड एलगिनको", पृष्ठ २५६–८।
५. देखिए "एक मुश्किल मामला", पृष्ठ २८७–८।
६. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ३८५–८६।

जो-कुछ किया गया, उसके ये तीन उदाहरण भर हैं। श्री चेम्बरलेनने उक्त कानूनके अन्तर्गत होनेवाली क्रूरताओंके बारेमें नेटाल सरकारसे निवेदन किया था। उसका परिणाम यह हुआ कि नेटाल सरकारने हिदायतें निकालीं कि कानून कड़ाईके साथ लागू न किया जाये, नहीं तो, इसमें परिवर्तन कर दिया जायेगा। ऊपर जो उदाहरण दिये गये हैं उनसे बढ़कर क्रूरताके उदाहरण देना सम्भव नहीं है। ब्रिटिश भारतीय तो केवल इतना ही चाहते हैं कि परवाना-अधिकारियों तथा परवाना-निकायोंके, जिनमें मुख्यतया व्यापारी ही हैं, निर्णयोंपर सर्वोच्च न्यायालयको विचार करनेका फिरसे अधिकार दे दिया जाये।

प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमके अन्तर्गत अब जो नियम बनाये गये हैं, उनके द्वारा प्रत्येक अधिवासीको, जो अधिवासी-प्रमाणपत्रका हकदार है, प्रमाणपत्र प्राप्त करनेके लिए १ पौंडका शुल्क देना पड़ेगा। जो भारतीय नेटालकी यात्रा करना चाहते हैं उनके अभ्यागत पासोंपर[1] तथा जो भारतीय भारतको जानेवाला जहाज पकड़नेके लिए नेटालसे गुजरते हैं उन्हें वहाँसे गुजरनेका अधिकार देनेके लिए नौकारोहण पासोंपर इसी तरहका शुल्क लागू किया गया है। यह कर लगानेकी एक अप्रत्यक्ष प्रणाली है और इससे गरीब भारतीयोंको अत्यधिक असुविधा और हानियाँ उठानी पड़ती हैं।

मेरा खयाल है कि भारतीय संसदीय समितिको ये मामले बार-बार कांग्रेस तथा भारतीय मन्त्रियोंके सामने रखने चाहिए।

आपका विश्वस्त,
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकलसे।
सौजन्य: भारत सेवक समिति।

२९२. पत्र : छगनलाल गांधीको

[जोहानिसबर्ग
अप्रैल १३, १९०६][2]

चि० छगनलाल,

तुमको थोड़ी गुजराती सामग्री और विज्ञापन आदि भेज रहा हूँ। जहाँतक बने, सारे विज्ञापन इसी बार आ जायें, श्री वेस्टसे ऐसा करनेको कहना।

पिछली बार जितना बड़ा कारमनका था, उतना ही गार्लिक हेंट्ज़का छापना। मैंने उनके विज्ञापनके ऊपर जो लिख दिया है, उसका ध्यान रखना। जीवनजी को ६ इंच देना। दूसरोंके बारेमें कहने लायक कुछ नहीं है।

श्री हरिलाल ठाकुरको अपने साथ लाऊँगा। शामकी आखिरी गाड़ीसे चलूँगा।

मोहनदासके आशीर्वाद

१. देखिए "पत्र : उपनिवेश-सचिवको", पृष्ठ २२९-३०।

२. मूल प्रतिमें तारीख अप्रैल २३, १९०६ है। यह गलत जान पड़ती है, क्योंकि पत्रमें गार्लिक हेंट्ज़के जिस विज्ञापनका उल्लेख हुआ है, वह २१-४-१९०६ के **इंडियन ओपिनियन** में प्रकाशित हुआ था। पत्र निश्चय ही प्रायः एक सप्ताह पूर्व, सम्भवतः १३ अप्रैलको, जिस दिन गांधीजी फीनिक्सके लिए रवाना होनेको थे, लिखा गया होगा। देखिए "पत्र : छगनलाल गांधीको", पृष्ठ २८१।

[पुनश्च]

भाई सुलेमानका ठीक प्रबन्ध करना। शेष गुजराती सामग्री मुझे वहीं देनी पड़ेगी। दूसरा उपाय नहीं है।

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३५३) से।

२९३. एक मुश्किल मामला

विगत ३० मार्चको लेडीस्मिथमें परवाना सम्बन्धी जिस मुकदमेकी अपीलकी सुनवाई हुई थी, उसका सार हमने पिछले सप्ताह छापा था। क्लिप रिवर डिविजनमें, विटेक्लेफॉटीन नामक फार्मपर पिछले तीन सालसे एक भारतीय व्यापारी व्यापार करता था। बादमें 'बर्डेट ऐंड कम्पनी' नामसे एक यूरोपीय पेढ़ीने उसके निकट ही अपनी दूकान खोल ली। 'नेटाल विटनेस' में छपी खबरसे मालूम पड़ता है कि पेढीके साझेदारोंमें सार्जेन्ट बैंटरबर्ग भी है, जो उस डिवीजनका सरकारी अभियोक्ता है। पुलिसने भारतीय व्यापारीकी अनुपस्थितिमें उसके एक कर्मचारीको फाँस लिया और रविवारको व्यापार करनेके अपराधमें सजा दे दी। उसने साबुनकी एक टिकिया और कुछ चीनी बेची थी। भारतीय दूकानदारको जब लौटनेपर यह मालूम हुआ कि उसके कर्मचारीने रविवारको व्यापार करनेका अपराध किया है तो उसने उसको बर्खास्त कर दिया। जब उस दूकानके परवानेके नवीनीकरणका समय आया तो परवाना-अधिकारीके सामने बर्डेट ऐंड कम्पनीने उसको परवाने देनेके विरुद्ध इस बिनापर उज्रदारीकी कि उसने रविवासरीय कानूनका उल्लघन किया है। परवाना-अधिकारीने इस ऐतराजको मान लिया और परवाना देनेसे इनकार कर दिया। बेचारे भारतीय दूकानदारने उसके निर्णयके विरुद्ध परवाना निकायके सामने अपील की; परन्तु उसकी अपील उसके वकीलकी जोरदार पैरवीके बावजूद खारिज कर दी गई और निकायने फैसला देते हुए कहा कि परवाना-अधिकारीने ऐसा इसलिए किया कि, दूकानदारके कर्मचारीने रविवासरीय नियमोका उल्लघन किया था और निकायने इसी तरहके एक दूसरे मामलेका हवाला दिया जिसमे परवाने के लिए दिया गया एक यूरोपीयका आवेदनपत्र अस्वीकार किया जा चुका था। परन्तु हमारा खयाल तो यह है कि निकायने जिस यूरोपीयके मामलेकी चर्चा की है उसका इस मामलेसे कोई सम्बन्ध नही है, क्योकि इसमें कुछ बुनियादी बातें नही मिलती। इस मामलेमें भारतीय दूकानदारने खुद अपराध नही किया। उसने गलतीको दुरुस्त करनेका एकमात्र सम्भव उपाय भी किया और आखिर यह बात तो एक मामूली आदमीको भी साफ दिखाई देती है कि सारा ऐतराज एक ऐसी प्रतिद्वंद्वी व्यापारी पेढीने उठाया, जिसका भारतीय दूकानको हटानेमें स्वार्थ है। फिर यह तथ्य भी कुछ कम महत्वपूर्ण नही है कि उक्त पेढीके साझेदारोमें लेडीस्मिथका सरकारी अभियोक्ता भी है और उसीने भारतीय दूकानदारके कर्मचारीपर अभियोगका सचालन भी किया था। अपीलकर्ता भारतीय दूकानदारके वकीलने निकायके सामने यह ऐतराज उठाया था कि बर्डेट ऐंड कम्पनी निकायके सामने इस मामलेमे हस्तक्षेप नहीं कर सकती। दरअसल यह दु:खकी बात है कि निकायने अपीलको मँजूर नही किया। हमें यह खयाल अवश्य ही आता है कि अपने फैसलेसे निकायने इस तरहके विरोधको, जैसा कि इस मामलेमें किया गया है, उत्तेजन ही दिया है। भारतीय दूकानदारका नौकर कानूनकी धाराको भँग करनेपर पहले ही दण्डित किया जा चुका है। अब उसी अपराधमें वह स्वयं परवानेसे वंचित कर दिया गया है। यह सजा कतई अपराधके अनुरूप नही है। परन्तु इस मामलेसे तो यही सिद्ध होता है कि नेटालका विक्रेता-

परवाना अधिनियम कितना उत्पीड़क और अन्यायपूर्ण है। दादा उस्मानकी दरखास्तमें जो तर्क उठाये गये थे उनकी इस लेडीस्मिथके मामलेसे पुष्टि हो गई है।[1] जबतक सर्वोच्च न्यायालयमें अपीलका अधिकार फिर नही दिया जाता तबतक विक्रेता-परवाना अधिनियमके अन्तर्गत किसीको भी न्याय मिलनेकी सँभावना नहीं है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-४-१९०६

२९४. ट्रान्सवाल अनुमतिपत्र अध्यादेश

शान्ति-रक्षा अध्यादेश, जैसा कि उसके नामसे ही प्रकट होता है, ऐसे समय पास किया गया जब ट्रान्सवालकी सीमाके अन्दर शान्तिको खतरा था। परन्तु वह तभीसे ब्रिटिश भारतीयोंके सिरपर सदा नंगी तलवारकी तरह झूल रहा है, जो किसी भी समय गिर सकती है। हमारे ट्रान्सवालके संवाददाताने हमारे पाठकोंका ध्यान एक ताज़ी घटनाकी ओर आकर्षित किया है।[2] ऐसा जान पड़ता है कि डेलागोआ-बेके एक बहुत प्रसिद्ध भारतीयके पुत्र श्री सुलेमान मंगा कुछ वर्षोंसे इंग्लैंडमें बैरिस्टरीकी शिक्षा पा रहे थे। वे अब बैरिस्टर हो गये हैं और अभी इंग्लैंडसे डेलागोआ-बेमें अपने रिश्तेदारोंसे मिलनेके लिए आये हैं। वे डर्बनमें उतरनेके बाद, डेलागोआ-बे जाते हुए ट्रान्सवालसे गुजरना चाहते थे। इसलिए उन्होंने जोहानिसबर्गके एक वकीलको अपने लिए अनुमतिपत्रकी दरखास्त देनेकी हिदायत की। प्रतीत होता है कि उनके वकील श्री गांधीने यह मान लिया कि वे ब्रिटिश भारतीय है, और दरखास्त दे दी। कुछ दिनोंके विलम्बके पश्चात् उनके पास उत्तर आया कि उनके मुवक्किलको अस्थायी अनुमतिपत्र नहीं दिया जा सकता। तब उन्होंने उपनिवेश-सचिवको दरखास्त दी और वहाँसे भी उनको वही उत्तर मिला। उसमें दरखास्तकी अस्वीकृतिका कोई कारण नहीं बताया गया था। तब श्री मंगा डेलागोआ-बेके एक जहाजपर सवार हो गये। वे युवा और उत्साही थे एवं इंग्लैंडसे ताज़े लौटे थे; इसलिए इस प्रकार अपनी दरखास्तकी अस्वीकृति बर्दाश्त न कर सकते थे। अपने थोड़े दिनोंके प्रवासमें वे ट्रान्सवालकी राजधानी और स्वर्ण खान-केन्द्रको देखना चाहते थे। इसलिए उन्होंने पुनः बन्दरगाहपर एशियाई संरक्षकको दरखास्त दी; परन्तु उनको वहाँसे भी वही जवाब दिया गया जो उनके वकीलको दिया गया था। तब, वस्तुतः पुर्तगाली प्रजा होनेके कारण, उन्होंने खुद अपनी सरकारसे अपील की और उसने अपने प्रजाजनकी शीघ्र सहायता की और श्री मंगा महामहिम सम्राटके ब्रिटिश वाणिज्य-दूतका अनुमतिपत्र लेकर ट्रान्सवालमें प्रविष्ट हो गये।

यह सरकारको प्राप्त निरंकुश सत्ताके बहुत ही स्पष्ट दुरुपयोगका एक नमूना है। यहाँ हम एक जापानी प्रजाजन श्री नोमूराके एक ऐसे ही मामलेको याद कर सकते है। उक्त सज्जनने ट्रान्सवालमें अपना व्यापारिक माल बेचनेकी दृष्टिसे एक अस्थायी अनुमतिपत्रके लिए दरखास्त दी। मुख्य अनुमतिपत्र-सचिवने उसे अस्वीकार कर दिया। प्रत्यक्ष हैं, उन्होंने अपने मनमें सोचा कि जब एक ब्रिटिश प्रजाजनको ऐसी सहूलियतें प्राप्त नहीं है, तब वे श्री नोमूराको ही कैसे दे सकते हैं? मामलेपर सार्वजनिक रूपसे चर्चा की गई और 'ट्रान्सवाल लीडर' ने श्री नोमूरासे सार्व-

१. देखिए "प्रार्थनापत्र : लॉर्ड एलगिनको," पृष्ठ २५६-८।

२. देखिए "पत्र : 'लीडर' को", पृष्ठ २७२।

जनिक रूपसे माफी माँगी।[1] उच्चायुक्तने मुख्य अनुमतिपत्र-सचिवको तुरन्त आदेश दिया कि वे श्री नोमूराको अनुमतिपत्र दे दे और वह अनुमतिपत्र डर्बनमें उनके घर जाकर खुद उनको दिया गया।

श्री मंगाका मामला श्री नोमूराके मामलेसे ज्यादा सबल है। वह जिस रूपमें पहले उपनिवेश-सचिवके सामने रखा गया उस रूपमें वह एक ब्रिटिश प्रजाजन और विद्यार्थीकी ट्रान्सवालसे सिर्फ गुजरनेकी अनुमति माँगनेकी दरखास्त थी। उन्हें उपनिवेशमें कोई काम नही करना था; इसलिए किसीके साथ उनकी प्रतियोगिता नही हो सकती थी। हम पूछते हैं कि क्या एशियाई-विरोधी सम्मेलनका कोई अत्यन्त कट्टर सदस्य भी कभी श्री मगा जैसे व्यक्तिकी अर्जी अस्वीकार करनेकी बात सोच सकता था? फिर भी जबतक श्री मंगा ब्रिटिश प्रजाजन समझे गये और जबतक एक विदेशी सरकार द्वारा हस्तक्षेप नही किया गया तबतक ट्रान्सवाल-सरकारने उनके मामलेको ध्यान देने योग्य नही माना।

किन्तु ज्यों ही मालूम हो गया कि श्री मंगा पुर्तगाली प्रजाजन हैं, त्यों ही उनको अनुमतिपत्र दे दिया गया। इस मामलेका विशुद्ध निचोड़ यह है कि वर्तमान ट्रान्सवाल सरकारके हाथों ब्रिटिश भारतीयोको न्याय नही मिल सकता। उनको अपमानित किया जा सकता है; उनको सब प्रकारकी असुविधाओंमे डाला जा सकता है; उनकी दरखास्तें संक्षिप्त कार्रवाईके बाद रद की जा सकती हैं; उन्हे सरकारके मनमाने निर्णयोके कारण नही बताये जा सकते हैं; प्रामाणिक शरणार्थी होते हुए भी उनकी ट्रान्सवालमे पुनः प्रवेशकी माँगोंपर विचार करनेमें महीनों लग सकते हैं; और उनकी जीविकाके साधन तक सरकारकी निरंकुश मर्जीपर निर्भर रहने दिये जा सकते हैं। तब भी, हमें लॉर्ड सेल्बोर्न विश्वास दिलाते हैं कि उनकी इच्छा भारतीयोके साथ कठोर व्यवहार करने या शान्ति-रक्षा अध्यादेशकी धाराओको किसी भी तरह अनुचित रूपसे बरतनेकी नही है।[2] इसलिए भारतीय समाजको पूरा अधिकार है कि वह लॉर्ड सेल्बोर्नसे उसके साथ कुछ न्याय करनेकी अपील करे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४–४–१९०६

२९५. एक परवाना सम्बन्धी प्रार्थनापत्र

हमारे पाठकोंको फ्राइहीडवासी एक ब्रिटिश भारतीयके परवाना सम्बन्धी तथ्योंका स्मरण होगा। इस मामलेसे सम्बद्ध भारतीय व्यापारी श्री दादा उस्मान परवाना-अधिनियमकी स्थितिके कारण उस न्यायको, जिसका उन्हे हक था, पानेमें असफल रहे; इसलिए उन्होंने महामहिमके मुख्य उपनिवेश-मन्त्रीको प्रार्थनापत्र[3] भेजा है और इसकी एक प्रति हमारे पास भी समीक्षाके लिए भेजी है। प्रार्थनापत्र बिना नमक-मिर्चका, एक तथ्यपूर्ण वक्तव्य है; परन्तु वह बहुत स्पष्ट रूपमें प्रकट कर देता है कि विक्रेता-परवाना अधिनियमके अमलका सामान्य प्रश्न उसकी तहमें है। जबतक उपनिवेशकी कानूनकी पुस्तकसे उसे हटा नही दिया जाता तबतक ब्रिटिश भारतीय व्यापारी आरामसे नही बैठेंगे। परवाना-अधिकारियोंके हाथोंमें मनमाने अधिकार सौंप देना भारतीय

१. देखिए "एक अन्तर", पृष्ठ २३३।
२. देखिए "ट्रान्सवालके भारतीय और अनुमतिपत्र", पृष्ठ २०१–२।
३. देखिए "प्रार्थनापत्र: लॉर्ड एलगिनको", पृष्ठ २५६–८।

व्यापारियोंके लिए न्यायपूर्ण नही है और परवाना-अधिकारियोंके लिए तो वह और भी कम न्यायपूर्ण है। हम मनमाने व्यापारिक अधिकार नहीं माँगते, पर हम यह जरूर चाहते है कि प्रत्येक व्यापारिक प्रार्थनापत्रपर उसके गुणावगुणके अनुसार विचार किया जाये और जहाँ ऐसे प्रार्थनापत्रके विरुद्ध पूर्वग्रहके सिवा और कोई कारण न दिया जा सके वहाँ उसे स्वीकार किया जाये। हमारे सामने जो मामला है वह और भी कठिन हो गया है; क्योंकि प्रार्थीको दुधारी निर्योग्यतासे संघर्ष करना पड़ रहा है। ब्रिटिश भारतीय होनेके कारण उनको फ्राइहीडमें नेटाल कानूनकी सम्पूर्ण निर्योग्यताओको झेलना पड़ता है और एक भी सुविधा नही मिलती, क्योंकि फ्राइहीडके नेटालमें मिला दिये जानेपर भी वहाँ ट्रान्सवालका १८८५ का कानून ३ जारी है। यह स्थिति बहुत ही असंगत है, और आशा है कि लॉर्ड एलगिन प्रार्थीको पर्याप्त न्याय दिलायेंगे।

उपनिवेशके घरेलू मामलोंमें हस्तक्षेपका प्रश्न स्वभावतः ही खड़ा किया जायेगा। पर जो लोग प्रातिनिधिक सस्थाओं द्वारा शासित उपनिवेशमे सर्वथा प्रतिनिधित्वहीन है उनके मामलेमें हस्तक्षेप न करनेका सिद्धान्त ठहर नहीं सकता। नेटालको स्वशासनका अधिकार इस अघोषित मान्यताके आधारपर प्राप्त है कि वह अपना शासन करनेमें समर्थ है। पर जब उपनिवेशमें बसनेवाली प्रजाके एक वर्गको जरा भी न्याय नही मिलता तब वहाँ स्वशासन नहीके बराबर ही समझना चाहिए। [स्वशासनका अर्थ है, आत्म-नियन्त्रण; यदि विशेषाधिकार प्राप्त होते है तो उनके साथ जिम्मेदारियाँ भी अवश्य उठानी चाहिए;] और अगर बिना जिम्मेदारियोंका पालन किये इन विशेषाधिकारोंका पूरी सीमा तक उपभोग किया जाता है तो जिस सत्ताने उन्हें प्रदान किया है उसे निश्चय ही यह प्रबन्ध करनेका अधिकार है कि उन जिम्मेदारियोंका समुचित रूपसे पालन किया जाये।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-४-१९०६

२९६. परवाना सम्बन्धी विज्ञप्ति

कहा जाता है कि सरकारने व्यापारी-परवाना अधिकारियोंके मार्ग-दर्शनके लिए कुछ नियम बनाये हैं। इन नियमोंकी ओर एक गुजराती संवाददाताने हमारा ध्यान आकर्षित किया है। हमारे सवाददाताके कथनानुसार अधिकारियोंको आदेश दिये गये हैं कि वे आगेसे भारतीयोंको परवाने जारी करते समय परवानोंके दूसरे अर्द्धांशोंपर उनकी अँगुलियों व अँगूठेकी निशानी और हस्ताक्षर ले लिया करें। हम समझते है कि ऐसा शिनाख्तकी गरजसे किया गया है। अगर हमारी जानकारी ठीक है तो हमारे मनमें पहला सवाल यह उठता है कि यह नई निर्योग्यता सिर्फ भारतीयोंपर ही क्यों लगाई गई है? इस मामलेमें शिनाख्तकी क्या जरूरत है? क्या इसका अर्थ यह है कि नेटाल-सरकार वर्तमान भारतीय व्यापारियोंके हटनेके बाद भारतीयोंका व्यापार जारी रहने देना नहीं चाहती? दूसरे शब्दोंमें, क्या वह परवाना-अधिकारियोंको यह बताना चाहती है कि भारतीय व्यवसाय उनके वर्तमान मालिकोंके साथ ही खत्म हो जायेंगे? यदि यह बात है तो, इसका अभिप्राय यह है कि जल्दी या देरसे, हर भारतीय व्यापारीको अपना चलता व्यवसाय बेचनेके बजाय लाचार होकर अपना माल ही बेच डालना होगा। फिर सरकारको इस प्रकार एकका पक्ष लेकर कानूनके अमलमें हस्तक्षेप क्यों करना चाहिए? यदि परवाना-अधिकारियोंको दूसरे खयाल छोड़कर [केवल न्यायकी दृष्टिसे अपने विवेकका उपयोग

करना है तो सरकार, जैसी विज्ञप्तिपर हम यहाँ विचार कर रहे है वैसी विज्ञप्तियाँ निकालकर उनके विवेकपर प्रतिबन्ध कैसे लगा सकती है? परवाना-अधिनियमके अन्तर्गत स्थिति अधिकाधिक असह्य होती जा रही है और यदि इंग्लैंडकी सरकार राहत नही देती तो नेटालके ब्रिटिश भारतीयोको अपना कारोबार कभी-न-कभी पूर्ण रूपसे बन्द करना ही पड़ेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-४-१९०६

२९७. नेटालका विद्रोह

जिन बारह वतनियोंको मृत्यु दंड[1] दिया गया था, उन्हें गोलीसे उडा दिया गया। नेटालकी जनता खुश हुई। श्री स्मिथका नाम रह गया। और बड़ी सरकारको नीचा देखना पड़ा। इस सम्बन्धमें श्री चर्चिलने जो भाषण दिया, वह बहुत अच्छा था। उन्होंने यह सिद्ध कर दिया है कि बड़ी सरकारको नेटालसे खुलासा माँगनेका अधिकार है। क्योकि अगर वतनी ठीक काबूमें न रहे, तो बड़ी सरकारके लिए फौज भेजना कर्त्तव्य है। उसके बाद श्री स्मिथके इस्तीफे आदिकी जो घटनाएँ हुई है उनका कारण केवल श्री चेम्बरलेनके हिमायतियोके भाषण और उनके दल द्वारा दक्षिण आफ्रिकाके सभी समाचारपत्रोका नियन्त्रण है। श्री चर्चिलने कहा है कि जैसा काम श्री स्मिथने किया है, यदि वैसा करनेका रिवाज चल पड़े तो इग्लैंड और उपनिवेशोके बीच स्नेह कभी निभ नही सकता।

जिस समय श्री चर्चिल इस प्रकार भाषण कर रहे थे, उस समय नेटालमे इस खेदजनक कहानीका तीसरा प्रकरण रचा जा रहा था। बारह वतनियोको मारा गया फिर भी विद्रोह शान्त होनेके बदले अधिक भड़क उठा। काफिरोके राजा बम्बाटाको पदच्युत करके उसके स्थानपर दूसरेको बैठाया गया, क्योकि बम्बाटाका व्यवहार अच्छा न था। बम्बाटाने मौका पाकर नये राजाका अपहरण किया और विद्रोह शुरू कर दिया। यह उपद्रव ग्रे टाउनमें चल रहा है। जिस प्रदेशमें बम्बाटा लूटमारके लिए निकला है वह घनी झाड़ियोंवाला विकट प्रदेश है। उसमे वतनी लम्बे समय तक छिपकर रह सकते है। उन्हें खोज निकालना और लड़ाई करना मुश्किल है।

जिस एक टुकड़ीने बम्बाटाका पीछा किया उसमें बारह काफिरोंको गोलीसे उड़ानेवाले अंग्रेज भी थे। बम्बाटाने इस टुकड़ीको घेर लिया। टुकड़ीके लोग बड़ी बहादुरीसे लड़े, लेकिन आखिर वे हारे और बड़ी मुश्किलसे निकल पाये। उनमें से कुछ मारे गये। मरनेवालोमें बारह काफिरोंको गोली मारनेवाले भी थे। ईश्वरकी ऐसी ही लीला है। जो मारनेवाले थे, उन्हे दो दिनके अन्दर मौतके मुँहमें जाना पड़ा।

जिस समय यह लिखा जा रहा है, बम्बाटा आजाद है। उसके साथी-सगी भी बढते जा रहे है। इसका परिणाम क्या होगा, कुछ समझमें नहीं आ रहा है।

उपनिवेशके ऐसे संकटके समयमें हमारा कर्त्तव्य क्या है? वतनियोंका विद्रोह सच्चा है या नही, इसका विचार हमें नही करना है। हम ब्रिटिश शक्तिके कारण नेटालमें बसे हुए हैं। हमारा अस्तित्व ही उसपर निर्भर है। अतएव यथासम्भव मदद करना हमारा कर्त्तव्य है।

1. देखिए "नेटालमें राजनीतिक उपद्रव", पृष्ठ २७६-७।

अखबारोंमें चर्चा चली थी कि अगर नियमित लड़ाई छिड़ जाये, तो क्या भारतीय उसमें हाथ बँटायेंगे? हम अपने अंग्रेजी लेखमें[1] लिख चुके हैं कि भारतके लोग हाथ बँटानेको तैयार हैं। और हम मानते हैं कि जो काम हमने बोअर-युद्धमें किया था वैसा ही इस समय भी करना जरूरी है। यानी, अगर सरकार चाहे, तो हमें आहत-सहायकोंकी टुकड़ी खड़ी करनी चाहिए। यदि सरकार हमेशाके लिए "स्वयंसेवा" का प्रशिक्षण देना चाहे, तो वह भी हमें स्वीकार करना चाहिए।

स्वार्थकी दृष्टिसे देखनेपर भी यह कदम मुनासिब माना जायेगा। बारह वतनियोंके किस्सेसे पता चलता है कि [हमें] जो-कुछ भी न्याय प्राप्त करना है सो स्थानीय सरकारसे ही। उसे प्राप्त करनेके लिए, पहला काम यह है कि हम अपने कर्तव्यका पालन करें। [जब] इस देशकी साधारण प्रजा अपनेको लड़ाईके लिए तैयार रखती है, तो हमें भी उसमें हाथ बँटाना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-४-१९०६

२९८. फेरीवालोंपर खतरा

डर्बनकी नगर-परिषदने यह प्रस्ताव पास किया है कि परवाने देनेवाले अधिकारी फेरीवालोंको नया परवाना न दें, और जिनके पास परवाने हैं जहाँतक बने उनकी संख्या भी कम की जाये; क्योंकि फेरीवालोंके व्यापारसे दूकानदारोंको नुकसान पहुँचता है। अबतक नगर-परिषद गुप्त सिफारिश किया करती थी। अब वह खुला हुक्म देती है कि अधिकारीको क्या करना चाहिए। मतलब यह हुआ कि अब नगर-परिषद ही ऊपरी और निचली अदालतोंके फैसले देनेवाली बन गई है।

फिर ऐसा हुक्म जारी करनेका मतलब यह होता है कि लोगोंको मुसीबत भले ही उठानी पड़े, दूकानदारोंको लाभ होना ही चाहिए। ऐसे कानूनके खिलाफ बहुत ही कड़ी लड़ाई लड़ी जायेगी तभी कुछ राहत मिलेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १४-४-१९०६

१. देखिए "भारतीय स्वयंसेवक", पृष्ठ २६१-२।

२९९. लेडीस्मिथ परवाना-निकाय

हम उस मामलेके बारेमें लिख ही चुके हैं जिसमें हमें ऐसा लगा कि एक निर्दोष भारतीय व्यापारीके साथ घोर अन्याय किया गया है।[1] अपील अदालतने अपने फैसलेके समर्थनमें जिस मैकिलिकनके मामलेका उल्लेख किया था, उसकी बहुत कुछ जानकारी अब हमें प्राप्त हो गई है। हमारे सामने उस मुकदमेके मूल कागजातकी सही नकल मौजूद है। हमें उससे पता लगता है कि मैकिलिकनके परवानेको नया करनेसे इनकार करनेके कारण बहुत मजबूत थे और वे इस प्रकार हैं:

> १. क्योंकि प्रार्थीकी जमीनपर बने हुए एक घरमें परवानेके बिना शराब बेचते हुए एक वतनी मर्द और औरत पकड़े गये थे और १९ अक्टूबर १९०३ को दण्डित किये गये थे — जब कि उसका परवाना सिर्फ फुटकर चीजोंकी दूकानका ही था। उसमें बियरके कमसे-कम तीन बड़े-बड़े पीपे पाये गये थे। इस गैर-कानूनी व्यापारकी जानकारी प्रार्थीको अवश्य रही होगी।
>
> २ क्योंकि उसी जगह प्रार्थीको ७ नवम्बर १९०३ को अफीम बेचनेके अपराधमें १५ जनवरी, १९०४ को सजा दी गई थी। यह व्यापार कुछ समयसे चल रहा था जिससे इलैंड्सलागटेकी खानके भारतीयोंकी मानसिक शक्तिका भयानक ह्रास हुआ था और उन्हें दूसरे नुकसान भी पहुँचे थे। इसके अलावा खान मैनेजरको तबतक लगातार चिन्ता बनी रही जबतक उसको अपने नौकरोंके साथकी गई बुराईका स्रोत न मिल गया।

इस प्रकार परवानेका उक्त प्रार्थी अवैध ढंगसे बेची जानेवाली शराबसे वतनियोंको प्रत्यक्ष रूपसे विष देनेका और भारतीय खनिकोंको कानूनके विरुद्ध अफीम बेचकर बदहवास बनानेका दोषी था। इनमें से हर मामलेमें दोष स्वयं उक्त प्रार्थीका था। इस मामलेसे भारतीय मामलेकी तुलना करना और भारतीयको परवानेसे वञ्चित करनेके लिए इसको नजीरके रूपमें पेश करना शब्द-व्यभिचार मात्र है। निकायके लिए यह ज्यादा सम्मान और ईमानदारीकी बात होती कि वह असली कारण — रंगभेदको — अपनी अस्वीकृतिका आधार बनाता।

भारतीय आवेदकने अपने प्रार्थनापत्रके पक्षमें जो प्रमाणपत्र पेश किये थे, उनमें से कुछ हमारे पास भी भेजे गये हैं। डर्बनके एक प्रमुख व्यापारीने परवाना-अधिकारीको लिखा है: "हम उनको एक अत्यन्त सम्माननीय, विश्वस्त और सरल भारतीय और जिलेमें परवाना देने योग्य व्यक्ति समझते हैं।" इसलिए जहाँ मैकिलिकन अपने चरित्रके कारण निश्चित रूपसे व्यापारी परवानेके अयोग्य था, वहाँ भारतीयका चरित्र निर्दोष है। लेडीस्मिथके उस गरीब भारतीयपर जो कुछ बीती है वह कदाचित् नेटालमें भारतीयोंके लिए कोई असाधारण अनुभव नहीं है। इसलिए हमें विश्वास है कि नेटाल भारतीय कांग्रेस, जो भारतीय समाजकी हित-रक्षाके निमित्त सदैव सजग रहती है, इस मामलेको सरकारके ध्यानमें लाने और न्याय प्राप्त करानेसे न चूकेगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१–४–१९०६

१. देखिए "एक मुश्किल मामला", पृष्ठ २८७–८।

३००. ट्रान्सवालके अनुमतिपत्र

हम श्री मंगाके मामलेकी ओर इन स्तम्भोंमें ध्यान आकर्षित कर चुके हैं।[1] आज हम उसीपर अपने सहयोगी 'रैंड डेली मेल' का अभिमत अन्यत्र प्रकाशित कर रहे हैं। इस सम्बन्धमें हमारे सहयोगीने जो बातें कहीं है वे कठोर तो हैं, पर बिलकुल उचित हैं। हम लेखकको अपना विश्वास साहसके साथ प्रकट करनेपर बधाई देते हैं।

हमारे जोहानिसबर्गके संवाददाताने अपनी "टिप्पणियों" में एक दूसरे मामलेका जिक्र किया है। उससे ऐसी स्थितिपर प्रकाश पड़ता है जो बिगड़ती ही गई तो ब्रिटिश भारतीय शरणार्थियोंको भी अपनी शिकायत दूर कराना असम्भव-सा हो जायेगा। हमारे संवाददाताने एक प्रतिष्ठित ब्रिटिश भारतीय शरणार्थीके मामलेका जिक्र किया है जिसको अनुमतिपत्र नहीं दिया गया — यद्यपि प्रार्थीने अपना पूर्व निवास साबित करनेके लिए इज्जतदार यूरोपीयोंकी गवाही पेश की थी। जहाँतक हम जानते हैं, एक शरणार्थीको, पुनः प्रवेशकी अनुमति देनेसे साफ इनकार करनेका यह पहला ही मामला है। इससे भी अधिक गम्भीर बात तो यह है कि जहाँतक भारतीयोंका सवाल है, अनुमतिपत्र अध्यादेशके मामलेमें, पिछले कुछ दिनोंसे गोपनीयताका रूसी तरीका अपनाया जा रहा है। हमारे संवाददाताका कहना है कि श्री मंगाके मामलेकी तरह इस मामलेमें भी, अनुमतिपत्र-अधिकारीने अपनी अस्वीकृतिके कारण बतानेसे इनकार किया है। फलतः भविष्यमें ब्रिटिश भारतीयोंको कारण सूचित किये बिना ही ट्रान्सवालसे बाहर रखा जायेगा।

और यह सब यहीं खत्म नहीं होता। गुजराती स्तम्भोंमें एक संवाददाताने हमारा ध्यान एक ऐसे मामलेकी ओर आकर्षित किया है जिसमें फोक्सरस्टमें एक छः सालका बच्चा अपनी मातासे अलग कर दिया गया, क्योंकि बच्चेका कोई अनुमतिपत्र नहीं था। हमें ज्ञात हुआ कि अभागे पिताके पंजीकरण पत्रकमें उसके दो पुत्र होनेका उल्लेख था।

हम लॉर्ड सेल्बोर्नका ध्यान भारतीयोंकी गम्भीर स्थितिकी ओर आकर्षित करते हैं। परमश्रेष्ठके शब्दोंको कार्यरूपमें परिणत करनेका समय आ पहुँचा है। [बुद्धिसंगत पूर्वग्रहोंका आदर किया जाये,] यह हमारी इच्छा है; और इसमें हम किसीसे पीछे नहीं हैं। इसलिए हमने उन एशियाइयोंका आव्रजन नियमित करना वांछनीय माना है जो पहले ट्रान्सवालमें नहीं रहे हैं। लेकिन, प्रिटोरियाके अधिकारी एशियाई-विरोधी दलको खुश करनेके लिए जिस तरह भटक रहे हैं, उसका अर्थ है एक बिलकुल ही भिन्न योजना। और यदि वे समझते हैं कि [भारतीय अपनी शिकायत दूर करानेका गम्भीर प्रयत्न किये बिना ही अपने निहित अधिकार पैरों तले कुचल जाने देंगे, तो वे बड़ी भूल करते हैं।]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१-४-१९०६

१. देखिए "ट्रान्सवाल अनुमतिपत्र अध्यादेश", पृष्ठ २८८-९।

३०१. डर्बन नगर-परिषद और भारतीय

'नेटाल मर्क्युरी' लिखता है, डर्बन नगर-परिषदकी परवाना-समितिने "इच्छा प्रकट की है कि परवाना-अधिकारी फेरीके नये परवाने न दें और फेरीके वर्तमान परवानोंमें भी जितनी कमी करना सम्भव हो, करे; क्योंकि इस वर्गके व्यापारी दूकानदारोंके वैध व्यापारमें हस्तक्षेप करते हैं।" परवाना-समितिकी यह सिफारिश विक्रेता-परवाना अधिनियमके अनुसार किये गये निर्णयोंका परिणाम है। दादा उस्मानके मामलेके फैसले[1] तथा उक्त कानूनके अन्तर्गत दूसरे मामलोंमें जो फैसले हुए हैं उनके कारण नगर-परिषदें अपनी दमन-नीतिमें साहसी बन गई हैं। पहले वे परवाना-अधिकारियोंको गोलमोल सुझाव दिया करती थी; अब खुल्लम-खुल्ला हिदायतें देने लगी हैं। इसलिए यह परवानोंके प्रार्थनापत्रोंपर नगर-परिषदों द्वारा अपने अधिकारियोंको आदेश देने और फिर उन अधिकारियोंके उस निर्णयपर, जो असलमें उन्हींका निर्णय है, स्वयं अपील सुननेका प्रश्न है। इस तरह वे परवाना अधिनियमको एक कोरा मजाक बना देंगी। फिर, जिन हिदायतोंका हमने ऊपर जिक्र किया है उनसे साफ जाहिर होता है कि विक्रेता-परवाना अधिनियमपर अमल करते समय सामान्य समाजका ध्यान न रखकर केवल दूकानदारोंका ध्यान रखा जाता है। चूँकि उनके व्यापारमें बाधा पड़नेकी सम्भावना है, इसलिए फेरीके नये परवानोंको जारी नहीं करना है और जो वर्तमान फेरीके परवाने हैं उनमें कमी करना है। फेरीवाले एक आवश्यकताकी पूर्ति करते हैं और उन गृहस्थोंके लिए, जिन्हें अपनी सभी वांछित वस्तुएँ अपने दरवाजेपर मिल जाती हैं, एक वरदान हैं — यह सब-कुछ नगर-परिषदोंके लिए तबतक अर्थहीन है जबतक कि एक विशेषाधिकार सम्पन्न वर्गका संवर्धन किया जा सकता है। हमारे तर्कपर एतराज किया जा सकता है कि परवाना-समितिके निर्देश सर्व-सामान्य हैं; पर यही बात हमारे तर्कके विषयमें भी कही जा सकती है। वह भारतीय और यूरोपीय — दोनों तरहके फेरीवालोंपर लागू होता है। परन्तु वास्तवमें ऐसी नीतिका असर मुख्यतया भारतीयोंको ही सहना होगा; क्योंकि फेरी लगाना उनकी अपनी विशेषता है और डर्बनमें ज्यादातर फेरीवाले भारतीय हैं। फिर भी कानूनको लागू करनेमें हम इन ज्यादतियोंका स्वागत करते हैं; क्योंकि वे खुद ही अपने पीछे अपना सर्वनाश लायेंगी।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१–४–१९०६

१. देखिए "प्रार्थनापत्र : लॉर्ड एलगिनकी सेवामें", पृष्ठ २५६–८।

३०२. म० द० आ० रेल-प्रणालीमें[1] यात्राकी कठिनाइयाँ

क्लार्क्संडॉर्पके एक संवाददाताने हमारे गुजराती स्तम्भोंमें उन कठिनाइयोंका जिक्र किया है जो क्लार्क्संडॉर्प और जोहानिसबर्गके बीच चलनेवाली रेलगाड़ियोंमें यात्रा करते समय भारतीय यात्रियोंको होती हैं। हमारे संवाददाताकी शिकायत है कि भारतीय मुसाफिरोंको, फिर चाहे वे किसी भी श्रेणीके क्यों न हों, रेलगाड़ियोंमें तबतक जगह नहीं दी जाती जबतक उनमें "रंगदार" या "सुरक्षित" तख्तियाँ लगे डिब्बे जुड़े न हों। हमारा संवाददाता आगे कहता है कि अधिकारियोंकी कार्रवाईके परिणामस्वरूप बहुत कम भारतीय मुसाफिर कुछ आरामके साथ यात्रा करते हैं। सब गाड़ियोंमें तख्तियाँ नहीं लगी होतीं, इसलिए अगर किसी भारतीय मुसाफिरकी कोई खास गाड़ी निकल जाती है और वह दूसरी गाड़ीसे, जिसमें सुरक्षित स्थान नहीं हैं, यात्रा करना चाहता है तो वह प्राय: ऐसा करनेमें असमर्थ रहता है। हमारे संवाददाताका कथन है कि ऐसी गाड़ीमें यात्रा एक इसी शर्तपर की जा सकती है कि मुसाफिर पूरे समय बराबर गलियारेमें खड़ा रहे। यह मामूली बात नहीं है। क्योंकि यात्रामें आठ घंटेसे ऊपर लगते हैं। अगर हमारे संवाददाताकी शिकायत सच्ची है तो यह स्पष्ट है कि रंगदार मुसाफिरोंके आरामकी तरफ काफी ध्यान नहीं दिया जाता।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१-४-१९०६

३०३. वीसूवियसका ज्वालामुखी

इटलीमें वीसूवियसका जो ज्वालामुखी सुलग रहा है, वह हमें कुदरतकी ताकतका भान कराता है, और यह सूचित करता है कि हमें घड़ीभर भी अपनी जिन्दगीका भरोसा नहीं करना चाहिए। फ्रान्सकी कूरिअर खानकी हालकी दुर्घटना भी, जिसमें अनेक व्यक्ति जिन्दा दफन हो गये, हमें इसी सत्यका साक्षात्कार कराती है। लेकिन खानकी दुर्घटनाके बारेमें लोग इंजीनियरोंका दोष निकाल सकते हैं। और यह सोचकर अपनेको बहला सकते हैं कि अमुक सावधानी रखी जाती, तो जो लोग दबकर मरे, वे न मर पाते। ज्वालामुखीके विषयमें कोई ऐसी बात नहीं कह सकते। किन्तु इस समय इस विषयमें हम अधिक कहना नहीं चाहते। भारतसे दूर आये हुए लोगोंको ऐसे विचारोंका पूरा भान हो सकेगा, यह मानना तो बेकार है। लेकिन इस ज्वालामुखीके सुलगते समय एक वैज्ञानिकने जिस बहादुरीका परिचय दिया, उसकी ओर हम पाठकोंका ध्यान खींचना चाहते हैं। ज्वालामुखीके पास ही हवाकी गतिविधि मापनेका एक केन्द्र है। प्रोफेसर मेटयूसी वहाँ रहते हैं। वह जगह बड़े खतरेकी है। पर्वतसे निकलनेवाला लावा उस जगहको किसी भी समय ज़मींदोज़ कर सकता है। फिर भी प्रोफेसर मेटयूसीने अपनी जगह नहीं छोड़ी और अपने स्थानपर बैठे-बैठे वे ज्वालामुखीके समाचार नेपल्स भेजते रहते हैं। इस प्रकार खतरेकी स्थितिमें बैठे रहना कोई मामूली बहादुरी नहीं है। वहाँ

१. सेंट्रल साउथ आफ्रिकन रेल्वे।

रहनेके लिए कोई उन्हें विवश नही कर रहा है। अगर अपने जीवनकी रक्षाके लिए हजारों लोगोंकी तरह वे भी अपनी जगह छोड़कर भाग खड़े हों, तो कोई उन्हे कुछ कहनेवाला नही है। फिर भी उन्होंने वहाँसे हटनेसे इनकार कर दिया है। जब दक्षिण आफ्रिकामें अथवा भारतमें ऐसा करनेवाले भारतीय बड़ी संख्यामें पैदा होंगे, तब हमारे कष्टोंकी अवधि बहुत लम्बी नही रहेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१–४–१९०६

३०४. विलायत जानेवाला भारतीय शिष्टमण्डल

नेटाल भारतीय कांग्रेस द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव हम पिछले हफ्ते छाप चुके हैं। कांग्रेस भवन खचाखच भरा था और लोग बड़ा उत्साह दिखा रहे थे। कांग्रेसके कार्यकर्ताओंके लिए यह गौरवकी बात है। आजकल नया उदारदलीय (लिबरल) मन्त्रिमण्डल शासन कर रहा है। अपने दुःखकी कहानी सुनानेके लिए उसके पास जाना बहुत अच्छी बात है। लेकिन हमें लगता है कि यह शिष्टमण्डल, जो आयोग यहाँ आनेवाला है, उसके आ जानेके बाद जा सकता है। दूसरे, अगर शिष्टमण्डल जाता है, तो हम जानते हैं कि कमसे-कम तीन व्यक्तियोंका जाना जरूरी है। इससे वजन पड़ेगा और मन्त्रिमण्डल ठीकसे बात सुनेगा। ऐसे काम बिना पैसेके नही हो सकते। इसमें कुछ लोगोकी मदद और काफी पैसा खर्च करनेकी जरूरत है। इस सारे कामके लिए समूचे दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय मदद करें तभी कुछ हो सकता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१–४–१९०६

३०५. जहाजसे नेटालमें उतरनेवाले भारतीयोंको सूचना

हम प्राय. देखते है कि हकदार भारतीयोंको जहाजसे डर्बन बन्दरगाहपर उतरनेमें बड़ी कठिनाईका सामना करना पड़ता है। इस सम्बन्धकी कुछ कठिनाइयाँ लोग आसानीसे दूर कर सकें, इस विचारसे हम नीचे लिखी सिफारिशें करते है:

कानूनन जो मनुष्य नेटालका निवासी है, उसकी स्त्रीको आनेमें जरा भी अड़चन नही होनी चाहिए। लेकिन प्रवासी-अधिकारी किसी स्त्रीको तभी उतरने देता है, जब वह उस निवासीके साथ अपने विवाहका कानूनी सबूत पेश कर दे। इसलिए जिसकी स्त्री आनेवाली हो, उसे पहलेसे हलफनामा लिखकर उसपर प्रवासी-अधिकारीके हस्ताक्षर प्राप्त करके तैयार रखना चाहिए। ऐसा करनेसे स्त्रीको जहाजके आते ही उतारा जा सकेगा।

यही कार्रवाई बच्चोंके लिए भी करनी चाहिए। हलफनामा दाखिल करनेवाले पिताको याद रखना चाहिए कि लड़के या लड़कीकी उमर सोलह सालके अंदर होनी चाहिए। लड़केकी अथवा लड़कीकी उमर इतनी है, इस आशयका हलफनामा दाखिल करा लेना ही काफी नही माना जाता। क्योंकि उस उमरको मानना या न मानना प्रवासी-अधिकारीपर निर्भर करता है। अतएव अगर दिखनेमें ही लड़के या लड़कीकी उम्र १६ सालसे ऊपरकी लगती हो, तो हलफ-

नामा करानेके बाद भी अड़चन उपस्थित हो सकती है। और अगर दोमें से एक भी विवाहित हो, तो १६ सालसे कम उमर होनेपर भी माता-पिताके हकके आधारपर वह आनेका हकदार नही बनता।

नेटालका निवासी खुद आना चाहे और उसके पास अधिवासी प्रमाणपत्र न हो, तो उसे भी तकलीफ उठानी पड़ती है। इसके लिए अधिकारीके सामने पहलेसे ही पक्के सबूत पेश करने पड़ते है। तिसपर भी ऐसा मनुष्य तुरन्त उतर सके, इसका तो एक यही उपाय है कि वह जमानतके १०० पौंड जमा करके उतरे, और बादमें सबूत पेश करे; अथवा १० पौंडका अभ्यागत पास लेकर उतरे और बादमें सबूत दे। १०० पौंड जमा करानेपर सरकारको एक पौंड शुल्क नही देना पड़ता। लेकिन १० पौंडका पास लेनेके लिए नये नियमके अनुसार एक पौंडका शुल्क देना जरूरी है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१–४–१९०६

३०६. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

जोहानिसबर्ग
अप्रैल २१, १९०६

मलायी बस्ती सम्बन्धी शिष्टमण्डल

मैं पिछले हफ्ते कह चुका हूँ कि मलायी बस्तीके बारेमें सर रिचर्ड सॉलोमनके[1] पास जो शिष्टमण्डल गया था, उसकी जानकारी दूँगा; सो अब दे रहा हूँ।

श्री हाजी वजीरअली सर रिचर्डसे मिले और उन्होंने नीचे लिखी हकीकत पेश की:

बोअर सरकारने मलायी लोगोंको जमीन दी, तब उन्होंने उसे सुधार कर तैयार किया; और जब उन्होंने घर बनानेके लिए अर्जी दी, तब बोअर सरकारने उन्हें बिना किसी शर्तके घर बनाने दिये। नतीजा यह हुआ कि मलायी बस्तीमें कई अच्छे और पक्के घर बन गये है। साथ ही, वहाँके निवासियोंने जमीन सुधारी है, और आसपास बस्ती बढ़ी है। जब मलायी बस्तीका स्थान निश्चित हुआ था उस समय उसके आस-पास गोरे बढ़ रहे थे। किन्तु उस समय उन्होंने कोई आपत्ति नहीं की। यद्यपि बस्तीके निवासियोंने अपनी जमीनोंको कई बरस पहले दुरुस्त कर लिया था, फिर भी उनको कोई पट्टा नहीं दिया गया है। पिछले सितम्बर महीनेमें इस आशयका एक कानून पास हुआ है कि बस्तीका स्वामित्व जोहानिसबर्गकी नगर-पालिकाको सौंप दिया जाये। दूसरी तरफ, सरकार फ्रीडडॉर्पमें रहनेवाले डच लोगोंको निश्चित अधिकार देना चाहती है। सम्भव है कि नगरपालिकाको मलायी बस्ती सौंपनेका परिणाम बस्तीके निवासियोंके हकमें बहुत बुरा ठहरे।

जब डच लोगोंको हक दिये जाते है, तब मलायी बस्तीके निवासियोंको, जो हमेशा वफादार रहे है, ये हक मिलने ही चाहिए।

अगर मलायी बस्तीके लोगोंको स्थायी पट्टा दिया जाये, तो अनुमान किया जा सकता है कि वे जमीनको और भी सुधारेंगे और उसपर अधिक सुन्दर मकान बनायेंगे।

१. ट्रान्सवालके स्थानापन्न लेफ्टिनेंट गवर्नर।

इस हकीकतको सुनकर सर रिचर्डने वचन दिया कि वे इस मामलेकी ठीक-ठीक जाँच करायेंगे, और बादमें जवाब भेजेंगे। उन्होंने सद्भावना प्रकट की है, पर मालूम होता है कि आजकल सरकारके पास सद्भावनाकी विपुलता हो गई है; क्योंकि श्री विन्स्टन चर्चिलने भी भावना तो अच्छी ही प्रकट की है, किन्तु वे महानुभाव क्या करेंगे, सो तो वे ही जानें।

अनुमतिपत्रों सम्बन्धी हालत जैसी थी वैसी ही है। यहाँके अखबार 'रैंड डेली मेल' में श्री मंगाके मुकदमेके बारेमें बहुत कडी टीका छपी है। उसने दो अग्रलेख लिखे हैं। माना जा सकता है कि अनुमतिपत्र-कार्यालयपर उसका असर धीरे-धीरे होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-४-१९०६

३०७. 'इंडियन ओपिनियन' के बारेमें

इंडियन ओपिनियन के भविष्यके बारेमें विचार करनेके लिए भारतीयोंकी बैठक सोमवार २३ अप्रैल १९०६ को डर्बनमें श्री उमर हाजी आमद झवेरीके घर हुई थी। श्री अब्दुल्ला हाजी आमद झवेरी सभापति थे। *इंडियन ओपिनियन* की वर्तमान स्थितिके सम्बन्धमें जानकारी देनेकी विनती की जानेपर गांधीजीने यह बताया था :

डर्बन
अप्रैल २३, १९०६

'ओपिनियन' कुछ वर्षोंसे चल रहा है। इसके संस्थापक श्री मदनजीत हैं। उन्होंने इस पत्रके लिए मेहनत की, और अपना सब-कुछ इसमें लगा दिया। पत्र शुरू करते समय यह खयाल नही हो पाया था कि इसमे पैसेकी जिम्मेदारी कितनी होगी। आगे चलनेपर यह मालूम हुआ कि इसे चलानेके लिए बहुत पैसेकी जरूरत है। जोहानिसबर्ग-निगम (कॉरपोरेशन) के खिलाफ लडे गये मुकदमेके मेरे पास १,६०० पौंड आये थे। वह रकम लगा देनेपर भी कमी पूरी नही हुई।[1] हर महीने ७५ पौंडका नुकसान होने लगा। उसे पूरा करनेकी मेरी ताकत नही थी। इसलिए पत्रको दूसरी तरहसे चलानेके बारेमें सोचना पडा। यह तय हुआ कि छापाखाना बाहर ले जाया जाये[2] और कार्यकर्ता बहुत ही गरीबीसे रहे। इस निर्णयके समय श्री मदनजीतको जवाबदेहीसे मुक्त कर दिया गया। उन्हे यह डर था कि ऐसा करनेसे पत्र नही चल सकेगा, इसलिए उन्होंने उससे हाथ हटा लिया। अब जिम्मेदारी सिर्फ मेरी रही। श्री मदनजीतका नाम जैसा-का-तैसा चला आ रहा है, क्योंकि वे स्वयं स्वदेशाभिमानी हैं और उन्होंने निःस्वार्थ भावसे पत्र शुरू किया है। वे भारतमें अब भी देश-सेवाका कार्य करते रहते हैं।

ऊपर जैसा कहा गया है उस प्रकार यह अखबार कुछ समयसे चल रहा है। लेकिन वैसा करनेमें भी, मैं देखता हूँ, ऐसी स्थिति आ गई है कि यदि सँभाला न गया तो उसमें नुकसान होगा, और जो लोग ३ पौंडमें अपना गुजर चला रहे हैं उन्हें उतनी रकम देनेकी भी व्यवस्था न रहेगी। मैं आया तब ग्राहक संख्या ८८७ थी और विज्ञापन घट गये थे। मैं सोचता हूँ कि चाहे जिस तरह भी हो, जबतक छापाखानेके आदमी टिके रहेंगे तबतक मैं अंग्रेजी भाग

१. देखिए "आत्मकथा", भाग ४, अध्याय १३।

२. छापाखाना दिसम्बर १९०४ में फीनिक्स ले जाया गया।

तो निकालता ही रहूँगा। लेकिन यह मैंने कभी नहीं माना कि भारतीय समाजकी ओरसे जरा भी प्रोत्साहन नहीं मिलेगा। इसलिए मैं अब भी आशा लिए हूँ कि पत्रमें आवश्यक सहायता मिलेगी।

पत्रके मुख्य तीन हेतु हैं। एक तो हमारे दुःख शासनकर्त्ताओंके सामने, गोरोंके सामने, इंग्लैंडमें, दक्षिण आफ्रिकामें और भारतमें जाहिर करना। दूसरा यह कि हममें जो भी दोष हों उन्हें बताना और उन्हें दूर करनेके लिए लोगोंसे कहना। तीसरा, और कहें तो सबसे बड़ा, उद्देश्य हिन्दू-मुसलमानोंके बीचका भेद तोड़ना और साथ ही गुजराती, तमिल, कलकत्तेवाले जैसी खाइयोंको पाटना। भारतमें राज्यकर्त्ताओंकी विचारधारा दूसरे प्रकारकी मालूम होती है। वहाँ यह नहीं दीखता कि वे हममें एकता पैदा होने देना चाहते हैं। दक्षिण आफ्रिकामें हम सब थोड़े-थोड़े हैं, हमपर एक-सी मुसीबतें हैं, कोई-कोई बन्धन भी यहाँ ढीले हो गये हैं, इसलिए हम एक-दिल होनेका प्रयोग यहाँ बहुत ही आसानीसे कर सकते हैं। इन विचारोंको प्रजामें दृढ़ करना भी इस पत्रका हेतु है। इस उद्देश्यको सफल करनेके लिए सभी समझदार भारतीयोंकी मददकी आवश्यकता है। मतलब यह कि यदि इस पत्रको आवश्यक प्रोत्साहन मिले तो मैं देखता हूँ कि इससे बहुत-से काम हो सकते हैं। मुझे लगता है कि सभी पढ़े-लिखे और सामर्थ्यवाले लोगोंको ग्राहक बनना चाहिए। दक्षिण आफ्रिकामें कमसे-कम २०,००० गुजराती हैं। उनमें से यदि २५ प्रतिशत ग्राहक बन जायें तो कोई अनोखी बात न होगी। पढ़े-लिखे लोग स्वयं ग्राहक बन जायें, इतना ही काफी नहीं है; उन्हें पत्रके उद्देश्योंको सफल बनानेके लिए पूरी कमर कसनी चाहिए। वे दूसरोंको समझा सकते हैं। पत्र शिक्षाका बड़ा साधन है। यह समझना बहुत जरूरी है कि यह अखबार मेरा नहीं, बल्कि हरएक भारतीय भाईका है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-४-१९०६

३०८. मुस्लिम युवक मण्डलसे

कांग्रेस हॉलमें श्री पीरन मुहम्मदकी अध्यक्षतामें डर्बनके मुस्लिम युवक मण्डल (यंग मैन्स मोहम्मडन असोसिएशन) की बैठक हुई थी। उसमें श्री एम० सी० आंगलियाने मण्डलके सम्बन्धमें कुछ सुझाव दिये थे और उनपर गांधीजीकी राय माँगी थी। साथ ही यह कहा था कि मण्डलके लिए विधान बनानेका काम गांधीजीको सौंपा जाये। इस प्रसंगपर बोलते हुए गांधीजीने कहा:

अप्रैल २४, १९०६

इस मण्डलका उद्देश्य यदि शिक्षा-प्रचार, नीति-प्रचार और आन्तरिक सुधार करना हो तब तो इसका मुस्लिम युवक मण्डल नाम ठीक है। ईसाई युवक मण्डल (यंग मैन्स क्रिश्चियन असोसिएशन) जगत-प्रसिद्ध है। उसे बहुतेरे समझदार लोगोंकी ओरसे प्रोत्साहन मिलता है। यह मण्डल भी वैसा ही काम कर सकता है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-४-१९०६

३०९. भाषण : कांग्रेसकी सभामें

नेटाल भारतीय कांग्रेसकी एक सभा कांग्रेस-भवनमें यह विचार करनेके लिए की गई कि ज़ूलू लोगोंने बम्बाटाके नेतृत्वमें जो विद्रोह किया है उसके सम्बन्धमें एक आहत-सहायक दलकी सेवाएँ देनेका प्रस्ताव सरकारके सम्मुख रखना उचित है या नहीं। कांग्रेस अध्यक्ष श्री दाऊद मुहम्मद सभापति थे। गांधीजीका यह भाषण सभाकी रिपोर्टसे लिया गया है। इस सभामें अन्य लोगोंने भी भाषण दिये थे।

डर्बन
अप्रैल २४, १९०६

श्री गांधीने बोअर युद्धमें भारतीयोके योगदानका उल्लेख किया। उन्होने कहा कि यह सभा भारतीयोके स्वयसेवक भर्ती होनेके आम सवालके सम्बन्धमें नही की गई है। उनका खयाल है कि भारतीय समाजके रूपमे जो रक्षात्मक शक्ति उपलब्ध है उसका उपयोग न करके सरकार उपनिवेशके प्रति अपने स्पष्ट कर्तव्यकी उपेक्षा कर रही है। श्री वॉटने कहा है कि वे भारतीयोसे अपना बचाव कराना नही चाहते। उन्होने साथ ही यह भी कहा है कि वे भारतीयोका उपयोग खाइयाँ खोदनेके लिए करेंगे। इस सम्बन्धमे स्वर्गीय श्री एस्कम्बने हमें आश्वासन दिया था कि खाइयाँ खोदना और घायलोकी शुश्रूषा करना वैसे ही सम्मानप्रद और आवश्यक कार्य है जैसा बन्दूक उठाना। किन्तु आज हमे श्री वॉटके विचारोके सम्बन्धमे कुछ नही कहना है। हमें तो यही विचार करना है कि हमको वर्तमान सकटमें सरकारके सम्मुख अपनी सहायता देनेका प्रस्ताव रखना है या नही, भले ही वह सहायता कितनी ही तुच्छ क्यो न हो। यह सच है कि हमारे ऊपर निर्योग्यताएँ लगी हुई है और हम परेशान हैं। वतनी लोगोके विद्रोहके सम्बन्धमे भी दो राये हो सकती है। किन्तु हमारा कर्तव्य है कि हम ऐसे किसी खयालसे प्रभावित न हो। [यदि हम नागरिकताके अधिकारोका दावा करते हैं तो हम उन अधिकारोके साथ जुड़ी हुई जिम्मेदारियोमे हिस्सा लेनेके लिए बाध्य हैं।] इसलिए उपनिवेशके सामने मौजूद खतरेको दूर करनेमे मदद देना हमारा कर्त्तव्य है। भारतीयोने बोअर युद्धमे अच्छा काम किया था। जनरल बुलरने उसकी सराहना की थी। वक्ताने सलाह दी कि भारतीयोको इस बार भी सरकारके सम्मुख वैसा ही प्रस्ताव रखना चाहिए।

एडवोकेट श्री गैब्रियलने तब निम्न प्रस्ताव पेश किया :

नेटाल भारतीय कांग्रेसके तत्वावधानमें की गई ब्रिटिश भारतीयोंकी यह सभा इसके द्वारा सभापतिको अधिकार देती है कि वे वतनियोंके विद्रोहके सम्बन्धमें सरकारको सहायताका वैसा ही प्रस्ताव भेजें जैसा बोअर युद्धमें भेजा गया था।

श्री लाजरस गैब्रियलने पूछा कि जो लोग प्रस्तावके पक्षमे मत देंगे क्या वे अपनी सेवाएँ देनेके लिए बाध्य हैं।

श्री गांधीने कहा कि प्रस्तावका अर्थ यह नही है। किन्तु उसके पक्षमे मत देनेवाला प्रत्येक सदस्य उस कदमको सफल बनानेमे सहायता देनेके लिए बँधा है। दलको बनाना वर्तमान सदस्योका काम है, बशर्ते कि सरकार इस प्रस्तावको स्वीकार करनेकी कृपा करे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-४-१९०६

३१०. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

डर्बन
अप्रैल २५, १९०६

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

महोदय,

इस महीनेकी २४ तारीखको नेटाल भारतीय कांग्रेसके तत्वावधानमें ग्रे स्ट्रीटके कांग्रेस भवनमें ब्रिटिश भारतीय संघकी एक सभा हुई थी। उसमें ढाई सौसे अधिक भारतीय उपस्थित थे। उक्त सभामें बैरिस्टर श्री बर्नार्ड गैब्रियल द्वारा प्रस्तुत और बी० इब्राहीम इस्माइल कम्पनीके श्री इस्माइल कोरा द्वारा अनुमोदित संलग्न प्रस्ताव सर्वसम्मतिसे पास किया गया।

मैं सरकारका ध्यान इस ओर आदरपूर्वक आकर्षित करता हूँ कि प्रस्तावमें उल्लिखित अवसरपर बहुत-से ब्रिटिश भारतीयोंने अपनी सेवाएँ देनेका प्रस्ताव किया था और आहत-सहायक दलोके नायकोके रूपमें उनकी सेवाएँ स्वीकार भी की गई थी। नेटाल भारतीय कांग्रेसके विचारसे, अगर आवश्यक हो तो, वर्तमान संकटके लिए भी, इसी तरहका सहायक दल संगठित करना सम्भव है। कांग्रेसका विश्वास है कि सरकार यह प्रस्ताव स्वीकार करनेकी कृपा करेगी। यह निवेदन भी कर दूँ कि सभाके अन्तमें कोई चालीस ब्रिटिश भारतीयोंने आहत-सहायता अथवा, जिनके लिए उन्हें उपयुक्त समझा जाये, ऐसे अन्य कार्योंके लिए अपने नाम दिये हैं।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
दाऊद मुहम्मद

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–४–१९०६

३११. 'नेटाल मर्क्युरी'को भेंट

नेटाल भारतीय कांग्रेस द्वारा नियुक्त एक समितिने यह निश्चय किया था कि साम्राज्य सरकारके सम्मुख भारतीयोंकी शिकायतें पेश करनेके लिए एक शिष्टमण्डल भेजा जाये। इस शिष्टमण्डलमें गांधीजी, इस्माइल कोरा और ट्रान्सवाल एवं केपके प्रतिनिधि शामिल किये जानेवाले थे। नेटाल मर्क्युरी के एक संवाददाताने गांधीजीसे भेंट की थी। निम्नलिखित उद्धरण उसकी रिपोर्टसे दिया जा रहा है:

[अप्रैल २६, १९०६ के पूर्व]

इस विषयमें भेंट करनेपर श्री गांधीने कहा कि शिष्टमण्डल सम्भवतः अगले दो महीनेके भीतर रवाना हो जायेगा। ट्रान्सवाल और केपने अभी उत्तर नहीं दिया है। उनका इरादा यह है कि वे समस्त दक्षिण आफ्रिकाके ब्रिटिश भारतीयोंकी शिकायतें ब्रिटिश सरकारके सम्मुख रखें और उनका उचित निराकरण करवाएँ। वे उन निर्योग्यताओंको भी पेश करेंगे जो ब्रिटिश

भारतीयोंपर लगी हुई हैं। कोई औपचारिक कार्यक्रम नही बनाया गया है, किन्तु वे यहाँ तवतक रहेंगे जवतक वे आयोगकी[1] गतिविधियोंको देख नही लेते। यह आयोग इसी ७ तारीखको रवाना हुआ है। यदि आवश्यक होगा तो वे स्वयं आयोगके सम्मुख पेश होंगे।

[अंग्रेजीसे]

नेटाल मर्क्युरी, २६–४–१९०६

३१२. एक भारतीय प्रस्ताव

हाल ही मे नेटाल भारतीय कांग्रेसके तत्त्वावधानमे जो सभा हुई थी उसको वतनियोके विद्रोहके सिलसिलेमे भारतीयोंकी सेवाएँ समर्पित करनेका प्रस्ताव[2] पास करनेपर बधाई दी जानी चाहिए। स्थानीय अखबारोमे अनेक संवाददाताओंने यह चिन्ता व्यक्त की थी कि यदि विद्रोह फैला तो उनको स्वय अपनी और भारतीयो दोनोकी रक्षाका भार वहन करना होगा। यह प्रस्ताव उसका पूरा जवाव है। पिछले मंगलवारको कांग्रेस हालमे जो भारतीय इकट्ठे हुए थे उन्होने प्रकट कर दिया है कि उनमे विवेक प्रचुर मात्रामे मौजूद है और जहाँ समस्त समाजकी, जिसके वे भी एक अग हैं, सामूहिक भलाईका सवाल उपस्थित हो, वहाँ वे अपनी निजी शिकायतोको भुला सकते हैं। हमें विश्वास है कि सरकार उनकी सेवाएँ स्वीकार करनेमें आनाकानी न करेगी और भारतीय समाजको एक बार फिर अपनी योग्यता सिद्ध करनेका मौका देगी।

परन्तु यह प्रस्ताव स्वीकार हो या न हो, इससे इस बातका महत्व बहुत स्पष्ट हो जाता है कि भारतीयोंको पहलेसे उचित प्रशिक्षण देकर उनकी उपनिवेशके बचावमें उचित भाग लेनेकी इच्छाका सदुपयोग किया जाना चाहिए। हम कई बार कह चुके हैं कि अतिरिक्त रक्षा कार्योंके लिए भारतीय समाज जो मूल्यवान सहायता दे सकता है उसका उपयोग न करना अत्यन्त मूर्खताकी बात है। अगर वर्तमान भारतीय आबादीको उपनिवेशसे निकालना सम्भव नही है तो उसको उपयुक्त सैनिक शिक्षण देना निस्सन्देह सामान्य समझदारीकी बात है। एक भावपूर्ण भारतीय कहावत है: "आग लगे खोदे कुआँ, कैसे निकसे तोय।" फिर भारतीय भी चाहे वे कितने ही इच्छुक और सामर्थ्यवान क्यों न हों, आप उनको एकदम खाई खोदनेवाले कुशल दलके रूपमें भी तैयार नही कर सकते। क्या श्री वॉट और उनके साथी मन्त्री इस मामलेमें अपने कर्त्तव्यके प्रति सजग होंगे?[3]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–४–१९०६

१. कदाचित् ट्रान्सवालको उत्तरदायी शासन देनेके प्रश्नपर विचारके लिए ब्रिटिश सरकार द्वारा सर वेस्ट रिजवेकी अध्यक्षतामें नियुक्त संविधान समिति। शिष्टमण्डल समितिसे २९ मईको मिला था; देखिए "वक्तव्य: संविधान समितिकी सेवामें प्रस्तुत", पृष्ठ ३४५–५४।

२. देखिए "भाषण: कांग्रेसकी सभामें", पृष्ठ ३०१।

३. देखिए "भारतीय स्वयंसेवक", पृष्ठ २६१।

३१३. नेटाल दूकान-कानून

नेटाल दूकान-कर्मचारी संघके मन्त्रियोंने जो लम्बा लेख दूकान-कानूनपर लिखा है उसको हमारे सहयोगी 'नेटाल ऐडवर्टाइजर' ने बहुत महत्त्व दिया है। इसमें मन्त्रियोंने यह दिखानेका यत्न करते हुए कि इससे एशियाई व्यापारको क्षति पहुँची है, इस कानूनका औचित्य सिद्ध करनेका प्रयत्न किया है। इससे उस व्यापारको क्षति पहुँची है या नहीं, इसपर हम विवाद नहीं करना चाहते। हमने कानूनके आधारभूत सिद्धान्तको स्वीकार कर लिया है। [हमारे खयालसे यह ठीक ही है कि दूकानोंके खुलने तथा बन्द होनेके समयपर सरकारका नियन्त्रण हो।] किन्तु हम यह खयाल किये बिना नहीं रह सकते कि विधान द्वारा वस्तुतः जो घंटे निश्चित किये गये हैं, वे सब तरहसे असुविधाजनक हैं। उनको निश्चित करनेमें उस जनताका, जो इन व्यापारियोंको आश्रय देती है, कुछ खयाल नहीं किया गया है। शनिवारको दोपहरके बाद दूकान बन्द करा देना नितान्त मूर्खता है। खैर, यह सब तो हमने यों ही कह दिया। हम समझते हैं कि कानूनको व्यवहार योग्य बनानेके लिए उसमें शीघ्र ही संशोधन करना पड़ेगा।

लेकिन संघके जिम्मेदार अधिकारियोंने जिस गैर-जिम्मेदाराना ढँगसे भारतीय व्यापारियोंके सम्बन्धमें चर्चा की है उसपर, हमें लगता है, कुछ विचार प्रकट करना जरूरी है। मन्त्रियोंने कहा है कि इस कानूनके पहले भारतीय व्यापारी अपनी दूकानें प्रति सप्ताह १०३ घंटे खुली रखते थे जब कि कानून बननेके बादसे वे सिर्फ ५३ घंटे प्रति सप्ताह ही खुली रखते हैं। इस प्रकारके निराधार वक्तव्यके समर्थनमें कोई प्रमाण नहीं दिया गया है। यह वक्तव्य स्वतः ही गलत है। १०३ घंटे प्रति सप्ताहका मतलब है १७ घंटे १० मिनिट प्रति दिन। अगर अब हम यह मान लें कि भारतीय दूकानदार (खाने-पीने और कपड़े पहनने आदिकी जरूरत न होनेपर भी) ६ बजे सुबह अपनी दूकान खोलता है; तो प्रतिदिन १७ घंटेसे ज्यादा दूकान खुली रखनेके लिए उसको रातके ११.१० बजेके बाद ही दूकान बन्द करनी पड़ेगी। हमें ऐसे भारतीय व्यापारियोंके नामोंकी सूची पाकर प्रसन्नता होगी जो कानून बननेके पूर्व ६ बजे सुबहसे ११.१० बजे रात तक अपनी दूकानें खुली रखते थे। हमने ब्रिटिश लोकसभाके आयरिश सदस्योंके बारेमें जरूर सुना है कि वे सारी रात सदनमें अथक रूपसे बैठे रहते थे और 'कोला'की[1] गुठलीके एक टुकड़ेसे भूख मिटा लेते थे। किन्तु हमने यह नहीं सुना कि कोई भारतीय व्यापारी अपने कर्मचारियोंके साथ, बिस्तरेसे उठते ही (अगर उन्हें बिस्तर रखनेका श्रेय दिया जा सके) ६ बजे सुबह अपनी दूकानकी ओर दौड़ पड़ता हो और ११.१० बजे रात तक थड़ेपर खड़ा रहता हो। हमने भारतीयोंके बारेमें बहुत-से अत्युक्तिपूर्ण विवरण पढ़े हैं; परन्तु नेटाल दूकान कर्मचारी संघका यह विवरण अवश्य ही बढ़ गया है। फिर भी हम यह माननेको तैयार हैं कि कुछ भारतीय दूकानदार आजकलकी अपेक्षा ज्यादा समय तक दूकान खुली रखते थे। परन्तु अगर प्रमाणकी आवश्यकता हो तो हम यह भी सिद्ध करनेके लिए तैयार हैं कि उस श्रेणीके यूरोपीय व्यापारी उनसे ज्यादा नहीं तो उनके बराबर ही उसी ढँगका गुनाह किया करते थे।

करीब-करीब उपर्युक्त अत्युक्तिके समान ही मन्त्रियोंके अन्य वक्तव्य भी हैं। हम उनसे निवेदन करते हैं कि वे उनको छपानेके लिए दौड़नेसे पहले उनके तथ्योंका अध्ययन कर लिया करें।

१. एक आफ्रिकी पेड़ जिसकी गुठली नशा उतारनेके लिए खाई जाती है।

हम उन्हें विश्वास दिलाते हैं कि भारतीय व्यापारी आखिर इतना अधम तो नहीं है जितना वे उसे चित्रित करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-४-१९०६

३१४. इस पत्रकी आर्थिक स्थिति

हमारे पाठकोंको यह जानकर सन्तोष होता होगा कि यह अखबार ज्यों-ज्यों दिन बीतते जाते हैं त्यों-त्यों बढ़ता जाता है। शुरू-शुरूमें हम गुजरातीके चार ही पृष्ठ देते थे। उसके बाद पाँच पृष्ठ देने लगे। तमिल और हिन्दी विभागोंको बन्द करनेके बाद आठ पृष्ठ देने शुरू किये। और इस हफ्ते हम बारह पृष्ठ दे रहे हैं। यह बात आसानीसे समझी जा सकेगी कि पत्रको इस तरह बढ़ाते जानेसे खर्च भी बढ़ता है। परन्तु हम प्रोत्साहनके बिना बहुत आगे नहीं बढ़ सकते। श्री उमर हाजी आमद झवेरीके घर जो बैठक हुई उससे इस पत्रकी स्थितिका कुछ अन्दाज हो सकेगा।[1] हमारा खयाल है कि इसकी मदद करना हरएक भारतीयका फर्ज है। पत्रके प्रकाशनसे सम्बन्धित सभी लोगोंकी स्थिति ऐसी है कि वे अपना निर्वाह दूसरे साधनोंसे कर सकते हैं। फिर भी, हम मानते हैं कि वे पत्रके साथ इसीलिए बँधे हुए हैं कि वे अपने हृदयोंमें स्वदेशाभिमानकी चिनगारी जगाये रखते हैं। लेकिन अगर समाजकी ओरसे पर्याप्त सहारा मिले तो पत्र और भी अधिक काम कर सकेगा। हम अपने ग्राहकोंसे यही निवेदन करना चाहते हैं कि अगर हरएक ग्राहक एक-एक ग्राहक बढ़ा दे, तो ग्राहक-सूची दुगुनी होते देर न लगेगी। अपने पाठकोंको हम यह विश्वास दिलाना चाहते हैं कि आमदनीमें जो भी वृद्धि होगी, उसका सारा लाभ पत्रको सुधारनेमें खर्च किया जायेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-४-१९०६

३१५. दक्षिण आफ्रिकाके नौजवान भारतीयोंसे विनय

आजकल दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय नौजवानोंकी मण्डलियाँ बन रही हैं। इसे हम अपनी सुधरती हुई हालतका लक्षण मान सकते हैं। एक ओर डर्बनमें मुस्लिम युवक संघ (यंगमेन्स मोहम्मडन सोसाइटी) बना है, दूसरी ओर जोहानिसबर्ग आदि स्थानोंमें सनातन धर्म-सभाकी स्थापना हुई है। यह एक सन्तोपजनक बात है। लेकिन हमें दोनों सभाओंको चेतावनी देनेकी जरूरत मालूम होती है।

[यह सदाका एक नैसर्गिक नियम है कि जो सभा स्थापित होती है, उसके लोगोंके मन निर्मल हों और सब सभाकी भलाईमें अपनी भलाई मानें; तभी सभा पनप और टिक सकती है।]

[किसी भी देशका आधार उसके नौजवानोंपर होता है। पके हुए विचारोंके बुजुर्ग अपने विचारोंमें फेर-फार नहीं करते। वे पुराने विचारोंपर डटे रहते हैं। हर कौमको ऐसे लोगोंकी

१. देखिए "इंडियन ओपिनियनके बारेमें", पृष्ठ २९९-३००।

जरूरत होती है। क्योंकि ऐसे लोग नौजवानोंके खौलते खूनको ठंडा कर सकते हैं। लेकिन अगर उनसे यह लाभ होता है, तो कभी-कभी उनके कारण हानि भी होती है, अर्थात्, जरूरत पड़नेपर वे कुछ कामोको करनेमें आनाकानी कर जाते हैं। उन्हें वही करना ठीक मालूम होता है। लेकिन ऐसे समय अच्छे नौजवान मददगार साबित होते हैं, और आगे आते हैं। प्रयोग तो उन्हींसे हो सकते हैं। अतएव, जहाँ एक ओर नौजवानोंके मण्डलोंको बढ़ावा देना जरूरी है, वहाँ उन्हें चेतावनी देना भी जरूरी है।

अगर इन नौजवान मण्डलोंके सदस्य सच्चे दिलसे, देशका भला करनेके इरादेसे ही काम करेंगे, तो वे बहुत बड़े-बड़े काम कर सकेंगे। हममें गन्दगी ज्यादा है। श्री पीरन मोहम्मदने कांग्रेसकी बैठकमें इसका विवेचन भी किया है। इस गन्दगीको दूर करनेमें नौजवान घर-घर जाकर, लोगोंको नम्रतापूर्वक समझाकर बहुत मदद कर सकते हैं। कुछ गरीब भारतीय शराब पीते हैं। उनकी स्त्रियोंको भी इसकी लत पड़ जाती है। अगर हमारे नौजवान उनको इससे मुक्त करनेका बहुत जरूरी काम अपने ऊपर ले लें, तो वे बहुत कुछ कर सकते हैं। इसी सिलसिलेमें हमें यह भी कहना चाहिए कि हमारे जो पाठक गुजराती हैं, उन्हें यह नहीं सोचना चाहिए कि उनसे मद्रासी समाजके पीनेवालोंके बीच काम नहीं हो सकेगा। हमें तो यह भी कहना चाहिए कि कुछ गुजराती हिन्दुओंको भी शराबकी लत लग रही है। उन्हें समझानेमें हिन्दू और मुसलमान सब मदद कर सकते हैं।

साथ ही, ऐसे युवक-मण्डलोंको शिक्षाकी ओर अधिक ध्यान देना चाहिए। हमारे नौजवानोंमें भी शिक्षा बहुत कम है। हम अक्षरज्ञानको शिक्षा नहीं मानते। हमें दुनियाके इतिहासका, भिन्न-भिन्न संविधानोंका और इसी तरहका दूसरा ज्ञान होना चाहिए। इतिहासके उपयोगसे हम यह जान सकते हैं कि दूसरी जातियोंकी उन्नति क्यों हुई। हम दूसरी जातियोंकी स्वदेशाभिमानकी उमंगका अनुकरण कर सकते हैं। युवकोंके मण्डल ऐसे अनेक काम कर सकते हैं। हम मानते हैं कि ऐसा करना उनका कर्त्तव्य है, और हमें आशा है कि ये मण्डल अच्छे काम करके अपने कर्त्तव्यका पालन करेंगे, लोगोंको उपकृत करेंगे और हमपर आनेवाले संकटोंमें पूरा-पूरा हाथ बँटायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–४–१९०६

३१६. मोम्बासाकी सभा

भारतके कष्टका अन्त नहीं है। भारतीय जहाँ जाता है, गोरे भी वहाँ उनके साथ पहुँचते ही हैं। अगर गोरोंसे कष्ट न हो, तो हम आपसमें लड़ने लगते हैं। इससे बचें, तो महामारीमें फँस जाते हैं, और अगर कहीं इन तीनों मुसीबतोंसे बरी रहें, तो अकाल हमारे पीछे पड़ा ही है।

अपने मोम्बासावासी भाइयोंकी बैठकके जो समाचार हम इस अंकमें दे रहे हैं, उनके कारण मनमें ये विचार उठते हैं। मोम्बासाके आगे नैरोबीका जो उपजाऊ प्रदेश है, उसपर गोरोंकी दृष्टि पड़ी। इसलिए उन्होने वहाँसे भारतीयोंको खदेड़नेका अथवा वहाँ उनके पैर न जमने देनेका प्रयत्न किया। मालूम होता है कि इसमें उन्हें सफलता मिली है। इसपर से भारतीयोंने वहाँ एक बड़ी सभा की है, और ऐसे इरादेके विरुद्ध कदम उठानेके लिए तैयार हो गये हैं। वहाँ लोगोंमें इतना अधिक जोश था कि उन्होंने आधे घंटेमें २०,००० रुपये इकट्ठे कर लिए और वकीलपर खर्च करनेके लिए हर महीने ४०० रुपयेकी गारंटी दी।

[एक ओरसे हम कष्ट देखते हैं, तो दूसरी ओर हम एक हो जाते है। यदि अपने कष्टोंके परिणाम-स्वरूप हम इस तरह एक हों तो क्षणभर के लिए हम यह कह सकते है कि कष्टका आना अच्छा। हम हिम्मतके साथ एक होकर दुनियाके हर हिस्सेमे लडेंगे, तो हमारे कष्ट दूर होंगे, हम उन्हे भूल जायेंगे और एक राष्ट्र बनेंगे।]

इस सभाके सभापतिने अपने भाषणमें यह कहा है कि हमे दक्षिण आफ्रिकामे गोरोंके बराबर अधिकार हैं। यदि श्री जीवनजी इस पत्रको पढ़ते हैं तो उन्हे हमारे दु:खोंका पता होना चाहिए। हमे दु:खके साथ उन्हे यह जताना पड रहा है कि हमारी राजनीतिक स्थिति हमारे मोम्बासाके भाइयोंकी तुलनामें खराब है। नेटालमें भारतीयोंको जमीन मिल सकती है, किन्तु वहाँ उन्हे दूसरी तकलीफें हैं। और भारतीयोंसे जमीनका हक छीन लेनेकी तैयारी भी चल रही है। ट्रान्सवालमे अथवा ऑरेंज रिवर कालोनीमें आज भी जमीन नही मिलती।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-४-१९०६

३१७. नेटालका विद्रोह और नेटालको मदद

बम्बाटा अभी आजाद है। कहा जाता है कि उसके साथ ३०० आदमी है। उसके साथकी लड़ाईके बारेमें कई भाषण हो चुके है। नेटालके मन्त्रियोंने कहा है कि वे विलायतसे मदद नही मँगवायेंगे। तारकी खबर है कि जोहानिसबर्गमें एक बहुत बड़ी सभा हुई है। उससे जान पड़ता है कि वहांके लोग नेटालको पर्याप्त मदद देनेके लिए तैयार हैं। इस सबका मतलब यह होता है कि नेटालकी ताकत और स्वतन्त्रता बढेगी। ऐसे अवसरपर भारतीयोंने सरकारको जो मदद भेजी है वह मुनासिब है, और अगर मददका प्रस्ताव न किया जाता, तो बदनामी होती। जिन्होंने लड़ाईपर जानेके लिए नाम लिखाये है, उन्होंने बहुत उत्साह दिखाया है। उनमेंसे कई तो उपनिवेशमें जन्मे है। हमारे लिए यह सन्तोषकी बात है कि वे दूसरे भारतीयोंके साथ सम्मिलित होते हैं। नेताओंका कर्तव्य है कि वे उन्हे आगे बढनेके लिए प्रोत्साहित करे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-४-१९०६

३१८. चीनमें हलचल

'टाइम्स' का सवाददाता लिखता है कि चीनी दिनपर-दिन ज्यादा निरंकुश होते जा रहे है। वे गोरोंका सामना करते है। चीनी अखबार बहुत तीखे लेख लिखते है, और जापानी लेखक इसमें मदद करते है। उदार दलवालोंने ट्रान्सवालकी खानोंके चीनियोंके बारेमें जो भाषण किये है, उनका असर चीनियोंपर और भी बुरा हुआ है, और वे गोरोंके विरुद्ध अधिक भडक गये है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-४-१९०६

३१९. तम्बाकूसे हानियाँ

'इंडियन रिव्यू' के पिछले अंकमें पेरिसके प्रसिद्ध डॉक्टर कार्टेजका तम्बाकूपर एक लेख छपा है। वे लिखते है कि तम्बाकूसे कई नुकसान होते है; खासकर पाचन-शक्ति घट जाती है और आँखपर बड़ा असर होता है। उससे स्मरणशक्ति नष्ट हो जाती है, और कई विशिष्ट गुण नहीं आ सकते। इसके अलावा अभी-अभी यह पता चला है कि तम्बाकूके कारण श्रवण-शक्ति भी कम हो जाती है। डॉक्टर कार्टेजने सप्रमाण बतला दिया है कि श्रवणेन्द्रियके तन्तुओंमें जो गड़बड़ी दिखाई दी है उसका कारण तम्बाकू है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–४–१९०६

३२०. सान्फ्रान्सिस्कोकी हालत

भूकम्पके कारण इस शहरका ज्यादातर हिस्सा बरबाद हो गया है। जो एक दिन राजा थे वे रंक बन गये हैं। अच्छे-अच्छे साहूकार बे-घरबार हो गये हैं और उनके पास कपड़े-लत्ते भी नहीं बचे। इस प्राकृतिक कोपके कारण लखपती और गरीब दोनों साथ-साथ रह रहे है। काले-गोरेका भेद भी नही रहा। शहरमें भोजन-सामग्री बहुत ही कम है। रोटी जैसी चीज भी मुश्किलसे मिलती है। सारंगी बजानेवाला अब अपने महलमें रहनेके बजाय गलियोंमें मारा-मारा फिर रहा है। उसके शरीरपर कपड़े नही है। फिर भी वह अपनी सारंगी थामे हुए गलीमें भटका करता है।

हालके तारसे पता चलता है कि ऐसी आफतमें होते हुए भी नगरवासी अपने नगरको पहलेकी तरह सुहावना बनानेमें जुट पड़े हैं, और परिणामस्वरूप फौलादकी खपत बहुत बढ़ गई है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८–४–१९०६

३२१. जवाब: मुस्लिम युवक संघको

जब यह विवरण[1] मुझे मिला तब मैं फीनिक्समें था। मंत्रीकी माँग थी कि इसे अक्षरशः छापा जाये, इसलिए मैंने इसे समूचा छापनेकी अनुमति दी है। लेकिन मुझे अपने नौजवान भाइयोंसे दो बातें कहनेकी जरूरत मालूम होती है। विवरण हमेशा ऐसा होना चाहिए, जिससे दूसरोंको सीखनेको मिले। मैं उक्त विवरणमें ऐसा कुछ नहीं देखता।

मेरे बारेमें जो टीका की गई है उसे मैं स्वीकार करता हूँ और उसे छापनेमें मुझे जरा भी हिचकिचाहट नहीं है। मैंने ऐसा कहीं नहीं कहा कि भंगी आदिमें से लोग मुसलमान बने हैं और न ऐसा मुझसे कहा जा सकता है। मैंने गोरोंकी भावनाका विरोध करनेके बदले उनका पक्ष लिया था। फिर भी मैंने जो कुछ कहा उसमें गलती हुई हो, तो उसे क्षमा करनेके लिए मैं अपने भाइयोंसे कह चुका हूँ।[2]

मेरे या उस पत्रके विरुद्ध जो भी पत्र आये हैं, सो सब छापनेकी इजाजत मैंने दी है। जो पत्र मेरे पक्षमें हैं, मैंने उन्हें छापनेकी मनाही कर दी थी। फिर भी मुझे कहना चाहिए कि यदि आगे भी कौमके अन्दर फूट फैलानेवाले लेख आये, तो वे नहीं छापे जायेंगे। अगर दूसरा गुजराती पत्र या दूसरे छापेखाने शुरू हों, तो इससे मुझे हमेशा खुशी होगी। इस छापेखानेका एकमात्र हेतु लोक-सेवा करना है। वैसी सेवा करनेवाले दूसरे प्रतिस्पर्धी खड़े हों, तो इस छापेखानेके लोगोंके लिए यह गर्वकी बात होगी।

हिन्दू श्मशान-कोषके पैसोंकी जो पहुँच छपी है, उसकी छपाई दी गई है। यही चीज डामेल मदरसेको सूचीके बारेमें हुई है। यह पत्र ऐसी मुसीबतोंके बीच निकल रहा है कि सब भारतीयोंको उसकी पूरी मदद करनी चाहिए। इसकी जगह इतनी अनमोल है कि इसमें जो हिस्सा मुफ्त छापा जाता है, वह लोगोंको शिक्षा और ज्ञान देनेवाला होना चाहिए।

संक्षेपमें, अपने नौजवान भाइयोंसे मुझे यही विनती करनी है कि उन्हें सार्वजनिक काममें उत्साह दिखाना चाहिए। यह पत्र समूची कौमकी सेवा करता है। यदि वे इसकी मदद करेंगे, तो ऐसा माना जायेगा कि उन्होंने अपना फर्ज अदा किया; और उससे पत्रको ताकत मिलेगी, और वह ताकत फिरसे कौमके ही काम आयेगी।

आशा है, मेरे भाई मेरे इस लेखका बुरा न मानेंगे, बल्कि इसका सच्चा अर्थ करेंगे। इसे लिखनेमें भी मेरा हेतु सेवा करना ही है।

मो० क० गांधी

२९-४-१९०६[3]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-४-१९०६

१. यह डर्बनके मुस्लिम युवक संघकी अप्रैल १६ और २४ को हुई दो सभाओंकी रिपोर्ट। इन सभाओंमें कुछ वक्ताओंने शिकायत की थी कि *इंडियन ओपिनियन*में मुसलमानोंके कामके लेख, उनके संघकी कार्यवाहियों, चन्देकी सूचियों, अखबारोंको प्रेषित पत्रों आदिको पर्याप्त महत्त्व नहीं दिया जाता। उनका कहना था कि अगर हमारा अपना पत्र होता तो ऐसा न होता। इस आलोचनाके उत्तरमें गांधीजीने यह वक्तव्य दिया।

२. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ४९०।

३. स्पष्टतः यह तारीख गलत है, क्योंकि यह पत्र २८-४-१९०६ के अंकमें प्रकाशित हुआ था।

३२२. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग,
अप्रैल ३०, १९०६

चि० छगनलाल,

आज कुछ और गुजराती सामग्री भेज रहा हूँ। आज सवेरे कुछ सामग्री भेजनेका इरादा था लेकिन कल्याणदास दफ्तर देरीसे आया और मैं दफ्तरके काममें लग जाना चाहता था, इसलिए उसे डाकमें नहीं छुड़वा सका। फिर भी वक्त रहते सामग्री पहुँच जानेकी उम्मीद है।

११.३० पर प्रिटोरिया रवाना हो रहा हूँ। इसलिए बहुत नहीं लिख सकता।

कल्याणदास बुधके सवेरे रवाना होगा, मंगलको नहीं। उसकी इच्छा यहाँ एक दिन रहनेकी है। इसलिए गुरुवारको वह तुम्हारे पास पहुँचेगा। तुम काफिर लड़केको उसे मिलने और सामान ले जानेके लिए तीसरे पहरकी गाड़ीपर भेज देना। मैं जानता हूँ, गुरुवारको तुम सब, अखबारके काममें व्यस्त रहोगे।

सम्भव हो तो गोकुलदास शुक्रवारको निकले। अगर छुट्टी दी जा सके तो वह ४.३० की गाड़ीसे रवाना हो सकता है और डाक गाड़ी पकड़ सकता है। टिकिट तो एक-तरफा ही खरीदे। अगर शुक्रवारको न निकल पाये तो शनिवारको बिलानागा निकले, ताकि यहाँ रविवारको आ जाये। कोशिश शुक्रवारको ही भेजनेकी करो, क्योंकि मुझपर कामकी भीड़ बहुत रहेगी।

शहरका काम कल्याणदास एकदम हाथमें ले ले। उसके लिए दूसरे दर्जेका सालाना पास निकलवा दो। अगर, जैसा कि तुम कहते थे, उसे बीचमें ही लौटना पड़ा तो पैसा वापस मिल सकता है। फिलहाल तुम्हारा सारा ध्यान खाता-बहीपर होना चाहिए।

आज दिनको गाड़ीमें या रातको घरपर अधिक विस्तारसे लिख सकूँगा।

तुमने बुखारसे पीछा छुड़ा लिया, यह खुशीकी खबर है।

मोहनदासके आशीर्वाद

श्री छगनलाल खुशालचन्द
मारफत 'इंडियन ओपिनियन'
फीनिक्स

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३५४) से।

३२३. नेटाल भूमि-विधेयक

नेटालकी ससदमें "भूमि धारा विधेयक" के रूपमें दूरगामी महत्त्वका एक विधेयक विचारार्थ प्रस्तुत किया जायेगा। यह नेटाल सरकारका इस विधेयकको संसदसे पास करानेका दूसरा प्रयत्न है। जहाँतक भाड़ेदारोंकी हैसियतसे भूमिपर कब्जेका सम्बन्ध है, भारतीय समाजके लिए सबसे महत्त्वकी धारा वह है जिसके द्वारा लाभदायक कब्जेका अर्थ यूरोपीयो तक सीमित कर दिया गया है। इस तरह जो भूमि भारतीय भाड़ेदारोंके कब्जेमें होगी उसका कब्जा अलाभदायक कब्जा माना जायेगा और फलस्वरूप उसपर भारी कर लगाया जा सकेगा। [यह बात तो सभीने स्वीकार की है कि भारतीयोंमें अन्य दोष भले ही हों, परन्तु वे काहिल नही है। वे पैदाइशी खेतिहर है।] सभी मानते है कि उन्होंने इस उपनिवेशकी कुछ निकृष्टतम भूमि खेतीके योग्य बनाई है। उन्होंने घने जंगलोको बागोके रूपमें बदल दिया है और अपनी उत्पादन शक्तिसे नेटालके गरीव गृहस्थो तक बागोकी पैदावार सरलतापूर्वक पहुँचाना सम्भव कर दिया है। क्या उनपर उनके गुणोंके कारण ही कर लगाया जायेगा? क्या सरकारके इस कार्यसे यूरोपीयोके कब्जेकी जमीनोंमें वृद्धि होगी? हमें इसमें सन्देह है। और अगर हमारा संदेह युक्तिसंगत है तो हम यह निर्विवाद रूपसे कह सकते है कि सरकार 'लाभदायक कब्जा' शब्दसमुच्चयकी उल्लिखित परिभाषाको कायम रखनेका आग्रह करके 'न खाय, न खाने दे' की नीतिका अनुसरण करेगी। सरकार ऐसे कानूनोसे नेटाली भारतीयोंके सवालको हल न कर सकेगी। मन्त्रियो और लोकमत निर्माता नेताओंका कर्त्तव्य है कि वे समूचे सवालपर गम्भीरतापूर्वक और शान्तिपूर्वक विचार करे और उसको अभी हालके आवेशपूर्ण भारतीय-विरोधी कानूनके बजाय निपुणतासे हल करे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५-५-१९०६

३२४. केपके विक्रेता-परवाने

अप्रैल २० के '*केप गवर्नमेंट गजट*' में सामान्य वस्तु विक्रेताओंके व्यापारको नियमित करनेके लिए एक विधेयकका मसविदा प्रकाशित किया गया है। हम विना हिचकिचाहट इस कदमका स्वागत करते है। यह मान लेनेपर कि व्यापारिक परवाने अन्धाधुन्ध जारी करनेपर कुछ प्रतिबन्ध लगाना जरूरी है, प्रस्तुत विधेयक अनिन्द्य है। इससे निहित अधिकारोंकी रक्षा होती है, और इसमें नये परवानोंके प्रार्थियोंके साथ अन्याय न होने देनेकी उचित सावधानी रखी गई है। इससे यह निर्णय करनेका अन्तिम अधिकार लोगोके हाथोंमें आ जाता है कि वे अपने बीचमें एक नया व्यापारी लायें या न लायें। प्रस्तुत विधेयक वर्तमान व्यापारियोंकी अनुचित प्रतियोगितासे रक्षा करता है और साथ ही इससे उनको नये उद्योगोके लिए उचित सुविधाएँ भी मिलती है। यह नेटाल विक्रेता-परवाना अधिनियमके समस्त दोषोसे मुक्त है। इससे निहित अधिकारोंकी सुरक्षाका पूरा ध्यान रखते हुए नेटालके कानूनसे जो कुछ कभी प्राप्त हो सकता था, वह सब प्राप्त हो जाता है। हमें आशा है कि नेटाल-सरकार इस कानूनका

अनुकरण करेगी और उपनिवेशकी विधान-संहिताको उस कानूनसे मुक्त कर देगी जिसकी निन्दा सभी विचारशील लोगोंने की है और जिससे महामहिम सम्राटकी प्रजाके एक वर्गमें बहुत तीव्र खीज उत्पन्न हुई है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५–५–१९०६

३२५. ब्रिटेन, तुर्की और मिस्र

हालके तारोंसे पता चलता है कि ब्रिटिश सरकार और तुर्क सरकारके बीच फिरसे कड़वाहट बढ़ गई है। मिस्रकी सीमाका निश्चय नहीं हो पाया है, इसीलिए यह सारी झंझट है। पहला झगड़ा अकाबाके पास शुरू हुआ। फिर सिनाई ताल्लुकेमें टाबा यामा[1]पर कब्जा करनेके लिए तुर्क फौज गई। इसपर ब्रिटिश राजदूत सर निकोलस ओ'कोनरको ब्रिटिश सरकारने लिख भेजा कि वह तुर्क सरकारसे टाबासे फौज हटा लेनेकी सख्त माँग करें। किन्तु तुर्क सरकारने इस माँगपर कोई ध्यान नहीं दिया, और मुकाबलेपर डटे रहनेमें जर्मन सम्राट्ने उसे प्रोत्साहित किया। अब तुर्क सिपाही अकाबामें किला बना रहे हैं और ऐसा लग रहा है, मानो लड़ाईकी तैयारी कर रहे हों। इसपर ब्रिटिश सरकारने मिस्रमें अपनी सेना बढ़ाना शुरू कर दिया है। ब्रिटिश सरकारको इस बातका भी डर लग रहा है कि मिस्रके लोग भी तुर्क सरकारके पक्षमें हैं। अगर ब्रिटिश और तुर्क सरकारके बीचकी इस तनातनीसे लड़ाईका मौका आया, तो यह इस तरहका पहला ही मौका होगा। ऐसा नहीं लगता कि तुर्क सरकार भी पीछे हटेगी। 'विटनेस' के नाम आये तारसे ऐसा मालूम होता है कि राफाके पास जो सीमा-सूचक खम्भे खड़े थे, उन्हें तुर्क फौजने उखाड़ फेंका है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५–५–१९०६

३२६. हमारा कर्त्तव्य

'एजेक्स' नामसे किसी व्यक्तिने 'ऐडवर्टाइजर' को एक पत्र लिखा है। उसका अनुवाद हमने इस अंकमें दूसरी जगह दिया है। वह सभी भारतीयोंके लिए विचारणीय है। 'एजेक्स' का पत्र हमारे विरुद्ध उत्तेजना फैलानेवाला है। उसने सब-कुछ मजाक उड़ाते हुए लिखा है, जिसका तात्पर्य यह है कि लड़ाईके समय भारतीय किसी कामके नहीं।

हमें इस आरोपपर पूरी तरह विचार करना चाहिए। हमने नेटालकी सरकारको सूचना भेजकर ठीक ही किया है। उससे हम अपना सिर कुछ तो ऊँचा रख ही सकते हैं। लेकिन इतना काफ़ी नहीं है। हमें लगता है कि हम लोगोंको और भी ज्यादा मेहनत करके लड़ाईके वक्त उसमें हाथ बँटा सकनेकी हालतमें आ जाना चाहिए। नागरिक सेनाके कानूनकी रूसे

१. दमिश्क और मक्काके बीच तुर्की रेल्वेकी सुरक्षाके लिए तुर्क सेनाने टाबापर कब्जा कर रखा था। बादमें राफा और अकाबाके बीच एक नई सीमापर समझौता हो गया।

गोरोको लाजिमी तौरपर लड़ाईमें जाना पड़ता है। हम भी अपनी ताकत और तैयारी दिखा सकें, तो आसानीसे हमारे दु:ख कटनेकी संभावना है। दु:ख कटे चाहे न कटें, लेकिन नेटालपर या दक्षिण आफ्रिकाके दूसरे किसी हिस्सेपर संकट आनेकी हालतमे दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोको उसमें हाथ बँटानेके लिए तैयार होना ही चाहिए। अगर ऐसा न हुआ, तो इसमें कोई शक नही कि यह हमारा दोष माना जायेगा।

सुना जाता है कि स्वाजीलैंडमें बलवा शुरू हो गया है। नेटालकी सरकारने बड़े पैमानेपर गोला-बारूद मँगवाया है। इस सबसे जाहिर होता है कि नेटालका विद्रोह अभी लम्बे समय तक चलेगा।[1] और अगर वह ज्यादा फैला, तो समूचे दक्षिण आफ्रिकापर उसका असर पड़ेगा। इस बार नेटालको ट्रान्सवालकी मदद पहुँच चुकी है। केपने मदद देनेको कहा है और विलायतसे भी वचन आ गया है। यदि हम ऐसे समय अलग रहे, तो इसमें शक नही कि उसका बहुत ही बुरा असर होगा। हम मानते है कि इस विषयमें हरएक भारतीयको बहुत गम्भीरताके साथ सोचना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५-५-१९०६

३२७. मोम्बासाका उदाहरण

मोम्बासासे वहाँके समाचारपत्रके दो और अंक आये हैं। उनसे पता चलता है कि मोम्बासाके भारतीय अपने अधिकारोंके लिए भरपूर कोशिश करना चाहते हैं। उन्होने जो काम शुरू किया है, वह हम सबके लिए अनुकरणीय है। हम मोम्बासाके भारतीयोकी सफलता चाहते हैं।

पिछले अंकोसे पता चलता है कि वहाँकी सभामे[2] दक्षिण आफ्रिकाके बारेमें जो गलत-फहमी हुई-सी लगती थी, जान पड़ता है उसमे कसूर अखबारवालोका था। वहाँके भारतीय यह जानते है कि दक्षिण आफ्रिकामें हमे गोरोकी बराबरीके अधिकार नही है। लेकिन अधिक महत्त्वकी बात तो उक्त समाचारपत्रमें उसके सम्पादकने जो लिखी है, वह मालूम होती है। सम्पादक लिखते है कि भारतीयोमें एकता नही है, और जबतक एकता नही होगी, वे अधिकार पाने योग्य बन नही सकेंगे। उनमें फूट-फाट बहुत है। अगर कमिश्नरको गोरोके बारेमें कुछ जानना हो, तो वह फौरन जान सकता है कि कौन-सा गोरा सब गोरोकी ओरसे बोल सकता है। लेकिन जब कमिश्नरको भारतीयोके बारेमें कुछ जानना हो, तब उसे अलग-अलग जातियोके पाँच-सात लोगोंको बुलाना पड़ता है। अगर ऐसा है, तो कहना होगा कि यह दु:खद है। हम सब एक ही देशके हैं। हम अलग-अलग जातियोके है, यह चीज हमें भूल जानी चाहिए। जबतक एक देशकी बात हमारे ध्यानमें नही रहेगी, तबतक हमपर आनेवाले संकट दूर नही होगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५-५-१९०६

१. देखिए "नेटालका विद्रोह", पृष्ठ २९१-२।

२. देखिए "मोम्बासाकी सभा", पृष्ठ ३०६-७।

३२८. मजदूरोंका रहन-सहन

जो लोग समझदार है, उनमें आजकल खुली हवाकी कीमत बढ़ रही है। जहाँ बड़े शहर बसे है वहाँ मजदूरोंको सारा दिन कारखानेमें बन्द रहकर काम करना पड़ता है। शहरोंमें जमीनकी कीमत ज्यादा होनेसे कारखानोंकी इमारतें छोटी होती है और मजदूरोंके रहनेके घर भी तंग होते है। इस कारण मजदूरोंकी शारीरिक हालत निरंतर बिगड़ती जाती है। [लन्दन-में हीन्सबरोके डॉक्टर न्यूमनने दिखा दिया है कि जहाँ एक कोठरीमें ज्यादा लोग रहते है वहाँ एक हजारपर ३८ आदमी मरते है, उतने ही लोग दो कोठरियोंमें रहें, तो २२ आदमी मरते है, अगर उतने ही लोगोंके लिए तीन कोठरियाँ हों, तो ११ आदमी मरते है और चार कोठरियाँ हों, तो सिर्फ पाँच आदमी मरते है। इसमें अचरजकी कोई बात नही। आदमी अनाजके बिना कुछ दिन बिता सकता है, पानीके बिना एक दिन बिता सकता है, पर हवाके बिना एक मिनट बिताना असम्भव है। जिस चीजका इतना अधिक उपयोग है, अगर वह चीज शुद्ध न हो, तो उसका बुरा परिणाम निकले बिना रह नहीं सकता।] इस विचारके कारण कैडबरी ब्रदर्स, लीवर ब्रदर्स वगैरह बड़े कारखानेदारोंने, जो हमेशा अपने मजदूरोंकी बहुत चिन्ता रखते है, अपने कारखाने शहरोंसे हटाकर खुली जगहोंमें बसाये हैं। मजदूरोके रहनेके लिए भी बहुत अच्छे घर बनाये है, और वहाँ बाग-बगीचे, पुस्तकालय वगैरह सब सुविधाएँ हैं। इतना सारा खर्च करनेपर भी उन्हें अपने व्यापारमें लाभ रहा है। इससे प्रेरणा लेकर अब इंग्लैंडमें चारों तरफ ऐसी हलचल बढ़ रही है।

यह बात भारतीय नेताओंके लिए विचारणीय है। [हम साफ हवाकी कीमत नही समझते, इस कारण बहुत नुकसान उठाते है।] हमारे बीच प्लेग जैसी बीमारियाँ फैल सकनेका भी यह एक प्रबल कारण है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५–५–१९०६

३२९. भारतीय व्यापार-संघ

पिछले अंकमे हम इस विषयपर श्री उमर हाजी आमद झवेरीका पत्र प्रकाशित कर चुके है। वह पत्र विचार करने योग्य है। अंग्रेजी व्यापार-संघ (चेम्बर ऑफ कॉमर्स) का कितना प्रभाव है, इसे दक्षिण आफ्रिकाकी स्थितिको जाननेवाला हर भारतीय समझ सकता है। अगर भारतीयोने शुरूसे अंग्रेजोंके संघोंमें हाथ बँटाया होता, तो आज भारतीय व्यापारियोंकी हालत कुछ और ही होती। उससे बहुत सुधार हो जाते। हम जानते है कि जब भारतीय व्यापारी पहली बार दक्षिण आफ्रिकामें दाखिल हुए तब अंग्रेज उन्हें अपने संघमें भरती होनेके लिए निमन्त्रित करते थे। अब हालत यह है कि हम प्रवेश करना चाहे, तो वे नामंजूर कर देंगे।

श्री उमर झवेरीने अब यह विचार प्रकट किया है कि अगर हम अंग्रेजोंके संघमें प्रवेश न पा सकें, तो भी हम अपना निजी व्यापार-संघ बना सकते है। अगर ऐसा संघ स्थापित करके व्यापारी उसमें लगनसे काम करें और आवश्यक सुधार कर लें तथा इस तरहका संघ

जो कहे उसके अनुसार दूसरे भारतीय व्यापारी चलें, तो वह बहुत काम कर सकेगा। अंग्रेजोंके संघका इसलिए बहुत प्रभाव पड़ता है कि दूसरे व्यापारी उसकी सत्ता स्वीकार करते हैं। अगर हम ऐसी हालत पैदा न कर सकें, तो संघकी स्थापना करना या न करना बराबर ही माना जायेगा। अतएव दृढ़ विचार करके अनुभवी और परोपकारी भारतीय व्यापारी इकट्ठे होकर भारतीय व्यापार-संघकी स्थापना करे, तो लाभ हो सकता है; और यह माना जा सकता है कि भारतीय व्यापारियोंकी स्थितिको सुधारनेके लिए एक अच्छा रास्ता अपनाया गया है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ५-५-१९०६

३३०. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

मई ५, १९०६

मलायी बस्ती

मैं यह खबर दे चुका हूँ कि मलायी बस्तीके बारेमें शिष्टमण्डल जाकर लौट आया है।[1] लेफ्टिनेंट गवर्नरने उनका जवाब भेजा है। उसमें कहा गया है कि मलायी बस्तीका कुछ हिस्सा रेलवेवाले ले लेंगे। बाकी हिस्सा जोहानिसबर्गकी नगरपालिका लेगी। जिन लोगोंके मकान बस्तीमें हैं, उन्हें दोनों विभागोंकी ओरसे हर्जाना मिलेगा; और उपनिवेश-सचिव बस्तीके निवासियोंके लिए दूसरी बस्ती बनायेंगे। इस जवाबका कोई मतलब नहीं होता। इतना तो शिष्टमण्डलके जानेसे पहले भी सब लोग जानते थे। स्थानीय सरकारकी ओरसे तत्काल किसी प्रकारका इन्साफ मिलता नहीं दिखता।

रेलवेकी परेशानी

जोहानिसबर्गसे प्रिटोरिया जानेवाली ८-३० की और ४-४० की गाड़ीमें और प्रिटोरियासे आनेवाली सुबह ८-३० की गाड़ीमें भारतीय और दूसरे काले लोगोंको यात्रा करनेकी जो मनाही है, उसके बारेमें ब्रिटिश भारतीय संघकी ओरसे उसके अध्यक्ष और मन्त्री, मुख्य प्रबन्धक श्री प्राइससे मिलकर आये हैं। लगभग एक घंटे तक बातचीत हुई। श्री प्राइसका कहना है कि फिलहाल गोरोंमें इतनी तीव्र उत्तेजना है कि इस मामलेमें भारतीयोंको बहुत दबाव नहीं डालना चाहिए। आखिर उन्होंने यह मध्यम मार्ग सुझाया कि यदि किसी भारतीयको किसी खास कामसे इन गाड़ियोंमें जाना जरूरी ही हो, तो उसे स्टेशन-मास्टरसे कहना चाहिए। वह गार्डके साथ बैठनेका प्रबन्ध कर देगा। लेकिन श्री प्राइसकी सलाह यह है कि फिलहाल, जहाँतक बन सके, भारतीयोंको इन तीन गाड़ियोंमें कम ही जाना चाहिए। उन्होंने यह मंजूर किया है कि इस प्रकारकी रुकावटें बढ़ाई नहीं जायेंगी। इस बारेमें एक जानने योग्य मामला हुआ है। एक काला आदमी दूसरे दर्जेके डिब्बेमें जा रहा था। उसके पास एक गोरी महिला बैठी थी। यह देखकर बाउकर नामक एक गोरेका खून खौल उठा। उसने उस काले आदमीको वहाँसे हट जानेको कहा। काले आदमीने अपना टिकट दिखाया। लेकिन इससे बाउकरको सन्तोष नहीं हुआ। उसने गार्डसे कहा। गार्डने बीचमें पड़नेसे इनकार कर दिया। इसपर बाउकरने

१. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ २९८-९।

दूसरे गोरे यात्रियोंको इकट्ठा करके काले आदमीको धमकी दी कि उसे जबरदस्ती निकाल बाहर किया जायेगा। इसपर गार्डने लाचार होकर बेचारे काले आदमीको उसकी जगहसे हटा दिया। इसमें किसी अधिकारीको दोष नहीं दिया जा सकता। जबतक गोरे अधिक उत्तेजित हैं, तबतक ऐसी बाधाएँ आती ही रहेंगी। दूसरे एक गोरेने "कुली-यात्री" (कुली ट्रैवेलर) शीर्षकसे 'ट्रान्सवाल लीडर' में जो लिखा है, उसका अनुवाद नीचे दे रहा हूँ :

> श्री बाडकरने काले आदमीके बारेमें लिखा है, इसके लिए गोरोंको उनका उपकार मानना चाहिए। कुछ समय पहले मैं पाँचेफस्ट्रूमसे पार्क जा रहा था। उस गाड़ीमें दो 'कुली' भी थे। यह सच है कि वे दूसरे डिब्बेमें बैठे थे। लेकिन इससे रोग दूर नहीं होता; क्योंकि उनके जानेके बाद फिर उसी डिब्बेमें गोरोंको बैठना होगा। फिर, उन दोनों कुलियोंने अपने हाथ गाड़ीमें टंगे हुए रूमालोंसे पोंछे। बादमें इन्हीं रूमालोंसे गोरोंको भी अपने हाथ पोंछने पड़ेंगे। और मुझे तो विश्वास है कि कोई भी अच्छा गोरा 'कुली' द्वारा काममें लाये गये प्याले या तौलिएका उपयोग करना नहीं चाहेगा। दरअसल रेलवेवालोंको चाहिए कि वे 'पब्लिक' का कुछ खयाल रखें।

लोग इस तरह कई अखबारोंमें लिखते पाये जाते हैं। ऐसे मौकोंपर भारतीयोंके लिए एक ही रास्ता है कि वे धीरज रखें।

श्री रिच तथा सर्व श्री जॉर्ज और जेम्स गॉडफ्रे

यहाँके अखबारमें तारसे प्राप्त खबर छपी है कि श्री रिच विलायतमें अपनी परीक्षा पास कर चुके हैं। इसी तरह श्री जॉर्ज और श्री जेम्स गॉडफ्रे भी अपनी अन्तिम परीक्षामें पास हो गये हैं। अब कुछ ही समयमें वे दोनों भाई बैरिस्टर बनकर वापस आयेंगे।

चीनियोंकी हालत

जो चीनी खानोंमें काम कर रहे हैं उन्हें, यदि वहाँका काम पसन्द न हो तो, सरकारके खर्चसे वापस भेजनेकी विज्ञप्ति जल्दी जारी करनेके लिए केन्द्रीय सरकार जोर डाल रही है। दूसरी तरफ खानमालिक कहते हैं कि वे अपनी बस्तियोंमें इस तरहकी विज्ञप्ति नहीं चिपकाने देंगे। अगर खानवालोंने इस तरह विरोध किया तो सम्भव है कि भारी झगड़ा खड़ा हो जाये।

ट्राम सम्बन्धी मामला

ट्राम सम्बन्धी परीक्षात्मक मुकदमा अभी खत्म नहीं हुआ है। श्री कुवाडियाका मामला फिरसे न्यायाधीशकी अदालतमें चलनेवाला है। धर्मके वकीलने शनिवार १२ तारीखकी पेशी निश्चित कराई है।

संविधान-समिति

सर जोजेफ वेस्ट रिजवेका आयोग ट्रान्सवाल पहुँच गया है। इस समय वह प्रिटोरियामें है। ब्रिटिश भारतीय संघने पूछा है कि भारतीयोंकी हालतके बारेमें संघ जो प्रमाण पेश करना चाहे, आयोग उन्हें लेगा या नहीं? अगर आयोग प्रमाण लेना स्वीकार करेगा तो उसके सामने सारी स्थिति पेश की जा सकेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२-५-१९०६

३३१. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
मई ५, १९०६

चि० छगनलाल,

तुम्हारी चिट्ठी मिली। तुम्हे इस हफ्ते जोहानिसबर्गकी चिट्ठी नही मिली — आश्चर्य है। मैंने निस्सन्देह भेजी थी। जो लेख मैंने भेजे थे उन सबकी मेरे पास सूची है। 'इंडियन ओपिनियन' मिलते ही मैं उसे मिलाकर देखूंगा और तुम्हे सूचित करूँगा। अगर गुजराती और अंग्रेजीकी प्रति मेरे पास पेशगी शुक्रवारको भेजी जा सके तो बहुत अच्छा हो। क्योंकि तब वे मुझे इतवारको सुबह मिल जायेंगी और उनका उपयोग कर सकूँगा। तुमने बहुत-सी कतरनें भेजी है। गुजरातीमें उनका उपयोग कर रहा हूँ। किन्तु सचमुच तो उनमें से कुछका उपयोग इसी हफ्तेमें हो जाना चाहिए था। अगर हो गया हो तो मुझे उनके बारेमें कुछ नही लिखना चाहिये। अगर पेशगी प्रति मिले तो यह लिखना रविवारको किया जा सकता है। प्रतियाँ भेजते हुए तुम वहाँ भी उनपर निशान लगा सकते हो कि तुमने हालके अंकमें उनका उपयोग किया है अथवा नहीं। आशा करता हूँ कल गोकुलदास रवाना हो चुका होगा। फिर मैं उसे सोमवारके कामके लिए तैयार कर सकूँगा; किन्तु कोई तार न होनेसे मुझे डर है कि वह रवाना नहीं हुआ। मुझे यह बताओ कि क्या श्री आइजकने, जो काम तुमने उन्हे सौंपे थे, किये हैं। अगले हफ्ते श्री नाजरकी चीजोंकी सूचीकी याद दिलाना। मैं तुम्हारी चिट्ठी फाड़ रहा हूँ इसलिए मुमकिन है मैं इसके बारेमें बिलकुल भूल जाऊँ। दूसरे कामोंकी हद तक तुम्हे सर्वसाधारण देखरेख करनी चाहिए और अपना बाकी समय हिसाब-किताब ठीक करनेमें लगाना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि तुम अपने आपसे किसी निश्चित तिथि तक हिसाब तैयार कर लेनेका वादा कर दो।

कल्याणदासको तुम्हारे लिए शक्तिकी मीनार हो सकना चाहिए। अगर वह तुम्हारे साथ रहनेको तैयार है तो रहे; मगर मैं चाहता हूँ यदि वह हेमचन्दके साथ रहे तो उसका असर हेमचन्दपर ज्यादा ठीक पड़ेगा। दोपहरको वह प्राय: फीनिक्समें भोजन नही करेगा। इसलिए बहुत हुआ तो वह ब्यारी [वहाँ] करेगा। सो वह अलग भी कर सकता है; मगर तुम चाहो तो मिलकर दूसरी बात भी निश्चित कर सकते हो। मैं प्रसन्न हुआ कि तुम अपनी जमीनको सुथरी बनानेकी ओर ध्यान दे रहे हो। यह बहुत जरूरी काम है और मैं चाहता हूँ कि अब चूँकि तुम्हे अपेक्षाकृत अधिक स्वतंत्रता रहेगी, तुम व्यवस्थित रूपसे अपना समय इसमें लगाओ। तुम्हारे इन दो एकड़ोंमें जरा भी घासपात नही होना चाहिए। बगीचेके बारेमें सामको लिखूंगा[1]। बागवानीके बारेमें जो कतरन तुमने भेजी है, उसे वापस कर रहा हूँ। मेरा खयाल है श्री वेस्टके पास एक छोटीसी किताब[2] है। ऐसे मामलोंमें तुम्हें अगुआई करनेकी बान डालनी

१. यह उपलब्ध नहीं है।

२. श्री वेस्टका कहना है कि उल्लिखित पुस्तक दू कासकी लिखी हुई थी। दू कासको नेटालका व्यावहारिक अनुभव था। उनका, डर्बनसे कुछ ही दूर, हिलैरीमें एक सुन्दर बगीचा था। फीनिक्समें लगाये गये कई फल-फूलोंके पौधे वहींसे मँगाये गये थे। पुस्तकका नाम मुझे याद नहीं आता; परन्तु प्रकाशक शायद पीटरमैरित्सबर्गके पी० डेविस ऐंड सन्स थे।

चाहिए। मैं मोहनलालको एक साप्ताहिक चिट्ठीके बारेमें लिखूँगा। व्याससे भी मैंने कहा। उन्हे फिलहाल 'ओपिनियन' नि.शुल्क भेजनेकी जरूरत मुझे नही लगती। उन्हें अनुभव करने दो कि ये पत्र लिखना उनका कर्त्तव्य है।

नाटकवालोंसे अभीतक मैंने पैसा वसूल नही पाया। जबतक मैं वसूली कर न लूँ तुम काम मत करना।

जोहानिसबर्गके पत्रके सिलसिलेमे क्या वह सीधा आनन्दलालको तो नहीं मिला। क्योंकि मुझे लगता है मैंने अपने गुजराती लेखोंकी पहली किश्त आनन्दलालके नाम भेजी थी[1]....

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३५६) से।

३३२. पत्र : छगनलाल गांधीको

रविवार
[मई ६, १९०६]

चि० छगनलाल,

मुझे तुमको बहुत-कुछ लिखना है, किन्तु आज समय नही। तुम्हे फिलहाल एकदम हिसाबमें भिड़ना है। इसके साथ गुजराती सामग्री भेज रहा हूँ। उसे देखकर और श्री हरिलाल ठाकुरको दिखाकर चि० आनन्दलालको दे देना। उसे अलग पत्र लिखनेकी इस समय फुरसत नहीं है। दूसरा पत्र आज रातको लिखूंगा, वह उसे सीधा भेज दूंगा। गुजरातीमें गलत न छपे, इसका ध्यान रखना। अपनी निगाह रखना, किन्तु सारा बोझा श्री ठाकुरपर डालना। मैं उन्हे लिखनेवाला हूँ कि गुजरातीकी सब सामग्री वे तुमको दिखायें। किन्तु तुम्हे उसपर फिलहाल एकदम बहुत समय नही देना है। शुक्रवार तक मैंने २० नाम और प्राप्त कर लिये हैं। भेजूंगा। उनमें से ६ व्यक्तियोंका पैसा भी आ गया है। चि० कल्याणदास मंगलकी सुबह आयेगा। वह वहाँ बुधवारकी शामको पहुँचेगा। बुधवारकी शामको तुम, या कोई और, उसे फीनिक्स स्टेशनपर मिल जाओ, तो काफी है। चि० कल्याणदासको डर्बनका सारा काम सौंप देना। तुम पखवाड़ेमें एक बार सम्पादककी टिकटसे जाओ, तो काफी है। हिसाबके ऊपर मुख्य ध्यान तुम्हें ही देना चाहिए।

चि० गोकुलदासको, जितनी जल्दी बने, भेजना। अथवा शनिवारको भेजना।

मोहनदासके आशीर्वाद

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३५७) से।

१. यह पत्र अपूर्ण है।

३३३. पत्र : लॉर्ड सेल्बोर्नको[1]

[जोहानिसबर्ग
मई १२, १९०६ के पूर्व]

महोदय,

आपका गत मासकी ३० तारीखका क्रमांक १५/४/१९०६ पत्र मिला। मेरे संघका यह मत है कि जो शिकायत[2] परमश्रेष्ठकी सेवामें बढ़ाई गई थी, उसकी वैसी जाँच नहीं की गई जैसी परिस्थितियोंके अनुसार आवश्यक थी। जहाँतक टालमटोलकी बात है, मेरा संघ नये विभागकी कारगुजारीपर निगाह रखेगा। इस बीच आपका ध्यान सादर इस तथ्यकी ओर आकर्षित करता हूँ कि प्रार्थनापत्र महीनोंसे विचारार्थ पड़े हुए हैं। एक तरफ इतनी देरदार की जाती है और दूसरी तरफ प्रार्थियोंकी सुविधाका खयाल रखनेका दावा किया जाता है। इन दोनोंका मेल बैठाना मेरे संघके लिए कठिन ही है।

जहाँतक श्री सुलेमान मंगाके मामलेका सम्बन्ध है, मेरे संघने पूरे तथ्योंका पता लगाया है और मेरे संघका खयाल है कि इस बारेमें परमश्रेष्ठको जो सूचना दी गई थी, वह किसी भी तरह पूर्ण नहीं है। प्रार्थनापत्रके सम्बन्धमें जो महत्त्वपूर्ण तथ्य दिये गये थे, उनमें एक भी गलत नहीं था। प्रार्थनापत्र श्री गांधीके द्वारा दिया गया था और मेरे संघको मालूम है कि श्री मंगाके एक मित्रसे उन्हें निर्देश प्राप्त हुए थे। प्रार्थनापत्रकी आधारभूमि यह नहीं थी कि श्री मंगा अपने चाचाको देखने जाना चाहते थे, बल्कि यह कि वह डेलागोआ-बे जाते समय ट्रान्सवालसे गुजरना चाहते थे। उन्हें अस्थायी अनुमतिपत्रकी प्रार्थनाका अस्वीकृतिसूचक उत्तर १४ मार्चको मिला। रिश्तेदारके परिचयके सम्बन्धमें अन्तर तो प्रार्थनापत्रकी अस्वीकृतिके बाद हुआ था। उपर्युक्त पत्रके उत्तरमें श्री गांधीने अनुमतिपत्र अधिकारीको अपना आश्चर्य प्रकट करते हुए जो पत्र लिखा, उसमें वे चाचाको पिता लिख गये। जैसा वे कहते हैं पूर्ववर्ती पत्रका हवाला न लेनेके कारण ही उनसे ऐसा हो गया। कुछ भी हो इसमें धोखा देनेका सवाल ही नहीं उठता, क्योंकि रिश्तेका फर्क इतना हल्का है कि उसे सिर्फ एक गलती ठहराया जा सकता है। बल्कि सच पूछिए तो, जैसा अब पता चला है, डेलागोआ-बेमें श्री मंगाके न पिता थे, न चाचा बल्कि एक चचेरे भाई थे। इसी कारण एक दूसरी अशुद्धि भी हो गई कि श्री मंगाको उसमें ब्रिटिश भारतीय कहा गया, जबकि वह दरअसल पुर्तगाली भारतीय थे। यह सब इसलिए हुआ कि निर्देश देनेवाला श्री मंगाका एक ऐसा मित्र था जो उन्हें घनिष्ठ रूपमें नहीं जानता था। परन्तु इनमें से किसी भी तथ्यका कोई सीधा प्रभाव प्रार्थनापत्रपर नहीं पड़ता था। दूसरे पत्रमें इस आशयकी सूचना दी गई थी, कि श्री मंगा इंग्लैंडसे आनेवाले एक छात्र हैं। इस मामलेको बादमें जो रूप दिया गया, उससे तो यही दुःखदायी तथ्य सामने आता है कि एक ब्रिटिश भारतीयकी हैसियतसे श्री मंगा वह न पा सके जो इस बातका पता लगनेपर कि वे पुर्तगाली प्रजा हैं, अनायास मिल गया। मेरे संघकी तुच्छ सम्मतिमें, श्री सुलेमान मंगाका मामला इस दृष्टिसे बहुत महत्त्वपूर्ण है कि उससे प्रकट हो जाता है कि ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीय समाज किस कठिन परिस्थितिमें है। अनुमतिपत्र नामंजूर करनेका जो कारण

१. यह "ब्रिटिश भारतीय संघका उत्तर" शीर्षकसे *इंडियन ओपिनियन* में छपा था।
२. देखिए "पत्र : विलियम वेडरबर्नको", पृष्ठ २८३-६।

दिया गया था उसे बतानेसे भी संघको इनकार कर दिया गया। मेरे संघको तो पहली बार आपके पत्रसे ही इसका पता चला। तथ्योंके उक्त विवरणसे पता चलता है कि डेलागोआ-बेके रिश्तेदारके वर्णनमें फेरफार अस्वीकृतिका कारण नहीं बन सकता, क्योंकि जब निर्णयकी घोषणा हुई तब चाचाको पिता बतानेकी भूलका पता नही लग पाया था। मेरे संघका यह निवेदन है कि अस्थायी अनुमतिपत्र या जिसे 'अभ्यागत पास' कह सकते है, देनेमें काफी ढिलाईसे काम लिया जाना चाहिए और हर हालतमें प्राथियोंको यह भी बता दिया जाना चाहिए कि उनके प्रार्थनापत्र क्यों नामंजूर हुए है। इस मामलेमें हुए पत्र-व्यवहारकी जो प्रति मेरे संघने प्राप्त की है, उसे इसके साथ नत्थी करता हूँ।[1]

एशियाई नाबालिग पुरुषोंकी आयु-सीमाके बारेमें मेरे संघका सादर निवेदन है कि आपके पत्रमें जिन बुराइयोंका जिक्र किया गया है, वे आयुकी सीमा घटा देनेसे दूर नहीं होंगी। [जो धोखा देनेका इरादा रखते है वे तो धोखा देते ही रहेंगे,] फिर चाहे आयु-सीमा सोलहकी हो या बारहकी। [मानव-स्वातन्त्र्यको बाँधनेवाले कानूनोंका दुरुपयोग तो अनिवार्य है,] किन्तु मेरा संघ सादर निवेदन करता है कि ये बुराइयाँ भी कोई विस्तृत पैमानेपर नहीं है और इनसे सदैव बचाव किया जा सकता है। क्या मै यह कहनेका और साहस कर सकता हूँ कि आयु-सीमामें कमी करना अपराधी व्यक्तियों द्वारा किये गये अपराधोंके लिए निर्दोष व्यक्तियोंको दण्ड देना है।

बिना किसी आयु या यौन-भेदके सभी व्यक्तियोके लिए अनुमतिपत्र लेनेकी शर्तके बारेमें मेरा संघ यह समझता है कि यह सिर्फ ब्रिटिश भारतीयों या एशियाइयोंपर ही लागू होती है, क्योंकि मेरे संघको इस बातकी जानकारी है कि अनेक यूरोपीय बच्चों और स्त्रियोंने बिना किसी अनुमतिपत्रके इस देशमे प्रवेश किया है। मेरे संघका निवेदन है कि पत्नियों और पाँच वर्ष तक के यानी गोदके बच्चोंके लिए अनुमतिपत्र लेकर चलनेकी शर्तकी कोई आवश्यकता नहीं है, और इससे बहुत अधिक सन्ताप ही पैदा होनेवाला है। इसलिए मेरा संघ सादर एक बार फिर परमश्रेष्ठ द्वारा सहानुभूतिपूर्ण हस्तक्षेपके लिए अनुरोध करता है।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२-५-१९०६

१. ये यहाँ नहीं दिये जा रहे है।

३३४. भारतीय स्वयंसेवा

वतनी-विद्रोहके सम्बन्धमे भारतीय समाजकी दिलसापर 'नेटाल ऐडवर्टाइजर' मे जो पत्र-व्यवहार प्रकाशित हुआ है, उसकी ओर सामान्यतः हमारा ध्यान देना उचित नही होगा। परन्तु चूंकि हमारे सहयोगीके सवाददाताओने जिस विषयपर विचार व्यक्त किये है, वह भारतीय समाज और उपनिवेश — दोनोके लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है, इसलिए हमारा उनके द्वारा उठाये गये मुद्दोंपर विचार करना कोई गुनाह नही है। कुछ सवाददाताओने अन्धाधुन्ध गालियोकी जो बौछार की है, उससे हमारा कोई सरोकार नही है।

एक सवाददाताने व्यगपूर्वक यह सुझाव पेश किया है कि भारतीयोको सेनाकी अगली पक्तिमें रखा जाये ताकि वे भाग न जाये, और फिर उनकी और वतनियोकी लड़ाई देवताओके देखने योग्य होगी। हम सवाददाताकी बातपर गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहते हैं। और यह सुझाते हैं कि यदि यह तरीका अपनाया जाये तो निस्सन्देह भारतीयोके लिए उससे बढिया कोई दूसरी बात न होगी। अगर वे कायर है तो उनकी जो गति होगी वे उसके पात्र होंगे। यदि वे वीर है तो वीरोके लिए अगली पक्तिमें रहनेसे अच्छी दूसरी बात नही हो सकती। परन्तु दुःख तो यह है कि सरकारने और यूरोपीय उपनिवेशियोने, जिन्होने सरकारकी नीतिका सचालन किया है, भारतीयोंको आवश्यक अनुशासन और प्रशिक्षण देनेकी प्रारम्भिक सावधानी भी नही बरती है। इसलिए भारतीयोंसे बन्दूक चलाने अथवा युद्ध-सम्बन्धी कोई भी कार्य बहुत कुशलतापूर्वक करनेकी आशा रखना व्यवहारत. असम्भव है। पिछले युद्धमे भारतीय आहत सहायक-दलने आवश्यक प्रशिक्षण तथा अनुशासनके बिना भी बहुत अच्छा काम किया था, वह इसीलिए कि जिन भारतीय नेताओने दलमें योग दिया था वे डॉ० बूथके द्वारा पहले ही प्रशिक्षित और तैयार किये जा चुके थे।

दूसरे संवाददाताने सुझाव दिया है कि भारतीयोको हथियार न दिये जाये क्योंकि यदि ऐसा किया गया तो वे अपने हथियार वतनियोके हाथ बेच देंगे। यह सुझाव धूर्ततापूर्वक दिया गया है और वस्तुतः निराधार है। भारतीयोको कभी हथियार नही दिये गये, इसलिए यह कहना स्पष्ट मूर्खता है कि यदि उनको हथियार दिये गये तो वे एक विशेष दिशामे काम करेंगे। यह भी सुझाया गया है कि यह प्रस्ताव सस्ती वाहवाही लूटने तथा कुछ ऐसी चीज प्राप्त करनेके लिए किया गया है जो कांग्रेसकी सभाकी कार्यवाहीमे प्रकट नही की गई है। प्रथम वक्तव्य निन्दात्मक है, और उसके गलत साबित होनेका सर्वोत्तम मार्ग यही है कि ये संवाददाता सरकारको हमारा प्रस्ताव माननेके लिए तैयार करे और तब देखे कि प्रतिक्रिया पर्याप्त है अथवा नही। दूसरे वक्तव्यको तो समझना ही कठिन है। अगर उसका मशा लोगोंपर यह छाप डालनेका है कि भारतीय युद्ध-कालमे सेवा करके अपनी शिकायतोको दूर करानेकी आशा रखते हैं तो वक्तव्य ठीक है और इस उद्देश्यके लिए किसी भी भारतीयको लज्जित नही होना चाहिए। इससे ज्यादा अच्छी और प्रशसनीय और क्या बात हो सकती है कि वर्तमान सकटके अवसरपर भारतीय अपने उपनिवेशवासी अन्य भाइयोंके साथ कन्धेसे कन्धा मिलाकर खड़े हो और यह साबित करे कि वे नागरिकताके उन सामान्य अधिकारोके, जिन्हे वे गत अनेक वर्षोसे माँगते आ रहे है, अयोग्य नही है। परन्तु यह भी उतना ही सच है कि यह प्रस्ताव बिना शर्त, शुद्ध कर्त्तव्यके रूपमे, और इस बातका खयाल किये बिना किया गया है कि हमारी शिकायते दूर होगी या

नहीं। इसलिए हमारे खयालसे प्रत्येक उपनिवेशीका विशेष उद्देश्य होना चाहिए कि वह भारतीय समाजके इस प्रस्तावका समर्थन करे और इस प्रकार अपने विवेक एवं दूरदर्शिताका परिचय दे, क्योंकि यह गम्भीरतापूर्वक नहीं कहा जा सकता कि युद्धके लिए एक लाख पूर्णतः वफादार और अच्छे प्रशिक्षणके योग्य भारतीयोंके उपयोगसे आँख मूँदकर इनकार करनेमें कोई बुद्धिमानी या नीति-कुशलता है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२-५-१९०६

३३५. भारतीयोंके अनुमतिपत्र

अनुमतिपत्र अध्यादेशके अमलके सम्बन्धमें ब्रिटिश भारतीय संघने जो आवेदनपत्र भेजा था, अब उसका उत्तर लॉर्ड सेल्बोर्नने दे दिया है। परमश्रेष्ठके उत्तरमें जो तथ्य एवं तर्क दिये गये हैं, उनका निराकरण करते हुए संघने फिर एक पत्र भेजा है।[1] हम यह कहे बिना नहीं रह सकते कि लॉर्ड सेल्बोर्नका उत्तर अत्यन्त निराशाजनक है। संघने अपने उत्तरमें श्री मंगाके मामलेकी विशद चर्चा की है। इसलिए श्री मंगाकी अनुमतिपत्रकी दर्खास्तको अस्वीकार करनेका जो विचित्र कारण दिया गया है, उसपर हम इससे ज्यादा कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं समझते।

लॉर्ड सेल्बोर्नके पत्रसे यह प्रत्यक्ष है कि उम्रकी सीमा मनमाने तौरपर सोलहसे बारह कर दी गई है, क्योंकि जैसा संघने कहा है, कुछ लोगों द्वारा नियमोंका उल्लंघन उम्रकी सीमा घटानेका कोई कारण नहीं हो सकता। जो स्त्रियाँ अपने पतियोंके साथ आती हैं उनके लिए अलग अनुमतिपत्र लेना आवश्यक करके भारतीयोंकी भावनाकी बिलकुल उपेक्षा की गई है। यह एक नई बात है जिसका कतई कोई औचित्य नहीं है। एशियाई-विरोधी दलने भारतीय स्त्रियोंकी बाढ़के विषयमें एक शब्द भी नहीं कहा है। जैसा सुविदित है, ट्रान्सवालमें बहुत कम भारतीय स्त्रियाँ हैं, और वे किसी प्रकार व्यापारमें प्रतियोगिता नहीं करतीं। उनका काम केवल अपनी घर-गृहस्थीकी व्यवस्था तक सीमित है। इसलिए हमें स्पष्ट रूपसे स्वीकार करना पड़ता है कि लॉर्ड सेल्बोर्नने पत्नियोंके लिए अलग अनुमतिपत्र लेनेके बारेमें जो उत्तर दिया है उसके लिए हम तैयार नहीं थे। क्या यह कोई नई बात मालूम हुई है कि "शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अनुसार आयु और लिंगका विचार किये बिना ट्रान्सवालमें सभीको अनुमतिपत्र लेना जरूरी है?" अगर यह कोई नई बात नहीं मालूम हुई है तो अभीतक भारतीय स्त्रियोंसे कोई अनुमतिपत्र क्यों नहीं माँगा जाता था? और भारतीय बच्चोंको अभी कुछ समय पहले तक अनुमतिपत्रोंकी छूट क्यों दी गई थी?

और जैसा कि संघने बताया है, शान्ति-रक्षा अध्यादेश सबपर लागू नहीं है, क्योंकि जब यूरोपीय महिलाएँ अपने पतियों और १६ सालसे कम उम्रके बच्चे, अपने माता-पिताओंके साथ यात्रा करते हैं तो वे अनुमतिपत्र लेने या साथ रखनेसे मुक्त होते हैं। परमश्रेष्ठने भारतीय महिलाओंके विषयमें भारतीयोंकी विशेष भावप्रवणताका भी खयाल नहीं किया है। हमें यह कहनेमें जरा भी हिचक नहीं है कि यह कानून अनुचित, अपमानजनक और बिलकुल अनावश्यक है। अगर इसको लागू किया गया तो इससे ऐसा क्षोभ पैदा होगा जिसको दूर करना कठिन होगा। दरअसल यह आश्चर्य है कि इन नये कायदोंको जारी करनेके बाद भी परमश्रेष्ठ अपने उत्तरकी समाप्ति इन शब्दोंके

१. देखिए "पत्र: लॉर्ड सेल्बोर्नको" पृष्ठ ३१९-३२०।

साथ कर सकते है कि अनुमतिपत्र देनेका काम "सभी परिस्थितियोमें प्रार्थियोकी सुविधाका यथासभव खयाल रखते हुए" किया जा रहा है। जबतक आयुकी सीमा फिर वही नही कर दी जाती, जबतक भारतीय स्त्रियाँ अनावश्यक अपमानसे मुक्त नही की जाती, और जबतक भारतीय शरणार्थियोके प्रार्थनापत्रोपर, मिलते ही, तुरन्त विचार नही किया जाता तबतक, हमारी विनम्र सम्मतिमें, यदि परमश्रेष्ठ तनिक भी न्याय दिखायें तो-यह नही कह सकते कि अनुमतिपत्र-सम्बन्धी नियम किसी भी अशमे औचित्यके साथ लागू किये जा रहे है। जिन अधिकारियोको कानूनपर अमल कराना है, हम उनकी कठिनाइयोको भली भाँति समझ सकते है, परन्तु यदि उनकी तादाद कम है तो सरकारका कर्त्तव्य है कि वह कमीको पूरा करे जिससे प्रार्थनापत्रोपर विचार करनेमे विलम्ब न हो। कर्मचारियोकी इस तरहकी वढ़ती अस्थायी ही होगी, क्योकि कभी-न-कभी शरणार्थियोके प्रार्थनापत्र समाप्त हो ही जायेगे। कार्यालयमें जो काम जमा हो गया है यदि उसको निवटाना है तो कुछ और आदमी रखकर उस जमा कामको निवटानेकी व्यवस्था क्यो नही की जाती?

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२-५-१९०६

३३६. रंगदार लोगोंका प्रार्थनापत्र

ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर कालोनीका जो नया विधान वन रहा है, उसके सम्बन्धमे रंगदार लोगोकी निगरानी-समितिने ब्रिटिश लोकसभाको भेजनेके लिए एक प्रार्थनापत्र तैयार किया है। जनताको यह नही वताया गया है कि आफ्रिकी राजनीतिक संघने सम्राट सप्तम एडवर्डको जो प्रार्थनापत्र[1] भेजा था, यह उसीके सिलसिलेमें है या यह कोई अलग और स्वतन्त्र कार्रवाई है। कुछ भी हो, दोनों प्रार्थनापत्रोमें लगभग समान हितोकी हिमायत है। एकमात्र अन्तर यह है कि जहाँ सम्राटको भेजा गया प्रार्थनापत्र वतनी लोगोके परे अन्य रगदार लोगोके सम्बन्धमें है, वहाँ वर्तमान प्रार्थनापत्रमें वतनी लोग भी शामिल कर लिये गये जान पड़ते है। इसमे सन्देह नही कि अगर यहाँ संघ-राज्य वनना है और ब्रिटिश झंडेके अधीन रहना है तो अन्ततोगत्वा दक्षिण आफ्रिकाको स्वर्गीय श्री रोड्स[2] द्वारा वताई गई नीति ही अपनानी होगी। परन्तु श्री चर्चिलने जो वात कई वार कही है, उसको देखते हुए, प्रार्थियोंकी प्रार्थनाको स्वीकार करना सम्भव होगा इसमें हमें सन्देह है—यद्यपि दोनो प्रार्थनापत्रोसे भलाई ही हो सकती है क्योकि उनसे उत्तरदायी शासनके अन्तर्गत दोनों उपनिवेशोकी संसदोके अधिवेशन होते ही इस विषयपर विचार करनेका रास्ता साफ हो जायेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२-५-१९०६

१. देखिए "रंगदार लोगोंका प्रार्थनापत्र," पृष्ठ २५१-२।

२. सेसिल रोड्स १८९० से १९०६ तक केपके प्रधानमंत्री थे। उनकी नीति थी कि डच और ब्रिटिश लोगोंको मिलाकर साम्राज्यके अन्तर्गत स्वशासित दक्षिण आफ्रिकी संघ-राज्य बनाया जाये और धीरे-धीरे उसकी सीमाओंमें वतनी प्रदेशोंको भी मिलाया जाये। साम्राज्यके अन्तर्गत स्थानीय स्वायत्त शासनमें उनका विश्वास था।

३३७. भारतको स्वराज्य

भारतीय स्वराज्य-सघ (इंडियन होम रूल सोसाइटी) के उपसभापति श्री पारेखने इंग्लैंडके न्यूकैसिल नगरमे इस आशयका भाषण किया है कि भारतको स्वराज्य दिया जाना चाहिए। उसमें वे कहते है कि भारतको पूर्ण स्वतन्त्रता दी जाये और गोरे भारत छोड़ दें। [आजकलकी राजनीति न राज्यकर्ताओंके लिए लाभप्रद है और न जनताके लिए।] ऐसी प्रणालीसे नौकरीके लिए जानेवालोके नीति-विचारमें कभी-कभी बहुत विगाड़ होता है। कहा यह जाता है कि भारतका प्रबन्ध संसदकी सत्ताके अधीन है। लेकिन असलमें वह सत्ता बहुत ही कम है; अथवा यों कहिए कि नाममात्रको है। भारतके लाखों लोगोंकी शिकायतें सुननेका समय संसदके पास बिलकुल नही होता, इसलिए अधिकारी वर्ग अपनी मर्जीके मुताबिक सत्ताका उपयोग करता है। अगर स्वराज्य दिया जाये, तो निश्चित रूपसे भारतके लोगोकी हालत सुधरेगी।

[भारतमे बार-बार अकाल पड़ते है। इसका कारण अनाजका अभाव नहीं है; अनाजका अभाव हो, तो वह देशके किसी एक भागमें होगा। सारे देशमें अकाल पड़नेका कारण कुछ और ही है। अनाज तो है, पर लोगोंके पास उसे खरीदनेके लिए पैसा नहीं है। भारत भुखमरीसे पीड़ित है, इसका कारण पैसोंका अकाल है, अनाजका नही।] वहाँकी सरकार अपनी रैयतके प्रति अपने कर्त्तव्यका पालन नही करती; और अंग्रेजी राज्य लोगोंके कल्याणके लिए है, यह कहना एक ढोंग और दिखावा है। अतः [न्याय और मानवताके कल्याणके लिए भारतको स्वराज्य दिया जाना चाहिए।]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२-५-१९०६

३३८. चीनी वापस जा सकेंगे

चीनियोंको उनके देश वापस जाने देनेके बारेमें सरकार जो विज्ञप्ति चिपकाना चाहती थी, उसके सम्बन्धमें ट्रान्सवालके खान-मालिकोंकी ओरसे जोरदार आवाज उठाई गई थी। ८ तारीखके दिन बॉक्सबर्गमें आम सभा की गई थी। उसमें यह बताया गया था कि चीनियोंको स्वदेश लौटनेके लिए सरकारको पैसे नहीं देने चाहिए। मार्केट स्क्वेयरकी सभा, रैंड अग्रगामी दलकी सभा तथा क्रूगर्सडॉर्पके व्यापार-मण्डल (चेम्बर ऑफ कॉमर्स) ने भी इसी आशयके प्रस्ताव पास किए थे।

एक खानवालेने सरकारी अधिकारीको अपने क्षेत्रमें इस प्रकारकी विज्ञप्ति लगानेसे रोका था, और ट्रान्सवालके उच्च न्यायालयमें परीक्षात्मक मुकदमा दायर किया था। उसका फैसला देते हुए मुख्य न्यायाधीशने कहा है कि सरकारको इस तरहकी विज्ञप्ति लगवानेका पूरा हक है। अर्जदारकी अर्जी खर्चके साथ खारिज कर दी गई है। इस मतलबके परिपत्र जारी किए गये हैं कि खान-मालिकोंको चीनियोंके हर मुहल्लेमें विज्ञप्ति लगवानेमें सरकारी अधिकारियोंकी मदद करनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १२-५-१९०६

३३९. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

मई १४, १९०६

ट्राम सम्बन्धी परीक्षात्मक मुकदमा

ट्राम सम्बन्धी मामला आज चलनेवाला था, लेकिन नगरपालिकाने मजिस्ट्रेटके सामने भी बैरिस्टर लानेका प्रस्ताव किया है, इसलिए मामला अगले शुक्रवार तक मुल्तवी कर दिया गया है। इस मामलेपर सर रिचर्ड सॉलोमन और लॉर्ड सेल्बोर्न बहुत ध्यान दे रहे हैं।

रेलगाड़ीकी तकलीफ

ट्रान्सवालकी रेलोंमें मुसाफिरोंको एक डिब्बेसे दूसरे डिब्बेमें हटानेका जो अधिकार गार्डोंको मिला है, यहाँके व्यापार-संघने उसका विरोध किया है। यह कानून सबपर लागू होता है। अतएव संघके विरोधसे भारतीयोंको सहज ही फायदा हो सकता है। एक गोरेको थोड़ी तकलीफ हुई थी, उसीकी वजहसे यह सब हुआ है। संघकी बैठकमें भी कड़े भाषण हुए हैं।

अलीवॉल नार्थके श्री अहमद मूरती कुछ दिन पहले जर्मिस्टनसे पार्क स्टेशन जा रहे थे। उस समय गार्डने उन्हें परेशान किया। उन्होंने इसकी शिकायत की है। रेलवे अधिकारियोंसे जवाब मिला है कि गार्डको झिड़की दी गई है। मैं लिख चुका हूँ कि ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष और मंत्री महाप्रबन्धकसे मिल आये हैं। अँगुली पकड़कर पहुँचा पकड़ना — इस कहावतके अनुसार महाप्रबन्धक सूचित करते हैं कि प्रिटोरियासे शामको पाँच बजे छूटनेवाली गाड़ीमें भी भारतीय अथवा दूसरे काले मुसाफिर न जायें। संघने लिखा है कि यह मुमानियत मंजूर नहीं की जा सकती, क्योंकि पाँच बजेवाली गाड़ी एक सुविधाजनक गाड़ी है और भारतीय उसपर से अपना अधिकार नहीं छोड़ेंगे।

आयोगकी बैठकें

सर जोजेफ वेस्ट रिजवेके आयोगकी तीन बैठकें जोहानिसबर्गमें हुई हैं। उनमें प्रगतिशील दल (प्रोग्रेसिव पार्टी) और रैंड अग्रगामी दल (रैंड पायोनियर्स) ने प्रमाण पेश किये हैं। मेजर बार्नेटने ब्रिटिश भारतीय संघको लिखा है कि आयोग जब दूसरी बार जोहानिसबर्ग आयेगा, तब संघकी ओरसे भी प्रमाण लेगा। रंगदार लोक संघ (कलर्ड पीपल्स असोसिएशन) की ओरसे श्री टैनिसन भी प्रमाण पेश करनेकी तजवीज कर रहे हैं।

भारतीयोंकी गन्दगी

फोर्ड्सबर्गमें पायोनियर और पार्क रोडके कोनेपर एक भारतीयकी साग-सब्जी और फलकी दूकान है। उसपर आरोप यह था कि जिस कोठरीमें खानेकी चीजें थीं, उसीमें वह सोता था। सिपाहीने बयान देते हुए कहा कि जिस कोठरीमें अभियुक्त और दूसरा एक आदमी सोया था, उसीमें उसने फल, रोटी और साग-सब्जी देखी थी। उसी कोठरीमें एक परदेके पीछे एक कुतिया और उसके आठ पिल्ले भी थे। दूकानमें से बहुत बदबू आ रही थी। अदालतने उस आदमीको पाँच पौंडका जुर्माना अथवा तीन सप्ताहकी कैदकी सजा सुनाई। 'स्टार' में इस मामलेका विवरण छपा था। वह एक गोरेने मुझे बताया और कहा — "ऐसे लोग तुम्हारे देशवासियोंको मुसीबतमें डालते हैं। ऐसे लोगोंके बचावमें तुम्हें क्या कहना है?" मेरे पास बचावमें कुछ नहीं था। उस अखबारको लेते हुए मुझे अपना सिर शर्मसे झुका लेना पड़ा था।

१. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ ३१५-६।

ट्रान्सवालकी विधानसभा

ट्रान्सवालकी विधानसभाकी बैठक २५ तारीखसे शुरू होगी। उसमें जो काम किया जायेगा, सो जानने योग्य होगा। क्योंकि सम्भव यह है कि इस विधानसभाकी यह आखिरी बैठक होगी। अगले वर्ष नई विधानसभा बननेकी आशा है।

चीनी भित्तिपत्र

गिरमिटिया चीनियोंको स्वदेश जानेके लिए पैसे देनेके बारेमें हर खानके अहातेमें भित्तिपत्र लगानेका जो हुक्म जारी हुआ था, उसके सिलसिलेमें खानवाले सर्वोच्च न्यायालय तक पहुँच चुके हैं। श्री लियोनार्डने उनकी ओरसे बहुत मेहनत की, लेकिन सर्वोच्च न्यायालयने फिर अपनी स्वतंत्रता और न्याय-बुद्धिका परिचय दिया है। मुख्य न्यायाधीश सर जेम्स रोज़ इन्सने फैसला देते हुए कहा है कि सरकारको खानोंमें ऐसी सूचनाएँ लगानेका पूरा अधिकार है। अदालतने खानोंकी अर्जी खर्चके साथ खारिज कर दी है; सूचनाएँ हर भाषामें तथा चीनी भाषामें लगाई गई हैं। अब देखना यह है कि इसका असर क्या होता है। कुछ लोगोंका खयाल है कि इस सूचनाका लाभ उठाकर बहुतसे चीनी वापस अपने देश चले जायेंगे। दूसरे कुछ लोगोंकी राय है कि चीनियोंके मनपर इसका कोई असर नहीं होगा। अगर चीनी बड़ी संख्यामें चले जायेंगे, तो खानवालोंको बहुत भारी धक्का लगेगा। कुछ खान-मालिक खानें बन्द कर देनेकी धमकी दे रहे हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९–५–१९०६

३४०. पत्र : दादाभाई नौरोजीको

२१–२४ कोर्ट चेम्बर्स
नुक्कड़, रिसिक व ऐंडर्सन स्ट्रीट्स
पी० ऑ० बॉक्स ६५२२
जोहानिसबर्ग
मई १६, १९०६

माननीय श्री दादाभाई नौरोजी
[लन्दन]

मान्यवर,

इस पत्रका उद्देश्य आपको श्री ए० एच० वेस्टका परिचय देना है। ये इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेसके प्रबन्धक और 'इंडियन ओपिनियन' के सह-सम्पादककी तरह काम करते रहे हैं। पत्र जिस योजनाके अन्तर्गत प्रकाशित किया जाता है, श्री वेस्ट उसके संस्थापकोंमें एक हैं। ये वहाँ कुछ दिनोंके लिए स्वजनोंसे मिलने-जुलने आ रहे हैं और इस बीच यथाशक्ति कुछ सार्वजनिक काम भी करेंगे।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (जी० एन० २२७२) से।

३४१. एक एशियाई नीति

प्रख्यात लेखक 'एल० ई० एन०' ने 'रैंड डेली मेल' मे अपने योग्यतापूर्ण लेख समाप्त कर दिये हैं। ये उन्होंने उपनिवेशोंमे आबाद एशियाइयोंके सम्बन्धमें लिखे हैं। उन्होंने सुझाव दिया है कि इस प्रश्नको हल करनेके निमित्त निम्नलिखित उपाय किये जाने चाहिए:

(१) जहाँतक सम्भव हो, और चाहे कितनी ही हानि उठानी पड़े, स्थायी निवासियोंके रूपमें एशियाई लोगोंको यहाँ न आने दें।

(२) गिरमिटिया मजदूरोंकी जरूरत हो तो उनकी गिरमिटकी अवधि पूरी होनेपर उनकी वापसीपर जोर दें।

(३) जो एशियाई पुराने जमानेकी हालतोंमें इस देशकी आबादीका भाग बन गये हैं उनके साथ न्यायोचित ही नहीं, बल्कि उदार बरताव किया जाये।

(४) अस्थायी दर्शकों या यात्रियोंकी गतिविधिपर कोई परेशान करनेवाली रुकावटें न लगाई जाएँ। लेखक यह कहकर अपनी लेखमाला समाप्त करता है:

> ऐसी नीतिके साथ संतापजनक रुकावटें नहीं रहनी चाहिए, जिनसे शिक्षित व्यक्तियोंका अपमान हो। ये रुकावटें उस कानूनकी अपेक्षा ज्यादा परेशान करनेवाली और हानिकर हैं जिनके द्वारा अपेक्षाकृत ज्यादा गरीब वर्गके हजारों लोग देशमें प्रवेश करनेसे चुपचाप रोक दिये गये हैं। पूर्वी दुनियाके सुसंस्कृत यात्रीके साथ ऐसा व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए जो न्यूयार्क जहाज घाटमें एक कँगले प्रवासीके साथ भी नहीं किया जाता। उनको एक अपराधीकी भाँति अपनी अँगूठा-निशानी देना मंजूर करनेके लिए मजबूर करना अथवा तुरन्त किसी बस्तीमें भेज देनेकी धमकी देना, जैसी ट्रान्सवालके उग्रतावादी देते हैं, उचित नहीं है।

जो बातें पेश की गई हैं उनमें से एकको छोड़ कर हम सबसे हृदयसे सहमत हैं। असलमें 'एल० ई० एन०' की बताई नीति वही है जिसको भारतीय समाज स्वीकार कर चुका है। किन्तु जो अपवाद हमारे दिमागमें है, वह बहुत ही गम्भीर है। यदि भारतसे गिरमिटिया मजदूर लाने हैं — चाहे रैंडकी खदानोंके लिए, चाहे नेटालकी खेतियोंके लिए, तो वे वापसीकी धाराके अन्तर्गत नहीं लाये जाने चाहिए। यदि ऐसे मजदूर न लाये गये होते तो दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंका सवाल शायद कभी उठता ही नहीं। किन्तु यदि गिरमिटिया मजदूरोंका देशमें लाना दक्षिण आफ्रिकाके किसी भागकी समृद्धिकी दृष्टिसे पूर्णतः आवश्यक समझा जाये, तो न्यायोचित यही है कि उनको इस प्रकार लानेके बाद, और स्वर्गीय श्री एस्काम्बके शब्दोंमे, उनके जीवनके सर्वोत्तम पाँच वर्ष यहाँ लगानेके बाद, उनको इस देशमें बसने और अपनी पसन्दका कोई खरा धन्धा चुनकर अपनी सेवाओंका पुरस्कार भोगनेकी स्वतन्त्रता होनी चाहिए। स्वर्गीय सर विलियम विलसन हंटरको भी, जो अपने अत्यन्त नम्र विचारोंके लिए प्रसिद्ध थे और जिनकी ख्याति यह थी कि वे सदा सभी बातोंपर बुद्धिमत्तापूर्वक विचार करते हैं, गिरमिटिया मजदूरोंकी हालतको "खतरनाक रूपसे गुलामीके नजदीक" माननेमे कोई हिचक नहीं हुई थी। इसलिए ऐसे लोगोंका कमसे-कम अधिकार यह है कि उनको उस देशमें रहनेकी स्वतन्त्रता दी जाये जिसकी सेवा वे इतनी अच्छी तरहसे कर चुके हैं। इसलिए हमारा खयाल यह है कि यदि लेखक महोदयने मुक्त भारतीयोंके प्रवासके

प्रश्नपर उसके गुणावगुणकी दृष्टिसे विचार किया होता तो उनके लेखोंका महत्व और भी ज्यादा बढ़ जाता। क्योंकि जहाँ प्रवास साम्राज्यकी नीतिका मामला है, वहाँ गिरमिटिया मजदूरोंका प्रश्न करार और बातचीतका है।

एक प्रश्नपर विचार करनेमें जिन बातोंका खयाल रखना होता है, वे दूसरे प्रश्नपर भी लागू हों, यह जरूरी नहीं है। दक्षिण आफ्रिकामें, जहाँ ट्रान्सवाल और नेटाल बहुत-कुछ गिरमिटिया मजदूरोंपर निर्भर हैं, फिर वे भारतसे आयें या एशियाके अन्य भागोंसे, इस अन्तरको खयालमें रखना अत्यन्त आवश्यक है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-५-१९०६

३४२. दक्षिण आफ्रिकामें दूकान-बन्दी आन्दोलन

सभी जानते हैं कि नेटालमें निश्चित समयपर दूकानें बन्द करनेका कानून बन चुका है। हम यह कह चुके हैं कि केपकी धारासभामें इस प्रकारका विधेयक पेश होनेवाला है। अब जोहानिसबर्गसे समाचार मिले हैं कि ट्रान्सवालमें भी इस तरहकी हलचल शुरू हो गई है। मेसॉनिक टेम्पलमें बड़े-बड़े यूरोपीय लोगोंकी सभा हुई थी। सर जॉर्ज फेरार उसके सभापति थे। जोहानिसबर्गके महापौर उसमें हाजिर थे। इस सभामें तय किया गया है कि निश्चित समयपर दूकानें बन्द करनेका कानून बनना चाहिए। भारतीय व्यापारियोंको इस विषयमें चेतकर चलना चाहिए। कानून बने और हमारे लिए लाजिमी हो जाये, उससे पहले हम कदम उठा लें, इसीमें हमारी शोभा है। नेटालके दूकान-व्यवस्थापकोंका कहना है कि यदि हम, लाजिमी हो जानेके बाद अपनी दूकानें बन्द करते हैं तो कोई खास बात नहीं करते। एक हद तक यह बात ठीक भी है। पॉचिफस्ट्रूमके भारतीय व्यापारियोंने नियमानुसार दूकानें बन्द करनेका प्रस्ताव पास किया था। इसपर हम उन्हें बधाई भी दे चुके हैं। पर हमारे प्रतिनिधिने लिखा है कि वहाँके भारतीय व्यापारियोंने नियमानुसार दूकानें बन्द करना फिर छोड़ दिया है। अगर ऐसा हुआ है, तो हमें इसका अफसोस है। पॉचिफस्ट्रूमके भारतीय व्यापारियों और दूसरी जगहोंके व्यापारियोंको खास तौरपर हमारी सलाह यह है कि अगर वे कानून बननेसे पहले चेत जायें और दूकानें बन्द करनेके बारेमें गोरे व्यापारियोंके साथ समझौता कर लें, तो बहुत अच्छा होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-५-१९०६

३४३. पॉचेफस्ट्रूम और क्लार्क्संडॉर्प[1]

पॉचेफस्ट्रूममें फिलहाल व्यापार मन्दा दिखाई पड़ता है। वहाँके भारतीयोको खास दिक्कत है बग्घीकी और सार्वजनिक बगीचोंमें न जा सकनेकी। भारतीयोंके लिए बग्घी तत्काल प्राप्त करना मुश्किल होता है। इसका कोई कानूनी उपाय हो सकनेकी कम सम्भावना है। क्योंकि, पहले जब यह घटना घटी थी उस समय पॉचेफस्ट्रूमकी नगरपालिकाने जो उपनियम बनाया था, वह अब भी लागू है। बगीचेवाले मामलेका इलाज तो भारतीयोंके हाथमे ही है। हमें बगीचेमे जानेसे रोका नहीं जा सकता। इस विषयमें मजिस्ट्रेटकी अदालतमें ही मुकदमा दायर किया जाये, तो चल सकता है।

पॉचेफस्ट्रूमके भारतीयोंने अंग्रेज व्यापारियोंसे मेलजोल करके दूकानोंके मामलेमें गोरो जैसा कुछ प्रबन्ध किया हो, तो जान पड़ता है, उसे उन्होंने तोड़ दिया है। यह ठीक नहीं हुआ। जिस तरह शुरू किया था, उसी तरह पार भी लगाना चाहिए था। गोरे हमसे सीधा व्यवहार नहीं करते तो हम भी सीधा व्यवहार न करें, ऐसा नहीं होना चाहिए।

क्लार्क्संडॉर्प और पॉचेफस्ट्रूम दोनोंकी तुलना की जाये तो क्लार्क्संडॉर्पके भारतीय भण्डार बढ़िया हैं। क्लार्क्संडॉर्पके भण्डारोंकी रचना सुन्दर दिखती है, और बाहरका दिखावा भी सुहावना है। कोई वजह नहीं कि पॉचेफस्ट्रूममें भी ऐसा क्यों न हो। क्लार्क्संडॉर्प और पॉचेफस्ट्रूम दोनों जगहोंके भारतीय भण्डार सुघड़तामें और दूसरी तरहसे बहुत-कुछ यूरोपीय भण्डारों-जैसे ही पाये गये हैं। लेकिन भण्डारोंके पीछेके अहातेमें और रहनेकी स्थितिमें हेरफेर करना जरूरी है। अहातेमे रहनेके लिए जो कोठरियाँ बनी हैं वे अधिक साफ और प्रशस्त होनी चाहिए; और स्नानघर आदि स्थान बिलकुल साफ रहने चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९-५-१९०६

३४४. हमारे अवगुण

हमारे जोहानिसबर्गके संवाददाताने भारतीयोंकी गन्दगीकी जो खबरें भेजी हैं, वे सबके लिए विचारणीय हैं। अगर पिछले बीस सालोंके अखबारोंको कोई आज देखे, तो पता चलेगा कि भारतीयोंके विरुद्ध सबसे बड़ा आरोप गन्दगीका है। इसमें गोरोंने जितनी बातें बढ़ा-चढ़ा कर कही हैं, उन सबका जवाब हम दे चुके हैं। लेकिन हमारे जोहानिसबर्गके संवाददाताने जिस मामलेकी ओर हमारे पाठकोंका ध्यान खींचा है, वह सचमुच ही हमें नीचा दिखानेवाला है। जिस कोठरीमें सोना, उसीमें साग-सब्जी रखना, उसीमें रोटी रखना — ये बहुत भयंकर बातें हैं। अदालतने इसपर जो सजा दी है, उसके खिलाफ कुछ कहनेको नहीं रहता। जिस आदमीने यह गुनाह किया है, उसने अनजाने ऐसा किया है, सो भी नहीं कहा जा सकता। हम ऐसी बातोंकी ओर दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंका ध्यान बार-बार खींचना चाहते हैं। असलमें ऐसी गन्दगीका उपाय हमारे ही हाथों होना चाहिए। हम खुद ऐसे गुनाहोंसे दूर रहें, इतना ही काफी नहीं है, बल्कि हमारा

१. यह “हमारे विशेष प्रतिनिधिकी यात्रापर” आधारित था।

फर्ज है कि अपने अड़ोसी-पड़ोसियों, परिचितों और जिन-जिनपर हमारी बातका असर पड़ता है, उन सबको ऐसी भूलोंसे दूर रहनेके लिए समझायें। इस प्रकारके सुधार करनेके लिए हम समितियाँ बनायें, तो वह भी गलत नहीं कहा जायेगा। हम मानते है कि, जो समितियाँ हालमें कायम हुई है, उनका मुख्य कर्तव्य यही है। हम ऐसी बातोंकी ओर मुस्लिम संघ और हिन्दू सनातन धर्म सभाका ध्यान विशेष रूपसे खींचते हैं। हमारे बड़े-बड़े व्यापारी, जो सचमुच अगुआ है, इस मामलेमें बहुतसे सुधार कर सकते हैं। सबसे पहले तो वे अपने भंडारोंके पीछेकी जगहोंको साफ करवा सकते है और यों वे छोटे व्यापारियों और फेरीवालोंपर अपना प्रभाव डाल सकते है।

यह कहना गलत न होगा कि कुछ कानून तो हमने निमंत्रित किये है। और अगर अब भी हम न चेतेंगे तो ज्यादा सख्तीका सामना करना पड़ेगा। हम आपसमें बातचीत करते समय अपनी तुलना यहूदियोंके साथ करते हैं। तुलना करते हुए हम यह कहते हैं कि यहूदियोंकी रहन-सहन हमसे ज्यादा गन्दी है, फिर भी उन्हें कोई नहीं सताता। इस बातमें सिर्फ आधी सचाई है, और अर्ध-सत्य आदमीको सदा भुलावेमें डालता है। यहूदियोंकी रहन-सहन गरीबीमें हमसे खराब रहती है, इसमें कोई शक नही। लेकिन हाथमें पैसा आ जानेपर वे उसका उपयोग अधिक अच्छी तरह कर सकते है। धनका गलत संग्रह करनेके बदले वे उसका उपयोग उचित स्थानोंमें करते है। डर्बनमें, जोहानिसबर्गमें अथवा केप टाउनमें, हम जहाँ भी देखते है, हमें साफ दिखाई देता है कि जिन यहूदियोंने पैसा कमाया है, वे उसका उपयोग करना भी जानते हैं। उनके घर बहुत साफ और सुन्दर है। उनकी रहन-सहन ऊँचे दर्जेकी है। वे दूसरे यूरोपीयोंके साथ आसानीसे घुलमिल सकते है। अपने इस व्यवहारके कारण वे ज्यादा पैसा भी कमा सके हैं। और वह यहाँ तक कि, आज जोहानिसबर्गमें वे राज्यकर्त्ताओं जितना ही प्रभाव रखते है। दुनियामें अधिकसे-अधिक धनवान लोग उनमें मिल सकते है।

मनुष्य जातिमें यह विशेषता है कि वह अपने-जैसे अवगुण दूसरोंमें खोज लेती है, और फिर यह जानकर सन्तोषका अनुभव करती है कि दूसरोंमें भी उसके जैसे अवगुण मौजूद हैं। जो समझ सकते है, जिनके मनमें देशके लिए दर्द है, जिन्हें दूसरोंकी बहादुरीको देखकर जोश आता है, ऐसे गुणीजनोंको सद्भावनापूर्वक दूसरोके अवगुणोंका खयाल न करते हुए उनके गुणोका ही ध्यान रखना चाहिए और उनके अनुसार चलकर दूसरोंको चलानेकी कोशिश करनी चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९–५–१९०६

३४५. भारतकी स्थितिपर 'रैंड डेली मेल'के विचार

पिछले कुछ हफ्तोंसे जोहानिसबर्गके 'डेली मेल' में कोई व्यक्ति 'एल० ई० एन०' नामसे दक्षिण आफ्रिकामें भारतीयोंकी स्थितिके बारेमें लिखा करता है। पिछले हफ्तेमें उसका अन्तिम लेख छापा गया है। उसमें उसने भारतीयोंके बारेमें नीचे लिखे विचार प्रकट किये हैं।

१. इसके बाद अधिकतर एशियासे आनेवाले लोगोंको दक्षिण आफ्रिकामें आनेसे रोका जाये।

२. अगर एशियाके मजदूरोंकी जरूरत पड़े, तो उन्हें इकरारके अनुसार गिरमिटकी अवधि पूरी होनेपर लाजिमी तौरसे भारत या उनका जो भी देश हो वहाँ वापस भेजा जाये।

३. एशियाके जो लोग इस देशमें आकर बसे हैं, उनके प्रति उदारताका बरताव किया जाये।

४. कुछ समयके लिए आनेकी इच्छा करनेवाले भारतीयपर किसी प्रकारकी सख्ती न की जाये।

इस प्रकार विचार प्रकट करनेवाला लेखक प्रभावशाली है और उसने दूसरे कई अखबारोंमें भी लिखा है। गिरमिटिया मजदूरोंको लाजिमी तौरपर वापस भेजनेकी बातको छोड़कर इस लेखकी दूसरी सब बातें बहुत-कुछ मानने योग्य हैं। और इस प्रकारकी माँग हम कबसे करते आ रहे हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९–५–१९०६

३४६. बालकोंके अनुमतिपत्रके बारेमें सूचना

सोलह सालसे कम उम्रवाले बालकोंको फिलहाल अनुमतिपत्र नहीं दिये जाते। लेकिन ब्रिटिश भारतीय संघ इनके लिए लड़ रहा है। सम्भव है कि १६ सालसे कम, लेकिन १२ सालसे अधिक उम्रके जो बालक इस समय दक्षिण आफ्रिकामें आ चुके हैं, उनको कोई अड़चन नहीं होगी। इसलिए जिन लोगोंके १२ सालसे अधिक उम्रके लड़के दक्षिण आफ्रिकाके किसी भी बन्दरगाहमें हों, वे उनके नाम-पते हमारे पास भेज दें। हम उन नामोंको यथास्थान पहुँचा देंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९–५–१९०६

३४७. चीनियोंको वापस भेजनेका सवाल

हम अपने पाठकोंको यह बता चुके हैं[1] कि ब्रिटिश सरकारने चीनियोंको वापस उनके देश भेजनेका सवाल अपने हाथमें ले लिया है और वह उसके लिए खर्च देनेको भी तैयार हो गई है। इसके कारण ट्रान्सवालमें बहुत खलबली मची है। और गोरे खान-मालिक इस बातकी व्यवस्था करनेमें लगे हैं कि चीनियोंको वापस भेजनेसे रोकनेके लिए एक शिष्टमण्डल विलायत भेजा जाये। जनरल बोथाने चीनियोंके जुल्मोंको देखकर सरकारके पास यह शिकायत भेजी है कि चीनी लोग किसानोंपर जुल्म करनेसे बाज नहीं आते; वे और अधिक क्रूर बनते जा रहे हैं। सवाल यह खड़ा होता है कि वे कबतक इस तरह जुल्म करते रहेंगे। अगर ट्रान्सवालकी सरकार और खानवाले इन लोगोंको इनके अत्याचारपूर्ण व्यवहारसे नहीं रोकेंगे तो बोअर लोग ब्रिटिश सरकारको इसकी खबर करेंगे। वे यह भी कहते हैं कि अगर सरकार इस मामलेमें कोई सन्तोषजनक जवाब नहीं देगी, तो वे चीनियोंको वापस भिजवानेकी बात कहनेके लिए ब्रिटिश सरकारके पास शिष्टमण्डल भेजेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १९–५–१९०६

३४८. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

[मई १८, १९०६ के बाद[2]]

ट्रामका परीक्षात्मक मुकदमा

पिछले शुक्रवार, १८ तारीखको, मजिस्ट्रेट श्री क्रॉसकी अदालतमें जोहानिसबर्गकी नगर-पालिकाके विरुद्ध श्री इब्राहीम सालेजी कुवाडियाका मुकदमा चला था। श्री कुवाडियाने बयान देते हुए कहा कि वे ब्रिटिश भारतीय संघके कोषाध्यक्ष हैं। ७ अप्रैलको जब वे बिजलीकी ट्रामपर चढ़ रहे थे, कंडक्टरने उन्हें रोक दिया। नगरपालिकाकी ओरसे कंडक्टरने बयान दिया, और नगरपालिकाका कथन पूरा हो गया। इस बार नगरपालिकाकी तरफसे बैरिस्टर श्री फीथम खड़े हुए थे और श्री कुवाडियाकी तरफसे धर्मके वकील श्री ब्लेन, और उनको सलाह देनेके लिए श्री गांधी हाजिर थे। श्री फीथमने दलील देते हुए कहा कि सन् १८८७ में बोअर सरकारने चेचककी बीमारीके मौकेपर कुछ कानून जारी किये थे। उन कानूनोंके अनुसार काले लोग, अगर वे गोरोंके नौकर न हों तो, गोरोंके साथ नहीं बैठ सकते। वे कानून आज भी कायम हैं, इसलिए भारतीय ट्राममें नहीं बैठ सकते। मजिस्ट्रेट श्री क्रॉसने यह दलील नहीं मानी, और जोहानिसबर्गकी नगरपालिकाके गाड़ियोंके लिए बनाये गये नियमोंके आधारपर श्री कुवाडियाको ट्रामगाड़ीका उपयोग करनेका हक है, यह फैसला देते हुए उन्होंने कंडक्टरको पाँच

१. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ ३२५–६।

२. मूल पत्रमें तिथि १४–५–१९०६ है, जो गलत जान पड़ती है। नगरपालिकाके विरुद्ध श्री कुवाडिया द्वारा दायर किये गये मुकदमेकी १८ मईको हुई सुनवाईके उल्लेखसे यह स्पष्ट है कि पत्र उस दिन, अथवा उसके बादकी तारीखको लिखा गया। अन्तके कुछ अनुच्छेदोंमें मई २२, १९०६ की तारीख पड़ी है।

शिलिंगका जुर्माना, और जुर्माना न देनेपर एक दिनकी कैदकी सजा सुनाई। कंडक्टरने पाँच शिलिंग उसी वक्त दे दिये।

इस मामलेमें यह भी पता चला कि भारतीय [श्री कुवाडिया] को हरानेके लिए नगर-परिषदने ट्रामगाड़ी गोरोंके लिए है, ऐसा एक परवाना जारी किया था, और श्री फीथमने उसे बड़े जोशमें आकर पेश किया था। लेकिन जैसी कि कहावत है, दूसरोंके लिए गड्ढा खोदनेवाला खुद ही उसमे गिरता है, इस मामलेमे नगर-परिषद धोखा खा गई। जारी किया गया परवाना जिस दिन श्री कुवाडिया ट्राममें बैठने गये थे उसके चार दिन बाद जारी हुआ था। इसलिए जब श्री फीथमको इस गलतीका भान हुआ, तब वे शरमिन्दा हुए।

इस बार अखबारोंके सवाददाता हाजिर थे, इसलिए यहाँके सब अखबारोंमे लगभग पूरा विवरण छपा है। इस प्रकार भारतीयको विजय तो पूरी मिली, पर ऐसा लगता है कि नगर-परिपदने उसका फल हमारे हाथसे छीन लिया है। शुक्रवारको जितनी खुशी हुई, शनिवारको 'गवर्नमेंट गजट' देखनेपर उतना ही रज हुआ। उस 'गजट' मे जोहानिसबर्गकी नगरपालिकाकी ओरसे एक कानून छपा है। उसमे सिर्फ इतना कहा गया है कि नगरपालिकाने ट्रामके बारेमे जो कानून बनाये थे, वे रद कर दिये गये हैं। वैसे देखा जाये तो इस प्रकारके कानूनमे कोई दोप दिखाई नही देता। लेकिन इसका कानूनी अर्थ नीचे लिखे अनुसार होता है।

हमारी दलील यह थी कि जोहानिसबर्गकी नगरपालिकाके कानून चेचक-सम्बन्धी कानूनके बाद बने हैं, और चूँकि चेचकवाले कानून उनके विरुद्ध है, इसलिए वे रद माने जायेंगे। लेकिन चूँकि अब नये कानूनोंको वापस ले लिया गया है, इसलिए यह दलील दी जा सकती है कि नगरपालिकाकी मान्यताके अनुसार चेचकवाले कानून फिर सजीव हो उठे हैं।

इसे खुला दगा कहना होगा। इसका नतीजा यह हुआ कि हमें फिरसे सारी लड़ाई लड़नी पड़ेगी; और वह बहुत मुश्किल और खर्चीली होगी। फिर भी अगर भारतीय जनताको ऐसी हार स्वीकार न करनी हो, तो लड़े बिना छुटकारा नही है।

यहाँकी नगर-परिपदमे श्री लेन नामक एक सदस्य हैं। उन्होने कल नगर-परिषदमे ट्राम-वे समितिके अध्यक्षसे कुछ सवाल पूछे हैं। उनमे उन्होंने इसका आँकडा माँगा है कि नगर-परिषदने ऐसे मुकदमे लडकर नागरिकोको कितने खर्चके गड्ढेमें उतारा है और, यह सूचित किया है कि अगर नगर-परिषदको अपनी इज्जतका थोड़ा भी खयाल हो, तो अब उसे भारतीयोको नही सताना चाहिए।

अनुमतिपत्रके मामलेमें लॉर्ड सेल्बोर्नका जवाब

ब्रिटिश भारतीय सघके दूसरे पत्रका जवाब लॉर्ड सेल्बोर्नने दिया है। कह सकते हैं कि वह सक्षिप्त और अशिष्ट है। उसमे यह कहा गया है कि अनुमतिपत्रके बारेमे तत्काल वे अधिक कुछ नही कर सकते। इसका मतलब यह हुआ कि स्त्रियोको भी अनुमतिपत्र लेने होंगे। फिर भी मैं मानता हूँ कि भारतीय कौम ऐसा कानून स्वीकार नही करेगी, और लॉर्ड महोदयके ऐसे विचार अमलमें नहीं आ सकेंगे।

मलायी बस्ती

मलायी बस्तीको अपने कब्जेमे कर लेनेकी जो सत्ता नगर-परिषदको दी गई थी, उसके बारेमे बस्तीकी गुमटियोंके मालिकोने लॉर्ड सेल्बोर्नके पास शिष्टमण्डल ले जानेका विचार किया है।

विलायतसे आया हुआ आयोग

इस आयोगके सामने भारतीयोंका शिष्टमण्डल मंगलवार २२ तारीखको दिनमें ३-१५ बजे जानेवाला है। उस समय जो होगा उसका विवरण, समय रहा तो, इस अंकमें दूँगा।

मंगलवार, २२-५-१९०६

संविधान समितिके पास भारतीय शिष्टमण्डल

आज भारतीय शिष्टमण्डल संविधान समितिसे मिल आया। शिष्टमण्डलमें श्री अब्दुल गनी (अध्यक्ष), श्री हाजी वजीर अली, श्री इब्राहीम सालेजी कुवाडिया (जोहानिसबर्ग), श्री इस्माइल पटेल (क्लार्क्संडॉर्प), श्री इब्राहीम खोटा (हीडेलबर्ग), श्री इब्राहीम जसात (स्टैंडर्टन), श्री ई० एम० पटेल (पॉचेफस्ट्रूम) तथा श्री मो० क० गांधी उपस्थित थे। श्री हाजी हबीबने तार दिया था कि अधिक काम होनेके कारण वे आखिरी घड़ी तक नहीं निकल सके।

शिष्टमण्डलकी ओरसे वक्तव्य तैयार किया गया था। वह आयोगके सदस्योंके सामने पेश किया गया। आयोगके अध्यक्षने उसे पढ़नेके बाद कुछ प्रश्न पूछे और कहा कि यदि किसीको और ज्यादा प्रश्न पूछने हों तो वह पूछ सकता है। उस परसे श्री हाजी वजीर अलीने कहा कि भारतीयोंको मताधिकारके बजाय अपने साधारण अधिकारोंकी ज्यादा जरूरत है। उन्हें ट्राममें भी नहीं बैठने दिया जाता और बहुत अपमान होता है।

अध्यक्ष महोदयने जब विशेष स्पष्टीकरणके लिए कहा तो श्री गांधीने ट्रामका इतिहास सुनाया और कहा कि ट्रामसे ज्यादा दुःख देनेवाली बात यह है कि भारतीयोंको जमीन खरीदनेका अधिकार बिलकुल नहीं है। इतना ही नहीं, उन्हें यदि धार्मिक कार्योंके लिए भी जमीनकी आवश्यकता हो, तो वह भी उनके नामपर नहीं चढ़ती। प्रिटोरिया, जोहानिसबर्ग, हीडेलबर्ग, वगैरह जगहोंपर जमीनें हैं, उन्हें नामपर चढ़ानेकी आपत्ति उठा ही करती है। भारतीयोंको काफिरोंकी बराबरीका मानना चाहते हैं, यह बहुत ही अन्याय है। ट्रान्सवालमें बहुतसे कानून हैं। उनमें कहीं भी 'वतनी' शब्दमें भारतीयोंका समावेश नहीं किया गया है।

फिर आयोगके अध्यक्षने कहा कि ट्रामका इतिहास और दूसरी बातें सब लिखकर सचिवके नाम भेज दीजिए, तब उसपर आयोग ध्यान देगा। इसके बाद शिष्टमण्डल विदा हुआ।

फिर लॉर्ड सैंडहर्स्ट, जो बम्बईके गवर्नर रहे थे, बाहर निकले और उन्होंने बम्बई वगैरहके बारेमें समाचार पूछकर कहा कि मुझे बम्बई बहुत पसन्द है। मेरी वहाँ फिर जानेकी इच्छा होती है।

आयोगके समक्ष पेश किया गया वक्तव्य अगले सप्ताह दूँगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-५-१९०६

३४९. पत्र : 'ट्रान्सवाल लीडर' को[1]

जोहानिसबर्ग
मई २१, १९०६

सेवामें,
सम्पादक
'ट्रान्सवाल लीडर'
[जोहानिसबर्ग]

महोदय,

ब्रिटिश भारतीय संघके सुझावपर चलाये गये ट्रामगाड़ी अभियोगके सम्बन्धमें आपने जो अग्रलेख लिखा है, उसके बारेमें मैं यह कहनेकी अनुमति चाहता हूँ कि न्यायाधीशके निर्णयसे ट्रामगाड़ियाँ हर दर्जेके रंगदार लोगोंके लिए उपलब्ध नहीं हो जातीं। उदाहरणके लिए इस कानूनसे वे वतनियोंके लिए उपलब्ध नहीं और इससे वह कानून भी अछूता रहता है जिसके अनुसार कंडक्टर उन मुसाफिरोंको बिठानेसे इनकार कर सकता है जो शराब पिये हों, खराब कपड़े पहने हों अथवा उनका बैठना अन्यथा आपत्तिजनक हो। इसलिए जब आप यह कहते हैं कि आपकी "टिप्पणी मामलेके अत्यन्त व्यापक रूपोंको ध्यानमें रखकर लिखी गई है" तब आप परिषदके पक्षको दुर्बल कर देते हैं। क्योंकि, कभी किसीने भी यह नहीं कहा कि ट्राम-गाड़ियोंका उपयोग किसी भेदभावके बिना सभीको करनेका अधिकार होना चाहिए।

किन्तु, महोदय, नगर-परिषदने एक ऐसे तरीकेसे जो सम्माननीय नहीं है, भारतीयोंको उनकी जीतके फलसे वंचित कर दिया है। क्योंकि 'गवर्नमेंट गजट' के इसी अंकमें एक उपनियम छपा है जिससे ट्रामगाड़ियोंसे सम्बन्धित उपनियम मंसूख हो जाते हैं। इसका अर्थ है कि अब ट्रामगाड़ियाँ यातायातके नियंत्रण सम्बन्धी उपनियमोंके बिना ही चलाई जायेंगी, किन्तु उसका अर्थ यह भी है कि अब ब्रिटिश भारतीयोंके लिए सामान्य उपनियमोंके अन्तर्गत नगरपालिकाकी ट्रामगाड़ियोंमें बैठनेके अधिकारका दावा करना सम्भव न होगा। और नगरपालिका, मैं आशा करता हूँ, यह तर्क उपस्थित करेगी कि इस मसूखीसे पुरानी सरकारके चेचक सम्बन्धी वे कायदे फिर बहाल हो जाते हैं, जो, न्यायाधीशके फैसलेके अनुसार, अब मसूख किये गये उपनियमोंकी मौजूदगीमें लागू नहीं होते थे। अंग्रेजोंका यह गर्व उचित ही है कि वे अनुचित प्रहार कभी नहीं करते। मुझे अत्यन्त आदरके साथ यह कहना है कि नगर-परिषदने उक्त विधिको अपनाकर उस गर्व-योग्य परम्पराका त्याग कर दिया है। मुझे यही दिखाई देता है और आशा है कि प्रत्येक दूसरे करदाताको भी ऐसा ही दिखाई देगा।

तब नगर-परिषदकी कार्रवाईके बाद फिलहाल, मेरे पेश किये हुए तथ्योंके अलावा भी, आपका यह भय निराधार है कि ट्रामगाड़ियोंका उपयोग "हर दर्जेके रंगदार लोग" करेंगे।

१. यह "ट्रामका मामला" शीर्षकसे छापा गया था।

फिर भी मैं आपसे पूछता हूँ कि नगर-परिषदने अपने उद्देश्यकी पूर्तिके लिए जो साधन ग्रहण किये है, क्या आप उनका समर्थन करते हैं?

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

ट्रान्सवाल लीडर, २५-५-१९०६

३५०. साम्राज्य-दिवस

पिछले गुरुवारको साम्राज्य भरमें, स्वर्गीया सम्राज्ञीका जन्मदिन मनाया गया। यद्यपि सालपर साल बीतते जाते हैं फिर भी उस श्रेष्ठ महिलाकी स्मृति सदाकी तरह ताजी बनी है। भारत और वहाँके लोगोंमें उनकी गहरी दिलचस्पी थी और बदलेमें उन्हें भारतकी कोटि-कोटि जनताका सम्पूर्ण हार्दिक स्नेह प्राप्त था। जब १८५८ के राजघोषणापत्रमें इस बातका अवाञ्छनीय उल्लेख किया गया कि सरकारको देशी धर्मों और प्रथाओंका प्रभाव कम करनेका अधिकार है, तब उन्होंने सारा घोषणापत्र फिरसे लिखवाया। और इस कृत्यके द्वारा उन्होंने भारतके धर्मोंमे अपनी दिलचस्पी और उनके प्रति सहिष्णुताको व्यक्त किया। अपने एक पत्रमें महारानीने लॉर्ड डर्बीको[1] लिखा:

> **ऐसा आलेख उदारता, नम्रता और धार्मिक सहिष्णुताकी भावनाओंसे भरा हुआ होना चाहिए और उसमें उन विशेष अधिकारोंका संकेत होना चाहिए जो भारतीयोंको ब्रिटिश सम्राट्की प्रजाके साथ समानताके आधारपर प्राप्त होंगे और उस सुख-समृद्धिका जिक्र भी होना चाहिए जो सभ्यताके पीछे-पीछे आयेगी।**

ये सिद्धान्त थे जिनपर साम्राज्यकी नीव रखी गई थी। केवल व्यापार-विस्तार और भूमिपर प्रभुत्व प्राप्त करना सच्चे साम्राज्यवादियोंका लक्ष्य नहीं हुआ करता। उनके सामने एक महान और उच्च आदर्श होता है। जॉन रस्किनके शब्दोंमें वह आदर्श है: "यथासम्भव अधिकसे-अधिक संख्यामें पूर्ण प्राणवान, तेजस्वी नयन तथा सुखी हृदयवाले मानव-प्राणियोंका प्रादुर्भाव करना।" हम इस आदर्शको अपने दक्षिण आफ्रिकाके जन-नायकोंके सामने रखेंगे और उनसे अनुरोध करेंगे कि वे जातीय विद्वेष और रंग-भेदकी भावनाओंको दूर कर दें। महान ब्रिटिश साम्राज्य न तो अत्याचारपूर्ण तरीकोंसे अपनी वर्तमान गौरवपूर्ण स्थितिमें पहुँचा है और न वफादार रिआयाके साथ अनुचित व्यवहारसे उस स्थितिको कायम रखना ही सम्भव है। ब्रिटिश भारतीय अपने सम्राट्के प्रति सदैव गहरी भक्ति रखते रहे हैं और उनको अपने प्रजावर्गमें सम्मिलित करके साम्राज्यने कुछ खोया नहीं है। ग्रेट ब्रिटेनके लिए भारत सम्पत्तिका एक विशाल भण्डार है, जब कि उसके हजारों निवासी बिना कुछ कहे भुखमरीके कारण मौतके मुँहमें समाते जा रहे हैं। हमारा सुझाव है कि यदि साम्राज्यके मामलोंमें महारानी विक्टोरियाकी प्रबुद्ध भावनाका अधिक उपयोग किया जाये, तो हम इतनी महान साम्राज्य-निर्मात्रीके अधिक योग्य अनुयायी बन जायेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-५-१९०६

१. एडवर्ड स्टेनली डर्बी (१७९९-१८६९), १८५२, १८५८ और १८६६ में इंग्लैंडके प्रधानमंत्री

३५१. नेटाल गवर्नमेंट रेलवे: एक शिकायत

एक संवाददाताने हमें गुजरातीमें पत्र लिखा है, उसका अनुवाद नीचे दिया जाता है:

मई १, १९०६ को जो रेलगाड़ी ६ बजे शामको डर्बनसे रवाना हुई, उसमें श्री कुन्दनलाल शिवलाल महाराज नामके एक भारतीय सज्जनने एस्टकोर्टसे एनर्सडेलके लिए दूसरे दर्जेका टिकिट लिया। वे सुरक्षित डिब्बेमें एक जगहपर बैठ गये। पर चूँकि उस गाड़ीसे जानेवाले दूसरे दर्जेके गोरे मुसाफिर बहुत थे, स्टेशन मास्टरने श्री कुन्दनलालको अपने डिब्बेसे निकालकर तीसरे दर्जेके डिब्बेमें जा बैठनेको मजबूर किया।

हमारा सवाददाता आगे लिखता है कि पीड़ित मुसाफिर द्वारा इस मामलेपर महा-प्रबन्धकका ध्यान आकर्षित किया जा चुका है। हमें आशा है कि इस शिकायतकी जाँच पूरे तौरसे की जायेगी। एस्टकोर्टके स्टेशन मास्टरके कथित व्यवहारको उचित ठहरानेकी कोई भी वजह दिखलाई नहीं पड़ती।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-५-१९०६

३५२. नेटालका भूमि-विधेयक

पिछले सालकी तरह इस साल भी गोरोकी ओटमे हमारे बच जानेकी सम्भावना है। नेटालके नये विधेयकोमें जमीनपर कर लगानेका विधेयक पेश होनेके बारेमें हम पहले खबर दे चुके है। यह विधेयक नेटालकी संसदमे पेश हो चुका है। लेकिन जब समितिमे इसकी छान-बीन हुई, तो यह रद कर दिया गया। ससदके एक सदस्य श्री रेथमनने यह प्रस्ताव रखा था कि इस विधेयकसे रेलवेकी सीमासे दूर रहनेवाले लोगोको बहुत नुकसान होगा, इसलिए यह रद किया जाना चाहिए। इस प्रस्तावके पास हो जानेसे नेटाल-सरकारकी हार हुई है। असलमें यह ऐसा मौका है जब पदाधिकारियोंको इस्तीफा देना चाहिए। उन्होने यह नही किया और पदोपर कायम हैं। लेकिन भूमि-करवाला विधेयक अभी कुछ समयके लिए लटका रहेगा। देखना है कि आगे क्या होता है। हालाँकि यह उम्मीद की जा सकती है कि उक्त विधेयक इस सत्रमें पास नही होगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-५-१९०६

३५३. चीनी-जागृतिकी एक निशानी

चीनके पूर्वमें वीहाइवी नामका एक द्वीप है। चीनकी सरकारने अंग्रेज सरकारको यह द्वीप कुछ शर्तोंपर दिया था। उनमें एक शर्त यह थी कि जबतक पोर्ट आर्थर रूसके अधिकारमें रहेगा तबतक गोरे इस द्वीपपर रह सकेंगे, वगैरह। रूस-जापानकी लड़ाईके कारण अब रूसको पोर्ट आर्थर छोड़ना पड़ा है। इसलिए ब्रिटेनसे कहा गया है कि वह उक्त द्वीप छोड़ दे। ब्रिटेनने उस द्वीपपर जो भारी पूँजी लगाई है, चीन उसे लौटानेसे इनकार करता है। इस मामलेको लेकर चीन, जर्मनी[1] और अंग्रेज सरकारके बीच बड़ी राजनीतिक खटपट होना सम्भव है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६–५–१९०६

३५४. पीला भय

हम लिख चुके हैं कि कुछ जापानी आस्ट्रेलिया देखने गये हैं। यद्यपि वहाँ उनके प्रति आदरकी भावना दिखाई जाती है, तो भी ऐसा लगता है कि अन्दर-ही-अन्दर आस्ट्रेलियाइयोंकी भावना जापानियोंके विरुद्ध है। मेल्बोर्नसे भेजे गये एक तारकी खबरसे पता चलता है कि वहाँ पहुँचे हुए जापानी यात्री-दलके अधिकारीने एक लड़ाकू जहाज देखनेके लिए निवेदन किया था, सो अस्वीकृत कर दिया गया। क्योंकि, आस्ट्रेलियाके भूतपूर्व रक्षा-मन्त्रीके कथनानुसार, वे जापानियोंपर विश्वास नहीं कर सकते। उन्हें लगता है कि जापानी किसी दिन आस्ट्रेलियापर अधिकार करनेका प्रयत्न कर सकते हैं। वहाँके मुख्य समाचारपत्रोंकी खबरोंसे मालूम होता है कि इस प्रकारकी राय बहुतेरे आस्ट्रेलियाइयोंकी है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६–५–१९०६

३५५. अमेरिकाके धनाढ्य

यह एक जानी-मानी बात है कि अमेरिकामें धनाढ्य लोग बड़ी संख्यामें हैं। आम तौरपर यह देखा जाता है कि धन कमानेमें यूरोपके लोग सबसे आगे हैं। यूरोपवाले नई-नई खोजों और कलाओंकी मददसे समूची दुनियाके बाजारको अपने पंजेमें से छूटने नहीं देते। फिर भी यह कहना गलत न होगा कि धन कमानेकी दौड़में यूरोपके लोग अमरीकियोंसे बहुत पीछे हैं। इसके कुछ कारण भी हैं। यूरोपवालोंकी तुलनामें अमेरिकावाले धनके जालमें अधिक उलझे हुए हैं, और देखा यह गया है कि जब एक बार धन बड़े पैमानेपर इकट्ठा हो जाता है, तब वह बढ़ता ही जाता है। दीर्घ दृष्टिसे सोचें, तो यह बात समझमें भी आ सकती है। अब इन अमेरिकियोंमें से कुछ इतने अधिक धनाढ्य हो गये हैं कि अमेरिकी सरकारको कानून द्वारा सम्पत्तिकी सीमा निश्चित करना अनुचित नहीं मालूम होता। अमेरिकाके राष्ट्रपति रूज़वेल्टके

१. जर्मनीने १८९७ में क्याउचाउपर कब्जा किया। उसके बाद वह औपनिवेशिक सत्ताके रूपमें चीनके तटवर्ती द्वीपोंमें दिलचस्पी लेने लगा।

एक भाषणसे इसका पता चलता है। उन्होंने कहा है कि एक आदमीके पास दस लाख या बीस लाख पौंड हो, तो उसे हम अनुचित नहीं मानते, लेकिन आज तो यह बात इस हद तक पहुँच गई है कि अमेरिकामें बहुत-से ऐसे हैं, जिनके पास अरबोंकी सम्पत्ति है। उन्होंने कहा है कि ऐसे अरबपति कभी सरकारपर भी बहुत प्रभाव डाल सकते हैं। वे चाहें तो देशके संविधानको, जैसे न्यायालयोंको, नगरपालिका अथवा संसदके चुनाव वगैराको अपने पैसेके जोरसे अपनी इच्छाके मुताबिक प्रभावित कर सकते हैं। यह स्थिति खतरनाक जान पड़ती है, इसलिए यह सोचा गया है कि कानूनके द्वारा धनकी सीमा निश्चित की जानी चाहिए। एक आदमी दस लाख पौंडसे अधिक न रख सकेगा। अगर किसीके पास इससे अधिक है, तो वह अपनी इच्छानुसार उसे अपने सगे-सम्बन्धियों आदिमें अमुक प्रकारसे हिस्से करके बाँट दे। राष्ट्रपति रूजवेल्टके इन विचारोंके कारण अमेरिकाके अरबपतियोंमें एक खलबली मच गई है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-५-१९०६

३५६. चीनकी स्थितिमें परिवर्तन

यह तो निर्विवाद है कि सुधार दिनपर-दिन आगे बढ़ता जा रहा है। यूरोपके सुधारोंने भारतपर कितना प्रभाव डाला है, इससे कम ही लोग अपरिचित होंगे। जापानने जो सारी दुनियाको आकर्षित करनेवाली उन्नति की है उससे इस सुधारकी गतिको बढ़ावा मिला है। जिधर देखिए उधर जापानकी चर्चा सुनी जाती है। ऐसी स्थितिमें जापानके पड़ोसी चीनपर इन सुधारोंका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही है।

चीनमें जगह-जगह सुधारके अंकुर फूटने लगे हैं। एक ओर चीनमें रहनेवाले जापानियोंके कारण चीनियोंका ध्यान शिक्षाकी तरफ गया है। दूसरी ओर सैकड़ों चीनी नौजवान विद्या और कला सीखनेके लिए परदेश जाने लगे हैं। जापानमें रहनेवाले कुछ चीनी विद्यार्थी हर प्रकारकी शिक्षा प्राप्त करनेके लिए, कुछ कला-कौशल सीखनेके लिए, अमेरिका तक भी पहुँचे हैं। ये विद्यार्थी वहाँसे केवल कला-कौशल ही सीखकर आते हैं, सो बात नहीं। जानने लायक बात तो यह है कि वे कला-कौशलके साथ अमेरिका, जापान और यूरोपके सुधरे हुए विचार भी अपने साथ लाते हैं। साथ ही, इन देशोंमें उत्पन्न स्वतन्त्रताके जोशने भी उनके खौलते हुए खूनपर पूरा प्रभाव डाला है। इसके परिणामस्वरूप ये विद्यार्थी चीनकी उन्नतिके लिए महान प्रयत्न करने लगे हैं।

वे जगह-जगह सभाएँ और भाषण करके लोगोंके दिलोंपर अपने विचारोंकी छाप डाल रहे हैं। नये-नये पत्र निकाल कर चारों तरफ उपदेशकोंको भी भेजते हैं और इस तरह अनेक प्रकारसे लोगोंके मनपर संस्कार डालते हैं, तथा स्वतन्त्रताके और सुधरे हुए विचारोंके बीज बोते हैं। इसके सिवा ऐसा नहीं लगता कि वे राजनीतिक परिवर्तनोंकी आशा नहीं करते। वे विदेशियोंको अपने देशसे दूर हटानेका आन्दोलन चलाने लगे हैं। इससे गोरे सोचमें पड़ गये हैं। कहीं-कहीं अमेरिकी मालका बहिष्कार कुछ-कुछ सफलताके साथ चल रहा है; यह भी इस नई हवाका ही नतीजा है। इस नई जागृतिमें कुछ जापानी भी आगे बढ़कर हाथ बँटाते हैं।

स्वाभाविक है कि उन्नतिकी ये किरणें हर सुधारकी प्रगति चाहनेवालेको रुचें। फिर भी कुछ यूरोपीय ऐसा कहते हैं कि यह जोश हदसे ज्यादा है और गलत रास्ते ले जा सकता

है। अतएव इसपर अंकुश लगना चाहिए। इस दृष्टिसे एक-आध लेखकने यह सुझाव दिया है कि चीनी सरकारसे कहकर कुछ समाचारपत्रोंपर, जो अवांछनीय विचार फैलाकर गलत और हानिकारक उत्तेजना फैलाते हैं, अंकुश लगवाये जाने चाहिए; और सम्भव हो, तो उन्हें बन्द भी करना चाहिए।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-५-१९०६

३५७. भारतमें युवराजकी यात्रा

माननीय युवराज, युवराज्ञी और उनका दल भारतकी अपनी यात्रा पूरी करके विलायत पहुँच गये हैं। लन्दनमें उनके स्वागतके लिए एक बड़ा समारोह किया गया था। उस अवसरपर माननीय युवराजने जो भाषण किया था, वह ध्यान देने योग्य है। उन्होंने भारतके लोगोंका आभार माना और उनकी वफादारीकी प्रशंसा की। अन्तमें उन्होंने कहा:

> मैं मानता हूँ कि यदि भारतवर्षका राज्य चलानेमें हम प्रजासे सहानुभूति बरतें, तो हमारे लिए राज्य चलाना आसान होगा, और ऐसी भावना रखनेपर मुझे विश्वास है कि हमें उसका बदला भी खूब मिलेगा। भारत जानेवाला हर अंग्रेज भारत और इंग्लैंडके बीच अधिक मेल पैदा करनेमें मदद कर सकता है और प्रेम तथा भाईचारेको बढ़ा सकता है।

इस भाषणका सही रहस्य समझनेकी जरूरत है। इस भाषणसे प्रकट होता है कि युवराज कोमल हृदय हैं। उनके मनमें भारतीयोंके प्रति सहानुभूति है। उन्होने हमारी मुसीबतोंको समझ लिया है। और चूँकि राज-काजके मामलेमें वे खुद ज्यादा दखल नही दे सकते, इसलिए अपनी ओरसे उपर्युक्त इशारा करके उन्होने भारतके शासकोंको समझाया है कि उन्हें सख्तीसे काम लेते समय सोचना चाहिए। युवराजके इस भाषणका[1] समर्थन भारतमंत्री श्री जॉन मॉर्लेने किया था, इसलिए यह आशा की जा सकती है कि थोड़े समयमे हमें भारतमें कुछ-न-कुछ राहत मिलेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-५-१९०६

३५८. बसूटोलैंडमें भारतीयोंका बहिष्कार

ब्लूमफॉटीनसे 'रैंड डेली मेल' का संवाददाता सूचित करता है कि बसूटोलैंडमें भारतीयोंको व्यापारके परवाने नही दिये जायेंगे। एक बार सरकारने कोई बारह परवाने देनेका विचार किया था, पर अब वह विचार छोड़ दिया गया है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६-५-१९०६

१. युवराज (प्रिंस ऑफ वेल्स) के सम्मानमें लन्दनके गिल्ड हॉलमें १७ मई १९०६ को एक भोज दिया गया था। युवराजके बाद श्री मॉर्ले भी बोले थे। उन्होंने युवराजके कथनका, 'कि यदि भारतवर्षका राज्य चलानेमें हम प्रजासे सहानुभूति बरतें ......' वगैरहका समर्थन किया था। देखिए इंडिया २५-५-१९०६।

३५९. चीनी मजदूर

हम लिख[1] चुके हैं कि बोअर किसानोके प्रति चीनी मजदूरोके दुष्ट व्यवहारके बारेमें जनरल बोथाने ट्रान्सवाल सरकारको पत्र लिखा था। उसके जवाबमें सर रिचर्ड सॉलोमनने लिखा है कि मै आपके पत्रके लिए आभारी हूँ। मुझे चीनियोके निर्दयतापूर्ण व्यवहारके लिए खेद है। मै खानोके अधिकारियोको सुझाऊँगा कि वे ऐसी व्यवस्था करे, जिससे चीनियोंको विस्फोटक पदार्थ न मिल सकें। चीनियोके व्यवहारको सुधारनेके लिए जितना भी सम्भव होगा, प्रयत्न किया जायेगा। मेरी यह आन्तरिक धारणा है कि जहाँ चीनी काम करते हैं, वहाँ उन्हें अंकुशमे रखनेकी मैंने जो सिफारिश की है, उसपर अमल होते ही ऐसे अत्याचार बन्द हो जायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६–५–१९०६

३६०. दूकान-बन्दीका कानून

श्री रेथमनने नेटालकी विधानसभामें यह माँग की थी कि गाँववालोको दूकानें बन्द करनेके कानूनमें हेरफेर करके आधी छुट्टीका दिन स्वय निश्चय करनेका अधिकार दे दिया जाये। इसके उत्तरमें नेटालकी सरकारने कहा है कि एक साल तक यह कानून जैसा है वैसा ही रहने दिया जायेगा। इससे जान पड़ता है कि अन्ततोगत्वा इस कानूनमें कुछ-न-कुछ परिवर्तन अवश्य किया जायेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६–५–१९०६

३६१. नेटालका चेचक-अधिनियम

ऊपरके इस अधिनियमकी धाराएँ हम पहले दे चुके है। इस कानूनकी कठोरताके बारेमें गोरोने जो आपत्ति की है, उसके सम्बन्धमें भी हमने अपने पत्रमें इशारा किया था। यह मामला बहुत-कुछ आगे बढ़ा है और इसपर चर्चा चल रही है।

विरोधी पक्षवाले कहते है कि यह बात निश्चित रूपसे नही कही जा सकती कि चेचकका टीका लगानेसे आदमी चेचकका शिकार होता ही नही। यही नही, बल्कि चेचकके टीकेसे बहुत बार नुकसान भी हुआ है। ऐसे उदाहरण दिये गये है, जिनमें चेचकके टीकेकी लसीके कारण छोटी उम्रके बालकोमें गर्मीकी बीमारी हुई है। साथ ही एक ऐसा विचित्र उदाहरण भी दिया गया था कि जिसमें टीका लगानेके बाद एक बालकका कद कई सालो तक बिलकुल नहीं

१. देखिए "चीनियोंको वापस भेजनेका सवाल", पृष्ठ ३३२।

बढ़ा। इस प्रकारके कई उदाहरण देकर कानूनका विरोध करनेवाले कहते हैं कि टीका लगानेसे किसी प्रकारका लाभ होता है, इसे वे मान नहीं सकते। इसलिए कानूनकी धारामें एक स्व-विवेककी धारा (कॉंशन्स क्लॉज) रखनी चाहिए। अर्थात् अगर लोग मजिस्ट्रेटके सामने जाकर अन्तःकरणसे स्वीकार करें कि वे चेचकके टीकेको लाभप्रद नहीं मानते, तो ऐसे लोगोंपर चेचकका कानून लागू नहीं हो सकेगा। यह धारा इंग्लैंडके कानूनमें भी है। गोरे यहाँ भी कुछ सभाएँ करके उक्त धारा शामिल करनेके बारेमें जोरोंसे चर्चा कर रहे हैं। बहुत सम्भव है कि इस हलचलके परिणामस्वरूप उक्त धारा कानूनमें शामिल कर ली जाये।

भारतीयोंकी दृष्टिसे देखें, और चेचकका टीका लगानेसे नुकसान होता है या फायदा, इस सवालको छोड़ भी दें, तो भी यह सच ही है कि प्रस्तावित धारा न रही, तो कुछ भारतीयोंको कुछ-न-कुछ अत्याचार सहन करने ही होंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २६–५–१९०६

३६२. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

मई २६, १९०६

अनुमतिपत्रके विषयमें लॉर्ड सेल्बोर्नका जवाब

लॉर्ड सेल्बोर्नको ब्रिटिश भारतीय संघने फिरसे लिखा था। उन्होंने जवाब भेजा है कि उसका वे तत्काल इससे ज्यादा जवाब नहीं दे सकते। इसका अर्थ यह है कि औरतोंको अनुमतिपत्र लेना पड़ेगा और बच्चे केवल १२ वर्षसे कम उम्रके ही आ सकेंगे।

इलाज

यह जवाब बहुत खेदजनक है। फिर भी स्त्रियोंको अलगसे अनुमतिपत्र निकलवाना आवश्यक नहीं है और लड़कोंके बारेमें संघर्ष जारी रहना चाहिए।

ब्रिटिश भारतीय संघकी माँग

संघने पंजीयक श्री चैमनेको पत्र लिखा है कि आखिर १२ वर्षकी उम्रके भीतरके जो लड़के फिलहाल अलग-अलग बन्दरगाहोंमें आनेका रास्ता देखते हुए बैठे हैं, उन्हें तो अवश्य अनुमति मिलनी चाहिए। संघने सूचित किया है कि ऐसे लड़के १०० से अधिक नहीं होंगे।

अनुमतिपत्रके विषयमें महत्वपूर्ण मुकदमा

एक ओर इस प्रकार दबाया जा रहा है और दूसरी तरफसे कानून मदद करता है। आदम इब्राहीम नामका एक १२ वर्षसे कम उम्रका लड़का है। उसका पिता जोहानिसबर्गमें है। वह लड़का परिचयपत्र (लेटर ऑफ नोटिफिकेशन) लेकर आया है। उसे अभीतक अनुमतिपत्र नहीं मिला। वह प्रिटोरिया नहीं गया। इस बीच उसके ऊपर कल श्री क्रॉसके सामने ३ पौंडका पंजीयनपत्र न लेनेका मुकदमा चलाया गया। उसमें उसके वकील श्री गांधीने यह आपत्ति की कि लड़कोंके लिए ३ पौंडका पंजीयनपत्र लेना आवश्यक नहीं है। और चाहे जो हो, तो भी जो व्यक्ति स्वयं व्यापार नहीं करता, उसे पंजीयनपत्र चाहिए ही नहीं। न्यायाधीशने इस आपत्तिको मंजूर करके मुकदमा खारिज कर दिया है।

मुकदमेका परिणाम

इस मुकदमेपर अगर अपील न हो, तो यह निश्चित है कि जो लड़के फिलहाल ट्रान्सवालमें है, उनके पास यदि अनुमतिपत्र या पंजीयनपत्र न हो, तो भी उनके रहनेमें कोई आपत्ति नही होगी। वास्तवमें इस मुकदमेके द्वारा अनुमतिपत्रका अन्तिम फैसला नही होता। किन्तु इसका ऐसा अर्थ निकल सकता है। यह सम्भव है कि लड़कोके अनुमतिपत्रका मुकदमा कभी-न-कभी लड़ना पड़े।

ट्रामका मुकदमा

इसके बारेमें अब भी चर्चा होती रहती है। श्री लेनने परिषदमें सवाल पूछा है। अभी परिषदने उसका जवाब नही दिया है। श्री गाधीने उसके विषयमे 'लीडर' को[1] जो पत्र लिखा है, उसका भावार्थ नीचेके अनुसार है:

आप लिखते है कि मजिस्ट्रेटने जो फैसला दिया है, वह असन्तोषजनक है। क्योकि उसके कारण अब चाहे जैसा (गन्दा) आदमी हो, बैठ सकेगा। वतनी भी बैठ सकेगा। किन्तु अदालतका फैसला ऐसा नही है। वतनीको ट्राममे बैठनेका कानूनन अधिकार नही है, ऐसा न्यायालयने जाहिर किया है। और ट्रामके नियमके मुताबिक गन्दे कपड़ेवालो अथवा शराब पिये हुए लोगोको बैठनेकी मनाही है। इसलिए न्यायालयके फैसलेके आधारपर केवल साफ रहनेवाले भारतीय अथवा गैर-वतनी काले ही बैठ सकेंगे।

किन्तु इस जीतको भी परिषदने अनुचित रूपसे छीन लिया है। शुक्रवारको न्यायाधीशने फैसला दिया और शनिवारको 'गवर्नमेंट गजट' से खबर मिली कि नगर-परिषदने ट्रामके नियम वापस ले लिये है। इसका यह अर्थ हुआ कि अब इस उपनियमके आधारपर भारतीय मुकदमा नही चला सकेंगे और शायद परिषद ऐसा भी विचार करती हो कि अब १८९७ का चेचकका कानून भारतीयोपर लागू हो जायेगा।

हमेशा माना गया है कि अंग्रेजी प्रजा किसीकी पीठमे छुरा नही मारती। किन्तु जैसा मुझे लगता है, और ऐसा ही दूसरे करदाताओको भी लगना चाहिए, नगर-परिषदने भारतीय कौमकी पीठमें छुरा मारा है। आप फैसलेके नतीजेपर खेद प्रकट करते है। किन्तु मैंने जो उदाहरण दिये है उनके सम्बन्धमे भी फिलहाल तो खेद करने योग्य कुछ नही बचा। किन्तु परिषदने जिस अनीतिपूर्ण तरीके से आजकी स्थिति पैदा की है उसे क्या आप पसन्द करते है?

अब ट्रामके मामलेकी तीसरी अवस्था शुरू हुई है।

रेलगाड़ियोंकी तकलीफ

यह तकलीफ तो हमें हमेशा ही रही है। मै लिख चुका हूँ कि महाप्रबन्धकने प्रिटोरियासे जोहानिसबर्ग जानेवाली शामकी ५–५ की गाड़ीमें काले आदमी न जाये, ऐसा लिखा था। इसके जवाबमें संघने लिखा और महाप्रबन्धकने उत्तर दिया कि गाड़ीमें काले आदमियोके लिए छूट रखी जायेगी। इसी तरह जोहानिसबर्गसे जानेवाली शामकी ४–४० की गाडीके लिए भी छूट माँगी है। यदि इसके बारेमें भी ऐसा ही जवाब आया, तो भी प्रिटोरिया-जोहानिसबर्गके बीचकी सुबहकी गाड़ीमे तो फिलहाल मुमानियत रहेगी ही।

1. देखिए "पत्र: ट्रान्सवाल लीडरको", पृष्ठ ३३५–६।

विलायत जानेवाला शिष्टमण्डल

सर विलियम वेडरबर्न तथा हमारे दूसरे हितचिन्तकोंको पत्र लिखे गये थे कि हम शिष्ट-मण्डल विलायत भेजें या नहीं। उसके जवाबमें उन लोगोंने तार भेजा है कि जबतक उनका पत्र न आये, रुकें। उनके पत्रकी १५ जून तक आ जानेकी सम्भावना है।

भारतीयका खून

आजके अखबारमें यह खबर है कि हैदर नामके एक एशियाईको क्लीवलैंड स्टेशनके पास गत रातको मार डाला गया। जान पड़ता है, मृत व्यक्तिको किसीने छुरा मारा है। खूनी कौन है, अथवा खून किस कारण हुआ, यह मालूम नही पड़ा। अखबारमें यह भी बताया गया है कि हैदर कंगाली हालतमें था। वह काम ढूंढ़ रहा था।

वतनियोंके लिए नई बस्ती

वतनियोंको जल्दी-जल्दी क्लिपस्प्रूटमें ले जानेकी हलचल हो रही है। नगरपालिकाने नियम भी बनाये हैं। किन्तु अफवाह यह है कि यद्यपि कुछ वतनियोंने वहाँ जमीन ली है, तो भी वे अपनी बस्तीमें जानेके बदले अभी नगरमें अपने मालिकोंके यहाँ रहते हैं।

नगरपालिकाके नये नियम

जोहानिसबर्ग नगरपालिका विधान सभाके चालू सत्रमें नया कानून पास कराना चाहती है। उसमें उसने एशियाई 'बाजार' पर भी अधिकारकी माँग की है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–६–१९०६

३६३. पत्र : लक्ष्मीदास गांधीको[1]

जोहानिसबर्ग
मई २७, १९०६

आदरणीय भाई साहब,

आपका १७ अप्रैलका पत्र मिला। क्या लिखूं, कुछ समझमें नही आता। आपकी मेरे खिलाफ धारणा बन गई है। बनी हुई धारणाका तो कोई इलाज नही। मैं लाचार हूँ। मैं आपके पत्रका पूरा जवाब ही दे सकता हूँ।

१. आपसे जुदा होनेका मेरा कोई खयाल नही है।
२. वहाँकी चीजोंपर मैं कोई हक नही जताता।
३. कुछ भी मेरा है, यह मेरा दावा नहीं है।
४. मेरे पास जो-कुछ भी है, वह सब लोक-सेवामें लगाया जा रहा है।
५. वह उन रिश्तेदारोंको सुलभ है, जो लोक-सेवा करते हैं।

१. यह पत्र मूलतः गुजरातीमे था। इसका अनुवाद श्री वालजी गोविन्दजी देसाईने और, उनके कथनानुसार संशोधन स्वयं गांधीजीने किया था। मूल गुजराती प्रति उपलब्ध न होनेसे यह अनुवाद अंग्रेजीसे किया गया है।

६. अगर मैंने अपना सब कुछ लोकोपयोगके लिए समर्पित न कर दिया होता तो मैं आपकी धनेच्छा पूरी कर सकता था।

मैंने तो यह कभी नही कहा कि मैंने भाइयो या दूसरे रिश्तेदारोके लिए बहुत-कुछ किया है। मैं जो-कुछ बचा सका वह सब मैंने उनको दे दिया। और यह बात घमण्डसे नहीं कही और सिर्फ मित्रोसे कही है।

भरोसा रखिये, अगर आप मेरे पहले गुजर गये तो मैं कुटुम्बके भरण-पोषणका भार खुशी-खुशी उठा लूँगा। इस बारेमे आपको डरनेकी जरूरत नही है।

इस समय मेरी हालत आपकी इच्छाके अनुसार आपको रुपये भेजने लायक नही है।

हरिलालकी शादी हो, तो ठीक है; न हो तो भी ठीक है। कमसे-कम फिलहाल तो मैंने पुत्रके तौरपर उसके बारेमे सोचना छोड़ दिया है।

अगर जरा भी संभव हो तो मैं मणिके विवाहके लिए भारत आनेको तैयार हूँ। परन्तु अपनी वर्तमान हालतकी कोई कल्पना आपको नही दे सकता। समयकी इतनी तगी है कि समझमें नही आता, क्या करूँ। कृपाकर विवाहकी तिथि तारसे सूचित कीजिए, जिससे मैं निकलनेके लिए तैयार रहूँ।

शायद आपको यह बता देना उचित होगा कि मै रेवाशकर भाईका ऋणी हूँ।

आप मुझे भले ही छोड़ दें, फिर भी मैं तो वही रहूँगा जो हमेशा रहा हूँ।

मुझे याद नही आता कि जब मै वहाँ था तब मैंने आपसे जुदा होनेकी इच्छा जाहिर की थी। मगर की भी हो तो अब मेरा मन बिलकुल साफ है — मेरी आकांक्षाएँ अब ज्यादा ऊँची हैं और मुझे किसी किस्मके दुनियाई सुख-भोगकी इच्छा बिलकुल नही है।

मै अपनी वर्तमान प्रवृत्तियोको जिन्दगीके लिए जरूरी समझता हूँ, इसीलिए उनमे लगा हूँ। अगर ऐसा करते-करते मुझे मौतका सामना करना पड़े तो मैं शान्त चित्तसे करूँगा। भय अब मुझे है ही नही।

मुझे शुद्ध हृदयके लोग प्रिय हैं। जगमोहनदासके लड़के छोटे कल्याणदासकी आत्मा प्रह्लादके जैसी है। इसलिए वह मुझे ऐसे पुत्रसे ज्यादा प्यारा है, जो सिर्फ इसलिए पुत्र है कि वह पुत्र-रूपमे जन्मा है।

[अंग्रेजीसे]

मो० क० गांधी: "सिलेक्टेड लेटर्स: (१), नवजीवन, १९४९" से।

३६४. वक्तव्य[1]: संविधान समितिको

[जोहानिसबर्ग
मई २९, १९०६]

गोरोंका प्रभुत्व

(१) ब्रिटिश भारतीय संघने गोरोके प्रभुत्वके सिद्धान्तको सदा स्वीकार किया है और इसलिए वह जिस समाजका प्रतिनिधित्व करता है, उसकी ओरसे किन्ही राजनीतिक अधिकारोंकी प्राप्तिके लिए जोर देनेकी उसकी इच्छा नही है। तथापि पिछला अनुभव बताता है कि

१. परिशिष्ट और यह वक्तव्य संविधान समितिके समक्ष प्रस्तुत किया गया था; देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ ३३२-४।

प्रतिनिधियोंको चुननेमें जिन समाजोका कोई हाथ नही है, स्वशासनका उपभोग करनेवाले उपनिवेशमे उनकी अत्यधिक उपेक्षा की गई है।

बोअरोंके भारतीय विरोधी विधानका इतिहास

(२) इस समय ट्रान्सवालमें ब्रिटिश भारतीयोंकी अनुमानिक जनसंख्या १२,००० से अधिक है। युद्धके पहले बालिग भारतीयोकी जन-संख्या १५,००० थी।

(३) प्रथम भारतीय निवासी ट्रान्सवालमें नौवें दशकके प्रारम्भमें आये।

(४) तब उनपर किसी प्रकारका प्रतिबन्ध नही था।

(५) किन्तु कारोबारमें उनकी सफलताने गोरे व्यापारियोंमें ईर्ष्या उत्पन्न कर दी और जल्दी ही व्यापार संघने जिसमें ब्रिटिश तत्वोंकी प्रमुखता थी, भारतीय विरोधी आन्दोलन शुरू कर दिया।

(६) फलस्वरूप स्वर्गीय राष्ट्रपति क्रूगरकी सरकारने स्वर्गीया महारानीकी सरकारसे ब्रिटिश भारतीयोंकी स्वतंत्रतापर प्रतिबंधक विधान लागू करनेकी अनुमति माँगी। उन्होने लंदन-समझौतेमें प्रयुक्त पारिभाषिक शब्द 'वतनियो' की व्याख्यामें एशियाइयोंको सम्मिलित करनेका प्रस्ताव किया।

(७) महारानीके सलाहकारोंने इस दावेको अस्वीकृत कर दिया, किन्तु व्यापारी वर्गके भारतीयोंको पूर्णतया स्वतंत्र छोड़कर स्वच्छताके आधारपर शेष एशियाइयोके निवासको 'बाजार' और बस्तियोंमें सीमित करनेका विधान बनानेके बारेमें वे असम्मत नही थे।

(८) इस पत्र-व्यवहारके परिणामस्वरूप १८८५ का कानून ३, १८८६ के संशोधनके साथ पास किया गया।

(९) जैसे ही यह प्रकट हुआ, ब्रिटिश भारतीयोंकी ओरसे इसका कड़ा विरोध किया गया।

(१०) उस समय यह बात समझमें आई कि स्वर्गीया महारानीकी सरकारकी धारणाओंके विपरीत सभी ब्रिटिश भारतीयोंपर इस कानूनको लादनेका प्रयत्न किया जा रहा है।

(११) तब स्वर्गीया महारानीकी सरकारकी ओरसे भूतपूर्व बोअर सरकारके नाम कठोर प्रतिवेदनोंका क्रम चला और उसकी परिणति मामलेको ऑरेंज रिवर उपनिवेशके तत्कालीन मुख्य न्यायाधीशके पंच-फैसलेपर छोड़नेमें हुई।[1]

(१२) इसलिए, १८८५ से १८९५ के बीच वह लगभग एक मृत-पत्र रहा यद्यपि बोअर सरकार सदा १८८५ के कानून ३ को लागू करनेकी धमकी देती रही।

(१३) पंच-फैसलेने कानूनकी स्थितिको निश्चित नही किया; बल्कि उसमें १८८५ के कानून ३ की व्याख्याका प्रश्न भूतपूर्व गणतंत्रकी अदालतोंपर छोड़ दिया।[2]

(१४) ब्रिटिश भारतीयोंने फिर ब्रिटिश सरकारसे संरक्षणकी प्रार्थना की।

(१५) यद्यपि श्री चेम्बरलेनने पंच फैसलेमें दखल देनेसे इनकार कर किया, तथापि उन्होने स्वर्गीया महारानीकी ब्रिटिश प्रजाके पक्षको नही छोड़ा। ४ सितम्बर १८९५ के अपने खरीतेमे उन्होंने कहा :

> **अंतमें मै कहूँगा कि यद्यपि मैं सच्चे दिलसे पच-फैसलेको मानने और उसके द्वारा दो सरकारोंके बीचके कानूनी और अन्तर्राष्ट्रीय विवादके एक प्रश्नको हल होने देनेका इच्छुक हूँ, तथापि मै भविष्यमें व्यापारियोंके बारेमें दक्षिण आफ्रिकी गणतंत्रके सामने**

१. १८८८ में, देखिए खण्ड १, पृष्ठ ३८२।

२. देखिए यही शीर्षक।

मैत्रीपूर्ण प्रतिवेदन प्रस्तुत करने और सरकारको यह विचार करनेका निमंत्रण देनेकी अपनी स्वतन्त्रता सुरक्षित रखता हूँ कि क्या एक बार कानूनी स्थिति मान्य हो जानेपर परिस्थितिपर नये दृष्टिकोणसे विचार करना और उसके अपने नागरिकोंके हितमें भारतीयोंके साथ अधिक उदारता बरतना तथा उन्हें उस व्यापारिक ईर्ष्याभावके अनुमोदनके आभाससे भी मुक्त करना अच्छा न होगा जिसे मै कुछ कारणोंसे गणतंत्रमें सत्तारूढ़-वर्गसे उद्भूत नहीं समझता।

यह वात १८९५ की है।

(१६) इस प्रकार ऐसे प्रतिवेदनोके कारण, जो युद्धके समय किये जाते रहे, उक्त कानून कभी पुरअसर तरीकेपर लागू नही किया गया और भारतीय उसमें निर्धारित प्रतिबधके बावजूद जहाँ चाहे वहाँ रहते और व्यापार करते रहे।

(१७) किन्तु १८९९ में, जब उसके लागू किये जानेका समय सिरपर आ गया था, युद्धके पहले ब्लूमफॉटीन परिषदमें अन्य वातोके साथ यह भी चर्चाका एक विषय था। लार्ड मिलनरने इसे इतना महत्त्वपूर्ण माना कि जब युटलैंड निवासियोंके मताधिकारके प्रश्नपर किसी समझौतेकी सम्भावना दिखाई दी, तब लॉर्ड मिलनरने तार किया कि रगदार ब्रिटिश प्रजाकी स्थितिका प्रश्न अभीतक जैसाका-तैसा बना है।

(१८) लॉर्ड लैंसडाउनने इसे युद्धका सहायक कारण घोषित किया।

(१९) युद्ध समाप्त होनेपर और फ्रेनिखन (वेरीनिगिग) की संधिके समय बड़ी सरकारने बोअर प्रतिनिधियोंको सूचित किया कि दोनो उपनिवेशोमे रगदार लोगोकी स्थिति वही होनी चाहिए जैसी केपमे है।

वर्तमान स्थिति

(२०) किन्तु आज स्थिति युद्धके पहलेसे अधिक खराब है।

(२१) जिस प्रगतिशील दलसे भारतीय कमसे-कम सहराजभक्त और युद्धके पहलेके सहदु.खी होनेके नाते समुचित न्यायकी अपेक्षा कर सकते है, उसने इस बातको अपने कार्यक्रमके अंगके रूपमें घोषित किया है कि ब्रिटिश भारतीयोकी स्वतन्त्रतापर निश्चित रूपसे प्रतिबन्ध लगाये जाने चाहिए। यदि उसकी इच्छाएँ कार्यरूपमे परिणत हुई तब तो, आजकी परिस्थिति वदसे वदतर हो जायेगी।

(२२) डच दलसे अब किसी भी प्रकारके औचित्यकी अपेक्षा रखना असम्भव है।

(२३) इस हालतमे उत्तरदायी सरकारके अतर्गत बिना विशिष्ट सरक्षणके भारतीयो और उन्ही जैसी स्थितिके अन्य लोगोके लिए न्यायकी गुंजाइश बहुत कम है।

उपाय

(२४) इसलिए जान पड़ता है कि ब्रिटिश भारतीयोके हितोके सरक्षणके लिए उन्हे मताधिकार प्रदान करना सर्वाधिक स्वाभाविक उपाय है।

(२५) यह वात जोर देकर कही गई है कि फ्रेनिखनकी संधि ऐसी किसी व्यवस्थाके विधानका निषेध करती है।

(२६) किन्तु सादर निवेदन है कि "वतनी" शब्दका और चाहे जो अर्थ हो, उसमे ब्रिटिश भारतीयोका समावेश कदापि नही किया जा सकता।

(२७) उपनिवेशकी विधान-संहिता ऐसे कानूनोंसे भरी पड़ी है जो "वतनियों" पर लागू होते है, किन्तु जो एशियाइयों या ब्रिटिश भारतीयोंपर निश्चय ही लागू नहीं होते।

(२८) यह तथ्य कि १८८५ का कानून ३ खास तौरपर एशियाइयोंके लिए है और वह "वतनियो" पर लागू नही होता, यह भी प्रकट करता है कि ट्रान्सवालके कानूनोंने प्रायः "वतनियों" और "एशियाइयों" में सदा अंतर किया है।

(२९) वस्तुतः 'वतनी' शब्दके मान्य अर्थके कारण ट्रान्सवालमें वतनियोको जमीन-जायदाद रखनेका हक है, एशियाइयोंको नही।

(३०) इस प्रकार जहाँतक फ्रेनिखन संधिका सम्बन्ध है, भारतीयोंको मताधिकारसे वंचित रखनेका कोई औचित्य नही दिखाई देता।

(३१) किन्तु ब्रिटिश भारतीय संघकी समिति अच्छी तरह जानती है कि गोरी कौम लगभग सर्वसम्मतिसे ब्रिटिश भारतीयोंके लिए संविधानमें मताधिकारकी व्यवस्था रखे जानेके खिलाफ है।

(३२) इसलिए यदि ऐसा करना असम्भव माना जाये तो यह नितांत आवश्यक है कि समस्त वर्ग विधानके निषेधाधिकारसे सम्बन्धित परम्परागत संरक्षणकी धाराके अतिरिक्त एक विशेष धारा भी होनी चाहिए जो एक जीती-जागती वास्तविकता हो और जो यदा-कदा ही काममें लाई जानेके बजाय ब्रिटिश भारतीय अधिवासियोंको उनके जमीन-जायदाद रखने तथा आने-जाने और व्यापार करनेके अधिकारो सम्बन्धी पूरी-पूरी सुरक्षाका आश्वासन दे। अलबत्ता उसमें सर्वसामान्य रूपके ऐसे बचावोंकी व्यवस्था हो, जिनकी जरूरत समझी जाये; और वे बचाव जाति तथा रंगके भेदके बिना सबपर लागू किये जायें।

(३३) तब और केवल तभी, अंग्रेजी राज्यमें साधारण रूपसे निहित प्रत्येक ब्रिटिश प्रजाको प्राप्य नागरिक अधिकारके सिवा, सम्राट्के सलाहकार ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति सम्बन्धी उन्हे विशिष्ट रूपसे दिये गये वचनोंकी रक्षा कर सकेंगे।

(३४) ऊपर जो कुछ कहा गया है उसमें से बहुत-सा ऑरेंज रिवर उपनिवेशके ब्रिटिश भारतीयोंपर लागू है।

(३५) सिवा घरेलू नौकर होनेके वहाँ भारतीयोंको कोई अधिकार नही है। उनकी लगभग सारी ही नागरिक स्वतन्त्रता एक विशद एशियाई विरोधी कानूनने छीन रखी है।

(हस्ताक्षर) अब्दुल गनी
अध्यक्ष, ब्रि० भा० सं०
ई० एस० कुवाडिया
एच० ओ० अली
इब्राहीम एच० खोटा
ई० एम० पटेल
ई० एम० जोसप
जे० ए० पटेल
मो० क० गांधी

परिशिष्ट 'क'

वक्तव्यमें आये हुए तथ्योंके प्रमाणोंके लिए शिष्टमण्डल संविधान समितिसे निम्न सन्दर्भोंको देखनेकी प्रार्थना करता है :—

(१) 'ट्रान्सवाल हरी किताब' (ट्रान्सवाल ग्रीन बुक), सं० १, १८९४।

(२) 'ट्रान्सवाल हरी किताब,' सं० २, १८९४।

(३) 'ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी शिकायतोंपर 'सरकारी रिपोर्ट' (ब्ल्यू बुक), १८९६ में प्रकाशित।

(४) 'सरकारी रिपोर्ट' (ब्ल्यू बुक), जिसमें ट्रान्सवालके भारतीयोंसे सम्बन्धित पत्रव्यवहार है। क्रमांक २२३९।

(५) "वतनियों और कुलियों"से सम्बन्धित 'कानून और फोक्सराट प्रस्ताव' आदि (एक पृथक् सरकारी प्रकाशन)।

(६) अध्याय ३३, पृष्ठ १९९, 'ऑरंज रिवर उपनिवेशके कानून'।

परिशिष्ट 'ख'

नीचे बोअर तथा ब्रिटिश शासनके अन्तर्गत ट्रान्सवालमें भारतीयोंकी स्थितिका मिलान दिया गया है।

युद्धके पहले	ब्रिटिश शासनाधीन
१. भारतीय बिना किसी प्रतिबन्धके देशमें आ सकते थे।	१. जो युद्ध शुरू होनेके पहले चले गये थे उन प्रामाणिक शरणार्थियोंको छोड़कर अन्यका प्रवेश निषिद्ध है। और इन लोगोंको भी धीरे-धीरे, तथा उनकी अर्जियों-पर विचार करनेमें बड़ी देरी लगाकर आने दिया जाता है। छोटे बच्चोंके लिए भी अनुमतिपत्र आवश्यक हैं और उनपर प्रत्येक भारतीयको अपने अँगूठेकी छाप देनी पड़ती है।
२. पंजीकरण शुल्क देनेकी बाध्यता नहीं थी।	२. अब ३ पौंड पंजीकरण शुल्क देना ही पड़ता है। अन्यथा १०० पौं० तक अधिकतम जुर्माना और छः महीने तक की कैदका नियम सख्तीसे लागू किया जाता है। अब भारतीय स्त्रियोंसे भी पंजीकरण शुल्क वसूल करनेकी कोशिश हो रही है और उन्हें भी अनुमतिपत्र लेनेपर बाध्य किया जा रहा है।
३. भारतीय गोरे लोगोंके नामपर जमीन जायदाद रख सकते थे।	३. एशियाइयों द्वारा जमीन-जायदाद रखनेकी मुमानियतके कानूनका वहाँ भी सख्तीसे पालन किया जाता है जहाँ धार्मिक कामोंके लिए जमीनकी आवश्यकता है।
४. जोहानिसबर्गमें बस्ती या बाजारोंमें भारतीयोंके पास ९९ वर्षकी अवधिके पट्टेपर जमीनें थीं।	४. अस्वच्छ क्षेत्रके आयुक्तके प्रतिवेदनपर ये पट्टे छीन लिये गये हैं और उन्हें यह आश्वासन भी नहीं दिया गया कि जोहानिसबर्गके किसी अन्य उपयुक्त भागमें उन्हें उतनी जमीन मिलेगी।

५. जाँच आदिके लिए अलग एशियाई विभाग नहीं था।

५. एशियाई पंजीयक-कार्यालय स्थापित। इसकी कार्यपद्धति मनमानी है और व्यक्तिगत प्रार्थनापत्र, अनुमतिपत्र आदिके निर्णयमें देरी करता है।

६. अनेक कठोर कानूनी प्रतिबंधोंपर बहुत हद तक ब्रिटिश हस्तक्षेपके कारण अमल नहीं किया जाता था।

६. वे बोअर कानून जिनपर अमल नहीं होता था, लागू किये गये, तथा अध्यादेशों और प्रशासनिक अनुशासनोंके द्वारा अधिक कठोर बना दिये गये। द्वेषबुद्धिपूर्वक ब्रिटिश भारतीयोंकी कानूनी स्थिति काफिरों, असभ्य और अर्द्ध-सभ्य जातियोंके समान कर दी गई।

आगे दिया गया परिशिष्ट विधान समितिके सुझावपर तैयार किया गया था।

नागरिक निर्योग्यताएँ

१. आयुक्तोंका यह खयाल मालूम होता है कि ब्रिटिश भारतीयोको ट्रान्सवालमें पूर्ण अधिकार प्राप्त हैं।

२. दुर्भाग्यवश, जैसा कि वक्तव्यके साथ संलग्न सूचीसे स्पष्ट हो जाएगा, ब्रिटिश भारतीयोंको बहुत कम अधिकार प्राप्त हैं। नागरिक निर्योग्यताएँ नीचे दी जा रही हैं:

भूमिका स्वामित्व नहीं

३. (१) ब्रिटिश भारतीय अपने लिए निर्धारित बस्तियों या मोहल्लोंको छोड़कर कही जमीन-जायदाद नही रख सकते। यह नियम लंबे अरसेके पट्टोंपर भी लागू है।

(२) मोहल्ले निर्धारित नही हैं किन्तु यूरोपके यहूदी-बाड़ोंकी तरह नगरसे बहुत दूर बस्तियाँ निर्धारित हैं; और उनमें भी एक दो स्थानोंको छोड़कर भारतीय माहवारी किरायेदार हैं। केवल प्रिटोरिया और पॉचेफ्स्ट्रूममें इक्कीससाला पट्टे मिलते हैं। जर्मिस्टनमें उन्हें नोटिस दिये गये हैं कि वे गुमटियोमें दूसरे किरायेदार न रखें। नोटिस इस तरह है:

> **इत्तला दी जाती है कि आपको वतनियों या दूसरोंको अपने यहाँ किरायेपर रखनेकी इजाजत नहीं है। किसी दूसरेको किरायेपर रखना उस शर्तनामेको तोड़ना है जिसके मुताबिक आपका बाड़ेपर कब्जा है। इससे आपका बाड़ेका अनुमतिपत्र रद किया जा सकता है और आप इस बस्तीसे निकाले जा सकते हैं।**

(३) इस प्रतिबंधपर इस हद तक अमल किया जाता है कि भारतीय अपनी मसजिदें तक भारतीय न्यासियोके नामपर नही बदलवा पाते।

पंजीयन शुल्क

(४) इस देशमें पहुँचनेपर भारतीयोंको ३ पौंड पंजीकरण शुल्क देना पड़ता है। अब सरकारने धमकी दी है कि स्त्रियों और बच्चोंको भी पंजीयन प्रमाणपत्र लेने पड़ेंगे।

पैदल पटरी और ट्राम गाड़ियाँ

(५) प्रिटोरिया और जोहानिसबर्गमें भारतीयोंको पैदल पटरियोंपर चलनेकी कानूनन मनाही है। फिर भी वे रियायतके तौरपर उसका उपयोग करते हैं। अभी हालमें उन्हें उनका उपयोग करनेसे रोकनेका प्रयत्न हुआ है।

(६) प्रिटोरियामें भारतीयोंको ट्रामगाड़ियोंके उपयोगकी इजाजत नहीं है।

(७) जोहानिसबर्गमे उन्हे सर्वसामान्य गाड़ियोमे बैठनेसे रोका जाता है, किन्तु रंगदार लोगोके लिए कभी-कभी खास पिछलग्गू डिब्बे लगा दिये जाते हैं।

(८) भारतीयोकी ओरसे दावा किया गया था कि सामान्य उपनियमोके अन्तर्गत वे ट्राम-गाडियोमे यात्रा करनेका आग्रह रख सकते है। नगर-परिषदने दावेका विरोध इस आधारपर किया कि भूतपूर्व डच-सरकारके द्वारा १८९७ मे जो कुछेक चेचक सम्बन्धी विनियम बनाये गये थे, वे अभी लागू हैं। दो बार जोहानिसबर्गमें इस मामलेकी न्यायाधीशके सामने कसौटी हुई और हर बार नगर-परिपदकी हार हुई। इसलिए अब उसने ट्रामगाड़ियोके यातायात सम्बन्धी उपनियमोंको रद करके भारतीयोको जवाब दिया है। अपना उद्देश्य सिद्ध करनेके लिए नगर-परिषद अब बिना किन्ही उपनियमोके नगरपालिकाकी गाडियाँ चला रही है। सर्वसामान्य कानूनके अन्तर्गत भारतीय अपना अधिकार सिद्ध कर सकेंगे या नही यह देखनेकी बात है।

ध्यान देने योग्य बात है कि उपनियमोंका उक्त रद किया जाना निम्न प्रकार चालाकीसे विज्ञापित किया गया था।

> **इन प्रस्तावित संशोधनोंका सामान्य सारांश प्रस्तुत करते हुए और यह कहते हुए कि वे परिषदके कार्यालयमें देखे जा सकते हैं १९०१ की १६ वीं घोषणा धारा २२ के अनुसार ९ मई १९०६ के पहले एक विज्ञप्ति नगरपालिकाकी सीमामें प्रचारित एक समाचारपत्रमें प्रकाशित की गई थी।**

तारीख ९ को नगर-परिषदकी एक बैठक हुई। स्पष्ट ही इत्तला ऐसे ढगसे विज्ञापितकी गई थी कि सम्बन्धित लोगोका प्रस्तावित सशोधनोको चुनौती देना लगभग असम्भव हो गया था — मुख्यत दो कारणोसे। पहला, समाचारपत्रोके सामान्य स्तम्भोमे उनका कोई विवरण प्रकाशित नही हुआ था; और दूसरा, प्रस्ताव ट्रामवे या बिजली समितिकी बजाय, जो साधारणतया ट्रामवे-नियमोसे सम्बन्धित रहती हैं और भूतकालमें रही है, कार्य-समिति (वर्क्स कमिटी) के मारफत आया था।

कार्य-समितिने परिषदकी उक्त बैठकमे निम्न बहानेसे संशोधन प्रस्तुत किया :

> **चूंकि ट्राम-पद्धतिको नगरपालिकाने अपने हाथमें ले लिया है, इसलिए अब ट्रामगाड़ियोंपर लागू होनेवाले यातायात-उपनियमोंकी आवश्यकता नहीं रहती, क्योंकि वे गैर-सरकारी ट्रामगाड़ियोंके लिए ही थे। अतः उपनियमोंको तदनुरूप सशोधित करनेका प्रस्ताव है।**

प्रस्ताव एक लबी-चौड़ी कार्यसूचीके अंतमें उस समय प्रस्तुत किये गये जब जागृतसे जागृत सदस्य, भी विशेपत. उनकी निरापद-सी भूमिकाके कारण, इस भुलावेमे डाला जा सकता था। प्रस्ताव बिना किसी टीकाके पास हो गये। तारीख १८ के 'गवर्नमेंट गज़ट' मे सूचना प्रकाशित हुई कि रद करनेवाली प्रस्तावित उपधाराको स्वीकार करके कानूनकी ताकत दे दी गई है। इस प्रकार सारी बात करीब-करीब भारतीयोके पीठ पीछे नौ दिनोकी अवधिमें, तमाम व्यावहारिक प्रयोजनोंके लिए, बिना चेतावनी दिये निश्चित हो चुकी थी।

(९) अब जोहानिसबर्गमें मलायी बस्तीके नामसे प्रसिद्ध बस्तीको जिसमे भारतीय निवासियोकी बड़ी संख्या है, बेदखल करके भारतीयोको जोहानिसबर्गसे तेरह मील दूर भेजनेका प्रयत्न किया जा रहा है।

अनुमतिपत्र अध्यादेश

पहले भारतीय ट्रान्सवालमें आनेके लिए स्वतंत्र थे; अब शांति-रक्षा अध्यादेशको, जो एक शुद्ध राजनीतिक कानून है, भारतीयोंके प्रवेशको रोकनेके लिए प्रयुक्त करके उसे अपने सही

उद्देश्यसे विलग किया जा रहा है। नये भारतीयोंका देशमें प्रवेश रोका जा रहा है। इतना ही नही, बल्कि ट्रान्सवालके निवासियोंपर निम्न असाधारण परेशानियाँ लाद दी गई है:

(क) अध्यादेशको अमलमें लानेके बारेमें कोई प्रकाशित नियम नही है।

(ख) यह लागू करनेवाले अधिकारियोंकी सनक और पूर्वग्रहके अनुसार बदलता रहता है। इसलिए आजका तौर-तरीका इस प्रकार है:

(१) जो भारतीय युद्धके पहले ट्रान्सवालमें थे और जो पंजीयनके ३ पौंड दे चुके है उन्हें भी, जबतक वे पूरी तरह यह सिद्ध नही कर पाते कि वे यहाँसे युद्ध शुरू हो जानेपर गये थे वापस नही आने दिया जाता।

(२) जिन्हें ट्रान्सवालमें आने दिया जाता है उन्हें अपनी अर्जियोंके अतिरिक्त अनुमतिपत्रोंपर भी अपने अँगूठोके निशान देने पड़ते है और जब-जब वे ट्रान्सवालमें आते है, उन्हें ऐसा करना पड़ता है। अपनी स्थिति और इस तथ्यके बावजूद कि वे अंग्रेजीमें अपने हस्ताक्षर कर सकते है या नही यह प्रत्येक भारतीयपर लागू होता है। एक इंग्लैंड होकर आये हुए भारतीय सज्जनको जो अच्छी तरह अंग्रेजी बोलते है और जाने-माने व्यापारी है, दो बार अँगूठेका निशान देना पड़ा।

(३) ऐसे भारतीयोंकी पत्नियों और बारह सालसे कम उम्रके बच्चोंको अब अलग अनुमतिपत्र लेने पड़ते है।

(४) ऐसे भारतीयोंके बारह सालके या उससे ज्यादा उम्रके बच्चोको अपने माता-पिताके साथ आने अथवा रहने नही दिया जाता।

(५) भारतीय व्यापारियोंको बाहरसे भरोसेके मुनीम या प्रबन्धक बुलानेकी इजाजत नहीं मिलती — जबतक वे लोग उक्त पहली धाराके अन्तर्गत न आते हों।

(६) जिन्हें आनेकी इजाजत मिलती भी है उन्हें प्रवेशके लिए महीनो रुकना पड़ता है।

(७) सम्भ्रान्त भारतीयोंको अस्थायी अनुमतिपत्र देनेसे भी इनकार कर दिया जाता है। श्री सुलेमान मंगा जो लन्दनमें वकालत पढ़ रहे हैं ट्रान्सवालके मार्गसे डेलागोआ-बे जाना चाहते थे। उन्हे ब्रिटिश प्रजा मानकर इसकी इजाजत नहीं दी गई। जब यह मालूम हुआ कि वे पुर्तगाल राज्यकी प्रजा है तब स्पष्ट ही अन्तर्राष्ट्रीय उलझनोंसे डर कर उन्हें अनुमतिपत्र दे दिया गया।

(८) ऐसी भयानक स्थिति है, ट्रान्सवालमें रहनेवाले ब्रिटिश भारतीयोंकी। वह रोज-रोज बदतर होती जा रही है और यदि सम्राटकी सरकार उनके संरक्षणके लिए राजी और तैयार नहीं होती तो अन्तिम परिणाम यही होगा कि धीरे-धीरे उनका लोप हो जायेगा।

यूरोपीय क्या करेंगे

(२) यदि यूरोपीय स्वतन्त्र छोड़ दिये जायें तो वे क्या करेंगे, यह नीचेके तथ्योंसे प्रकट हो जायेगा:

(क) एशियाई प्रश्नपर विचार करनेके लिए जो विशिष्ट राष्ट्रीय परिषद (नेशनल कन्वेन्शन) हुई थी उसने निम्नलिखित प्रस्ताव पास किये:

१. **इस देशमें वतनी कौमोंकी अधिकता, वतनी नीति निश्चित करनेकी कठिनाइयों, वर्तमान यूरोपीय प्रजाकी रक्षा और भविष्यमें उनके प्रवास (इमिग्रेशन) को प्रोत्साहन देनेकी आवश्यकताके विचारसे यह परिषद इस सिद्धान्तपर बल देती है कि मजदूर आयात अध्यादेश (लेबर इम्पोर्टेशन ऑर्डिनेन्स) की धाराओंके अतिरिक्त एशियाई प्रवास, निषिद्ध होना चाहिए।**

२. सारे प्रश्नके बारेमें एक स्थायी और अन्तिम निपटारेके महत्वको देखते हुए और मामले-पर पुर्नविचारके प्रयत्नोंको रोकनेके लिए यह परिषद सिफारिश करती है कि सरकारसे प्रार्थना की जाये कि वह सभी एशियाई व्यापारियोंको युद्धके पहलेके कानूनन प्राप्त निहित स्वार्थोंके मुआवजेकी व्यवस्था करके, बाजारोंमें भेजनेके औचित्यपर विचार करे।

३. यह परिषद एशियाइयोंको बाजारोंसे बाहर व्यापार करनेकी इजाजत देनेवाले व्यापारिक परवाने निरन्तर देते रहनेसे उत्पन्न गम्भीर खतरेको समझकर सरकारसे प्रार्थना करती है कि वह भविष्यमें ऐसे परवानोंको रोकनेके लिए तत्काल आवश्यक कानून बनानेकी व्यवस्था करे और एशियाई प्रश्नपर विचार करनेके लिए प्रस्तावित आयोगकी नियुक्तिके विषयमें यह परिषद सरकारसे उसमें सरकारी कर्मचारियोंके अतिरिक्त दक्षिण आफ्रिकाकी वर्तमान परिस्थितियोंको भली-भांति जाननेवाले व्यक्तियोंको सम्मिलित करनेकी आवश्यकताका आग्रह करती है।

४. यह परिषद अपनी इस रायपर कायम है कि सभी एशियाइयोंको बाजारोंमें रहनेपर बाध्य किया जाना चाहिए।

(ख) प्रगतिशील दलकी घोषित नीति निम्नलिखित है :

जिन्हें इकरारनामेकी समाप्तिपर वापस जाना है उन गिरमिटिया मजदूरोंको छोड़कर ट्रान्सवालमें एशियाइयोंके प्रवासपर रोक लगाना और एशियाई व्यापारिक परवानोंका नियन्त्रण।

(ग) पोचैफस्ट्रूमके लोग एक वार इकट्ठे हुए, ऊधम मचाया और भारतीय भण्डारोंकी खिड़कियाँ तक तोड़ डाली।

(घ) बॉक्सबर्गके यूरोपीय, भारतीयोंको उस वर्तमान बस्तीसे जिसमें वे लड़ाईसे पहले बस चुके थे शहरसे बहुत दूर ऐसी जगह हटा देना चाहते हैं : जहाँ व्यापार एकदम असम्भव है; और उन्होंने एकाधिक वार यह धमकी दी है कि यदि कोई भारतीय बस्तीके बाहर दूकान खोलनेकी कोशिश करेगा तो शारीरिक बलका प्रयोग किया जायेगा।

पिछला अनुभव — एक समतुल्य उदाहरण

(१२) मुख्य वक्तव्यमें शिष्टमण्डलने कहा है कि पिछले अनुभवसे यह मालूम होता है कि मताधिकारसे वंचित करना और परम्परागत निषेधाधिकार, दोनों ही, भारतीयोंको संरक्षण देनेमें एकदम अपर्याप्त सिद्ध हुए हैं।

(१३) अब हम उदाहरण देते हैं :

नेटालमें उत्तरदायी शासन देनेके बाद, भारतीय मताधिकारसे लगभग वंचित कर दिये गये थे। स्वर्गीय सर जॉन रॉबिन्सनने विधेयकके समर्थनमें कहा कि भारतीयोंको मताधिकारसे वंचित करके नेटाल संसदका प्रत्येक सदस्य भारतीयोंका न्यासी हो गया है।[1]

विधेयकके संसदीय *अधिनियम* बनते ही न्यास इस तरह निभाया गया :

(क) कानून लागू होनेके बाद आनेवाले सभी गिरमिटिया भारतीयोंपर इकरारनामेकी समाप्तिपर भारत न लौटने अथवा नया इकरारनामा न भरनेकी परिस्थितिमें — ३ पौंड वार्षिक कर लगाया गया।

१. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ ३८७।

(ख) एक प्रवासी प्रतिबन्धक अधिनियम बनाया गया जिसके द्वारा जो उपनिवेशके पूर्व-निवासी न रहे हों और जिन्हें किसी एक यूरोपीय भाषाका ज्ञान न हो ऐसे सभी व्यक्तियोंके नेटाल प्रवेशपर पाबन्दी लगाई गई।

(ग) एक व्यापारी परवाना अधिनियम बनाया गया जिसने नगर परिषदों और परवाना निकायोंको व्यापारी परवानोंपर अंकुश रखनेकी निरंकुश सत्ता दे डाली। उससे सर्वोच्च न्यायलयके अधिकार क्षेत्रका भी उच्छेद कर दिया गया है। प्रकट रूपमें वह यद्यपि सभी व्यापारियोंके लिए है फिर भी उसका अमल सिर्फ भारतीयोंके विरुद्ध किया जाता है। और उसके अन्तर्गत कोई भी भारतीय, फिर वह चाहे जितना जमा हुआ क्यों न हो, वर्षके अन्त तक अपने परवानेकी दृष्टिसे सुरक्षित नहीं है।

इन तमाम कानूनोंसे साम्राज्यीय सरकार ब्रिटिश भारतीयोंकी रक्षा करनेमें अपनेको असमर्थ पाती है।

ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें अनोखी स्थिति

(१४) भारतीयोंको संविधानके अन्तर्गत मताधिकार दिया जाये या नहीं, किन्तु निहित स्वार्थोंकी रक्षा के लिए विशिष्ट धारा नितान्त आवश्यक है।

(१५) किसी भी उपनिवेशको स्वराज्य प्राप्त होनेके समय ऐसी परिस्थिति नहीं थी जैसी ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर उपनिवेशकी है।

(१६) वे सब कारण जिनसे युद्ध हुआ था दूर नहीं हुए है। उनमें एक कारण ट्रान्स-वालका भारतीय विरोधी कानून था।

(१७) ब्रिटिश सरकारका यह वचन कि भारतीय और रंगदार लोगोंके साथ दोनों उप-निवेशोंमें वैसा ही बरताव होना चाहिए जैसा केपमें होता है, अभीतक पूरा नहीं किया गया।

(१८) जब भारतीयोंकी निर्योग्यताएँ हटानेके विषयमें ब्रिटिश सरकार और स्थानिक सरकारोंके बीच वार्ताएं होने ही वाली थी, उसी समय सम्राटकी सरकारके नये मन्त्रियोंने दोनों उपनिवेशोंको उत्तरदायी शासन देनेका निश्चय कर लिया। इसलिए वार्ताएं स्थगित कर दी गई है, या बिलकुल छोड़ ही दी गई है।

(१९) केपमें परिस्थिति यह है कि भारतीयोंको यूरोपीयोंके बराबरीके अधिकार हैं; अर्थात् :

(क) जैसा मतदानका अधिकार यूरोपीयोंको है वैसा ही उन्हें है।
(ख) वे उसी प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमके अन्तर्गत है, जिसके अन्तर्गत यूरोपीय हैं।
(ग) उन्हें यूरोपीयोंके समान जमीन जायदाद रखने और व्यापार करनेका अधिकार है।
(घ) उन्हें एक स्थानसे दूसरे स्थानपर जाने-आनेकी पूरी स्वतन्त्रता है।

जोहानिसबर्ग, आज तारीख २९ मई, १९०६।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–६–१९०६

३६५. भारतीय मुसाफिर

पिछले कुछ दिनोसे हमारे गुजराती पत्र-व्यवहारवाले स्तम्भ भारतीय डेक मुसाफिरोकी, जो जर्मन पूर्व आफ्रिकी कम्पनीके जहाजोका इतना अधिक प्रतिपालन करते हैं, शिकायतोसे पूर्णतः भरे रहते है। हमारे सवाददाताओंने अत्यधिक भीड, स्वच्छताकी अपर्याप्त व्यवस्था और छत (डेक) के मुसाफिरोके प्रति आम लापरवाहीकी शिकायतें की हैं। उनमें कुछका कहना है कि जब जहाज किसी बन्दरगाहपर पहुँचते हैं तब मुसाफिरोंको बड़ी असुविधाका सामना करना पड़ता है। वे बिलकुल खुलेमें होते हैं और उनसे अपना सामान खुद हटानेको कहा जाता है। हम कम्पनीके स्थानीय एजेंटोका ध्यान इन शिकायतोकी ओर आकर्षित करते हैं। हम जानते हैं कि गरीब भारतीय मुसाफिरोको यात्राका जो तरीका मजबूरीकी हालतमे चुनना पड़ता है उससे थोड़ी-बहुत असुविधाका होना अनिवार्य है। मुसाफिरोके लिए छतपर जो स्थान रहता है उससे अधिक सुविधाकी उम्मीद करना असम्भव है। साथ-ही-साथ यह एक कुख्यात तथ्य है कि छतपर की जानेवाली यात्रासे कम्पनीको सबसे ज्यादा लाभ और सबसे कम तकलीफ होती है। इसलिए कम्पनीके व्यवस्थापकोका कर्तव्य है कि परिस्थितियोके अनुसार जितना आराम छतके मुसाफिरोको देना सम्भव हो, दे — और किसी दृष्टिसे नही, तो सिर्फ धनोत्पादनकी ही दृष्टिसे सही।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–६–१९०६

३६६. एक अनुमतिपत्र सम्बन्धी मामला

हमारे जोहानिसबर्ग-संवाददाताने, जोहानिसबर्गकी अदालतमें श्री क्रॉसके सामने पेश हुए एक मुकदमेका विवरण भेजा है। आदम इब्राहीम नामक बारह सालसे कमका एक लडका मजिस्ट्रेटके सामने पेश किया गया; क्योकि वह बिना पजीयन-प्रमाणपत्रके ट्रान्सवालमें था।

मुकदमेका रूप कुछ अजीब था; क्योकि अभीतक ऐसे सब मुकदमे शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत चलाये जाते थे। यद्यपि इस कानूनसे बचना कम सहज था, तथापि जुर्माने या कारावासके रूपमे उसमे कोई दण्ड नही था। इधर, १८८५ के कानून ३ के अन्तर्गत अभियुक्तपर १०० पौड तक के जुर्माने या छ. मास तक के कठोर या सादे कारावासका विधान है। खैर, यह खुशीकी बात है कि अभियुक्तके वकीलको यह साबित करनेमे कोई कठिनाई नही हुई कि लड़केपर ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेके लिए पंजीयन शुल्क नही लग सकता।

इस प्रकार सरकार द्वारा भारतीयोपर लगाई गई बेड़ियाँ जितनी ही पीड़ाकारी होती जाती हैं, न्यायके हथौड़ेकी मुक्तिकारी चोट, जान पड़ता है, उतनी ही भारी पड़ती हैं। प्रशासन जिसे प्रसन्नता-से नष्ट करना चाहे, उसकी न्याय-विभाग रक्षा करता है। क्या लॉर्ड सेल्बोर्न अब भी कहेंगे कि कानूनका अमल, जिसके बारेमें सिद्ध कर दिया गया है, कि वह अवैध है, उचित तरीकेसे हो रहा है और जो इससे प्रभावित है, उनका समुचित खयाल रखा जाता है?

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–६–१९०६

३६७. स्वर्गीय डॉक्टर सत्यनाथन

हमें मद्रासके प्रोफेसर सत्यनाथनकी मृत्युका समाचार दुःखके साथ प्रकाशित करना पड़ रहा है। भारतसे हमारे पास परिवर्तनमें आये हुए समाचारपत्र स्वर्गीय प्रोफेसर महोदयके कार्यकी सराहनासे भरे पड़े हैं। डॉ० सत्यनाथन कर्तव्य-पालन करते हुए तथा भरपूर जवानीमें परलोकवासी हुए। उनकी जीवनचर्या उज्ज्वल थी इसलिए उनका जीवन बड़ी-बड़ी सम्भावनाओंसे पूर्ण था।

दिवगत महानुभाव मद्रास विश्वविद्यालयके एम० ए०, एलएल० बी० और बहुत शुद्ध अन्तःकरणसे बने ईसाई थे। मस्तिष्क और हृदय दोनोंके उत्कृष्ट गुणोंके कारण सभी वर्गके लोग उनका सम्मान करते थे, और उनको सरकारका इतना गहरा विश्वास प्राप्त था कि वे लोकशिक्षा विभागके स्थानापन्न उपनिदेशक बना दिये गये। ऐसे भारतीयकी मृत्युसे भारतीय समाजका एक ऐसा पुरुष उठ गया है, जिसकी क्षति भारतीय समाज आसानीसे सहन नहीं कर सकता। हम दिवंगत महानुभावके परिवारके प्रति उसके शोकमें समवेदना प्रकट करते हैं। यह क्षति उस परिवारकी ही नहीं, वास्तवमें समस्त राष्ट्रकी है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–६–१९०६

३६८. केपमें प्रवासी अधिनियम

हमारे केपके संवाददाताने जो समाचार भेजा है उससे अनुमान होता है कि थोड़े समयके लिए जानेवाले भारतीयोंको अब केपमें अड़चन नहीं होगी। थोड़े समयके लिए जानेकी जैसी सुविधा नेटालमें है वैसी अबतक केपमें नहीं दिखाई देती थी।

किन्तु दूसरी तरफ, हमारे संवाददाताके कथनानुसार प्रवासी कानूनमें जो परिवर्तन विधान सभाके इस सत्रमें होनेवाला है उससे बहुत नुकसान होगा। हम पहले लिख चुके हैं कि नया कानून पास हो गया तो अधिवासका हक किसे प्राप्त है, यह तय करनेका अधिकार अदालतके बदले अधिकारीके हाथमें चला जायेगा। यदि ऐसा हुआ तो बात बहुत मुश्किल हो जायेगी। फिर अभी तो दक्षिण आफ्रिकाके निवासी केपमें प्रवेश कर सकते हैं। किन्तु नये कानूनके मुताबिक केपका वतनी ही केपमें प्रवेश कर सकेगा, जैसा नेटालमें होता है। इन दोनों परिवर्तनोंके विरुद्ध ब्रिटिश भारतीय समिति (लीग) को संघर्ष करना चाहिए। हम यह उम्मीद करते हैं कि समितिके सदस्य तुरन्त कार्रवाई करेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–६–१९०६

३६९. सर हेनरी कॉटन और भारतीय

'इंडिया' से हमने जो अंश उद्धृत किया है, उससे हमारे पाठकोको पता चलेगा कि आसामके भूतपूर्व कमिश्नर सर हेनरी कॉटन हमारे लिए ससदमे खूब लड़ रहे है। इसके लिए हम उनका आभार मानते हैं। इस अवसरपर हमें यह बता देना चाहिए कि सर हेनरी कॉटनके पीछे काम करनेवाली [भारतीय राष्ट्रीय] काग्रेसकी ब्रिटिश समिति है। उक्त समिति जो सवाल तैयार करती है, वही सर हैनरी कॉटन संसदमे पेश करते है। और ब्रिटिश समितिके अगुआ है, सर विलियम वेडरबर्न तथा भारतके पितामह दादाभाई नौरोजी। मतलब यह कि, उक्त समितिके भी हम बहुत आभारी हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–६–१९०६

३७०. नेटालका विद्रोह

'टाइम्स ऑफ नेटाल' में एक पुराने उपनिवेशीने जो लिखा है उसका अनुवाद हमने दूसरी जगह दिया है। उसका भावार्थ यह है कि भारतीय लोग लड़ाईमे तो नही जा सकते, किन्तु जो लड़ाईमे गये है, उन्हे जिन चीजोंकी आवश्यकता हो, वे चीजें देकर मदद कर सकते है। जिस तरह बोअर युद्धके समय एक कोष जारी किया गया था और भारतीयोने उसमे मदद दी थी, उसी तरह इस समय भी करना चाहिए। इस समय कुछ चन्दा इकट्ठा करके सरकारको भेजा जाये अथवा जो कोष खुला हुआ हो उसमे चन्दा दिया जाये तो अच्छा होगा; और उतना फर्ज अदा हुआ, ऐसा समझा जायेगा। हम आशा करते है कि नेतागण इस प्रश्नको हाथमें ले लेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २–६–१९०६

३७१. नया सानफ्रान्सिस्को

[खुदा पलमें चाहे सो करे, यह कहावत हमारे हिन्दी पाठकोके सामने पहली ही बार आ रही है, सो बात नही। एक घड़ीमें रावका रक और रकका राव बननेके उदाहरण इतिहासमें बहुत मिलते है। यह तो एक व्यक्तिकी बात हुई। किन्तु राजा-रकका यह नियम पूरे शहर अथवा देशपर भी लागू होता है।] सानफ्रान्सिस्कोकी हालकी घटना इसकी साक्षी भरती है। तीन लाख, बल्कि उससे भी अधिक, व्यक्ति एक क्षणमे बे-घरबार हो गये! महल-मन्दिरोमें सुख-चैनसे रहनेवाले हजारो लोगोको, जिन्हे रात और दिनकी भी खबर नही होती थी, आज टूटी-फूटी झोंपड़ी भी नसीब नही है! अति विशाल सुन्दर हवेलियाँ और सुन्दर-सुन्दर मुहल्ले एक क्षणमें धराशायी हो गये और मिट्टीका ढेर बनकर कालको नमन कर रहे है। बाग-बगीचो और बगलोके स्थानपर वीरान मैदान छा गया है। असंख्य व्यक्ति पलभरमें बे-घरबार और खाने-पीनेके मोहताज हो गये हैं। ईश्वरकी इस अज्ञात गतिसे कौन विस्मित नही होगा? किन्तु इससे भी अधिक आश्चर्यचकित करनेवाली बात दूसरी ही है। ऐसी [भयानक होनहारका आघात खानेपर भी हिम्मतके साथ कमर कसकर खड़ा रहना सच्ची बहादुरी है।] ऐसा कठिन काम सानफ्रान्सिस्कोकी प्रजाने अपने सिर लिया है। उद्यम और लगनशीलताके लिए प्रख्यात अमरीकी जनता अपनी दृढ़ता प्रकट करने लगी है।

प्रकृतिके ऐसे कोपके समय दुनियासे मदद लिये विना सानफ्रान्सिस्कोके पुनर्निर्माणके हेतु नये उत्साहसे प्रयत्न शुरू कर दिया गया है। एक सुन्दर और रमणीक सानफ्रान्सिस्कोके द्वारा संसारकी शोभा बढ़ानेके नकशे तैयार होने लगे हैं। एक नया और दिव्य नगर बनानेके लिए जबरदस्त योजनाएँ बनने लगी हैं। दूर-दूरके देशोंसे हजारों मनुष्य यह नया शहर बनानेके लिए बुलाये गये हैं। इतना अधिक लोहा मँगवाया गया है कि सारे देशके लोहा-बाजारमें तेजी आ सकती है। नये ढंगका और इतना बड़ा बन्दरगाह बनानेकी योजना की जा रही है कि वैसा बन्दरगाह दुनियामें कहीं-कहीं ही होगा। मुहल्लोंकी रचना इस प्रकार की जानेवाली है कि जिससे नये शहरकी शोभा बढ़े। इस तरह अनेक प्रकारसे वहाँके लोगोंने प्रकृतिके कोपका मुकाबला करनेके लिए कमर कसी है। [मनुष्यकी जो बुद्धि बहते हुए जल-प्रपातोंसे यान्त्रिक बल पैदा करके हजारों मील दूर रेलगाड़ियाँ और कारखानोंको चलानेमें समर्थ हुई है, बड़े-बड़े महासागरोंको पार करनेवाले जहाज और आकाशको छूनेवाले गुब्बारे बना सकी है, विश्वमण्डलके दूसरे ग्रहोंके निवासियोंसे बात करनेके प्रयोग कर रही है, वह पृथ्वीके गर्भमें होनेवाली हलचलकी गतिको पहचानकर भूकम्पको नहीं रोक पाती — यह दुःखके योग्य है; फिर भी ऐसे सर्वनाशी भूकम्पके साथ भी मनुष्य हिम्मतके साथ जूझनेके लिए कमर कस रहा है, यह सचमुच खुशीकी बात है।]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २-६-१९०६

३७२. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

डर्बन
जून २, १९०६

सेवामें
माननीय उपनिवेश-सचिव
पीटरमैरित्सबर्ग

महोदय,

नेटाल भारतीय कांग्रेस द्वारा 'आहत — सहायक दल'[1] खड़ा करनेकी दित्साके बारेमें आपका गत मासकी ३० तारीखका पत्र मिला।

इस दित्साको स्वीकार करनेके लिए हमारी कांग्रेसकी समिति सरकारकी कृतज्ञ है। हमारी समितिने, जैसा कि सरकारकी इच्छा है, नेटाल नागरिक सैनिक दलके मुख्य चिकित्साधिकारीसे पत्र-व्यवहार आरम्भ कर दिया है। उपर्युक्त पत्रकी प्रतिलिपि[2] साथ बन्द है।

आपके आज्ञाकारी,
ओ० एच० ए० जौहरी
एम० सी० आंगलिया
संयुक्त अवैतनिक मन्त्री, ने० भा० कां०

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-६-१९०६

१. देखिए "पत्र : उपनिवेश-सचिवको", पृष्ठ ३०२।
२. देखिए अगला शीर्षक।

३७३. पत्र : प्रधान चिकित्साधिकारीको

डर्बन

जून २, १९०६

सेवामें
प्रधान चिकित्साधिकारी
नेटाल नागरिक सैनिक दल
पीटरमैरित्सबर्ग

महोदय,

नेटाल भारतीय कांग्रेसके नाम सरकारका एक पत्र आया है। उसमें लिखा है कि भारतीय आहत-सहायक दलके सम्बन्धमें कांग्रेसके द्वारा की गई दित्साको सरकारने मंजूर कर लिया है।

सरकारका कथन है कि प्रारम्भिक प्रयोगके रूपमें इस टुकड़ीमें २० डोलीवाहक रहे। हमारी समिति सूचित करना चाहती है कि आप जो स्थान और समय बतायें उसपर २० आदमी आपकी सेवामें उपस्थित रहेंगे। हम मानते हैं कि आप उनके लिए आवश्यक साजो-सामान, वर्दियों और यातायातकी व्यवस्था भी करेंगे।

सरकारने हमारी समितिको सूचित किया है कि इस दलका वेतन प्रति व्यक्ति डेढ़ शिलिंग रोजाना होगा। जब दित्सा की गई थी तब जिस समाजका प्रतिनिधित्व कांग्रेस कर रही है उसका इरादा खुद वेतन देनेका था। इसलिए हमारी समितिको भरोसा है कि सरकार भारतीय समाजको अपने आदमियोंका वेतन स्वयं चुकानेकी अनुमति देनेकी कृपा करेगी। साथ ही, हमारा विनम्र निवेदन है कि प्रति व्यक्ति प्रति सप्ताह एक पौंडसे कम वेतनपर यह सेवादल खड़ा नहीं किया जा सकता। और हमें कहनेका निर्देश किया गया है कि इतनी रकम हमारा समाज तबतक चुकाते रहनेको राजी है जबतक दलकी सेवाओंकी आवश्यकता रहे।

हम यह भी कह देना चाहते हैं कि अधिकतर व्यक्ति सेवा करनेको हर तरहसे तैयार होनेपर भी आहत-सहायक दलके कामके लिए प्रशिक्षित नहीं हैं, और इसमें उनका कोई कसूर भी नहीं है।

आपके आज्ञाकारी सेवक,
ओ० एच० ए० जौहरी
एम० सी० आंगलिया
संयुक्त अवैतनिक मन्त्री, ने० भा० कां०

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९–६–१९०६

३७४. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

जून ६, १९०६

ट्रामके मामलेकी कहानी

ट्रामके मामलेने दूसरा रूप धारण कर लिया है। नगर-परिषद और भारतीयोंके बीच कशमकश चल रही है। दोनोंमें से एक भी पक्ष हार माननेको तैयार नहीं है।

ट्रामगाड़ियोंके लिए कानूनकी जरूरत नही है, इस बहाने नगर-परिषदने कानून रद कर दिया। दूसरी ओर उसकी एक समितिने नया कानून बना डाला। मुझे जो निजी समाचार मिले हैं उनसे मालूम होता है कि परिषदकी उस समितिमें श्री डंकन[1] भी गये थे। समितिकी इच्छा थी कि कानूनमें ऐसी धारा शामिल की जाये जिससे भारतीयोंको ट्राममें बैठनेकी छूट न रहे। वे चाहें तो पृथक् ट्राममें बैठें। परन्तु जिन भारतीयोंको विशेष रियायती परवाने दिये गये हों वे सब ट्रामगाड़ियोंमें बैठ सकें। कहा जाता है कि समितिके इस विचारका श्री डंकनने विरोध किया। उन्होंने कहा कि भारतीय समाजने रेलगाड़ीके सम्बन्धमें सब्र कर लिया, उसी तरह ट्राममें भी छूट रहेगी तो वह सब्र कर लेगा। अधिक सख्ती हुई तो वह उत्तेजित हो जायेगा और उसका परिणाम ठीक न होगा। समिति अभी भी नियम बना रही है। कुछ दिनोंमें नियम प्रकाशित होनेवाले है। तब ज्यादा बातें मालूम हो सकेंगी।

इस तरह नगर-परिषद कार्रवाइयाँ करती रहती है। इस बीच भारतीय समाजने एक और काम किया है। संघके प्रमुख श्री अब्दुल गनी और इस समाचारपत्रके वर्तमान अंग्रेज सम्पादक श्री पोलक ट्राममें बैठने गये। कंडक्टरने श्री अब्दुल गनीको रोका। तब श्री अब्दुल गनीने कहा कि जबतक बल-प्रयोग नहीं किया जायेगा, वे स्वयं नीचे नही उतरेंगे। इसपर कंडक्टरने पुलिसको बुलाया। पुलिसको भी वही उत्तर मिला। अन्तमें ट्रामका निरीक्षक आया। उसने विनयपूर्वक बात-चीत की। आखिर यह तय हुआ कि ट्राम रोकनेका आरोप लगाकर श्री अब्दुल गनीपर मुकदमा चलाया जाये और इस बातको मानकर श्री अब्दुल गनी तथा श्री पोलक गाड़ीसे उतर गये। यह खबर जैसे ही निरीक्षकने नगर-परिषदको दी, टाउन क्लार्कने [उन दोनोंको] तुरन्त मिलनेके लिए चिट्ठी भेजी। उसने कहा कि अब भारतीय बहुत कर चुके, उन्हें नगर-परिषदको अधिक हैरान नहीं करना चाहिए। कुछ ही दिनोंमें उस सम्बन्धमें कानून प्रकाशित हो जायेगा; और यदि वह ठीक न लगे तो उन्हें उसका विरोध करना चाहिए। टाउन क्लार्कने प्रार्थनाकी है कि अब नगर-परिषदको तकलीफ न दें तो अच्छा होगा।

विलायतको शिष्टमण्डल

विलायतको शिष्टमण्डल भेजनेके बारेमें सर विलियम वेडरबर्नका दूसरा तार आया है। उसमें उन्होंने लिखा है कि यद्यपि हमारी तरफसे काम करनेवाली समितिको अपनी सफलताकी बहुत आशा नही है फिर भी वह सिफारिश करती है कि जिस जहाजसे संविधान-समिति यहाँसे रवाना हो, उसीसे अकेले श्री गांधीको भेजा जाये। संविधान-समिति, सम्भव है, जुलाईके आरम्भमें विलायत जायेगी। इस शिष्टमण्डलमें किन व्यक्तियोंको भेजा जाये, इस विषयमें विचार करनेके लिए पिछले बुधवारको

१. उपनिवेश-सचिव।

रातको समितिकी बैठक हुई थी। उस बैठकमें प्रस्ताव हुआ है कि जोहानिसबर्गके सब भारतीयोंकी सभा बुलाकर चन्दा इकट्ठा करनेकी व्यवस्था की जाये। यदि धन एकत्रित हो जाये तो श्री गांधीके अलावा प्रिटोरिया समितिके मन्त्री श्री हाजी हबीब तथा हाजी वजीर अलीको भी भेजा जाये। बैठक वेस्ट ऐंड हालमें दो बजे होनेवाली है — यह सूचना दी जा चुकी है।

खनिकोंकी माँग

खनिकोंका जो शिष्टमण्डल संविधान-समितिके सामने गया था उसने यह सिफारिश की है कि अब भारतीयोंको बिलकुल न आने दिया जाये और न उन्हें व्यापार आदिके दूसरे परवाने ही दिये जायें।

अनुमतिपत्रकी दिक्कत

अनुमतिपत्रोंकी दिक्कतसे तंग आकर संघने अपना आखिरी कदम उठाया है। उसने सरकारको लिखा है कि यदि अब अनुमतिपत्रकी परेशानी खतम नहीं होती, तो संघ चार प्रकारके परीक्षात्मक मुकदमे चलाना चाहता है। मुकदमे निम्न प्रकारके होंगे :

(१) जो यह सिद्ध कर सकें कि उन्होंने बोअर सरकारको तीन पौंड दे दिये हैं उन्हें बिना अनुमतिपत्रके आनेकी छूट होनी चाहिए।

(२) जिन्हें आनेकी छूट है, ऐसे लोगोंके १६ वर्षसे कम उम्रके लड़के-लडकियोंको भी आनेकी छूट होनी चाहिए; और वह भी बिना अनुमतिपत्रके।

(३) जिन्हें आनेकी छूट हो, उनकी स्त्रियोंको भी बिना अनुमतिपत्रके आनेकी छूट होनी चाहिए।

(४) सरकार खुदमुख्त्यारीसे जिसे मर्जी हो उसे ही अनुमतिपत्र देती है। यह नहीं होना चाहिए। अनुमतिपत्र किसे दिये जायें, इस बाबत स्पष्ट तथा बाकायदा नियम होने चाहिए।

यदि सरकारने इसके बारेमें सन्तोषजनक जवाब न दिया तो संघने इन सबके बारेमें परीक्षात्मक मुकदमा दायर करनेकी सूचना दी है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-६-१९०६

३७५. पत्र : दादाभाई नौरोजीको

डर्बन,
नेटाल,
जून ८, १९०६

सेवामें
माननीय दादाभाई नौरोजी
कैनिंगटन रोड
लन्दन

मान्यवर,

मुझे आपका पिछला तार मिला था, जिसमें सुझाव था कि मैं उसी जहाजसे इंग्लैंड रवाना हो जाऊँ जिससे आयोग-सदस्य जानेवाले हैं।

मैं तदनुसार तैयारी कर रहा था, तभी नेटाल सरकारका पत्र मिला कि उन्होंने "भारतीय डोलीवाहक दल" बनानेके विषयमें भारतीय समाजका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया है। इसलिए अब मेरे किसी भी दिन मोर्चेपर जानेकी सम्भावना है।

इस परिस्थितिमें हम सबने सोचा है कि स्वयंसेवक दलका संगठन इंग्लैंड-यात्रासे बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण है। यह जरूरी समझा गया है कि मैं दलके साथ रहूँ — कमसे-कम प्रारम्भिक अवस्थामें। यह स्पष्ट है कि नेटाल-सरकार आहत-सहायता कार्यमें भारतीयोंकी शक्तिकी कसौटी करना चाहती है।

इसलिए लगता है, फिलहाल इंग्लैंड जानेका कोई भी विचार मुझे छोड़ देना पड़ेगा।

इस कारणसे यहाँ हम लोग आशा किये हैं कि जो समिति दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय हितोंकी देख-भाल कर रही है वह सरकारके सामने परिस्थिति पेश करनेके लिए जरूरी कदम उठायेगी।

ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी ओरसे संविधान-समितिके[1] सामने पेश किया गया वक्तव्य आपने देख लिया होगा। इस सम्बन्धमें जो कुछ कहा जा सकता है, वह सब उसमें सार रूपमें मौजूद है। वह वक्तव्य इसी २ जूनके 'इंडियन ओपिनियन' में निकला है।

आपका विश्वस्त,
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (जी० एन० २२७३) से।

३७६. भारतीय और वतनी विद्रोह

आखिर सरकारने भारतीय समाजका प्रस्ताव स्वीकार कर लिया है और उसे अपने पानीका परिचय देनेका अवसर दिया है। प्रयोगके लिए सरकार बीस डोलीवाहकोंका एक दल चाहती है। इसका उत्तर नेटाल भारतीय कांग्रेसने तत्काल भेज दिया है।[2] कांग्रेसने हमारे खयालसे, यह प्रस्ताव करके बहुत अच्छा किया है कि जबतक यह दल प्रयोगकी अवस्थामें रहेगा तबतक डोलीवाहकोंकी मजदूरी भारतीय समाज देगा।

सरकारने इस प्रस्तावको स्वीकार करनेके साथ-साथ बारूदी हथियार-कानूनमें संशोधन करके भारतीयोंको शस्त्र देनेकी व्यवस्था कर दी है। इसी बीच श्री मेडनने इस आशयका वक्तव्य भी दिया है कि सरकार भारतीयोंको उपनिवेशकी रक्षामें भाग लेनेका अवसर देना चाहती है।

अब भारतीयोंको यह दिखानेका शानदार अवसर मिला है कि वे नागरिकताके कर्त्तव्योंको समझ सकते हैं। साथ ही दलको संगठित करनेकी बातमें ऐसा कुछ नहीं है जिसपर अनुचित गर्व किया जाये। मोर्चेपर बीस या दो सौ भारतीयोंका भी जाना मशक-दंशवत् है। भारतीयोंका वह त्याग सूक्ष्मतम ही माना जायेगा और वह उचित ही होगा। किन्तु इस घटनाके पीछे जो सिद्धान्त है उससे इसका महत्त्व प्रकट होता है। सरकारने भारतीयोंका प्रस्ताव स्वीकार करके अपने सद्भावका परिचय दिया है। अब यदि भारतीय इस अग्नि परीक्षामें उत्तीर्ण हो जाते हैं तो भविष्यके लिए सम्भावनाएँ बहुत बड़ी हैं। यदि उनको नागरिक सेनामें स्थायी रूपसे शामिल कर लिया जाये तो यूरोपीयोंको यह शिकायत करनेका कोई कारण न रहेगा कि उपनिवेशकी रक्षाका प्रधान भार यूरोपीयोंको ही उठाना पड़ता है। और तब भारतीय भी यह अनुभव न करेंगे कि उनको नागरिक सेनामें शामिल होनेकी इजाजत न देकर उनके साथ तिरस्कारपूर्ण व्यवहार किया जाता है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९-६-१९०६

१. देखिए "वक्तव्य: संविधान-समितिको", पृष्ठ ३४५-३५४।

२. देखिए "पत्र: उपनिवेश सचिवको", पृष्ठ ३५८।

३७७. फौजियोंको मदद

काफिरोंके खिलाफ लडाईमें गये हुए सिपाहियोकी मददके लिए डर्बन महिला-मण्डलने एक विशेष निधि शुरू की है। इस निधिमे सभी प्रमुख लोगोने चन्दा दिया है। उनमे कुछ भारतीय नाम भी दिखाई पडते है। हमारी सलाह है कि और भी अधिक भारतीय व्यापारियो तथा दूसरे भारतीयोको उसमे चन्दा देना चाहिए। हम पिछले सप्ताह लिख चुके है कि एक व्यक्तिने हमें मैरित्सबर्गमें ऐसी निधि इकट्ठा करनेकी सलाह दी है। उनका कहना है कि हम और तरहसे लडाईमे पूरा हाथ नही बँटा सकते, तो इस तरहसे सहायता कर लें।

फौजियोकी जिन्दगी कठिन होती है। उन्हे सरकार जो वेतन, भत्ता आदि देती है, वह हमेशा काफी नही होता। इसलिए लड़ाईमें न जानेवाले हमेशा अपनी भावना जाहिर करनेके लिए और उन्हे जरूरी चीजे पहुँचानेके लिए निधि इकट्ठा करते है; और उससे मेवे, तम्बाकू, गर्म कपड़े आदि लेकर भेजते हैं। ऐसी निधिमें मदद करना हमारा कर्त्तव्य है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ९–६–१९०६

३७८. नेटालमें भारतीयोंकी स्थिति[1]

[जून १३, १९०६ के पूर्व]

नेटालके भारतीय समाजको दो चीजें बहुत अधिक तकलीफ देती है। इनमें पहली है विक्रेता-परवाना अधिनियम।

जब यह अधिनियम पास हुआ था तब स्वर्गीय सर हेनरी बिन्सने इसका कडा विरोध किया था और कहा था कि यह कार्रवाई अब्रिटिश है और सर्वोच्च न्यायालयके सामान्य क्षेत्रसे इसका विलग रखा जाना एक खतरनाक सिद्धान्त है। अनुभवने इस भविष्यवाणीका औचित्य प्रकट कर दिया है। प्रारम्भिक अवस्थामे इस अधिनियमके प्रशासनमे ब्रिटिश भारतीयोके व्यापारको रोकनेकी धुनका अतिरेक दिखलाई पडता था। न्यूकैसिलके परवाना-अधिकारीने सभी भारतीय परवानोको नया करनेसे इनकार कर दिया था। वे परवाने सख्यामें नौ थे। उनमें से छ परवाने बहुत अधिक खर्च और परेशानीके बाद नये कर दिये गये। परिणामस्वरूप और उपनिवेश-कार्यालयके दबावके कारण सरकारने परवाना-अधिकारियोके नाम एक चेतावनी जारी की कि यदि वे अधिनियमका उपयोग बुद्धिमानी और नरमीके साथ तथा वर्तमान परवानोंका ध्यान रखते हुए नही करेंगे तो सरकार कानूनका संशोधन करने और उसे सर्वोच्च न्यायालयके कार्यक्षेत्रमें रखनेको बाध्य हो जायेगी। इस गश्ती चिट्ठीका असर कुछ समय तक रहा। अधिक रहना सम्भव नही था।

१. नेटाल मर्क्युरीने सुझाव दिया था कि भारतीयोंको अपनी शिकायतें संक्षेपमें लिख कर जनताके सामने प्रस्तुत करनी चाहिए। इससे जनता अपना मत बनानेकी अधिक अच्छी स्थितिमें होगी। यह वक्तव्य इसी सुझावके फलस्वरूप १३–६–१९०६ के नेटाल मर्क्युरीमें प्रकाशित हुआ था। बादमें यह इंडियन ओपिनियनमें उद्धृत किया गया था।

तबसे तीन मिसाली मामले ऐसे हुए हैं, जिनसे जाहिर हो जाता है कि शासनने कितनी सख्तीसे काम लिया है।

(१) श्री हुंडामल,[1] जो उपनिवेशमें कुछ समयसे व्यापार करते आ रहे हैं, अपनी दूकान बदल कर ग्रे स्ट्रीटसे वेस्ट स्ट्रीट ले जाना चाहते थे। स्वास्थ्य और सफाईकी दृष्टिसे दूकान हर एतराजसे बरी थी। उसका मालिक एक भारतीय था और दूकान ऐसी इमारतोंके समूहमे थी, जिनमें कई वर्षोसे भारतीय व्यापारी ही रहे हैं। हुंडामल नफीस चीजोंके व्यापारी थे। वे पूर्वी देशोके रेशम और दूसरी नफीस चीजोंका व्यापार करते थे। उनकी किसी यूरोपीयसे स्पर्धा नहीं थी। उनकी दूकान सावधानीके साथ साफ-सुथरी रखी जाती थी। फिर भी नगर-परिषदने एक स्थानसे दूसरे स्थानमें परिवर्तनकी इजाजत नहीं दी।

(२) श्री दादा उस्मान[2] फ्राइहीडमें युद्धके कई वर्ष पहलेसे व्यापार कर रहे थे। जहाँ वे व्यापार करते थे उसे बोअर राज्यकालमें पृथक् बस्ती या 'बाजार' माना जाता था। फ्राइहीड जब नेटालमें शामिल कर लिया गया, तब परवाना-निकायने, जबतक वे शहरसे दूरकी एक दूसरी बस्तीमें न चले जायें, नया परवाना देनेसे इनकार कर दिया। उस बस्तीमें कुछ भी व्यापार कर सकना उनके लिए बिलकुल असम्भव था। इसलिए फ्राइहीडका व्यापार श्री दादा उस्मानके हकमें बहुत नुकसानदेह साबित हुआ है। इस मामलेमें, और पहलेमें भी, प्रार्थियोंके प्रतिष्ठित होनेके सबूतमें सम्माननीय यूरोपीयोके अनेक प्रमाणपत्र पेश किये गये थे। स्मरण रखना चाहिए कि फ्राइहीडमें श्री दादा उस्मानकी दूकान ही एकमात्र भारतीय दूकान थी। परिस्थितिको और भी दुःखदायी बनानेवाली एक बात यह भी है कि नेटालके इस जिलेमें ट्रान्सवालके एशियाई विरोधी कानून जैसे-के-तैसे ले लिये गये है। इसलिए फ्राइहीडमे रहनेवाले ब्रिटिश भारतीयोंको न केवल नेटालके कानूनसे लागू होनेवाली निर्योग्यताएँ भोगनी पड़ती हैं बल्कि साथ ही उनपर ट्रान्सवालके कानूनसे उत्पन्न निर्योग्यताएँ भी लद जाती हैं।

(३) श्री कासिम मुहम्मद लेडीस्मिथके निकट एक खेतीकी बस्तीमें तीन वर्षोसे व्यापार कर रहे हैं। कुछ दिनों तक वहाँ केवल उनकी ही दूकान थी। अभी-अभी बर्डेट ऐंड कम्पनी नामकी एक यूरोपीय पेढ़ीने भी पास ही एक दूकान खोल ली है। श्री कासिम मुहम्मदकी अनुपस्थितिमें उनके नौकरको फँसा कर उसपर रविवासरीय व्यापार अधिनियम तोड़नेका आरोप लगाया गया। नौकरने फँसानेवालोंको साबुनकी एक बट्टी और कुछ चीनी बेच दी थी। इस [सम्बन्धमें दी गई] सजाको हथियार बनाकर बर्डेट ऐंड कम्पनीने श्री कासिम मुहम्मदका परवाना फिरसे जारी किया जानेकी प्रार्थनाका विरोध किया। परवाना-अधिकारीने उनकी आपत्तिको मान लिया और नया परवाना देनेसे इनकार कर दिया। निकायके सामने अपील की गई। उसने परवाना-अधिकारीके निर्णयको बहाल रखा। अदालतने कहा कि वह किसी पक्षपातसे प्रेरित नहीं है; श्री कासिम मुहम्मदके साथ वह वैसा ही बरताव करना चाहती है जैसा उसने किसी यूरोपीयके साथ किया था। यह गलत था। उस यूरोपीयको अपने पड़ोसकी खानमें काम करनेवाले भारतीयोंको कानूनके खिलाफ अफीम बेचनेपर सजा दी गई थी; और उसके खिलाफ दूसरे आरोप भी लगाये गये थे। श्री कासिम मुहम्मदके नौकरके द्वारा रविवासरीय कानूनका प्राविधिक उल्लंघन करने और उक्त यूरोपीय द्वारा स्वयं अफीम कानून तोड़नेमें अपार अन्तर है। श्री कासिम मुहम्मदने भी प्रतिष्ठित यूरोपीय पेढ़ियोंके उत्तम प्रमाण पेश किये थे।

१. देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ३८५-६।
२. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ १८।

ऊपरके तीनो मामलोंमें प्रार्थियोको उनके परवाने न देने और इस तरह उन्हे शायद उनकी जीविकाके साधनसे वंचित करनेमें औचित्यका लेश भी नही है। ये सब निहित स्वार्थ थे, फिर भी हमारी रायमे सार्वजनिक निकायोने न्याय और अधिकारकी समस्त मान्यताओको कुचलनेमें आगा-पीछा नहीं किया। यदि सर्वोच्च न्यायालयका अधिकार-क्षेत्र सुरक्षित रखा जाता, तो ऐसा जबरदस्त अन्याय कभी सम्भव न होता। जिन व्यापारियोंकी दूकानें गन्दी हों, अथवा भद्दी ही हों, या जो अपने व्यापारका समझने योग्य लेखा-जोखा प्रस्तुत न कर सकें, या जो अपने साहूकारोको धोखा देनेके लिए बदनाम हों, उनपर आपत्ति करना समझमे आ सकता है; जनताकी भावना और पूर्वग्रहको ध्यानमें रखकर भारतीय व्यापारियोको नये परवाने देनेमे बहुत ज्यादा हिचकिचाना भी समझा जा सकता है; किन्तु उक्त उदाहरणोंमे लोगोके साथ किये गये व्यवहारका औचित्य सिद्ध करना कठिन है। इस सन्दर्भमे, हालमे प्रकाशित केपके विधेयकका अध्ययन कर लेना बहुत ही उचित होगा और उससे इस प्रश्नपर बहुत प्रकाश पड़ेगा। यद्यपि इस विधेयकपर कोई तर्कसगत आक्षेप नही किया जा सकता, फिर भी इससे ब्रिटिश परम्पराओ अथवा उचितानुचितके प्रारम्भिक विचारोको ठेस पहुँचाये बिना वह सब-कुछ हो जायेगा जो नेटाल अधिनियमके द्वारा उद्दिष्ट था।

सरकारने परवाना देनेवाले अधिकारियोके नाम इस आशयकी गश्ती चिट्ठी भेजी है कि दिये गये परवानोके प्रतिपत्रोपर शिनाख्तको पक्का बनानेके लिए भारतीय प्रार्थियोके अगूठेके निशान लिये जाये। इससे एक अतिरिक्त कठिनाई सामने आ गई है। सरकार वर्तमान परवानेदारोके व्यापारसे हटते या मरते ही उनके कारोबार को चलते हुए धन्धेके रूपमे न बेचकर एकदम बेच देनेका इरादा करती है। भारतीयोके साथ इस तरहका भेदभाव करनेका इसके सिवा कोई दूसरा कारण समझमे नही आता। किसी व्यापारीके लिए इसका क्या अर्थ है सो कहनेकी नही, कल्पना करनेकी बात है।

प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम

इस अधिनियमके अन्तर्गत हालमें सरकारने ऐसे नियम बनाये है, जिनके बलपर खालिस लूट जैसा शुल्क लादा गया है। जो भारतीय नेटालका निवासी है और नेटालमें वापस लौटना चाहता है वह प्रायः अपने साथ कुछ लिखित प्रमाण रखता है। उसे सरकार पर्याप्त सबूत मिलनेपर अधिवासी प्रमाणपत्र दे देती है। इसके लिए अभीतक नाममात्रको २ शिलिंग ६ पेसका शुल्क लिया जाता था, किन्तु अब इसे बढ़ाकर एक पौंड कर दिया गया है। इसी प्रकार, जो कुछ दिनोके लिए उपनिवेशमे आना चाहते है या भीतरी राज्योके निवासी होनेके कारण भारत जाते हुए नेटालसे गुजरना चाहते है उनको भी सुविधाएँ दी जाती है। इन्हे अभ्यागत पास या नौकारोहण पास कहते है। अभी हाल तक १० पौंड जमा कर देनेपर ये बिना किसी शुल्कके जारी कर दिये जाते थे। जमा की हुई रकम उपनिवेश छोड़नेपर वापस कर दी जाती थी। अब इन पासोपर भी एक पौंड शुल्क लगा दिया गया है। यह कर असाधारण है। ब्रिटिश भारतीय नेटालसे गुजर कर रेलवेकी आमदनी बढ़ाते है, इस विशेषाधिकारके बदले अब उन्हे एक पौंड शुल्क भी देना पड़ेगा। अभ्यागतोंपर भी यही तर्क लागू होता है। यह देखते हुए कि कानून आकर बसनेपर प्रतिबन्ध लगाता है, कुछ दिन ठहरनेपर नही, यह सोचना स्वाभाविक है कि जो उपनिवेशमे कुछ दिन रहना चाहते है वे वापस हो ही जायें, इस बातको पक्का करनेका खर्च सरकारी खजानेपर पड़ना चाहिए। किन्तु सरकारने दूसरा ही दृष्टिकोण अपनाया है। वह मानती है कि जो आदमी आरजी तौरपर नेटालकी यात्रा करता है, उसपर भी प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम लागू किया जा सकता है; और इसलिए उपनिवेशमे यात्राकी अनुमति देना उसे एक बहुत बड़ी सुविधा देना है। कानूनमे इस मान्यताका कोई समर्थन नही मिलता। ऐसे उदाहरण मिलते है जिनमें

जोहानिसबर्गके ब्रिटिश भारतीयोंने १ पौंड देकर नौकारोहण पास लिये और बादमें उन्हें इरादा बदलकर अपनी भारत-यात्रा अनिश्चित कालके लिए स्थगित कर देनी पड़ी। इस तरह जिस नौकारोहण पासके लिए उन्होंने एक पौंड शुल्क दिया था, उसका कोई उपयोग न करनेपर भी उन्हें उसके शुल्कसे हाथ धोना पड़ा, और जब वे भारत जाना चाहेंगे उस समय उन्हें फिर नौकारोहण पास जारी कराना पड़ेगा और उसके लिए फिरसे शुल्क देना पड़ेगा। अतः ऐसे शुल्कका अर्थ यही लगाया जा सकता है कि ब्रिटिश भारतीयोंपर अप्रत्यक्ष रूपसे कर लगानेका प्रयत्न किया जा रहा है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-६-१९०६

३७९. वफादारीका प्रतिज्ञापत्र

हम, नीचे हस्ताक्षर करनेवाले, गम्भीरता और ईमानदारीके साथ घोषणा करते हैं कि हम महामहिम सम्राट एडवर्ड सप्तम, उनके उत्तराधिकारियों और वारिसोंके प्रति वफादार रहेंगे और सच्ची निष्ठा रखेंगे तथा नेटाल उपनिवेशके सक्रिय नागरिक सेनाकी अतिरिक्त सूचीमें डोलीवाहककी हैसियतसे वफादारीके साथ तबतक सेवा करेंगे जबतक कि हम कानूनन उसकी सदस्यतासे पृथक् न हो जायें। हमारी सेवाकी शर्तें ये होंगी कि हममें से प्रत्येकको भोजन, वर्दी, सामग्री तथा १ शिलिंग ६ पेंस प्रतिदिन मिलेगा।

मो० क० गांधी, यू० एम० शेलत, एच० आई० जोशी, एस० बी० मेढ़, खान मुहम्मद, मुहम्मद शेख, दादा मियाँ, पूती नायकन, अप्पासामी, कुंजी, शेख मदार, मुहम्मद, अलवार, मुत्तुसामी, कुप्पुसामी, अजोध्यासिंह, किस्तमा, अली, भाई-लाल, जमालुद्दीन।[1]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-६-१९०६

१. देखिए "भारतीय डोलीवाहक दल", पृष्ठ ३७८।

३८०. लॉर्ड सेल्बोर्न

जर्मिस्टनके नये नगर-भवनका शिलान्यास करते हुए लॉर्ड सेल्बोर्नने एक अर्थगर्भित भाषण दिया है। उसमे नैतिक तथा राजनीतिक दोनो प्रकारकी सीखोंका समावेश है। राजनीतिक दृष्टिसे देखें तो वह भाषण गोरोको लक्ष्य करके दिया गया है। इसलिए हमारे लिए विचार करने योग्य सामग्री उसमें कम ही है। किन्तु नैतिक दृष्टिसे लॉर्ड सेल्बोर्नके शब्द मनन करने योग्य है। इसलिए हम उनका सारांश नीचे दे रहे है :

राजकीय मामलोमे प्रवृत्त हमारी (गोरी) जनताके जीवनके लिए नगरपालिकाओका असर बहुत जरूरी है। नगरपालिकाएँ राज-काज चलानेके लिए व्यक्तियोको तैयार करनेवाली पाठशालाएँ हैं। वहाँ हमारी सारी कौमके स्वतन्त्रता रूपी बीजको पोषण मिलता है। अंग्रेज लोग सरल किन्तु पराधीन राज्यकी अपेक्षा, निष्ठुर किन्तु स्वाधीन राज्य-पद्धतिको अधिक पसन्द करते हैं। नगरपालिकाएँ हर समय और हर जगह लोकमत जाहिर करनेका मुख्य स्थान हैं। नगरपालिका निर्वाचित सदस्योको ही नही, निर्वाचको तथा निर्वाचनके सम्बन्धमे चर्चा करनेवालोको भी एक तरहका शिक्षण देती है। उचित आलोचना किस तरह की जाये, यह निर्वाचकोको भूलना नही चाहिए। यह प्रदेश ऐसा है जहाँ विशेष प्रकारके तूफान उठा करते हैं। तूफान प्राकृतिक और राजनीतिक दो तरहके होते हैं। जिस प्रकार प्राकृतिक तूफानोके समय स्थिरता बनाये रखनेवाला स्थिरचित्त व्यक्ति कहलायेगा, उसी प्रकार राजनीतिक तूफानोंके समय स्थिर वृत्ति रखनेवाला, स्थिर नीतिका व्यक्ति माना जायेगा। शुभ और अशुभ दोनो अवसरोपर जो व्यक्ति अपने आचरणमें स्थिरता दिखाता है, उसीको मैं विश्वासपात्र मानता हूँ। लोग उसके शब्दो या कामोका सीधा अर्थ करें या उलटा, उसे यह सिद्ध कर दिखाना चाहिए कि वह अपने सिद्धान्तोपर अडिग है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६–६–१९०६

३८१. श्री सीडन[1]

न्यूजीलैंडके प्रधान मन्त्री श्री सीडन ६१ वर्षकी आयुमे किसी भी प्रकारकी बीमारी भोगे बिना इस ससारसे विदा हो गये। वे एक होशियार राजनीतिज्ञ अंग्रेज थे। उन्होने लम्बी अवधि तक न्यूजीलैंडके निर्वाचित प्रधान मंत्रीका पद भोगकर नाम प्राप्त किया था और अपनी देख-रेखमे देशको सम्पन्न बनाया। उन्हे उपनिवेशीय राजनीतिज्ञोमें अग्रगण्य माना जा सकता है। यद्यपि वे बड़ी सरकारकी अवगणना करके भी उपनिवेशकी सत्ता बढ़ानेका प्रयत्न करते रहते थे, फिर भी चूँकि उनका रुख ब्रिटिश साम्राज्यके हितोके लिए घातक नही था, इसलिए ब्रिटिश राजनीतिज्ञोमें उन्हे सदा प्रमुख कार्यके योग्य माना जाता था।

जयन्ती, औपनिवेशिक-सम्मेलन और राज्याभिषेक सम्मेलनके समय उपनिवेशोके प्रधान मन्त्रियोमे उनपर सबसे पहले नजर पड़ती थी। ऐसे राजनीतिज्ञके देहावसानका समाचार ब्रिटिश

१. 'ओस्वेस्ट्री ग्रेंज' जहाज द्वारा आस्ट्रेलियाके दौरेसे न्यूजीलैंड वापस जाते समय जून १०, १९०६ को रिचर्ड सीडनका देहान्त हुआ।

राज्यके प्रत्येक भागमें शोक उत्पन्न करेगा। श्री सीडनके देहान्तके इस शोकमय अवसरपर महामहिम एडवर्डने प्रजाके नाम शोक-सन्देश भेजा है। नेटाल सरकारने भी शोक-सन्देश भेजा है। इससे मालूम होता है कि वे कितने विख्यात थे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १६-६-१९०६

३८२. पत्र : टुकड़ी नायकको

डर्बन
जून १८, १९०६

मुख्य नायक एन० चिआज़री
पॉइंट
[डर्बन]

प्रिय महोदय,

हलका नं० ४ के नेता कप्तान ड्रेनें[1] दलके उन सदस्योंको, जो स्वयं वर्दियोंका प्रबन्ध करनेमें समर्थ नहीं हैं, वर्दियाँ देनेके निमित्त उपर्युक्त हलकेमें रहनेवाले भारतीय व्यापारियोंसे चन्दा उगाहनेके प्रयत्न किये हैं। फलतः हम बड़े हर्षके साथ आपको सूचित करना चाहते हैं, कप्तान ड्रेनें जितनी रकमका अनुमान बाँधा था उससे अधिक अब हम इकट्ठी कर चुके हैं। साथमें जो सूची नत्थी है उसका अवलोकन करनेपर आपको यह बात प्रकट हो जायेगी। आवश्यकता थी ७० पौंड १५ शिलिंगकी, और चन्देमें आये हैं ८६ पौंड ७ शिलिंग।

हम ५० पौंडकी नकद रकम उपर्युक्त प्रयोजनके लिए इस पत्रके साथ आपके हवाले करते हैं। अगर आपको अधिककी आवश्यकता पड़ेगी तो हम बची हुई रकम आपके पास भेज देंगे।

यदि आप चन्दा देनेवालोंकी जानकारीके लिए उन व्यक्तियोंके नाम, जिन्हें वर्दियाँ दी जायें, हमें लिख भेजनेकी कृपा करेंगे तो हम आपके आभारी होंगे।

विद्रोह पूरी तौरपर विफल हो ही चुका है। यदि इस लिहाजसे अब इस रकमकी जरूरत न रह गई हो तो, हम मानते हैं, यह हमें लौटा दी जायेगी।

हम यह भी कहना चाहेंगे कि अगर वर्दियाँ खरीदी जायें तो वे हलका नं० ४की मिल्कियत रहें।

अन्तमें हम कप्तान ड्रेको धन्यवाद देना चाहते हैं। उन्होंने हमें इस बातका अवसर दिया है कि हम उन नागरिकोंके कार्यकी सराहना — छोटे ही रूपमें सही — व्यक्त कर सकें, जो हलका नं०४ में रहनेवाले अपने सहनागरिकोंके जान-मालकी हिफाजत करनेके लिए आगे बढ़े हैं।

आपके विश्वस्त,
एस० पी० मुहम्मद व कम्पनी

[संलग्न]

१. इन्होंने २ जूनको कांग्रेस-भवनमें अपने हल्केके भारतीय निवासियोंकी एक सभामें व्याख्यान दिया था। समाजके अन्य नेताओंके अतिरिक्त गांधीजी भी उसमें बोले थे। उसमें यह निश्चय किया गया था कि वर्दियोंके लिए ७०पौंड चन्देसे एकत्रित किये जायें और १६व्यक्ति आहत-सहायक कार्यके लिए दिये जायें।

चन्दा देनेवालोंके नाम

	पौं० शि० पें०
अबूबकर आमद ऐंड कं०	१०–१०–०
एम० सी० कमरुद्दीन ऐंड कं०	१०–१०–०
दाउद मुहम्मद	१०–१०–०
ई० इब्राहीम इस्माइल	८– ८–०
पी० दाउजी मुहम्मद	७–१०–०
जी० एच० मियाँखाँ	६– ६–०
पारसी रुस्तमजी	६– ६–०
एस० पी० मुहम्मद	४– ४–०
एम० सी० आंगलिया	२– २–०
हुसेन कासिम	२– २–०
अब्दुल हक ऐंड आमद	२–१०–०
ए० हक मुहम्मद इस्माइल	२– २–०
ए० एम० पारुक	२– २–०
एम० एस० रांदेरी	१– १–०
जी० एच० रांदेरी	१– १–०
ई० ए० तैयब	१– १–०
एन० कोतवाल	२– २–०
ईस्ट इंडियन ट्रेडिंग कम्पनी	२– २–०
दादा अब्दुल्ला ऐंड कं०	१– १–०
अब्दुल हक काजी साहब	१– १–०
आई० बी० तिमोल	१– १–०
एक मित्र	०–१५–०
कुल मीजान पौं०	८६–७–०

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३–६–१९०६

३८३. पत्र : गो० कृ० गोखलेको

स्टैंजर पड़ाव
जून २२, १९०६

प्रिय प्रोफेसर गोखले,

मैं यह पत्र स्टैंजरके[1] सैनिक पड़ावसे लिख रहा हूँ। भारतीय डोलीवाहक दलको कल कूच करनेका हुक्म मिला है। इस बार इस दलके सामने जो काम है, वह ज्यादा मुश्किल तरीकेका है। कुछ भी हो, मेरे लिए यह पूरी तौरसे जरूरी था कि यदि यह दल बने ही तो मैं इसके साथ रहूँ। इसलिए मेरे इंग्लैंड आनेका प्रश्न स्थगित ही रखना होगा।

मैं आपके लम्बे पत्र और आपके दिये सुझावोंके लिए कृतज्ञ हूँ।

मेरा खयाल है कि श्री मॉर्लेसे आपकी मुलाकातोंका[2] परिणाम हमें समयपर ज्ञात हो ही जायेगा। अपनी यात्रामें यदि आप दक्षिण आफ्रिकासे गुजर सकें तो आपका यह शानदार काम और भी खिल उठेगा। मैं जानता हूँ कि यह स्वार्थीपनका विचार है। परन्तु यह देखते हुए कि आजकल मेरा सम्पूर्ण कार्य एकमात्र दक्षिण आफ्रिकासे सम्बन्धित है, आप मुझे ऐसे विचारके लिए क्षमा करेंगे।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

प्रो० गो० कृ० गोखले
लन्दन]

हस्तलिखित मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकलसे।
सौजन्य : भारत सेवक समिति (सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी)।

३८४. अनुमतिपत्रका एक महत्त्वपूर्ण मुकदमा

न्यायकी एक बार पुनः विजय हुई है और ट्रान्सवालके एशियाई अनुमतिपत्र विभागकी ज्याद-तियोंपर फोक्सरस्टके प्रधान मजिस्ट्रेटके हाथों कल्याणकर रोक लगी है। इस मुकदमेके बारेमें हमारे जोहानिसबर्गके संवाददाताने जो सारांश भेजा है, उससे मालूम होता है कि हीडेलबर्गके एक प्रतिष्ठित भारतीय व्यापारी श्री ए० एम० भायातके भाई श्री ई० एम० भायातको ट्रान्सवालमें पुनः प्रवेशके लिए अनुमतिपत्र देनेसे इनकार किया गया, यद्यपि उन्होंने साबित कर दिया था कि वे बस्तीके एक पुराने निवासी हैं और ट्रान्सवालमें बसनेके लिए, मूल्यके रूपमें, डच सरकारको तीन पौंड अदा कर चुके हैं। श्री भायातके प्रार्थनापत्रको अत्यधिक प्रभावशाली यूरोपीय समर्थन प्राप्त हो चुका था। उन्हें

१. डर्बनके ४५ मील उत्तर-पूर्व एक कस्बा।

२. प्रो० गोखलेने जिन्होंने, दिसम्बर १९०५ में, कांग्रेसके बनारस अधिवेशनकी अध्यक्षता की थी, इस समय इंग्लैंडमें थे। वे बंगभंग आदि विविध भारतीय समस्याओं और सुधारोंके सम्बन्धमें भारत-मंत्री श्री मॉर्लेसे अनेक बार मिले थे।

ट्रान्सवाल जाकर अपने भाईका स्थान ग्रहण करना था। क्योंकि उनके भाईका स्वास्थ्यके खयालसे भारत जाना जरूरी हो गया था। ऐसे प्रमाणके होते हुए भी श्री भायात अनुमतिपत्र प्राप्त न कर सके। इसका कथित कारण यह बताया गया कि चूँकि युद्ध छिड़नेके कुछ वर्ष पूर्व ही वे ट्रान्सवाल छोड़कर जा चुके थे इसलिए उन्हे शरणार्थी नही कहा जा सकता। ब्रिटिश भारतीय सघके द्वारा मामला लॉर्ड सेल्बोर्नके पास भेजा गया, परन्तु परमश्रेष्ठने भी राहत देनेसे इनकार कर दिया। हमारे लिए यह दुःखद आश्चर्यका विषय है कि ऐसे महत्त्वपूर्ण मामलेमें उच्चायुक्त न्याय करनेसे इनकार कर दे। भारतीयोको यह शिकायत करनेका अधिकार है कि परमश्रेष्ठने भारतीय समाजके प्रति वह उचित सम्मान नही दिखाया जिसके, उन्होने कुछ ही समय पहले कहा था, भारतीय सही तौरपर अधिकारी है।

इस इनकारीसे चिढ़कर श्री भायातने उपनिवेशकी अदालतोसे अपील की, जिसका फैसला पूर्ण रूपसे श्री भायातके पक्षमे हुआ। शान्ति-रक्षा अध्यादेशकी मजिस्ट्रेट द्वारा की गई व्याख्याका अर्थ यह है कि, जो भारतीय पुरानी सरकारको तीन पौड दे चुके है वे ट्रान्सवालमे, उक्त रकमकी अदायगीका प्रमाण देकर, बिना अनुमतिपत्रके प्रवेश कर सकते है।

इस मुकदमेने एक बार फिर प्रदर्शित कर दिया है कि ट्रान्सवालमे सरकारसे न्याय पाना किसी भारतीयके लिए कितना कठिन है। जबसे इस उपनिवेशमे ब्रिटिश शासनकी स्थापना हुई है तबसे ब्रिटिश साम्राज्यके उस भागमें भारतीयोंको अपने अस्तित्वके अधिकारके लिए सघर्ष करना पड़ा है। अनेक बार वे उपनिवेशकी अदालतोकी सहायता द्वारा अनिच्छुक सरकारसे न्याय हासिल करनेको मजबूर हो चुके है। लॉर्ड सेल्बोर्नको ब्रिटिश भारतीय सघकी यह शिकायत बुरी लगी कि परवाना सम्बन्धी परीक्षात्मक मुकदमेमे सरकारने भारतीयोंका विरोध किया। शायद उसमे बुरा लगनेका कुछ आधार था भी, क्योंकि गणराज्यके उच्च न्यायालय द्वारा किया गया एक फैसला मौजूद था, जिसे अमलमें लानेके लिए वर्तमान सरकारने अपनेको बाध्य महसूस किया। पर वर्तमान मामलेमें तो ऐसा कोई पूर्वोदाहरण भी नही था। शान्ति-रक्षा अध्यादेश ब्रिटिश सरकारकी रचना है। भारतीय प्रवासियोके आव्रजनपर प्रतिबन्ध लगानेकी गरजसे उसे उसके उचित क्षेत्रसे खीचतान कर लागू किया गया। किसी पूर्वोदाहरणका विचार किये बिना स्वय ही आगे बढ़कर राहत देना सरकारके अपने हाथमे था। फिर भी एक भारतीय व्यापारीको बहुत व्यय करना पड़ा है, वह परेशानीमे फँसा है और उसे प्रारम्भिक न्यायपूर्ण व्यवहार पानेके लिए भी उपनिवेशकी अदालतोंका सहारा लेनेको मजबूर होना पड़ा है। हमे कौतूहल है कि लॉर्ड सेल्बोर्न ट्रान्सवालकी शासन-सत्ताकी इस नवीनतम कार्रवाईको किस प्रकार न्यायसंगत ठहराते है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-६-१९०६

३८५. भारतीय स्वयंसेवक

युद्धमें भारतीय भाग लें अथवा न लें, इस बातकी काफी चर्चा इस पत्रमें हो चुकी है। सरकारने २० आदमियोंका दल स्वीकार किया है और कांग्रेसने उतने आदमी तैयार कर दिये हैं। इसका असर प्रमुख गोरोंके मनपर बहुत अच्छा हुआ है। हमने इतना किया, इससे कुछ प्रमुख गोरे मानने लगे हैं कि ऐसे कामोंके लिए हममें स्वाभाविक क्षमता है, और इस आधारपर उनकी राय है कि हम स्थायी स्वयंसेवकोंमें भरती होनेकी माँग करें।

इस सुझावमें और जो डोलीवाहक दल तैयार हो चुका है उसमें बहुत अन्तर है। डोली ले जानेवाली टुकड़ी थोड़े ही दिनोंके लिए है। उस टुकड़ीको सिर्फ डोली लाने-लेजानेका काम दिया जानेवाला है और उस कामकी जरूरत न रहनेपर उसे छुट्टी मिल जायेगी। इन लोगोंको हथियार रखनेकी इजाजत भी नहीं है। स्वयंसेवक दलका काम इससे बिलकुल अलग है और अपेक्षाकृत महत्त्वपूर्ण है। वह दल स्थायी होगा। उसमें शामिल होनेवालोंको हथियार मिलेंगे और हर वर्ष निर्धारित दिनोंमें फौजी काम सीखनेके लिए जाना पड़ेगा। उन्हें अभी तो लड़ाईका काम नहीं करना पड़ेगा। लड़ाई हमेशा नहीं होती। अन्दाजन बीस वर्षमें एक बार लड़ाई होती है, ऐसा लोग कहते हैं। नेटालमें वतनी-विद्रोह हुए आज बीस वर्षसे अधिक समय हो गया है। इसलिए स्वयंसेवकोंको भरती होनेमें किसी भी प्रकारकी जोखिम नहीं है। उसे एक तरहकी वार्षिक सैर कहा जा सकता है। उसमें दाखिल होनेवालेको पूरा व्यायाम मिलता है, जिससे उसका शरीर नीरोग रहता है और तन्दुरुस्ती अच्छी हो जाती है। स्वयंसेवकोंमें भरती होनेवालेको सदा अच्छा आदर मिलता है। उसे लोग चाहते हैं और 'नागरिक सैनिक'-कहकर बखान करते हैं।

यदि भारतीय इस अवसरका लाभ उठायें तो, हमारे विचारसे, यह बात बहुत अच्छी होगी। इससे सहज ही राजनीतिक लाभ मिलना सम्भव है। वैसा लाभ हो या न हो, किन्तु यह काम करना हमारा कर्तव्य है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। सैकड़ों प्रमुख गोरे इस काममें भाग लेते हैं और इसमें गौरव मानते हैं। सरकार कानूनन किसी भी व्यक्तिको इसके लिए बाध्य कर सकती है। [हम जिस देशमें रहते हैं उस देशके सुरक्षा-कानूनोंका हमें पालन करना चाहिए।] इस तरह चाहे जिस दृष्टिसे देखें, यह ठीक मालूम होता है कि यदि हम स्वयंसेवकोंमें शामिल हो सकें, तो हमारे ऊपर जो लांछन लगाया जाता है वह इससे हमेशाके लिए दूर हो जायेगा।

आज पन्द्रह वर्षोंसे भारतीयोंपर गोरे यह तोहमत लगाते आये हैं कि यदि नेटालकी रक्षामें अपनी जान देनेकी नौबत आ पड़े तो भारतीय लोग अपने कर्त्तव्यका स्थान छोड़कर घर भाग जायेंगे। इसका जवाब हम कहकर नहीं दे सकते। इसका एक ही तरीकेसे स्पष्टीकरण किया जा सकता है, और वह है करके दिखाना। वैसा करनेका आज समय आया जान पड़ता है। किन्तु वह किस तरह किया जाये? गिरमिटसे छूटे हुए गरीब लोगोंको स्वयंसेवक बनाकर नहीं। व्यापारी वर्गका कर्त्तव्य है कि वह स्वयं इस आन्दोलनमें भाग ले। हर दूकानसे एक व्यक्ति दिया जाये, तो भी काफी व्यक्ति तैयार हो सकते हैं। ऐसा करनेसे व्यापारको धक्का नहीं लगेगा। जो आदमी शामिल होंगे उनकी स्थिति सुधरेगी, उत्साह बढ़ेगा और माना जायेगा कि उन्होंने नागरिककी हैसियतसे अपना कर्त्तव्य पूरा किया।

कुछ लोगोंका खयाल है कि लड़ाईमें जाने अथवा उसके लिए तैयारी करनेमें जानकी अधिक जोखिम है। यह निरा भ्रम है। इसके प्रमाण हम अगले सप्ताह देना चाहते हैं।[1]

१. देखिए "भारतीय लड़ाईमें जायें या नहीं?", पृष्ठ ३७६।

तबतक हम नेताओंके सामने उपर्युक्त विचार रख रहे हैं और हमें आशा है कि वे उसपर अवश्य सोचेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३–६–१९०६

३८६. सुलेमान मंगाका मुकदमा

श्री सुलेमान मंगाके[1] अनुमतिपत्रके बाबत जो मुकदमा हुआ था उसका पूरा विवरण हमने अंग्रेजीमें दिया था। उसके आधारपर सर हेनरी कॉटनने संसदमें सवाल पूछा था। श्री चर्चिलने[2] जवाब दिया कि उसके बारेमें तत्काल तजवीज की जायेगी। यह सवाल और जवाब बहुत महत्त्वपूर्ण है। लॉर्ड सेल्वोर्न क्या जवाब देते है, यह देखना है। सम्भव है कि अनुमतिपत्र-सम्बन्धी राहतका मिलना-न-मिलना बहुत-कुछ उनके जवाबपर निर्भर करेगा।

श्री चर्चिलने जो जवाब दिया कि जाँच कराई जायेगी, उससे ऐसा माना जा सकता है कि बड़ी सरकार अपनी जवाबदेही एकदम अस्वीकार नहीं करेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३–६–१९०६

३८७. लेडीस्मिथके गिरमिटिया भारतीय

लेडीस्मिथके गिरमिटिया भारतीयोंपर किये गये अत्याचारोंका विवरण हमारा लेडीस्मिथका संवाददाता दे चुका है। यह हकीकत हमने अंग्रेजी विभागमें भी दी थी।[3] वह संरक्षक श्री पॉलकिंग होर्नके पढनेमें आया, इसलिए उन्होंने हमें सूचित किया है कि उस मामलेकी पूरी जाँच की जा रही है। यह प्रसन्नताका समाचार है; और उम्मीद की जा सकती है कि गरीब भारतीयोंको कुछ-न-कुछ न्याय मिलेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३–६–१९०६

३८८. भारतीय डोलीवाहक दल

इस टुकड़ीके वेतनके सम्बन्धमें कांग्रेसने जो पत्र लिखा था, उसका उत्तर अवैतनिक मन्त्री श्री उमर हाजी आमद झवेरी तथा श्री मुहम्मद कासिम आंगलियाको मिला है। उसमें सरकारने लिखा है कि वह कांग्रेसकी वेतन चुकानेकी माँग स्वीकार करती है।

श्रीमती नानजी तथा श्रीमती गैब्रियलने मिलकर टुकड़ीके सदस्योंके लिए रेडक्रॉसके पट्टे बनाये हैं। ये पट्टे बायी भुजापर पहने जाते हैं। इनसे यह जाना जाता है कि ये केवल जख्मियोंको

१. देखिए "एक अनुमतिपत्र-सम्बन्धी मामला", पृष्ठ ३५५।

२. श्री विन्स्टन चर्चिल; जो उस समय सहायक उपनिवेश-मन्त्री थे।

३. देखिए इंडियन ओपिनियन, ९–६–१९०६।

सेवा करनेवाले व्यक्ति हैं। वतनियोंके विद्रोहमें इन पट्टोंका बहुत महत्त्व नही है; किन्तु यूरोपीय लोगोंमें तो यह परिपाटी रूढ़ है कि इस पट्टेवाले व्यक्तिपर हथियार नही उठाया जा सकता।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-६-१९०६

३८९. किरायेके बारेमें महत्त्वपूर्ण मुकदमा

नेटालके सर्वोच्च न्यायालयमें मासिक किरायेदारोंको नोटिस देनेके बारेमे एक महत्त्वपूर्ण मुकदमेका फैसला हुआ है। साधारण मान्यता यह है कि किरायेदारको चाहे जिस तारीखसे एक महीनेकी सूचना देना काफी है, और किरायेदार भी ऐसी सूचना देकर घर छोड़ सकता है। जान पड़ता है कि ऐसा ही वकीलोंका भी खयाल था। किन्तु सर्वोच्च न्यायालयने फैसला दिया है कि सूचना उसी तारीखसे दी जानी चाहिए जिस तारीखको किरायेदार आया हो; अर्थात् यदि कोई किरायेदार अमुक महीनेकी छठी तारीखको आया हो, तो वह घर छोड़नेकी एक महीनेकी सूचना छठी तारीखसे ही दे सकता है अथवा छठी तारीखसे शुरू होनेवाली पेशगी सूचना दे सकता है। इसी तरहकी सूचना देनेके लिए मकान-मालिक भी बाध्य है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-६-१९०६

३९०. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

श्री भायातके अनुमतिपत्रका मुकदमा

जैसा श्री सुलेमान मंगाका मामला था, वैसा ही श्री इब्राहीम भायातका भी हुआ है। श्री मंगाको मियादी अनुमतिपत्र पानेका पूरा हक था, फिर भी अनुमतिपत्र अधिकारीने नही दिया। किन्तु अन्तमें उन्होंने डेलागोआ-बे से अनुमतिपत्र प्राप्त किया। श्री इब्राहीम भायात ट्रान्सवालके पुराने निवासी है और बहुत-से नामी गोरोंसे उनकी जान-पहचान है। उनकी अर्जीको बहुतसे व्यक्तियोंका समर्थन प्राप्त था। फिर भी चूँकि वे ठीक लड़ाईके समय नही, बल्कि एक वर्ष पहले ट्रान्सवाल छोड़कर चले गये थे, इसलिए अनुमतिपत्र देनेसे इनकार किया गया। यह तो जुल्मकी हद हो गई। श्री भायातको अपने भाईके व्यापारके लिए हर हालतमें जाना था, इसलिए उन्होंने मुकदमा दायर करना तय किया। उन्होंने श्री बेन्सनकी सलाह ली थी और फोक्सरस्टमें श्री लिख्टनस्टाइनने पैरवी की थी। श्री भायातके बचावमें नीचे लिखी दलीलें दी गईं:

(१) श्री इब्राहीम भायात ट्रान्सवालके पुराने निवासी हैं।

(२) उन्होंने डच सरकारको तीन पौंड दे दिये थे; और, तीन पौंड देकर ट्रान्सवालमें सदाके लिए रहनेका हक प्राप्त कर लिया था।

(३) लन्दन समझौतेके अनुसार ऐसे लोगोंको स्थायी रूपसे रहनेका अधिकार है।[1]

१. लन्दन समझौतेकी शर्तोंके अनुसार जबतक कोई व्यक्ति खतरनाक या राजद्रोही न समझा जाये तबतक उसके विरुद्ध गवर्नर अपने विवेकाधिकारका उपयोग नहीं कर सकता। समझौतेकी शर्तोंके द्वारा सभी ब्रिटिश प्रजाजनोंको भूतपूर्व गणराज्यमें मुक्त और अबाध प्रवेशका भी अधिकार दिया गया था।

(४) चूँकि श्री भायातकी शादी ट्रान्सवालमे हुई है, इसलिए वे ट्रान्सवालके स्थायी निवासी माने जायेंगे।

इन दलीलोके सामने अनुमतिपत्र अधिनियम थोथा पड गया और मजिस्ट्रेटने यह फैसला दिया कि ऐसे व्यक्तियोंको अनुमतिपत्रकी आवश्यकता नही है।

यह बहुत अच्छा परिणाम निकला है, और इससे अनुमतिपत्र कार्यालयकी करारी हार हुई है। इसके जवाबमें लॉर्ड सेल्बोर्न कौन-सी दलील पेश करते है, यह हमे देखना है।

इस मुकदमेका नतीजा यह हुआ है कि जो भारतीय पहलेसे ट्रान्सवालके निवासी है और जिनके पास डचो द्वारा पजीकृत प्रमाणपत्र है वे ट्रान्सवालमे बिना अनुमतिपत्रके आ सकते है। इससे बहुत-से व्यक्तियोका कष्ट दूर होगा।

फिर भी मुझे कहना चाहिए कि उपर्युक्त मुकदमेमें घोटाला है। फोक्सरस्टके न्यायाधीश भले है और उन्होने दया करके कानूनका अर्थ हमारे पक्षमें किया है। पजीकृत लोगोको भी अनुमतिपत्र लेना चाहिए, ऐसा कहनेवाले बहुत-से बड़े-बड़े बैरिस्टर है। और इस बातमें काफी मुश्किले है, इसमें कोई शक नही। फिर भी इस न्यायाधीशके फैसलेके विरुद्ध अब सरकार अपील नही कर सकती, इसलिए जबतक भारतीय सावधानीसे, मजबूत मुकदमा लेकर जायेंगे, तबतक उन्हे कोई रुकावट नही होगी। सम्भव है, लोगोके लिए कोमाटीपोर्टके बदले फोक्सरस्ट आना अधिक आसान होगा; क्योकि सब न्यायाधीश एक ही तरहका फैसला देंगे, ऐसा माननेका कारण नही है। जबतक इस मुकदमेका फैसला सर्वोच्च न्यायालयमे नही होता तबतक यह न माना जाये कि इस बातका अन्तिम फैसला हो गया है। साथ ही यह भी खयाल रखना है कि यह मुकदमा सर्वोच्च न्यायालयमे ले जाने योग्य नही है।

जोहानिसबर्गकी नगरपालिकाका नया कानून

जोहानिसबर्गकी नगरपालिका विधानसभाके इसी सत्रमे अपने लिए नया कानून पास कराना चाहती है। उसके द्वारा वह एशियाई बस्ती अथवा 'बाजार' मुकर्रर करनेकी सत्ता चाहती है; और जिन्हे परवाना पानेका अधिकार है उन्हे, यदि उनके मकान खराब हो या उन्होने कोई गुनाह किया हो तो, परवाना न देनेका अधिकार माँगती है। नगर-परिषदका निर्णय जिन्हे मजूर न हो वे न्यायाधीशके पास अपील कर सकते है। इन दोनों बातोका विरोध करना आवश्यक नही दिखता। 'बाजार' मुकर्रर करनेका अख्तियार मिलनेसे नगर-परिषदको उसमे भेजनेका अख्तियार नही मिल जाता।

लॉर्ड सेल्बोर्न

यहाँके समाचारपत्रोसे मालूम होता है कि लॉर्ड सेल्बोर्नको दक्षिण आफ्रिकासे हटानेकी तजवीज हो रही है। आमूल सुधारवादी (रैडिकल) पक्षके सदस्योकी मान्यता है कि लॉर्ड सेल्बोर्न उदारदलीय विचारोको ठीक तरहसे अमलमें नही लाते।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २३-६-१९०६

३९१. भारतीय लड़ाईमें जायें या नहीं?

पिछले अंकमें हम इस विषयमें विवेचन कर चुके है।[1] उसके अन्तिम हिस्सेमें हमने बतलाया था कि हममें से ज्यादातर लोग प्रायः भयके कारण ही पीछे रहते है। यदि लोग ऐसा चाहते है कि हम नेटाल, दक्षिण आफ्रिका अथवा ब्रिटिश राज्यके किसी भी हिस्सेमें सुख और इज्जतसे रहे, तो हमे लड़ाईके काममें भाग लेनेके लिए तैयार रहना चाहिए। उन्हें समझानेके लिए हम कुछ ऐसे उदाहरण देना चाहते है जिनसे स्पष्ट मालूम हो जायेगा कि डरनेका कोई भी कारण नही। क्रीमियाकी लड़ाई बड़ी ही खून-खराबीकी थी, किन्तु आँकड़ोंसे पता चलता है कि जितने मनुष्य अपनी लापरवाही अथवा गलत तरीकेसे रहकर मरे हैं उससे क्रीमियाकी लड़ाईमें भाले या गोलीसे कम मरे है। लेडीस्मिथके आक्रमणके समय भी ऐसी गणना की गई थी। उसमें भी मालूम हुआ है कि बोअरोकी गोलियोंकी अपेक्षा ज्वर और दूसरी बीमारियोंसे औसतन अधिक मनुष्य मरे। ऐसा ही अनुभव प्रत्येक लड़ाईका है।

फिर, जो लड़ाईमें अपने शरीरकी अच्छी सम्भाल रखते है और नियमसे रहते हैं, वे बहुत ही निरापद रह सकते है। और जो लड़ाईमें बहादुरी दिखाने अथवा खूनकी प्यास लेकर ही नही जाते, उनको इस समय जो तालीम मिलती है वैसी तालीम दूसरी जगह कभी नही मिलती। लड़ाईमें जानेवाले व्यक्तिको कठिन दुःख सहना सीखना पड़ता है। बहुत-से मनुष्योंके साथ हिलमिलकर रहनेकी आदत जबरदस्ती डालनी पड़ती है। सादी खुराक खाकर सुख मानना वह सहज ही सीख जाता है। नियमपूर्वक सोना, बैठना भी उसे अनिवार्य रूपसे सीखना पड़ता है। अपने वरिष्ठ अधिकारीकी आज्ञा बिना विवादके माननेकी आदत पड़ती है। नियमपूर्वक चलना-फिरना भी वहाँ आ जाता है और बहुत ही तंग जगहमें भी स्वास्थ्यके नियमोंका निर्वाह करते हुए रहना जानना पड़ता है। ऐसे उदाहरण देखनेमें आये है कि बहुत लापरवाह और उद्धत व्यक्ति भी युद्धमें जानेके बाद सुधरकर, अपने मन और शरीरपर संयम-रखना सीख कर, वापस आये है।

भारतीय कौमके लिए तो लड़ाईमें जाना सहज बात होनी चाहिए, क्योंकि हम चाहे मुसलमान हों चाहे हिन्दू, हम ईश्वरपर बहुत आस्था रखते है। हमें अपने कर्तव्यका भान ज्यादा है इसलिए लड़ाईमें जानेकी बात सहज ही हमारी समझमें आनी चाहिए। हमारे देशमें अकाल और प्लेगसे लाखों मनुष्य मरते है, उससे हम लोग नही डरते। इतना ही नहीं, जब हमें बताया जाता है कि उसके विषयमें हमारा कर्त्तव्य क्या है, तब भी हम अत्यन्त लापरवाही करते है, घर-बार गन्दे रखते है और पैसोंसे चिपटे पड़े रहते है। ऐसी अधम जिन्दगी बिताते हुए तिल-तिलकर मरना पसन्द करते है। ऐसे जो हम है, उन्हें यदि लड़ाईमें जाकर कदाचित् मरना पड़े तो उससे डरना क्यों चाहिए? नेटालमें गोरे जो करते है उसे देखकर हमें बहुत सबक लेना है। शायद ही उनमें कोई ऐसा कुटुम्ब हो जिसमें से काफिर-विद्रोहमें एक-न-एक आदमी न गया हो। उनसे सीखकर हमें अपने मनमें जोश भरनेकी पूरी आवश्यकता है। यह एक ऐसा अवसर आया है जब प्रमुख गोरे चाहते है कि हम उपर्युक्त कदम उठायें। यदि हम इसमे चूक जायेंगे तो पीछे पछताना होगा। इसलिए हम सारे भारतीय नेताओंको सलाह देते है कि वे इस विषयमें अपने कर्तव्यका भली भाँति पालन करें।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ३०–६–१९०६

१. देखिए "भारतीय स्वयंसेवक", पृष्ठ ३७२–३।
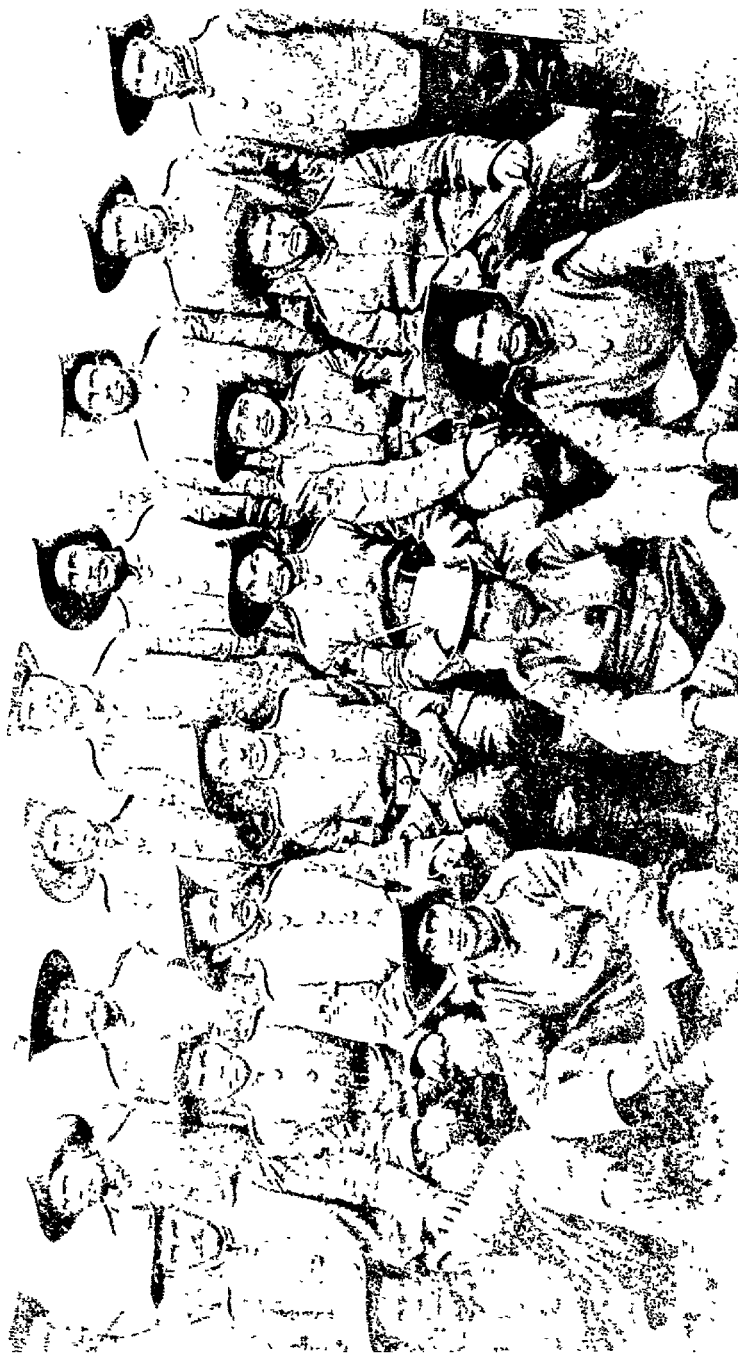
सार्जेंट मेजर गांधी

३९२. उद्धरण : दादाभाई नौरोजीके नाम पत्रसे[1]

जून ३०, १९०६[2]

मैं 'इंडियन ओपिनियन' की एक प्रति निशान लगाकर अलग लिफाफेमें भेज रहा हूँ। उसमें नगर-निगम संग्राहक विधेयक (म्युनिसिपल कॉरपोरेशन्स कन्सॉलिडेशन बिल) के सम्बन्धमें नेटाल उपनिवेशके गवर्नरके नाम लॉर्ड एलगिनके पत्रोंकी नकल उपलब्ध है। लॉर्ड एलगिनके खरीतेपर विचार करनेके लिए हालमें नगरपालिका संघकी जो बैठक हुई उसमें किये गये निर्णयकी ओर मैं आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। निर्णयका आशय यह है कि "रंगदार" की परिभाषामें कोई परिवर्तन नही किया जाना चाहिए। इस निर्णयसे भारतीय समाजके दलित और अपमानित होते रहनेका खतरा जैसा-का-तैसा बना रहता है। आशा है कि भारत-मन्त्री और भारत-सरकार उपनिवेश-मन्त्री द्वारा दिये गये सुझावको कार्यान्वित करानेका आग्रह करेंगे। साथ ही यह भी इंगित करना चाहता हूँ कि लॉर्ड एलगिनने विधेयककी उस धाराका कोई उल्लेख नही किया है, जिसके द्वारा उन सबके मतदानका अधिकार छीन लिया गया है जिन्हें संसदीय मताधिकार प्राप्त नही है। आपको निस्सन्देह याद होगा कि स्वर्गीय श्री हैरी एस्कम्बकी तीव्र इच्छापर नेटालके भारतीय समाजने उन सब भारतीयोका मताधिकारसे वंचित रखा जाना स्वीकार कर लिया था, जिनके नाम उस समय संसदीय मतदाताओंकी सूचीमें शामिल नही थे। इसमें यह खयाल स्पष्ट था कि मताधिकारसे वंचित रखनेकी सीमा बढाई नही जायेगी। आपको एक बार फिर याद दिला देना ही पर्याप्त होगा कि यदि नेटाल-निवासी ब्रिटिश भारतीयोंको नगरपालिका मताधिकारसे इस तरह वंचित रखा जाता है तो उनकी स्थिति, जैसी भारतमें होती, उससे खराब होगी। भारतमें बेशक ऐसी प्रातिनिधिक संस्थाओंका लाभ उन्हे प्राप्त है। कुछ नगरपालिकाओ द्वारा ब्रिटिश भारतीयो और यूरोपीयोंमें ईर्ष्याजनक और मनमाने भेदभाव का विवरण 'इंडियन ओपिनियन' के स्तंभोंमें अनेक बार प्रकाशित हो चुका है। उसे देखते हुए यह प्रकट है कि यदि नेटालके भारतीय समाजके नागरिक-अधिकारोंपर यह कुठाराघात रोकनेके उपाय तत्काल नही किये गये तो उक्त समाज जबरदस्त अन्यायका शिकार हो जायेगा।

दादाभाई नौरोजीके अंग्रेजी पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २३१६) से।

१ और २. मूल प्राप्त नहीं है। दादाभाई नौरोजीने इस अनुच्छेदको भारत-मन्त्रीके नाम लिखे अपने २४ जुलाईके पत्रमें "जोहानिसबर्गके एक समाचारदातासे प्राप्त पत्र" के अंशके रूपमें उद्धृत किया था। समाचारदाता स्वयं गांधीजी थे। यद्यपि इस पत्रमें दी हुई तारीखको गांधीजी मोर्चेपर थे, पर यह असम्भव नहीं कि उन्होंने इसे पहले ही लिख रखा हो।

३९३. भारतीय डोलीवाहक दल[1]

[जुलाई १९, १९०६ के पूर्व]

दलका संगठन

वतनियोंके विरुद्ध की जानेवाली सैनिक कार्रवाईके सम्बन्धमें, प्रयोगके तौरपर नेटाल सरकारके आदेशसे यह दल बनाया गया है। इसमें बीस[2] भारतीय हैं, जिनके नाम निम्नलिखित हैं:

मो० क० गांधी (सार्जेंट-मेजर), यू० एम० शेलत (सार्जेंट), एच० आई० जोशी (सार्जेंट), एस० बी० मेढ़ (सार्जेंट), प्रभु हरि (कॉरपोरल), खान मुहम्मद, जमालुद्दीन, मुहम्मद, शेख मदार, शेख दादामियाँ, मुहम्मद ईसप, पूती नायकन, अप्पासामी, किस्तमा, कुप्पुसामी, बोमाया, कुंजी, अजोध्यासिंह।

मजहबके लिहाजसे दलमें छः मुसलमान और चौदह हिन्दू हैं। भौगोलिक दृष्टिसे पाँच बम्बई प्रेसिडेन्सीसे, बारह मद्रास प्रेसिडेन्सीसे, दो पंजाबसे और एक बंगाल प्रेसिडेन्सीसे आये हुए हैं। यह भी कह देना चाहिए कि बारह मद्रासियोंमें एक इसी उपनिवेशमें पैदा हुआ है।

जहाँतक हैसियतका सम्बन्ध है, इनमें से तेरह कभी-न-कभी नेटालमें गिरमिटके अधीन रहे हैं और अब आजाद होकर माली, घरेलू नौकर आदिके रूपमें काम कर रहे हैं। पेशेके लिहाजसे इनमें से दो इंजिन-चालक हैं; एक सुनार है; तीन एजेंट और मुनीम हैं, जिन्होंने भारतमें उच्च शिक्षा प्राप्त की है; और एक बैरिस्टर है।

अब यह सुविदित है कि सरकारने वर्दी और भोजनका प्रबन्ध किया है और नेटाल भारतीय कांग्रेस उनको वेतन देती है।

मोर्चेपर

जून २२ को यह दल सुबहकी गाड़ीसे स्टैंजरके लिए रवाना हुआ और वहाँ बी० एम० आर० टुकड़ीसे, जो कि कर्नल आरनॉटके अधीन थी, जा मिला। कर्नल आरनॉट उस समय स्टैंजरकी छावनीमें डेरा डाले हुए थे। टुकड़ीके सार्जेंट-मेजरसे सलाह-मशविरा करनेके बाद कर्नल आरनॉटने आदेश दिया कि इस डोलीवाहक दलको यूरोपीय भोजन मिला करे और मांसके बदले चावल, दाल तथा पिसा मसाला दिया जाये। इस पत्रमें पाठकोंकी जानकारीके लिए एक व्यक्तिका दैनिक राशन नीचे दिया जाता है:

डबल रोटी या बिस्कुट १ पौंड चीनी ५ औंस, चाय ½ औंस, काफी ⅓ औंस, मक्खन १ औंस, नमक ½ औंस, मुरब्बा २ औंस, पनीर २ औंस, आलू ४ औंस, प्याज २ औंस, दक्षिण आफ्रिकी ज्वारका आटा ४ औंस, चावल १ पौंड, मसूरकी दाल ½ पौंड तथा काली मिर्च।

चूँकि कर्नल आरनॉटकी सैनिक टुकड़ीके साथ कोई चिकित्साधिकारी नहीं था, इसलिए कर्नलने थोड़ी मात्रामें तत्कालिक आवश्यकताकी औषधियाँ और कुछ पट्टियाँ देनेका आदेश दिया। हमारे पास रेडक्रॉसकी पट्टियाँ देखकर बहुत-से सैनिकोंने, जो दुर्घटनाजनित मामूली चोटोंसे पीड़ित थे या

१. मोर्चेपरसे गांधीजीने दो संवादपत्र भेजे थे, जो "हमारे मोर्चा-स्थित विशेष संवाददाता द्वारा प्रेषित" रूपमें **इंडियन ओपिनियन**में छपे थे। यह उनमेंसे पहला संवादपत्र था।

२. वस्तुतः सूचीमें केवल १८ व्यक्तियोंके नाम हैं।

मलेरिया ज्वरसे ग्रस्त थे, उसी दिन आवेदन किया। इसलिए दवाइयाँ अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुईं, और दलके कार्यका एक अंश छावनीमें ही शुरू हो गया।

२२ तारीखकी रात छावनीमें बीती और हम सब लोगोंको बाहर, खुलेमें, सोना पड़ा। हममें से हर एकको एक-एक कम्बल दिया गया था, पर वह सर्दीकी रक्षा करनेके लिए काफी न था। इसलिए भारतीय समाज द्वारा खोले गये सुख-सुविधा निधि (कम्फर्ट्स फंड) के जरिये हमें जो लबादे (ओवरकोट) दिये गये थे उनकी बहुत कद्र की गई।

जून २३ को सुबहके नाश्तेके बाद सारी टुकड़ी, जिसमें डर्बन सुरक्षित सैन्यदल, भारतीय दल तथा पृष्ठ-रक्षक सैन्यदल शामिल थे, आगे बढ़ी।

हमें अपना सामान लादकर चलना पड़ता था। यह अनुभव हममें से अधिकांशके लिए नया था और फिर हमें ज्यादातर चढ़ाईपर ही चलना पड़ता था, इसलिए हममें से कुछको यह बहुत खला। रास्तेमें हम सर जेम्स हलेटके बागसे गुजरे और सैनिकोंको मधुर नार्तीजी[1] फल, जिनसे बागके वृक्ष लदे हुए थे, भरपेट खानेकी अनुमति दी गई। इस सामयिक भेंटके लिए दाताका तीन बार जय-जयकार कर टुकड़ी आगे बढ़ी और बागानसे एक मील आगे उसने डेरा डाला। तारीख २४ को ६–३० बजे सुबह ही कूच आरम्भ हो गया। इस बार हमें अपना सामान गाड़ियोंपर रखनेकी इजाजत मिल गई, जिससे बड़ी राहत मिली। टुकड़ीने ओटीमाटीपर, जो उस सुन्दर घाटीकी एक पहाड़ी है, डेरा डाला। हमारे पास ही एक स्वच्छ झरना बह रहा था। यह इरादा नहीं था कि टुकड़ी मापूमूलो तक जाये। बल्कि उसे ओटीमाटी छावनीसे सैनिक कार्रवाई करनी थी। किन्तु हमारे दलको प्रथम रक्षक दलके साथ मापूमूलो जानेका आदेश था। इसलिए २५ जूनको हम अपने निर्देशके बारेमें अनिश्चित स्थितिमें थे, किन्तु हमारा दोपहरका भोजन मुश्किलसे आधा पका था कि आदेश मिला — हम कुछ गाड़ियोंके साथ, जो उधर जा रही थीं, मापूमूलोके लिए रवाना हो जायें। इसलिए हमें खाना-पीना छोड़, आदेश मिलनेसे पन्द्रह मिनटके अन्दर ही सामान बाँधकर कूचकर देना पड़ा। हमने ५ बजे शामको मापूमूलो पहुँचकर उस स्थानके सैनिक अधिकारी कप्तान हाउडेनको अपने आगमनकी सूचना दी। कप्तान हाउडेनने दलके साथ बहुत अच्छा व्यवहार किया, और कॉरपोरल लिटिल, जिनको हमारी देखभालका काम सौंपा गया था, १० बजे रात तक हमारे लिए तम्बुओंका बन्दोबस्त करनेमें लगे रहे। हमें एक घटिकाकार तम्बू और पाँच गश्ती तम्बू दिये गये जो तीन रात तक खुलेमें सो चुकनेके बाद न्यूनाधिक रूपमें विलास सामग्रीके समान लगे, यद्यपि हममें से अधिकांशके लिए वे बहुत आवश्यक थे। कर्नल स्पार्क्स भी आये और उन्होंने हमारे हाल-चाल पूछे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २१–७–१९०६

१. दक्षिण आफ्रिकाका संतरेके समान एक फल।

३९४. भारतीय डोलीवाहक दल[1]

[जुलाई १९, १९०६के पूर्व]

अतिरिक्त असैनिक सेवा-कार्य

२६ तारीखको हमें अपना काम सौंप दिया गया था। हममें से ९ को उन गाड़ियोंके साथ अतिरिक्त सेवाके लिए नियुक्त किया गया था जो पासकी नदीसे पानी लाती थीं। कुछ मापूमूलोके जिला सार्जेंट डॉ० सेवेजकी देखरेखमें सारे शिविरको दवा छिड़ककर नीरोग करनेके लिए रोक लिये गये थे और हममें से तीन-चार उन बहुत-से वतनी विद्रोहियोंके घावोंकी शुश्रूषापर नियुक्त हुए जिन्हें कोड़े लगाये गये थे। हममें से एकने कैप्टन हाउडेनके मरीजोंकी दैनिक हाजिरी भरनेमें मदद दी। फिर भी डोलीवाहनका काम तो अभी आना था। ऊपरके कामोंसे कुछमें आंशिक बाधा आई अथवा वे मुल्तवी कर दिये गये; क्योंकि थ्रिंग्स पोस्टमें बी० एम० आर० टुकड़ीके द्वारा होनेवाले कामके बारेमें प्रकाश-सन्देशके अनुसार हमें एक डोलीवाहक टुकड़ी ओटीमाटी भेजनी थी। इसलिए २७ के सवेरे जल्दी ही सार्जेंट-मेजर गांधी और सार्जेंट जोशीके निरीक्षणमें दलका आधा हिस्सा दो डोलियोंके साथ ओटीमाटी रवाना हुआ। हमें वहाँ किसी एक बेहोश सवारको डोलीमें ले जानेकी हिदायत मिली। भाग्यसे दलके थ्रिंग्स पोस्ट पहुँचनेके पहले सवारकी हालत ठीक हो गई; किन्तु दुर्भाग्य-वश फोर्डर नामका एक दूसरा सवार किसी सहयोगी सवारके हाथसे जाँघमें गोली लगनेके कारण घायल हो गया। किन्तु किसी तरह बड़े धैर्यके साथ घोड़ेपर सवारी करके वह शिविर तक पहुँच गया। डोलीवाहक दलको एन० एम० सी० के श्री स्टोक्सको उक्त सवारकी परिचर्या और अन्य बीमारोंकी शुश्रूषामें मदद करनी पड़ी, जिन्हें संयोगवश या किसी दूसरे तरीकेसे छोटी-मोटी चोटें आ गई थीं और जिन्हें उपचारकी जरूरत थी। २८ तारीखको ओटीमाटीके सहायक दलको डर्बनकी सुरक्षित सेनाके फौजी सटन और सवार फोर्डरको मापूमूलो ले जाना था। सटनका अँगूठा किसी गाड़ीके पहियेसे कुचल गया था। फोर्डरको डोलीमें लेजाना था क्योंकि उसका घाव बहुत नाजुक था। उसे ले जानेका काम जितना सोचते थे उसमें कहीं कठिन निकला। इन घायलोंको ले जानेमें जितने लोग उपलब्ध थे, उन सबकी शक्ति पूरी तरहसे लग गई। खासकर इसलिए कि पूरा रास्ता चढाईका था। हम मापूमूलो पहुचने ही वाले थे कि हमारे दलके कप्तानने खबर भेजी कि यदि सम्भव हो तो फोर्डरको आहत सहायक गाड़ीसे पहुँचाया जाये, नहीं तो पहाड़ीके आसपासके वतनियोंको यह भ्रम हो सकता है कि विद्रोही कमसे-कम हमारे एक मनुष्यको घायल करनेमें तो सफल हो ही गये हैं। यह सन्देश सुननेपर घुड़सवार फोर्डरने बड़ी खुशीसे गाड़ीमें बैठना स्वीकार कर लिया और थके हुए डोलीवाहक भी उसे मापूमूलोकी सीधी पहाड़ीपर चढ़ानेकी जिम्मेदारीसे बरी होनेके कारण खुश हुए। इस थोड़ेसे व्यवधानके बाद पूरा दल फिरसे अपने उसी काममें लग गया जिससे उसने श्रीगणेश किया था और ३ जुलाईकी सुबह तक उसीमें लगा रहा। ३ जुलाई एक ऐसा दिन है जिसे दलके सदस्य कभी नहीं भूलेंगे।

सख्त काम

जुलाई २ को ९ बजे रातमें दलको हुक्म हुआ कि वह ढाई बजे रातको उमवोटी घाटीमें कार्रवाई करनेवाली मिली-जुली टुकड़ीके साथ जाये। हमें अपने साथ दो दिनकी रसद, अपने कम्बल और पाँच डोलियाँ ले जानी थी। हमने ऐसा किया और तीसरी तारीखको तीन बजे सुबह कूच शुरू हुआ। टुकड़ीके साथ कोई गाड़ी नहीं थी और पैदलोंके सिवाय, जो पहले ही आगे चले गये थे, हमें जिनके पीछे चलना था वे सभी घुड़सवार थे। जो लोग हमारे पीछे थे उनका काम हमारी रक्षा

१. यह मोर्चेसे भेजा हुआ गांधीजीका दूसरा और आखिरी विवरण था।

करना था। हममेंसे किसीके पास हथियार नहीं थे और चूँकि घुड़सवार हमारे आगे-आगे सरपट भागते चले जा रहे थे और हम उनके पीछे थे, हमारे और उनके बीचमें बहुत जल्दी बहुत फर्क पड़ गया। फिर भी हम चलते और शक्तिभर उनसे मिलनेकी कोशिश करते रहे; परन्तु यह एक असम्भव कार्य था। इसके कारण पृष्ठरक्षक टुकड़ी और हमारे बीचमें प्रायः बहुत अन्तर होता था। जब दिन निकला, तब घुड़सवारोंकी गति स्वाभाविक रूपसे और भी तेज हो गई और हमारे और उनके बीचका अन्तर बढ़ने लगा। फिर भी घुड़सवारोंके पीछे दौड़ने या विद्रोहियोंके असेगाई हथियारोंसे घायल होनेके सिवाय हमारे लिए कोई दूसरा चारा नहीं था। शायद एक बार हम बाल-बाल बचे। ७ बजे हमसे कुछ दूरीपर टुकड़ियाँ कार्रवाई कर रही थीं। हम भी आगे बढ़ रहे थे; उस समय हमें एक काफिर मिला जो राजभक्तिका चिह्न धारण किये हुए नहीं था। वह असेगाई हथियारसे लैस था और अपनेको छुपाये हुए था। फिर भी हम लोग कुशलतापूर्वक आगेकी पहाड़ीपर की और टुकड़ियोंसे, जब वे नीचेकी झाड़ियाँ अपनी कड़ाबीनोंसे साफ कर रही थीं, जा मिले। इस तरह हमें एक ऐसा कूच पूरा करना पड़ा जो, जान पड़ता था, कभी खत्म ही न होगा। हमें बार-बार उमवोटी नदीको पार करना पड़ता था। इसके लिए भारी जूते और पट्टियाँ निकालनी पड़ती थीं। इस दृष्टिसे यह बहुत ही कठिन काम था। एक व्यक्ति एक बहुत ही गम्भीर दुर्घटनामें पड़ गया होता, परन्तु बाल-बाल बच गया; और जब वह नदी पार करके निकला तो उसकी पट्टियाँ गायब हो चुकी थीं और उसके अँगूठेसे खूनकी धार बह रही थी। फिर भी वह हम लोगोंके साथ वीरतापूर्वक कूच करता गया। शाम होते-होते एक घाटीके चढ़ावके पास टुकड़ी रुक गई और उसने वहाँ डेरा डाला।

"थककर चूर"

हम सब थककर चूर हो गये थे। सौभाग्यसे हमारे दलमें कोई हताहत नहीं हुआ था। यदि ऐसा होता, तो यह कहना कठिन है कि हम इस थकी हुई हालतमें घायलोंको ले जानेमें किस हद तक सफल होते। यद्यपि, इन पंक्तियोंके लेखकको पूर्ण विश्वास है कि हमारा दल प्रधान रूपसे अपने कर्तव्यसे प्रेरित था इसलिए भगवानने हमें ऐसा कोई भी काम करनेकी पूरी-पूरी ताकत भी दी होती। कमसे-कम जब हम जैसे-तैसे आगे बढ़ रहे थे तब हँसते हुए घुड़सवारोंने करुणा और उपहास-मिश्रित शब्दोंमें हमसे पूछा कि यदि ऐसी हालतमें हमें किसी घायलको सचमुच ले जाना पड़े, तो हम क्या करेंगे, उस समय हमने उन्हें यही उत्तर दिया था। चार तारीखके सवेरे हम टुकड़ीके उन दो विभागोंके साथ जानेके लिए बाँट दिये गये जिन्हें दो अलग-अलग हिस्सोंमें काम करना था। हमें अभी भी बिना किसी वास्तविक बचावके कूच करना था। परिस्थितियाँ जैसी थीं, उनमें यह अनिवार्य भी था। फिर भी एक दलको अपेक्षाकृत कम कष्ट हुआ। एक दिन पहले उन्हें शायद २५ मीलसे कम नहीं चलना पड़ा था। ४ तारीखको उन्हें १२ मीलसे अधिक नहीं चलना पड़ा। किन्तु सार्जेंट शेलतके अधीनस्थ दूसरे दलका वह दिन भी वैसा ही कठिन गुजरा। फलस्वरूप हममेंसे अधिक-तर लोगोंके पाँवमें छाले आ गये और पाँच तारीखको हम जैसे-तैसे मापूमूलो तक, जो १५ मील दूर था, चल सके। टुकड़ीने इस आशासे कि घासके मैदानमें एक ही रात काटनी है, दो दिनोंकी रसद साथ रखी थी, इसलिए वास्तवमें दलके सभी लोग लगभग भूखों मरनेकी हालतमें आ गये थे। फलतः हम सब लोगोंको मापूमूलो वापस जाना पड़ा।

थके-माँदे और पैरोंमें छाले

मापूमूलो पहुँचकर हमने एक दिन आराम पा सकनेकी आशा की थी, किन्तु वहाँ पहुँचनेपर जब दूसरे ही दिन हमें थ्रिंग्स पोस्ट कूच करने और अपने डेरे खुद वहाँ ले जानेका हुक्म मिला, तो

हमें जो आश्चर्य हुआ, उसकी, वर्णनके बजाय, कल्पना करना ही अच्छा होगा। हममें से ९ या १० व्यक्तियोंके लिए वह शारीरिक असाध्यता ही थी। सार्जेंट मेजरने पी० एम० ओ० को सूचित किया कि जो लोग चलनेमें बिलकुल असमर्थ हैं उनके लिए यदि वाहनका प्रबन्ध नहीं किया जाता, तो दूसरे दिन कूच जारी रखना असम्भव होगा। बात कर्नल स्पार्क्सके सामने पेश हुई। उन्होंने कहा कि जिनके पाँवोंमें छाले हैं ऐसे डोलीवाहक थ्रिंग्स पोस्ट जानेवाली खाली गाड़ीमें जा सकते हैं। इस प्रकार ६ जुलाईको हम लोग थ्रिंग्स पोस्टकी यात्रा करनेमें समर्थ हुए। वहाँ हम कैप्टन पियर्सनके मातहत रखे गये, जिन्होंने हमारे साथ हर तरहका अच्छा सलूक किया। पैरोंमें छालेवाले डोली-वाहकोंको वाहन मिल जानेके कारण हम फिर चलनेके लायक हो गये। इस तरह हम लोग ८ तारीखके सवेरे अपने कामपर हाजिर हो सके। शनिवारकी शामको आज्ञा मिली थी कि हमें अपनी डोलियोंके साथ दूसरे दिन टुगेला घाटी जानेवाली तोपोंके साथ रवाना होना है। उमवोटी घाटीमें हमने जो काम किया था उसके मुकाबलेमें यह काम सरल था और कूच १६ मीलसे शायद अधिक लम्बा न था। हम उसी दिन डेरेमें वापस आ गये।

असम्भव कार्य

१० तारीखको साढ़े आठ बजे सवेरे पैदल टुकड़ीके साथ हमें ओटीमाटी रवाना होना पड़ा और यद्यपि काम बहुत कठिन था, हमें इस समय तक इसकी आदत हो गई थी। हमें अपने साथ दो दिनकी रसद ले जानी थी। हमारा रास्ता साधारणतया एक अगम घाटीमें से होकर जाता था। आहतवाहक गाड़ियोंका नीचे उतरना असम्भव था और हमें कभी-कभी बिलकुल खड़ी चट्टानोंसे उतरना पड़ता था। सवारोंको अपने घोड़ोंकी अगुवाई करनी पड़ी। और रास्ता इतना लम्बा जान पड़ा कि ऐसा लगता था, नीचे कभी नहीं पहुँचेंगे। फिर भी लगभग १२ बजे बिना काफिरोंसे लड़नेका मौका आये हम लोगोंने दिनकी यात्रा समाप्त कर ली। किन्तु घाटी उतरते समय एक घटना हुई, जिसने हमारे डोली ले जानेकी सामर्थ्यको कसौटीपर कस दिया। डी० एल० आई० के एक सैनिकको एक मित्र काफिर लड़का रास्ता दिखा रहा था। कहते हैं, गुमराह करनेके शकपर उसने लड़केको गोली मार दी। वतनी बुरी तरह घायल हुआ। उसे ले जानेकी जरूरत पड़ी और वह काम हमें सौंपा गया। हुक्म हुआ कि उसे उसी दिन मापूमूलो ले जाया जाये। हमें मदद करने और रास्ता दिखानेके लिए चार मित्र वतनी दिये गये। किन्तु जैसे ही सैनिक आँखोंसे ओझल हुए, उनमें से तीन हमें छोड़कर चलते बने और चौथेने, यद्यपि वह हमारे साथ रहा, इस भयके कारण हमारे साथ मापूमूलो जानेसे साफ इनकार कर दिया कि बिना संरक्षणके शत्रु हमें काटकर फेंक देंगे। भाग्यसे फौज अभी पहुँचके बाहर नहीं थी, इसलिए सार्जेंट मेजरने उचित अधिकारीको मामलेकी खबर दी और नया हुक्म हुआ कि घायल काफिरको दूसरे दिन ले जायें और तबतक हम उसकी सेवा-शुश्रूषा करें और उसे खिलायें-पिलायें। रातमें सारी सेना घाटीमें ही रही और दूसरे दिन मापूमूलो जानेका हुक्म पाकर हम पुनः अपनी कीमती जिम्मेदारीको सँभालकर कूच करने लगे। मददके लिए हमें २० काफिर बेगारिये दिये गये। रास्तेके ज्यादातर हिस्सेमें उन्होंने बहुत कठिनाईसे हमें मदद की, और वह भी इसलिए कि डॉक्टर सेवेज संयोगसे हमारे साथ थे। हमारे साथी वतनी बहुत दुराग्रही और अविश्वासी सिद्ध हुए। यदि हर क्षण सावधानी न बरती जाती, तो उन्होंने घायलको ले जानेके बजाय कहीं-न-कहीं छोड़ दिया होता। वे अपने कष्टमें पड़े हुए देशवासीकी कोई परवाह करते हुए नहीं जान पड़े।

भारतीयोंकी सूझबूझ

फिर भी भारतीय डोलीवाहक उसे बड़े उत्तम ढंगसे मापूमूलो ले गये। हमारी सारी सूझ-बूझ इस कूचमें कसौटीपर कसी गई। जब हम एक सँकरी और खड़ी पगडंडीका अत्यन्त कठिन भाग

तय कर चुके, तब जिस जापानी डोलीमें हम घायलको ले जा रहे थे, वह उसके बहुत ही अधिक वजनदार होनेके कारण टूट गई। सौभाग्यसे घायलको कोई चोट नहीं आई। रेलवेकी जिस डोलीमें हम उसे पहले ले जा रहे थे, वह उसके वजनसे टूट ही चुकी थी। अब हम क्या करते? खुशकिस्मतीसे हमारे साथ कुछ कुशल कारीगर थे। हमने कामचलाऊ तौरपर रेलवेकी डोलीको सुधार लिया और अपने घायलको लगभग चार बजे शाम तक मापूमूलो पहुँचा दिया। शायद यह दूरी पन्द्रह मीलसे अधिक ही थी।

मापूमूलोमें एक दिन आराम करनेके बाद १३ तारीखको हम थ्रिंग्स पोस्ट वापस पहुँचे। किन्तु हमें फौरन १४ तारीखको मापूमूलोके पास एक स्थानपर जाना पड़ा, जहाँ हम इस समय खेमा लगाये हुए हैं। मैसिनी और उसके सहयोगी मुखियाकी गिरफ्तारीके कारण विद्रोह खत्म हुआ जान पड़ता है और हम लोग रोज हर दलको विसर्जित करनेके हुक्मकी प्रतीक्षा करते हुए आराम कर रहे हैं। इस तरह जुलाईकी तीसरी तारीखसे हमारा दल सारी महत्त्वपूर्ण कार्रवाइयोंमें साथ रहा है, और अब, उनकी समाप्तिपर, इन टिप्पणियोंका लेखक भरोसेके साथ इस बातका दावा कर सकता है कि हमारा छोटा-सा दल, जो भी काम उसे दिया जाये और जिस कामको कोई भी ऐसा दल कर सकता हो, उस कामको करनेमें समर्थ है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-७-१९०६

३९५. भाषण : आहत-सहायक दलके सत्कारके अवसरपर

भारतीय डोलीवाहक दलको ६ सप्ताह मोर्चेपर काम करनेके बाद जुलाई १९ को विघटित कर दिया गया था। उसके लौटनेपर नेटाल भारतीय कांग्रेसने एक स्वागत-समारोहका आयोजन किया। उसमें दलके कार्यकी प्रशंसा की गई, जिसका गांधीजीने उत्तर दिया। समारोहकी कार्यवाहीका एक अंश नीचे दिया जाता है :

डर्बन
जुलाई २०, १९०६

श्री गांधीने उत्तरमें दलकी ओरसे कांग्रेसका आभार मानते हुए कहा कि दलने जो कुछ किया है वह उसका कर्त्तव्य था। उन्होंने आशा व्यक्त की कि यदि भारतीय समाज दलका वास्तविक मूल्य समझना चाहता हो तो उसे सरकारकी मारफत ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि दलको स्थायी रूप मिल जाये। दलमें भरती होनेकी योग्यता प्राप्त करनेके लिए मेहनत करके शरीरको ठीक तरहसे कसना चाहिए। यदि व्यापारी लोग उसमें शामिल न हो सकें तो न सही, पढ़े-लिखे दूसरे भारतीय, व्यापारियोंके नौकर, मुनीम वगैरह तो सहज ही शामिल हो सकते हैं। लड़ाईके समय उन्हें अनुभव हुआ कि गोरे लोग भारतीय सदस्योंके साथ बहुत ही प्रेमसे व्यवहार करते थे और काले-गोरेका भेद नहीं रहा था। यदि और भी अधिक लोगोंका स्थायी दल बन जाये तो उस तरहका भाईचारा बढ़ सकता है और उससे गोरोंके मनमें भारतीयोंसे जो चिढ़ है वह दूर हो सकती है। इसलिए उन्होंने बहुत ही आग्रहपूर्वक आहत-सहायक दल बनानेके लिए परामर्श दिया।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-७-१९०६

३९६. वक्तव्य : हीरक जयन्ती पुस्तकालयके सम्बन्धमें

कांग्रेस-भवनमें नेटाल भारतीय कांग्रेसकी एक सभा हुई थी। उसमें अन्य बातोंके साथ डोली-वाहक दलके सदस्योंको चाँदीके तमगे देनेका भी निश्चय किया गया। हीरक-जयन्ती पुस्तकालयकी व्यवस्थाका प्रश्न उठनेपर गांधीजीने निम्नलिखित वक्तव्य दिया था, जो उस सभाके कार्य-विवरणसे लिया गया है:

डर्बन
जुलाई २३, १९०६

हीरक जयंतीके समय भारतीय समाजकी ओरसे हीरक जयन्ती पुस्तकालयकी स्थापना की गई थी। उसका स्वामित्व तथा उसके संचालनका काम एक विशेष समितिको सौंपा गया था और पुस्तकें कांग्रेस-भवनमें रखी गई थीं।[1] लल्लूभाई पुस्तकालयका काम चूँकि अभी चल नहीं रहा है इसलिए उन पुस्तकोंको कांग्रेस-भवनमें रखनेके सम्बन्धमें मैं लल्लूभाई पुस्तकालयके प्रमुख श्री रविशंकर भट्टसे मिला हूँ और उन्होंने उन पुस्तकोंको लौटा देना स्वीकार किया है। इस सम्बन्धमें मुझे और भी एक-दो सज्जनोंसे मिलना है। उनकी ओरसे स्वीकृति प्राप्त होनेके बाद गाड़ी भेजकर पुस्तकें मँगवा ली जायेंगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-७-१९०६

३९७. ट्रान्सवालके अनुमतिपत्र

शान्ति-रक्षा अध्यादेशपर ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयने हालमें जो निर्णय[2] दिये हैं, उनसे उत्पन्न हुई कानूनी स्थितिपर और अधिक विचार करना आवश्यक हो गया है। आयातके मुकदमेपर पुनर्विचार करनेके लिए महान्यायवादीका आवेदनपत्र सर्वोच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया है, फलतः उस मामलेमें उठाया हुआ सवाल अनिर्णीत ही रह जाता है। इसलिए जब कि फोक्सरस्टका मजिस्ट्रेट अपने ही फैसलेके कारण डच पंजीकरण प्रमाणपत्रोंको अनुमतिपत्रोंके समान स्वीकार करनेके लिए बाध्य है, उसके मतके समर्थनके लिए सर्वोच्च न्यायालयकी कोई घोषणा हमारे पास नहीं है। और महान्यायवादीने जो विवाद उठाया है, उसके कारण कानूनकी स्थिति भारतीय शरणार्थियोंके लिए दुःखपूर्ण अनिश्चितताकी स्थिति बन गई है। दूसरे मजिस्ट्रेट अनजाने ही उस तर्कको महत्त्व दे सकते हैं जो ताजकी ओरसे उठाया गया है। उस दशामें यह हो सकता है कि डच प्रमाणपत्र रखनेवाला एक भारतीय फोक्सरस्टसे होकर सुरक्षित रूपमें ट्रान्सवालमें फिरसे प्रवेश पा ले, और उसी प्रकारकी योग्यता रखनेवाला दूसरा व्यक्ति, उदाहरणार्थ, कोमाटीपोर्टसे गुजरते हुए रोक दिया जाये। हमारी धारणा है कि अत्यन्त उग्र एशियाई-विरोधी भी ऐसी शोचनीय स्थितिका समर्थन नहीं करेगा। पंजीकरण कानूनपर सर्वोच्च न्यायालयका फैसला भारतीय समाजके पूरे दावेका समर्थन करता है। क्या लॉर्ड सेल्बोर्न अब भी दावा कर सकते हैं कि ट्रान्सवाल-सरकार शान्ति-रक्षा अध्यादेश और

१. देखिए खण्ड २, पृष्ठ ३५६-८ तथा खण्ड ४, पृष्ठ ३५७-८।
२. देखिए "अनुमतिपत्रका एक महत्त्वपूर्ण मुकदमा", ३७०-१।

१८८५ के कानून ३ को लागू करनेमें उचित मनोवृत्तिसे काम ले रही है? हमें विश्वास है कि सतत जागरूक ब्रिटिश भारतीय संघ इस प्रश्नपर महामहिमसे उत्तर देनेके लिए निवेदन करेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २८-७-१९०६

३९८. पत्र : विलियम वेडरबर्नको

[जोहानिसबर्ग]
जुलाई ३०, १९०६

सर विलियम वेडरबर्न, बैरोनेट
८४/५ पैलेस चेम्बर्स
लन्दन, इंग्लैंड

प्रिय महोदय,

मैं अभी मोर्चेसे लौटा हूँ। यद्यपि अब संविधान-समितिके प्रतिवेदनकी दृष्टिसे मेरा कोई उपयोग नहीं हो सकता, तो भी ब्रिटिश भारतीय संघकी राय है कि मुझे एक-दो व्यापारियोंके साथ इंग्लैंड जाना ही चाहिए। इसका उद्देश्य जो शाही फरमान दिया जाये उसे आवश्यक रूपसे प्रभावित करना नहीं, बल्कि ब्रिटिश भारतीय स्थितिको अधिकारियोंके सामने खुद पेश करना होगा। इसलिए यदि आप कृपया तारसे खबर दें कि ऐसे शिष्टमण्डलके किसी प्रकार भी उपयोगी हो सकनेकी सम्भावना है या नहीं, तो आभारी होऊँगा। यदि उसे गैर-जरूरी समझें तो हम "अनावश्यक" शब्दसे यह अर्थ समझ लेंगे। यदि आप सोचते हों कि ऐसा शिष्टमण्डल आना चाहिए तो कृपया तारमें "ठीक" लिख दें। क्या आनेके लिए सितम्बरका अन्त या अक्तूबर ठीक होगा?

आपका सच्चा,

टाइपकी हुई दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (जी० एन० २२८४) से।

३९९. पत्र : दादाभाई नौरोजीको

२१-२४ कोर्ट चेम्बर्स
नुक्कड़, रिसिक व ऐंडर्सन स्ट्रीट्स
जोहानिसबर्ग
जुलाई ३०, १९०६

मान्यवर नौरोजी,

मैं अभी मोर्चेसे लौटा हूँ। जिस पत्रमें आपने सूचित किया है कि भारत-मन्त्री और उपनिवेश मन्त्रीको आपने हमारा संविधान-समितिकी सेवामें प्रस्तुत वक्तव्य[1] भेज दिया है, वह मिला। आपके सूचनार्थ सर विलियम वेडरबर्नके नाम अपने पत्रकी[2] नकल साथ भेज रहा हूँ।

१. देखिए "वक्तव्य : संविधान-समितिको", पृष्ठ ३४५-५४।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

एडिनबरा विश्वविद्यालयकी एम० ए० परीक्षामें अपनी पौत्रीकी सफलतापर मेरी बधाई लीजिए।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

[पुनश्च:]

यह पत्र इतनी देरसे लिखा गया था कि पिछले हफ्तेकी अन्तिम डाकसे भी नही भेजा जा सका।[1]

माननीय दादाभाई नौरोजी
लन्दन, इंग्लैंड

गाँधीजीके हस्ताक्षरयुक्त टाइपकी हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (जी० एन० २२७४) से।

४००. पत्र: प्रधान चिकित्साधिकारीको[2]

[जोहानिसबर्ग
जुलाई ३१, १९०६]

सेवामे
कर्नल जे० हिस्लॉप
प्रधान चिकित्साधिकारी
नेटाल नागरिक सेना
पीटरमैरित्सबर्ग
नेटाल

महोदय,

भारतीय डोलीवाहक दल इस महीनेकी १९ तारीखको विघटित कर दिया गया और २० को डर्बन पहुँचा।

दलको मापूमुलो कैम्पको कीटाणुनाशक दवाओंसे शुद्ध करने, चोटों और घावोंकी मरहम-पट्टी करने, सेनाके साथ चलने तथा डोली-वाहनका कार्य करनेको कहा गया। ज्यादातर डोलीवाहक टुगेला, ओटीमाटी तथा उमवोटी घाटियोंके सैनिक अभियानमे सेनाके साथ रहे। मेरी नम्र रायमें उन्होंने तत्परता और कुशलतासे काम किया। दल बनानेमें नेटाल भारतीय कांग्रेसका उद्देश्य यही प्रकट करनेका था कि भारतीय नेटालके अधिवासियोंके रूपमें अपनी जिम्मेदारियोंको समझते हैं।

१. यह गांधीजीके स्वाक्षरोंमें है।

२. गांधीजीके इस तारीखके पत्रकी प्राप्ति स्वीकार करते हुए उत्तरमें कर्नल हिस्लॉपने नागरिक सेनाके नायककी ओरसे आहत-सहायक दलके सदस्योंको धन्यवाद दिया और "केवल डोलीवाहकोंके रूपमें ही नहीं, बल्कि सफाईके अधिक महत्त्वपूर्ण कार्यके सिलसिलेमें भी नागरिक सेनाके चिकित्सा विभाग द्वारा की गई बहुमूल्य सेवाओंकी," प्रशंसा की।

इसके अलावा उसका यह भी उद्देश्य था कि नेटाल नागरिक सेनाके एक स्थायी अगके रूपमे भारतीयोंका उपयोग करनेके लिए सरकारको राजी किया जाये। मै मानता हूँ कि मेरे देशवासी आहत-सहायता तथा अस्पताली कार्यके सर्वथा योग्य हैं। घुड़सवार फोर्डरको हम ओटीमाटीसे लाये थे। उन्हें लानेके अतिरिक्त, उनकी सेवा-शुश्रूषा भी हमें ही करनी पड़ी थी; और वे हमसे इतने सन्तुष्ट हुए थे कि स्वस्थ होनेपर इन आदमियोके कार्यकी प्रशसा करनेके लिए वे मुझे खोजकर मेरे पास आये।

दलमें कुछ अंग्रेजी पढ़े लिखे कर्तव्य-कुशल भारतीय थे। मजदूर श्रेणीके भारतीय भी थे। पर सब होशियार थे और भारतीय समाज उन्हें जो कुछ दे रहा था उससे नागरिक जीवनमे कही अधिक कमाने योग्य थे। चूँकि समाज इस बातके लिए उत्सुक था कि उसकी सेवाएँ स्वीकार की जायें और कोई कठिनाई पैदा न हो, इसलिए लोगोको राजी किया गया कि वे १ शिलिग ६ पेंस दैनिक लेकर काम करना स्वीकार कर लें, और इसे उन्होने प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लिया। किन्तु मेरी सम्मतिमें एक पौड प्रति सप्ताहसे कमपर होशियार आदमियोको प्राप्त करना सम्भव नही है।

मै यह भी मानता हूँ कि डोली-वाहक टोलियोके नायक माने जानेवाले लोगोको ५ शिलिग प्रतिदिन मिलना चाहिए।

दलके सब लोग अप्रशिक्षित और बिना जाँचे-परखे थे। किन्तु उन्हें भी जिम्मेदारीभरा स्वतन्त्र काम दिया गया और अपनी निःशस्त्र स्थितिमे ही उन्होने खतरेका सामना किया। अगर सरकार एक स्थायी आहत-सहायक दल बनाना चाहे तो मेरी सम्मतिमे उसके लिए विशेष प्रशिक्षण बिलकुल आवश्यक है और आत्मरक्षाके हित दलके सब सदस्योको सशस्त्र भी किया जाना चाहिए।

मेरा भारतीय समाजसे पिछले तेरह वर्षोसे घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है और उसी हैसियतसे मैंने ये बातें आपके विचारार्थ पेश करनेका साहस किया है।

[आपका विश्वासपात्र,]
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-८-१९०६

४०१. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

[अगस्त ४, १९०६ के पूर्व]

विलायतको शिष्टमण्डल

ब्रिटिश भारतीय संघकी समितिकी बैठक गत शुक्रवार, तारीख २७ को हुई थी। उसमे सर्वश्री अब्दुल गनी, ईसप मियाँ, कुवाडिया, मुहम्मद शहाबुद्दीन, गुलाम साहब, मुहम्मद हुसैन, भीखूभाई तथा प्रिटोरियाके हाजी हबीब और आमद तैयब, हीडेलबर्गके आमद भायात और डर्बनके उमर हाजी आमद झवेरी उपस्थित थे।

कुछ चर्चाके बाद यह निश्चय हुआ कि शिष्टमण्डल भेजना अब भी जरूरी है। हमारा जितना सम्बन्ध संविधान-समितिकी रिपोर्टसे है उसकी अपेक्षा ट्रान्सवालमें सविधान बन जानेके बाद जो कानून बनाये जायेंगे, उनसे हमारा अधिक सम्बन्ध होगा। श्री हाजी हबीबके प्रस्तावपर यह निश्चित हुआ कि नेटाल भारतीय कांग्रेसने शिष्टमण्डलके खर्चके लिए जो १,००० पौंडकी रकम स्वीकार की है, उसमें से २५० पौंडकी सहायता माँगी जाये। प्रत्येक व्यक्ति १२० पौंड ले सकता है और बाकी पैसा पूरे शिष्टमण्डलपर खर्च किया जा सकता है। केपकी ओरसे जो मदद मिले उसका उपयोग कांग्रेस करे। इस तरहका पत्र लिखनेकी जिम्मेदारी मन्त्रीको दी गई। शिष्टमण्डलमें दो व्यक्ति जायें तो लगभग ५०० पौंड तक खर्च पड़ेगा। समितिका विचार है कि ट्रान्सवालकी तरफसे श्री गांधी तथा कोई एक व्यापारी होना चाहिये। गाँव-गाँवसे चन्दा एकत्रित करनेका प्रस्ताव हुआ है और गाँव-गाँव जानेवाले सदस्योंके नाम भी दिये जा चुके हैं। मन्त्रीको जगह-जगह पत्र लिखनेकी आज्ञा हुई है और ट्रान्सवालके सारे मुख्य शहरोंमें पत्र पहुँच गये हैं। इसलिए यदि ठीक चन्दा इकट्ठा हो गया; और नेटालकी भारतीय कांग्रेसने चंदा करके २५० पौंड तक खर्च करना तय कर लिया; और यदि शिष्टमण्डल न भेजनेके विषयमें विलायतसे कोई पत्र नहीं आया तो सितम्बरमें[1] शिष्टमण्डलके जानेकी सम्भावना है।

मुआवजेके दावे

'ट्रान्सवाल गजट' में मुआवजेके दावेदारोंकी[2] जो सूची प्रकाशित हुई है, वह मैं संलग्न कर रहा हूँ। उसकी ओर सभी पाठकोंका ध्यान आकृष्ट करना आवश्यक है; नही तो उसमें सूचित रकमोंका यदि वर्षके अन्त तक दावा नही किया गया तो वे डूब जायेंगी।

ट्रान्सवाल घुड़सवार राइफल टुकड़ीकी वापसी

काफिरोंके विद्रोहको दबानेके लिए यहाँसे जो ट्रान्सवाल घुड़सवार राइफल टुकड़ी (ट्रान्सवाल माउंटेड राइफल्स) नेटाल भेजी गयी थी, वह वापिस आ गई है। बड़ी धूम-धामसे ट्रान्सवालके लोगोंने उसका स्वागत किया है। बड़ी-बड़ी सभाएँ की गई और उन्हें बड़ी दावतें दी गई। धूम-धाम अभी भी चल रही है। भारतीय डोलीवाहक दलको भंग करनेके बारेमें और उसके अच्छे कामके बारेमें यहाँके सभी समाचारपत्रोंमें रायटरके तार छपे है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४–८–१९०६

१. शिष्टमण्डल अक्तूबरमें गया।
२. बोअर-युद्धकी क्षति-पूर्तिके।

४०२. गुप्त न्याय

हमारे जोहानिसबर्गके संवाददाताने पिछले सप्ताह हमारा ध्यान विशेष रूपसे इस बातकी ओर खीचा था कि एशियाइयोके विषयमें अनुमतिपत्र-विभागने जो काम किया है, उसका श्री लवडेने समर्थन[1] किया है और समुद्र तटपर एक निरीक्षण-अधिकारीकी नियुक्तिपर अपनी स्वीकृति दे दी है। जाहिरा तौरपर जितना दिखाई पडता है उससे कही ज्यादा घटनाके पीछे छिपा हुआ है। जनताको इस तथ्यका बिलकुल ज्ञान नही है कि कुछ ऐसे सलाहकार मण्डल भी है जो लगभग गुप्त है और जो एशियाई पजीयन अधिकारी (रजिस्ट्रार ऑफ एशियाटिक्स) के, जिसके द्वारा अनुमतिपत्र जारी होते है, कार्यपर नियन्त्रण रखते है। इसलिए नाममात्रके लिए अनुमतिपत्र जारी करनेका जिम्मेदार अधिकारी यद्यपि पजीयक ही है, फिर भी वास्तवमें वह इन परामर्श-निकायोकी कठपुतली है और इनके आदेशोका पालन यन्त्रवत् किया करता है। स्पष्टत: श्री लवडे इन मण्डलोके प्रधान है, यद्यपि सरकारने सार्वजनिक तौरपर उनकी नियुक्ति नही की है। यही कारण है कि ब्रिटिश भारतीयोके रास्तेमे, जिन्हे ट्रान्सवालमें पुन. प्रवेश करनेका वैध अधिकार है, असंख्य कठिनाइयाँ खड़ी की जा रही है।

यदि शरणार्थियोके आवेदनपत्रोके विषयमें बहुत अधिक सख्ती बरती जाती है तो इसपर हमें कोई आपत्ति नही है। लेकिन हमें सख्त आपत्ति है उस गोपनीयतासे जो इन परामर्श-निकायोकी कार्रवाइयोको छिपाये रहती है। हमें ज्ञात नही कि जिन दलोंका इन मामलोसे प्रत्यक्ष सम्बन्ध है उनकी बातें मण्डलोंमें सुनी गई है या नही, या उन्हे पेश करनेका मौका दिया गया है या नही। यह तो केवल निकाय ही जानते हैं कि वे कैसी गवाही लेते है और बस्तीमें ब्रिटिश भारतीयोके पुन· प्रवेश पानेके दावोंको सिद्ध करनेके लिए किन प्रमाणोको काफी मानते है। आज-जैसी व्यवस्थामें तो, बिलकुल अनजानमे ही क्यो न हो, पक्षपात होना सम्भव है। जो दावे आसानीसे साबित किये जा सकते है, किन्तु जिन्हे अस्वीकार कर दिया गया है, उनके बारेमें हमारे पास चारो ओरसे कड़ी शिकायतें आ रही हैं। ये निकाय, जिन्हें ब्रिटिश भारतीय शरणार्थियोके आवेदनपत्रोका मनमाने ढंगसे निर्णय करनेका अधिकार दिया गया है, नन्हें-नन्हे बच्चोको बस्तीसे बाहर रखते है।

ऐलानिया [प्रतिपक्षियोंको उनके विरोधियो या उन लोगोके न्यायका काम सौपना, जिनकी वे आज तक अथक निन्दा करते आये है, न्याय करनेका एक विचित्र तरीका है।] ब्रिटिश भारतीयोके प्रति ट्रान्सवाल शासनका कमसे-कम इतना फर्ज तो है ही कि वह उन्हे निश्चित रूपसे उनकी स्थिति बता दे। ब्रिटिश भारतीय अनुमतिपत्रोके सम्बन्धमें लुक-छिपकर जो जाँच की जाती है, उससे तो कार्य-विधिके सुपरिभाषित एव ठीक तरहसे समझे-बूझे कठोरतम नियम कही ज्यादा अच्छे हैं। आज तो कोई भी भारतीय इस बातमे अपनेको सुरक्षित नही समझ सकता कि अपने पूर्व निवासका प्रमाणपत्र पेश करनेके बाद वह बिना किसी कठिनाईके ट्रान्सवालमें पुन प्रवेश पा सकेगा। अभागे ब्रिटिश भारतीय शरणार्थियोके लिए ट्रान्सवाल शासनने जो स्थिति पैदा कर रखी है वह अत्यन्त असन्तोषजनक और अतीव असम्मानप्रद है। वह तो नेटाल या केप बस्तीसे भी बहुत आगे बढ गई है जहाँ प्रवासियोके आव्रजनके सम्बन्धमे चाहे जैसे प्रतिबन्ध क्यो न हो, हर व्यक्ति

१. यह "जोहानिसबर्ग टिप्पणियाँ" इंडियन ओपिनियन, २८-७-१९०६ में था।

अपनी कानूनी स्थितिको जानता है और उसके लिए अदालतमें लड़ सकता है। यह ऐसी स्थिति है जिसे मिटाना प्रत्येक न्याय एवं विवेक-प्रेमीका कर्त्तव्य है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४-८-१९०६

४०३. श्री बाइटका वसीयतनामा

स्वर्गीय श्री बाइटके वसीयतनामेका[1] संक्षिप्त विवरण हम पिछले अंकमें दे चुके हैं। वह हमारे समृद्ध भारतीयोंके लिए समझने जैसा है। श्री बाइटने दक्षिण आफ्रिकामें करोड़ों रुपये पैदा किये और उसका अधिकांश लाभ दक्षिण आफ्रिकाको दिया है। स्वयं परदेशी होते हुए भी उन्होंने ब्रिटिश झंडेकी छायामें नाम और धन उत्पन्न किया था, इसलिए उन्होंने अपने वसीयतनामेमें विलायतमें भी अपनी सम्पत्तिका उदारतापूर्वक उपयोग करनेकी व्यवस्था की। इस तरह अच्छे कामोंपर वे लाखों पौंड लगानेको लिख गये हैं। उसका मुख्य अंश शिक्षापर खर्च करनेके लिए है। इसके लिए जोहानिसबर्गमें उन्होंने हजारों एकड़ जमीन दी है। वहाँ एक विशाल शिक्षा-संस्था बनवाई जायेगी। जोहानिसबर्गका विश्वविद्यालय भी उन्हींकी दानशीलताका परिणाम है। यह उदारता गोरोंकी बढ़तीका एक सबल कारण है। वे जिस तरह पैसा कमाना जानते हैं, उसी तरह उसका उपयोग करना भी जानते हैं। हम दोनों बातोंमें पिछड़े हुए हैं; और विशेषतः ठीक जगह खर्च करनेमें। हम खर्च भी करते हैं तो अनुचित तरीकेसे और अधिकतर अपना स्वार्थ साधनेके लिए या मौज-शौकमें।

दक्षिण आफ्रिकाका उदाहरण लें तो ऐसे बहुत थोड़े भारतीय दिखाई पड़ते हैं जिन्होंने अपने पैसेका उपयोग अपनी सन्तानको सच्चा शिक्षण देनेके लिए किया हो। इसलिए हमें चाहिए कि हम श्री बाइटकी मिसाल अपने सामने रखें। दक्षिण आफ्रिकामें भारतीय बच्चोंको शिक्षाके सम्पूर्ण साधन देना हमारा पहला कर्त्तव्य है। दूसरा कर्त्तव्य है, स्त्री-शिक्षाकी ओर ध्यान देना। जबतक स्त्रियाँ माताके रूपमें अपने धर्मको नहीं समझ पातीं, तबतक भारतीय पिछड़े ही रहेंगे। हमारा तीसरा कर्त्तव्य यह है कि धन्धोंमें लगे हुए प्रौढ़ रातको पढ़नेके लिए कुछ समय निकाल सकें। इस सबके लिए पैसेकी जरूरत है। यदि श्री बाइटका अनुकरण करनेके लिए भारतीय तैयार हो जायें तो उपर्युक्त बातें आसानीसे की जा सकती हैं। दक्षिण आफ्रिकामें हम अधिकार माँगते हैं, यह उचित है; वह नहीं मिलते, यह अन्याय है। फिर भी हमें इतनी बात स्वीकार करनी चाहिए कि हक प्राप्त करनेकी हममें पूरी-पूरी योग्यता नहीं है। ताली एक हाथसे नहीं बजती। यदि हममें कोई दोष न होता तो इस देशमें हम जितने कष्ट भोग रहे हैं उतने नहीं भोगने पड़ते।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४-८-१९०६

१. जुलाई २८, १९०६ के इंडियन ओपिनियनमें प्रकाशित एक गुजराती समाचारके अनुसार श्री बाइट अपने वसीयतनामेमें दक्षिण आफ्रिकामें संचार और परिवहन प्रणालियोंमें सुधारके लिए १२,००,००० पौंड, जोहानिसबर्गमें एक विश्वविद्यालयकी स्थापनाके लिए २,००,००० पौंड, ट्रान्सवालमें शिक्षाके लिए २०,००० पौंड और केप कालोनी और किम्बरलेमें शिक्षा प्रसारके लिए १५-१५ हजार पौंड लिख गये हैं।

४०४. मिस्र और नेटालकी तुलना

कैसा सुधार!

काफिरोके विद्रोहमें नेटालकी सेनाने जो काम किया उसकी विलायतमें चर्चा हो रही है। वहाँके लोगोंका खयाल है कि गोरोंने बहुत ही जुल्म किया है। उसके विरुद्ध 'स्टार' ने मिस्रमे ब्रिटिश सरकारकी सेनाके द्वारा किये गये कामोंका विवरण दिया है। मिस्रमें जिन मिस्रियोने विद्रोह किया था और उनमे से जो पकड़े गये थे, उन्हे कोड़े लगानेका हुक्म दिया गया था। उन्हे सहनशक्तिकी हद तक कोड़े लगाये गये थे, और सो भी खुले मैदानमें, हजारों मनुष्योके सामने। उसी समय, जिन लोगोको फाँसीकी सजा हुई थी उन्हे फाँसी भी दी गई थी। और जब फाँसी पाया हुआ व्यक्ति लटकता होता, उस समय दूसरोपर कोड़ोकी मार चलती थी। कहा जाता है कि ऐसे प्रसंगोपर सजा पाये लोगोके सगे-सम्बन्धी रोते-रोते मूर्छित हो जाते थे। यदि यह विवरण सही हो तो नेटालके बारेमें विलायतमे चर्चा होनेका कोई कारण नहीं रहता।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ४-८-१९०६

४०५. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

अगस्त ४, १९०६

एलगिनका संविधान

ट्रान्सवालको नया सविधान देनेके सम्बन्धमे जो प्रस्ताव हुआ है और उसकी जो हकीकत जाहिर हुई है हर व्यक्तिकी जबानपर आजकल उसीकी चर्चा है। पिछले वर्ष दिये गये श्री लिटिलटनके सविधान और अब दिये गये लॉर्ड एलगिनके सविधानमें बहुत अन्तर है।

श्री लिटिलटनके संविधानके मुताबिक राज्य कारोबार अभी ब्रिटिश अधिकारियोंके हाथमें ही रहनेवाला था। लॉर्ड एलगिनके संविधानके अनुसार राज्य कारोबार, जो सदस्य निर्वाचित होकर आयेंगे और उनमें जिस पक्षका बहुमत होगा उनके हाथमें होगा। यह मुख्य भेद है। और इसलिए श्री लिटिलटनका सविधान प्रातिनिधिक शासनवाला है, अर्थात् उसमे जनताकी इच्छा जाहिर करनेवाले व्यक्ति जायेंगे; और श्री एलगिनका संविधान उत्तरदायी शासनवाला है अर्थात् उसमे सत्ताधिकारी चुने हुए सदस्योंके प्रति जिम्मेदार होंगे। अर्थात् उसमें लोगों द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि अधिकारियोको हटा सकेंगे। लंका और मॉरिशसमें प्रातिनिधिक शासन है। नेटाल और केप कालोनीमे उत्तरदायी शासन है।

दूसरा बड़ा अन्तर यह है कि लॉर्ड एलगिनके सविधानके मुताबिक बोअर लोग राज्यसत्ताका उपभोग कर सकने योग्य स्थितिमें आ गये है अर्थात् केपकी तरह ट्रान्सवालमे बोअर या ब्रिटिश लोग सत्ता प्राप्त कर सकते है। अभी यह संविधान गढ़ा नही गया है। किन्तु श्री चर्चिलने उसके गढ़े जानेकी सूचना दी है। सम्भव है कि इसमे तीन हफ्ते लग जायें। और, नये सविधानके अनुसार बनी हुई ससदकी बैठक, सम्भव है, जनवरीके पहले न हो।

भारतीयोंकी स्थिति

नई व्यवस्थामें हमारी स्थिति क्या होगी इसका उत्तर देना बहुत मुश्किल है। तारसे श्री चर्चिलका जो भाषण आया है उससे कुछ समझमें नहीं आ सकता। आज स्थिति इतनी खराब है कि उससे अधिक खराब होना सम्भव नहीं है। किन्तु इतना तो निश्चित है कि यदि नया संविधान बनना है तो वह जनवरीके पहले तो बन ही नही सकता।

नेटाल और ट्रान्सवाल

नेटाल और ट्रान्सवाल दोनोंको एक कर दिया जाये, ऐसी बातचीत चल रही है। कुछ अनुभवी और प्रभावशाली लोगोंका ऐसा मत है। श्री सूटर नामक एक सज्जन है। उन्होंने 'डेली मेल' के संवाददाताको इसके विषयमें अपने विचार बताये हैं। उन्होंने कहा है कि यदि नेटाल और ट्रान्सवाल दोनो मिल जाते है तो नेटालकी भारतीय नीति बदलनी पड़ेगी। 'डेली मेल' के सम्पादकने कहा है कि जबतक नेटाल गिरमिटिया मजदूरोंको दाखिल करता है, तबतक उसको दूसरे राज्यसे मिलाना बहुत कठिन है।

दक्षिण आफ्रिकाकी व्यवस्था

लोगोके लेखे इन सारे विचारोकी जड़में दक्षिण आफ्रिकाकी गरीबी है। व्यापारकी मन्दीके कारण अभी जमीनोकी कीमत मिट्टी मोल हो गई है। वह किस तरह सुधर सकती है, इसका विचार करनेमें लोग हजार तरहकी ऊटपटांग बातें करते है। किन्तु इन सबका तात्पर्य इतना ही निकलता है कि इस समय जो हालत है उसमें दो वर्षो तक बहुत अन्तर नही पड़ेगा। अर्थशास्त्री जिन्हे प्राकृतिक नियम कहते है और आस्तिक जिन्हे ईश्वरीय आज्ञा कहते है, उनके अनुसार हर स्थितिमें हर घड़ी परिवर्तन हुआ ही करता है। जो चढ़ता है उसे गिरना ही चाहिए। ऐसी ही स्थिति देशकी होती है। दक्षिण आफ्रिकाने अपने कालक्रममें अच्छा समय देखा है; अब खराब समय देखनेकी बारी आई है। बुरे वर्ष तो अभी दो भी नही बीते। स्थिति बदलनेमें कभी तीन, कभी पाँच, कभी सात वर्ष लगते हैं। यदि यह सही है, तो वर्तमान परिस्थितिको बदलनेके लिए अभी कमसे-कम डेढ़ वर्ष और चाहिए। इस अरसेमें जो धीरजके साथ अपनी चादरके मुताबिक पाँव पसारकर जीवन-यापन करेंगे वे जीत जायेंगे। दूसरे इस भयंकर बाढ़में बहकर मर जायेंगे।

धारासभामें एशियाइयोंके बारेमें चर्चा

आज विधान-परिषदमें श्री डंकनने नीचे लिखी हकीकत पेश की है:[1]

> **परिषदके अगले सत्रमें सरकार एशियाई पंजीयन अधिनियम पेश करना चाहती है। इस अधिनियमके जरिये इस उपनिवेशमें बसे हुए एशियाई लोगोंके बारेमें ब्रिटिश सरकारकी नीतिका पालन हो जायेगा। पहली बात तो यह होगी कि फिलहाल जो लोग इस देशमें बसे हुए हैं उन्हें उचित न्याय मिले। ब्रिटिश सरकारका दूसरा विचार यह है कि इस प्रश्नकी जिम्मेदारी उत्तरदायी शासनको सौंप दी जाये कि एशियाइयोंको इस देशमें आने दे या नहीं; और यदि आने दें तो उनपर क्या प्रतिबन्ध लगाये जायें। यह सरकार अभीतक ब्रिटिश सरकारकी स्वीकृतिसे जिस नीतिपर चलती आई है उसका आधार था पिछली डच सरकार द्वारा बनाये हुए कानून और अनुमतिपत्र**

१. उपनिवेश-सचिवके भाषणका यह पाठ इंडियामें प्रकाशित एक अंग्रेजी विवरणसे मिलाया जा चुका है।

कानून[1]। अनुभवसे यह देखा गया है कि ये दोनों कानून एशियाइयोंको बाहर रखनेमें पूरी तरह सशक्त नहीं हैं। क्योंकि इसमें कतई शक नहीं है कि जिन्हे इस देशमें आनेका हक नहीं था ऐसे एशियाई, झूठे प्रमाण पेश करके, दाखिल हो गये हैं। जो ट्रान्सवालमें पहले नहीं आये ऐसे एशियाई झूठ-मूठ यह कहकर दाखिल हो गये कि वे ट्रान्सवालमें पहले आये थे। पंजीयनके बारेमें कानून अनिश्चित है और जब-जब उस कानूनको पूरी तौरपर लागू करनेका प्रयत्न किया गया है, तब-तब अदालतोंमें मुकदमे चले हैं। इसलिए हमें दो उद्देश्योंकी पूर्ति करनी है। एक तो यह कि जो लोग लड़ाईके पहले इस देशमें थे उनके साथ न्याय किया जाये और उत्तरदायी सरकार आनेके पहले ऐसा प्रबन्ध किया जाये कि नये एशियाई न आ सकें। अर्थात् जो अभी ट्रान्सवालमें है उन सबका फिरसे पंजीयन किया जाये। वे पंजीयनपत्र ले लें ताकि कोई उन्हें कुछ रोक न सके। इसी समय ऐसे एशियाइयोंपर से कुछ प्रतिबन्ध उठा लिये जायेंगे। जमीनके बारेमें कोई बड़ा परिवर्तन नहीं होगा। किन्तु कायदेमें ऐसी छूट रहेगी कि जिस जमीनपर धार्मिक इमारत बनाई जायेगी वह जमीन मकान बनानेवालेके नामपर चढ़ सकती है। और जो १८८५ के कानून ३ के पहले जमीनके मालिक हो गये होंगे, उनके वारिसोंको भी उस जमीनकी मालिकीका हक मिलेगा। इसके अलावा अनुमतिपत्रके कानूनमें भी कुछ परिवर्तन करनेका इरादा है जिससे थोड़े समयके लिए आनेकी इच्छा करनेवाले एशियाइयोंको अड़चन न हो।

ऊपरकी बातें इतनी जबरदस्त और भयकर हैं कि ब्रिटिश भारतीय सघकी समितिकी बैठक उनके बारेमें तुरन्त कदम उठाने जा रही है। इस समय शिष्टमण्डलका तत्काल विलायत जा सकना बहुत ही सन्दिग्ध है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-८-१९०६

४०६. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

अगस्त ४, १९०६ [के बाद][2]

शिष्टमण्डल

हमने पिछले सप्ताह श्री डंकनका जो वक्तव्य दिया था उसके कारण फिलहाल विलायत जानेवाला शिष्टमण्डल रुक गया है।[3] शिष्टमण्डलके विषयमें बहुत लोगोंके मनमें यह सन्देह है कि वह केवल सविधान-समितिको विवरण देनेके लिए विलायत जानेवाला था और चूंकि अब ट्रान्सवालके लिए कैसा संविधान बने, यह निश्चित हो गया है, इसलिए शिष्टमण्डल भेजनेका कोई सबब ही नही बचा। यह विचार गलत है; क्योंकि शिष्टमण्डल सविधानके सम्बन्धमें कुछ भी कर नही सकता था। जो भी कानून बननेवाले है वे अब इसके बाद बनेंगे। उन कानूनोंके बारेमें बड़ी सरकारके सामने

१. शांति-रक्षा अध्यादेश।

२. मालूम होता है कि तिथि भूलसे पिछले अंककी ही रह गई है। यह संवादपत्र ४ अगस्तके बाद ही लिखा गया होगा।

३. देखिए पिछला शीर्षक।

जाकर हमें जो-कुछ कहना है, वह अभी भी कहा जा सकता है। इसलिए जबतक ट्रान्सवालकी संसदका सत्र शुरू नहीं हुआ है और जबतक यह मालूम नहीं पड़ा है कि कौन-कौनसे नये कानून बनेंगे, तबतक शिष्टमण्डल विलायत जाये तो जा सकता है और कुछ लाभ उठा सकता है। यह तो मैंने केवल ट्रान्सवालके बारेमें कहा। किन्तु शिष्टमण्डल जब जायेगा तब सारे दक्षिण आफ्रिकाका सवाल उठाना उसका फर्ज होगा। ये सवाल तभी उठ सकते हैं, जब शिष्टमण्डल जाये। इसके सिवा, यदि हमारे हिमायतियोंके सामने भी, जो हमारे लिए काम कर रहे हैं, ये बातें पेश हों तो वे अधिक समझ सकेंगे और इससे अधिक काम कर सकेंगे। हमें इसके अलावा सभी पक्षोंसे मदद मिलेगी। कांग्रेसकी समिति,[1] पूर्व भारतीय संघ तथा दूसरी संस्थाएँ हमारे लिए संघर्ष करती हैं। उन सबको एकत्र करके एक समितिकी स्थापना की जाये तो उससे भी लाभ मिलनेकी सम्भावना है। इससे यह समझा जा सकता है कि शिष्टमण्डल जाये तो उसका कुछ-न-कुछ असर हुए बिना नहीं रहेगा।

जैसा कि ऊपर कह चुका हूँ, श्री डंकनका बयान अभी तत्कालके लिए शिष्टमण्डलको रोक रहा है। इस सम्बन्धमें पिछले सप्ताह विलायतको पत्र भेजा जा चुका है। श्री गांधीने इस सम्बन्धमें 'रैंड डेली मेल' को एक पत्र[2] लिखा है। वह प्रकाशित हुआ है। ब्रिटिश भारतीय संघने उस विधेयककी प्रतिलिपि माँगी है जिसका उल्लेख श्री डंकनने किया है। उसके प्राप्त होते ही तत्काल प्रार्थनापत्र भेजे जायेंगे। मामला अत्यन्त कठिन है और हम पूरी तरह मुकाबला करनेपर ही इस नये वारसे बच सकते हैं।

एक तरफ अनुमतिपत्रके बारेमें भारतीयोंके विरुद्ध नया कायदा बनानेकी बात चल रही है और दूसरी तरफ सख्ती बढ़ती जा रही है। श्री बर्जेस बन्दरगाहोंमें जाकर जाँच कर रहे हैं और बहुत-से मनुष्योंको वापस जाना पड़ा है, ऐसी अफवाह है। बड़ी मुसीबत उठाकर भी अनुमतिपत्र नहीं मिलता। स्थिति ऐसी दिख रही है कि श्री लवडे जिसे अनुमतिपत्र लेने देते हैं उसे ही मिल सकता है। बच्चोंको पंजीकरण-प्रमाणपत्र देना बन्द हो गया है। सच कहें तो इस हिसाबसे उन्हें आनेकी भी छूट होनी चाहिए। इस सम्बन्धमें प्रश्न किया गया है। श्री लिखटन्स्टाइनने उपनिवेश-सचिवको एक सख्त पत्र लिखा है, और उसमें कितने ही उदाहरण ऐसे दिये गये हैं जिनसे परवाना कार्यालयोंमें होनेवाली तकलीफोंका स्पष्ट चित्र सामने आ सकता है। उनमें से कुछ उदाहरण मैं नीचे दे रहा हूँ:

(१) २१ जूनको शेख दाउदके पंजीकरणके बारेमें सूचित करते हुए लिखा गया है कि सलाहकार समितिकी बैठकमें निर्णय किया जायेगा। सलाहकार समितिकी बैठक निश्चित नहीं है। १० जुलाईको उसीके बारेमें यह जवाब मिला कि प्रार्थनापत्र सलाहकार समितिको भेज दिया गया है।

(२) हाफिज मूसाके नाबालिग लड़केके बारेमें अर्जी देनेपर उसकी उम्र आदिके प्रमाण माँगे गये। २१ जूनको प्रमाण पेश किये गये। २६ जूनको जवाब मिला कि इसके बारेमें नेटालमें खोज-बीन की जायेगी।

(३) शकूर नानजीकी उम्र १६ वर्षकी है — एक अपरिचित डॉक्टर तथा प्रिटोरियाके जिला सर्जनने ऐसा प्रमाण दिया, फिर भी उसे परवाना देना मंजूर नहीं किया गया।

(४) इब्राहीम आमदके बारेमें यह डॉक्टरी प्रमाण दिया गया है कि उसकी उम्र १२ वर्षकी है, फिर भी परवाना-कार्यालय यही शोर मचा रहा है कि उसकी उम्र १६ वर्षकी है।

इस तरह १४ प्रमाण दिये गये हैं। देखें, श्री लिखटन्स्टाइनको इनका क्या जवाब मिलता है।

१. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी ब्रिटिश-समिति।
२. देखिए "पत्र: रैंड डेली मेलको", पृष्ठ ३९७-९।

रेलगाड़ीकी मुसीबत

प्रिटोरिया और जोहानिसबर्गके बीचमे चलनेवाली कुछ रेलगाड़ियोमे भारतीयोको या तो बिलकुल जगह नही दी जाती अथवा गार्डके डिब्बेमे बिठाया जाता है। ब्रिटिश भारतीय संघ इस विषयमें अभी लिखा-पढ़ी कर ही रहा है। संघने वहाँके मुख्य प्रबन्धकका मान रखनेके लिए सुबह साढे आठ बजे आने-जानेवाली गाड़ियोके सम्बन्धमे लगाया गया प्रतिबन्ध कुछ समयके लिए मान लिया है। मुख्य प्रबन्धकने साढ़े पाँच बजे शामकी गाड़ीपर भी वह प्रतिबन्ध माननेके लिए लिखा है। ब्रिटिश भारतीय सघने उस प्रतिबन्धको माननेसे इनकार कर दिया है, इसलिए लिखा-पढ़ी अभी जारी है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १८-८-१९०६

४०७. पत्र : दादाभाई नौरोजीको[1]

जोहानिसबर्ग
अगस्त ६, १९०६

माननीय दा० नौरोजी

प्रिय महोदय,

उपनिवेश-सचिव श्री डंकनने विधान-परिषदमें एक वक्तव्य दिया है। उसकी नकल मैं इसके साथ आपको भेज रहा हूँ।

यह वक्तव्य अत्यन्त असाधारण है। अगर इसके आधारपर विधेयक पेश किया गया तो भारतीय समाजके साथ भयंकर अन्याय होगा। प्रस्तावित कानूनमे न्याय और समुचित व्यवहारका लेश भी नही है। अगर मीठे शब्दोका जामा हटा दिया जाये तो उसका अर्थ यह होगा कि उपनिवेशके हर भारतीयको अब तीसरी बार, बिना किसी आनाकानीके, अपनेको पंजीकृत करवाना पड़ेगा। मजहबी कामोके लिए जमीनका पंजीकरण भारतीय न्यासियोके नाम हो जायेगा। मगर यह तो किसी प्रकारका लाभ नही हुआ; क्योकि सर्वोच्च न्यायालय फैसला दे चुका है कि १८८५ के कानून ३ के बावजूद ऐसी जमीनका पंजीकरण भारतीयोके नाम हो सकता है। जो एकमात्र राहत दी जानेको है, वह एक व्यक्ति-विशेषके मामलेमे है, जिसके बारेमे मैं आपको पहले ही लिख चुका हूँ।[2] मेरा मतलब स्वर्गीय अबूबकर आमदकी जायदादके मामलेसे है। और

१. मालूम होता है, गांधीजीने यह पत्र और १३ अगस्तका पत्र (पृष्ठ ४०३), दोनों ही दादाभाई नौरोजी तथा कुछ अन्य व्यक्तियोंको लिखे थे। ये इंडियाको भी भेजे गये थे। पत्रोंपर जहाँ-तहाँ टीपें मिलती है, जो शायद दादाभाईकी लिखी हुई है, उनसे मालूम होता है कि उन्होंने सितम्बर ६, १९०६ को इनका उत्तर दिया था। दादाभाई नौरोजीने पहला पत्र, पहले अनुच्छेदके आखिरी सात शब्द और अंतिम दो अनुच्छेद निकालकर और दूसरे पत्रसे आखिरी दो अनुच्छेद जोड़ कर, श्री मॉर्ले और लॉर्ड एलगिनको भेज दिया था। यह जानकारी इंडियाको उस प्रास्ताविक टिप्पणीसे मिलती है जो उसने "एक सुविज्ञ संवाददाता"का एक वक्तव्य प्रकाशित करते हुए लिखी थी। वक्तव्य, कुछ शाब्दिक परिवर्तनोंको छोड़कर, ठीक वही था, जो दादाभाई नौरोजीने दोनों उपनिवेश-मंत्रियोंको भेजा था।

२. देखिए "पत्र : दादाभाई नौरोजीको", पृष्ठ २४९-५०।

अगर यह राहत मिल भी गई तो इसमें न्यायसंगत और समुचित व्यवहारकी कोई बात नहीं है। यह तो किसी खास ब्रिटिश प्रजाजनके प्रति ब्रिटिश सरकार द्वारा सामान्य कर्तव्य निभानेका मुद्दा हुआ।

अगर प्रस्तावित कानून पास कर दिया गया तो, वस्तुतः, ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति अबसे बहुत बदतर हो जायेगी। यह नहीं भूलना चाहिए कि तीन पौंडी पंजीकरण कोई वार्षिक कर नहीं है। जो लोग उपनिवेशमें हैं वे ३ पौंड अदा कर चुके हैं और १८८५ के कानून ३ के अन्तर्गत उनसे फिर अदायगीकी अपेक्षा नहीं की जा सकती। अतएव, प्रस्तावित छूट बिलकुल निरर्थक है, क्योंकि वह नये प्रवासियोंपर लागू नहीं होगी। उनका आगमन तो तबतक सर्वथा वर्जित है, जबतक आगामी उत्तरदायी सरकार कोई बहुत कड़े प्रतिबन्ध लगानेवाला प्रवासी कानून नहीं बना लेती। मुझे यह कहनेमें जरा भी हिचक नहीं होती कि अभ्यागत अनुमतिपत्र देनेकी बात भी धोखेकी टट्टी है, क्योंकि ऐसे अनुमतिपत्र मौजूदा कानूनके अन्तर्गत भी विधिवत् दिये जा सकते हैं। और जहाँ वे दिये जाने चाहिए वहाँ नहीं दिये जाते — यह तो सरकारके लिए अपयशकी बात है; जिससे वह नया कानून बनाकर मुक्त नहीं हो सकती। मुझे बहुत अधिक आशंका है कि साम्राज्य सरकारने वास्तविक स्थिति नहीं समझी है और स्थानीय सरकारने साम्राज्य-सरकारको, स्पष्टतः, इस बातका विश्वास दिला दिया है कि श्री डंकन द्वारा निर्दिष्ट दिशामें कानून बना कर वह दरअसल रियायतें दे रही है।

मैंने पहले कहा है कि प्रस्तावित कानूनके अन्तर्गत स्थिति बहुत बदतर होगी। ऐसा इसलिए कहता हूँ कि मैं जानता हूँ, नये कानूनसे बेहद उपद्रव होनेकी सम्भावना है। भारतीयोंका पंजीकरण डच शासनकालमें भी हुआ था, लेकिन, तब पंजीकरण सरल था। ब्रिटिश शासनकी स्थापनाके बाद उनका पंजीकरण फिर हुआ। इस बार पंजीकरण पहलेसे बहुत ज्यादा जटिल था और प्रतिष्ठित भारतीयोंको अँगूठेके निशान लगाने पड़े थे। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि अगर तीसरी बार पंजीकरण किया गया तो वह और भी सख्त होगा। और, यह सब केवल इसलिए कि चन्द भारतीय, जो युद्धके पहले यहाँके निवासी नहीं थे, चोरी-छिपे उपनिवेशमें घुस आये हैं, और अगर उन्होंने ऐसा किया है तो उन भ्रष्टाचारी कर्मचारियोंके कारण, जो किसी समय अनुमति-पत्र विभागके कर्ता-धर्ता थे। मामला इतना गम्भीर हो गया था कि ब्रिटिश भारतीय संघके द्वारा उठाये जानेपर उन कर्मचारियोंको गिरफ्तार करके उनपर फौजदारी मुकदमा चलाया गया। मेहरबान पंचों (जूरियों)-ने तो उन्हें छोड़ दिया; लेकिन सरकारको उनके अपराधके बारेमें इतना विश्वास हो गया था कि वे दोनों कर्मचारी बरखास्त कर दिये गये।

इसलिए, मैं आशा करता हूँ कि जबतक उत्तरदायी शासन देनेके पूर्व ही ब्रिटिश भारतीयोंके साथ कोई ठोस न्याय नहीं किया जा सकता और जबतक ब्रिटिश सरकार, अपने युद्ध-पूर्वके वादेके अनुसार, अपने ही शब्दोंमें, उन्हें केपके ब्रिटिश भारतीयोंके दर्जेमें नहीं रखती तबतक यह बेहद बेहतर होगा कि १८८५ के कानून ३ को पूर्ववत् छोड़ दिया जाये और सारे मामलेपर उत्तरदायी सरकार ही गौर करे।

परन्तु, इन विचारोंके बावजूद सरकार स्वर्गीय अबूबकर आमदके मामलेमें न्याय करनेको स्वतन्त्र है। इस मामलेसे, आखिर, समग्र भारतीय समाजका तो सम्बन्ध नहीं है।

यहाँ एक अकल्पित स्थिति उठ खड़ी होनेके कारण, दक्षिण आफ्रिकासे शिष्टमण्डलके जानेकी बात स्थगित रखनी होगी। क्योंकि, सारी शक्ति ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंके साथ अन्याय करनेवाले इस प्रस्तावको रोकनेपर लगा देना जरूरी होगा।

मेरे नम्र विचारसे भारत-मन्त्री तथा उपनिवेश-मन्त्रीसे व्यक्तिगत मुलाकात जरूरी है।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

[पुनश्च:]

मेरे पास अखबारोंकी कतरनें नहीं बची हैं। आज बैंकोंकी छुट्टीका दिन होनेसे मैं मँगा भी नहीं सकता।[1]

मो० क० गां०

गांधीजीके हस्ताक्षरयुक्त टाइप की हुई मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (जी० एन० २२७५) से।

४०८. पत्र: "रैंड डेली मेल" को[2]

[जोहानिसबर्ग
अगस्त ९, १९०६ के पूर्व]

[सेवामें
सम्पादक
'रैंड डेली मेल']

महोदय,

श्री डंकनने अपने असाधारण वक्तव्यमे — मैं तो उसे असाधारण ही कहूँगा — जिस एशियाई विधेयककी पूर्व सूचना दी है, उसके सम्बन्धमे आपके अग्रलेखपर मैं अपने कुछ विचार प्रकट करना चाहता हूँ। मुझे भरोसा है, आप इसकी अनुमति देंगे। अपने संक्षिप्त वक्तव्यमें उन्होंने अपने श्रोताओंसे तीन बार कहा कि सरकार अधिवासी एशियाई प्रजाके साथ "उचित और न्याय्य व्यवहार" करना चाहती है और इसी कारण जिस विधेयकका उन्होंने जिक्र किया है वह विधान-परिषदके अगले सत्रमे पेश किया जानेवाला है।

आपका खयाल है कि जो अध्यादेश पास होनेवाला है उससे अधिवासी एशियाई प्रजाके साथ उदार व्यवहार होगा।

प्रस्तावित विधेयकमें, मुझे भय है, उदारता नाम-मात्रको नहीं है। उलटे, वह "उचित और न्याय्य व्यवहार" की मर्यादासे भी बहुत दूर रह जायेगा। पुन. पंजीयन तो, निश्चय ही, ऐसे व्यवहारका अंग नहीं है; और वह बिलकुल निरर्थक है। जो भारतीय बस्तीमें प्रवेश कर चुके हैं, अधिकाशत· उनमेंसे प्रत्येकका दुबारा पंजीयन हो ही चुका है। दरअसल, दूसरा पंजीयन तो अनुमतिपत्र विभागको दी गई एक सहूलियत थी, जिसे उस समय खूब पसन्द किया गया था। एशियाइयोंके धोखा देकर बस्तीमें प्रवेश करनेकी कथित बुराईका तीसरा पंजीयन कोई इलाज नहीं है। अधिवासी एशियाई प्रजाके वर्तमान पंजीयन-प्रमाणपत्रोंकी जाँच करना और जिनके पास न हो उनपर मुकदमे चलाना काफी आसान है। सबके सब लोग धोखा-धड़ीसे घुस आये है, इस आरोपका ब्रिटिश भारतीय संघने प्रतिवाद किया है। कानून चाहे जितनी सख्तीसे बनाये जाये और उनपर अमल चाहे कितनी अच्छी तरहसे क्यो न किया जाये कुछ ऐसे व्यक्ति सदा ही रहेंगे

१. यह गांधीजीके स्वाक्षरोंमें है।
२. यह ता० ११-८-१९०६ के इंडियन ओपिनियनमें पुनः प्रकाशित किया गया था।

जो उन्हें तोड़नेपर आमादा होंगे। इसलिए सम्पूर्ण समाजको जरायम पेशा करार देना — क्योंकि यही पुनः पंजीयनका मंशा है — 'उचित' या 'न्याय्य' नहीं है।

परन्तु श्री डंकन कहते हैं कि नये पंजीयनके बदलेमें वे एशियाइयोंको चार उपहार देनेवाले हैं: अर्थात्, (१) तीन पौंडके करका निर्मूलन, (२) धार्मिक कार्योंके लिए एशियाइयोंको भूमिका स्वामित्व रखनेकी अनुमति, (३) जिन एशियाइयोंके पास १८८५ का कानून ३ लागू होनेके पूर्व जमीन थी उनको उसे अपने वारिसोंके नाम दाखिल-खारिज करानेकी अनुमति और (४) एशियाई अभ्यागतोंके लिए अस्थायी अनुमतिपत्र जारी करनेका अधिकार।

अब, पहली रियायतको मैं निरी धोखेकी टट्टी ही कहूँगा। याद रखना चाहिए कि यह उन्हीं लोगोंको मिलती है, जो बस्तीके निवासी हैं अथवा शायद उन्हें भी, जिन्हें युद्धके पूर्व ट्रान्सवालके निवासी होनेके नाते पुनः प्रवेश पानेका अधिकार है। यहाँ रहनेवाले लोगोंने तो ३ पौंडका शुल्क दे ही दिया है, और जो अबतक बस्तीके बाहर हैं उनमें से भी अधिकतर दे चुके हैं। वर्तमान कानून ऐसा कोई अधिकार नहीं देता कि तीन पौंडका शुल्क दुबारा लिया जाये। यह कोई वार्षिक कर नहीं है, बल्कि ऐसा शुल्क है जो १८८५ के कानून ३ के अनुसार उन सब एशियाइयोंको केवल एक बार देना पड़ता है जो बस्तीमें बसना चाहते हैं।

इसी तरह धार्मिक कार्योंके लिए जमीनपर कब्जा रखनेके प्रस्तावित अधिकारमें भी कोई तथ्य नहीं है, क्योंकि ऐसा वर्तमान कानूनके अन्तर्गत भी किया जा सकता है। वरिष्ठ न्यायालयोंने फैसला दे दिया है कि रंगदार लोग, एक संस्थाके रूपमें, धार्मिक कार्योंके लिए जमीन रख सकते हैं।

तीसरी बात अवश्य एक रियायत होती, यदि वह एशियाइयोंके किसी भी बड़े समुदायपर लागू हो सकती। श्री डंकन अच्छी तरह जानते हैं कि इस तरहकी एक ही जमीन है। उसके वारिसोंको ट्रान्सवालमें बागके लिए निर्धारित भूमिके दो पंचमांशपर अधिकार दे देना सामान्य कर्त्तव्यका पालनमात्र होगा; और कुछ भी हो, ऐसा करनेसे समाजको नहीं, बल्कि एक व्यक्तिको ही न्याय प्राप्त होगा।

चौथी बात भी कोई रियायत नहीं है। श्री नोमूरा तथा श्री मंगाको मुसीबत उठानी पड़ी, सो इसलिए नहीं कि अस्थायी अनुमतिपत्र देनेका कोई अधिकार मौजूद नहीं था, बल्कि इसलिए कि अधिकारका उपयोग करनेकी अनिच्छा थी। इसलिए कठिनाई कानूनमें नहीं, उसपर अमल करनेमें है।

मैं आशा करता हूँ कि इस प्रकार मैंने स्पष्ट रूपसे यह दिखा दिया है कि उपनिवेश-सचिवने पिछले शनिवारको जो पूर्व-अनुमान व्यक्त किया है उसके पीछे अधिवासी एशियाई आबादीके साथ "उचित और न्याय्य व्यवहार" करनेका कोई सवाल नहीं है। इसके विरुद्ध जिन्होंने ब्रिटिश प्रजा होनेके नाते समान व्यवहारके आश्वासनकी सचाईमें विश्वास करके ट्रान्सवालमें आनेका साहस किया है उन गरीब एशियाइयोंपर शासकोंने फिरसे नंगी तलवार लटका दी है। लॉर्ड मिलनर तथा सम्राट्के अन्य प्रतिनिधियोंने युद्धके पूर्व, और बादमें भी, जो वादे किये थे उनकी पूर्तिका कोई लक्षण श्री डंकनके वक्तव्यमें नहीं है।

मैं जो-कुछ पहले कह चुका हूँ उसे यदि दोहरा सकूँ तो पूछूंगा कि ब्रिटिश भारतीय (यदि उन्हें दूसरे एशियाइयोंसे अलग कर लें तो) क्या चाहते हैं? वे इस सिद्धान्तको मानते हैं कि ट्रान्सवालको आव्रजनपर नियन्त्रण रखनेका अधिकार है; और यद्यपि डच शासनकालमें ऐसी बात नहीं थी, फिर भी यदि ब्रिटिश प्रजाजनोंपर लागू केप या आस्ट्रेलियाई प्रवासी कानूनके अन्तर्गत जो प्रतिबन्ध लगाये गये है, वैसे ही प्रतिबन्ध उनपर लगाये जायें, तो उसके लिए वे बिलकुल तैयार हैं। किन्तु इसके साथ ही वे यह भी चाहते हैं कि जो ब्रिटिश भारतीय इस देशमें बस गये हैं उनको

पूरी नागरिक स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए — यानी, बेरोकटोक घूमने-फिरनेकी स्वतन्त्रता, जमीनकी मालिकीकी स्वतन्त्रता और व्यापारकी स्वतन्त्रता। जमीनकी मालिकीकी स्वतन्त्रतामें ऐसे प्रतिबन्ध लगाये जा सकते हैं जिनसे जमीनका सट्टा-व्यापार न हो। व्यापारकी स्वतन्त्रतामें भी स्वच्छता-निर्वाह और न्यायसंगत व्यापारके हितमें नगरपालिकाके जो प्रतिबन्ध लगाना आवश्यक हो, लगाये जा सकते है। जब ब्रिटिश भारतीयोंके ये प्रारम्भिक अधिकार मान लिये जायेंगे तभी सम्राट्के किसी प्रतिनिधिको यह कहनेका अधिकार प्राप्त होगा कि ब्रिटिश भारतीयोंके साथ "उचित और न्याय्य व्यवहार" किया जा रहा है, उसके पहले नही।

याद रहे, उपर्युक्त वक्तव्यमें किसी राजनीतिक अधिकारका दावा करनेका कोई प्रयत्न नहीं है। ब्रिटिश भारतीय केवल ऐसे अधिकार माँगते है, जिन्हे वे लोग भी सरलतासे दे सकते हैं जो 'श्वेत दक्षिण आफ्रिका' के सुभाषितमें विश्वास रखते है। हाँ, शर्त यह है कि दक्षिण आफ्रिका, लॉर्ड सेल्वोर्नके शब्दोंकी व्याख्याके अनुसार, "न केवल बाहरसे, बल्कि अन्दरसे भी गोरा हो।"

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

रैंड डेली मेल, ९–८–१९०६

४०९. "उचित और न्याय्य व्यवहार"

पिछले शनिवारको ट्रान्सवालकी विधानसभाके स्थगित होनेपर, प्रस्तावित एशियाई कानूनके सम्बन्धमे उपनिवेश-सचिव श्री डंकनने एक, महत्त्वपूर्ण वक्तव्य दिया। अपने वक्तव्यमे, जो 'ट्रान्सवाल लीडर' के सिर्फ आधे स्तम्भमे छपा है, श्री डंकनने तीन बार दुहराया है कि ट्रान्सवालके एशियाई अधिवासी "उचित और न्यायसगत व्यवहार" पानेके अधिकारी हैं। इसके बाद उन्होने ऐसे व्यवहारकी अपनी व्याख्या प्रस्तुत की है। हमने श्री डकन जैसी भ्रमोत्पादक व्याख्या कभी नही देखी। हम आशामात्र कर सकते हैं कि उन्होने १८८५ के कानून ३ को गलत रूपमे समझा है और इसीलिए वे इस निष्कर्षपर पहुँचे हैं कि जिस कानूनकी पूर्व कल्पना उन्होंने पिछले शनिवारको दी थी, उसके द्वारा सचमुच वे बहुत राहत दे रहे हैं। अब हम यहाँ यह दिखानेकी चेष्टा करेंगे कि प्रस्तावित कानूनसे ट्रान्सवालमें बसे हुए एशियाई परिवारोको कोई सहायता मिलना तो दूर रहा, उलटे निरी उत्तेजना ही बढ़ेगी और आज जो भी सुविधाएँ मिली हुई है, शायद वे भी छिन जायेंगी।

श्री डंकनने चार बातोंका वादा किया है:

(१) बस्तीके सम्पूर्ण एशियाइयोंका फिरसे पजीयन।
(२) तीन पौंडी पंजीयन-शुल्कका निर्मूलन।
(३) एशियाई धार्मिक सम्प्रदायोंको धार्मिक कार्योंके लिए भूमि रखनेकी अनुमति।
(४) जिन एशियाइयोंके पास १८८५ के कानून ३ के जारी होनेसे पहलेकी जमीनें हैं वारिसोंको उन्हे अपने नाम दाखिल-खारिज करानेकी अनुमति।

इनमेंसे पहला प्रस्ताव बहुत ही शरारत-भरा और बेहद खतरनाक है। चूंकि सरकार इसे जैसे-तैसे पास कराना ही चाहती है, इसीलिए लोगोको झाँसा देनेके लिए अन्तिम तीन बातें

रख दी गई हैं। और पहली बात भी श्री डंकनने ऐसी चतुराईसे रखी है कि मानो वह एशियाइयोंके हितमें की जा रही हो।

जरा पिछला इतिहास देखें। जिन भारतीयोंके पास डच सरकार द्वारा दिये हुए पंजीयन प्रमाणपत्र थे उनको कानूनन नये प्रमाणपत्र नहीं लेने पड़ते थे। किन्तु जब उसी प्रणालीको सबके लिए लागू करनेके उद्देश्यसे, लॉर्ड मिलनरने तत्कालीन मुख्य अनुमतिपत्र-सचिवके कहनेपर ३ पौंडी शुल्क वसूल करनेके लिए १८८५ का कानून ३ जारी करनेका निश्चय किया, तब ब्रिटिश भारतीयोंने पंजीयनके नये प्रमाणपत्र, जिनपर अँगूठेकी छाप भी हो, लेना स्वीकार किया। तबसे उस पद्धतिका समान रूपसे अनुसरण किया जा रहा है। यहाँ स्मरण रखना होगा कि, कानूनी सलाहपर अमल करते हुए मुख्य अनुमतिपत्र-सचिवने स्वीकार किया था कि भारतीयोंपर नये प्रमाणपत्र लेनेका कोई कानूनी बन्धन नहीं है। इसलिए जब ब्रिटिश भारतीय संघने प्रस्तावको स्वीकार किया तब स्वभावतः उसकी कृतज्ञतापूर्वक कद्र की गई।

परन्तु नये पंजीयनके सिलसिलेमें भारतीयोंको जो-जो मुसीबतें झेलनी पड़ीं, वे अब भी अनेक भारतीयोंके मनमें ताजी हैं। वे भूल नहीं पाये है कि एक दिन बड़े तड़के उन्हें अपने घरोंसे सचमुच ही बाहर निकाल दिया गया था। श्री डंकन अब कहते हैं कि वह पंजीयन निरर्थक था। क्यों, सो हम नहीं जानते। इसलिए फिरसे सारे एशियाइयोंको पंजीकृत करानेका प्रस्ताव किया गया है — मानो वे जरायम पेशा लोग हों। श्री डंकन कहते हैं कि बहुतसे ऐसे एशियाइयोंने, जो पहले कभी ट्रान्सवालमें नहीं रहे — क्या ही अच्छा होता कि वे एशियाई-एशियाईमें भेद करके यह स्पष्ट करते कि वे ब्रिटिश भारतीयों, चीनियों अथवा अन्य एशियाइयों, किनके सम्बन्धमें कह रहे हैं — झूठे बयान देकर उपनिवेशमें प्रवेश किया है। तर्कके लिए हम मान लेते हैं कि बात ऐसी ही है। लेकिन नया पंजीयन उस बुराईको किस प्रकार दूर कर देगा? और थोड़ेसे अपराधियोंके लिए सारे निरपराधियों को क्यों तंग किया जाये?

और यहाँ श्री डंकनको याद दिलाना होगा कि यदि कुछ एशियाइयोंने इस प्रकार उपनिवेशमें प्रवेश किया है तो उसका कारण यह है कि एक समय एक मुख्य एशियाई कार्यालयमें भ्रष्टाचारका बोलबाला था। परन्तु वस्तुस्थिति यह है कि ब्रिटिश भारतीय संघने इस आरोपका जोरोंसे खण्डन किया है कि बहुतेरे एशियाइयोंने झूठे बयान दाखिल करके बस्तीमें प्रवेश किया है। कुछ भी हो, यह न्यायिक जाँचका विषय है और ऐसे मामलोंके निपटारेके लिए शान्ति-रक्षा अध्यादेश काफी स्पष्ट है।

दूसरी रियायत भी कोई रियायत नहीं है। हमें आशा है कि श्री डंकनने पंजीयन शुल्कको वार्षिक कर नहीं समझ रखा है। यह शुल्क ऐसा है जो सिर्फ एक बार दिया जायेगा। सभी भारतीय, जो इस बस्तीमें रहते हैं और जिन्हें कानूनन पंजीयन शुल्क देना है, शुल्क दे चुके हैं। तब फिर यह रियायत किसे दी जा रही है? निश्चय ही यह भावी नये आव्रजकोंके लिए नहीं है, क्योंकि जबतक उत्तरदायी शासन अपनी मर्जीसे निर्धारित शर्तोंपर उपनिवेशके द्वार नहीं खोलता, तबतक वे उनके लिए पूरी तरहसे बन्द हैं। इसलिए ३ पौंडी शुल्कके निर्मूलनकी बात बिलकुल निरर्थक है।

इस विषयपर बोलते हुए श्री डंकनने फरमाया कि जब-जब पंजीयन कानूनको गम्भीरतापूर्वक लागू करनेकी कोशिश की गई, वह असफल रही है। इस कथनको ठीक नहीं कहा जा सकता। हाँ, जब सरकारने कानूनके अर्थमें वह तात्पर्य घुसेड़नेकी चेष्टा की, जिसका भूतपूर्व डच सरकारने इरादा भी नहीं किया था, तब वह अवश्य असफल सिद्ध हुआ। कानूनमें उन्हीं एशियाइयोंके पंजीयनकी व्यवस्था है जो ट्रान्सवालमें व्यापारके उद्देश्यसे या अन्यथा बसना चाहते हैं। स्थानीय सरकार

इससे और आगे बढ़कर सभी भारतीयोका पजीयन करना चाहती थी, फिर चाहे वे बच्चे हों, पत्नियाँ हो, और व्यापार करना चाहते हो या न चाहते हो। सर्वोच्च न्यायालयने सरकारकी इस कोशिशको सफल न होने दिया। तो क्या इस विनापर कानूनको अस्पष्ट और अनिश्चित कहा जायेगा? किसी भी निष्पक्ष व्यक्तिसे इसका उत्तर "कदापि नही" ही प्राप्त होगा। यह सिर्फ उन्हीके लिए अस्पष्ट है जो भारतीयोपर ऐसी निर्योग्यताएँ थोपना चाहते है, जिनका स्वर्गीय राष्ट्रपति क्रूगर तथा उनकी सरकारने कभी सपनेमे भी खयाल नही किया था।

तीसरी रियायत धार्मिक कार्योके लिए सुरक्षित भूमिके बारेमें है। विटवॉटर्सरैंड उच्च न्यायालयने फैसला किया है कि कोई भी रंगदार व्यक्ति इस तरहकी जमीन रख सकता है, और तथ्यकी बात तो यह है कि ब्रिटिश भारतीयोने ऐसी अनुमतिके लिए अब सरकारको परेशान करना भी छोड़ दिया है, और वे ट्रान्सवालमे भारतीय न्यासियोके नामसे मसजिदकी जायदादका नियमित पजीयन करवानेवाले हैं। अतएव उनको सरकारसे कोई अधिकार या संरक्षण लेनेकी आवश्यकता नही है। अत. इस मामलेमे भी एशियाइयोको किसी प्रकारकी रियायत नही दी जा रही है।

चौथी, नि सन्देह एक रियायत है। किन्तु एशियाई समाज जैसा है उसपर इसका कोई प्रभाव नही पड़ता। यह सिर्फ एक ही व्यक्तिको फायदा पहुँचानेके लिए है। ट्रान्सवालमे सिर्फ एक ही जायदाद १८८५ के कानून ३ के लागू होनेके पहलेसे एक भारतीयके कब्जेमें है — क्षेत्रफलमें, बागके लिए निर्धारित की गई भूमिका दो-तिहाई अश।[1] इस मामलेमें यदि रियायत की जाती है और वारिसोको जायदादपर काबिज रहने दिया जाता है तो यह ब्रिटिश सरकारका अपने प्रजाजनके प्रति निरे कर्त्तव्यका निर्वाह-मात्र माना जायेगा। ऐसे प्रस्तावको एशियाई समाजके प्रति रियायत-जैसे बड़े नामसे विभूपित करना उसकी बुद्धिका अपमान करना है।

इसलिए जहाँतक १८८५ के कानून ३ का सम्बन्ध है, श्री डकन द्वारा प्रस्तावित ढगसे उसका मंसूख किया जाना बिलकुल अनावश्यक है और उससे बेहिसाब कठिनाइयाँ खड़ी हो जायेंगी, जिनसे आज शायद ब्रिटिश भारतीय मुक्त हैं।

शान्ति-रक्षा अध्यादेशके विपयमे श्री डंकनने कहा कि अभ्यागतोको अनुमतिपत्र देनेकी व्यवस्था की जायेगी। हम आदरपूर्वक कहना चाहेंगे कि यह भी निरी धोखेकी टट्टी है। अभीतक इस प्रकारके अनुमतिपत्र देनेके लिए किसी धाराकी जरूरत नही पाई गई। यह ठीक है कि उन्हे देनेमे सरकारने बाधाएँ खड़ी की थी, किन्तु उससे तो उसे और भी बदनामी मिली है। अब अस्थायी अनुमतिपत्र देनेकी, जिन्हे देनेका पहलेसे सरकारको कानूनन अधिकार है, किन्तु भारतीय-विरोधी लोगोके आन्दोलनके भयसे जिन्हे देनेसे वह अभीतक इनकार करती आई है, मीठी-मीठी बाते करके वह उस कलंकसे मुक्त नही हो सकती।

इसके अतिरिक्त श्री डंकन यह भी कहते है कि उनके वक्तव्यमे जिस नीतिकी व्याख्या की गई है, वही साम्राज्य सरकारकी नीति रही है — और वही स्थानीय सरकारकी भी नीति है। यह कथन तथ्योके अनुरूप नही है। क्योकि, लॉर्ड मिलनरकी नीति तो यह थी कि उत्तरदायी शासन देनेके पहले ही एशियाई कानूनको ब्रिटिश परम्पराओके अनुकूल बना दिया जाये और जो भारतीय शिक्षा अथवा अन्य निपुणताओके कारण योग्य हों, उन्हे ट्रान्सवालमे सम्राटकी अन्य प्रजाओके समान बराबरीका स्थान दिया जाये। श्री लिटिलटनके खरीतेमें भी इस प्रकारकी नीतिका निर्देश किया गया था। इसलिए श्री डकनका वक्तव्य स्पष्ट ही उस इरादेसे पीछे जानेवाला है जो लॉर्ड मिलनर या, बादमे, श्री लिटिलटनने व्यक्त किया था।

१. पृष्ठ ३९८ पर बागके लिए निर्धारित भूमिका क्षेत्रफल दो-पंचमांश होनेका उल्लेख है।

हम पूछते हैं कि "उचित और न्याय्य" व्यवहारके विषयमें तीन बार दोहराई हुई घोषणाका सचमुच कोई आधार है या वह लॉर्ड लिटनके इन शब्दोंको, कि "जो बातें वादोंके रूपमें सुनाई जाती हैं, वे व्यवहारमें तोड़नेके लिए होती हैं", चरितार्थ करेगी और श्री डंकनकी घोषणाका परिणाम केवल शब्दोंमें ही खप जायेगा?

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ११-८-१९०६

४१०. भाषण: हमीदिया इस्लामिया अंजुमनमें

मलायी बस्तीकी सत्रहवीं गलीके सभा-भवनमें जोहानिसबर्गकी हाल ही में स्थापित हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके तत्त्वावधानमें भारतीयोंका एक सम्मेलन हुआ था। आमन्त्रित व्यक्तियोंमें ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष श्री अब्दुल गनी, और मन्त्री श्री गांधी, सम्मिलित थे। ट्रान्सवालवासी भारतीयोंकी वर्तमान राजनीतिक स्थिति समझानेके लिए अंजुमनके अध्यक्षके निवेदन करनेपर गांधीजीने एक भाषण दिया था, जिसकी संक्षिप्त रिपोर्ट निम्नलिखित है:

जोहानिसबर्ग,
अगस्त १२, १९०६

श्री गांधीने शुरूमें हमीदिया इस्लामिया अंजुमनका आभार मानते हुए अंजुमनकी स्थापनाके सम्बन्धमें अपनी प्रसन्नता व्यक्त की। हमीदिया इस्लामिया अंजुमन ब्रिटिश भारतीय संघके मुकाबलेमें खडी की गई है, ऐसी गलत चर्चा लोगोंमें चल रही थी। उसपर खेद प्रकट करते हुए उन्होंने कहा कि यह बात बिलकुल गलत है; ऐसी अंजुमनकी स्थापनासे तो उलटे ब्रिटिश भारतीय सघकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी, और भविष्यमें वे एक-दूसरेके सहायक बन जायेंगे।

ट्रान्सवालके भारतीयोकी वर्तमान राजनीतिक स्थितिके प्रश्नपर आते हुए उन्होंने श्री डंकनके बयानको लेकर विस्तारपूर्वक समझाया कि मामला बहुत ही भयंकर है। श्री डंकनके बयानके विरुद्ध मजबूत मोर्चा बाँधनेकी जरूरत बताते हुए उन्होंने विलायतको शिष्टमण्डल भेजना स्थगित करनेकी सलाह दी। ब्रिटिश भारतीय सघकी कमजोर आर्थिक स्थिति बताकर उन्होंने उपस्थित सदस्योंसे निवेदन किया कि वे उसकी आर्थिक सहायता करें। उन्होंने कहा कि मुसलमान लोग शिक्षामें पिछड़े हुए हैं, इसलिए ऐसी समितियोंके बननेसे उन्हें बहुत फायदा होगा; और आशा है, आप शिक्षाके विषयमें आगे बढ़नेकी कोशिश करेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५-८-१९०६

४११. पत्र : दादाभाई नौरोजीको[1]

पो० ऑ० बॉक्स ९६८
जोहानिसबर्ग
अगस्त १३, १९०६

मान्यवर,

'इंडियन ओपिनियन' के प्रस्तुत अंकमें[2] १८८५ के कानून ३ मे श्री डकन द्वारा प्रस्तावित सशोधनोकी पूरी जानकारी प्रकाशित हुई है। श्री लिटिलटन तथा श्री मॉर्लेके खरीतोके कुछ अंश तथा १८८५ के कानून ३ का सम्पूर्ण पाठ भी दिया गया है।

यह तो एक नजरसे ही स्पष्ट हो जायेगा कि श्री डकन अपने प्रस्तावित सशोधनसे खरीतोंकी व्याप्तिको बहुत ज्यादा सीमित कर रहे है। पुन: पजीयनके बारेमे श्री लिटिलटन और लॉर्ड मिलनरने कोई जिक्र तक नही किया है; और उन दोनोंने यह व्यक्त किया है कि, कमसे-कम, उच्चतर श्रेणीके भारतीयोंको तो पूरे अधिकार मिलने ही चाहिए। इससे श्री डकनका यह कहना कि वे साम्राज्य-सरकारके इरादोको कार्यरूप दे रहे है, वस्तुस्थितिसे दूर हो जाता है। हाँ, अगर उदारदलीय मन्त्रिगण पूर्ण रूपसे बदल गये हों और अब उनका यह विचार हो कि ब्रिटिश भारतीयोकी स्वतन्त्रताको अनुदार दलका मन्त्रिमण्डल जिस हद तक कम करनेको तैयार था उससे भी अधिक घटा दिया जाये तो बात दूसरी होगी।

मेरी धारणा तो निश्चय ही यह है कि जबतक ट्रान्सवाल सम्राट्के उपनिवेश-विभागके शासनतत्रमे है तबतक सम्राट्की सरकारको चाहिए कि वह न्याय-भावनापर आधारित कानून बनाये, भले ही जैसा कि लॉर्ड मिलनरने कहा है, यह "सरकारी बहुमतका उपयोग करके हो, और बादमें इसे बदलनेका भार उत्तरदायी मन्त्रिमण्डलपर—अगर उसमें ऐसा करनेकी हिम्मत हो तो—छोड़ दिया जाये।"

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजी पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २२७६) से।

१. मूलमें दादाभाई नौरोजीका नाम नहीं है; पर यह पत्र दादाभाई नौरोजीके संग्रहमें पाया गया है। "पत्र : दादाभाई नौरोजीको," पृष्ठ ३९५–६ भी देखिए।

२. अगस्त ११, १९०६ का अंक।

४१२. प्रार्थनापत्र : लॉर्ड एलगिनको

डर्बन,
अगस्त १३, १९०६[१]

सेवामें,
परमश्रेष्ठ, परममाननीय लॉर्ड एलगिन, पी० सी०, आदि
महामहिमके प्रधान उपनिवेश-मन्त्री
लन्दन, इग्लैंड

सविनय निवेदन है कि

आपके प्रार्थी परमश्रेष्ठका ध्यान नेटाल संसद द्वारा अभी हालमें पास किये गये नगर-निगम संघटन विधेयककी ओर आकर्षित करते है।

आपके प्रार्थियोंने कृतज्ञतापूर्वक इस बातको लक्ष्य किया है कि इस विधेयकके विषयमे भारतीय समाजने जो आपत्तियाँ उठाई थी उनमेंसे कुछको परमश्रेष्ठने अपने खरीतेमें मान लिया है।

फिर भी आपके प्रार्थियोको दुःख है कि विधेयकके विरुद्ध उठाई गई एक आपत्तिपर परमश्रेष्ठने विचार नही किया है और वह है — नगरपालिकाके चुनावोंमें मतदाताओंके रूपमें ब्रिटिश भारतीयोंका मताधिकार छीननेका प्रस्ताव।

जब नेटाल संसदमें यह विधेयक विचाराधीन था, तब भारतीय समाजने विधेयकके बारेमें अपनी आपत्तियाँ प्रकट करते हुए एक प्रार्थनापत्र दिया था। उसकी एक प्रति परमश्रेष्ठकी जानकारीके लिए यहाँ नत्थी है।[२]

नेटाल निवासी ब्रिटिश भारतीय अनुभव करते है कि यदि उन्हें नगरपालिका-मताधिकारसे वंचित कर दिया गया तो यह एक बड़ी गम्भीर शिकायत होगी और नेटालके जिम्मेदार राज-नीतिज्ञो द्वारा की गई उन घोषणाओके प्रतिकूल होगी जो भारतीयोंको संसदके मताधिकारसे वंचित करते समय की गई थी। उस समय यह बात मान ली गई थी कि यद्यपि भारतमें संसदीय संस्थाएँ नही है तथापि नगरपालिकाएँ तो अवश्य है, और भारतमे नगरपालिकाओके हजारो मतदाता है।

प्रस्तावित मताधिकारके अपहरणके पक्षमें कोई वैध तर्क नही दिया गया है। भारतीय नेटाल उपनिवेशमे कोई राजनीतिक सत्ता पानेकी आकांक्षा नही रखते। किन्तु वे अन्य कर-दाताओके बराबर ही कर देते है; इसपर भी जब उनकी नगरपालिका सम्बन्धी स्वतन्त्रतामें हस्तक्षेप किया जाता है तब वे, स्वभावतः, नापसन्द करते है।

प्रायः यह कहा जाता है कि नेटालकी भारतीय आबादी, सामान्यतः, केवल गिरमिटिया वर्ग की है। सादर निवेदन है कि ऐसा कहना उचित नही है; क्योकि इस समय नेटालमे ऐसे

१. छपे हुए प्रार्थनापत्रपर, जिसमे हस्ताक्षरकर्ताओंके नाम नहीं दिये गये है, यही तिथि है; लेकिन **इंडियन ओपिनियनमें**, जिसके १८-८-१९०६ के अंकमें यह उद्धृत किया गया था इसपर १५ अगस्तकी तिथि दी गई है।

२. यह यहाँ नहीं दिया जा रहा है। देखिए खण्ड ४, पृष्ठ ४२७-८।

स्वतन्त्र भारतीयोंकी आबादी लगभग पन्द्रह हजार है, जो अपना राह-भाड़ा स्वयं देकर यहाँ आये हैं। इस आबादीका सबसे बड़ा भाग डर्बनमें पाया जाता है। ये लोग अत्यन्त सम्मानित वर्गके हैं। इनमें अधिकांश व्यापारी और व्यापारिक पेशेसे सम्बद्ध लोग है। उनमे कुछ ऐसे भी लोग हैं जिन्होंने अंग्रेजी भाषामें उच्च शिक्षा प्राप्त की है।

आपके प्रार्थी सविनय निवेदन करते हैं कि ऐसे वर्गके लोगोंको मताधिकारसे वंचित करना उनके दर्जेको अनावश्यक रूपसे गिरा देना होगा।

इसलिए, आपके प्रार्थी सादर प्रार्थना करते है कि परमश्रेष्ठ प्रार्थनापत्रकी विषय-सामग्रीपर सहानुभूतिपूर्वक विचार करने और मुनासिब राहत देनेकी कृपा करें।

न्याय एवं दयाके इस कार्यके लिए, अपना कर्तव्य समझकर, आपके प्रार्थी सदा दुआ करेंगे, इत्यादि।

डर्बन, आज तारीख १३ अगस्त, सन उन्नीस सौ छः।

[दाउद मुहम्मद
अध्यक्ष
ओ० एच० ए० झवेरी
एम० सी० आंगलिया
अवैतनिक संयुक्त मन्त्री,
नेटाल भारतीय कांग्रेस]

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (सी० ओ० १७९, जिल्द २४३) से।

४१३. पत्र : हाजी इस्माइल हाजी अबूबकर झवेरीको

पो० ऑ० बॉक्स ६५२२
जोहानिसबर्ग
अगस्त १४, १९०६

सेठ श्री हाजी इस्माइल हाजी अबूबकर,

आप दोनोंके नामोंपर कुछ ही दिनोंमे प्रिटोरियाकी जमीन चढ़ जायेगी। ऐसी आशा करनेके ठोस कारण हैं। उमर सेठने उस सम्बन्धमे आपको लिखा है, इसलिए मैं ज्यादा खुलासा नही कर रहा हूँ।

उमर सेठसे मैं हमेशा वहाँके खर्चके सम्बन्धमे झगड़ा किया करता हूँ। इस समय दक्षिण आफ्रिकामें समय बहुत ही कठिन है, अभी और भी कठिन आयेगा। जमीनकी कीमत ६६ फी सदी गिर गई है तथा और भी अधिक गिरे तो आश्चर्य नही। हमें जो किराया मिलता था वह ५० प्रतिशतसे भी अधिक घट गया है, तथा और भी घटेगा। वेस्ट स्ट्रीटके जैसे मकानमें सभी सुविधाओंसे पूर्ण दूसरी मंजिलकी दूकान अभी खाली पड़ी है। ऐसे समयमें यदि आप अपना घर-खर्च और दूसरा खर्च कम नही करेंगे तो जो है वह भी खत्म हो जायेगा। आज भी पूँजीपर रहने जैसा ही है। व्यापारमें लाभ होता है, इसलिए सन्तोष है। किन्तु यह लाभ है, तो उधर माल उधारीपर है। व्यापारका मुनाफा, जबतक शुद्ध लाभ न निकाला गया हो, और वह भी नगद न बन गया हो, तबतक अनिश्चित माना जाता है। मुझे कहना चाहिए कि उमर सेठ स्वयं बहुत गरीबीकी हालतमें रहते

है। आपके नामको शोभा देने लायक घर नही, न वैसा खान-पान ही है। और आजकल वे मेरे साथ रहकर मुझसे भी ज्यादा कष्टमय जीवन व्यतीत करते है। यह देखकर कभी-कभी मेरे मनमें छोटेपनकी दु:खद भावना जागृत होती है, फिर भी मै यह समझकर चलने देता हूँ कि उसमें फायदा है। जैसे कल रातको उमर सेठ केवल रोटी, मक्खन, पापड़ और कोकोपर ही रहे, और सोनेके लिए मेरे साथ साढ़े तीन मील पैदल आये। मैं यह नहीं कहता कि आप भी इस हद तक कम खर्च करें। लेकिन इतना जरूर कहता हूँ कि वहाँ आपका खर्च प्रतिमाह २५ पौंडसे अधिक नही होना चाहिए। कुछ खर्च ऐसा है जिसे घटानेसे लोग चर्चा करेंगे। लेकिन चर्चा करनेवालोंको दुश्मन समझें। चर्चा करनेवाले आपकी गृहस्थी नहीं चलाते। यानी हमारा, जो अपनी स्थिति समझ सकते है, कर्तव्य है कि वक्तका विचार करें। अधिक क्या लिखूँ? मैं आपका हित बहुत चाहता हूँ, इसीलिए इस तरह लिख रहा हूँ।

तबीयत अच्छी रहती होगी।

आपने जायदाद वेचनेके सम्वन्धमें हस्ताक्षर करके जो कागज भेजा है उसमें गवाहके हस्ताक्षर नही थे, इसलिए फिरसे हस्ताक्षर करनेकी आवश्यकता है। अव वापस भेजता हूँ। उसमें गवाहके हस्ताक्षर करवाकर और प्रान्तके साहवकी मुहर लगवाकर भेज दीजियेगा।

मो० क० गांधीके सलाम

हाजी इस्माइल हाजी अवूवकर झवेरी
[पोरबन्दर]

[पुनश्च :]

साथका कागज यदि प्रान्तके साहवके हस्ताक्षरके लिए प्रान्त-कार्यालयके वकीलको भेज देंगे तो भी काम चल जायेगा।

मो० क० गांधी

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजराती पत्रकी फोटो-नकलसे।
सौजन्य : झवेरी वन्धु, डर्वन।

४१४. भारत भारतीयोंके लिए

यह आवाज भारतमें आज हजारों मुखोंसे निकल रही है। भारत आज एक ही राष्ट्र है, यह कोई नही कह सकता। किन्तु कामना तो सबकी यही है कि वह एक राष्ट्र कहलाये। ऐसा करनेके लिए स्वदेशाभिमानी भारतीय अपनी-अपनी समझसे उपाय सुझा रहे है। इनमें [कलकत्तेसे निकलनेवाले 'इडियन वर्ल्ड' नामक प्रसिद्ध मासिक पत्रके सम्पादक भी है। उन्होने कहा है कि जबतक भारतके विभिन्न प्रदेशोमे रहनेवाले भारतीयोमेंसे ज्यादातर लोग एक ही भाषा नही बोलने लगते, तबतक वास्तविक रूपमें भारत एक राष्ट्र नही बन सकता।] विभिन्न प्रदेशोंमें अंग्रेजी बोलनेवाले लोग काफी मिल जाते है, किन्तु उनकी संख्या बहुत ही थोडी है, और हमेशा थोड़ी ही रहेगी। इसका मुख्य कारण यह है कि यह भाषा कठिन है और विदेशी है। साधारण मनुष्य उसे ग्रहण नही कर सकता। इसलिए यह सम्भव नही कि अंग्रेजीके जरिये भारत एक राष्ट्र बन जाये। अत: भारतीयोको भारतकी ही कोई भाषा पसन्द करनी पड़ेगी।] गुजराती, वगाली, तमिल आदि

बोलनेवाले भारतीय हैं तो बहुत, फिर भी इनमेंसे किसी एकके सारे भारतमें फैलनेकी बहुत कम सम्भावना है। बाकी बच गई हिन्दी भाषा। यह भाषा उत्तर भारतमें सब लोग बोलते हैं। उसकी माता संस्कृत और फारसी होनेके कारण वह हिन्दू और मुसलमान दोनोंको अनुकूल पड़ सकती है। इसके सिवा, चूँकि फकीर और सन्यासी यही भाषा बोलते हैं इसलिए इसका प्रसार सब जगह होता है। अनेक अंग्रेज भी इसे सीखते हैं। इस भाषाका फैलाव बहुत है। भाषा अपने आपमें बहुत मीठी, नम्र और ओजस्वी है। इसमें बहुत सी पुस्तकें लिखी गई हैं और अब भी लिखी जा रही है। इसलिए 'इंडियन वर्ल्ड' के सम्पादक महोदयने सुझाया है कि हरएक पाठशालामें स्वभाषाके अतिरिक्त इस भाषाका शिक्षण दिया जाना चाहिए। माता-पिताको भी चाहिए कि वे अपने बच्चोंमें बचपनसे ही हिन्दी भाषा बोलनेकी आदत डालें। तभी भारत वास्तविक रूपमें एक राष्ट्र बन सकेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १८-८-१९०६

४१५. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

अगस्त १८, १९०६

श्री भाभाका मुकदमा

श्री मुहम्मद सुलेमान भाभाका अनुमतिपत्र-सम्बन्धी मुकदमा फोक्सरस्टमें चल रहा था। उसके बारेमें अपील की गई थी। लेकिन चूँकि वकील उस अपीलके विरुद्ध थे, इसलिए वह वापस ले ली गई है। वकीलकी सलाहसे श्री भाभाने निश्चित अवधिमें ट्रान्सवालकी हद छोड़नेसे इनकार किया था; इसलिए उनपर अदालतमें फिरसे मुकदमा चला। मजिस्ट्रेटके सामने दलील पेश की गई कि उनके हुक्मके अनुसार श्री भाभाके ट्रान्सवालमें रहनेमें कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए, क्योंकि उन्हें इस देशमें प्रवेश करनेका अधिकार पहलेसे है। मजिस्ट्रेटने यह दलील स्वीकार नहीं की और श्री भाभाको कमसे-कम, अर्थात् एक महीनेकी साधारण कैदकी सजा सुना दी। अब श्री भाभाने फिरसे अपील की है, और ऐसी आशा की जाती है कि वे इस अपीलमें जीतेंगे।

जमीनके बारेमें महत्त्वपूर्ण निर्णय

सर विलियम स्मिथके सामने इस हफ्तेमें एक दरखास्त आई थी। उसपर उन्होंने जो निर्णय दिया वह महत्त्वपूर्ण है। यहाँके सुपरिचित सेठ मुहम्मद कासिम कमरुद्दीनने श्री चेम्बरलेनका देहान्त हो जानेसे अपनी सारी जमीन दूसरे यूरोपीयके नामपर चढ़वानी चाही। पजीयकने ऐसा करनेसे इनकार कर दिया। तब उन्होंने अदालतसे आज्ञा माँगी। पहले तो न्यायाधीशने स्वय ही यह आपत्तिकी कि ऐसा करनेके लिए वारिसकी सम्मति चाहिए। न्यायाधीश स्मिथके सामने यह दलील दी गई कि उस जमीनपर वारिसका कोई हक नहीं था। इस दलीलको न्यायाधीश महोदयने मान्य करके दूसरे यूरोपीयके नामपर उक्त जमीन चढानेका हुक्म दे दिया। इससे यह समझा जा सकता है कि यदि पर्याप्त सावधानीसे गोरोंके नाम जमीन रखी गई हो तो असली मालिकको कोई नुकसान नहीं हो सकता।

मलायी बस्ती

नगर-परिषदको मलायी बस्तीके बारेमें बस्ती-समितिकी तरफसे अर्जी दी गई थी। उसके उत्तरमें नगर-परिषदने कहा है कि मलायी बस्ती जहाँ है, वहाँ नहीं रहने दी जायेगी; वहाँके

रहनेवालोंको लम्बी अवधिका पट्टा नहीं दिया जायेगा; परन्तु उन्हें क्लिपस्प्रूटमें पट्टेपर जमीन दी जायेगी। समितिने इस जवाबका विरोध करना तय किया है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५-८-१९०६

४१६. स्वर्गीय उमेशचन्द्र बनर्जी

श्री उमेशचन्द्र बनर्जीके देहावसानका समाचार हम दुःखपूर्वक प्रकाशित करते हैं। उनकी गिनती आधुनिक कालके सबसे बड़े भारतीय देशभक्तोंमें थी। वे उन देशभक्तोंमें थे जिन्हें नौरोजीकी परम्पराका कहा जा सकता है और जो अपने समय एवं बुद्धि-बलका पूरा उपयोग अपने देशके हितके लिए किया करते थे। श्री बनर्जी बंगालके अग्रगण्य बैरिस्टरोंमें से थे और उन्होंने अपने सूक्ष्म कानूनी ज्ञान तथा नैय्यायिक वाग्मिताके कारण अपने कार्यकालके आरम्भमें ही ख्याति पा ली थी। इससे उन्हें असाधारण प्रभावकी प्राप्ति हुई, जिसका उपयोग उन्होंने अपने देशके लाभके लिए किया। वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके जन्मदाताओंमें से एक थे, और उसके प्रथम अध्यक्ष भी थे। वे अपने जीवनके अन्तिम दिन तक उसकी सेवा करते रहे और मुक्तहस्त होकर अपना धन सार्वजनिक कार्योंमें लगाते रहे।

श्री बनर्जीका पाश्चात्य शिक्षामें बहुत विश्वास था। वे स्वयं उसकी एक श्रेष्ठ उपज थे। इसलिए उन्होंने क्रायडनमें एक मकान खरीदा था। वहाँ वे अपना आधा समय अपने बच्चोंकी शिक्षाकी देखरेखमें खर्च करते थे। फलतः उनके लड़कों एवं लड़कियोंको उदार शिक्षा मिली है जिसका उपयोग वे भी अपने पिताकी भाँति सार्वजनिक सेवामें कर रहे हैं।

श्री बनर्जीके जैसे जीवनसे वर्तमान पीढ़ीके भारतीय युवकोंको अनेक शिक्षाएँ मिलती हैं। अतः स्वर्गीय आत्माके प्रति भारतीय अपनी सर्वोत्तम श्रद्धांजलि उनके उदाहरणके अनुकरणके रूपमें ही दे सकते हैं। हम आदरपूर्वक श्री बनर्जीके कुटुम्बके प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट करते हैं। उसकी क्षति भारतकी भी क्षति है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५-८-१९०६

४१७. फर्ककी हिमायत

'जोहानिसबर्ग स्टार' में हाल में ही "रगदार लोगोकी गुडागिरी" पर एक बड़ा कड़ा अग्र-लेख प्रकाशित हुआ था। लेखकके विचारोका आधार केप टाउनमे हुए हालके दगे थे। हमारे सहयोगीने "रंगदार लोगो" और मलायी तथा अन्य लोगोके बीच, जिन सबको भी "रगदार" ही कहा जाता है, भेद करनेकी सावधानी बरती है। किन्तु इसमें कोई सन्देह नही हो सकता कि अखबारके सामान्य पाठककी दृष्टिमें "रगदार लोगो" का अर्थ है — मलायी, ब्रिटिश भारतीय तथा अन्य सब एशियाई। 'स्टार' द्वारा किये गये इस भेदमें ही गृहीत है कि जनताके मस्तिष्कमें यह भ्रम मौजूद है।

एशियाइयो और दूसरोको "रंगदार लोगो" की श्रेणीमें रखनेसे दक्षिण आफ्रिकी ब्रिटिश भारतीयोके साथ बहुत-सा अनुचित अन्याय हुआ है। सबसे ज्वलन्त उदाहरण तो वह है जो श्री विन्स्टन चर्चिलने दिया है। सहायक उपनिवेश-मन्त्रीने इस बिनापर ब्रिटिश भारतीयोका मताधिकारसे वचित किया जाना उचित ठहराया है कि डच लोग "वतनी" शब्द — इस प्रसगमें "रगदार लोग" — का अर्थ किसी भी गैर-यूरोपीय देशके निवासी मानते थे। हम जानते है कि लॉर्ड मिलनरने उक्त संज्ञाके ऐसे प्रयोग, या दुष्प्रयोग, का विरोध किया है, परन्तु उनका विरोध उपर्युक्त अन्यायसे ब्रिटिश भारतीयोकी रक्षामें सहायक नही हुआ है।

इस समय ट्रान्सवाल और ऑरेंज रिवर कालोनीकी विधान-पुस्तकोमे ऐसे कानून है जो केवल इसलिए ब्रिटिश भारतीयोपर लागू होते है कि रिवाजके अनुसार "रगदार लोग" संज्ञा ब्रिटिश भारतीयोपर लागू है, यद्यपि कानूनके भावसे लोग यही समझते है कि इसको ब्रिटिश भारतीयोपर, जो दोहरी पीड़ा भोगते है, लागू करना बिलकुल अनावश्यक है। वे उन निर्योग्यताओसे भी पीड़ित है, जो "रंगदार लोगो" पर लागू है, और इस कारण भी कि वे एशियाई है। इस तरह, नाजायज सोना सम्बन्धी कानून (इल्लीसिट गोल्ड लॉ) और ट्रान्सवालके पैदल पटरी सम्बन्धी विनियम उनपर इसलिए लागू होते है कि वे "रंगदार लोग" है; और १८८५ का कानून ३ उनपर इसलिए लागू होता है कि वे एशियाई है। अतएव, वास्तवमे उनकी स्थिति उन "रगदार लोगों" से गई-गुजरी है जो एशियाई नही है।

हम समझते है कि हमने ऊपरके उदाहरणोसे काफी साफ तौरपर दिखा दिया है कि यदि ब्रिटिश भारतीयोके साथ न्याय करना इष्ट है, तो उनको आइन्दा "रंगदार लोगो" की श्रेणीमे नही रखना चाहिए। यह बात हम किसी अप्रिय तुलनाकी इच्छा किये बिना कर रहे है। अपने अस्तित्वके अधिकारकी लड़ाईमे "रंगदार लोगों" और ब्रिटिश भारतीयोंको भिन्न-भिन्न स्थलोंपर प्रहार करना है। उनको पृथक्-पृथक् मार्गोसे न्याय प्राप्त करना है और यदि सरकार तथा प्रचारक उन दोनोंके बीच भेद करनेके महत्त्वको स्वीकार कर लें तो अच्छा होगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५-८-१९०६

४१८. हिन्दुओंके श्मशानकी स्थिति[1]

श्री डोघर्टीने हिन्दुओके श्मशानकी स्थितिके बारेमें हमे एक पत्र लिखा है। डर्बनके हिन्दुओंका ध्यान हम उसकी ओर आकर्षित कर रहे है। यदि इस श्मशानकी स्थिति वैसी ही हो जैसी श्री डोघर्टीने बताई है तो हिन्दुओके लिए यह बहुत ही लज्जा और कलंककी बात मानी जायेगी। श्मशान स्वच्छ तथा अच्छी स्थितिमें रखना हर हिन्दूका कर्त्तव्य है। ऐसा न करनेसे कानून और स्वास्थ्यके नियमका तो उल्लंघन होता ही है; मनुष्य जातिके नाते ऐसी बातोंके विषयमें हमे जो कोमल भावना रखनी चाहिए, उस नियमका भी उल्लंघन होता है। हमें श्मशानकी स्थितिके विषयमें और भी अनेक पत्र मिले है। वे चुटीले है और उनमें हिन्दू जातिकी आलोचना की गई है, इसलिए हमने उन्हे प्रकाशित नहीं किया। किन्तु हमें हर हिन्दूसे कहना चाहिए कि और बातोंमे चाहे जैसे झगड़े हों, मरण-जैसी स्थितिके समय अपनी वृत्तियोंको कोमल और पवित्र रखना हमारे लिए बहुत ही आवश्यक है। और यदि ऐसा न करे, तो यह हमारी बहुत बड़ी कमी मानी जायेगी, इसे प्रत्येक व्यक्ति स्वीकार करेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५-८-१९०६

४१९. ईरानका मामला

हालमे ईरानके शाहने ऐलान किया है कि आर्थिक दिवालियेपनकी परिस्थितिसे निकलनेके लिए प्रजा परिषद बुलवाई जायेगी। ईरान इस स्थितिमे पहुँचा, इसका मुख्य कारण शाहका उड़ाऊ-पन है। इस वर्षके प्रारम्भमें प्रजा वर्तमान राज्यके विरुद्ध इतनी उत्तेजित थी कि सैकड़ों व्यापारी और मुल्ला तेहरान छोड़कर चले गये थे। इससे घबराकर शाहने मुल्लों, व्यापारियो और जमींदारोंकी चुनी हुई परिषद बुलानेका वचन दिया है; किन्तु कोषके सम्बन्धमें जो गम्भीर परिस्थिति उत्पन्न हो गई है वह शायद ही सुधरे। वर्तमान शाह मुजफ्फरुद्दीनने १० वर्षके भीतर ईरानको इस स्थितिमें ला छोड़ा है। ईरानका सारा राजस्व शाहके हाथमें है। पहलेके शाहोने थोडा-बहुत निजी धन जोड़ लिया था। वर्तमान शाहके पास २० लाख पौड थे। हिसाब लगानेपर मालूम हुआ है कि निजी धन खर्च हो गया है और वार्षिक आयके १५ लाख पौड भी खर्च हो जाते है। इतना ही नही, इसके अतिरिक्त ४० लाख पौडका कर्ज भी हो गया है। देश दिनोदिन गरीब होता जा रहा है। करका बोझ मुख्यतः मजदूर वर्गपर है। पिछले दो-चार वर्षोमें यूरोपके दौरों और महलकी शान-शौकतपर बहुत दौलत उड़ाई गई है। ईरानकी ऐसी खराब स्थिति हो गई है कि उसका वर्णन करते हुए जोहानिसबर्गके 'रैंड डेली मेल' ने कहा है कि इस गम्भीर स्थितिका रूस लाभ न उठा ले, इसके लिए सावधान रहना जरूरी है। क्योंकि, भारतके पडोसमे रूस पॉव जमा ले तो अंग्रेज सुखसे नही बैठ सकेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २५-८-१९०६

१. देखिए "हिन्दू श्मशान", पृष्ठ ४२६।

४२०. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

जोहानिसबर्ग
अगस्त २५, १९०६

सेवामे
माननीय उपनिवेश-सचिव
प्रिटोरिया

महोदय,

मैं ब्रिटिश भारतीय संघकी ओरसे २२ तारीखके 'गवर्नमेंट गजट' में प्रकाशित एशियाई कानून संशोधन अध्यादेशका, जो अभी मसविदेके रूपमें है, सम्मानपूर्वक विरोध करता हूँ।

मेरे संघकी नम्र सम्मतिमें उपर्युक्त प्रस्तावित अध्यादेशसे भारतीय समाजमें सख्त नाराजगी पैदा होगी और उसकी कोमल भावनाओको ऐसी चोट पहुँचेगी जिसका अन्दाज लगाना कठिन है।

आदरपूर्वक निवेदन है कि इस मसविदेसे ब्रिटिश शासको द्वारा संजीदगीके साथ बार-बार किये गये वादे बिलकुल मन्सूख हो जाते है और यह श्री लिटिलटन एव लॉर्ड मिलनरके खरीतोंके विरुद्ध पड़ता है।

इस मसविदेसे ब्रिटिश भारतीयोको मिलता कुछ भी नहीं; बल्कि उनसे बहुत-कुछ छिन जाता है, और वह भी ऐसे तरीकेसे जो, श्री चेम्बरलेनके शब्दोंमें, ट्रान्सवाल-वासी ब्रिटिश भारतीयोके लिए "अनावश्यक रूपसे अपमानजनक" है।

मेरा संघ सम्मानपूर्वक आग्रह करता है कि यदि अध्यादेशके इस मसविदेका उद्देश्य यह है कि जो ब्रिटिश भारतीय उपनिवेशमे कानूनी अधिकारसे न रह रहे हों, उनको हटा दिया जाये, तो उनके पास इस समय जो भी कागजपत्र हो उनके निरीक्षणमात्रसे उनकी भावनाओको चोट पहुँचाये बिना, यह जरूरत बिलकुल पूरी हो जायेगी और इससे उपनिवेश उस भारी खर्चसे भी बच जायेगा, जो प्रस्तावित अध्यादेशमे दिये गये तन्त्रपर होना आवश्यक है।

मेरे संघको यह कहनेमें कोई हिचकिचाहट नही है कि इस मसविदेसे उस शक्तिका अचूक पता चल जाता है जो एक प्रबल दलको उन असहाय लोगोके विरुद्ध प्राप्त है, जिन्होंने उनको नाराज करनेकी कोई बात नही की है। इससे यह भी प्रकट होता है कि उक्त दल पूरी कठोरतासे और उन असहाय पीड़ितोंकी भावनाओकी जरा भी परवाह किये बिना, उस शक्तिका प्रयोग करना चाहता है। यह भाषा कठोर तो मालूम होगी; परन्तु यदि इसपर ब्रिटिश भारतीयोके दृष्टिकोणसे विचार करें तो प्रयुक्त भाषासे उन ब्रिटिश भारतीयोकी सच्ची भावनाएँ व्यक्त होती हैं जिन्होंने अध्यादेशका अध्ययन किया है।

मेरा संघ अध्यादेशके मसविदेकी अन्य अत्यन्त आपत्तियोग्य बातोके अतिरिक्त उसके निम्न पहलुओंकी ओर सरकारका सच्चा ध्यान आकर्षित करता है:

(क) १८८५ के कानून ३ में "एशियाई" शब्दकी जो अपमानजनक और गलत परिभाषा दी गई है और जिसमें अज्ञानवश तथाकथित "कुलियो, अरबो, मलायी लोगो तथा तुर्की राज्यके मुसलमान प्रजाजनो" को शामिल कर लिया गया है, उसपर मसविदेकी धारा २ से ब्रिटिश सरकारकी स्वीकृतिकी मुहर लग जाती है। ऐसी परिभाषा एशियाइयोंके लिए अपमानजनक है, क्योंकि

उसम सिर्फ कुलियोंकी ही बात की गई है और एशियाके सम्पूर्ण अधिवासियोंके लिए इस शब्दका प्रयोग स्थायी हो जाता है। यह परिभाषा अवास्तविक है, क्योंकि यहाँ अरब और तुर्की राज्यके मुसलमान प्रजाजन शायद ही हैं। इससे मलायी लोगोंके साथ घोर अन्याय होता है, क्योंकि १८८५ के कानून ३ के अनुसार आजतक वे कभी नही सताये गये हैं और न उनको कभी यह दुर्भाग्य ही प्राप्त हुआ है कि वे ब्रिटिश भारतीयोंकी भाँति व्यापारमें यूरोपीयोंके प्रतिद्वन्द्वी गिने जायें।

(ख) जब कि मसविदेसे उपनिवेशवासी प्रत्येक एशियाईको असंख्य परेशानियाँ होती है, उससे ट्रान्सवालके युद्धसे पहलेके निवासियोंकी, जो अभीतक उपनिवेशमे नहीं लौटे है, स्थिति पहलेकी भाँति ही अनिश्चित, अस्पष्ट और दुःखजनक बनी रहती है।

(ग) उसमे कप्तान हैमिल्टन फाउलके मेहनतसे किये गये पंजीकरणका भी ध्यान नही रखा गया है। यहाँ इसका उल्लेख किया जा सकता है कि कप्तान फाउलने पंजीकरणका जो कार्य किया था, उसकी व्यवस्था भारतीय समाजकी सलाहसे की गई थी। भारतीयोंने लॉर्ड मिलनरकी सम्मतिको नम्रता एवं शिष्टतासे मानकर पंजीकरण मंजूर कर लिया था, यद्यपि, जैसा कि स्वीकार किया गया था, जो लोग पिछली सरकारको तीन पौंड [कर] दे चुके थे उनके सम्बन्धमें इसके पीछे कोई कानूनी बल नहीं था। इसकी और समाजके अन्य स्वेच्छापूर्वक किये गये कार्योंकी अध्यादेशके मसविदेमें चर्चा भी नही है।

(घ) धारा ३ में जान-बूझकर उन सुविधाओंको भी कम कर दिया गया है, जो शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत भारतीय समाजको प्राप्त थीं। जैसा कि सरकार अच्छी तरह जानती है, इस आशयका एक अदालती फैसला मौजूद है कि जिस ब्रिटिश भारतीयके पास पंजीकरणका पुराना डच प्रमाणपत्र है उसको नया अनुमतिपत्र लिये बिना उपनिवेशमें प्रवेश करनेका अधिकार है। धारा ३ की उपधारा २ से यह फैसला रद हो जाता है।

(ङ) जब कि १८८५ के कानून ३ के अन्तर्गत और सर्वोच्च न्यायालयके हालके फैसलेके अनुसार ट्रान्सवालमें व्यापारके उद्देश्यसे बसनेके इच्छुक बालिग मर्दोको ही पंजीकरण कराना आवश्यक है, वर्तमान अध्यादेशसे ८ सालसे ऊपरका प्रत्येक भारतीय स्त्री-पुरुष पंजीकरणके लिए बाध्य होगा। यदि मेरे संघकी आशंका ठीक है तो यह कानून नारीकी शालीनतापर, उसका जो अर्थ मेरे लाखों देशवासी समझते है उस अर्थमें, आघात करनेवाला होगा। मेरा संघ जिस समुदायका प्रतिनिधित्व करता है उसकी युगोंसे प्रेमपूर्वक पोषित भावनाएँ बुरी तरह कुचल जायेंगी। यदि पंजीकरण कानूनपर अमल किया गया तो इसका यही अर्थ होगा कि सम्राट्की सरकारने प्रत्येक भारतीयको अपराधी घोषित कर दिया है। जहाँतक मेरे संघकी जानकारी है, ब्रिटिश उपनिवेशोंमें मुक्त भारतीय आबादीके सम्बन्धमें इस प्रकारका कानून अज्ञात है।

(च) तीन पौंडी शुल्ककी माफी तो, मेरे संघकी नम्र सम्मतिमें, जलेपर नमक छिड़कनेके समान है; क्योंकि उपनिवेशमें इस समय रहनेवाले प्रायः सभी एशियाई पंजीकृत है और कई तो ३ पौंडी कर दो-दो बार दे चुके हैं।

(छ) धारा १७ की उपधारा ४ मे लेफ्टिनेन्ट गवर्नरको अधिकार दिया गया है कि वह अस्थायी अनुमतिपत्र प्राप्त किसी ब्रिटिश भारतीयको मद्य-परवाना अध्यादेशकी शर्तोंसे मुक्त कर सकता है। यह जलेपर नमक छिड़कनेकी दूसरी मिसाल है। मेरे संघको ऐसे किसी स्वाभिमानी भारतीयका पता नहीं है जो ऐसी महँगी छूट चाहता हो।

प्रस्तावित अध्यादेशमें आपत्तियोग्य और भी अनेक बातें गिनाई जा सकती है; परन्त मेरे सघका विश्वास है कि ऊपर यह दिखानेके लिए काफी लिखा जा चुका है कि ब्रिटिश भारतीयोंके लिए इस अध्यादेशका क्या मतलब है।

मेरे संघको यह कहनेके लिए क्षमा किया जाये कि धारा २१ मे जो छूट देनेकी व्यवस्था है, उसको भारतीय समाज छूट ही नही मानता। यदि सरकार एक ब्रिटिश प्रजाजनको अपनी पैत्रिक सम्पत्तिपर अधिकारकी अनुमति देकर अपने सीधे-सादे कर्त्तव्यका पालन करना चाहती है तो यह सामान्य समाजके लिए कोई छूट नही है। जहाँतक धार्मिक कार्योंके लिए ब्रिटिश भारतीयो द्वारा अचल सम्पत्तिके अधिकारकी अनुमति देनेका सवाल है, मेरे सघको सलाह दी गई है कि हालमे ही एक मुकदमेमें विटवॉटर्स रैंड उच्च न्यायालय द्वारा दिये गये फैसलेके बाद इस व्यवस्थाकी कोई आवश्यकता नही रह जाती।

शीघ्र ही उपनिवेशमे उत्तरदायी सरकारकी स्थापना की जायेगी। इसलिए मेरा संघ सम्मानपूर्वक अनुरोध करता है कि यदि सरकार ब्रिटिश शासकोके बार-बार दिये गये वचनोके अनुसार वास्तविक एवं पर्याप्त राहत देनेको तैयार नही है तो १८८५ के कानून ३ को ज्यों-का-त्यो रहने दिया जाये और सम्राट-सरकारकी सलाहसे सम्पूर्ण स्थितिको सम्भालनेका काम उत्तरदायी शासनपर ही छोड़ दिया जाये।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–९–१९०६

४२१. पितामह चिरजीवी हों[1]!

आगामी चार सितम्बरको भारतके वयोवृद्ध देशभक्त माननीय दादाभाई नौरोजीकी बयासीवी वर्षगाँठ है। वे हमारे देशके लिए उससे भी ज्यादा "महान वृद्ध पुरुष" है जितने इंग्लैंडके लिए स्वर्गीय श्री ग्लैड्स्टन थे। श्री नौरोजीके अथक रूपसे भारतके पक्षमें लड़ते रहने, आशाके विरुद्ध भी आशावान बने रहने और स्वेच्छासे निर्वासितका जीवन व्यतीत करनेका, तथा नवयुवकोके लिए भी गौरवदायी उनकी अविरल कार्यशक्तिका नजारा भव्य, उन्नयनकारी और स्फूर्तिप्रद है। जबतक भारतमे श्री नौरोजी जैसा एक भी व्यक्ति पैदा होता है, तबतक न्यायपूर्वक कोई भी यह नही कह सकता कि भारतकी अधोगति हो रही है। भारतकी सेवा ही उनके जीवनका श्वास है। वही उनका धर्म है और वही उनका एकमात्र धन्धा। उन्होने जिस प्रकार अपना सर्वस्व भारतके लिए अर्पित कर दिया है वह अनुपम है। हमारा यह खयाल होना स्वाभाविक है कि उन्हें लक्ष्यके प्रति अपने उत्कट प्रेम और निष्ठासे ही उम्रके भारको इतनी सरलतासे ढोनेकी शक्ति प्राप्त हुई है। हम यह भी कह सकते है कि उनके इतने विशुद्ध आत्मत्यागके कारण उनपर जो ईश्वरीय अनुग्रह है, यह उसका परिणाम भी है। हम दक्षिण आफ्रिकी भारतीयोंको तो ऐसे जीवनसे अनेक शिक्षाएँ मिलती हैं। उन्होंने समस्त भारतके समक्ष अपना जो जीवन रखा है उसका हमे अनुकरण करनेकी चेष्टा करनी चाहिए। इससे बड़ी कोई श्रद्धांजलि हम लोग इन महान वृद्ध पुरुषको नही दे सकते, और न इनपर और अधिक

१. यह और इसके बाद दिये गये तीनों लेख २७ अगस्त १९०६ के पूर्व लिखे गये थे। देखिए "पत्र: छगनलाल गांधीको", पृष्ठ ४१७।

ईश्वरीय अनुग्रहके लिए इससे अधिक हार्दिक हमारी कोई प्रार्थना ही हो सकती है। हमें पूरा निश्चय है — वस्तुतः हम जानते हैं — कि हमें उनका जीवन-कार्य प्रिय है, हम उनके पद-चिह्नोंपर चलना चाहते हैं, और उनकी मृत्युके पश्चात् भी हम उनको अपनी स्मृति और अपने कार्योमें जीवित रखेंगे — यह जानकर उनको जितना आनन्द होगा उतना किसी अन्य बातसे नहीं। इस पत्रसे सम्बन्धित लोग तो अनेक बार अपनी परीक्षाकी घड़ियोंमें उनका स्मरण करके ऊपर उठे हैं। वस्तुतः इन महान भारतीय देशभक्तके ऊँचे उदाहरणके कारण ही हमारा यह उद्योग संभव हुआ है। हम सर्वशक्तिमान प्रभुसे हार्दिक प्रार्थना करते हैं कि वह भारतके इन पितामहको दीर्घजीवन प्रदान करें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–९–१९०६

४२२. घृणित !

किसी कानूनके सम्बन्धमें घृणित विशेषणका प्रयोग बड़ा ही कठोर प्रयोग है। तथापि, शान्तिपूर्वक सोचनेपर भी, हमें इसी मासकी २२ तारीखके असाधारण ट्रान्सवाल 'गवर्नमेंट गज़ट'में प्रकाशित एशियाई अध्यादेशके मसविदेके लिए इतना उपयुक्त कोई अन्य शब्द नहीं मिलता। ट्रान्सवाल विधान-परिषदको स्थगित करते समय श्री डंकनने जो भविष्यवाणी की थी, यह उसीकी पूर्ति की गई है। विचाराधीन विधेयकके द्वारा ट्रान्सवालके भारतीय समाजकी बुरीसे बुरी आशंकाएँ मूर्तिमन्त हो गई हैं। इससे उपनिवेशवासी अभागे भारतीयोंके साथ किये गये कितने ही पवित्र वादे टूट जाते हैं, न्याय तथा औचित्यका अंग्रेजी सिद्धान्त भी धूलमें मिल जाता है; और मानव-जाति न्याय और अन्यायकी जिन सामान्य धारणाओंसे पिछले कितने ही युगोंसे परिचित है वे भी कुचल जाती हैं। दूसरे स्तम्भमें हम ब्रिटिश भारतीय संघका कठोर शब्दावलीयुक्त विरोध[1] छाप रहे हैं, परन्तु इस प्रकारके सरकारी कागजके लिए भी उसकी भाषा कतई सख्त नहीं है। श्री डंकनकी भाषासे हमने जितनी कल्पना की थी, यह अध्यादेश उससे बहुत आगे जाता है। इससे भारतीयोंके मस्तिष्कमें इतनी अशान्ति उत्पन्न हो गई है जितनी दक्षिण आफ्रिकामें किसी कानूनसे कभी नहीं हुई थी। उसके गृह-जीवनकी पवित्रतामें हस्तक्षेप होनेका खतरा है। इसके सामने १८८५ का कानून ३ बिलकुल फीका पड़ जाता है। इसका सबसे दुःखद अंश तो यह तथ्य है कि बोअर सरकारने हकीकतको बिना समझे, अधिक हानि पहुँचानेकी भावना न रखते हुए और ऐसे लोगोंके प्रति जो उसकी प्रजा न थे, जो कुछ किया था उसीको ब्रिटिश सरकार तथ्योंका पूर्ण ज्ञान रखते हुए, भारतीय समाजको हानि पहुँचानेके निश्चित इरादेसे और ब्रिटिश प्रजाके सम्बन्धमें कर रही है। अपने तरीकोंमें मौजूदा सरकार बोअर सरकारसे भी आगे बढ़ जाना चाहती है और अब वह अपने कानूनके अन्तर्गत उन लोगोंको भी ले लेगी जो डचोंके शासनमें इसकी सीमाके बाहर थे — जैसे स्त्रियाँ, बच्चे और गैर व्यापारी। हमें यह देखकर बड़ा दुःख हुआ है कि हमारे सहयोगी 'जोहानिसबर्ग स्टार' ने इस कानूनका स्वागत किया है और वस्तुतः वह इसकी कठोरतापर खुश है। इससे वर्तमान कानूनके बारेमें उसका अज्ञान प्रकट होता है और इसलिए वह ऐसी सामान्य बातोंको,

१. देखिए "पत्र: उपनिवेश-सचिवको", पृष्ठ ४११–३ ।

जिन्हें भारतीय समाज अपमानजनक समझता है, 'रियायत' का नाम देता है। 'स्टार' की भाषामे "मद्य-परवाना अध्यादेश" से "प्रतिष्ठित एशियाई यात्रियों" को मुक्त करनेकी व्यवस्था "एक विवेकसम्मत सशोधन" है। दक्षिण आफ्रिकाके एक भूतपूर्व उच्चायुक्तके एक भूतपूर्व निजी सचिव द्वारा सम्पादित पत्रकी ऐसी भाषा देखकर वर्तमान स्थानीय सरकारसे न्याय-प्राप्तिकी कोई आशा शेष नही रहती। एशियाई कानूनका संशोधन युद्धके पूर्व और पश्चात् भारतीय समाजसे किये गये वादोकी पूर्तिके लिए नही किया जा रहा है, वरन् श्री लवडे और उनके साथियोंको प्रसन्न करनेके लिए किया जा रहा है, जो प्रायः एशियाई नीतिका नियन्त्रण करते आते हैं। क्या ब्रिटिश सरकार, उपनिवेशके अपने अधीन रहते हुए भी, प्रस्तावित अन्याय चुपचाप होने देगी? यदि स्थानीय सरकारमे न्याय करनेका साहस नही है तो वह ब्रिटिश भारतीय संघके प्रस्तावको मानकर और उत्तरदायी सरकार बनने तक १८८५ के कानून ३ को वर्तमान रूपमे जारी रखकर यह मनमाना अन्याय करनेसे बच सकती है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १-९-१९०६

४२३. उपनिवेशी भारतीय अंकित कर लें!

जर्मन सैनिकोकी मुसीबतोके बारेमें हर अडॉल्फ स्टाइनका कहना है:

> रेलमार्गके अभाव (दक्षिण-पश्चिमी आफ्रिकामें) के कारण युद्धभूमि तक अधिक सामग्रीका पहुँचना असम्भव हो गया है और युद्धके आरम्भसे ही सेनाको कम खाद्य पदार्थ प्राप्त होते रहे है; और युद्ध आरम्भ हुए ढाई वर्ष हो गये है। सैनिक महीनोंसे रोटी और नमकके बिना गुजर कर रहे है और बीच-बीचमें ऐसा समय भी आया है जब उन्हें खच्चरोंके मांसपर रहना पड़ा है। ये खच्चर, तोपखाने ढोनेके लिए थे, परन्तु भूखे सैनिकोंको भोजन मुहैय्या करनेके लिए इन्हें कत्ल करना पड़ा। इन सैनिकोंको, अक्सर बिना एक बूँद पानी या किसी अन्य पेयके, चालीस-चालीस घंटों तक लड़ना या कूच करना पड़ा है। उनकी वर्दियोंके चिथड़े हो गये हैं और उनके बदले हर तरहके बचे-खुचे कपड़े दे दिये गये है, जिससे वे भौंड़े दिखाई पड़ते हैं। उनके जूते घिस गये हैं और उनकी जगह मारे हुए बैलोंके चमड़ेसे बनी सैंडल काममें लाई जा रही है। फिर भी, इन मुसीबतोंकी परवाह न करते हुए, सेनाने बिना डिगे अपने कर्तव्यका पालन किया है।

दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोके लिए, विशेषतः उनके लिए जो इस उप-महाद्वीपमे जन्मे और पले है, इन पक्तियोमे बहुत अर्थ भरा हुआ है। यह याद रखना चाहिए कि ये सैनिक — इनमें से कुछ — सामान्य नागरिक पेशोसे सेनामें आये है। कोई भी देश अपने निवासियों द्वारा मुसीबत उठाये और आत्मोत्सर्ग किये बिना महान नही बना है। हम प्राय दक्षिण आफ्रिकी ब्रिटिश भारतीयोकी निर्योग्यताओकी बात करते है, और हमें उनकी शिकायत करने और उनसे राहत पानेका हक है, किन्तु जैसा कि एक सम्मानित मित्रने इन स्तम्भोंमे कुछ महीने पहले लिखा था, ब्रिटिश भारतीयोका उद्धार अन्ततोगत्वा उनके अपने प्रयत्नोसे ही होगा और यह

तभी होगा जब भारतकी उठती पीढ़ी अपने जातीय कर्तव्यको समझेगी और वसी सब कठिनाइयों और मुसीबतोंको सहनेके लिए तैयार होगी,] जैसी कि दक्षिण-पश्चिमी आफ्रिकामें जर्मन सैनिक सहन कर रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–९–१९०६

४२४. केप परवाना अधिनियम

केप सरकारके इस मासकी २१ तारीखके 'गजट' से हमें ज्ञात होता है कि केप परवाना-विधेयक संसदका अधिनियम बन गया है और इसके बाद वह निश्चित रूपसे अन्य सभी व्यापारियोंके समान भारतीय व्यापारियोंपर लागू होगा। विधेयकमें इतने परिवर्तन हो चुके हैं कि इस अधिनियममें मूल विधानकी खोज निकालना सम्भव नहीं है। निस्सन्देह, कुछ बातोंमें यह सख्त है। सर्वोच्च न्यायालयमें अपील करनेका अधिकार निश्चित रूपसे छीना नहीं गया है; पर विचारणीय प्रश्न यह है कि परवाना निकायों द्वारा जो फैसला दिया जायेगा वह क्या इस योग्य होगा कि सर्वोच्च न्यायालय उसपर पुनर्विचार करे? फिर, मूल विधेयकमें इच्छुक प्रार्थियोंके लिए करदाताओंके बहुमतकी स्वीकृति प्राप्त करनेके रूपमें जो बचाव रखा गया था, वह खत्म कर दिया गया है। साथ ही हिसाब केवल अंग्रेजीमें ही रखनेका नियम हटा दिया गया है। हमने इस धाराको कभी भी कोई महत्त्व नहीं दिया; यह निर्दोष थी, और हम यहाँ यह बता दें कि यद्यपि हिसाब रखनेके विषयमें कुछ स्पष्ट नहीं कहा गया है, फिर भी यदि प्रार्थी नगरपालिकाके अधिकारियोंको सन्तोषजनक ढंगसे यह नहीं बता सकें कि वे अपने व्यापारका समझमें आने योग्य हिसाब रखनेमें समर्थ हैं तो नगरपालिकाके अधिकारियोंका उन्हें परवाने देनेसे इनकार करना सर्वथा उचित होगा। व्यापारिक परवानोंपर लगाये गये सुनियमित नियन्त्रणको हमने सदैव न्यायसंगत माना है। इसलिए हम सोचते हैं कि अधिनियमको निष्पक्ष परीक्षणका अवसर दिया जाना चाहिये। परन्तु बहुत कुछ तो इस बातपर निर्भर करेगा कि परवाना निकाय अपने नवप्राप्त अधिकारोंका किस प्रकार उपयोग करते हैं। स्वर्गीय श्री एस्कम्बके शब्दोंमें हम विश्वास करते हैं कि 'एक राक्षसकी शक्ति' प्राप्त कर लेनेपर वे उसका उपयोग दैत्यकी भाँति ही नहीं करेंगे बल्कि न्यायको क्षमाशीलतासे आर्द्र रखेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १–९–१९०६

४२५. पत्र : छगनलाल गांधीको

जोहानिसवर्ग
अगस्त, २७, १९०६

चि० छगनलाल,

आज रात मैं तुम्हें तीन सम्पादकीय लेख भेज रहा हूँ। निस्सन्देह जो दादाभाईके[1] बारेमें है उसका पहला, जो जोहानिसवर्गके[2] बारेमें है उसका दूसरा और उपनिवेशमे जन्मे हुए भारतीयो सम्बन्धी टिप्पणीका[3] स्थान तीसरा होना चाहिए। लिखनेके लिए तो बहुत है किन्तु बहुत थक गया हूँ और समय भी नही है कि तुम्हे ज्यादा कुछ दे सकूँ। एक या दो लेख शायद कल भेज सकूँगा। वे गुरुवारको तुम्हारे पास पहुँच जायेंगे। अब करीब ५ बज गये हैं; तुम्हे कुछ गुजराती देनेकी मैं कोशिश करूँगा, कमसे-कम दादाभाईके बारेमे एक लेख। सम्भव हो तो अगले हफ्ते दादाभाईकी तसवीर पूरककी तरह दो। ब्रायन गैब्रियलके पास नेगेटिव है; उन्हे बिना कुछ लिये काम कर देना चाहिए। ब्लॉक अच्छा छपे। पूरकके बारेमें मैं तो तुम्हे तार देनेवाला था; किन्तु सोचता हूँ हम जल्दी न करें। अगले हफ्ते वह बहुत अच्छा निकल सकेगा। केप अधिनियमके[4] बारेमें मैं एक और लेख दे रहा हूँ। इस तरह तुम्हारे पास ४ लेख हो गये।

मोहनदासके आशीर्वाद

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
फिनिक्स
नेटाल

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३६८) से।

१. देखिए "पितामह चिरजीवी हों!", पृष्ठ ४१३-४।
२. देखिए "घृणित!", पृष्ठ ४१४।
३. देखिए "उपनिवेशी भारतीय अंकित कर लें!", पृष्ठ ४१५-६।
४. देखिए "केप परवाना अधिनियम", पृष्ठ ४१६।

४२६. तार : 'इंडिया'को

जोहानिसबर्ग
अगस्त २८, १९०६

एशियाई-अध्यादेशका जो मसविदा प्रकाशित किया गया है, सब पिछले वादोंको भंग करता है, और बोअर शासनसे लिये गये वर्तमान कानूनसे बदतर है। स्त्रियों और आठ सालसे ऊपरके बच्चोंके लिए पंजीयन कराना जरूरी करके वह भारतीयोंकी भावनाको धक्का पहुँचाता है। भारतीयोंने, जिन्हें दो बार पंजीयन करानेके लिए कानूनन बाध्य किया जा चुका है, पिछली बार लॉर्ड मिलनरको प्रसन्न करनेके लिए स्वेच्छासे पंजीयन करा लिया था। यह तीसरा पंजीयन अनावश्यक भी है और अत्याचारपूर्ण भी। प्रस्तावित अध्यादेशका मंशा मनमाना अपमान करना है, जिसके सामने सिर झुकानेसे भारतीय पुराने कानूनका जारी रहना पसन्द करते हैं। गैरकानूनी प्रवेशके आरोपका प्रतिवाद और एक जांच-आयोगकी नियुक्तिका निवेदन किया जाता है।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया, ३१-८-१९०६

४२७. जापानके वीर कोडामा

गत मास टोकियोमें बिना किसी बीमारीके एकाएक जनरल कोडामाका देहान्त हो गया। वे जापानकी समुराई नामक क्षत्रिय जातिमें पैदा हुए थे, और इसलिए स्वभावतः ही कुशल सैनिक थे। इसके सिवा वे एक नामी रणनीतिज्ञ थे। उनके मरनेसे जापानकी सेनामें एक बड़ी कमी आ गई है।

सन् १८७२ में वे जापानी सेनामें भरती हुए। वहाँ तुरन्त ही उनकी कुशलता प्रकट हुई और उसके कारण वे सेनामें बढ़ने लगे। सन् १८८० में उन्हें लेफ्टिनेंट कर्नलका ओहदा मिला। आगे चलकर १९०४ में वे जनरल हुए। पिछले रूसी-जापानी युद्धके समय वे मार्शल कोयामाके मुख्य सरदार थे। जापानी लोगोंके स्वभावके अनुसार लड़ाईके समय वे हमेशा बहुत ही धैर्यवान और गम्भीर रहते थे, कभी भी उतावली नहीं करते थे। लाईयांगके खूँख्वार युद्धके समय जब रूसी सेनाने जापानियोंपर भयंकर हमला किया, उस समय वे नाश्ता कर रहे थे। रूसी हमला सेनापति कोडामाके डेरेकी तरफ ही शुरू हुआ था। इसलिए साथी सैनिकोंने अपने सरदारको सुरक्षाकी दृष्टिसे निर्भय स्थानपर जानेको कहा। तब उन्होंने उत्तर दिया — "ऐसा हो ही नहीं सकता। मुझे भागता हुआ समझकर मेरे सिपाही भयवश शंकित हो जायेंगे। इसलिए यहीं रहना अच्छा है।" अपने नायककी ऐसी हिम्मतसे सैनिकोंकी हिम्मत बढ़ी और वे रूसी छापेको पीछे ढकेलनेमें कामयाब हुए।

सेनापति कोडामाका शारीरिक गठन और रूप-रंग अंग्रेजों-जैसा था। १६ वर्षकी उम्रमें जापानकी सरकारने उन्हें पश्चिमी युद्ध-कलाका अभ्यास करनेके लिए यूरोप भेजा था। उस

युद्ध-ज्ञानकी परीक्षा उन्होंने चीनी लड़ाईके समय दी। उस समय उन्होंने जो सेवा की थी, उसकी कद्र करके मिकाडोने उन्हे "बैरन" का खिताव प्रदान किया। वे जापानके सुयोग्य पुरुष माने जाते थे, और धारणा थी कि जापानके प्रधान मन्त्रीकी जगह पहुँचेंगे। मृत्युके समय उनकी उम्र ५३ वर्षकी थी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १-९-१९०६

४२८. पत्र: छगनलाल गांधीको

जोहानिसबर्ग
सितम्बर १, १९०६

चि० छगनलाल,

तुम्हारा विस्तृत पत्र मिला, हरिलालके बारेमें तुम्हारा तार भी। अनुमतिपत्रके बारेमें मुझे दु.ख है, किन्तु उसमें कुछ नही किया जा सकता। श्री पोलकको मैंने तुम्हारी टीका पढ़कर सुनाई, वे उसपर हँसे। कहते है जब वे वहाँ थे तब तुम्हे उनसे बात करनी थी। श्री मेढ़[1] खुद थोड़े ही दिनोंके लिए काम चाहते हैं; इसलिए यदि तुम उन्हे कुछ दिनोके लिए रखना चाहो तो वे बिलकुल राजी होंगे और तुम्हे सहायता मिलनी चाहिए, इसे मैं एकदम मजूर करता हूँ। बेशक मुझे लगता है कि तुम्हे मददके लिए कोई-न-कोई चाहिए, नही तो मुझे डर है कि तुम बीमार पड़ जाओगे या कोई काम, विशेषत हिसाब, जो अब हो जाना चाहिए, पड़ा रह जाने दोगे। लेकिन अगर तुम श्री मेढ़को सिर्फ कुछ दिनोके लिए ही रखो तो उन्हे केवल ३ पौंड देना बहुत खराब होगा। उन्हे ४ पौंड मासिक कहो और यदि वे पूरी कुशलतासे काम करे तो दूसरे महीनेके उन्हे ५ पौंड मिलने चाहिए। मेरा खयाल है, श्री वेस्टके लौटनेके बाद भी तुम्हे लगभग ६ महीनेके लिए उनकी जरूरत पड़ेगी। यद्यपि मैं यहाँसे गुजराती सामग्री भेजता रहूँगा, जो राजनीतिक आन्दोलन चल रहे हैं उनसे मेरी स्थिति बहुत अनिश्चित हो जाती है। शायद मुझे इंग्लैंड जाना पड़े या शायद जेल जाना पड़े। आज मैं श्री डंकनसे मिला। मैंने उन्हे सूचित कर दिया है कि यदि कानून बन जाता है तो पंजीयन कराने या जुर्माना देनेके बजाय मैं सबसे पहले जेल जाना पसन्द करूँगा। मुझे भरोसा है कि यहाँ लोग भी दृढ़ हैं। किन्तु मुझे तो ऐसे मामलोंमें स्वभावतः ही आगे होना चाहिए। यदि यह हुआ तो इसका अर्थ शायद तीन महीनेका कारावास होगा। इसलिए बिना मुझपर निर्भर रहे तुम्हे अच्छी तरह काम चलाते रहनेकी तैयारी कर लेनी चाहिए। श्री उस्मान लतीफके नामे जो हिसाब है उसका मुझे ध्यान है; आगे-पीछे रकम वसूल कर सकूँगा, ऐसा सोचता हूँ। सुलेमान आमदकी बहियाँ तुम २०० पृष्ठकी या १०० की, अपनी सुविधाके अनुसार, छाप सकते हो। नाटकके इश्तहार कल दोपहरको मिल गये थे। क्या तुम उन्हे पार्सलके बजाय डाकसे नही भेज सकते थे? मैं सचमुच प्रसन्न हुआ हूँ कि हरिलालने डेकका टिकट लिया और सब प्रबन्ध खुद ही कर लिया। तुमने जो कागजात पता बदल कर यहाँ भेजे थे, मुझे मिल गये

१. सुरेन्द्र बापूभाई मेढ़, जिन्होंने कई वर्ष तक दक्षिण आफ्रिकामें गांधीजीके साथ और बादमें मणिलाल गांधीके साथ काम किया था।

है। ठाकरशीकी मृत्यु सुनकर मुझे सचमुच बहुत दु:ख हुआ। यह आश्चर्यजनक है कि किस तरह जवान इतनी जल्दी उठ जाते हैं। इन घटनाओंका मैं कारण पा गया हूँ, ऐसा मेरा विश्वास है; किन्तु अगर उनकी चर्चा करूँ तो वह अरण्यरोदन ही होगा। उस्मान आमदको खर्चका अन्दाज भेज देना चाहिए। श्मशान-कोष सम्बन्धी लेखको लेकर मेरे पास एक शिकायत आई है।[1] मैंने मोतीलालको लिख दिया है और उसकी चर्चा गुजराती स्तम्भोंमें करूँगा।[2] उसके बारेमें उसका शिकायत करना, और खास कर तुम्हारे खिलाफ, हास्यास्पद है। मुझे उम्मीद है, शेलतके लेखको तुमने काफी छाँट दिया होगा। मुझे बताये बिना उनका कोई भी लेख छापना तुम्हारे लिए आवश्यक नहीं है। मैंने उनसे कह दिया है कि ठीक न होंगे तो मैं उन्हें स्थान नहीं दूँगा। वुड्स ऐंड सनकी पेढीवालोंसे तुम्हें कह देना चाहिए कि उनके हाथ-पर्चे, पत्रके साथ बाँटनेसे हमें रोक दिया गया है। विज्ञापनके बारेमें मैं दादा उस्मानको लिखूँगा। मुझे तुम्हारे भेजे हुए प्रूफ समाचारपत्रके साथ ही मिले।

मोहनदासके आशीर्वाद

[पुनश्च]

कूनेकी किताब वहाँ श्री वेस्टकी कोठरीमें या तुम्हारे पास हो तो मुझे भेजना।[3]

श्री छगनलाल खुशालचन्द गांधी
फीनिक्स
नेटाल

मूल अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३७२) से।

४२९. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

जोहानिसबर्ग
सितम्बर ३, १९०६

श्री डंकनसे मुलाकात

श्री डंकनने भारतीय शिष्टमण्डलको एशियाई-अधिनियमके सम्बन्धमें मुलाकात देना स्वीकार किया था। इसलिए सर्वश्री अब्दुल गनी, ईसप मियाँ, हाजी वजीर अली, पीटर मूनलाइट और गांधी, जिन्हें ब्रिटिश भारतीय संघकी समितिने इसके लिए नियुक्त किया था, शनिवारको प्रिटोरिया गये थे। वहाँ उनके साथ श्री हाजी हबीब प्रिटोरियाकी समितिकी ओरसे शामिल हो गये। श्री डंकन ११ बजे मिले। इस सम्बन्धमें कुछ लिखनेसे पहले मुझे यह बता देना चाहिए कि जब हम प्रातः साढ़े आठ बजेकी गाड़ीमें बैठने लगे तभी मुश्किलें शुरू हो गईं। गाड़ीके सम्बन्धमें सारा इन्तजाम करनेका जिम्मा श्री चैमनेने लिया था, और उन्होंने इन्तजाम कर भी दिया था। किन्तु इस सम्बन्धमें स्टेशन मास्टरको कोई जानकारी नहीं थी। कंडक्टरको भी पता नहीं था। इसलिए उसने यह कहकर रोक दिया कि शिष्टमण्डलके सदस्य सूचना दिये बिना आये हैं। आखिर उन्हें जर्मिस्टन तक दूसरे दर्जेमें बैठना पड़ा और जर्मिस्टनसे पहले दर्जेका डिब्बा

१. देखिए "हिन्दुओंके श्मशानकी स्थिति", पृष्ठ ४१० ।
२. देखिए "हिन्दू-श्मशान", पृष्ठ ४२६ ।
३. यह वाक्य गांधीजीके हस्ताक्षरोंमें गुजरातीमें है ।

मिला। श्री डंकनके साथ बहुत बातचीत हुई। शिष्टमण्डलने श्री डंकनको बताया कि एशियाई अधिनियम भारतीयोंको किसी भी प्रकार स्वीकार न होगा। वे अपने नामोका पंजीकरण दुबारा करायें, यह सम्भव नही है। भारतीयोंने राहत माँगी थी। उसके बदले उनके लिए सरकार और भी कठिन कानून बनाना चाहती है; यह तो अन्याय ही माना जायेगा। स्त्रियो और बच्चोके पंजीकरणकी बात कभी सम्भव नही है। ऐसा डचोके समयमे नही था; और न अंग्रेजी साम्राज्यके किसी दूसरे भागमें है। अनुमतिपत्रोंके सम्बन्धमें जो अन्याय होता है उसके सम्बन्धमें शिष्टमण्डलने तफसीलवार स्थिति बताई। श्री हाजी वजीर अली और श्री हाजी हबीब बहुत जोशके साथ बोले। श्री डंकनने कहा कि इन सब बातोंपर सरकार विचार करेगी और तब जवाब देगी। मलायी लोगोंके सम्बन्धमें सवाल करनेपर श्री डंकनने जवाब दिया कि मलायी लोगोंपर १८८५ का कानून कभी लागू नही किया गया था; इसलिए उसे अब लागू करना है या नही, इस सम्बन्धमे सरकार विचार करेगी, यद्यपि वास्तविक दृष्टिसे देखें तो यह उनके ऊपर लागू होना चाहिए।

श्री ईसप मियाँको कुछ अपनी बात कहनी थी। श्री डंकनने कहा कि उन्हे दूसरी बैठकमें जाना है, इसलिए वे इसके लिए कभी फिर मिले।

दादाभाई जयन्ती

जोहानिसबर्गमें ब्रिटिश भारतीय सघकी समितिकी बैठक पिछले शुक्रवारको हुई थी। इसमे लगभग तीस व्यक्ति आये थे। बैठकमें सर्वसम्मतिसे निश्चय किया गया कि परममाननीय दादाभाई नौरोजीको उनकी ८२वी सालगिरहपर तारसे बधाईका सन्देश भेजा जाये। इसके अनुसार ४ सितम्बरको[1] माननीय दादाभाई नौरोजीको बधाईका तार[2] भेज दिया गया है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८-९-१९०६

४३०. बधाई : दादाभाई नौरोजीको

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर ४, १९०६]

जन्म-दिवसपर ब्रिटिश भारतीय संघ आपको हार्दिक बधाई देता है। प्रार्थना है देशकी सेवाके लिए आप दीर्घायु हों।

[अंग्रेजीसे]

इंडिया, ५-१०-१९०६

१. यह पत्र सम्भवतः सितम्बर ३ को प्रारम्भ और ४ या उसके बाद समाप्त किया गया हो।

२. देखिए अगला शीर्षक।

४३१. अपराध

ट्रान्सवाल सरकारके एशियाई अध्यादेशके मसविदेको हम पहले ही 'घृणित' बता चुके है।[1] इस अध्यादेशको और उसके बारेमें प्राप्त शिकायतोंकी ज्यादा गहरी जाँचके बाद यह आवश्यक है कि सरकारकी प्रस्तावित कार्रवाईको इससे भी कठोर शीर्षक दिया जाये। यदि इस अध्यादेशके सम्बन्धमे आगे कार्रवाई की जायेगी तो वह मानव-जातिके विरुद्ध अपराध होगा।

ट्रान्सवालमें आज स्त्री-बच्चे सब मिलाकर १३,००० से अधिक भारतीय नहीं हैं। स्त्रियों-बच्चोंके पास कोई ऐसा दस्तावेज नहीं है जिससे उनको देशमें प्रवेश करनेका अधिकार दिया गया हो, क्योंकि अनुमतिपत्र सम्बन्धी नियमोंके अनुसार उन्हें ऐसे दस्तावेजोंकी आवश्यकता नही है। परन्तु अध्यादेशमे अनुमतिपत्रकी जो परिभाषा की गई है उसके अनुसार वे ट्रान्सवालके वैध निवासी नही है। तब क्या वे उपनिवेशसे निर्वासित कर दिये जायेंगे, क्या स्त्रियोंको उनके पतियोसे और बच्चोको उनके माता-पिताओंसे अलग कर दिया जायेगा? कदाचित् ऐसा न होगा। फिर भी अध्यादेश प्रशासन-विभागको स्त्री-बच्चोंके अपमानका, और निर्वासनका भी, अधिकार सौंप दिया गया है।[यह पुराना अनुभव है कि निरंकुश सत्ता अच्छेसे-अच्छे लोगोंके भी हाथोंमें जानेपर उनके मानव-स्वभावके स्तरको गिराती है, और अक्सर, उनके न चाहते हुए भी, उन्हे ऐसे कार्य करनेको बाध्य करती है जिनको वे इससे भी ज्यादा उत्तरदायित्वकी अन्य परि-स्थितियोंमें कदापि न करते।] ईसाई धर्म-प्रवक्ताने, हमारे खयालसे जिसके धार्मिक सिद्धान्तोका अनुगमन करनेका दम ट्रान्सवाल सरकार भरती है, जब प्रलोभनकी निन्दा की थी तब उन्होने एक साधारण सत्य ही प्रकट किया था।

बात यहीं खतम नही होती। अध्यादेशका परिणाम यह होगा कि अध्यादेशसे पहले जारी किया गया प्रत्येक अनुमतिपत्र और पजीकरणका प्रमाणपत्र व्यर्थ हो जायेगा — अर्थात् जिनके पास ये कागज होंगे उनमेंसे प्रत्येकको एशियाई पंजीकरण-अधिकारीके सामने जाना और उसको सन्तुष्ट करना होगा कि वह ही उसका कानूनसम्मत मालिक है। ट्रान्सवालके भारतीय जानते हैं कि इसका अर्थ क्या है; उनसे सब प्रकारके अनावश्यक और प्राय: अपमानजनक सवाल पूछे जायेंगे और तीसरा प्रमाणपत्र मिलनेके पूर्व उनको एक कड़ी परीक्षासे गुजरना होगा। और यह सब किसलिए? इसीलिए कि कुछ भारतीय, जिनकी नैतिक भावनाएँ सरकारी गलतियो एवं अनावश्यक सख्तियोंसे कुठित हो चुकी है, ट्रान्सवाल उपनिवेशमें अधिकारके बिना प्रविष्ट हो गये हैं।

इस अध्यादेशको जारी करनेका एकमात्र प्रकट कारण उस निराशाजनक अयोग्यतापर परदा डालना है, जिससे वर्तमान कानूनोंका प्रशासन किया जाता है। अन्यथा हमारी मान्यता है कि वर्तमान कानून धोखे-धडीसे प्रवेशके सब मामलोंसे निपटनेके लिए काफी है। 'शान्ति-रक्षा अध्यादेश' में एक धारा है जिसके अन्तर्गत नियुक्त अधिकारियोंको अनुमतिपत्रोंके निरीक्षणका अधिकार प्राप्त है। यदि कोई अनुमतिपत्र नहीं पेश कर सकता है तो उसको गिरफ्तार और अन्तत उपनिवेशसे निर्वासित किया जा सकता है। जो लोग उपनिवेशसे न निकलेंगे उनके लिए बहुत कठोर दण्डका विधान है। हमारी मान्यता है कि यदि इन धाराओंपर विवेकपूर्वक अमल किया

१. देखिए "घृणित!", पृष्ठ ४१४।

जाये तो शीघ्र पता चल जायेगा कि एशियाई-विरोधी आन्दोलनकारियोंके वक्तव्योंमें सत्य कितना है। यह एक विचित्र बात है कि इस उपलब्ध समर्थ साधनको इस्तेमाल करनेके बजाय सरकारने छुपकर उपनिवेशमें प्रवेश करनेवाले लोगोंका पता लगानेके उद्देश्यसे एक अपमानजनक कानून बनानेकी योजना की है।

ट्रान्सवालमें उन्नीस वर्षकी प्रतिष्ठावाले एक पत्र-लेखकने हमारे गुजराती स्तम्भोंमें एक माकूल सवाल किया है, जिसको हम इस अंकमें अन्यत्र अनुवाद करके दे रहे हैं। वह पूछता है कि ट्रान्सवालके ब्रिटिश शासन तथा रूसी शासनमें क्या अन्तर है? हमारी रायमें अन्तर यह है कि जहाँ रूसके अधिकारी, जब-कभी उनको अनुकूल जँचता है, लोगोंको सीधे तौरपर और खुलेआम मौतके घाट उतार देते हैं तहाँ ट्रान्सवालके अधिकारी भारतीयोंसे छुटकारा तो पाना चाहते हैं, किन्तु खुले तौरपर और ईमानदारीके साथ वैसा कर नहीं सकते; इसलिए उनकी हत्या करने या उन्हें निर्वासित कर देनेके सीधे तरीकेको छोड़ कर वे उनको तिल-तिल करके मारना चाहते हैं। इसके लिए वे ऐसी तरकीबें करते हैं कि विनम्र भारतीय भी, तंग आकर यहाँसे अपने आप देश छोड़कर चला जाये या ऐसे साधन ग्रहण करे जिससे वही मतलब हल हो। इस तरह अधिकारी घोषित कर सकते हैं: "हम उन लोगोंकी नागरिक हत्याके दोषी नहीं हैं; वे तो अपनी मर्जीसे चले गये हैं।" हम यह विचार सरकारके सामने सचाईके साथ गौर करनेके लिए पेश करते हैं और अभी, जबकि समय बाकी है, उससे माँग करते हैं कि वह इस नितान्त मिथ्या स्थितिको त्याग दे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८-९-१९०६

४३२. पितामह

दक्षिण आफ्रिकाकी विविध संस्थाओंने माननीय दादाभाई नौरोजीको, उनकी बयासीवीं वर्षगाँठ-पर बधाईके संदेश[1] भेजकर अपने कर्तव्यका पालन मात्र किया है। उनका जन्म दिवस सारे भारतमें एक राष्ट्रीय उत्सव बन गया है। आज लाखों भारतीयोंके हृदयोंमें उन महापुरुषका जैसा आदर-पूर्ण स्थान है वैसा आधुनिक कालके किसी अन्य व्यक्तिका नहीं। अतः उनकी वर्षगाँठके समय भारतमें वर्षोंसे जो होता आ रहा है उसकी आवृत्ति, चाहे जितनी साधारण ढंगसे क्यों न हो, किये बिना दक्षिण आफ्रिकाका भारतीय जीवन अपूर्ण है। उन वृद्ध देशभक्तको इन आत्मप्रेरित श्रद्धांजलियोंसे बड़ा संतोष होगा और विगत अर्धाधिक शताब्दीसे वे बिना जरा भी शिकायतके जो कार्य करते आ रहे हैं वह आगे ही बढ़ेगा। हमें आशा है कि एक बार आरम्भ हो चुका है, तो दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय हर साल ये बधाइयाँ भेजते रहेंगे; और हम यह भी आशा करते हैं कि उन्हें यह दिवस मनानेका सौभाग्य अभी वर्षों तक प्राप्त होता रहेगा। हम इस अंकके साथ एक परिशिष्ट छाप रहे हैं, जिसमें माननीय दादाभाई नौरोजीका एक चित्र है।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८-९-१९०६

१. देखिए "बधाई: दादाभाई नौरोजीको", पृष्ठ ४२२।

४३३. रूस और भारत

श्री ईसप मियाँने ट्रान्सवालके अंग्रेजी राज्यकी स्थितिका रूसकी स्थितिके साथ मिलान किया है।[1] यह तुलना करने लायक है। जिस तरह रूसमें लोगोंपर राज्याधिकारी जुल्म करते हैं, उसी तरह ट्रान्सवालमें भारतीय प्रजापर राज्याधिकारी जुल्म करते हैं। रूसमें लोगोंके खून होते हैं व लोगोंपर खुलेआम हमला होता है। ब्रिटिश राज्यमें लोगोंके दुःख यद्यपि चूहेके काटनेकी तरह तत्काल जाहिर नहीं होते, फिर भी परिणाम वैसे ही खराब कहे जा सकते हैं, जैसे रूसमें।

रूसी लोग अपनेपर होनेवाले जुल्मोंका प्रतिकार कैसे करते हैं और हम कैसे करते हैं, यह जानने योग्य है। अंग्रेजी राज्यमें हम लोग अर्जियाँ लिखते हैं, समाचारपत्रोंमें लिखकर आन्दोलन करते हैं, राजवंगियोंसे न्याय प्राप्त करते हैं। यह सब ठीक है और करना भी चाहिए। इससे कुछ फायदा भी होता है। इससे अधिक हमें और भी कुछ करना चाहिए, क्या हम यह बता सकते हैं? इस प्रश्नके उत्तरके बारेमें हम बादमें सोचेंगे। फिलहाल तो रूस क्या करता है, यह देखना है। वहाँके धनी-गरीब सिर्फ अर्जियाँ लिखकर ही नहीं बैठे रहते। उनके दुःख ऐसे हैं कि उनके कारण वहाँ अराजकतावादी काफी संख्यामें उत्पन्न हो गये हैं। उनकी यह मान्यता है कि राज्य करनेवाले सब अत्याचारी होते हैं, इसलिए राज्यसत्ताको नष्ट कर देना चाहिए। इसके लिए रूसके लोग छिपी और खुली रीतिसे राज्याधिकारियोंकी हत्या कर डालते हैं। ऐसा करना उनकी भूल है। और इस तरह बिना विचारेकी गई उग्र प्रवृत्तियोंके कारण वहाँ राजा और प्रजा दोनोंके मनमें निरन्तर अशान्ति बनी रहती है। किन्तु ऐसा साहस करनेवाले स्वयं बड़े बहादुर और देशभक्त होते हैं, यह तो सभी कबूल करते हैं।

छोटी उम्रकी लड़कियाँ भी ऐसा साहस करती हैं। अभी-अभी एक पुस्तक प्रकाशित हुई है। उसमें जो बालाएँ अमर हो गई हैं उनके जीवन-चरित्र दिये गये हैं। ऐसी लड़कियाँ, मरना तो है ही, ऐसा समझकर मरनेकी तैयारी करती हैं और अपने मनमें देशभक्ति रखकर सम्पूर्ण बलिदानका संकल्प करके, जिसे देशका शत्रु मानती हैं उसकी हत्या कर डालती हैं; और बादमें यातनाएँ भोगती हुई अधिकारियोंके हाथों मृत्यु प्राप्त करती हैं। वे ऐसी जोखिम उठाकर देशकी सेवा करती हैं। इसमें उनका तनिक-सा भी स्वार्थ नहीं रहता। वह देश अत्याचारसे मुक्ति पायेगा इसमें आश्चर्य नहीं। वह तत्काल ही मुक्त नहीं हुआ, इसका केवल यही कारण है कि, जैसा हमने ऊपर बताया है, स्वदेशाभिमान गलत मार्गपर भटककर खूँरेजीपर उतर आया है। ईश्वरीय नियमके अनुसार विचार करें तो, इससे लोगोंको तुरन्त लाभ नहीं मिल सकता।

क्या हम इतने स्वदेशाभिमानका परिचय देते हैं? हमें दुःखके साथ कहना पड़ता है — नही। इसमें किसीको दोष नही दिया जा सकता। अभी हमने वैसा करनेकी शिक्षा नही ली। [राजनीतिके मैदानमें अभी हम बच्चे हैं। जनताका सुख ही हमारा सुख है, इस नियमको हम कम समझते हैं। किन्तु अब हमारे सामने उस स्थिति से निकल जानेका समय आ गया है। हमें खूँरेजी करनेकी जरूरत नहीं है। हमारे लिए प्राणघातक साहस करनेकी जरूरत नही रही। किन्तु अपने शरीरको कष्ट देनेकी जरूरत है।] उसका सर्वोत्तम उदाहरण ट्रान्सवालका नया कायदा है। यह कायदा अत्याचारकी हद जाहिर करता है। इस कायदेके बनानेवालोंको सजा

१. देखिए इंडियन ओपिनियन, ८–९–१९०६।

देना हमारा कर्त्तव्य नही है। ऐसा करेंगे तो रूसके लोगोने जो गलती की है वही हम भी करेंगे। [भारतीय जनता विनम्र है, और हम चाहते हैं कि वह सदा विनम्र रहे।] तब हम क्या करें, इसका जवाब भारतीय शिष्टमण्डलने श्री डकनको दिया है। उसने श्री डंकनसे कहा है कि यदि बहुत विनयपूर्वक समझानेपर भी सरकार अपना कायदा अमलमे लायेगी तो भारतीय जनता उसे स्वीकार नही करेगी। लोग पंजीयन नही करायेंगे, जुर्माना भी नही देंगे; बल्कि जेल जायेंगे। हम मानते हैं कि यदि ट्रान्सवालमे भारतीय इस निश्चयपर अटल रहें, तो उनके बन्धन तुरन्त छूट जायेंगे। जेल उनके लिए महल बन जायेगी। उससे बेइज्जती होनेके बजाय उनकी आबरू बढेगी। और सरकारको मालूम हो जायेगा कि भारतीय प्रजाका अपमान हमेशा ही निर्भय रहकर नही किया जा सकता। अर्जी देनेके बाद जो हमे करना चाहिए और जिसे हम नही करते सो यह है कि, [हम अपने शरीर-सुखका त्याग नही करते। हम अपने मौज-शौकमें डूबे रहकर उसे छोड़ नही सकते। दूसरोंके लिए अपने सुखका बलिदान करना हमारा कर्त्तव्य है। इसीमे सच्ची खूबी है, इसीमे खुदा राजी है और इसीसे हमारा सच्चा कर्त्तव्य पूरा होता है]—यह हम नही समझते। शिष्टमण्डलका प्रस्ताव[1] एक उत्तम कार्रवाई है। हम उम्मीद करते हैं कि भारतीय प्रजा इस सुनहरे अवसरको जाने नही देगी और दक्षिण आफ्रिकाके हरएक भारतीयको इससे प्रोत्साहन मिलेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८–९–१९०६

४३४. ट्रान्सवालमें नकली अनुमतिपत्र

हमारे पास नकली अनुमतिपत्रोके विषयमे कुछ सामग्री आई है। उसे छापनेकी हमें जरूरत नही जान पड़ती। लिखनेवाले भाई सूचित करते हैं कि कोई-कोई भारतीय नकली अनुमति-पत्रोंके आधारपर प्रवेश करनेका प्रयत्न करते हैं। इससे निर्दोष व्यक्तियोंको कष्ट होता है और गलत ढंगसे प्रवेश करनेवाले सजा भोगते हैं। बारबर्टनमें कुछ ही समय पहले आठ भारतीयोंको ३० पौंड जुर्माना हुआ और उन्हे वापस जाना पडा। हमारे विचारसे यह दण्ड अनुचित है, फिर भी हम मानते हैं कि प्रत्येक भारतीयको बहुत सावधानीसे काम लेना चाहिए। हम लोग अनुमतिपत्रोंका जितना अनुचित उपयोग करेंगे, कष्ट उतना बढ़ता जायेगा। जो ट्रान्सवालमें प्रवेश नही कर पा रहे हैं, हमें उनके लिए खेद है। उनसे हमारी सहानुभूति है। किन्तु जबतक कानून उनके खिलाफ है, तबतक धीरज रखना जरूरी है। [अपना स्वार्थ साधनेके प्रयत्नमें हम दूसरोंको हानि न पहुँचायें, इसे सदा याद रखना चाहिए।] हमे आशा है कि बारबर्टनके मामलोंसे प्रत्येक पाठक सबक लेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८–९–१९०६

१. देखिए "सार्वजनिक सभा", पृष्ठ ४३०–४।

४३५. हिन्दू-श्मशान

हिन्दुओंके श्मशानकी स्थितिके बारेमें हमने पहले लिखा है[1]। जान पड़ता है कि कुछ लोगोंने उसका अर्थ यह किया है कि उसमें हम व्यवस्थापकोंको उलाहना देना चाहते हैं। हम फिरसे उस लेखको पढ़ गये हैं। किन्तु उसका वैसा अर्थ हम नहीं कर सके। फिर भी हमारे लेखका भूलसे भी यह अर्थ न हो, इसलिए हम स्पष्ट करना चाहते हैं कि हमने अपनी आलोचनामें व्यवस्थापकोंको दोषी नहीं माना है। हमारी जानकारीके अनुसार उन्होंने श्मशानको स्वच्छ और व्यवस्थित रखनेका पूरा प्रयत्न किया है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ८–९–१९०६

४३६. पत्र : उपनिवेश-सचिवको

ब्रिटिश भारतीय संघ

जरूरी

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर ८, १९०६

महोदय,

मैं परमश्रेष्ठसे परममाननीय भारत-मन्त्री और परमश्रेष्ठ भारतके वाइसरायके नाम संलग्न तारोंको[2] उनकी सेवामें भेजनेकी प्रार्थना करता हूँ।

आप देखेंगे, भारतके परमश्रेष्ठ वाइसरायके नामके तारका पाठ अन्य दो तारोंसे[3] अलग है। मेरे संघने मुझे अधिकार दिया है कि मैं तारोंका खर्च चुका दूँ। आपका पत्र पानेपर मैं सेवामें चेक भेज दूँगा। चूँकि बात अत्यावश्यक है, मैं विनम्रतापूर्वक निवेदन करता हूँ कि ये तार आज ही भेज दिये जायें।

आपका, आदि,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काइव्ज : एल० जी० फाइल सं० ९३ : एशियाटिक्स

१. देखिए 'हिन्दुओंके श्मशानकी स्थिति', पृष्ठ ४१०।
२. देखिए आगेके शीर्षक।
३. भारत तथा उपनिवेश-मन्त्रियोंके नाम।

४३७. तार: उपनिवेश-मन्त्रीको[1]

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर ८, १९०६

सेवामें
उपनिवेश-मंत्री

विधान-परिषदमें जिस गतिसे एशियाई अध्यादेश पास किया जा रहा है उससे ब्रिटिश भारतीय भयभीत है। अध्यादेश भारतीयोंकी स्थिति काफिरोंसे हीन तथा डच राज्यमें प्राप्त स्थितिसे बहुत हीन बनाता है। ब्रिटिश भारतीय संघ एकदम रवाना होनेवाले शिष्टमण्डलके पहुँचने तक शाही स्वीकृति रोकनेकी प्रार्थना करता है। संघ आश्वासनपूर्ण उत्तरका प्रार्थी है।

ब्रिभास[2]

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काइव्ज़ . एल० जी० फाइल सं० ९३ एशियाटिक्स

४३८. तार: भारतके वाइसरायको

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर ८, १९०६

सेवामें
परमश्रेष्ठ वाइसराय
भारत

विधान-परिषदमें विचाराधीन एशियाई अध्यादेशसे ब्रिटिश भारतीय भयभीत। ट्रान्सवाल अध्यादेश अप्रतिष्ठाकारक और अपमानजनक। भारतीयोंकी स्थितिको अछूतोंसे भी बदतर बनाता है। ब्रिटिश भारतीय संघ वाइसरायके सक्रिय हस्तक्षेपकी प्रार्थना करता है; क्योंकि परमश्रेष्ठ उनके कल्याणके लिए प्रत्यक्ष रूपसे उत्तरदायी हैं।

ब्रिभास

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काइव्ज़ : एल० जी० फाइल सं० ९३ : एशियाटिक्स

१. यह तार भारत-मन्त्रीको भी भेजा गया था।

२. ब्रिटिश भारतीय संघ। मूल अंग्रेजी शब्द "बिभास" है, जो "ब्रिटिश इंडियन असोसिएशन" का संक्षिप्त रूप है।

४३९. भाषण: "खूनी कानून" पर

एशियाई अधिनियम संशोधनके मसविदेपर विचार करनेके लिए कुछ गण्यमान्य भारतीयोंकी एक सभा हुई थी। उसमें गांधीजीने मसविदेका पूरा अर्थ समझाया था। सब लोगोंको वैसा ही धक्का पहुँचा, जैसा गांधीजीको पहुँचा था। इसी पृष्ठभूमिपर निम्नलिखित भाषण दिया गया था। सभी उपस्थित सज्जनोंने एक सार्वजनिक सभा करनेका प्रस्ताव किया, जिसमें इस खूनी कानूनका मुकाबला करनेके तरीकोंपर विचार और उन्हें अमलमें लानेका निश्चय किया जा सके।

यह भाषण स्वयं गांधीजीका ही पुनर्निर्मित है। सितम्बर ११ को हुई सार्वजनिक सभामें (देखिए पृष्ठ ४३०-४) दिए गये भाषणके समान इससे प्रकट होता है कि इस अन्यायपूर्ण अधिनियमके विरोधका उनकी दृष्टिमें कितना महत्व था।

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर ९, १९०६ के पूर्व]

यह मामला बहुत ही गंभीर है। यह विधेयक यदि पास हो गया और हमने इसे मान लिया तो इसका अनुकरण सारे दक्षिण आफ्रिकामें किया जायेगा। मुझे तो इसका उद्देश्य ही यह मालूम होता है कि इस देशसे हमारी हस्ती मिटा दी जाये। यह कानून कोई आखिरी कार्रवाई नहीं है, बल्कि तंग करके हमें दक्षिण आफ्रिकासे खदेड़नेके लिए पहला कदम है। अतः हमपर केवल ट्रान्सवालमें बसनेवाले १०-१५ हजार भारतीयोंकी ही जिम्मेदारी नहीं है, बल्कि दक्षिण आफ्रिकाके भारतीय मात्रकी है। फिर यदि हम इस विधेयकका रहस्य पूरी तरहसे समझ सकें तो सम्पूर्ण भारतकी प्रतिष्ठाकी जिम्मेदारी भी हमपर आ जाती है। क्योंकि इस विधेयकसे हमारा ही अपमान होता है सो बात नहीं, इसमें सारे भारतका अपमान निहित है। अपमानका अर्थ ही यह है कि निर्दोषका मान भंग हो। यह कहा ही नहीं जा सकता कि हम इस कानूनके योग्य हैं। हम निर्दोष हैं; और राष्ट्रके एक भी निर्दोष व्यक्तिका अपमान सारे राष्ट्रके अपमानके समान है। अतः इस कठिन अवसरपर यदि हम उतावली करें, अधीर हों, क्रोध करें तो उतनेसे तो इस हमलेसे नहीं बच सकेंगे। बल्कि यदि शान्तिपूर्वक उपाय ढूंढ़कर समयसे उनका उपयोग करें, एकतासे रहें और अपमानका सामना करनेमें जो दुःख हों उन्हें सहन करें, तो मैं मानता हूँ कि ईश्वर स्वयं हमारी सहायता करेगा।

[गुजरातीसे]

मो० क० गांधी: **दक्षिण आफ्रिकाना सत्याग्रहनो इतिहास**, अध्याय ११; नवजीवन प्रकाशन-मन्दिर, अहमदाबाद।

४४०. भाषण : हमीदिया इस्लामिया अंजुमनमें[1]

हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी बैठकमें गांधीजीने ट्रान्सवालकी राजनीतिक स्थितिका विवेचन किया। निम्न उद्धरण उस बैठककी कार्रवाईके विवरणसे लिया गया है।

जोहानिसबर्ग
सितम्बर, ९, १९०६

गाधीजीने कहा कि उपनिवेश-सचिवको हमने जो तार[2] दिया था उसका जवाब आया है। (वह जवाब पढ़कर सुनाया।) उसी प्रकार आदेशके अनुसार विलायत भी एक तार[3] भेज चुका हूँ। और अब बगैर शिष्टमण्डल भेजे छुटकारा नही है, क्योकि असह्य तथा जुल्मी कानून हमपर लाद दिया गया है। यह दु:ख सहा नही जा सकता। ट्रान्सवालमे हमारी स्थिति पहलेसे ही बहुत खराब है, तिसपर अध्यादेशका मसविदा आ जानेसे वह और भी ज्यादा खराब हो गई है। इसलिए मैं सबको सलाह देता हूँ कि हम अब दुबारा पजीयन न करवाये।

इसमे यदि हमपर सरकारी कानून-भगका आरोप लगे तो खुशी-खुशी जेल भोगे। इसमे बुरा कुछ नही है। [अग्रेजोकी एक विशेषता उनकी बहादुरी है।] इसलिए यदि हम सामूहिक रूपमे बहादुर बनकर अच्छी तरह मुकाबला करेंगे तो आशा है कि सरकार कुछ भी नही कर सकेगी। दोगले (हाफकास्ट) और काफिर भी, जो हमसे सभ्यता मे गिरे हुए हैं, सरकारका विरोध करते हैं। उनपर पासका नियम लागू है, फिर भी वे पास नही लेते।

अब मैं और अधिक न कहकर सबको सलाह देता हूँ कि आपको दुबारा पजीयन नही करवाना है और यदि सरकार जेल भेजती है तो मैं आपसे पहले जानेको तैयार हूँ। अध्यादेशके मसविदेके अन्तर्गत नया पजीयन स्वीकार न करनेसे जिन भारतीयोको सरकार परेशान करेगी उनका काम मैं मुफ्त करूँगा।

अगले मंगलवारको आम सभा होनेवाली है। इसलिए सभी लोग काम-काज बन्द करके उसमे हाजिर रहें।

इतना सब विस्तारपूर्वक समझानेके बाद श्री गाधीने जल्दी ही निधि इकट्ठा करने और निधिकी देख-रेखके लिए समिति नियुक्त करनेकी सूचना दी तथा यह भी कहा कि यह समिति हर महीने हिसाब प्रकाशित करे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२-९-१९०६

१. इंडियन ओपिनियनमें इस रिपोर्टका शीर्षक "कर्तव्यकी पुकार" था।

२. यह उपलब्ध नहीं है।

३. देखिए "तार : उपनिवेश-मंत्रीको", पृष्ठ ४२७।

४४१. सार्वजनिक सभा

ब्रिटिश भारतीयोंकी एक सार्वजनिक सभा एशियाई अधिनियम संशोधन अध्यादेशके मसविदेके विरुद्ध आपत्ति प्रकट करनेके लिए बुलाई गई थी। इसकी अध्यक्षता ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष श्री अब्दुल गनीने की थी। अध्यादेशके खिलाफ कई लोग बोले और उन्होंने उसके कानून बन जानेकी अवस्थामें उसकी अवज्ञा करनेकी अपील की। गांधीजीके भाषणकी रिपोर्ट नीचे दी जाती है :

जोहानिसबर्ग
सितम्बर ११, १९०६

बादमें ब्रिटिश भारतीय संघके अवैतनिक मन्त्री श्री मो० क० गांधी (जोहानिसबर्ग) ने सभामें भाषण दिया। उन्होंने बताया कि कुछ आलोचकोंका खयाल हो सकता है कि हमारे प्रस्तावोंमें जिस तर्क-शृंखलाकी रूपरेखा व्यक्त हुई है, उसमें दोष है, क्योंकि हमने अपनी शिकायतें दूर करने की माँग की है और बादमें एकदम यह धमकी दी है कि यदि हमारी प्रार्थना मंजूर नहीं की गई तो हम जेल जायेंगे। किन्तु श्री गांधीने दावा किया कि उक्त तर्क-शृंखलामें कोई वास्तविक दोष नहीं है, क्योंकि हम धमकी नहीं दे रहे हैं। यह तो सिर्फ [थोड़े-से अमलकी बात है, जिसका मूल्य बहुत-से भाषणों और लेखोंके बराबर होता है।] उन्होंने कहा कि, मैंने इस मामलेपर पहले गम्भीरता और आन्तरिकतासे विचार किया है, और तब हमें जो कदम-उठाना चाहिए उसके सम्बन्धमें अपनी राय दी है। मैं अनुभव करता हूँ कि यदि हमारी प्रार्थना स्वीकार नहीं की जाती तो जो रास्ता तय किया गया है उसे स्वीकार करनेको हम बद्ध-कर्तव्य हैं। श्री गांधीने दावा किया कि उस दिन जिन विशेषणोंका प्रयोग किया गया था उनमेंसे हरएक उस अवसरपर सार्थक था। यदि मुझको कोई और भी कठोर विशेषण मिला होता तो मैं उसका प्रयोग करता। मैंने दक्षिण आफ्रिकाके समस्त एशियाई-विरोधी कानूनोंका अध्ययन किया है; किन्तु मैंने अपने अबतक के पूरे अनुभवमें प्रस्तुत अध्यादेशके समान कोई कानून नहीं देखा। ऑरेंज रिवर कालोनीका अध्यादेश कड़ा है; किन्तु वह भी इस कानूनसे, जो यहाँ अब पेश किया गया है, ज्यादा अच्छा है। यह तो इतना बुरा है कि कोई भी स्वाभिमानी भारतीय इसके अधीन रह ही नहीं सकता। मैं स्वीकार करता हूँ कि मैंने जो गम्भीर कदम उठाया है उसकी जिम्मेदारी मेरे ऊपर है और मैं पूरी जिम्मेदारी ग्रहण करता हूँ। मैं महसूस करता हूँ कि मैंने भारतीयोंको वफादार ब्रिटिश प्रजाके रूपमें यह कदम उठानेकी सलाह देकर उचित ही किया है। इस सम्बन्धमें हमारी सब कार्रवाइयाँ वफादारीसे पूर्ण हैं। हमपर अराजभक्तिकी छाया भी नहीं ठहर सकती। कुछ लोग कह सकते हैं कि हम मूर्ख हैं, और यदि अपने देशभाइयोंपर मेरा पूर्ण विश्वास न होता तो मैं खुद कहता कि हमारी कार्रवाई मूर्खतापूर्ण है। किन्तु मैं अपने देशभाइयोंको जानता हूँ; मैं जानता हूँ कि मैं उनपर विश्वास कर सकता हूँ और मैं यह भी जानता हूँ कि जब कोई बहादुरीका कदम उठानेका मौका आयेगा, तब उनमें से प्रत्येक व्यक्ति वह कदम उठायेगा।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२-९-१९०६

सभामें श्री हाजी हबीबने प्रस्ताव किया कि उनको अध्यादेशका विरोध करनेकी शपथ लेनी चाहिए। गांधीजीने इस सुझावका फलितार्थ बताते हुए एक भाषण दिया, जिसका सारांश उन्होंने अपनी गुजराती पुस्तक **दक्षिण आफ्रिकाना सत्याग्रहनो इतिहासमें** इस प्रकार दिया है:

मैं सभाको यह बात समझा देना चाहता हूँ कि हमने आजतक जो प्रस्ताव स्वीकार किये हैं और जिस तरीकेसे स्वीकार किये हैं, उन प्रस्तावो और उस तरीकेमे तथा इस प्रस्ताव और इसके तरीके मे भारी अन्तर है। यह प्रस्ताव अति गम्भीर है। क्योकि, दक्षिण आफ्रिकामे हमारा अस्तित्व तभी रह सकता है जब हम इसपर पूरी तरह अमल करे। प्रस्तावको स्वीकार करनेकी जो रीति हमारे भाईने सुझाई है वह जितनी गम्भीर है, उतनी ही नवीन है। मै खुद इस रीतिसे प्रस्ताव करवानेके विचारसे यहाँ नही आया था। इस यशके अधिकारी अकेले सेठ हाजी हबीब है, और इसकी जिम्मेदारी भी उन्हीपर है। मै उन्हे मुबारकबाद देता हूँ। उनका सुझाव मुझे बहुत रुचा है। पर यदि आप उस सुझावको स्वीकार कर लेते है तो उसकी जिम्मेदारीमे आप भी साझी हो जायेंगे। यह जिम्मेदारी क्या है, इसे आपको समझना ही चाहिए, और भारतीय समाजके सलाहकार और सेवकके नाते इसे पूरी तरहसे समझा देना मेरा धर्म है।

हम सब एक ही सिरजनहारको माननेवाले है। उसे मुसलमान भले ही खुदाके नामसे पुकारे, हिन्दू भले ही ईश्वरके नामसे भजे, पर वह है एक ही स्वरूप। उसे साक्षी करके, उसको बीचमे रखकर हम कोई प्रतिज्ञा करे या शपथ ले, यह कोई छोटी-मोटी बात नही है। इस तरहसे शपथ लेनेके बाद भी यदि हम बदलते है तो समाजके, जगतके और खुदाके प्रति गुनहगार होगे। मै तो मानता हूँ कि सावधानीसे, शुद्ध बुद्धिसे मनुष्य कोई प्रतिज्ञा करे और बादमें तोड़ दे, तो वह अपनी इन्सानियत, अथवा मनुष्यता खो बैठता है। और जैसे पारा चढा हुआ ताँबेका सिक्का रुपया नही है, यह मालूम होते ही सिर्फ सिक्का ही मूल्यरहित नही होता, बल्कि उसका मालिक भी दण्डका पात्र हो जाता है, वैसे ही झूठी शपथ लेनेवाला अपनी प्रतिष्ठा ही नही खोता, वह लोक और परलोक दोनोमे दण्डका पात्र हो जाता है। सेठ हाजी हबीब हमें ऐसी ही शपथ लेनेकी बात सुझा रहे है। इस सभामें एक भी ऐसा व्यक्ति नही जो बालक या नासमझ माना जा सके। आप सब प्रौढ़ है, दुनिया देखे हुए है, बहुतेरे तो प्रतिनिधि है और थोड़ी-बहुत जिम्मेदारी भी भोग चुके है। अतः इस सभामे एक भी व्यक्ति ऐसा नही है जो यह कहकर छूट जाये कि मैंने बिना समझे प्रतिज्ञा की थी।

मैं जानता हूँ कि प्रतिज्ञाएँ, व्रत आदि किसी गम्भीर प्रसंगपर ही लिये जाते है, और लिये भी जाने चाहिए। उठते-बैठते प्रतिज्ञा करनेवाला निश्चय ही प्रतिज्ञा भंग कर सकता है। परन्तु यदि हमारे समाज-जीवनमे इस देशमें प्रतिज्ञाके योग्य किसी अवसरकी कल्पना मै कर सकता हूँ तो वह अवसर यही है। बहुत सावधानीसे और डर-डरकर कदम रखना बुद्धिमानी है। किन्तु डर और सावधानीकी भी सीमा होती है। उस सीमापर हम पहुँच चुके है। सरकारने सभ्यताकी मर्यादा तोड दी है। उसने हमारे चारो ओर जब दावानल सुलगा रखा है तब भी यदि हम बलिदानकी पुकार न करे और आगे-पीछे देखते रहे तो हम नालायक और नामर्द साबित होगे। अत यह शपथ लेनेका अवसर है, इसमे तनिक भी शका नही। पर यह शपथ लेनेकी हममें शक्ति है या नही, यह तो हरएकको अपने लिए सोचना होगा। ऐसे प्रस्ताव बहुमतसे पास नही किये जाते। जितने लोग शपथ लेंगे उतने ही उससे बँधते है। ऐसी शपथ दिखावेके लिए नही ली जाती, उसका यहाँकी सरकार, बड़ी सरकार, या भारत-सरकारपर क्या असर होगा, इसका कोई तनिक भी खयाल न करे। हरएकको अपने हृदयपर हाथ रखकर उसे ही टटोलना

है। और तब यदि अन्तरात्मा कहती है कि शपथ लेनेकी शक्ति है, तभी शपथ ली जाये, और वही शपथ फलेगी।

अब दो शब्द परिणामके विषयमें। अच्छीसे-अच्छी आशा बाँधकर तो यह कह सकते हैं कि यदि सब लोग शपथपर कायम रहें और भारतीय समाजका बड़ा हिस्सा शपथ ले सके तो यह अध्यादेश एक तो पास नहीं होगा, और यदि पास हो गया तो तुरन्त रद हुए बिना नहीं रहेगा। समाजको अधिक कष्ट न सहना पड़ेगा। हो सकता है कि कुछ भी कष्ट न सहना पड़े। पर शपथ लेनेवालेका धर्म जैसे एक ओर श्रद्धापूर्वक आशा रखना है, वैसे ही दूसरी ओर नितान्त आशारहित होकर शपथ लेनेको तैयार होना है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि हमारी लड़ाईमें जो कड़वेसे-कड़वे परिणाम सामने आ सकते हैं, उनकी तसवीर इस सभाके सामने खींच दूँ। मान लीजिए कि यहाँ उपस्थित हम सब लोग शपथ लेते हैं। हमारी संख्या अधिकसे-अधिक तीन हजार होगी। यह भी हो सकता है कि बाकीके दस हजार शपथ न लें। शुरूमें तो हमारी हँसी होनी ही है। इसके अलावा इतनी चेतावनी दे देनेपर भी यह बिलकुल सम्भव है कि शपथ लेनेवालोंमें से कुछ या बहुत-से पहली कसौटीमें ही कमजोर साबित हो जायें। हमें जेल जाना पड़े। जेलमें अपमान सहने पड़ें। भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी भी सहनी पड़े। सख्त मशक्कत करनी पड़े। उद्धत सन्तरियोंकी मार भी खानी पड़े। जुर्माने हों। कुर्कीमें माल-असबाब भी बिक जाये। यदि लड़नेवाले बहुत थोड़े रह गये, तो आज भले हमारे पास बहुत पैसा हो, कल हम कंगाल बन सकते हैं। हमें निर्वासित भी किया जा सकता है। जेलमें भूखे रहते और दूसरे कष्ट सहते हुए हममें से कुछ बीमार हो सकते हैं और कोई मर भी सकते हैं। अर्थात्, थोड़ेमें कहा जा सकता है कि, जितने कष्टोंकी आप कल्पना कर सकते हैं वे सभी हमें भोगने पड़ें — और इसमें कुछ भी असम्भव नहीं है — फिर भी समझदारी इसीमें है कि यह सब सहन करना होगा, यह मानकर ही हम शपथ लें। मुझसे कोई पूछे कि इस लड़ाईका अन्त क्या होगा, और कब होगा तो मैं कह सकता हूँ कि अगर सारी कौम लड़ाईमें पूरी तरह उत्तीर्ण हो गई तो लड़ाईका फैसला तुरन्त हो जायेगा और यदि संकटका सामना होनेपर हममें से बहुतेरे फिसल गये तो लड़ाई लम्बी होगी। लेकिन इतना तो मैं हिम्मतके साथ और निश्चयपूर्वक कह सकता हूँ कि मुट्ठीभर लोग भी यदि अपनी प्रतिज्ञापर दृढ़ रहे तो इस लड़ाईका एक ही अन्त समझिए — अर्थात् इसमें हमारी जीत ही होगी।

अब मेरी व्यक्तिगत जिम्मेदारीके बारेमें दो शब्द। मैं एक ओर तो प्रतिज्ञाकी जोखिमें बता रहा हूँ, पर साथ ही आपको शपथ लेनेकी प्रेरणा भी दे रहा हूँ। इसमें मेरी अपनी जिम्मेदारी कितनी है, इसे मैं पूरे तौरपर समझता हूँ। यह भी सम्भव है कि आजके जोश या गुस्सेमें आकर इस सभामें उपस्थित लोगोंका बड़ा भाग प्रतिज्ञा कर ले, पर संकटके समय कमजोर साबित हों, और मुट्ठीभर लोग ही अन्तिम ताप सहन करनेके लिए बच जायें। फिर भी मुझजैसे आदमीके लिए तो एक ही रास्ता होगा; मर मिटना, पर इस कानूनके आगे सिर न झुकाना। मैं तो मानता हूँ कि फर्ज करो ऐसा हो — ऐसा होनेकी सम्भावना तो बिलकुल ही नहीं है, फिर भी फर्ज कर लें — कि सब गिर गये और मैं अकेला ही रह गया, तो भी मेरा विश्वास है कि प्रतिज्ञाका भंग मुझसे हो ही नहीं सकता। इस कथनका तात्पर्य आप समझ लें। यह घमण्डकी बात नहीं, बल्कि खास तौरसे इस मंचपर बैठे हुए नेताओंको सावधान करनेकी बात है। अपनी मिसाल लेकर मैं नेताओंसे विनयपूर्वक कहना चाहता हूँ कि अकेला रह जानेपर भी दृढ़ रहनेका निश्चय या वैसा करनेकी शक्ति न हो, तो इतना ही नहीं कि आप प्रतिज्ञा न करें, बल्कि लोगोंके सामने अपना विरोध जाहिर कर दें और आप अपनी सम्मति यहाँ न दें। यह प्रतिज्ञा यद्यपि हम सब साथ मिलकर करना चाहते हैं फिर भी कोई इसका यह अर्थ कदापि

न करे कि एक या अनेक व्यक्ति अपनी प्रतिज्ञा तोड़ दें, तो दूसरे सहज ही बन्धन-मुक्त हो सकते हैं। हरएक अपनी-अपनी जिम्मेदारीको पूरी तरहसे समझकर स्वतन्त्ररूपसे प्रतिज्ञा करे, और यह समझकर करे कि दूसरे कुछ भी करें, मैं खुद तो मरते दम तक उसका पालन करूँगा ही।"]

[गुजरातीसे]

मो० क० गांधी: दक्षिण आफ्रिकाना सत्याग्रहनो इतिहास, अध्याय १२; नवजीवन प्रकाशन-मन्दिर, अहमदाबाद

सभामें स्वीकृत प्रस्ताव[1]

ब्रिटिश भारतीयोंकी यहाँ समवेत यह सार्वजनिक सभा सम्मानपूर्वक ट्रान्सवालकी विधान-परिषदके माननीय अध्यक्ष और सदस्योंसे अनुरोध करती है कि वे मसविदारूप एशियाई अध्यादेशको, जो १८८५ के कानून ३ में संशोधन करनेके लिए रखा गया है और अब सम्मान्य सदनके सम्मुख प्रस्तुत है, इन बातोंको देखते हुए मंजूर न करे:

प्रस्ताव १

(१) जहाँतक ट्रान्सवालके भारतीय समाजका सम्बन्ध है, यह अत्यन्त विवादास्पद कानून है।

(२) इससे ट्रान्सवालके भारतीय समाजका दर्जा गिरता है और उसका अपमान होता है, जिसका पात्र वह अपने गत इतिहासको देखते हुए कतई नहीं है।

(३) वर्तमान व्यवस्था एशियाइयोंकी कथित भरमारको रोकनेके लिए काफी है।

(४) ब्रिटिश भारतीय समाजने कथित भरमारके सम्बन्धमें दिये गये वक्तव्योंका खण्डन किया है।

(५) यदि सम्मान्य सदनको इस खण्डनसे सन्तोष नहीं है, तो यह सभा माँग करती है कि कथित भरमारके प्रश्नकी खुली जाँच एक अदालती और ब्रिटिश जाँच-समितिसे करा ली जाये।

ब्रिटिश भारतीयोंकी यहाँ समवेत यह सार्वजनिक सभा सम्मानपूर्वक उस मसविदारूप एशियाई-अधिनियम-संशोधन अध्यादेशके विरुद्ध आपत्ति प्रकट करती है, जिसपर अभी ट्रान्सवालकी विधान परिषदमें विचार किया जा रहा है, और स्थानीय सरकारसे तथा ब्रिटिश अधिकारियोंसे नम्रतापूर्वक प्रार्थना करती है कि वे मसविदारूप अध्यादेशको निम्न कारणोंसे वापस ले लें:

प्रस्ताव २

(१) यह महामहिमके प्रतिनिधियोंकी भूतकालीन घोषणाओंके स्पष्ट विरुद्ध है।

(२) इसमें ब्रिटिश एशियाइयों और विदेशी एशियाइयोंमें कोई भेद स्वीकार नहीं किया गया है।

(३) इससे भारतीयोंका दर्जा दक्षिण आफ्रिकाकी आदिम जातियों और रंगदार लोगोंसे भी नीचा हो जाता है।

१. पाँचवें प्रस्तावके अनुसार प्रस्ताव २, ३ और ४ ट्रान्सवालके गवर्नर द्वारा उपनिवेश-मन्त्री और भारत-मन्त्रीको भेजे गये थे। ट्रान्सवालके गवर्नरसे यह प्रार्थना भी की गई थी कि वे इनका सारांश भारतके वाइसरायको भेज दें। (देखिए पृष्ठ ४३४ और कमांड ३३०८, फरवरी १९०७)।

(४) इससे ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति १८८५ के कानूनके अन्तर्गत जैसी थी उससे खराब हो जाती है और इसलिए बोअरोंके शासनमें जैसी थी उससे भी खराब हो जाती है।

(५) इससे पासों और जासूसीकी एक ऐसी प्रणाली आरम्भ होती है जो दूसरे सब ब्रिटिश प्रदेशोंमें अज्ञात है।

(६) इससे उन जातियोंपर, जिनपर यह लागू होता है, अपराधी और संदिग्ध होनेका ठप्पा लग जाता है।

(७) अनधिकृत ब्रिटिश भारतीयोंकी ट्रान्सवालमें भरमारका खण्डन किया जाता है।

(८) यदि यह खण्डन स्वीकार नहीं किया जाता है तो इस कड़े और अवांछनीय कानूनको लादनेसे पहले एक अदालती, खुली और ब्रिटिशोचित जाँच करा ली जाये।

(९) यह कानून अन्यथा ब्रिटिश लोगोंके लिए अशोभनीय है और इससे निर्दोष ब्रिटिश प्रजाजनोंकी स्वतन्त्रतामें बेजा कमी होती है और यह ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंको देश छोड़कर चले जानेका अनिवार्य निमन्त्रण है।

(१०) यह सभा आगे और खास तौरसे परम माननीय उपनिवेश-मन्त्री और भारत-मन्त्रीसे प्रार्थना करती है कि वे इस अध्यादेशके मसविदेपर सम्राट्की मंजूरी स्थगित कर दें और इसके सम्बन्धमें ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय समाजकी ओरसे एक शिष्ट-मण्डलसे भेंट करें।

प्रस्ताव ३

यह सभा इस प्रस्तावके द्वारा इंग्लैंड जाने और मसविदारूप एशियाई अधिनियम-संशोधन अध्यादेशके सम्बन्धमें ब्रिटिश साम्राज्यके अधिकारियोंके सम्मुख ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी शिकायत पेश करनेके लिए एक प्रतिनिधि-दलकी नियुक्ति करती है और ब्रिटिश भारतीय संघकी समितिकी ओरसे उसे सदस्योंकी संख्या बढ़ाने या सदस्यतामें हेरफेर करनेका अधिकार देती है।

प्रस्ताव ४

विधानसभा, स्थानीय सरकार और साम्राज्य-अधिकारियों द्वारा मसविदारूप एशियाई अधिनियम-संशोधन अध्यादेशके सम्बन्धमें ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय समाजकी विनीत प्रार्थना अस्वीकृत कर दी जानेकी अवस्थामें, ब्रिटिश भारतीयोंकी यहाँ समवेत यह सार्वजनिक सभा गम्भीरतापूर्वक और खेदपूर्वक यह निश्चय करती है कि इस मसविदारूप अध्यादेशके अपमान-जनक, अत्याचारपूर्ण और अ-ब्रिटिश विधानोंके सामने झुकनेकी अपेक्षा ट्रान्सवालका प्रत्येक ब्रिटिश भारतीय अपने आपको जेल जानेके लिए पेश करेगा और तबतक ऐसा करना जारी रखेगा जबतक अत्यन्त दयालु महामहिम सम्राट् कृपा करके राहत नहीं देंगे।

प्रस्ताव ५

यह सभा अध्यक्षको निर्देश देती है कि वे पहले प्रस्तावकी नकल विधान-परिषदके अध्यक्ष और सदस्योंको और सब प्रस्तावोंकी नकलें उपनिवेश-सचिव, परमश्रेष्ठ कार्यवाहक लेफ्टिनेंट गवर्नर, और परमश्रेष्ठ उच्चायुक्तको भेज दें, तथा परमश्रेष्ठ उच्चायुक्तसे प्रार्थना करें कि वे दूसरे, तीसरे और चौथे प्रस्तावोंकी सलिपि साम्राज्य-अधिकारियोंको समुद्री तारसे प्रेषित कर दें।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५-९-१९०६

४४२. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

जोहानिसबर्ग
सितम्बर, ११, १९०६

ट्रान्सवालमें एशियाई कानूनको[1] लेकर आजकल जो आन्दोलन चल रहा है उसके सम्बन्धमें मगलवारको दोपहर २ बजे एम्पायर नाटकघरमें एक विशाल सभा हुई थी। उसमें लगभग ३ हजार भारतीय इकट्ठे हुए थे। श्री अब्दुल गनी अध्यक्ष थे। उपनिवेश-मन्त्रीको आमन्त्रण दिया गया था; और उन्होंने श्री चैमनेको उसमें उपस्थित रहनेके लिए भेजा था।

श्री अब्दुल गनीने अपने भाषणमें कहा,

ट्रान्सवालमें ऐसा समय कभी नही आया था। इस समय हमे बहुत मेहनत करनी चाहिए। मै लम्बा भाषण नही देना चाहता। हमारे पास काम बहुत है। लॉर्ड सेल्वोर्नने लड़ाईके समय कहा था कि भारतीयोंके अधिकारोकी रक्षा लड़ाईका एक उद्देश्य है। ब्रिटिश झंडेके नीचे किसीको तकलीफ नही होनी चाहिए। सबके समान हक होने चाहिए।

फिर उन्होने ही कुछ समय पहले यहूदियोकी सभामें ऐसा भी कहा था कि दूसरे राष्ट्रोके लोगोका दु.ख दूर करना भी ब्रिटिश सरकारका काम है। लोगोको रहनेकी अड़चन, जमीन खरीदनेकी मनाही और अन्य दूसरे अपमान ब्रिटिश राज्यमे कदापि नही होने चाहिए। लॉर्ड सेल्वोर्नके ऐसे भाषणो और हमपर जुल्म करनेवाले कानूनोके बीच किस तरह मेल बैठता है, यह पूछनेका हमें हक है।

यह कानून कितना सख्त और भावनाओको चोट पहुँचानेवाला है, इस सम्बन्धमे हम सरकारको लिख चुके हैं। किन्तु आज मैं आपके सामने श्री ग्रेगरोवस्कीकी राय रखना चाहता हूँ। श्री ग्रेगरोवस्की लिखते है :

> यह कानून डच कानूनकी अपेक्षा बहुत सख्त है। इसमें एक भी धारा भारतीयोंके लिए लाभदायक नहीं है। इस कानूनसे भारतीयोंकी स्थिति काफिरोंसे भी खराब हो जाती है। हर काफिरको 'पास' नहीं रखना पड़ता। लेकिन अब हर भारतीयको 'पास' रखना पड़ेगा। शिक्षित काफिर इस प्रकारके कानूनसे मुक्त है। भारतीय चाहे शिक्षित हो, चाहे जितना बड़ा व्यक्ति हो, फिर भी उसे 'पास' रखना ही पड़ेगा। ऐसा मालूम होता है कि वह 'पास' कैदियों वगैरहके 'पास' से मिलता-जुलता होगा। १८८५ के कानून [३] में जितने रास्ते खुले रखे गये थे, वे सब इस कानूनके द्वारा बन्द कर दिये गये हैं। काफिर जमीनके मालिक हो सकते हैं, लेकिन भारतीय नहीं हो सकते। ऐसा कानून उदारदलीय सरकार स्वीकार करेगी, यह सम्भव नहीं जान पड़ता।

हम लोग जो कुछ कहते हैं वह श्री ग्रेगरोवस्कीके कथनसे ज्यादा सख्त नही है।

जब ऐसी परिस्थिति आ गई है और जब इस परिस्थितिमें इंग्लैंडकी सरकार हमारी पुकार नही सुनती, तो हमें क्या करना चाहिए, यह सोचनेकी बात है। आज आपके सामने कुछ प्रस्ताव पेश किये जायेंगे। आप विलायत एक शिष्टमण्डल भेजें, इस सम्बन्धमे हम एक प्रस्ताव स्वीकार

१. एशियाई कानून संशोधन अध्यादेशका मसविदा।

करनेवाले है; इसलिए उसपर मुझे ज्यादा कुछ नहीं कहना है। आजका मुख्य प्रस्ताव तो एक ही है कि अपनी अर्जीमें यदि हम सफल न हों तो हमें क्या करना चाहिए? आज तक अपनी फरियादकी सुनवाई न होनेसे हम कष्ट भोगते रहे हैं। लेकिन इस कानूनके कष्ट असह्य हैं। इसलिए हम यह प्रस्ताव करना चाहते हैं कि यदि इंग्लैंडकी सरकार भी हमपर जुल्मकी वर्षा करना चाहती हो, तो [जुल्म भोगनेकी अपेक्षा जेलमें जाना ज्यादा अच्छा है। हमेशा जब बहुत दुःख पड़ता है तभी मनुष्यको सच्चा इलाज मिलता है।] हमारे लिए वह समय आ गया है। और हम सबका यही कर्तव्य है कि हम आज इस स्पष्ट निर्णयपर आ जायें कि हम इस कानूनको स्वीकार नही करेंगे, बल्कि जेल जायेंगे। जेल जानेमे लज्जित होने योग्य कोई बात नही। और मै खुदासे प्रार्थना करता हूँ कि वह हमें इतनी ताकत और बुद्धि दे जिससे हमारा प्रस्ताव बरकरार रहे।

यह समय हमारे लिए कथनीका नहीं, करनीका है। इस समय हमें साहस करना होगा और उस साहसमे नम्रता बरतनी होगी। किसी भी प्रकारके कड़वे शब्द न कहे जायें, न सुने ही जायें।

अध्यक्ष महोदयके भाषणके बाद नीचे लिखे प्रस्ताव[1] स्वीकार किये गये :

प्रस्ताव १

यह सार्वजनिक सभा नम्रतापूर्वक विधान-परिषदसे प्रार्थना करती है कि एशियाई कानून पास न किया जाये; क्योंकि,

(१) भारतीय कौमकी रायमें यह कानून बहुत ही आपत्तिजनक है।
(२) यह कानून अकारण भारतीय कौमको गिरानेवाला व उसका अपमान करनेवाला है।
(३) यदि भारतीय बिना परवानेके ट्रान्सवालमें प्रवेश करते हों, तो उन्हें रोकनेके लिए मौजूदा कानूनमें बहुत व्यवस्था है।
(४) भारतीयोंके जत्थे-के-जत्थे बिना परवानेके ट्रान्सवालमें प्रवेश करते हैं, इस अफवाहको भारतीय कौम स्वीकार नहीं करती।
(५) यदि विधान-परिषदको ऊपरके तथ्य सच न मालूम होते हों तो भारतीय कौम प्रार्थना करती है कि इसकी न्यायपूर्ण और ब्रिटिश पद्धतिके अनुरूप जाँच की जाये।

प्रस्ताव २

यह सार्वजनिक सभा नम्रतापूर्वक एशियाई अध्यादेशके खिलाफ आवाज उठाती है और स्थानीय सरकार एवं बड़ी सरकारसे प्रार्थना करती है कि वे इस कानूनको वापस ले लें; क्योंकि,

(१) यह कानून महामहिम सम्राट् द्वारा दिये गये पिछले वचनोंके खिलाफ है।
(२) यह कानून ब्रिटिश भारतीय और अन्य एशियाइयोंके बीच जरा भी भेद नही करता।
(३) इस कानूनसे काफिरों और अन्य काले लोगोंकी अपेक्षा भारतीयोकी स्थिति ज्यादा खराब हो जाती है।

१. मूल प्रस्तावोंके लिए देखिए "सार्वजनिक सभा", पृष्ठ ४३०-४।

(४) डच सरकारके समय भारतीयोंकी जो स्थिति थी वह इस कानूनसे और भी खराब हो जाती है।

(५) किसी भी दूसरे ब्रिटिश उपनिवेशमें इस पास-सम्बन्धी कानूनके समान कानून नही है।

(६) इस कानूनसे भारतीय समाजके सभी लोग ऐसे मान लिये जाते है, मानो वे जरायमपेशा हों।

(७) ट्रान्सवालमें बगैर परवानेके भारतीय लोग आते है, इस बातसे भारतीय कौम इनकार करती है।

(८) यदि यह इनकार स्वीकार न हो, तो भारतीय समाज माँग करता है कि ऐसी बाकायदा जाँच कराई जाये, जो ब्रिटिशोको शोभा दे।

(९) यह कानून दूसरे रूपमें भी गैरवाजिब है। यह भारतीय कौमकी स्वतन्त्रताका अपहरण करता है, यानी इसका अर्थ यह हुआ कि भारतीय कौमको जुल्म करके निकाल दिया जाये।

(१०) यह सभा उपनिवेश-मन्त्री और भारत-मन्त्रीसे विनती करती है कि जबतक एक भारतीय शिष्टमण्डल उनसे मिल न ले तबतक इस अध्यादेशको बड़ी सरकारकी स्वीकृति न दी जाये।

प्रस्ताव ३

यह सभा ब्रिटिश भारतीय संघको अधिकार देती है कि वह एक शिष्टमण्डल विलायत भेजे, जो वहाँ जाकर इंग्लैंडकी सरकारके समक्ष भारतीयोकी फरियाद पेश करे।

प्रस्ताव ४

यदि विधान-परिषद, स्थानीय सरकार और इंग्लैंडकी सरकार भारतीयोंकी प्रार्थनाकी सुनवाई न करे, तो इस सभाका प्रत्येक व्यक्ति अन्त.करणसे तथा सच्ची निष्ठासे यह प्रतिज्ञा करता है कि इस जुल्मी कानूनको स्वीकार करने और उसकी उन धाराओके अनुसार, जो अंग्रेजोको शोभा नही देती, चलनेके बजाय वह जेल जाना पसन्द करता है; और जबतक सम्राट छुटकारा न दें तबतक वह जेलमे ही रहेगा।

प्रस्ताव ५

यह सभा अध्यक्षको पहला प्रस्ताव विधान-परिषदको, और शेष प्रस्ताव उच्चायुक्त महोदयको तथा उनकी मारफत तारसे विलायत भेजनेका अधिकार देती है।

मंगलवारकी शाम तक कानूनकी स्थिति

उपर्युक्त सभामे जो और भी भाषण हुए उनकी रिपोर्ट व नाम वगैरह मैं इस सप्ताहके अंकके लिए नही दे सकता। सिर्फ इतना ही बतलाता हूँ कि पीटर्सबर्ग, क्लार्क्सडॉर्प, क्रूगर्सडॉर्प, प्रिटोरिया वगैरा सभी मुख्य-मुख्य नगरोसे प्रतिनिधि आये थे। क़ानूनके बारेमे सबसे बड़ा डर यही था कि उसके लिए इंग्लैंडकी सरकारकी स्वीकृति आ गई है। इस सम्बन्धमें सर रिचर्ड सॉलोमनने पूरा आश्वासन दिया है कि जबतक यह कानून विलायत नही जाता और वहाँ मंजूर नहीं होता तबतक अमलमे नही आयेगा। इसलिए शिष्टमण्डलको वहाँ जाने और प्रार्थनापत्र आदि पेश करनेके लिए पूरा मौका है। इस कानूनमे दूसरा परिवर्तन यह हुआ है कि वह १६ वर्षसे कम उम्रवाले

लड़कोंपर लागू नहीं होगा; मतलब यह कि ऐसे लड़कोंपर मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। तीसरी बात यह जोड़ी गई है कि यदि कोई व्यक्ति दूसरेके लड़केको अपना बना कर लायेगा तो उसपर मुकदमा चलाया जा सकेगा और न सिर्फ उसको सजा होगी, बल्कि, उसका परवाना व पंजीयन भी रद किया जायेगा, तथा उसे देशसे निकाल दिया जायेगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५-९-१९०६

४४३. पत्र : विधान-परिषदके अध्यक्षको

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर ११, १९०६

सेवामें
माननीय अध्यक्ष,
विधान-परिषद
प्रिटोरिया

महोदय,

आज शाम जोहानिसबर्गमें ब्रिटिश भारतीयोंकी सार्वजनिक सभा हुई। मैं उसके निर्देशपर माननीय सदनके सहानुभूतिपूर्ण विचारार्थ पहले प्रस्तावकी[1] प्रतिलिपि संलग्न कर रहा हूँ। यह प्रस्ताव सभा द्वारा सर्वसम्मतिसे पास किया गया था।

निवेदन है कि यह माननीय सदनको पढ़कर सुना दिया जाये।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय सार्वजनिक सभा

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काइव्ज : एल० जी० फाइल सं० ९३ : एशियाटिक्स

१. देखिए "सार्वजनिक सभा", पृष्ठ ४३०-४।

४४४. पत्र : ट्रान्सवालके लेफ्टिनेंट गवर्नरको

ब्रिटिश भारतीय संघ

पो० ऑ० बॉक्स ६५२२
जोहानिसबर्ग
सितम्बर १२, १९०६

सेवामें
परमश्रेष्ठ लेफ्टिनेंट गवर्नर
ट्रान्सवाल और जोहानिसबर्ग

महोदय,

जोहानिसबर्गके एम्पायर थियेटरमें ब्रिटिश भारतीयोंकी सार्वजनिक सभामें पारित एक प्रस्तावके अनुसार मैं परमश्रेष्ठके सूचनार्थ प्रस्ताव २, ३, ४ और ५[१] संलग्न कर रहा हूँ।

आपका आज्ञाकारी सेवक,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काइव्ज . एल० जी० फाइल्ज : १९०२–१९०६

४४५. जवाब : 'रैंड डेली मेल'को

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर १२, १९०६]

[सम्पादक]
'रैंड डेली मेल'

महोदय,

ब्रिटिश भारतीयोंकी जो सार्वजनिक सभा[१] कल हुई थी, उसके सम्बन्धमें आपने अपने अग्रलेखमें मुझपर प्रश्नको उलझा देनेका दोषारोपण किया है। परन्तु मेरा खयाल तो ऐसा है कि यह दोष मेरा नहीं, आपका है। जो बात मैंने तथा अन्य प्रत्येक वक्ताने कही थी, वह बिलकुल साफ थी।

आपके पत्रमें मेरे कथनका जो विवरण प्रकाशित हुआ है वह इस प्रकार है:

> उन्होंने पूरे ३५ करोड़ लोगोंको इस देशमें लानेको नहीं कहा था, बल्कि उन्होंने तो यह कहा था कि जो लोग इस देशमें प्रविष्ट हो चुके हैं, उन्हें ठीक वही संरक्षण और वे सब अधिकार प्राप्त होने चाहिए, जो यहाँ आये यूरोपीयोंको सुलभ हैं।

उस सभामें यह बात बहुत ही उत्कटताके साथ कही गई थी कि यहाँ बसे हुए ब्रिटिश भारतीयोंके साथ समुचित व्यवहार किया जाये। परन्तु महोदय, क्या मैं कह सकता हूँ कि आपने ब्रिटिश तथा अन्य सभी एशियाइयोंको शामिल करके तथा आव्रजनके प्रश्नको उठाकर असल

१. देखिए "सार्वजनिक सभा", पृष्ठ ४३०–४।

बातको इरादतन विकृत रूप दे दिया है। ट्रान्सवालमें जो मुट्ठीभर ब्रिटिश भारतीय है, उनके लिए जब यह जीवन और मरणका प्रश्न बन बैठा है, तब हम इस प्रकारके किसी भी मामलेको कैसे उठा सकते है? अपने मुद्देपर जोर डालनेके अभिप्रायसे मैंने यह बात अवश्य कही थी कि अगर विदेशी लोग, जो सदा ही वांछित प्रकारके लोग नही होते, बेरोक-टोक और अनुमतिपत्र प्राप्त किये बगैर ही ट्रान्सवालमें आ सकते है और सभी प्रकारसे अधिकारोंका उपभोग कर सकते है, तो यह बात विवेकसम्मत है कि भारतीयोंको, जो ब्रिटिश प्रजाजन माने जाते है, प्रवेशका प्रथमाधिकार प्राप्त हो।

फिर, आप तफसीलमें जानेके प्रति संदेहपूर्ण अरुचिका जिक्र करते है। इसका कोई अवसर न था, क्योकि वे बातें ब्रिटिश भारतीयोंके द्वारा की गई आपत्तिमें आ गई है, और उसे आप प्रकाशित कर चुके है। अध्यादेशके अंगो और उपांगोंको परिवर्तित करनेका चाहे जितना प्रयत्न क्यों न किया जाये, वह मान्य नही हो सकता; क्योंकि उसका मूल सिद्धान्त ही — अर्थात्, शिनाख्तके ऐसे दस्तूरके अन्तर्गत, जो केवल अपराधियोंपर ही लागू किया जाता है, बिना अपवादके प्रत्येक भारतीयको हुक्म दिया जाना कि वह अपना 'पास' अपने साथ ही रखे — दूषित है। [हम विनम्र और सहनशील तो है ही परन्तु यदि हम इस प्रस्तावित पतनकारी कानूनको बिना किसी प्रकारकी आपत्तिके स्वीकार कर लेते हैं तो हम भारतकी अयोग्य सन्तान कहलायेंगे।]

[आपका, आदि,
मो० क० गांधी]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२-९-१९०६

४४६. पत्र: 'स्टार'को

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर १४, १९०६ के पूर्व]

सेवामे
सम्पादक
'स्टार'

महोदय,

एशियाई अध्यादेशके मसविदेके बारेमें किये गये ब्रिटिश भारतीय विरोधपर अपने अग्रलेखमें आपने ब्रिटिश भारतीय संघको सलाह देनेकी कृपा की है। आपकी रायमें ब्रिटिश भारतीय संघका नेतृत्व बहुत 'बुद्धिमत्तापूर्ण' नहीं है।

एक पुरानी कहावत है कि 'हमारे लिए क्या अच्छा है, यह सदा हमारे पड़ोसी सबसे ज्यादा जानते है।' मुझे सन्देह नहीं कि इस सिद्धान्तके अनुसार आपकी यह राय सही है कि ब्रिटिश भारतीय संघका नेतृत्व ठीक नहीं है। फिर भी इस समय संघके नेताओंके बारेमें आपकी जो राय है उसमें मुझे इतनी दिलचस्पी नहीं जितनी कि ब्रिटिश भारतीय विरोधपर आपके रुखमें है।

आपका विचार है कि नये अध्यादेशके विरुद्ध समाजको शिकायतकी कोई गुंजाइश नहीं है; क्योंकि उसमें सिर्फ नये पंजीयनका सवाल है और इससे महामहिमकी प्रजाके किसी वर्गपर नई निर्योग्यताएँ नहीं लगतीं। मै इन दोनों बातोंसे सहमत नहीं हूँ। जिस प्रकार भारतीय आव्रजनको

रोकनेके लिए शान्ति-रक्षा अध्यादेशके प्रशासनको विकृत किया गया है, उसी प्रकार इस नये अध्यादेशके द्वारा १८८५ के कानून ३ के क्षेत्रको भी विकृत कर दिया गया है। यह एक ऐसी माँगको पूरा करनेके लिए है जो डच राज्यमें कभी नहीं की गई थी। डच कानून व्यापारियोंके लिए बनाया गया था। उसकी नीति उन प्रवासियोंको दण्डित करना था जो व्यापार करना चाहते थे, न कि आव्रजनको परिमित करना। इसी कारण पहले उसके द्वारा २५ पौंडका पंजीयन कर लगाया गया था, जो बादमें ब्रिटिश सरकारके हस्तक्षेपके कारण घटाकर ३ पौंड कर दिया गया।

वर्तमान अध्यादेशसे १८८५ के कानून ३ का सिर्फ संशोधन करनेकी अपेक्षा की जाती है। वह कानूनका क्षेत्र वही रखनेके लिए है, बदलनेके लिए नहीं। परन्तु इस अध्यादेशमें शिनाख्तकी ऐसी पद्धतिकी व्यवस्था है, जो अमलमें उन लोगोंके लिए अत्यन्त कष्टकारक होगी, जिन्हें वह माननी पड़ेगी। पंजीयनका प्रयोजन भारतीय आबादीकी गणना करना नहीं, बल्कि निम्नलिखित है.

उपनिवेशमें रहनेवाले प्रत्येक भारतीयको अपने पास एक पंजीयन प्रमाणपत्र रखना होगा, जिसमें शिनाख्तके अपमानजनक विवरण होंगे। उसे अपने नवजात बच्चेका स्थायी पंजीयन कराना होगा और शिनाख्तके लिए ऐसे विवरण देने होंगे जो लेफ्टिनेंट गवर्नर द्वारा बनाये जानेवाले अधिनियमके अनुसार आवश्यक हों। शिनाख्तकी इन्हीं शर्तोंके साथ आठ वर्षसे अधिक आयुवाले बच्चोंका पंजीयन कराना होगा।

यह सब बिलकुल नया है और १८८५ के कानून ३ में इसका कभी इरादा तक नहीं रहा। फिर भी आपको यह कहते हुए कोई संकोच नहीं कि अध्यादेश अधिवासी भारतीय समाजपर कोई निर्योग्यता नहीं लादता।

मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि सत्याग्रहकी नीति कोरी धमकी[1] नहीं है। यह मेरे देशवासियोंका असहनीय परिस्थितियोंको स्वीकार न करनेका शुद्ध संकल्प है। और अगर इससे, जैसा आपका संकेत है, 'उनके सामूहिक रूपमें निर्वासनका महँगा झगड़ा' उठ खड़ा होगा, तो यह एक बड़ी राहत होगी। यह ब्रिटिश नीतिका एक नया अतिक्रमण होगा; अलबत्ता, साम्राज्यवादियोंके नई विचारधारावाले दलके लिए — जिसके आप निस्सन्देह अग्रणी हैं — इससे कुछ अन्तर नहीं पड़ेगा। मेरे देशवासी बहुत समय तक पीछे रह चुके हैं। इसमें उनकी विचारशीलता नहीं थी, जैसा कि आपका कहना है; बल्कि विचारहीनता थी। अपने अलगावको छोड़नेसे उनको कुछ भी लाभ न हो, तो ज्यादा हानि भी न होगी। अपने खयालसे वे पहले ही अपना लगभग सब-कुछ खो चुके हैं।

अगर दक्षिण आफ्रिकावासी आपके उकसानेके फलस्वरूप भारतीय प्रश्नमें कुछ दिलचस्पी लेने लगें तो मैं दावेसे कहता हूँ कि, आपके उपर्युक्त सुझावके बावजूद, उनकी आँखें खुल जायेंगी। उन्हें यह भी समझमें आ जायेगा कि उन्होंने ब्रिटिश भारतीयोंको कितना गलत समझा है और इनके प्रति कितने भारी अपराध किये हैं।

आपका, आदि,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]

स्टार, २२–९–१९०६

1. यह स्टारकी एक सम्पादकीय टिप्पणीके जवाबमें है कि "निष्क्रिय-प्रतिरोधकी नीतिका सुझाव या तो कोरी धमकी है या उस नीतिके महत्त्वकी निरी अस्पष्ट धारणापर आधारित है . . . ।"

४४७. ट्रान्सवालका नया विधेयक

जोहानिसबर्गकी सार्वजनिक सभामें सर्वसम्मतिसे जो प्रस्ताव स्वीकार किये गये, वे 'जोहानिसबर्गकी चिट्ठी' में आ गये है।[1] हमारा संवाददाता सूचित करता है कि इस सभामें सारे ट्रान्सवालसे प्रतिनिधि आये थे। इस तरह सर्वसम्मतिसे जो प्रस्ताव स्वीकार किये गये उसपर हम बधाई देते है, और उस कार्यमें उनकी पूरी सफलता चाहते है। हमारी मान्यता है कि यदि यह आन्दोलन संगठित रूपमें जारी रखा गया तो सरकारको यह विधेयक वापस लेना पड़ेगा। विधानसभामें अध्यादेशके मसविदेके दो वाचन स्वीकार हो चुके है। नये मसविदेमें विशेष परिवर्तन यह है कि स्त्रियोंको विधेयकसे मुक्त किया गया है। विधेयक तीसरे वाचनके लिए धारासभाके सामने पेश किया गया था। किन्तु तब वहाँ ब्रिटिश भारतीय संघकी ओरसे प्राप्त एक तार पढ़ा गया और कुछ बहसके बाद तय हुआ कि अमुक-अमुक संशोधन करके इस विधेयकके अन्तिम मसविदेपर फिरसे विचार किया जाये। परन्तु हमारा संवाददाता प्रश्न करता है कि यदि इस विधेयकको विलायतकी सरकारकी ओरसे मंजूरी मिल चुकी हो, और यदि यह स्वीकृत होकर कानून बन जाये, तो भारतीयोंको क्या करना चाहिए? उस परिस्थितिमें, हम यह कामना करते है कि, इस सार्वजनिक सभामे एक स्वरसे जो चौथा प्रस्ताव स्वीकार हुआ है, उसकी जबतक सच्ची सुनवाई नही होती तबतक ईश्वर भारतीयोंको उसपर अडिग रहनेकी शक्ति और दृढ़ता दे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १५-९-१९०६

४४८. वक्तव्य: एशियाई अध्यादेशपर[2]

[सितम्बर १७, १९०६ के पूर्व]

परिस्थिति, जैसी आशंका की जा रही थी उससे, कही ज्यादा खराब है। यदि विधेयक पास कर दिया गया तो उसका अर्थ यह होगा कि जो वचन आज तक दिये गये हैं सभी भंग हो जायेंगे। उसका मंशा राहत पहुँचानेके स्थानपर अत्यधिक सन्ताप पहुँचाना है—सो भी किंचिन्मात्र औचित्यके बगैर।

१८८५ का कानून ३ अपने वर्तमान रूपमें इस अध्यादेशकी अपेक्षा कहीं अच्छा है; क्योंकि नये कानूनके अन्तर्गत उन स्त्रियों, बच्चों और वयस्कोंके लिए, जो यहाँ व्यापारके हेतु नही आये हैं, पंजीकरण कराना लाजिमी होगा, यद्यपि १८८५ के कानूनके अन्तर्गत वे इस बन्धनसे मुक्त है। तीन पौंडी शुल्कसे मुक्ति देना जलेपर नमक छिडकनेके समान है क्योंकि उन सब व्यक्तियोंने जिनका पंजीकरण हो चुका है, तीन पौंड चुका ही दिये है। इस बातको भुला न देना चाहिए

१. देखिए "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी", पृष्ठ ४३५-८।

२. यह वक्तव्य दादाभाई नौरोजीके पास भेजा गया था और उन्होंने इसे १७ सितम्बरको उपनिवेश-सचिवको भेजा था। चौथे अनुच्छेदको छोड़कर शेष पूरा वक्तव्य कुछ दिनों बाद इंडियामें "एक सुविज्ञ दक्षिण आफ्रिकी संवाददाता द्वारा" प्रेषित रूपमें प्रकाशित हुआ था।

कि अगर यह कानून पास हो गया, तो इसके फलस्वरूप एक तीसरे पंजीकरणकी आवश्यकता पड़ेगी। सो क्यों? केवल इसलिए कि कुछ एशियाई-विरोधी आन्दोलनकारियोंने कहा है कि बहुत-से भारतीय बिना किसी अधिकारके यहाँ आ गये हैं। ब्रिटिश भारतीय संघने इस आरोपको, जहाँतक वह समस्त भारतीय समाजपर लागू है, अस्वीकार[1] किया है। परन्तु यदि यह मान भी लिया जाये कि लोग एक बहुत बड़ी संख्यामें आ गये हैं तो इस बुराईको, अबतक जारी किये गये अनुमतिपत्रोंकी जांच करके, दूर किया जा सकता है।

'जोहानिसबर्ग स्टार' कहता है, और प्रत्यक्षतः अधिकारके साथ, कि शिनाख्तका जो तरीका अब अपनाया जानेवाला है वह बहुत ही सख्त होगा। भारतीय समाजने, बिलकुल अहेतुक ही — और लॉर्ड मिलनरको प्रसन्न रखनेके अभिप्रायसे — अधिकारियोंको अँगूठा-निशानी लेने दी है। सरकार अब और कितना आगे जाना चाहती है और अभी और कितना अपमान लादना चाहती है, इसका अनुमान लगा सकना सम्भव नहीं है।

इस अवसरपर मैं इस मामलेमें और ज्यादा विचार करना नहीं चाहता। 'इंडियन ओपिनियन' के अगले अंकमें[2] इससे बहुत अधिक जानकारी प्रकाशित की जायेगी, और मैं आपका ध्यान उसकी ओर दिलाना चाहता हूँ।

श्री डंकनके वक्तव्यसे यह विदित होगा कि सम्राटकी सरकारने प्रस्तावित कानूनके सिद्धान्तको पहले ही स्वीकार कर लिया है। यदि ऐसा है तो मैं इतना ही कह सकता हूँ कि उसने मामलेपर तनिक भी विचार नहीं किया है। उसने पिछले खरीतोंका, जिनके द्वारा बहुत-सी बातोंका वायदा किया गया है, अध्ययन नहीं किया है। शुरूसे आखिर तक इन खरीतोंमें समाजके पंजीकरणकी, मानो वह केवल अपराधियोंका बना हो, कोई चर्चा नहीं की गई है। अध्यादेशके मसविदेमें ब्रिटिश एशियाइयों तथा अन्य लोगोंके बीच कोई अन्तर नहीं माना गया है। आप देखेंगे कि इस अध्यादेशके मसविदेकी एक उपधारामें अस्थायी अनुमतिपत्रोंके स्वामियोंको यह वचन दिया गया है कि सरकार चाहे तो उन्हें मद्य अध्यादेशसे मुक्त कर सकती है। यह धारा भारतीय समाजका अकारण अपमान करनेवाली है। कोई भी स्वाभिमानी भारतीय इस प्रकारकी रियायत कभी नहीं माँगेगा। यह सोचकर बड़ा दुःख होता है कि यदि महाराजकुमार रणजीतसिंहजी भी ब्रिटिश शासनाधीन ट्रान्सवालमें प्रवेश करना चाहें तो उन्हें अनुमतिपत्रके लिए अर्जी देनी पड़ेगी और फिर उन्हें एक प्याला शराब प्राप्त करनेके लिए मद्य-अध्यादेशके बन्धनसे बरी किये जानेके हेतु सरकारके सामने गिड़गिड़ाना पड़ेगा। अनेक वर्षोंके बाद साम्राज्यने ऐसी उदारदलीय सरकार पाई है। पर क्या यह सरकार साम्राज्यके निर्बल और असहाय सदस्योंकी रक्षा इस प्रकार करेगी?

[अंग्रेजीसे]

इंडिया, २८–९–१९०६

१. देखिए "पत्र : उपनिवेश-सचिवको", पृष्ठ ४११–३।

२. देखिए "कसौटीपर", पृष्ठ ४६२–३।

४४९. पत्र : अखबारोंको[1]

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर १९, १९०६[2]

[महोदय,]

मेरा खयाल है कि निम्नलिखित तथ्य उपनिवेशके काम-काजकी दिल दहलानेवाली स्थिति प्रकट करते हैं। यदि आपका भी खयाल मेरे ही जैसा हो तो, मुझे भरोसा है, प्राथमिक न्यायकी दृष्टिसे आप इन्हें प्रकाशित ही नहीं करेंगे, बल्कि टिप्पणी भी लिखेंगे।

तारीख १४ को काफिर मेलसे पूनिया नामकी एक भारतीय स्त्री अपने पतिके साथ, डर्बनसे जोहानिसबर्ग जा रही थी। उसके पतिके पास अनुमतिपत्र था। पंजीकरण-प्रमाणपत्र भी था, जिसमें उसकी स्त्रीका उल्लेख था। फिर भी पत्नीको अनुमतिपत्र न होनेके आरोपमें फोक्सरस्टमें गिरफ्तार करके रोक लिया। इसलिए बेचारे पतिको भी रुकना पड़ा। दोनोंने हवालातमें रात बिताई। दूसरे दिन सुबह पत्नीका मुकदमा हुआ। उसको मामूली चोर-बदमाशकी भाँति कठघरेमें खड़ा होना पड़ा। गिरफ्तार करनेवाले पुलिस सिपाहीने निम्नलिखित गवाही दी :

> **मुझे हिदायत है कि उपनिवेशमें अनुमतिपत्रके बिना प्रवेश करनेवाले सब भारतीयोंको — चाहे वे स्त्री हों या पुरुष, बालिग हों या नाबालिग — गिरफ्तार कर लिया जाये। इसमें उम्रकी कोई सीमा नहीं है। यह हिदायत उस हालतमें लागू है जब स्त्रियाँ अपने पतियों और बच्चे अपने माता-पिताओंके साथ हों। पंजीकरण प्रमाणपत्रमें पत्नीका जिक्र होनेसे स्थितिमें कुछ अंतर नहीं पड़ता।**

गवाहीके सिलसिलेमें मालूम हुआ कि पतिकी गवाहीके अनुसार पत्नी युद्धके दिनोंमें और उसके बाद भी ट्रान्सवालमें उसके साथ मौजूद थी। मजिस्ट्रेटने निर्णय देते हुए कहा कि उसके सामने पत्नीको उसी दिन ७ बजे शामसे पहले उपनिवेशसे चले जानेकी आज्ञा देनेके सिवा कोई चारा नहीं है, क्योंकि उसके पास अनुमतिपत्र नहीं है। तथापि, पत्नी वकीलकी सलाहसे निर्वासनकी आज्ञाका उल्लंघन करके जोहानिसबर्ग चल दी। इसलिए वह जर्मिस्टनमें गिरफ्तार कर ली गई। अभीतक यह खबर नहीं मिली है कि इस मामलेमें अन्तमें क्या हुआ।

किन्तु मैं जो-कुछ कहना चाहता हूँ उसका इस मामलेकी आगेकी कार्रवाईसे कोई सम्बन्ध नहीं है। बात यह है : क्या सरकार, ट्रान्सवालकी जनताके नामपर, ब्रिटिश भारतीय स्त्रियों और बच्चोंके लिए आतंकका राज कायम करेगी? मुकदमेमें यह बात स्वीकार की गई कि यह कोई एकाकी मामला नहीं है। याद रखिए कि अनुमतिपत्र-सम्बन्धी प्रामाणिक एवं मुद्रित नियमोंके अनुसार जब स्त्रियाँ अपने पतियोंके साथ या १६ सालसे कम उम्रके बच्चे अपने माता-पिताओंके

१. गांधीजीने यह पत्र जोहानिसबर्गके तीनों दैनिकोंको लिखा था। "अनुमतिपत्रका एक निन्दनीय मामला" शीर्षकसे यह **इंडियन ओपिनियन**में भी उद्धृत किया गया था।

२. प्रथम अनुच्छेदको छोड़कर यह पत्र "हमारे जोहानिसबर्ग संवाददाता द्वारा प्रेषित, सितम्बर १९, १९०६का विशेष संवाद"के रूपमें २०-९-१९०६के **नेटाल मर्क्युरी**में प्रकाशित हुआ था।

साथ हो तो उनको अनुमतिपत्र लेनेकी आवश्यकता नहीं है। क्या अब भारतीय स्त्रियोंको अनुमतिपत्र कार्यालयमें जाना पड़ेगा और थका डालनेवाली तथा झुंझलाहट पैदा करनेवाली जाँचके पश्चात् अपना अनुमतिपत्र हासिल करना पड़ेगा? और फिर गोदके बच्चोंका क्या होगा? यह कोई अलिफ लैलाका किस्सा नहीं है। जो बच्चे मुश्किलसे रेंगकर चल सकते हैं उनको भी फोक्सरस्टमें रोका गया है। क्या श्री लवडे और उनके साथियों तक को इस सबकी जरूरत है? क्या आपको है?

आपका, आदि,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

स्टार, १९-९-१९०६

४५०. पत्र: डॉ० एडवर्ड नंडीको

२१-२४ कोर्ट चेम्बर्स
जोहानिसबर्ग
सितम्बर २०, १९०६

प्रिय डॉ० नंडी,

यदि अदालतमें जानी-मानी प्रतिष्ठा और योग्यतावाले व्यक्ति हों तो आपके दोनों प्रश्नोंपर[1] मेरा उत्तर स्वीकारात्मक है।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

[डॉ० एडवर्ड नंडी
जेकब चेम्बर्स
कोर्ट रोड
जोहानिसबर्ग]

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काइव्ज़ एल० जी० फाइल सं० ९३: एशियाटिक्स

१. प्रश्न निम्नलिखित थे:

"(क) इस उपनिवेशमें कुछ भारतीयोंके गैरकानूनी तरीकेसे आनेकी बात कही गई है और उनकी संख्याके बारेमें ब्रिटिश भारतीयोंके प्रतिनिधियों और एशियाई विभागके अधिकारियोंका अन्दाज मेल नहीं खाता। यह देखते हुए क्या आप किसी ऐसे आयोग या अदालतका निर्णय स्वीकार कर सकेंगे जिसका एक व्यक्ति न्यायाधीश और दूसरा व्यक्ति गैरसरकारी, अदालती जाँच करनेमें समर्थ तथा निष्पक्ष हो?

(ख) जो भारतीय कानूनन इस उपनिवेशमें लौट सकते हैं किन्तु जिन्हें किसी कारण ट्रान्सवालमें प्रवेशकी अनुमति प्राप्त नहीं हो सकी है, वे इस समय चाहे भारतमें हों चाहे और कहीं; क्या उनके बारेमें उक्त आयोगके एकमत फैसलेको निर्णायक मान सकेंगे? यदि अदालतके दोनों सदस्योंमें मतभेद हो तो उस हालतमें कोई भी पक्ष सर्वोच्च न्यायालयके सामने अपील कर सकता है।"

४५१. पत्र : 'लीडर' को[1]

जोहानिसबर्ग
सितम्बर २१, १९०६

सम्पादक
'लीडर'

महोदय,

अभी हालमें फोक्सरस्टमें पूनिया नामकी एक स्त्री अनुमतिपत्र न होनेपर गिरफ्तार की गई थी, यद्यपि वह अपने पतिके साथ थी। इस घटनाके सम्बन्धमें मैंने अखबारोंको एक पत्र[2] लिखा था। आपके अपने डर्बन-संवाददाताने आपको जो-कुछ लिख भेजा है वह, सारांशत:, मेरे पत्रका स्पष्टीकरण है। आपका संवाददाता कहता है: "ट्रान्सवालके नियमोंमें परिवर्तनका कारण यह था कि

१. यह २९-९-१९०६ के **इंडियन ओपिनियन**में भी पुनः प्रकाशित हुआ था।

२. देखिए "पत्र : अखबारोंको", पृष्ठ ४४४-५। इस सम्बन्धमें २१-९-१९०६ के **नेटाल मर्क्युरी**में पूनिया सम्बन्धी घटनाके बारेमें यह स्पष्टीकरण छपा था :

"ट्रान्सवालके अधिकारियोंने फोक्सरस्टमें एक भारतीय स्त्रीको रोक लिया था, जिसपर श्री मो० क० गांधीने **रैंड डेली मेल**में आपत्ति की है। वह नेटालके कलके अखबारोंमें छपी है। स्पष्ट है कि इस घटनाका गलत अर्थ निकाला गया है। श्री गांधीके पत्रसे यह प्रतीत होता है कि सीमापर अनुमतिपत्र बिना आनेवाली एशियाई स्त्रीको रोकना अभूतपूर्व घटना है। उसमें ट्रान्सवाल सरकारकी पुलिसको दी गई हिदायतोंको 'स्त्रियोंके विरुद्ध युद्ध' बताया गया है। किन्तु डर्बनके प्रवासी-अधिकारियोंने इसको बिलकुल गलत बताया है। उन्होंने स्पष्ट किया है कि ट्रान्सवालके नियमोंके अनुसार प्रत्येक एशियाई प्रवासीके पास, चाहे वह बालिग हो या नाबालिग, पुरुष हो या स्त्री, अनुमतिपत्र होना आवश्यक है। तभी उसको उपनिवेशमें प्रवेश करनेकी इजाजत दी जायेगी। इसके अतिरिक्त, जो पुरुष अपनी पत्नीको अपने साथ ला रहा है, उसको यह भी सिद्ध करना है कि उसका उस स्त्रीके साथ विवाह हुआ है। नेटालमें स्थिति कुछ भिन्न है। वहाँ जो स्त्री अपने पतिके साथ आती है उसको अलग अनुमतिपत्र दिखाना आवश्यक नहीं होता। फिर भी पुरुष को इसका विश्वासजनक प्रमाण देना पड़ता है कि वह स्त्री उसकी पत्नी है और उसको इस आशयका प्रमाणपत्र ही साथ नहीं लाना होता, बल्कि इस सम्बन्धमें बारीकीसे व्यक्तिगत छानबीन भी की जाती है। प्राय: पतिके पंजीकरण-प्रमाणपत्रपर पत्नीका हुलिया दर्ज कर दिया जाता है, ताकि वह उसके व्यक्तिगत पासका काम दे जाये और उससे तत्काल उसकी शिनाख्त हो जाये। किन्तु प्रतीत होता है कि हुलिया मुसलमान स्त्रियोंके बारेमें कभी-कभी दर्ज नहीं भी किया जाता। उनका मुँहपर बुर्का डालकर निकलना मजहबी फर्ज है। ऐसा कभी-कभी ही होता है, या कभी नहीं होता, कि स्थानीय प्रवासी-अधिकारी इन स्त्रियोंके बुर्के हटानेका आग्रह करें। जहाँ-कहीं सम्भव होता है, प्रवासियोंकी धार्मिक भावनाओंका हर तरह खयाल रखा जाता है।

"ट्रान्सवालमें, जहाँ कुछ समयसे एशियाइयोंके पृथक्करणकी नीति पूरे जोरसे बरती जा रही है, रंगदार प्रवासियोंका प्रवेश और भी ज्यादा कठिन हो गया है। और यही कारण है कि वहाँ पुरुषोंकी भाँति स्त्रियोंके लिए भी अनुमतिपत्र रखना जरूरी कर दिया गया है। एक समय था जब कि अध्यादेशकी धारामें केवल "एशियाई" का उल्लेख होनेके कारण स्त्रियों और बच्चोंको पासोंके बिना आने दिया जाता था; किन्तु बादमें इसमें संशोधन करके स्त्रियों और पुरुषों दोनोंको शामिल कर लिया गया है। मालूम हुआ था कि उपनिवेशमें जो भारतीय रह रहे हैं प्रकटत: उनकी पत्नियोंके रूपमें स्त्रियाँ लाई जा रही हैं। किन्तु वे पत्नियाँ जैसी कुछ नहीं थीं, बल्कि दुश्चरित्र स्त्रियाँ थीं। और अब ट्रान्सवालके अधिकारी स्त्रियोंके लिए भी अनुमतिपत्र लेनेपर

जो भारतीय इस समय उपनिवेशमें रहते हैं, वे स्त्रियोंको पत्नियोंके रूपमें ला रहे हैं, ये वस्तुतः उनकी पत्नियों जैसी कुछ नहीं होतीं, प्राय. दुश्चरित्र स्त्रियाँ होती हैं।" भारतीय स्त्री जातिपर इस दुष्टतापूर्ण लांछनपर सही बैठने लायक एक ही वाक्यका प्रयोग मैं कर सकता हूँ — सो यह कि, यह एक लज्जाजनक असत्य है। आपको उस प्रवासी-अधिकारीका नाम छाप देना चाहिए जिसने, बताया जाता है, यह बहुमूल्य कारण दिया है। मैं उसको चुनौती देता हूँ कि वह किसी एक भी ऐसी स्त्रीका नाम प्रकाशित करे। मुझे शान्ति-रक्षा अध्यादेशके प्रशासनका बहुत बड़ा अनुभव है, किन्तु मुझे यह कहनेमें कोई हिचक नहीं है कि इसपर अमलके पूरे अरसेमें मेरी जानकारीमें ऐसी एक भी दुश्चरित्र स्त्री उपनिवेशमें आपके सवाददाताके सुझाये हुए तरीकेसे प्रविष्ट नहीं हुई है। मैंने सरकारी तौरपर जानकारी माँगी है, जो आपके पाठकोंकी सेवामें प्रस्तुत की जायेगी।[1] इस बीच, क्या यह कुछ आश्चर्यकी बात नहीं है कि ट्रान्सवालके नियमोंके सम्बन्धमें स्पष्टीकरण इतनी दूर स्थित डर्बनसे चलकर यहाँ आये?

आपका, आदि

मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

ट्रान्सवाल लीडर, २२-९-१९०६

४५२. स्वर्गीय न्यायमूर्ति बदरुद्दीन तैयबजी

इधर कुछ दिनोंसे भारत अपने योग्यतम सपूतोंको खोता जा रहा है। अभी कलकी ही बात है कि हमें स्वर्गीय श्री उमेशचन्द्र बनर्जीके देहावसानकी बात[2] लिखनी पड़ी थी। आज हमको उन्हींके समान प्रतिष्ठित दूसरे देशभक्त न्यायमूर्ति बदरुद्दीन तैयबजीकी मृत्युका समाचार देना पड़ रहा है। स्वर्गीय श्री बनर्जीके समान ही श्री बदरुद्दीन तैयबजी भी नौरोजी परम्पराके थे।

वे बम्बईकी तरफके एक सर्वप्रथम बैरिस्टर थे, जिन्होंने १८६७ में बैरिस्टरी शुरू की थी। वे ही पहले भारतीय थे जिनका नाम बम्बईके उच्च-न्यायालयमें एडवोकेटके रूपमें दर्ज हुआ था। स्वर्गीय श्री बदरुद्दीन तैयबजी निजी अध्यवसाय और योग्यताके कारण शीघ्र ही अपने व्यवसायके उच्च शिखरपर पहुँच गये। वे राष्ट्रीय कांग्रेसके संस्थापकोंमें थे और उसके तीसरे अधिवेशनके अध्यक्ष थे। उनका उर्दूका ज्ञान अनूठा था। अंग्रेजी या उर्दू दोनों भाषाओंके वक्ताके रूपमें वे समान रूपसे चमके। बम्बई उच्च-न्यायालयके न्यायाधीशके रूपमें उनकी बहुत प्रतिष्ठा थी और उनके फैसले सदैव सही और न्याययुक्त माने जाते थे। अपने सहधर्मियोंके बीच उनके समाज-सुधारक कार्य अत्यन्त

जोर देते हैं, क्योंकि इस सावधानीके बिना वे यह अनुभव करते हैं कि लोग असीमित संख्यामें स्त्रियोंको केवल यह कहकर ला सकते हैं कि वे उनकी विवाहिता हैं।

"कुछ भी हो, जो स्त्री फोक्सरस्टमें रोकी गई थी, उसका उदाहरण ट्रान्सवालमें अनधिकृत प्रवेशको सीमित करनेकी अधिकारियोंकी कार्रवाईका अकेला उदाहरण नहीं है। और स्थानीय रूपसे प्राप्त सूचनासे निश्चय ही यह प्रकट होता है कि ट्रान्सवालके एक अखबारकी "सरकारका स्त्रियोंके विरुद्ध युद्ध" टिप्पणी तभी उचित है जबकि कोई ट्रान्सवालके नये कानूनोंको उस दृष्टिसे देखे।"

१. देखिए "पत्र: लीडरको", पृष्ठ ४५६ और पृष्ठ ४६१।

२. देखिए, "स्वर्गीय उमेशचन्द्र बनर्जी", पृष्ठ ४०८।

प्रशंसनीय थे और वे स्त्री-शिक्षाके दृढ़ पक्षपाती थे। उन्होंने न केवल मुसलमानोंमें अपने भाषणसे स्त्री शिक्षाका प्रचार किया, वल्कि स्वयं अपने कुटुम्बमें भी उसका उदाहरण पेश किया। उनकी अपनी लड़कियोंने विश्वविद्यालयकी प्रथम कोटिकी शिक्षा प्राप्त की है।

हम स्वर्गीय श्री तैयबजीके कुटुम्बके प्रति अपनी सादर समवेदना प्रकट करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२-९-१९०६

४५३. ट्रान्सवालके भारतीयों द्वारा विरोध

पुराने एम्पायर नाटक घरमें जो विशाल भारतीय सभा[१] हुई थी, उसका परिणाम प्रकट होने लगा है। 'रैंड डेली मेल' ने ट्रान्सवाल अध्यादेशके मसविदेके विरुद्ध किये गये उस आन्दोलनकी, जिसकी परिणति जोहानिसबर्गमें हुए हालके महान प्रदर्शनमें हुई, बंग-भंग आन्दोलनसे झूठी तुलना की है और उक्त सभाकी हँसी उड़ाई है। इस उपहाससे प्रकट होता है कि सभाका महत्त्व अनुभव किया गया है। 'स्टार' तो इस सभाके कारण बौखला गया है। वह दक्षिण आफ्रिकियोंको भड़काता है कि ब्रिटिश भारतीयोंने अध्यादेशके विरुद्ध जो सत्याग्रह करनेका निश्चय किया है उसके जवाबमें उन्हें ट्रान्सवालसे भारतीयोंको बलपूर्वक निकाल देनेका आन्दोलन आरम्भ करना चाहिए।

न तो 'डेली मेल' ने और न 'स्टार' ने अध्यादेशको समझने या उसका अध्ययन करनेका कष्ट उठाया है। उनके लिए यह पंजीयन करानेकी एक निर्दोष प्रणाली है। यदि इस अध्यादेशको 'पंजीयन अध्यादेश' का गलत नाम देनेके स्थानपर 'संदिग्धों या अपराधियोंकी पहचानका अध्यादेश' नाम दिया गया होता तो कदाचित् हमारे सहयोगियोंने इसकी भयंकरताका अनुभव किया होता। जैसा कि 'डेली मेल' कहता है, यह जरूरी नहीं है कि हम सरकारपर जानबूझकर भारतीयोंका अनावश्यक अपमान करनेका दोषारोपण करें। अध्यादेश स्वयं स्पष्ट है। यह बात समझ ली जानी चाहिए कि भारतीयोंके पास पहलेसे ही ऐसे पंजीयन प्रमाणपत्र हैं, जिनमें अँगूठेके निशानके साथ तफसीलसे सब बातें दी गई हैं, ताकि प्रमाणपत्रवालेकी ठीक पहचान की जा सके। नये अध्यादेशमें अब पहचानकी एक ऐसी प्रक्रियाकी व्यवस्था की गई है, जिसका आयोजन भविष्यमें समय-समयपर बदलते रहनेवाले विनिमयोंके अनुसार होगा।

'स्टार' जिसे, मालूम पड़ता है, सरकारका विश्वास प्राप्त है, हमें सूचित करता है कि शिनाख्तकी नई प्रणाली प्रमाणपत्रोंके अनुचित उपयोग या दुरुपयोगका पता लगानेके लिए काफी सख्त होगी। 'स्टार' द्वारा दी गई सूचनाके बिना भी यह अनुमान करना सर्वथा उचित है कि नई प्रणाली वर्तमान प्रणालीसे अवश्यमेव ज्यादा कठोर होगी, क्योंकि श्री डंकनने हैरतमें डाल देनेवाले आत्मविश्वासके साथ घोषणा की है कि वर्तमान प्रणाली अपर्याप्त है। हमारे पास यह विश्वास करनेके कारण हैं कि अध्यादेशके प्रथम वाचनके समय तक प्रचलित प्रणालीकी जानकारी श्री डंकनको नहीं थी। पर यह तो प्रसंगवश कह दिया गया है, और भारतीय मामलोंके बारेमें ट्रान्सवालमें जो उपेक्षा और अज्ञता आम तौरपर देखनेको मिलती है उसके अनुरूप ही है।

भारतीय समाजने ब्रिटिश शासनके अन्तर्गत पहला पंजीयन अपनी इच्छासे कराया था। इस आत्मोत्सर्गपूर्ण शिष्टाचारको सरकारने गलत समझा है। उसने समझा कि भारतीय ऐसे दब्बू

१. देखिए "सार्वजनिक सभा", पृष्ठ ४३०-४।

स्वभावके है जो किसी भी दबाव और अपमानको सहन कर लेगे। अगर 'स्टार' समझता है कि भारतीय हर तरहका अपमान सहनेके लिए ही पैदा हुए है तो इस तरहकी सभा, जिसने हमारे सहयोगीको उत्तेजित किया है, आवश्यक थी — भले उसकी इस धारणाके निराकरणके लिए ही क्यों न हो।

न तो 'डेली मेल' के उपहाससे और न 'स्टार' की तीव्र धमकियोसे ट्रान्सवालके भारतीयोको अपने पवित्र निश्चयसे विरत होना चाहिए। धमकियो और उपहासकी तो आशका थी ही। नि.सन्देह सघर्ष समाप्त होने तक हमें दोनोंका अधिकाधिक सामना करना पड़ेगा। ट्रान्सवालके विभिन्न केन्द्रोसे जो सूचनाएँ हमे मिल रही है उनसे मालूम होता है कि इस ऐतिहासिक संकल्पको पूर्ण करनेका निश्चय ज्यों-का-त्यो दृढ़ है। परमात्मा इस परीक्षामे हमारे पीड़ित देशबन्धुओकी सहायता करे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२–९–१९०६

४५४. ट्रान्सवाल अनुमतिपत्र अध्यादेश

अन्यत्र हम सरकार बनाम भाभाके मुकदमेके बारेमे सर्वोच्च न्यायालयके फैसलेका पूर्ण पाठ[1] छाप रहे है। याद होगा कि कुछ समय पहले श्री ई० एम० भयात अपने पुराने डच पजीयन-प्रमाण-पत्रके बलपर ट्रान्सवालमें प्रविष्ट हुए थे। फोक्सरस्टके मजिस्ट्रेटने निर्णय दिया था कि इस प्रकारका प्रमाणपत्र शान्ति-रक्षा अध्यादेशकी शर्तोके अन्तर्गत ट्रान्सवालमें निवास करनेका कानूनी अधिकार देता है। इसपर महान्यायवादीने पुनर्विचारके लिए सर्वोच्च न्यायालयसे प्रार्थना की, पर सर्वोच्च न्यायालयने पुनर्विचारकी दरखास्त खारिज कर दी और श्री भयातके मामलेमे जो मुद्दा उठाया गया था वह अनिर्णीत ही रह गया।[2]

वही मुद्दा उपर्युक्त मामलेमे भी सर्वोच्च न्यायालयके सामने उठाया गया और इस बार, ट्रान्स-वालके सर्वोच्च न्यायाधिकरणसे इसपर निर्णय लेनेमें, कोई कठिनाई नही हुई। फैसला ब्रिटिश भारतीयोके दावेके विरुद्ध गया है, और इसपर हमे आश्चर्य नही हुआ है। किन्तु सर्वोच्च न्याया-लयने मुख्य मुद्देपर अपील करनेवालेके पक्षमे फैसला दिया है। वह फैसला है कि यदि अनुमति-पत्र रखनेसे छूट पानेके लिए कोई प्रार्थनापत्र दिया जाता है और मजिस्ट्रेट उसकी जाँच करने-पर निर्वासन-आदेश देता है तो वह आदेश और भी प्रमाण उपलब्ध होनेपर मजिस्ट्रेटको अपने निर्णयपर पुनर्विचार करनेसे नही रोकता। किन्तु सर्वोच्च न्यायालयने फैसला दिया कि श्री भाभाके मामलेमे मजिस्ट्रेटका निर्णय सही था, यद्यपि वह गलत पक्षपर आधारित था। इसके परिणामस्वरूप मजिस्ट्रेट द्वारा दी गई कारावासकी सादी सजापर हिचकिचाहटके साथ अदालतकी स्वीकृतिकी मुहर लग गई; यद्यपि सर्वोच्च न्यायालयने अपील करनेवालेके साथ बहुत सहानुभूति प्रकट की। मुख्य न्यायाधीशने सुझाव दिया कि ताजको यह सजा माफ कर देनी चाहिए और चूंकि यह एक परीक्षात्मक मुकदमा था और मुख्य न्यायाधीश तथा न्यायमूर्ति मेसन दोनोंका विचार था कि श्री भाभाके पास पुराना डच प्रमाणपत्र है, इसलिए उन्हे अनुमतिपत्र मिल जाना चाहिए।

१. यहाँ नहीं दिया गया।
२. देखिए "ट्रान्सवालके अनुमतिपत्र", पृष्ठ ३८४।

लेफ्टिनेंट गवर्नरने दयाके अपने परमाधिकारका उपयोग किया है और श्री भाभाकी सजा माफ कर दी है। और बहुत सम्भव है कि श्री भाभाको ट्रान्सवालमें शान्तिपूर्वक रहने दिया जायेगा। इसलिए जहाँतक व्यक्तिका सवाल है, इससे आखिर न्याय हो ही जायेगा।

किन्तु इस मामलेका भारतीय स्थितिपर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है। इससे प्रकट होता है कि शान्ति-रक्षा अध्यादेशके प्रशासनमें कहीं कोई भारी त्रुटि है। हमें मिडिलबर्गमें ब्रिटिश भारतीय शिष्टमण्डलको दिये गये लॉर्ड सेल्बोर्नके पवित्र वचन प्राप्त हैं कि ट्रान्सवालमें युद्धके पूर्व निवास करनेवाले सब भारतीयोंको देशमें प्रवेश करनेका अधिकार होगा।[1] हमें उपनिवेश-सचिवका आश्वासन प्राप्त है कि ऐसे निवासियोंको देशमें प्रवेश करनेका अधिकार है। फिर भी हम देखते हैं कि श्री भाभाको ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेमें बहुत ज्यादा कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा। इस तरहके अनेक मामले हैं जिनमें पंजीयनके प्रमाणपत्रोंका सबूत होनेपर भी लोगोंको अनुमतिपत्र नहीं मिले हैं। तब क्या हम यह आशा नहीं कर सकते कि लॉर्ड सेल्बोर्नका आश्वासन कार्य-रूपमें परिणत होगा और जिन लोगोंको समुद्र तटपर प्रतीक्षा करते काफी लम्बा समय हो गया है, उन्हें ट्रान्सवालमें पुनः प्रवेश करनेकी अनुमति दी जायेगी?

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२–९–१९०६

४५५. ट्रान्सवालमें भारतीय स्त्रियोंकी मुसीबतें

भारतीय स्त्रियोंको ट्रान्सवालमें अनुमतिपत्रोंकी परेशानी होती ही रहती है। अपने अंग्रेजी विभागमें हम एक घटनाकी हकीकत दे रहे हैं। मंगरे और उसकी पत्नी पूनिया दोनों १४ सितम्बरको ट्रान्सवाल जा रहे थे। फोक्सरस्टमें जाँच करनेवाली पुलिसने पत्नीको उतार दिया; क्योंकि उसके पास अलग अनुमतिपत्र नहीं था। मंगरेने अपना अनुमतिपत्र व पंजीयनपत्र दिखाया। पंजीयन-पत्रमें पत्नीका नाम दर्ज था फिर भी उसे जानेकी आज्ञा नहीं दी गई। इसलिए पति-पत्नी दोनों उतरे और कैदमें रहे। १५ तारीखको मुकदमा चलाया गया। उसमें पुलिस अधिकारीने अपने बयानमें कहा कि यदि स्त्रियों और बालकोंके पास — फिर वे चाहे जिस उम्रके हों और अपने पति अथवा माँ-बापके साथ सफर कर रहे हों या अकेले हों — अनुमतिपत्र न हों तो उन्हें पकड़नेका उसे आदेश है। बयानसे यह भी मालूम हुआ कि पत्नी ३१ मई १९०२ को ट्रान्सवालमें थी। इतना होनेपर भी मजिस्ट्रेटने इस बिनापर, कि स्त्रीने बयान नहीं दिया, उसे उसी दिन ७ बजेसे पहले देश छोड़नेका आदेश दिया। [इस तरह इस राज्यमें पत्नीको पतिसे और बालकोंको अपने माता-पितासे जुदा किया जाता है। इस सम्बन्धमें तत्काल प्रभावशाली कार्रवाई करना जरूरी है। हमें आशा है कि आवश्यकता पड़नेपर यह मुकदमा सर्वोच्च न्यायालयमें ले जाया जायेगा। हम मानते हैं कि ऐसे कानूनके सामने आत्मसमर्पण करनेकी अपेक्षा मर्दोंका जेल जाना हजार गुना बेहतर है।]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२–९–१९०६

१. सितम्बर ४को मिडिलबर्गमें मानपत्र भेंट किये जानेपर लॉर्ड सेल्बोर्नने यह आश्वासन दिया था। देखिए इंडियन ओपिनियन, ८–९–१९०६।

४५६. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी[1]

ट्रान्सवालकी विराट सभा

'रैंड डेली मेल'का कहना है कि एम्पायर नाटक-घरमें भारतीयोकी जैसी सभा हुई थी, वैसी ट्रान्सवालमें शायद ही कभी हुई हो। नाटक-घर खचाखच भर गया था। कमसे-कम तीन हजार व्यक्ति उपस्थित होंगे। बहुतेरे लोग भीतर जा ही न सके। दूकानदारो और फेरीवालो — सभीने दस बजेसे काम बन्द कर दिया था। दरवाजे यद्यपि २ बजे खुलनेवाले थे, फिर भी लोगोने ११ बजे से इकट्ठा होना शुरू कर दिया था। १२ बजे नाटक-घर खोलना पड़ा। डेढ़ बजे तो उस विशाल नाटक-घरमें घुसनेकी गुंजाइश ही नही थी। इतने लोग होते हुए भी कोई किसीसे लडाई-झगड़ा नही करता था। सब जगह शान्ति थी। सब धीरजके साथ कामकी शुरुआतका रास्ता देखते बैठे या खड़े थे। ऐसी सभा और ऐसा उत्साह कभी देखनेमें नही आया।

इससे यद्यपि भारतीयोके दु:खोका दिग्दर्शन होता है, फिर भी यह स्वीकार करना होगा कि सभाकी इस सफलताका मुख्य श्रेय हमीदिया इस्लामिया अंजुमनको है। इस अंजुमनका भवन हिन्दू-मुसलमान सबके लिए खोल दिया गया था। उसमें आठ दिन पहलेसे सभाएँ होने लगी थी, और सभी भारतीय नेता उसमें इकट्ठा होकर विचार-विमर्श करते थे। बैठकें प्राय. रातके बारह बजे तक चलती रहतीं। हमीदिया इस्लामिया अंजुमनसे दक्षिण आफ्रिकाकी सभी युवक-मण्डलियोंको सबक लेना चाहिए।

इस सभामें बहुत जगहोसे प्रतिनिधि आये थे। मिडिलबर्ग, स्टैंडर्टन, क्लार्क्सडॉर्प आदि स्थानोसे तार व पत्र आये थे, जिनमें सभाके प्रति सहानुभूति व उससे सहमति व्यक्त की गई थी। उपनिवेश-मन्त्री और श्री चैमनेको सभामें उपस्थित होनेके लिए निमन्त्रित किया गया था। श्री चैमने हाजिर थे। उन्हे अध्यक्षके दाहिनी ओर कुर्सी दी गई थी। इसके अतिरिक्त प्रिटोरियाके वकील श्री लिखटन-स्टाइन, श्री इजरेयलस्ट्रम, श्री लिटमैन लैंड्सवर्ग, स्टुअर्ट कैम्बेलके मैनेजर आदि गोरे उपस्थित थे। तीनों समाचारपत्रोके सवाददाता भी आये थे।

ठीक तीन बजे अध्यक्ष श्री अब्दुल गनीने अपना भाषण शुरू किया। सबको यही महसूस हुआ कि इस बार श्री अब्दुल गनीने तो हद कर दी। उनका भाषण सरल हिन्दुस्तानीमें सक्षिप्त और लच्छेदार था। उन्होंने जो बातें कही वे मध्यममार्गकी और जोशीली थी। उनकी आवाज जोरदार और सबको भली भाँति सुनाई पड़ने लायक थी। लोगोने उनके भाषणका तालियोसे स्वागत किया। जब उन्होंने जेल जानेकी बात की तब सबने एक स्वरसे कहा — "हम जेल जायेंगे लेकिन फिरसे पंजीयन नही करवायेंगे।"

श्री अब्दुल गनीका अंग्रेजी भाषण डॉ० गॉडफ्रेने पढ़कर सुनाया।

श्री नानालाल शाह

पहला प्रस्ताव पेश करनेका काम श्री नानालाल वालजी शाहके सुपुर्द था। श्री शाहका भाषण अंग्रेजीमें था। उसका साराश निम्नानुसार है:

> आज हम बहुत गंभीर कामके लिए इकट्ठा हुए हैं। श्री डंकनने कहा है कि इस नये कानूनकी जरूरत है। उन्होंने इसका कारण यह बताया है कि जो पंजीयनपत्र दिये गये हैं उन्हें बेचा जा सकता है और इसलिए उन पंजीयनपत्रोंके आधारपर ऐसे लोग

१. यह संवाद "विशेष रिपोर्ट" के रूपमें छपा था।

आ जाते है जिन्हें आनेका हक नहीं है। हम इसके लिए बैंकका उदाहरण लें। यदि बैंकको मालूम हो कि उसके नामसे कुछ जाली नोट भी चल रहे है, तो क्या वह सारे नोटोंको रद कर देगा? हमसे श्री डंकन कहते है कि आपके पंजीयनपत्र झूठे हैं। फिर भी हम बदल देंगे। यह कैसा कानून? लेकिन मैं यह कहना चाहता हूँ कि पंजीयनपत्र झूठे हैं ही नहीं।

अपना पंजीयनपत्र निकालकर श्री शाहने कहा, "इस पंजीयनपत्रपर मेरा नाम है, मेरी पत्नीका नाम है, मेरी जाति है, मेरा धधा है, मेरी उँचाई है, मेरी उम्र है।" और, उन्होंने कागज पटककर कहा:

इसपर मेरे अँगूठेकी निशानी है। क्या इतना काफी नहीं है? क्या इस पंजीयनपत्रको दूसरा व्यक्ति काममें ला सकता है? क्या सरकार अब हमारे माथेपर कलंकका टीका लगाना चाहती है? मै अपना पंजीयनपत्र कभी नहीं दूंगा। मैं पंजीकृत नहीं हूँगा। वैसा करनेकी अपेक्षा मुझे जेल जाना पसंद है और मै वहाँ जाऊँगा। (तालियाँ)।

श्री सी० के० टी० नायडूने श्री शाहका समर्थन किया और तमिल भाषामें तमिल लोगोंको समझाया।

श्री अब्दुल रहमान

दूसरे प्रस्तावका समर्थन करनेके लिए श्री अब्दुल रहमान खड़े हुए। उन्होंने संक्षेपमें बताया कि हमें लगता है कि ब्रिटिश सरकारके राज्यमें हमपर डच सरकारकी अपेक्षा ज्यादा जुल्म हो रहा है। सर हेनरी कॉटनने कहा है कि डच सरकार यदि हमें कोड़े मारती थी, तो ब्रिटिश सरकार बिच्छूके डंक मारती है।[1]

डॉक्टर गॉडफ्रे

श्री अब्दुल रहमानका समर्थन करते हुए डॉ० गॉडफ्रेने कहा कि,

लॉर्ड मिलनर, लॉर्ड रॉबर्ट्स, श्री चेम्बरलेन आदिने जो हमें बड़े-बड़े वचन दिये थे, उनपर पानी फिर गया है। (शर्म!)।

भारतीय समाजने डर्बनके भारतीय विद्यार्थियोंको स्वर्गीया महारानीकी तसवीर दी थी।[2] उसे दिखाते हुए डॉक्टरने कहा,

इन महारानीको हम पूजते है। इनकी घोषणापर ट्रान्सवाल सरकारने पानी फेर दिया है। ब्रिटिश झंडेके नीचे समान हक, स्वतंत्रता तथा न्याय मिलना चाहिये। किन्तु हमें गुलामी, अन्याय और अधिकारोंका अपहरण मिला है। (अफसोस!)। मै यह बिलकुल माननेको तैयार नहीं कि बहुतेरे भारतीय बिना अनुमतिपत्रके या झूठे अनुमतिपत्रोंसे आये हैं। मै श्री लवडे तथा उनके भाई-बन्दको चुनौती देता हूँ कि यदि उनमें हिम्मत हो तो वे भले इसके विपरीत बात साबित करके दिखायें। हम यह जुल्म सहन करनेवाले नहीं हैं। उसके बजाय हम जेल जायेंगे। कोई यह न समझ ले कि हम डरकर भाग जायेंगे।

१. सन् १९०४ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, बंबईके २० वें अधिवेशनमें उन्होंने कहा था, "भारतीय उपनिवेशियोंके प्रति उनके [ब्रिटिश शासकोंके] तीर श्री क्रूगरकी तोपोंसे भी अधिक भयानक रहे हैं और जहाँ वे कोड़े मारते थे वहाँ ये बिच्छुके डंक मारते हैं।"

२. देखिए खण्ड ३, पृष्ठ १९०–१ और पृष्ठ १९२ के सामने दिया गया चित्र।

यदि कानून पास हो जायेगा तो हम सब अदालतमें जाकर कहेंगे कि हमें पकड़िए। (तालियाँ)।

पॉचेफस्ट्रूमके श्री गेटाने गुजरातीमें दूसरे प्रस्तावका समर्थन किया।

श्री ईसप मियाँ

श्री ईसप मियाँका काम तीसरा प्रस्ताव पेश करना था। उन्होंने कहा:

ट्रान्सवालमें अंग्रेजी राज्य रूसके राज्यसे भी ज्यादा खराब है। मैं स्वयं श्री डंकनसे मिलने प्रिटोरिया गया था। उन्होंने बहुत-सी बातें कही थीं। लेकिन किया कुछ भी नहीं। उलटे हमें दगा दिया है। हमें एक शिष्टमण्डल विलायत भेजना ही चाहिए। वहाँ हम शोर मचायेंगे, और उतनेपर भी यदि सरकारने नहीं सुना तो हम जेल जायेंगे। मैं ट्रान्सवालमें उन्नीस वर्षोंसे हूँ। लेकिन जो जुल्म मैंने पिछले तीन वर्षोंमें देखे हैं वैसे कभी नहीं देखे।

श्री ई० एस० कुवाडिया

इस प्रस्तावका समर्थन करते हुए श्री इब्राहिम सालेजी कुवाडियाने नीचे लिखे अनुसार भाषण दिया:

एशियाई अध्यादेशके मसविदेके सम्बन्धमें अध्यक्ष आदि महोदयगण कह चुके हैं, इसलिए मैं मानता हूँ कि मेरे लिए बोलनेको कुछ नहीं रह जाता। इतना तो साफ है कि जिस सरकारके राज्यमें जुल्म नहीं है वहाँकी प्रजा सुखी है, और वहाँ प्रजा और सरकार दोनों आरामसे रहते हैं। उसी प्रकार हमारे इन्हीं अंग्रेज मित्रोंके द्वारा उकसाये जानेपर लड़ाईसे पहले हमारी भूतपूर्व सरकार (बोअर सरकार) ने हमारे लिए जुल्मी कानून बनाया था। लेकिन चूँकि उस सरकारके मनमें हमारे लिए दया थी, इसलिए वह उस कानूनको अमलमें नहीं लाई। अंग्रेजोंके साथ लड़ाई चली तबतक उसकी मेहरबानीसे हम चैनसे रहे। अतः उसके लिए हमें बोअर सरकारका एहसान मानना चाहिए। अब चूँकि हमारी सरकारने इस उपनिवेशको जीत लिया है इसलिए हमें आशा थी कि अब तो हमें सब हक मिल जायेंगे और इसी आशाके मुताबिक हमारी सरकारने हमें वचन भी दिये थे। लेकिन दुर्भाग्यसे हम आज उससे उलटा ही देख रहे हैं और हमारे खिलाफ ऐसे कानून बनाये जा रहे हैं जो हमसे सहन नहीं किये जा सकते। अतः हमारा कर्त्तव्य है कि यदि सरकार हम लोगोंके लिए उचित कानून बनाये तो हमें उसके अधीन रहना चाहिए; किन्तु यह कानून वैसा नहीं है। हमारी सरकारने जबसे इस उपनिवेशको जीत लिया है तबसे वह खासकर हम लोगोंपर एकके बाद एक सख्त प्रतिबन्ध लगाती जा रही है। उन प्रतिबन्धोंको हमने आजतक सहन किया। किन्तु हमारा मन भर गया है। जैसे नदीमें बाढ़ आनेपर नदीके भर जानेसे पानी बाहर निकल जाता है, यानी नदीमें जगह ही नहीं रहती, उसी प्रकार अब हममें ऐसे जुल्मी कानूनोंको सहन करनेकी शक्ति नहीं रही। इसलिए अब हमें इस अध्यादेशके मसविदेके विरोधमें सख्त कदम उठाना चाहिए, यद्यपि हमसे यह कहा जा रहा है कि हम उनकी रैयत हैं और हमारे फायदेके लिए यह कानून बनाया जा रहा है। यदि यह बात है तो इस सम्बन्धमें मुझे इतना ही

कहना है कि हमारी सरकार हमें ब्रिटिश रैयत नहीं बनाती, बल्कि इससे हमारी मैयत निकालना चाहती है। इसलिए श्री ईसप मियाँने विलायत शिष्टमण्डल भेजनेके सम्बन्धमें जो प्रस्ताव रखा है उसका मैं समर्थन करता हूँ और कहता हूँ कि जैसे भी हो, जल्दी ही शिष्टमण्डल विलायत भेजकर इस सम्बन्धमें टक्कर लेनी चाहिए।

क्रूगर्सडॉर्पके श्री ए० ई० वानियाने इस प्रस्तावका समर्थन किया और प्रिटोरियाके श्री मणिलाल देसाईने समर्थनमें भाषण दिया।

जेलका प्रस्ताव

श्री हाजी हबीब भाषण देनेको खड़े हुए तो सभाने तालियोंसे स्वागत किया। उनका भाषण इतना तीखा और जोशीला था कि जो गुजराती नहीं समझते थे वे भी कहते थे कि हम उनका मतलब समझते है। कभी-कभी श्री हाजी हबीब रसप्रद अंग्रेजी शब्दोंका उपयोग करते थे। उनके भाषणसे लोगोंमें बहुत जोश आया था। उसका सार निम्नप्रकार है:

चौथा प्रस्ताव सबसे जरूरी है। उसीपर सब कुछ निर्भर है। हमारे लिए जेल जानेमें शर्म-जैसी कोई बात नहीं। उसमें प्रतिष्ठा है। श्री तिलक जेल गये। उसके पहले उन्हें बहुत लोग नहीं जानते थे। अब उन्हें आधी दुनिया जानती है। अंग्रेज सरकारसे न्याय नहीं मिलेगा। वह हमें मीठे शब्दोंसे मारती है। उससे हमें धोखा नहीं खाना है। हमसे "सिम्पथी" (हमदर्दी) दिखाती है। लेकिन हम "सिम्पथी" नहीं चाहते। हम "जस्टिस" (इन्साफ) चाहते हैं। अंग्रेज दूसरोंको उपदेश देनेको तैयार होते हैं। ईसाई प्रजाको खुश करनेके लिए तैयार हो जाते हैं। देखिए, तुर्कीका मामला। तुर्कोंके साथ जोर-जबरदस्ती करनेमें अंग्रेज पीछे नहीं हटते; परन्तु अपनी रैयतके हितके लिए उसी जोरो-जबरदस्तीका प्रयोग नहीं करते। यहाँ भी पराई प्रजाओंको — अगर वे गोरी या ईसाई हों तो — आनेकी छूट है। गोरे तो उनके लिए जन्नतसे आये हैं; और हम, वे मानते है, और कहींसे। यह कानून बहुत ही खराब है। यदि यह कानून पास हो जायेगा तो सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि मैं हरगिज फिरसे पंजीकरण नहीं कराऊँगा; बल्कि जेल जानेवाला पहला आदमी रहूँगा। (तालियाँ)। आपको भी मैं वही सलाह देता हूँ। क्या आप सब लोग शपथ लेनेको तैयार है? (सारी सभा ने उठकर कहा — हाँ, हम जेल जायेंगे)। हम ऐसा करेंगे तभी जीतेंगे। डच सरकारके समयमें भी हमने इसको आजमाया था। एक समय हमारे लगभग ४० व्यक्ति बिना परवानेके व्यापार करनेकी बिनापर पकड़े गये थे। मैंने उन्हें सलाह दी थी कि सब जेलमें रहें, लेकिन जमानत देकर न छूटें। मैं तुरन्त ब्रिटिश एजेंटके पास गया था। उन्होंने यह कदम पसन्द किया था और स्वयं न्याय दिलवाया था। यह वही अंग्रेज सरकार है। अब राज चूँकि उसके हाथमें आ गया है, इसलिए हमारे लिए फिर जेल जानेका प्रसंग आया है। इसलिए वहाँ जायेंगे, जायेंगे और जायेंगे।

सभाने इस संकल्पका तालियोंसे स्वागत किया।

श्री हाजी वजीर अली

चौथे प्रस्तावका समर्थन करनेके लिए जब श्री हाजी वजीर अली खड़े हुए तब सारा नाटक-घर तालियोंसे गूँज उठा। कुछ समय बीतनेके बाद ही तालियाँ बन्द हुईं। फिर श्री अली अंग्रेजीमें गर्जना करके जो-कुछ बोले उसका सारांश यहाँ दे रहा हूँ:

मैं जिस प्रस्तावका समर्थन करनेके लिए खड़ा हुआ हूँ वह छोटा-मोटा नहीं है। उसकी जिम्मेदारी बहुत है। मैं ग्यारह बच्चोंका बाप हूँ। फिर भी इस जिम्मेदारीको उठानेको तैयार हूँ। जैसा श्री हाजी हबीबने कहा है, मैं भी फिर से पंजीयन करवानेके बजाय जेल जाऊँगा, और इसमें अपनी प्रतिष्ठा समझूँगा। हमें सरकारने दगा दिया है। हमारी अर्जीके जवाबमें सरकारने कहा कि हम तुम्हे जवाब देंगे। शिष्टमण्डलसे भी यही कहा था। फिर भी दो दिन बाद विधेयक परिषदमें पेश किया गया और चार दिन बाद पास कर दिया गया। (शर्म)। उस विधेयकमें औरतोंका भी पंजीयन करवाना था। किन्तु हमीदिया अंजुमनके प्रयत्नसे वह तो निकाल दिया गया है।

ब्रिटिश झंडा (यूनियन जैक) निकालकर बोले:

मैंने बचपनसे सीखा है कि इस यूनियन जैकके नीचे मेरी सदा रक्षा की जायेगी। उसीके अनुसार आज हम माँग कर रहे हैं। दिल्ली दरबारके समय सम्राट एडवर्डने कहा था कि वे हमें सम्राज्ञीकी सरकारके समान हक देंगे। हमारी प्रतिष्ठाकी रक्षा करेंगे। क्या उस वचनमें ट्रान्सवाल शामिल नहीं है? हम इतना ही चाहते है कि यहाँ बसे हुए भारतीय सुख-शान्तिसे रहें। पराये देशोंके गोरोंकी अपेक्षा हमें ज्यादा हक होने चाहिए। हममें से कोई-कोई बिना अनुमतिपत्रके दाखिल हुए होंगे। उसके लिए वे बड़बड़ाते हैं। मैं हिम्मतके साथ कहता हूँ कि मुझे तीन सिपाही दें तो मैं अभी बिना अनुमतिवाले एक हजार गोरोंको पकड़कर दे दूँ। मैं पच्चीस वर्षसे दक्षिण आफ्रिकामें हूँ। मैंने केपमें मताधिकार और अन्य अधिकार भोगे हैं। मैंने ट्रान्सवालमें जैसा जुल्म देखा है वैसा कहीं नहीं देखा। और ट्रान्सवाल तो अभी ताजका उपनिवेश है। जब यह देश बोअर लोगोंके हाथमें था, तब ब्रिटिश गोरे अपनी अर्जीमें मेरी सही करवानेके लिए आये थे। अब वे हमारे विरुद्ध हो गये हैं। हमें उनकी तरह बन्दूक नहीं उठानी है, लेकिन उनके समान हम जेल जायेंगे।[1] (तालियाँ)।

श्री मूनलाइट मुदलियारने इस प्रस्तावका तमिल भाषणमे समर्थन किया। डॉक्टर गॉडफ्रेने समर्थन करते हुए कहा:

भारत ब्रिटिश हुकूमतका ताज है। उसी तरह हम जोहानिसबर्गकी जेलमें जाकर उस जेलके ताज बनेंगे। हमें पकड़नेके लिए आयें उतना इंतजार भी नहीं करेंगे।

श्री अस्वातने समर्थन करते हुए सबको सलाह दी कि सब भारतीय अपने देश लिखकर भेज दें कि हम सब जेल जानेकी तैयारी कर रहे हैं।

क्रूगर्सडॉर्पके श्री ए० ई० छोटाभाईने गुजरातीमें समर्थन किया और कहा कि क्रूगर्सडॉर्पके लोग पंजीयन करवानेके बदले जेल जानेको तैयार हैं।

श्री उमरजी साहबने भी समर्थन किया।

पीटर्सबर्गके श्री तार मुहम्मद तैयबने कहा कि पीटर्सबर्गके लोग पजीयन करवानेके बजाय जेल जानेको तैयार हैं।

श्री इमाम अब्दुल कादिरने भी समर्थन किया।

जमादार नवाबखाँने समर्थन करते हुए कहा कि उन्होने लड़ाईमें सरकारी नौकरी की है। वे अब नये सिरेसे पंजीयन करवानेका अपमान सहनेकी अपेक्षा जेल जाना पसन्द करेंगे।

१. मालूम पड़ता है, यहाँ हैम्डन और बनियन जैसे जेल जानेवाले ब्रिटेन वासियोंका उन अंग्रेजोंके साथ मुकाबला किया गया है जो दक्षिण आफ्रिकामें बोअरोंसे लड़े थे।

श्री गांधीने कहा कि जेल जानेकी सलाह देनेकी जिम्मेदारी उनकी है। यह कदम गंभीर है, फिर भी आवश्यक है। इससे हमें भय हो सो बात नहीं। बल्कि हमारा कहना है कि भाषण देने, अर्जियाँ देनेके अलावा अब काम करनेका भी समय आया है। लोग प्रस्ताव पास करते हैं तो उसपर अटल रहना भी जरूरी है। और यदि अटल रहे तो समझ लो कि हम आज ही जीत गये।

फिर सारी सभाने खड़े होकर ऊँचे स्वरसे जेल जानेका प्रस्ताव स्वीकार किया।

श्री भीखूभाई डी० मलीयाने पाँचवाँ प्रस्ताव पेश किया और छोटा-सा भाषण दिया। उसका अनुमोदन पीटर्सबर्गके श्री जुसब हाजी वलीने किया।

इस सभाका काम शामको ५-३० पर समाप्त हुआ। फिर श्री चैमने अध्यक्षसे अनुमति लेकर उठे और उन्होंने निमंत्रणके लिए कृतज्ञता प्रकट की।

श्री लाइशनसाईने अध्यक्ष महोदयका आभार माननेका प्रस्ताव पेश किया और कहा कि ऐसी सभा मैंने कभी नहीं देखी थी। उन्होंने आशा व्यक्त की कि उदारदलीय मंत्रिमण्डल न्याय करेगा। श्री इजरेयलस्ट्रमने समर्थन करते हुए सहानुभूति व्यक्त की और लड़ाई जारी रखनेकी सलाह दी।

सभा छः बजनेसे पाँच मिनट पहले समाप्त हुई और सम्राट एडवर्डका तीन बार जय-जयकार किया गया। अन्तमें "ईश्वर हमारे राजाकी रक्षा करे" (गॉड सेव द किंग) गाया गया।

भारतीयोंको यह सभा सदा याद रहेगी।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २२-९-१९०६

४५७. पत्र: 'लीडर'को

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर २२, १९०६

[सम्पादक
'लीडर'
महोदय,]

मैंने अपने इसी महीनेकी २१ तारीखके पत्रमें[1] आपसे वादा किया था कि भारतीय महिला पूनियाके साथ किये गये व्यवहारके सम्बन्धमें सरकारसे प्राप्त कोई भी उत्तर आपको प्रेषित कर दूँगा। मैंने एशियाई पंजीयकको एक तार भेजा, जिसका पाठ नीचे दे रहा हूँ:

> 'लीडर' में एक वक्तव्य प्रकाशित हुआ है कि औरतोंसे अलग अनुमतिपत्र लेनेकी अपेक्षा करनेका कारण यह है कि उपनिवेशमें भारतीय ऐसी स्त्रियोंको भी अपनी पत्नियाँ बता कर ले आते हैं जो वास्तवमें उनकी पत्नियाँ न होकर दुश्चरित्र स्त्रियाँ हुआ करती हैं। क्या आप तार द्वारा सूचित करनेकी कृपा करेंगे कि आपका कार्यालय उपर्युक्त अभियोगमें विश्वास करता है या नहीं? मैं आपके उत्तरको प्रकाशित करना चाहता हूँ।
>
> पंजीयकने निम्नलिखित उत्तर भेजा है:
>
> आपके इसी महीनेकी २१ तारीखके तारके सम्बन्धमें सूचित करता हूँ कि इस विभागके किसी कर्मचारीने वैसा कोई वक्तव्य नहीं दिया, जैसा कि आपने संवादमें उल्लिखित किया है।

१. देखिए "पत्र: लीडरको", पृष्ठ ४४५।

मैं विश्वास करता हूँ कि आपके डर्बन-स्थित सवाददाताने जिस समाजपर ऐसा बर्बरतापूर्ण लाछन लगाया है, उसके साथ न्याय करनेके लिए आप या तो उस अधिकारीका नाम प्रकाशित करेंगे जिसने आपके सवाददाता द्वारा उल्लिखित जानकारी दी, या उसे अपने द्वारा दिये गये वक्तव्यको वापस ले लेनेको कहेंगे।[1]

[आपका, आदि,
मो० क० गांधी]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-९-१९०६

४५८. पत्र : प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिकारीको

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर २२, १९०६

सेवामें
मुख्य प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिकारी
डर्बन

[महोदय,]

मैं इसके साथ 'ट्रान्सवाल लीडर' की एक कतरन नत्थी कर रहा हूँ। उसमे उन कुछ धाराओंका उल्लेख है जो ट्रान्सवालके एशियाइयोको अनुमतिपत्र देनेके सम्बन्धमे बनाई गई है।

१. गांधीजीके पत्रके जवाबमें ९-१०-१९०६ के ट्रान्सवाल लीडरमें निम्नलिखित स्पष्टीकरण प्रकाशित हुआ था:

"ब्रिटिश भारतीय प्रजाजनोंको ट्रान्सवाल उपनिवेशमें प्रवेश करनेके लिए अनुमतिपत्र देने तथा इस आरोपके बारेमें, कि जिन महिलाओंको पत्नियाँ बताया जाता है वे 'प्रायः दुश्चरित्र' हुआ करती है, चन्द रोज पहले कुछ वक्तव्य प्रकाशित हुए थे। उनके सम्बन्धमें गत सोमवारका नेटाल मर्क्युरी इस प्रकार लिखता है:

जोहानिसबर्गसे श्री मो० क० गांधीने हमारे पिछले महीनेकी २१ तारीखके अंकमें प्रकाशित एक लेखके विषयमें पत्र भेजा है। उक्त लेखमें पूनिया नामकी एक भारतीय महिलाको, उसके पास अनुमतिपत्र न होनेकी बिनापर, फोक्सरस्टमें रोक लिये जाने का विवरण छपा था। श्री गांधी लेखकी कतिपय बातोंसे, जिन्हें वे ट्रान्सवालकी भारतीय महिलाओंपर अनुचित लांछन लगाना मानते हैं, असन्तुष्ट हैं। घटना के उपरान्त हमने डर्बनमें सुलभ सभी सूत्रोंसे जानकारी प्राप्त करनेका प्रयास किया। लेकिन, यह स्पष्ट होगा कि यहाँ नेटालमें ट्रान्सवालके मामलोंकी पूरी जानकारी करनेके लिए वैसी ही सुविधाएँ—उदाहरणार्थ, जिस तरहकी सुविधाएँ श्री गांधीको सुलभ है—नही हैं, जैसी श्री गांधीके निवासस्थान जोहानिसबर्गमें हैं। और किसी भी निराधार तथा अतिरंजित वक्तव्यका कारण यही है। श्री गांधी जोरदार शब्दोंमें इस बातको अस्वीकार करते हैं कि ट्रान्सवालके अधिवासी भारतीय दुश्चरित्र औरतोंको अपनी पत्नियाँ बताकर, उन्हें ट्रान्सवालमें प्रवेश दिलानेकी चेष्टा कर रहे है। इस बात को साबित करनेके लिए उन्होंने सरकार तथा अन्य सूत्रोंसे पूछताछ की है और उसका फल हुआ है अस्वीकृति। अतः, वक्तव्य अवश्य ही वापस ले लिया जाना चाहिए, क्योंकि यह निश्चित तथ्योंके अनुरूप नहीं है। जनता इस बातसे अवगत हो जाये, यह अच्छा है; और श्री गांधी भी हमें आश्वस्त करते है कि उन्हें इस तरहका एक भी मामला ज्ञात नहीं है।

हमारे डर्बन-स्थित सवाददातासे प्राप्त समाचारोंके आधारपर इस अखबारमें भी उसी तरहके वक्तव्य प्रकाशित किये गये थे, और अनुमानतः वे उसी सूत्रसे प्राप्त भी हुए थे। अतः, यह उचित ही है कि इस प्रत्याख्यानको समान रूपसे प्रचारित किया जाये।

बादमें यह १३-१०-१९०६ के इंडियन ओपिनियन में उद्धृत किया गया।

कहा जाता है कि 'लीडर' के डर्बन-स्थित संवाददाताको किसी प्रवासी-अधिकारीने यह कारण बताया है कि ट्रान्सवालमें भारतीय ऐसी भारतीय स्त्रियोंको, जो दुश्चरित्र है, अपनी पत्नियोंके रूपमे ले आये हैं। यदि आप मुझे बता दें कि इसके लिए आपके विभागका कोई अधिकारी जिम्मेवार है तो मै आपका आभारी हूँगा।

मै यह भी कह दूँ कि मैंने प्रिटोरियाके एशियाई-पंजीयकसे भी दरियाफ्त किया है और उन्होंने इस वक्तव्यका खण्डन किया है।[1]

[आपका, आदि,
मो० क० गांधी]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–१०–१९०६

४५९. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

सितम्बर २५, १९०६

ट्रान्सवालमें भारतीय समाजका पिछला सप्ताह ऐसा बीता, जैसे किसी बीमारको सन्निपात हो गया हो और वह बिस्तरपर छटपटा रहा हो। शिष्टमण्डल जाने ही वाला था। सब निश्चित हो गया था। इतनेमें, अब मालूम हुआ है, लॉर्ड सेल्बोर्नका तोपके गोलेके समान एक द्व्यर्थी पत्र आ गया जिससे फूट पड़ गई। सभीने यह समझा कि 'द्वारकाकी छाप'[2] वाला कायदा पास हो गया है, इसलिए अब शिष्टमण्डल न जाये, यही ठीक है। मंगलवारकी दुपहर तक परिस्थिति ऐसी थी। शामको उच्चायुक्तकी ओरसे टेलीफोन आया कि लॉर्ड एलगिनने कानून पसन्द किया है, इसका यह अर्थ नही है कि उन्होंने उसे पास कर दिया है। इसपर फिर नई योजना बनी। उसी रातको कुछ भारतीय एक साथ श्री हाजी वजीर अलीसे मिले और उनकी सम्मति लेकर उन्होने यह सोचा कि शिष्टमण्डलमें अकेले उनको ही भेजनेके लिए समाजसे सिफारिशकी जाये। बुधवारको उस विचारपर अमल किया गया। लेकिन पिछले सप्ताह हर भारतीयके सामने यह स्पष्ट हो गया कि मनुष्यका वश सब जगह नहीं चलता। श्री ग्रेगरोवस्की तथा श्री लिखटनस्टाइनकी निश्चित राय थी कि शिष्टमण्डलमें श्री गांधीको अवश्य जाना चाहिए और शिष्टमण्डल भेजा जाये, इसमें तो शक ही नही है। प्रिटोरियाके समाजकी ओरसे इस बातपर जोर दिया गया कि डर या लालचसे लोगोंमें फूट न पड़े और वे नये पंजीयनपत्र न ले लें, इसके लिए ट्रान्सवालमें श्री गांधीका रहना जरूरी है। यह दूसरी राय थी। नेटालसे सबको सख्त तार मिला कि मूल विचारके अनुसार शिष्टमण्डल भेजना बिलकुल जरूरी है। इसलिए शुक्रवारको सभा हुई और सर्वसम्मतिसे निर्णय हुआ कि श्री अली और श्री गांधी दोनों जायें। श्री अब्दुल गनीको भी जाना चाहिए, यह सबका विचार था। लेकिन कुछ सबल कारणोंसे उनका जाना सम्भव न देखकर अत्यन्त खेदपूर्वक उस विचारको छोड़ना पड़ा। श्री गांधीने जाना स्वीकार करनेके साथ सभी नेताओंसे यह पत्र लिखवाया कि चाहे जैसी भी मुसीबत हो, वे चौथे प्रस्तावको निभायेंगे। यह पत्र अगले अंकमें दिया जायेगा।

१. देखिए पिछला शीर्षक।

२. सबसे ऊँची और अटल मुहर।

लॉर्ड सेल्बोर्नका दूसरा पत्र

उपर्युक्त प्रस्ताव स्वीकार होनेके साथ ही लॉर्ड सेल्बोर्नका पत्र मिला। उसमें उन्होंने विशेष तफसीलके साथ बताया है कि नया अध्यादेश इस हफ्ते रवाना होगा और विलायत पहुँचनेके बाद यदि उसे सम्राटकी मंजूरी मिलनी होगी तो मिल जायेगी। इसमें ज्यादा डरनेकी बात नही है। सम्भावना तो इस बात की है कि शिष्टमण्डलके लौटनेसे पहले विधेयक मंजूर होकर वापस नही आयेगा।

शिष्टमण्डलका खर्च

शिष्टमण्डलका खर्च समितिने ९०० पौंड तक मंजूर किया है। उसमें से ३०० पौंड श्री अलीके घर-खर्च वगैराके लिए मंजूर किये गये हैं। श्री अलीने इस विषयमे कहा है कि यदि उन्हें आवश्यक मालूम हुआ तो वे उसमें से कुछ रकम विलायतमें सार्वजनिक काममे भी लगायेंगे। शेष ६०० पौंड रहे, सो शिष्टमण्डलके खर्चमें काम आयेंगे। और समितिको उसका तफसीलवार हिसाब दिया जायेगा।

शिष्टमण्डलके सदस्य

शिष्टमण्डलके सदस्य श्री गांधीके बारेमें यहाँ लिखनेकी आवश्यकता नही। श्री हाजी वजीर अलीका जन्म १८५३ में मॉरिशसमे हुआ था। उनकी शिक्षा-दीक्षा भी मॉरिशसमे हुई। १८६८ में उन्होंने व्यवसाय शुरू किया और मुद्रककी हैसियतसे 'कमर्शियल गज़ट' के दफ्तरमें भरती हुए। उन्होंने १८७३ में जहाज-गोदामके कारकुनका काम किया और वे १८७६ मे चार्ल्स जेकब व सन्सके यहाँ जहाजी कारकुन बने। इसके बाद इन्होंने मक्का शरीफकी यात्रा की और वे हाजी बने। १८८४ में केप टाउनमें आये और वहाँ अपना सोडावाटरका धन्धा शुरू किया। १८८५ में उन्होंने सार्वजनिक काम शुरू किया। मलायी लोगोंका कब्रिस्तान सरकार बहुत दूर ले जाना चाहती थी। लेकिन मलायी लोगोने उसका विरोध किया। उस समय हुल्लड़का डर था। श्री अलीने मध्यस्थताकी और शान्ति स्थापित हुई। कब्रिस्तानकी जगह दूर थी, सो पास नियत की गई। श्री अली केप टाउनमें विधानसभा और नगरपालिका, दोनोके मतदाता थे। वे चुनावोंमें हमेशा खासा हिस्सा लेते थे। १८९२ में केप टाउनसे किम्बर्ले वगैरह गये। वहाँ काले लोगोके सबके प्रमुख बने। जब केपमें चुनावका कानून बना तब बाइस हजार काले आदमियोकी सहीसे एक अर्जी विलायत भेजी गई थी। उसमें श्री अलीका मुख्य हाथ था। १८९२ के बादसे श्री अली जोहानिसबर्गमें रह रहे है। ट्रान्सवालमें श्री अली ब्रिटिश राजदूत और दूसरे प्रसिद्ध लोगोंसे भारतीयोंकी समस्याके सम्बन्धमें मिल चुके हैं। उन्होंने हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी स्थापना की और अभी वे उसके अध्यक्ष हैं। यह समिति बहुत अच्छा काम करती है। इसके बहुत-से सदस्य हो गये हैं और यह उत्साहपूर्वक काम कर रही है, यह सब जानते है। श्री अलीका बड़ा कुटुम्ब है। उनके ग्यारह बच्चे है। वे स्वयं उन्हे उत्तम शिक्षा देते हैं।[1]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६-१०-१९०६

१. "हाजी वजीर अली", पृष्ठ ४७२-३ भी देखिए।

४६०. पत्र : डी० सी० मैल्कमको

जोहानिसबर्ग,
सितम्बर २६, १९०६

सेवामे
श्री डी० सी० मैल्कम
गवर्नरका कार्यालय,
जोहानिसबर्ग

प्रिय महोदय,

संघके नाम अपने इसी २४ तारीखके पत्रके संदर्भमें यह बतानेकी कृपा करें कि क्या इसका यह अर्थ है कि एशियाई अध्यादेशको तार द्वारा शाही स्वीकृति मिल गई है?

आपका विश्वासपात्र,
अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

[अंग्रेजीसे]
इंडियन ओपिनियन, ६–१०–१९०६

४६१. पत्र : डॉ० एडवर्ड नंडीको[1]

२१–२४ कोर्ट चेम्बर्स
जोहानिसबर्ग
सितम्बर २६, १९०६

[डॉ० एडवर्ड नंडी
जेकब चेम्बर्स
कोर्ट रोड
जोहानिसबर्ग]

प्रिय डॉ० नंडी,

मेरी मान्यता है कि किसी भी उपनिवेशको प्रवासका, ब्रिटिश प्रजाके प्रवासका भी, नियमन करनेका पूरा अधिकार है, पर वर्गभेद करनेका नहीं।

आप इस पत्रका जैसा चाहे वैसा उपयोग कर सकते हैं।

आपका सच्चा,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काइव्ज: एल० जी० फाइल सं० ९३: एशियाटिक्स

१. पत्र डॉ. नंडीके निम्नलिखित पत्रके उत्तरमें लिखा गया था:

"कृपया इस प्रश्नपर अपना मत लिख भेजें कि क्या कानून बनाकर किसी देश अथवा उपनिवेशको किसी विशिष्ट कौम या वर्गके लोगोंके प्रवेशपर प्रतिबन्ध लगाने का अधिकार है; विशेषत: जब आने वाले प्रवासी उसी राजाकी प्रजा हों?

यदि, जैसा कि आपने मुझसे कहा था, इस प्रश्नपर आपके मतको लेकर गलतफहमी हुई है तो उस भ्रमका निराकरण उचित होगा। यदि आप उत्तरके साथ आवश्यकतानुकूल मुझे उसके उपयोगकी अनुमति भी दें तो बहुत प्रसन्नता होगी।"

४६२. पत्र : 'लीडर'को

[जोहानिसबर्ग]
सितम्बर २७, १९०६

[सम्पादक
'लीडर'
महोदय,]

भारतीय नारी जातिपर लगाये गये लांछनसे सम्बन्धित जो पूछताछ आपके पत्रमें प्रकाशित[1] हुई थी, आशा है आप उसकी श्रृंखलाको पूरा करनेके लिए निम्नलिखित उत्तरको स्थान देंगे जो मुझे डर्बनके प्रमुख प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिकारीसे प्राप्त हुआ है.

> प्रवास सम्बन्धी नियम बनानेमें ट्रान्सवाल सरकारका क्या इरादा था, यहाँ इस बातको कोई नहीं जानता; इसलिए यह संभव है कि इस विभागने उसके बारेमें कभी कुछ कहा हो।

[आपका, आदि,
मो० क० गांधी]

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–१०–१९०६

४६३. पत्र : डॉ० एडवर्ड नंडीको[2]

२१–२४ कोर्ट चेम्बर्स,
जोहानिसबर्ग,
सितम्बर २७, १९०६

[डॉ० एडवर्ड नंडी
जेकब चेम्बर्स
कोर्ट रोड
जोहानिसबर्ग]

प्रिय डॉ० नंडी,

वर्गभेदसे मेरा तात्पर्य यह है कि लोगोंपर एशियाई, रंगदार या भारतीय होनेके नाते ही लागू होनेवाला कोई कानून नहीं होना चाहिए।

जैसा कि चेम्बरलेनने निर्धारित किया है, सारे नियमोंको सर्वसामान्य रूपका होना चाहिए।

आपका सच्चा,
(सही) ह० मो० गांधी[3]
वास्ते–मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काइव्ज : एल० जी० फाइल सं० ९३ : एशियाटिक्स

१. देखिए "पत्र : 'लीडर'को, पृष्ठ ४४६ और पृष्ठ ४५६–७।"

२. यह पत्र डॉ० नंडीकी इस जिज्ञासाके उत्तरमें लिखा गया था कि 'वर्ग-भेद' से गांधीजीका क्या तात्पर्य था। देखिए "पत्र : डॉ० एडवर्ड नंडीको", पृष्ठ ४६०।

३. गांधीजीके ज्येष्ठ पुत्र।

४६४. कसौटीपर

लॉर्ड सेल्बोर्नने ट्रान्सवालके नवीन एशियाई अध्यादेशके बारेमें ब्रिटिश भारतीय संघको जो पत्र भेजे है, उनकी प्रतिलिपियाँ प्रकाशित करनेका अवसर हमें मिला है। उनमें से एकमें कहा गया है कि लॉर्ड एलगिन अध्यादेशको स्वीकार कर चुके है और प्रस्तावित शिष्टमण्डलको इंग्लैड भेजनेसे कोई उपयोगी कार्य सिद्ध होना सम्भव है, ऐसा परमश्रेष्ठका खयाल नहीं है।

हम लॉर्ड एलगिनके निर्णयपर ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंको सच्चे हृदयसे बधाई देते है। यह निर्णय एक उदार उपनिवेश-मन्त्रीके लिए कोई श्रेयकी बात नही है — विशेषत: तब जब यह अनुभव किया जाता है कि उपनिवेश-मन्त्री किसी समय भारतमें वाइसरायकी गद्दीको सुशोभित कर चुके है। [लेकिन लॉर्ड सेल्बोर्नने हमें बताया है कि बुराईसे बहुत बार भलाई निकल आती है,] और यदि ब्रिटिश भारतीय समाज अपने प्रति सच्चा है, तो लॉर्ड एलगिनके महत्त्वपूर्ण निर्णयसे अवश्य ही अच्छा नतीजा निकलेगा। जोहानिसबर्गके एम्पायर नाटकघरमें, जो अब मौजूद नही है, जिस महती सभाका आयोजन किया गया था उसके ऐतिहासिक चतुर्थ प्रस्तावमें[1] परमश्रेष्ठने जान डाल दी है। वह प्रस्ताव एक कसौटी होगा जिसपर ट्रान्सवालके भारतीयोंकी राष्ट्रीय एवं आत्मसम्मानकी भावना कसी जायेगी। स्पष्टत: लॉर्ड एलगिनने लॉर्ड सेल्बोर्नकी प्रेरणासे भारतीय चुनौतीको स्वीकार कर लिया है। अब [एक तरफ पाशविक शक्ति होगी; दूसरी तरफ सीधा-सादा अनाक्रमक प्रतिरोध। ब्रिटिश भारतीयोंका उद्देश्य न्याय-संगत है और वह चौथा प्रस्ताव कार्यरूपमें परिणत करनेसे और, लॉर्ड एलगिनकी स्वीकृतिके बावजूद, अध्यादेशकी त्रासजनक शर्तों, तथा अध्यादेशमे प्रस्तावित "गम्भीर तथा मनमाने अन्याय" के आगे झुकनेसे इनकार करनेसे और भी अधिक न्यायसंगत और पुनीत हो जायेगा।] हमें इस उद्धृत वाक्यांशको सम्मानपूर्वक दुहरानेमें कोई हिचकिचाहट नहीं है, यद्यपि अपने एक पत्रमें लॉर्ड सेल्बोर्न इससे सहमत नहीं है कि अध्यादेशसे इस प्रकारका कोई अन्याय होता है। हमें परमश्रेष्ठके इस आश्वासनको मान ही लेना चाहिए कि परमश्रेष्ठके समय-समयपर प्रकट किये विचारोंका अध्यादेशसे कोई विरोध नही है। यह तो केवल वे ही जानते होंगे कि अपने मनमें क्या-कुछ रखकर उन्होंने यहूदियोंकी सभामें उदात्त भावनाएँ व्यक्त कीं और बोअर युद्धके समय संरक्षकताकी बातें की।

इसी प्रकार हम परमश्रेष्ठके अध्यादेश-सम्बन्धी निर्णयपर आपत्ति करनेकी अनुमति चाहते है। जिन्हें अध्यादेशका पालन करना है वे ही जान सकते हैं कि वह न्याययुक्त है या अन्याय-युक्त। लॉर्ड सेल्बोर्नने ब्रिटिश भारतीयोंकी आपत्तिका जो उत्तर दिया है उसमें ऐसी अनेक बातें भरी है जिनपर ब्रिटिश भारतीयोंके दृष्टिकोणसे बहस की जा सकती है; परन्तु इस विवादपर काफी तर्क पहले ही किये जा चुके हैं। अब समय तर्कका नहीं, कार्यका है।

पहली जनवरीका दिन महामहिम सम्राटके लाखों प्रजाजनोंके लिए सुखद आशाका दिन होगा। इसी तरह ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोके लिए भी, वह ऐसा ही दिन होगा, यद्यपि उसी अर्थमें नहीं। उन्हें अपनी शक्तियाँ संघटित करनी होंगी और बलका संचय करना होगा। उस महत्त्वपूर्ण तारीखको उन्हें भवितव्यका सामना करनेके लिए तैयारी करनेकी जरूरत होगी। अब भारतीय समाज कसौटीपर है। हमें आशा करनी चाहिए कि वह इस कसौटीपर खरा

१. देखिए "सार्वजनिक सभा", पृष्ठ ४३०-४।

उतरेगा। यदि समूची दुनियामें नहीं, तो कमसे-कम दक्षिण आफ्रिकामें तो भारतीय समाजके कार्यसे ही भारतीयोंके चरित्रका निर्णय होगा। सभाने इस ऐतिहासिक प्रस्तावको पास करके एक ऐसी जिम्मेदारी ली है जिसे, परिणाम जो भी हो, ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंको निभाना ही चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-९-१९०६

४६५. पूनिया काण्ड

हमारे सहयोगी 'रैंड डेली मेल' ने अभागी ब्रिटिश भारतीय नारी पूनियाकी जोरदार वकालत करके इस विषयको ऐसा महत्व दिया है जो इस मामलेकी परिस्थितियोंके लिहाजसे बिलकुल मुनासिब है।[1] निश्चय ही श्री गांधीने परिस्थितिकी गुरुता कम ही बताई थी, क्योंकि उन्होंने एक दुर्भाग्यपूर्ण काण्डके शायद सबसे दु:खद पहलूका जिक्र ही नहीं किया था — अर्थात् यह कि फोक्सरस्टके आरोप कार्यालयमें उस स्त्रीकी दसों अंगुलियोंकी निशानियाँ ली गईं और जर्मिस्टनमें वह फिर वैसा ही करनेके लिए मजबूर की गई। चूँकि तथ्य निर्विवाद हैं, इसलिए उस स्त्रीको गिरफ्तार करनेवाले सिपाही मैक'ग्रेगर द्वारा निर्दिष्ट नियमोंको उचित ठहरानेका निन्दनीय प्रयत्न किया गया है, और हमें यह देखकर दु:ख होता है कि 'नेटाल मर्क्युरी' ने, हमें विश्वास है कि अनजाने ही, इस प्रयत्नका समर्थन किया है। 'ट्रान्सवाल लीडर' को 'नेटाल मर्क्युरी' के अनुच्छेदका सारांश तार द्वारा भेजा गया था। इसका उत्तर[2] श्री गांधीने भेजा है जिसमें भारतीय स्त्रियोंपर लगाये गये नीचतापूर्ण आरोपका खण्डन किया है और उसको एक कुत्सित असत्य बताया है। इसके बाद उन्होंने एशियाई पंजीकरण अधिकारीको तार दिया है। पंजीकरण अधिकारीने तुरन्त इस आशयका जवाब दिया है कि पत्रोंमें जैसा वक्तव्य प्रकाशित हुआ है, वैसा कोई वक्तव्य उनके विभागसे सम्बन्धित किसी अधिकारीने नहीं दिया है। हमें आशा है कि 'नेटाल मर्क्युरी', जो सदा न्याय-बुद्धिसे काम लेता है, इस मामलेमें उस अधिकारीका नाम प्रकाशित करेगा, जिसने यह वक्तव्य दिया था; या फिर इस निन्दाजनक आरोपको वापस ले लेगा।

यदि अनुमतिपत्र अध्यादेशके अमलके बारेमें सामान्य जनताको उतना ही ज्ञान होता जितना कि हमें है, तो वह पूनिया-काण्डकी गम्भीरता तथा उस निष्ठुर अन्यायका अनुभव करती जो केवल उस स्त्रीके साथ ही नहीं, वरन् समग्र भारतीय समाजके प्रति किया गया है। यह विश्वास करनेका कारण है कि इस दु:खदायी काण्डमें सिपाहीका वक्तव्य इस बारेमें

१. रैंड डेली मेलने १९ सितम्बरको "पत्र: अखबारोंको" (पृष्ठ ४४४-५) प्रकाशित करते हुए लिखा था: 'जिस सख्तीकी शिकायत की गई है वह ब्रिटिश भारतीय समाजकी कोमलतम भावनाओंको चोट पहुँचानेवाली है। कोई राष्ट्र अपनी स्त्री-जातिका उतना आदर नहीं करता जितना भारतकी जनता करती है। ट्रान्सवालका कोई व्यक्ति ऐसे नाजुक सवालपर बुरी भावनाको उत्तेजित करके झगड़ा पैदा करना और एक मानी हुई कठिन समस्याको और कठिन बनाना नहीं चाहता। हमें लगता है कि गोरे लोग भी पूनिया काण्डके बारेमें जाँच और स्पष्टीकरणकी वैसी ही जोरदार माँग करेंगे जैसी श्री गांधीजीने की है। एशियाइयोंके आव्रजनको रोकनेका दृढ़ निश्चय तो है पर जनताने सरकारको स्त्रियोंके विरुद्ध युद्ध छेड़नेका अधिकार नहीं दिया है।"

२. देखिए "पत्र: 'लीडर' को", पृष्ठ ४५६-७।

प्रथम प्रामाणिक वक्तव्य है कि ब्रिटिश भारतीय स्त्रियोंको भी अनुमतिपत्र लेने चाहिए — फिर चाहे वे अपने पतियोंके साथ भी हों। पूनियाके पतिने जोर देकर कहा कि उसे इस बातका कोई ज्ञान नही था कि अपनी पत्नीका भी अनुमतिपत्र लेना जरूरी है। परन्तु हम मान लें कि वह जानता था कि अलग अनुमतिपत्र आवश्यक है; फिर भी यह प्रश्न बिलकुल उचित है कि भारतीय स्त्रियोंके लिए अनुमतिपत्रकी जरा भी जरूरत होनी ही क्यों चाहिए। मुख्य अनुमतिपत्र सचिव द्वारा जारी किये गये मुद्रित निर्देशोंमें व्यवस्था है कि अनुमतिपत्र प्राप्त पतियोकी पत्नियोंको, अपने पतियोसे अलग, अनुमतिपत्र लेनेकी जरूरत नही है; इसी प्रकार १६ सालसे कम उम्रके बच्चोंको अपने माता-पिताओंसे अलग अनुमतिपत्र लेनेकी आवश्यकता नही है। यदि ऐसी बात है तो फिर यह देखते हुए कि भारतीय पत्नियोंपर भी वही अनुमति-पत्र अध्यादेश लागू होता है, उनके लिए अलग निर्देश क्यों जारी किये जाने चाहिए?

यदि भारतीय स्त्रियोंके विषयमें निश्चित लिखित निर्देश भी जारी कर दिये जायें तो, हमारे विचारसे, ब्रिटिश भारतीयोंका यह परम कर्त्तव्य होगा कि वे भारतीय स्त्रियोंके लिए ऐसे अनुमतिपत्र न लें और उन अनुमतिपत्रोको लेनेमें जो अपमान और अनादर होगा उससे उनकी रक्षा करें। क्या भारतीय स्त्रियोंको अलग आवेदनपत्र देने होंगे और अपनी अँगूठा-निशानियाँ लगानी होंगी? क्या उन्हें एशियाई कार्यालय द्वारा अभीष्ट ऐलान करनेके लिए तथा यह हलफिया बयान देनेके लिए कि वे अपने पतियोंकी पत्नियाँ हैं, शान्ति-रक्षा मजिस्ट्रेटोंके सामने चक्कर काटने पड़ेंगे? और शायद उन्हें यह भी साबित करना पड़ेगा कि वे शरणार्थी हैं, क्योंकि क्या यह एशियाई कार्यालयका नियम नहीं है कि ब्रिटिश भारतीय शरणार्थियोंके अलावा और किसीको अनुमतिपत्र न दिये जाये? यह भी कल्पना कीजिए कि एक स्त्रीके प्रार्थनापत्रमें विलम्ब हुआ या वह अस्वीकृत कर दिया गया तो क्या उसके पतिको भी, जिसके पास वैध अनुमतिपत्र हो, तबतक उपनिवेशके बाहर रहना होगा जबतक कि उसकी पत्नीका प्रार्थनापत्र स्वीकृत न हो जाये या पत्नीके प्रार्थनापत्रकी अस्वीकृतिकी दशामें उसको उपनिवेशसे बिलकुल बाहर ही रहना पड़ेगा? दक्षिण आफ्रिकामे भारतीय नारियोंके विरुद्ध कभी कोई शिकायत नहीं रही है। अलबत्ता वह अब, पहली बार, एक गुमनाम प्रवासी अधिकारीकी पापपूर्ण कल्पनामें आई है। परन्तु यदि भारतीय समाजके कुछ निकृष्ट लोग उपनिवेशमें कुछ दुश्चरित्र स्त्रियोंको ले भी आये, तो क्या इससे जोहानिसबर्गके सैकड़ों ईमानदार भारतीय अधिवासियोंकी स्त्रियोंको अनुमतिपत्र-कार्यालय द्वारा अपेक्षित कष्टदायक प्रक्रियाओंमें से गुजारना उचित होगा? यदि अधिकारियोंने उन निर्देशोंपर अमल करते जानेका आग्रह किया जिनके जारी किये जानेकी बात कही जाती है, तो हमें यह कहनेमें कोई हिचकिचाहट नहीं है कि उनका यह कृत्य आगसे खिलवाड़ करनेके तुल्य होगा और वे ऐसी स्थिति पैदा कर देंगे जो उनके तथा दूसरे दक्षिण आफ्रिकियोंके लिए स्वभावतः भारी पछतावेका कारण हो सकती है।

हम 'रैंड डेली मेल' के अग्रलेख-लेखककी भावनाओंको प्रबलताके साथ पुनः प्रतिध्वनित कर सकते हैं कि पूनियाको जैसी सख्ती सहनी पड़ी वैसी सख्ती ब्रिटिश भारतीयोंकी कोमलतम भावनाओंपर चोट करती है। हम समझते हैं कि हमारे सहयोगीने इस काण्डकी ओर खास ध्यान दिलाकर लोगोंकी एक सेवा ही की है। हमें आशा है कि सिपाही मैक्ग्रेगरने जिन निर्देशोंका हवाला दिया है, उसका प्रतिकार करते हुए अधिकारी दूसरे निश्चित निर्देश जारी करेंगे, और परिवर्तित निर्देशोंका यथासम्भव पर्याप्त विज्ञापन करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-९-१९०६

४६६. ट्रान्सवाल अनुमतिपत्र अध्यादेश

तारीख १५ को शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत किन्ही हाफिजी मूसा तथा उनके पुत्र मुहम्मद हाफिजी मूसाका मुकदमा फोक्सरस्टके मजिस्ट्रेटके इजलासमें पेश हुआ; पितापर यह आरोप था कि उसने अनुचित साधनोसे प्राप्त अनुमतिपत्र द्वारा ट्रान्सवालमें प्रवेश करनेके लिए अपने पुत्रको, जो ग्यारह सालसे कम उम्रका माना गया है, उकसाया है; और लड़केपर यह आरोप था कि उसने अनुचित साधनोसे प्राप्त अनुमतिपत्र द्वारा उपनिवेशमे प्रवेश किया है। इस आशयकी गवाही पेश की गई कि ५ जुलाईको पिता और पुत्रने साथ-साथ यात्रा की और वे फोक्सरस्टसे गुजरे। वहाँ उनकी जाँच की गई। पिताने अपना अनुमतिपत्र पेश किया और पुत्रने, ऐसा कहा जाता है, भाइमा नामके व्यक्तिको दिया गया अनुमतिपत्र पेश किया। निरीक्षक सिपाही यह कहनेमे असमर्थ था कि उपर्युक्त अनुमतिपत्र लड़केने ही पेश किया था। लड़केके अँगूठोकी निशानियाँ ली गईं और प्रिटोरिया भेजी गईं। और चूँकि वे भाइमाको दिये गये अनुमतिपत्रके अर्द्धांशपर मौजूद अँगूठेकी निशानियोंसे नही मिलीं, इसलिए पिता और पुत्र दोनो पाँचेफस्ट्रूममें गिरफ्तार कर लिये गये। एशियाई पंजीयन कार्यालयके प्रधान लिपिक श्री कोडीके बयानसे यह भी प्रकट हुआ कि हर उम्रके ब्रिटिश भारतीयोको, चाहे वे पुरुष हों या स्त्री — स्त्रियोको, भले ही वे अपने पतियोंके साथ हो, और बच्चोको, भले ही वे अपने माता-पिताओके साथ हों — अपने अलग-अलग अनुमतिपत्र पेश न करनेपर गिरफ्तार कर लिया जाये, यह अनुमतिपत्र कार्यालयका निर्देश है। पिता-पुत्र दोनोने इस बातसे इनकार किया कि पुत्रने भाइमाके नाम दिये गये अनुमतिपत्रसे उपनिवेशमे प्रवेश किया है। मजिस्ट्रेटने पिताको बरी कर दिया, किन्तु पुत्रको अपराधी ठहराया और ५० पौंड जुर्मानेकी या तीन मासकी सादी कैदकी सजा सुना दी। अपील दर्ज कर ली गई है। यह मामला बड़े महत्त्वका समझा जाता है; क्योंकि अपने पिताके साथ सफर करते हुए कच्ची उम्रके एक लड़केको इतनी सख्त सजा दी गई है, यद्यपि मजिस्ट्रेट बाल अपराधियोंके मामलोमें प्राप्त छूटके विशेषाधिकारोंको ध्यानमें रखकर कार्य करते हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-९-१९०६

४६७. डेलागोआ-बेके भारतीय

डेलागोआ-बेमे भी ज्यों-ज्यों अंग्रेज घुसते जा रहे है त्यों-त्यों भारतीयोंकी मुसीबतोंकी आशंका बढ़ती जा रही है। हमारा संवाददाता सूचित करता है कि भारतीयोंको वहाँसे हटाकर बस्तियोंमे भेजनेकी हलचल चल रही है। यह भी विदित हुआ है कि इस प्रकारकी हलचलके विरुद्ध भारतीय सख्त कार्रवाई करेगे। सवाददाता यह भी सूचित करता है कि डेलागोआ-बेमें इस सम्बन्धमें टक्कर लेनेके लिए एक समिति तैयार हुई है। हमें आशा है कि यह समिति जागृत रहकर अपना काम करती रहेगी। हर्षका विषय है कि इस अवसरपर श्री कोठारी जैसे सज्जन डेलागोआ-बेमें मौजूद है। श्री कोठारी बम्बईके उच्च न्यायालयके वकील और देशाभिमानी है। उन्होंने डेलागोआ-बेमें रहकर अपने समयका बहुत अच्छा उपयोग किया है। उन्होंने पुर्तगाली भाषा सीख ली है और हम मानते हैं कि उनका यह अभ्यास देश-सेवा करनेमें बहुत उपयोगी सिद्ध होगा। [जहाँ-जहाँ शिक्षित भारतीय बसे हुए हैं वहाँ-वहाँ उनका कर्त्तव्य है कि अपनी शिक्षाका उपयोग देशसेवामें करें।]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-९-१९०६

४६८. चेतावनी

पहली सितम्बरके 'क्रूगर्सडॉर्प स्टैंडर्ड' में नगर परिषदने एक भारतीय मामलेका विवरण प्रकाशित कराया है। वह खेदजनक और समाजको लज्जित करनेवाला है। एक प्रतिष्ठित भारतीयने सूचनाके बावजूद जरूरी सुधार नही किया। उसके सोनेके कमरेमें कपड़ेकी छत लगी हुई थी और टट्टीकी जमीन ऐसी नही थी कि जिसमें गंदा पानी भिदे बिना रह जाये। टट्टीमे बाल्टी नही थी, फिर भी उसका उपयोग किया गया था। सूचनाकी परवाह नही की गई, इसलिए नगर परिषदकी समितिने मुकदमा चलानेका आदेश जारी किया। नतीजा क्या हुआ, यह हमें नही मालूम। लेकिन एक प्रतिष्ठित भारतीय अपने घरको इतनी खराब हालतमें रखता है, यह हमें नीचा दिखानेवाला है। भारतीय समाजपर गोरे लोग कई इल्जाम लगाते है। उनमें गन्दगीका इल्जाम एक है। ऐसे उदाहरण उन इल्जामोंको सिद्ध करते है। और फिर ये उदाहरण प्रतिष्ठित व सम्पन्न भारतीयोंके यहाँ मिलते है, तो उनका बुरा प्रभाव पड़े बिना रह ही नही सकता। आशा है, ऊपर जिस मामलेका उल्लेख किया गया है उससे भी सभी भारतीय सबक लेंगे, और अपना घरबार साफ रखेंगे। हमारे घरबारकी हालत जैसी चाहिए वैसी नही होती, इससे इनकार नहीं किया जा सकता। स्पष्ट ही [हमें ऐसी बातोंमें ज्यादा सावधानी बरतनी चाहिए जिनमें हमारे दोष ज्यादा दिखाई पड़ते हों।]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-९-१९०६

४६९. जोहानिसबर्गकी चिट्ठी

चाबुक

एम्पायर नाटकघरकी विराट सभा समाप्त हो गई। नाटकघर अब जल गया है। सभामें तीन हजार मनुष्य एकत्रित हुए थे, तालियाँ बजी थी, उत्साह बतलाया गया था, अच्छा प्रभाव पड़ा था। लेकिन वह सब अब तो एक स्वप्नके समान गायब जान पड़ रहा है! इस नाटकघरमें एकत्रित सभी लोगोने निश्चय किया था कि एक शिष्टमण्डल विलायत जाना ही चाहिए। इसके लिए धन संग्रह करनेमें जरा भी कठिनाई नही होगी। लोगोपर पूरा विश्वास रखनेवाले इस संवाददाताने यही मान लिया था कि ऐसी बातें करनेवाले लोग छ.-सात हजार पौंड एक दिनमें ही इकट्ठा कर सकेंगे। परन्तु मुझे खेदके साथ कहना चाहिए कि आजतक शिष्टमण्डल और आन्दोलनके लिए आवश्यक कोषमें कोषाध्यक्ष श्री गुलाम मुहम्मदके पास एक हजार पौंड भी जमा नही हुए। जिनके पास पैसे इकट्ठे हुए हैं वे भी यह कहते उनसे चिपके है कि अभी दूसरे तो देते ही नही हैं। एक जगहसे तार आया है कि हम उगाही करनेवाले हैं। दूसरी जगहसे सूचना मिली है कि फलाँ सेठ पैसे देगा, उसके बाद भेजेंगे। तीसरी जगहसे खबर आई है कि एक जमात चूँकि नही दे रही है इसलिए हम नही भेजना चाहते। इस भाँति तरह-तरहके कारणोंसे पैसे इकट्ठे नही हो रहे हैं। इसके लिए कोई यह भी नही कह सकेगा कि पैसे जमा रखनेकी व्यवस्था ठीक नही है। भिन्न-भिन्न कौमोके करीब पच्चीस गण्यमान्य अगुओंकी एक समिति बनायी गई है। इस समितिकी मंजूरीके बिना एक भी चेक देना सम्भव नही है। चेकमें हस्ताक्षर करनेवाले चार व्यक्ति हैं, और समितिपर हर महीने तफसीलके साथ हिसाब प्रकाशित करनेका बन्धन है। मतलब यह कि एक तरफ तो हमारे दुःखोकी सीमा नही और दूसरी ओर हमने बहुत ही सावधानीपूर्वक व्यवस्थापक-वर्ग नियुक्त किया है, फिर भी यदि चन्दा इकट्ठा नही होता, तो इससे ज्यादा लज्जाकी कौन-सी बात होगी? यह समाचार प्रत्येक भारतीयकी परीक्षाका है और यदि हम इस परीक्षामें खोटे सिद्ध हुए तो हमें उसके लिए सख्त सजा भोगनी पड़ेगी। इसमें हमारी ही दुर्दशा हो सो बात नही, हमारे समाजको भी हमारे पापका परिणाम चखना पड़ेगा। चन्दा एकत्रित नही हुआ इतना ही नही, शिष्टमण्डलमें जानेवाले लोगोंके नाम भी निश्चित हो गये हो, सो नही कहा जा सकता।

श्री भाभाका मुकदमा

श्री भाभाके मुकदमेकी सर्वोच्च न्यायालय तक की रिपोर्ट दी जा चुकी है। न्यायाधीशोकी सिफारिशके अनुसार श्री भाभाको दी गयी सजाएँ माफ कर दी गई है। और श्री भाभाको ट्रान्सवालमें रहनेका परवाना और पजीयनपत्र मिल गये है। श्री भायातके मुकदमेके आधारपर आये हुए दूसरे तीन-चार भारतीयोको भी परवाने मिल चुके है। पुराने पजीयनवाले दूसरे भारतीयोका, जो अब भी बाहर है, क्या हाल होगा, कहा नही जा सकता। सभावना तो यह है कि जो ढील पहले होती रही थी वह अब नही होगी।

नादान बालकको कठोर दण्ड

सितम्बर १५ को फोक्सरस्टमें पॉचेफस्ट्रूम-निवासी श्री हाफिजी मूसा और उनके ११ वर्षके लड़के मुहम्मदपर अनुमतिपत्रका मुकदमा चला था। श्री हाफिजी मूसापर यह आक्षेप लगाया गया था कि उन्होंने झूठे अनुमतिपत्रसे अपने लड़केको दाखिल किया; और उनके लड़केपर यह आरोप था कि वह झूठे अनुमतिपत्रसे दाखिल हुआ।

जिस सिपाहीने इन दोनोंकी जाँच की थी वह अपने बयानमें नहीं बता सका कि उसने लड़केको देखा या नहीं। लेकिन लड़केके अंगूठेके निशान लगवाये गये थे, यह उसके बयानसे साबित होता था। मजिस्ट्रेटने पिताको निर्दोष ठहराया है और लड़केको ५० पौंड जुर्माने या तीन महीनेकी सादी कैदकी सजा दी है। ऐसे बालकको इतनी बड़ी सजा देना बहुत ही भयंकर माना जायेगा। मजिस्ट्रेट यदि जरा भी दूरन्देशीसे काम लेते तो उनकी समझमें आ जाता कि ऐसी सजा नादान बालकको नहीं दी जा सकती। इस सम्बन्धमें सर्वोच्च न्यायालयमें अपील की गई है और सम्भव है कि लड़का छूट जायेगा।

श्री क्विन और भारतीय

श्री क्विन जोहानिसबर्गके महापौर और व्यापार-संघके अध्यक्ष भी हैं। उन महोदयने अपनी मासिक रिपोर्टमें एशियाई अध्यादेशको वाजिब कहा है। बहुतेरे भारतीय बिना अनुमतिपत्रके दाखिल हो गये हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि इस तरहका अध्यादेश आवश्यक था। यूरोपवाले [कम खर्च] रहन-सहनमें एशियाइयोंका मुकाबला नहीं कर सकते। यदि इस कानूनको सख्त माना जाये तो, उसमें दोष उन्हीं लोगोंका है। श्री नीवेनने पूनियाके[1] मामलेका उदाहरण देकर कहा था कि औरतोंपर जुल्म हो, यह तो व्यापारी-संघ नहीं चाहेगा। इसके उत्तरमें क्विन महोदयने कहा कि ये लोग जानते हैं कि इन्हें अनुमतिपत्रके बिना आने नहीं दिया जायेगा फिर भी आते हैं, इसलिए यह इन्हीं लोगोंकी गलती है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-९-१९०६

४७०. ट्रान्सवालका कानून

बड़ी सरकारकी स्वीकृति

शिष्टमण्डलका जाना स्थगित

"मनचेता अवचिच रहे, हर चेतै सो होय" ट्रान्सवालके भारतीयोंके सम्बन्धमें यही पंक्ति सार्थक हुई है।

लॉर्ड एलगिनका उत्तर

इस बार, सोमवार यानी १ अक्तूबरको, जो शिष्टमण्डल भारतीयोंकी पुकार लेकर विलायत जानेवाला था, उसके जहाजसे रवाना हो जानेकी सम्भावना थी। वास्तवमें शिष्टमण्डल पिछले सोमवारको ही जानेवाला था। लेकिन उसमें विघ्न आ गया और एक सप्ताहकी देरी हुई। जहाजका पास प्राप्त करनेकी तैयारी हो रही थी। सब जगह पत्र लिख दिये गये थे कि सोमवारको शिष्टमण्डल रवाना होगा। इतनेमें, यानी मंगलवारको सवेरे, लॉर्ड सेल्बोर्नका नीचे लिखे अनुसार पत्र[2] आया :

> **लॉर्ड सेल्बोर्नके द्वारा लॉर्ड एलगिनने कहलाया है कि नये संशोधनोंके द्वारा भारतीयोंको जितनी सुविधाएँ दी जानी चाहिए वे नये कानूनसे नहीं प्राप्त होतीं, यह लॉर्ड एलगिन समझते हैं; फिर भी उन्होंने उस कानूनको पसन्द किया है; क्योंकि उसके**

१. देखिए "ट्रान्सवालमें भारतीय स्त्रियोंकी मुसीबतें", पृष्ठ ४५० ।

२. पत्रपर २४ सितम्बर १९०६ की तारीख थी। इसपर उनके निजी सचिव डी० सी० मैल्कमके हस्ताक्षर थे।

द्वारा एशियाइयोंकी बहुत कुछ असुविधाएँ दूर हो जायेंगी। इससे ज्यादा सुधार ऐसे समयमें नहीं किया जा सकता जब स्वराज्य दिया ही जानेवाला है। लॉर्ड एलगिनने यह भी कहलाया है कि जो प्रतिनिधि विलायत जायेंगे उन्हें अपने विचार प्रकट करनेका पूरा मौका दिया जायेगा। लेकिन उससे कुछ लाभ होगा, ऐसा वे नहीं मानते।

पत्रका अर्थ

इस पत्रका अर्थ यही हुआ कि लॉर्ड एलगिनने शिष्टमण्डलको न भेजनेके लिए कहा है। कानून पास हो जानेके बाद यदि शिष्टमण्डल गया तो स्पष्ट ही उससे कुछ लाभ न होगा। इस पत्रका अर्थ यह भी होता है कि भारतीय प्रजाने जो जोर दिखाया है और कानूनका मुकाबला करनेका प्रस्ताव किया है उसे दबाया जाये। [यह अंग्रेजोंका रिवाज है कि जो लोग अधिक बढ़ते दिखाई दें, उनकी ओर सख्त नजर की जाये और उन्हें जोरसे पछाड़ा जाये।] लॉर्ड सेल्बोर्नने लॉर्ड एलगिनको यह सलाह दी होगी कि यदि शिष्टमण्डल विलायत जायेगा और उससे लॉर्ड एलगिन मिलेंगे तो भारतीयोंको कानून रद हो जानेकी आशा बँधेगी। इस बीचमें वे अपनी शक्ति भी बढ़ा लेंगे। इसलिए शक्तिका जो अंकुर फूटने ही वाला है, उसे इसी समय जला दिया जाये तो ठीक होगा। इस सलाहको मानकर लॉर्ड एलगिनने शिष्टमण्डलकी कहानी सुने बिना ही कानूनको पसन्द किया है।

अधीनस्थ यानी पराजित प्रजाओंपर अंग्रेजी शासन इसी प्रकार चलता रहा है। बहुत हद तक इस व्यवहारमें वे सफल हुए हैं। क्योंकि [पराजित और हततेज प्रजा बोलनेमें ही शूर होती है और जब-कभी काम करनेका समय आता है, फिसल जाती है।]

हमारा कर्तव्य

इस समय भारतीय प्रजाका क्या कर्तव्य है, इसपर विचार करें। कानून भंग करनेका जो प्रस्ताव स्वीकार किया गया है वह उत्साहवर्धक भी है और उत्साहनाशक भी। यदि उसपर भारतीय प्रजा डटी रही, तो उससे उसका ट्रान्सवालमें मान बढ़ेगा और उसके बहुतेरे दु:ख दूर हो जायेंगे; इतना ही नहीं, सम्पूर्ण दक्षिण आफ्रिकामें उसका फायदा दिखाई देगा और हमारी जन्मभूमिमें भी सैकड़ों व्यक्तियोंको फायदा होगा। लेकिन यदि प्रस्ताव भंग कर दिया गया, तो जिन्होंने शपथ ली है, उनकी प्रतिज्ञा टूटेगी, सारी कौमकी नाक कटेगी, बदतर कौमकी ओरसे जो अर्जियाँ भेजी जायेंगी उनका असर घट जायेगा, और स्थिति आजसे भी बदतर हो जायेगी। गोरे हँसेंगे, सो तो अलग ही, वे थूकेंगे, हमें लातें मारेंगे और नामर्द कहेंगे। हम एक राष्ट्र हैं, यह तो फिर माना ही न जायेगा।

साहसके बिना सिद्धि नहीं मिलती

[महान कार्य करनेमें सदा ही ऐसी जोखिम उठानी पड़ती है। हम बड़ी जोखिम उठाकर व्यापार करते हैं, तब यदि लाभ हुआ तो वह भी बड़ा होता है, और यदि नुकसान हुआ, तो वह हमें मटियामेट कर देता है। हमारे कवि[1] लिख गये हैं-कि साहससे सिकन्दरने बादशाही भोगी, साहससे कोलम्बसने अमेरिकाको खोज निकाला। साहसके बिना सिद्धि नहीं मिलती।] अंग्रेज कौम स्वयं साहसी है और साहसी राष्ट्रोंकी ही तारीफ करती है।] इसलिए हरएक भारतीयका निश्चित कर्त्तव्य है कि वह दुबारा [पंजीयनपत्र] लेने जानेके बजाय जेल जाये और एम्पायर नाटकघरमें जो शपथ ली है उसका दृढतापूर्वक पालन करे।

१. आधुनिक गुजराती गद्य और पद्यके जनक नर्मदाशंकर लालशंकर दवे (कवि नर्मद) की ओर संकेत है जिन्हें गांधीजी अक्सर उद्धृत किया करते थे।

लॉर्ड सेल्बोर्नका दूसरा पत्र

उपर्युक्त सलाहका समर्थन करनेवाला लॉर्ड सेल्बोर्नका दूसरा पत्र आया है। उसका अनुवाद भी नीचे दिया गया है। ऊपर जिस पत्रका अनुवाद दिया गया है, वह लॉर्ड सेल्बोर्नने लॉर्ड एलगिनकी ओरसे लिखा है। अब वह खुद लिख रहे हैं। उसे देखिए :

> आपके संघ द्वारा दी गई दलीलोंसे मालूम होता है कि आप नये कानूनको समझते नहीं। जो प्रमाणपत्र जारी हो चुके हैं वे ठीक हैं या नहीं, इसकी जाँच करनेके लिए ही यह कानून बनाया गया है। इस कानूनके अनुसार वर्तमान पंजीयनपत्र वापस लेकर नये दिये जायेंगे, जिससे उनसे सही-सही परिचय मिल सके; और सही परिचयके अभावमें आज जो तकलीफें उठानी पड़ती हैं वे न उठानी पड़ें। जबतक स्वराज्यकी स्थापना नहीं हो जाती, तबतक देशमें अधिक भारतीयोंका प्रवेश नहीं होना चाहिए और उसके लिए यदि पंजीकरण करना आवश्यक हो, तो वह पूरा होना चाहिए।
>
> 'एशियाई' शब्दकी परिभाषा और लड़ाईके पहले ट्रान्सवालमें रहनेवाले भारतीयोंकी स्थिति जैसी-की-तैसी रहती है। शराबके सम्बन्धमें जो संशोधन किये गये हैं वे भारतीयोंके लिए नहीं, बल्कि ऐसे अन्य एशियाइयोंके लिए हैं जिन्हें यह कानून बाधक है। नया कानून स्त्रियोंपर लागू नहीं होगा, सिर्फ मर्दोंपर ही लागू होगा।
>
> नया कानून जानबूझ कर अन्यायपूर्ण बनाया गया है और वह लॉर्ड सेल्बोर्नके पिछले भाषणोंके विरुद्ध है, इसे लॉर्ड सेल्बोर्न स्वीकार नहीं करते।

इस उत्तरसे मालूम होता है कि लॉर्ड सेल्बोर्नने नये कानूनको जानने या आज क्या स्थिति है, उसे समझनेकी तकलीफ नही की। जहाँ इतना अन्धेर हो, वहाँ हमारा एक ही कर्तव्य होना चाहिए; और वह यह कि जेल जानेके चौथे प्रस्तावपर अमल किया जाये। सरकार यह तत्काल समझ लेगी कि बगैर दु:खके हजार व्यक्ति जेल जाना मंजूर नही करेंगे।

निधिकी आवश्यकता

लेकिन जैसे जेल जानेकी आवश्यकता है, वैसे धनकी भी आवश्यकता है। शिष्टमण्डलके जानेसे जो खर्च होता उससे अब ज्यादा खर्च होगा। जो व्यक्ति जेलमें जायेंगे उनके सम्बन्धमे तार भेजना, उनके जानेके बाद व्यवस्था करना, यह सब बिना खर्चके नही होगा। फिर यह भी नही कहा जा सकता कि लड़ाई दो-चार दिनमें समाप्त हो जायेगी। मतलब यह कि धनकी पूरी आवश्यकता होगी। इस सम्बन्धमे हमारे लोग पिछड़े हुए हैं, यह पहले कहा जा चुका है। इसके लिए पूरी खबरदारी बरतना और एकता कायम रखना बहुत जरूरी है।[1]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २९-९-१९०६

१. निम्नलिखित अनुच्छेद इंडियन ओपिनियनके सम्पादक द्वारा जोड़ दिया गया था :

छपते-छपते प्राप्त समाचार

"ऊपरकी बातोंसे मालूम होता है कि अब शिष्टमण्डलको भेजनेकी आवश्यकता नहीं रही। परन्तु हमें अभी-अभी तार मिला है जिससे मालूम होता है कि अध्यादेशको बड़ी सरकारकी स्वीकृति नहीं मिली है। इस तरह स्वीकृति प्राप्त होनेमें करीबन पाँच सप्ताह लग जाना सम्भव है। ऊपर जिन पत्रोंका उल्लेख किया गया है उन्हें पढ़नेसे मालूम होता है कि कुछ गलतफहमी हो गई है। इस सम्बन्धमें अगले सप्ताह विशेष स्पष्टीकरण पाना सम्भव है।"

४७१. तार: ट्रान्सवाल गवर्नरको[1]

[जोहानिसबर्ग
सितम्बर ३०, १९०६][2]

ब्रिटिश भारतीय संघको लॉर्ड एलगिन द्वारा एशियाई अध्यादेशकी मजूरीपर खेद। उसकी नम्र सम्मतिमें मंजूरीका कारण अध्यादेशके सम्बन्धमें गलतफहमी है। सघके खयालसे भारतीय समाजको कोई राहत नहीं दी जा रही। इसलिए संघने अत्यन्त सम्मानपूर्वक साम्राज्य सरकारके सम्मुख अध्यादेशके बारेमें भारतीय दृष्टिकोण रखनेके लिए युगलश्री गाधी और अलीका शिष्टमण्डल भेजनेका निश्चय किया है और प्रार्थना है कि सुनवाई होने तक सम्राट्की मंजूरी रोक ली जाये।[3] शिष्टमण्डल अगली डाकगाड़ीसे रवाना हो रहा है।

ब्रिभास

[अंग्रेजीसे]

प्रिटोरिया आर्काईव्ज़: एल० जी० फाइल सं० ९३: एशियाटिक्स

१. यह ब्रिटिश भारतीय सघकी प्रार्थनापर ट्रान्सवालके गवर्नर द्वारा २ अक्तूबरको उपनिवेश-मन्त्रीके पास भेज दिया गया था।

२. शिष्टमण्डल १ अक्तूबरको इंग्लैंड जानेके लिए केप टाउनको रवाना हुआ। प्रत्यक्ष है, यह तार उससे एक दिन पहले भेजा गया था। शिष्टमण्डल अपने साथ यह प्रमाणपत्र ले गया था: "यह प्रमाणित किया जाता है कि ब्रिटिश भारतीय संघके अवैतनिक मन्त्री श्री मो० क० गाधी और हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके अध्यक्ष श्री हाजी वजीर अली इंग्लैंड जाने और साम्राज्य-अधिकारियोंके सामने एशियाई अधिनियम संशोधन अध्यादेशके सम्बन्धमें भारतीयोंका दृष्टिकोण रखने एवं इंग्लैंडमें दक्षिण आफ्रिकी ब्रिटिश भारतीयोंके मित्रोंसे भेंट करनेके लिए प्रतिनिधि चुने गये हैं।"

३. पीछे यह ज्ञात हुआ कि यह मंजूरी केवल ऐसा अध्यादेश पेश करनेके प्रस्तावपर थी; किन्तु स्वयं अध्यादेशपर सम्राट्की मंजूरी अभी शेष थी।

४७२. भाषण : विदाई-सभामें[1]

लन्दन जानेवाले शिष्टमण्डलके सदस्योंको विदाई देनेके लिए ब्रिटिश भारतीय संघकी सभा हुई थी उसमें गांधीजीने अध्यक्ष श्री अब्दुल गनीके भाषणका जो उत्तर दिया था, उसका कुछ सार निम्नलिखित है :

जोहानिसबर्ग
सितम्बर ३०, १९०६

श्री गांधीजीने कहा कि मैं नेताओं और उनके अनुयायियोंके इस गम्भीर वचनका खयाल करके जा रहा हूँ कि वे किसी भी हालतमें नये अध्यादेशकी शर्तें पूरी नहीं करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६–१०–१९०६

४७३. हाजी वजीर अली[2]

श्री हाजी वजीर अली २३ नवम्बर १८५३ को मॉरिशस द्वीपमें पैदा हुए और उनकी शिक्षा-दीक्षा वहाँकी सरकारी शालाओंमें हुई। सन् १८६४ में उन्होंने 'कमर्शियल गज़ट' के दफ्तरमें मुद्रकके रूपमें काम शुरू किया और १८६८ में उन्हे श्री पी० आदमकी पेढ़ीमें जहाज गोदामके कारकुनकी हैसियतसे काम मिला। कुछ दिनों वे श्री जोगुआ ब्रदर्सके यहाँ और बाद एक अन्य पेढीमें क्रमशः सहायक जहाज-मुशी और जहाज-मुशीका काम करते रहे। १८८३ मे, जैसा हर दीनदार मुसलमानको लाजिम है, उन्होंने मक्काकी यात्रा की और हाजी बने। सन् १८८४ में वे दक्षिण आफ्रिका आये और केप टाउनके बन्दरस्थानपर उतरे, जहाँ उन्होंने सोडा-वाटर बनानेका अपना खुदका धन्धा शुरू किया। तबसे आजतक वे सदा देशकी राजनीतिमें सक्रिय भाग लेते रहे हैं और उन्होंने रंगदार लोगों, विशेषकर अपने सहधर्मियों, मलाइयों और अपने देशभाइयों — ब्रिटिश भारतीयों — की हालतको सुधारनेका प्रयत्न किया है। एक बार केप सरकारने मलाइयोंका कब्रिस्तान शहरसे बहुत दूर निश्चित कर दिया था। मलाइयोंने इसपर दंगा कर दिया। श्री हाजी वजीर अलीके प्रयत्नोंसे वह शान्त हुआ और अन्ततोगत्वा मुख्यतः उन्हीके प्रयत्नोंसे एक ऐसा स्थान चुना गया जिससे मलायी समाज सन्तुष्ट हुआ।

१. यह **इंडियन ओपिनियन**के ट्रान्सवाल-स्थित प्रतिनिधि (श्री पोलक) की "जोहानिसबर्ग टिप्पणियाँ" का एक अंश है। अपनी पुस्तक **महात्मा**में तेंदुलकरने एक दूसरे भाषणका विवरण भी दिया है, "हम बेशक अपनी शक्तिभर प्रयत्न करेंगे; किन्तु हमारी प्रार्थना स्वीकृत होनेकी सम्भावना नहीं-सी है। इसलिए हमें मुख्यतः चौथे प्रस्तावपर ही निर्भर रहना होगा। हम इंग्लैंडके अपने सभी मित्रोंको अपना मामला समझायेंगे। आप भी पंजीयन न करायें और अपना कर्तव्य निबाहें। आन्दोलन चलानेके लिए धन इकट्ठा करना ही है। मगर इससे भी महत्त्वपूर्ण यह है कि हिन्दू और मुसलमान पूरी तरह एक होकर रहें। (पृष्ठ ९६, खण्ड १, झवेरी और तेंदुलकर, बम्बई, अगस्त १९५१) इस भाषणका स्रोत व तारीख उपलब्ध नहीं है। यह भी स्पष्ट नहीं है कि यह हमीदिया अंजुमन हालमें दिये गये भाषणका अंश है या ऊपर दिया गया ब्रिटिश भारतीय संघवाला भाषण ही है।

२. "शिष्टमण्डलके व्यक्ति : संक्षिप्त परिचय" शीर्षकसे प्रकाशित लेखका एक अंश। उसमें गांधीजीपर जो लिखा गया था वह यहाँ नहीं दिया जा रहा है। "जोहानिसबर्गकी चिट्ठी" पृष्ठ ४५९ भी देखिए।

केप टाउनमें रहते हुए श्री अली संसद और नगरपालिका दोनोंके मतदाता थे। १८९२ में वे रंगदार जनसंघ (कलर्ड पीपल्स ऑर्गेनाइज़ेशन) के अध्यक्ष चुने गये और मताधिकार कानून संशोधन (फ्रैंचाइज लॉ अमेंडमेंट) के सिलसिलेमें उन्होंने प्रमुख रूपसे कार्य किया। २२,००० रंगदार लोगोंके हस्ताक्षरोंसे प्रार्थनापत्र तैयार करके लन्दन भेजा गया। बादमें श्री अली जोहानिसबर्ग चले गये। वहाँ भी वे ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थितिके बारेमें कार्य करते आ रहे हैं। युद्धके पूर्व उन्होंने बड़े बोअर कर्मचारियों और ब्रिटिश एजेंटोंसे मुलाकातें करके ब्रिटिश भारतीयोंको राहत दिलानेके लिए बहुत कुछ किया था।

श्री अली हमीदिया इस्लामिया अंजुमनके संस्थापक और अध्यक्ष हैं। यह संस्था जोहानिस-बर्गके मुसलमानोंमें उत्तम और उपयोगी कार्य कर रही है। एम्पायर नाटकघरकी सार्वजनिक सभाका आयोजन करनेमें इसका प्रमुख हाथ था। अंजुमन फूलती-फलती हालतमें है और सैकड़ों मुसलमान उसके सदस्य हैं।

श्री अली यद्यपि सर्वांग-सम्पूर्ण वक्ता नहीं हैं, लेकिन अंग्रेजी भाषापर उनका बहुत अच्छा अधिकार है। उनकी आवाज उत्तम है और वे प्राय धाराप्रवाह बोलते हैं। उन्होंने एक मलायी महिलासे विवाह किया है और उनके ११ बच्चे हैं। स्त्री-शिक्षापर उनके विचार उदार हैं और रंगभेदकी बाधाओंके बावजूद वे अपनी लड़कियोंको अच्छी शिक्षा देनेका प्रयत्न करते रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६-१०-१९०६

४७४. हाँगकाँगमें ईश्वरीय प्रकोप

सानफ्रान्सिस्को जैसा सुन्दर शहर एक क्षणमें धूलमें मिल गया और पल-भरमें हजारों मनुष्य दबकर मर गये, इस समाचारकी याद अब भी पीड़ा दे रही है। ऐसा ही भूकम्प चिलीमें हुआ है जिससे वालपारियो आदि स्थानोंमें लाखों मनुष्य बेघर-बार हो गये हैं और उनके भूखों मरनेकी नौबत आ गई है। यह गजबकी कहानी अभी पूरी भी नहीं हुई है कि एशियासे आवाज आ रही है कि वहाँकी संतानें अमेरिकासे कम अभागी नहीं हैं। [चीनके दक्षिण, हाँगकाँगके समुद्रमें जगह-जगह आँधी और तूफान आनेके समाचार पिछले सप्ताह प्रकाशित हो चुके हैं। कई वाहन और जहाज खराब हो गये हैं, कई टूट-फूटकर नष्ट हो गये हैं। छोटी डोंगियाँ और नावें पूरी-की-पूरी समुद्रमें समा गई हैं और हजारों प्राणियोंकी प्यारी जानें चली गई हैं। बन्दरगाहके प्रवेश-द्वारमें पानी भर जानेसे नदियाँ शहरके रास्तोंमें बहने लगी हैं और मुसीबतसे घिरे हुए लोग नावोंकी मददसे जान बचानेके लिए छटपटा रहे हैं। कहा जाता है कि इस तूफानमें ५० जहाज और वाहन डूब गये। मछुओंकी ६०० डोंगियाँ सैर करने निकली थीं, उनमें से कुछका ही पता चला है। कुछ नहीं तो १०,००० लोग मौतके मुँहमें समा गये हैं। यह सब दो-तीन घंटोंमें ही हो गया। यह सुनकर विचारवान लोग दुःखी होंगे। "ईश्वर पलकमें खलक करे" — वाचनमालाकी ये बातें प्रत्यक्ष दीखने लगी हैं। ईश्वरकी गति गहन है। उसके कामोंमें मनुष्यको हमेशा कुछ-न-कुछ सार ग्रहण करनेको मिलता है। जब ऐसी घटना ताजी हो तब सद्गुणीको आवाजें सुनाई पड़ने लगती हैं कि, "भले आदमी, अच्छा रास्ता पकड़। मौत कब

आयेगी, यह कहा नहीं जा सकता; इसलिये सत्कर्म रूपी सम्बल इकट्ठा कर ले।" यही घटना उलटे रास्ते जानेवालेको चेताती है: "नादान, अभिमान छोड़ और ईश्वरसे डरकर चल। कालको निवाला भरनेमें कुछ भी देर नही लगेगी।"]

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६-१०-१९०६

४७५. ट्रान्सवालके भारतीयोंका कर्त्तव्य

ट्रान्सवालकी स्थितिके सम्बन्धमें हमने दूसरी जगह पूरा विवरण दिया है, इसलिए इस जगह हमें ज्यादा कुछ नही कहना है। यह समय इतना नाजुक है कि ट्रान्सवालके बाहर रहनेवाले सभी भारतीय चौक गये हैं। सभीको लग रहा है कि ट्रान्सवालमे भारतीयोंने जो कदम उठाया है वह बहुत ही मुश्किल है। उसके सफल होनेपर ही उसे सही कहा जा सकता है। भारतीयोंने जो प्रस्ताव पास किया है वह अनोखा है और नहीं भी है। कानूनके सामने आत्मसमर्पण करनेके बजाय जेल जानेका जो निर्णय किया गया है वैसा निर्णय आजतक भारतीयोने दुनियामें कही भी किया हो, सो दीख नहीं पड़ता। इससे हम उस कदमको अनोखा कहते हैं। दूसरी ओर हमने यह भी कहा है कि उसमें अनोखापन नही है। इसका कारण यह है कि इससे मिलते-जुलते उदाहरण बहुतसे मिलते हैं। हम कई बार नाराज होनेपर हडताल करते हैं; और भारतमें कई बार हड़तालको हम अपना कर्त्तव्य मान लेते हैं; खासकर देशी राज्योंमे हड़ताल द्वारा हम न्याय प्राप्त करते हैं। वहाँ हड़तालका अर्थ इतना ही होता है कि हमारे राजाने जो कदम उठाया है वह हमें पसन्द नही है। कानूनके विरोधका ऐसा रिवाज हममें तबसे चला आ रहा है जब अंग्रेज लोग जंगली थे। इसलिए सच कहा जाये तो ट्रान्सवालके भारतीयोंने जो प्रस्ताव पास किया है उसमें नयापन कुछ नही है और इसलिए हमें घबड़ाना नही चाहिए।

इतना ही नही, दक्षिण आफ्रिकामें भी ऐसे उदाहरण मिलते हैं। स्वर्गीय राष्ट्रपति क्रूगरने जब भारतीयोंको मलायी बस्तीसे हटाकर टोबियानस्कीके फार्मपर ले जानेकी योजना की थी, तब एमरिस ईवान्सने, जो ब्रिटिश एजेंट थे, हमें स्पष्ट सलाह दी थी कि हम राष्ट्रपतिके आदेशको कतई न मानें। इससे यह हुआ कि पुलिसकी जाँच-पड़ताल और जासूसोंके घरोमें घुस जानेके बावजूद हम लोग अटल रहे और सफल हुए।

परवानेकी तकलीफ थी, तब भी भारतीयोंने बेधड़क बिना परवानेके शहरोंमें व्यापार किया। वे बोअर सरकारसे नही दबे और विजयी हुए। उस सरकारने हमे बस्तीमें भेजनेका बहुत प्रयत्न किया, लेकिन वह भेज नही सकी।

लड़ाईके बादके उदाहरण ढूँढ़ना चाहें, तो वे भी मिल सकते हैं। लॉर्ड मिलनरने जब भारतीयोपर 'बाजार'-सूचना रूपी तलवार उठाई थी उस समय एक बार तो लोग घबड़ा गये थे। लेकिन फिर विचार किया और अन्तमें बस्तीमें नहीं जानेका निर्णय किया। पॉचेफस्ट्रूममें सम्मन भी जारी किये गये थे, लेकिन उन्हें वापस लेना पड़ा था। मूअर साहबने लोगोंके फोटोवाले पास शुरू किये थे, लेकिन उन्हें लेनेमें लोगोंने आनाकानी की और उस नियमको उठाना पड़ा।

दूसरी कौमोंके उदाहरण चाहें तो वे भी हमें सहज ही मिल जाते हैं। हॉटेन्टॉट लोगोके लिए पासका नियम है। उन्होने इस नियमका विरोध किया है और वे पास नही लेते। सरकार उन लोगोंका कुछ नही बिगाड़ पाती। नेटालके काफिरोंपर मकान-कर लगा हुआ है, फिर भी जूलू लोगोकी कुछ कौमे ऐसी है जो बिलकुल परवाह नही करती। उनसे सरकार कर नही ले रही है, यह गुप्त रूपसे सभी जानते हैं।

इन सब उदाहरणोसे स्पष्ट हो जाता है कि हमारे लिए डरनेका कोई कारण नही है। फिर भी उपर्युक्त उदाहरणोंमें और भारतीय लोगोके प्रस्तावोंमे कुछ अन्तर हैं। इन सब उदाहरणोमे किसी भी कौमने मिलजुलकर सामूहिक प्रस्ताव नही किया था। फिर, लोगोने कानूनको न माननेकी बात तो पसन्द की थी, लेकिन यह तय नही किया था कि इसका परिणाम कैसे भोगा जाये। जैसे कि हॉटेन्टॉट लोगोको यदि कोई पास न लेनेके सम्बन्धमें पकड़ता है, तो उनमेसे कुछ जुर्माना देते हैं, और कुछ जेल चले जाते हैं। ट्रान्सवालके भारतीयोंने यह निर्णय किया है कि वे नया पंजीयनपत्र लेनेके बजाय जेल जाना मंजूर करेंगे। उनके लिए दूसरे दो रास्ते खुले हैं — या तो जुर्माना दें या देश छोड़ दें। इन दोनोको समितिने गम्भीरतापूर्वक विचार करके नामंजूर कर दिया है। इसीमें नयापन है, इसीमे खूबी है और इसीमें बल है। यदि जुर्माना देने लगें, तो सरकार इतना ही चाहती है। यदि देश छोड़ दें, तो गोरे लोग तालियाँ बजायेंगे, खुश हो जायेंगे और झंडे फहरायेंगे। यह सब हमें नही करना है। क्योंकि इसमें हमारी बदनामी और नामर्दगी जाहिर होगी। [जेल जाना एक विशिष्ट बात है; यह एक पवित्र कदम है और इसीके द्वारा भारतीय प्रजा अपनी प्रतिष्ठा कायम रख सकेगी।] इससे यदि हमारा व्यापार डूब जाये, तो क्या हुआ? मकान और सामान जल जाये तो व्यापारी संतोष मानकर बैठ जाता है; और फिर जवाँ-मर्दीसे व्यापार शुरू करके पेटके लायक कमा लेता है। [जिसके हाथ-पैर हैं और बुद्धि है, ऐसे मनुष्यके लिए इस देशमें कभी भूखो मरनेका प्रसंग नही आता।] और कौम या देशके भलेके लिए यदि सौ-सवा-सौ व्यक्ति भिखारी बन जायें, तो उसमें नई बात कौनसी है? अंग्रेज ऐसे ही व्यक्तिकी इज्जत करते हैं। उनमें ऐसे महापुरुष हो गये हैं और होते हैं, इसीलिए तेज झलकता रहता है। वाट टाइलर, जॉन हैम्डन, जॉन बनियन आदि ऐसे ही वीर थे, जिन्होने अंग्रेजी राज्यकी नींव डाली है। वे कौन थे और उन्होने क्या किया, यह हम और कभी कहेंगे।[1] लेकिन जबतक हम उनका अनुकरण नही करते तबतक हम अधम स्थिति ही भोगते रहेंगे। इस समय हमारी कौमको अपना पुरुषार्थ बतानेका मौका मिला है। हम आशा करते हैं कि वह मौकेको हाथसे नही जाने देगी, रणमें भी जूझेगी और सम्पूर्ण बलिदानका संकल्प करके केसरिया बाना धारण करेगी। [भारतका वह भी समय था जब कि कोई लड़का रणसे हारकर भाग आता, तो उसकी माता उसका मुँह देखनेसे भी इनकार कर देती थी।] हमारी जगन्नियन्तासे प्रार्थना है कि ट्रान्सवालका हर भारतीय अपने उस समयकी याद रखे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, ६-१०-१९०६

१. देखिए "टाइलर, हैम्डन और बनियन", पृष्ठ ४८८-९०।

४७६. तार : उपनिवेश-मन्त्रीको[1]

जोहानिसबर्ग
अक्तूबर ८, १९०६

ब्रिटिश भारतीय संघ सरकारी 'गजट' में प्रकाशित फ्रीडडॉर्प बाड़ा-अध्यादेश पढ़कर दुःखी है। फ्रीडडॉर्पमें एशियाइयोंके नाम पट्टोंके तबादले और उनके निवासपर प्रतिबन्ध अन्यायपूर्ण। निवेदन है, संघका विरोधपत्र पहुँचने तक शाही मंजूरी स्थगित रखी जाये।

[अंग्रेजीसे]

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स : २९१, खण्ड १०३

४७७. प्रार्थनापत्र : लॉर्ड एलगिनको[2]

जोहानिसबर्ग
अक्तूबर ८, १९०६[3]

सेवामें
परमश्रेष्ठ परममाननीय अर्ल ऑफ एलगिन
सम्राट्के मुख्य उपनिवेश-मन्त्री
लन्दन

ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्षकी हैसियतसे अब्दुल गनीका प्रार्थनापत्र

नम्र निवेदन है कि,

(१) ट्रान्सवाल ब्रिटिश भारतीय संघ २८ सितम्बरके ट्रान्सवाल 'गवर्नमेंट गजट' में प्रकाशित १९०६ के फ्रीडडॉर्प बाड़ा-अध्यादेशके सम्बन्धमें लॉर्ड महोदयसे आदरपूर्वक यह प्रार्थना करता है।

(२) प्रार्थीके ध्यानमें आया है कि यह अध्यादेश तबतक लागू न होगा "जबतक गवर्नर 'गजट' में यह घोषित न करे कि सम्राट्की सरकारकी इच्छा उसका निषेध करनेकी नहीं है।"

१. यह ८ नवम्बरको ट्रान्सवालके गवर्नरको भेजा गया था और उन्होंने, ब्रिटिश भारतीय संघके अनुरोधपर, इसे तार द्वारा उपनिवेश-मन्त्रीको भेज दिया था। अनुमानतः इस तारका मसविदा गांधीजीने १ अक्तूबरको इंग्लैंडके लिए रवाना होनेके पहले और २८ सितम्बरको फ्रीडडॉर्प बाड़ा-अध्यादेशके सरकारी 'गजट' में प्रकाशित होनेके बाद तैयार किया होगा। बादमें यह ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा भेजा गया होगा।

२. यह १३-१०-१९०६ के **इंडियन ओपिनियन** और २-११-१९०६ के **इंडिया**में भी प्रकाशित किया गया था।

३. यद्यपि यह आवेदनपत्र गांधीजीके इंग्लैंड रवाना होनेके एक सप्ताह बाद दिया गया था, तथापि सम्भव है कि २८ सितम्बरके 'गजट' में अध्यादेशके प्रकाशित होनेपर गांधीजीने भारतीयोंके लिए एक बहुत गम्भीर प्रश्नके सम्बन्धमें यह आवेदनपत्र तैयार किया हो और इसको उचित समयपर भेजनेका काम ब्रिटिश भारतीय संघको सौंप दिया हो।

इसलिए प्रार्थीने आप महानुभावकी सेवामें एक तार[1] भेजा था और प्रार्थना की थी कि सम्राट्की इच्छा तबतक घोषित न की जाये जबतक संघको आप महानुभावके सम्मुख अपनी बात निवेदन करनेका अवसर नहीं मिलता।

(३) संघ उपर्युक्त अध्यादेशकी अनुसूचीकी धारा ५, ८ और ९ का आदरपूर्वक विरोध करता है।

(४) उल्लिखित धाराएँ इस प्रकार हैं:

> ५. यह पट्टा किसी रंगदार व्यक्तिको हस्तान्तरित न किया जा सकेगा और यदि वह किसी ऐसे व्यक्तिके नाम पंजीकृत होगा तो यह पट्टा इस तथ्यके कारण ही अमलके बाहर और खत्म हो जायेगा।
>
> ८. उक्त बाड़ा या उसका कोई भाग या उसपर बना मकान किसी भी रंगदार व्यक्ति या एशियाई उपकिरायेदारको नहीं दिया जायेगा। इस शर्तको तोड़नेपर परिषद धारा ४ में बताये गये तरीकेसे लिखित सूचना देकर तुरन्त इस पट्टेको खत्म कर सकेगी।
>
> ९. पट्टेदार किसी रंगदार व्यक्ति या एशियाईको, जो किसी यूरोपीयका कानून-सम्मत नौकर न हो और उस समय उक्त बाड़ेमें न रहता हो, उस बाड़ेमें, या उसके किसी भागमें न तो रहने देगा और न कब्जा करने देगा। यदि पूर्वकथित नौकर जैसे व्यक्तिके अलावा कोई दूसरा रंगदार व्यक्ति या एशियाई उक्त बाड़ेमें रहता या उसके किसी भागपर कब्जा रखता पाया जायेगा तो परिषद पट्टेदारको धारा ४ में बताये गये तरीकेसे यह सूचना दे सकती है कि वह उस व्यक्तिको सूचना मिलनेके बाद तीन सप्ताहके भीतर उस बाड़ेमें या उसके किसी भागमें रहनेसे या उसपर कब्जा रखनेसे मना कर दे और यदि इस अवधिकी समाप्तिपर ऐसा व्यक्ति उस बाड़ेमें रहता, उसपर या उसके किसी भागपर कब्जा रखता पाया जायेगा तो परिषद तुरन्त पट्टेदारको पहले बताये गये तरीकेसे सूचना देकर यह पट्टा खतम कर सकती है।

(५) फलत, अध्यादेशसे इस प्रकार घरेलू नौकरोंके सिवा अन्य ब्रिटिश भारतीयोंका निवास निषिद्ध हो जाता है।

(६) इस तरहके निषेधसे ब्रिटिश भारतीयोंके लिए एक नई निर्योग्यता पैदा हो जायेगी।

(७) संघकी विनम्र सम्मतिमें सकल्पित प्रतिबन्ध लगानेका कोई औचित्य नहीं है।

(८) इसके अलावा संघ महानुभावका ध्यान इस तथ्यकी ओर आकर्षित करता है कि ब्रिटिश भारतीय अध्यादेशसे प्रभावित क्षेत्रमें पिछले बहुत वर्षोंसे बाड़ोंपर काबिज रहे हैं, जो उनको मूलतः फ्रीडडॉर्पके डच नागरिकोंसे प्राप्त हुए थे।

(९) ऐसे बाड़ोंमें कुछ ब्रिटिश भारतीयोंने पुख्ता इमारतें बना ली हैं और कुछ इस समय पट्टेपर लिये हुए बाड़ोंमें या तो रहते हैं, या व्यापार करते हैं।

(१०) यदि वे धाराएँ, जिनपर आपत्ति की गई है, मंजूर कर दी गईं, तो ऐसे सभी लोगोंपर, जिनका उल्लेख इस आवेदनपत्रमें पहले किया जा चुका है और जिनके स्वार्थ स्थापित हो चुके हैं, विपरीत प्रभाव पड़ेगा और कुछका तो सारा धंधा ही चौपट हो जायेगा।

(११) संघ यह बतानेकी धृष्टता करता है कि जब कुछ समय पूर्व इस अध्यादेशके मसविदेपर रिपोर्ट देनेके लिए फ्रीडडॉर्प-आयोगकी बैठक हुई थी तब ऐसी कोई भी धाराएँ

१. देखिए पिछला शीर्षक।

शामिल करनेपर, जैसी कि ऊपर बताई गई हैं, ब्रिटिश भारतीयोंकी ओरसे आयोगके सम्मुख आपत्तियाँ पेश की गई थी।

(१२) संघ महानुभावका ध्यान इस तथ्यकी ओर भी आकर्षित करता है कि अध्यादेश-से प्रभावित क्षेत्र मलय बस्तीसे लगा हुआ है जिसमें एशियाइयोंकी, मुख्यतः ब्रिटिश भारतीयोंकी बड़ी आबादी है। फ्रीडडॉर्प और मलय बस्तीके निवासियोंके सम्बन्ध सदा ही सन्तोषजनक रहे हैं।

(१३) संघ अनुभव करता है कि यदि उल्लिखत धाराएँ महानुभाव द्वारा मंजूर कर दी गईं तो उनकी मंजूरी दूसरी नगरपालिकाओंके लिए नजीर बन जायेगी और उसके फल-स्वरूप ब्रिटिश भारतीय अन्ततः नौकर-चाकरोंके दर्जेमें पहुँच जायेंगे और जबरदस्ती बस्तियोंमें भेज दिये जायेंगे।

(१४) इसलिए प्रार्थी नम्रतापूर्वक प्रार्थना करता है कि उल्लिखित अध्यादेश नामंजूर कर दिया जाये, या ऐसी अन्य राहत दी जाये जो महानुभावको उचित प्रतीत हो।

और न्याय तथा दयाके इस कार्यके लिए प्रार्थी सदा दुआ करेगा, आदि, आदि।

जोहानिसबर्ग, तारीख ८ अक्तूबर, १९०६

अब्दुल गनी
अध्यक्ष
ब्रिटिश भारतीय संघ

दफ्तरी अंग्रेजी प्रतिकी फोटो-नकल (एस० एन० ४३८४) से।

४७८. शिष्टमण्डलकी यात्रा — १

[जहाजपर
अक्तूबर ११, १९०६ के पूर्व]

नये एशियाई कानूनके सम्बन्धमें विलायत जानेवाले शिष्टमण्डलका चुनाव हुआ। उसमें क्या-क्या मुसीबतें आईं, उसे 'इंडियन ओपिनियन' के पाठक जानते हैं। श्री अब्दुल गनी, श्री अली और श्री गांधी, तीन व्यक्ति जायें, यह लोगोंने पहलेसे ही तय कर दिया था। लेकिन आखिर श्री अब्दुल गनी तैयार नहीं हुए, और श्री अली तथा श्री गांधीको ही जाना पड़ा।

प्रारम्भमें ही विघ्न

ऊपर कहे अनुसार शिष्टमण्डलमें दो व्यक्ति जायें, ऐसा स्पष्ट निर्णय २८ सितम्बर शुक्र-वारको हुआ। 'आर्माडेल कासिल' से चलनेका निश्चय हुआ और शनिवार, २९ सितम्बरको जहाजके टिकट खरीदे गये। सोमवार, अक्तूबर १ को केप मेलसे जाना था। उसका टिकट भी ले लिया गया। लेकिन एक घंटे बाद स्टेशन मास्टरने कहलाया कि इस मेलसे शिष्टमण्डल नहीं जा सकता; रातको ९ बजे गाड़ी जाती है, उससे जा सकता है। इसका अर्थ यह हुआ कि यदि केप मेलसे जाना टल गया, तो 'आर्माडेल कासिल' से नहीं जा सकते और शिष्टमण्डलको एक सप्ताहकी देरी हो जायेगी। श्री गांधीने तत्काल इसकी सूचना टेलीफोनसे महाप्रबन्धकको दी और यह बताया कि जाना कितना जरूरी है। महाप्रबन्धक स्टेशन मास्टरकी रोकका मतलब समझ नहीं पाये, इसलिये उन्होंने कहा कि मैं पता लगाकर टेलीफोन करूँगा। एक घंटेके बाद सूचना मिली कि स्टेशन मास्टरने गलती की है और शिष्टमण्डल केप मेलसे जाये तो कोई हर्ज नहीं है।

रेलगाड़ीपर

शामको ६–१५ बजे गाडीपर चढे। पहलेसे तय किये हुए लोग स्टेशनपर पहुँचानेके लिए आये थे। उनमे श्री अब्दुल गनी, श्री ईसप मियाँ, श्री कुवाडिया, श्री उमरजी, श्री शहाबुद्दीन, श्री फेन्सी, श्री भीखूभाई आदि सज्जन थे। श्री भीखूभाई नारियल वगैरह लाये थे। सबसे हाथ मिलाकर विदा ली।

श्री हाजी वजीर अलीकी हालत

श्री हाजी वजीर अली पिछले दिनोके कामके कारण थके हुए थे। इसलिये वे पस्तहिम्मत हो रहे थे। उन्हे सन्धिवातका रोग है। उससे रास्तेमे तकलीफ होगी यह भय उन्हे तभी था जब शिष्टमण्डलकी बात चल रही थी और वह रेलगाड़ीसे ही सत्य साबित होने लगा। श्री हाजी वजीर अलीके जोड़ोमे ऐंठन शुरू हुई। मुझसे जितनी भी सेवा करते बनी वह की। मैंने उनके जोड़ोंको दबाया व पकड़ा। लेकिन उससे दर्दमे कमी नही हुई। श्री अली अपना खाना साथ लाये थे। उन्होने वही खाया। कॉफी पी। दूसरा कुछ लेनेकी उनकी इच्छा न थी। मै सलूनमे खानेको गया। वहाँ उबाले हुए आलू और मटर थे। वे लिये और रोटी खाई। श्री भीखूभाईने जो मेवा बाँध दिया था, वह भी खाया। मुझे जो कुछ लिखना था, वह लिखा। श्री अली १० बजे सोये। मैं लिखकर बारह बजे सोया। श्री अलीकी रात अर्ध-निद्रामे बीती। मंगलवारको सवेरे उठते ही उनकी पीड़ा बहुत बढ़ गई। साथ ही बुखार भी चढ़ आया और खाँसी भी शुरू हो गई।

केप मेलकी व्यवस्था

जहाजमें जैसी व्यवस्था रहती है, केप मेलमे भी लगभग वैसी ही व्यवस्था रखी जाती है। सवेरेसे ही खाना शुरू हो जाता है। स्नान तक की व्यवस्था वहाँ रहती है। यात्री फुहारेसे भी स्नान कर सकते हैं। इस ट्रेनमे सिर्फ पहले दर्जेके लोग ही जा सकते है।

केप टाउनमें

केप टाउनमें गाड़ी बुधवारको २ बजे पहुँची। वहाँ श्री यूसुफ हमीद गुल, श्री आमद गुल, श्री लछाराम और श्री अब्दुल कादिर स्टेशनपर मिलने आये थे। श्री यूसुफ हमीद गुलने अपने यहाँ खाना बनवाया था। वह खाकर हम ४–४५ बजे रवाना हुए थे। ये तीनो सज्जन जहाजपर भी आये थे।

'आर्मांडेल कासिल'

यूनियन कासिल प्रणालीके काफिलेमे 'आर्मांडेल कासिल' बड़ेसे-बड़े जहाजोमे से है। इसका वजन १२,९७३ टन, इसकी शक्ति १२,५०० हॉर्स पावर और लम्बाई ५९० फुट ६ इच है। इसकी चौड़ाई ६४ फुट ६ इच और ऊँचाई ४२ फुट ३ इच है। उसमे पहले वर्गके ३२०, दूसरे वर्गके २२५ और तीसरे वर्गके २८० यात्री चल सकते है। हर वर्गके यात्रियोके लिए विशाल एव सुन्दर भोजन-कक्ष है। उनमें हवाके आने जानेके लिए व्यवस्था भी उत्तम है। हर वर्गके लिए पढनेको पुस्तकें मिलती हैं और पढनेके लिए अलग-अलग कमरे बने हुए हैं। स्नानकी व्यवस्था बहुत ही अच्छी है और गर्म तथा ठडा पानी जितना चाहे उतना मिल सकता है। पाखाने बहुत ही साफ रखे जाते हैं और उनमे सूचना लगी रहती है कि कोई यात्री बैठक न बिगाड़े। पहले और दूसरे वर्गके चार-चार विभाग हैं। हमारा टिकट पहले वर्गके तीसरे विभागका है और हरएकको वापसी टिकटके लिए ७९ पौड १५ शि० देना पड़ा है।

खानेकी व्यवस्था

इन जहाजोंमें न जाने क्यों ऐसी व्यवस्था होती है कि मानो यात्रियोंको सारे दिन खाते ही रहना है। सवेरे ६ बजे नौकर कॉफी, रोटी और मेवे लाता है। साढ़े आठ बजे सलूनमें कलेवा किया जाता है। उसमें करीबन दस तरहकी चीजें होती हैं। ग्यारह बजे छत (डेक) पर चाय और बिस्कुट आते हैं। एक बजे फिर सलूनमें दोपहरका खाना शुरू होता है। उसमें भी दस पन्द्रह चीजें होती हैं। शामको चार बजे चाय, बिस्कुट और रोटी वगैरह; साढ़े छः बजे सलूनमें खाना और रातको नौ बजे या कुछ देरसे यात्रीकी रुचिके अनुसार चाय, कॉफी, बिसकुट वगैरा चीजें। यह सब जहाजके किरायेमें शामिल हैं। इसके अलावा यात्रीको बीचमें या कलेवेके समय शराब वगैरह चाहिये, तो वह अलग। उसके पैसे देने पड़ते हैं। ऐसे यात्री, जो शराब वगैरह न लेते हों, क्वचित् ही मिलते हैं।

यात्री

हमारे साथी यात्रियोंमें तीन व्यक्ति विशिष्ट हैं। उनके नाम देना जरूरी है। एक तो ट्रान्सवालके कार्यवाहक लेफ्टिनेंट गवर्नर सर रिचर्ड सॉलोमन और लेडी सॉलोमन हैं। वे खास तौरसे लॉर्ड एलगिनसे मिलने जा रहे हैं। दूसरे दक्षिण आफ्रिकाके प्रख्यात खगोल-शास्त्री सर डेविड गिल हैं और तीसरे केप सर्वोच्च न्यायालयके न्यायाधीश सर जॉन बुकैनन हैं। इनके अलावा लॉर्ड बॉमर भी हमारे साथ हैं।

श्री अली और मैंने कैसे समय बिताया, श्री अलीकी स्थिति कैसी है और हमने खानेकी क्या व्यवस्था की है, इसका विवरण हम दूसरे भागमें देंगे। इस बीच, परेशानीसे बचनेके लिए यहाँ मैं इतना बता देता हूँ कि श्री अलीकी तबीयत अब सुधर गई है और वे जब मैं यह लेख लिख रहा हूँ, डेकपर मजा कर रहे हैं।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १०-११-१९०६

४७९. शिष्टमण्डलकी यात्रा — २

[जहाजपर
अक्तूबर ११, १९०६]

हमने क्या किया

मैं पहले भागमें बता चुका हूँ कि जब हम जहाजपर चढ़े तबतक श्री अलीकी तबीयत सुधरी नहीं थी। उन्हें बिस्तरपर ही रहना पड़ा। अपने साथ वे जो गोलियाँ लाये थे, वे उन्होंने लीं और मुझसे सोप लिनिमेंटकी मालिश करवाई। उससे कुछ फर्क तो दिखाई दिया, लेकिन दर्द नहीं गया। तीसरे दिन डॉक्टरको तबीयत बताई। उसने पसीना आनेकी दवा फेनासिटीन दी। उससे संधियाँ नरम पड़ीं, और चौथे दिन श्री अली बिस्तरसे उठे। लेकिन फिर भी पूरा आराम नहीं हुआ। फिर मैंने उन्हें डॉक्टर कूनेका उपचार आजमानेकी सलाह दी। डॉ० कूनेके उपचारके मुताबिक श्री अली गरम और ठंडे पानीसे स्नान करते हैं। सवेरे खाना नहीं खाते। पहले वे सवेरे उठकर काफी लेते थे; कलेवेके समय दलिया, कॉफी और मेवे लेते थे।

दोनो समयका खाना बन्द करके उन्होंने एक बजे खाना शुरू किया। दवा बन्द कर दी। इस उपचारका आज तीसरा दिन है (ता० ११ अक्तूबर)। श्री अली उससे ठीक है। एक बजे भूख लगती है और जो बद्धकोष्ठ था तथा अजीर्ण रहता था वह अब नही है। वे बीड़ी भी एक बजेके पहले नही पीते। आज भी यद्यपि तबीयत बिलकुल ठीक नही कही जायेगी, फिर भी सधिवातपर काबू पा लिया है, और घूमने-फिरनेमें कुछ ही तकलीफ होती है। उनकी खुराक सादी है। दोपहरमे मछली और आलू, पुडिंग और काफी तथा सोठका पानी (जिंजर एल) लेते हैं। शामको चार बजे चायका एक प्याला, साढ़े छ. बजे मछली, हरी सब्जी, पुडिंग और सोठका पानी और काफी लेते है। इतना खानेके बाद और भी किसी चीजकी इच्छा उन्हे रहती हो, सो नही मालूम होता। पाठकोंको यदि यह जाननेकी जिज्ञासा हुई हो कि मैं क्या खाता हूँ, तो मैंने तीन दिन तक तो तीन वक्त खानेका नियम रखा था। लेकिन उतना खानेकी आवश्यकता न समझ अब एक बजे दूध, रोटी, आलू, उबला हुआ मेवा और मलाई तथा सोडा या सोठका पानी; चार बजे कोको और शामको साढे छः बजे आलू, उबली हुई हरी सब्जी, और उबला हुआ मेवा और सोडा या सोठका पानी ले लेता हूँ। रोटी और दूसरा मेवा नही खाता। इसका कारण यह है कि मेरी हिली हुई दाढ़मे दर्द है। इस खुराकसे बिलकुल सतोप रहता है और काम बहुत हो सकता है। इसका मुख्य कारण मै यह मानता हूँ कि एक बजे तक पेटमें कुछ न जानेसे उपर्युक्त खुराकसे सतोष हो जाता है और वह बस होती है। यह खुराक कुछ तो मेरे नियमके बाहरकी मानी जायेगी, फिर भी चूँकि ठीक ही रहता हूँ, इससे सिद्ध होता है कि जो खाना भूख लगनेपर खाया जाता है, वह तकलीफ नही देता।

श्री अली जस्टिस अमीर अलीकी पुस्तक 'इस्लामकी स्फूर्ति' (स्पिरिट ऑफ इस्लाम) और वाशिंगटन इरविंगकी पुस्तक 'मुहम्मद और उनके बादके लोग' (मुहम्मद ऐंड हिज सक्सेसर्स) पढ़ रहे है। मै तमिलका अभ्यास करता हूँ और फॉर्ब्स कृत 'रासमाला' अथवा 'गुजरातका इतिहास' और 'विदेशी प्रवासी रिपोर्ट' (एलियन इमिग्रेशन रिपोर्ट) पढ़ रहा हूँ। अब चूँकि मदीरा नजदीक आ गया है, इसलिए 'ओपिनियन' की डाक शुरू की है। हम दोनो दूसरे यात्रियोके सम्पर्कमे कम आते है। सर रिचर्ड सॉलोमनके साथ कभी-कभी कुछ बातचीत होती है। हमारे साथ चीनी राजदूत, उनकी नौ वर्षकी लड़की तथा एशियाई कानूनके सम्बन्धमें चीनी शिष्टमण्डलके प्रतिनिधि श्री जेम्स है। चीनी राजदूत अपनी राजकीय पोशाक पहनते है। खुद स्वभावसे मिलनसार, विनोदी और होशियार है। उनकी लड़कीको अंग्रेजी शिक्षा अच्छी मिली है। इसलिए वह हँसी-मजाक करती-कराती है और यात्री उसके साथ खुलकर व्यवहार करते है।

जहाजमें साधारण स्थिति

दूसरे यात्री बड़े आनन्दसे दिन बिताते है। आज एक सप्ताहसे खेल चल रहे है। उनपर इनामोके लिए चन्दा किया गया है। हम दोनोको एक-एक गिन्नीकी चपत लगी है। खेलोंमें छतका क्रिकेट, चकरी फेकना, चम्मचमें अंडा लेकर दौड़ना आदि होते है। ये खेल १२ तारीखको पूरे होंगे, और १४ तारीखको इनाम बँटेगा। रातके समय यात्री नाच करते है। उस समय हमेशा बैंड बजता है। खेलमें रिचर्ड सॉलोमन भी भाग लेते है। हम उसमें भाग नही ले सके। इसका मुख्य कारण है, श्री अलीकी तबीयत और मेरा अध्ययन। रविवारको खेल बन्द रहते है। सलूनमें 'चर्च' लगता है और वहाँ ईसाई-प्रथाके अनुसार खुदाकी इबादत की जाती है।

विचार-तरंग

यह सब देखकर मेरे मनमें हर समय प्रश्न उठता रहता है कि अंग्रेज राज्य क्यों करते हैं। तब कवि नर्मदाशंकरका[1] यह काव्य याद आता है:

> राज करे अंग्रेज देश रहता है दबकर,
> दबे न क्योंकर देश, देहका देखो अन्तर
> वह पँचहत्था ज्वान, पाँच सौको भी पूरे।[2]

आदि। और जैसे-जैसे देखता जाता हूँ, वैसे-वैसे समझमें आता जाता है कि "अंग्रेज पूरे पाँच हाथ लम्बा और पाँच सौके लिए काफी" ही नहीं, वह सब तरहसे पूरा है। वह [साहबी करनेमें भी चमकता है और गरीबीमें भी चमकता है। हुक्म करनेवाला भी वही है और हुक्म माननेवाला भी वही है। वह बड़ेसे-बड़ा और छोटेसे-छोटा बनकर रहता है। पैसा कमाता भी वही है, और उड़ाता भी वही है। मण्डलीमें कैसे रहना, कैसे बोलना चाहिए, यह भी वह जानता है। दूसरोंके सुखपर उसका सुख निर्भर है, यह वह समझ सकता है। जिस मनुष्यको युद्धमें देखा, वह यहाँ अलग ही दिखाई देता है। युद्धमें जो आदमी अपना सब काम अपने हाथसे करता है, लम्बी-लम्बी मंजिलें तय करता है, सूखी रोटी खाकर मुग्न मानता है, वही यहाँ कुछ काम नहीं करता। बटन दबाते ही तुरन्त नौकर उसकी सेवामें हाजिर होता है। उसको खानेके लिए तरह-तरहकी चीजें चाहिए। नित्य नये कपड़े पहनता है। यह सब उसे शोभा देता है। लेकिन इससे वह छक नहीं जाता। वह दरियाकी तरह अपनेमें सब कुछ पचा सकता है। यद्यपि वह धर्मको बहुत-कुछ नहीं समझता फिर भी जब मण्डलीमें बैठता है तब अदबसे काम लेता है, और जैसे भी हो, रविवारका पालन करता है। ऐसी जाति राज्य क्यों न करे?]

यह जहाज एक गांवके समान है। इसमें एक हजार व्यक्ति होंगे। फिर भी न कोई आवाज है, न गड़बड़ी। सब अपना-अपना काम करते रहते हैं। केवल लहरें गाया करती हैं और याद दिलाती हैं कि उनकी गति निरन्तर चलती ही रहती है। विशेष विचार तीसरे भागमें करूँगा।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १७–१०–१९०६

१. देखिए पादटिप्पणी, पृष्ठ ४६९।

२. अंग्रेजो राज करे देशी रहे दबाई
देशी रहे दबाई, जोने बेनां शरीर भाई
पेलो पांच हाथ पूरो, पूरो पांचसेंने।

४८०. नये नगरपालिका-कानूनके सम्बन्धमें दो शब्द

जोहानिसबर्ग नगरपालिकाको कुछ अधिकार देनेवाला कानून हम दूसरी जगह दे रहे हैं। उसके विरुद्ध कहनेको कुछ नही रहता। वह कानून सबपर लागू होता है, और, कहा जा सकता है कि शहरकी स्वास्थ्य-रक्षाके हेतु अथवा ऐसे ही दूसरे कारणोसे आवश्यक है। बहुतेरे कानूनोके सम्बन्धमे तो हमे अपने ही विरुद्ध खड़े होनेकी जरूरत है। [हम अपना आँगन साफ न रखे और उससे हमे दुख उठाना पड़े, तो उसके लिए हम दूसरोको दोष नही दे सकते।] उपर्युक्त कानूनसे यह मालूम होता है कि यदि हम स्वच्छताके नियम भंग करेंगे तो बड़ी कठिनाई होगी। यदि हम पहलेसे नही चेतेंगे तो फिर हमारे ही हाथों हमारा सिर फूटेगा। हमारे परवाने छिन जायेंगे और हम हाथ मलते रह जायेंगे। [जिनके आस-पास दुश्मन रहते हों उन्हे बहुत ही चेतकर रहना पड़ता है।] यहाँकी भाषामे कहे तो ऐसे लोगोको लागर[1] रचकर रहना पड़ता है। हमारी यही हालत है। स्वच्छता आदिके सम्बन्धमे हमे गोरोसे बढ जाना है। यह स्थिति अभी नही आई है। लेकिन [यदि हम नीदसे उठें, आलस्य छोड़ें, लगनशील बनें और थोड़ा-सा लोभ छोड़ें तो हम गन्दगीके पाशसे छूट सकते हैं।] [गन्दगी रूपी नासूर हमे सदा ही पीड़ा देता है, और क्षीण कर डालता है। नासूरको चीरते समय जैसे पहले दर्द होता है और बादमे हम सुखी होते हैं, उसी तरह गन्दगी रूपी नासूरको चीरनेकी आवश्यकता है।] यह काम हमीदिया व हिन्दू आदि सभाओका है, और वह भी सिर्फ ट्रान्सवालमे ही नही, सभी जगह। क्या ये सभाएँ जागेंगी?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३-१०-१९०६

४८१. दावानल

आजकल दक्षिण आफ्रिकाके सार्वजनिक मण्डलोमे एशियाई सवालको लेकर विशेष चर्चा होने लगी है। ऐसी चर्चा मे जहाँ जरा-सा भी मौका हाथ आता है, भारतीयोको तुरन्त आगे रख दिया जाता है। इन निन्दकोमे व्यापार-सघ मुख्य है। डेलागोआ-बेमे व्यापार सघोकी एक सभा हुई थी, जिसके समक्ष भारतीयोको पृथक् बस्तियोमे भेजनेका सुझाव पेश किया गया था। यह हम पहले कह चुके है। अभी[2] मैरित्सबर्गमे व्यापार-संघकी एक बैठक हुई थी। उसमे सघने भारतीय व्यापारियोके सम्बन्धमे अपने कुछ विचार प्रकट किये। अध्यक्षने अपने भाषणमे कहा था कि रगदार व्यापारियोकी संख्या बढी है और गोरोकी संख्या घटी है। अध्यक्ष श्री ग्रिफिनने बोलते समय आँकड़ोका खयाल रखा होगा, सो नही जान पड़ता। भारतीय व्यापारियोकी संख्या इतनी बढी है कि उसे सुनकर चौंक जायेंगे, ऐसा कहनेसे पहले उन्हे साबित करना चाहिए था कि एशियाई व्यापारियोकी सख्या इतनी बढ़ी है। फिर श्री ग्रिफिन यह भी कहते हैं कि गाँवोमे

१. आक्रमणसे रक्षाके लिए बैलगाड़ियोंका घेरा, या अन्य प्रकारकी तात्कालिक किलाबन्दी।

२. २ अक्तूबर १९०६को।

भारतीय इतने जम गये हैं कि वे निकायमें अपने प्रतिनिधि भेज सकते हैं। यह बात भी ऊपरकी बातकी तरह ही बेबुनियाद है। लेकिन मान लें कि सही है, तो उसमें बुरा क्या हुआ? क्या भारतीय देशकी समृद्धिमें वृद्धि नहीं कर रहे हैं? जिस तरह यूरोपीय व्यापारियोंको संरक्षण चाहिए उसी तरह भारतीय व्यापारियोंको भी उसकी उतनी ही आवश्यकता है। भाषणमें श्री ग्रिफिनके मुँहसे यह भी निकला कि दूकान कानून भारतीयोंको मारनेका हथियार बन गया है। दूकान कानून भारतीयोंके लिए बनाया गया है, यह इससे भी स्पष्ट हो जाता है। लेकिन खूबी तो यह है कि भारतीयोंको कुचलनेके लिए कानून बनाया गया, फिर भी भारतीय फूले-फले हैं, यह स्वयं गोरे लोग ही स्वीकार करते हैं। यदि स्थिति यह है तो भारतीयोंमें कुछ-न-कुछ कुशलता होनी ही चाहिए। और यदि वह कुशलता है तो फिर भारतीयोंसे वह गुण सीखनेकी अपेक्षा उन्हें बदनाम करनेमें शक्ति लगानेसे क्या लाभ होगा?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, १३-१०-१९०६

४८२. पत्र : रामदास गांधीको[1]

[आर्मडेल कासिल
अक्तूबर २०, १९०६ के पूर्व]

चि० रामदास,

मुझे अब तुम्हारे पत्र मिलने ही चाहिए।

मोहनदास

रामदास गांधी
'इंडियन ओपिनियन'
फीनिक्स, नेटाल

गांधीजीके स्वाक्षरोंमें मूल गुजरातीसे
सौजन्य : श्रीमती सुशीला बहन गांधी

१. यह पत्र गांधीजीने जिस कार्डपर लिखा है उसकी दूसरी तरफ उनके जहाजका चित्र है।

४८३. शिष्टमण्डलकी यात्रा — ३

[जहाजपर
अक्तूबर २०, १९०६ के पूर्व]

विशेष विचार-तरंग

इस यात्रा-विवरणके सिलसिलेमें अंग्रेजोंकी समृद्धिके कारणोंपर कुछ प्रकाश डाला गया है। मैं जानता हूँ कि जैसे ढालके दो पहलू होते है उसी तरह अंग्रेजोके रहन-सहनके भी दो पहलू है। उलटा पहलू देखना हमारा काम नही। कहावत है कि हंस पानी और दूध अलग करके दूध ही लेता है। उसी प्रकार हमें भी अपने शासकोंके अच्छे गुणोको समझकर उन्हींका अनुकरण करना है। इसलिए हमने जिस तरीकेसे विचार करना शुरू किया है उसीको यदि चालू रखें तो मालूम होगा कि जहाजपर सारे दिन सब लोग आनन्द-विनोद ही नही करते रहते। जिन्हें काम है वे भी, बिना किसी टीमटामके, मानो काम करना भी स्वाभाविक ही है, अपना काम करते रहते हैं। जहाजपर ऐसे यात्री भी है जो पुस्तकें पढ़ा करते हैं। उनकी पढाई विनोदके लिए नही बल्कि इसलिए होती है कि पढ़ना आवश्यक है। लेकिन पढ़ना समाप्त हो जानेके बाद वे भी आनन्द-विनोदमें शामिल हो जाते है। जहाजके कर्मचारी अपना काम नियमित रूपसे करते रहते है, एक मिनटकी भी टालमटूल नही करते। अपने आसपासकी टीमटाम देखकर वे हैसियतको भूल नही जाते। उन्हे ईर्ष्या नही होती। वे अपने काममें मशगूल रहते हैं। ऊपर जो भी लिखा गया है उसमे से बहुत-से काम तो हम करते है, और कुछ बातोमें तो हम अंग्रेजोसे भी बढ़ जाते हैं। लेकिन यदि समग्ररूपसे देखें और सभी बातोकी तुलना करे तो अंग्रेजोकी जमा बाजू हमसे बढ़ जायेगी। जिस जहाजमे हम बैठे है उसको बनानेकी शक्ति हममे नही है। यदि बना लें तो चलाना नही जानते। सार्वजनिक जीवनकी शुद्धतामें हम उनका मुकाबला नही कर सकेंगे। इतने सारे लोग बिना हल्लागुल्ला किये एक साथ काम कर सकते है, यह शक्ति हम शायद ही दिखा सकेंगे। उनके रहन-सहनकी पद्धति ऐसी है कि उससे वे काफी समय बचा सकते हैं, और इस जमानेमें समय बचाना पैसा बचानेके बराबर है। इस जहाजमें छापाखाना है। उसमें उनके कार्यक्रम और भोजन-सूची छपती रहती है। थोड़ा लिखनेके लिए टाइपराइटर रहता है। खाना पकानेका काम ज्यादातर यन्त्रसे होता है। इससे शुद्धि रहती है और समय बचता है। जिस तरहका जीवन वे बिताते हैं — बिताना चाहते है — उसके लिए यह सब आवश्यक है। इससे हमें उनके दोषपर दृष्टि न डालकर, ईर्ष्या न करके, यह समझना चाहिए कि उन्हें जो कुछ भी मिला है वे उसके लायक है, और उनके लिए ज्यादातर वैसा करना आवश्यक है। यह किस तरह किया जाये, इसपर विचार करनेकी यह जगह नही। यात्रा करते-करते जो तरंगे मेरे मनमे उठी है, उन्हे मैंने उसी रूपमे पाठकोंके समक्ष रख दिया है।

जहाजकी गति तथा हवा

इस काफिलेके जहाज सामान्यत: तेजीसे चलनेवाले हैं। हम प्रति दिन अन्दाजन ३७० मील चलते हैं। चार दिन हवा ठंडी रही। लेकिन जैसे-जैसे ऊपर चढ़ रहे है, गर्मी बढती जा रही है। फिलहाल हम भूमध्य रेखाके पास हैं। इससे गर्मी सख्त है, और ऐसी गर्मी इस हिस्सेमें सदा ही रहती है। इस तरहकी गर्मीके पाँच-छ दिन और जायेंगे। जहाज में ठंडक रखनेके इतने साधन है

कि इतनी गर्मी होनेके बावजूद ज्यादा गर्मी नहीं मालूम होती। कोठरियों (कैबिनों) की खिड़कियोंसे हवा आनेकी व्यवस्था रहती है, जिससे उनमें सारी रात ठंडक रहती है। खानेमें भी वे लोग रुचिके अनुसार परिवर्तन करते है और हर यात्रीको पंखा दिया जाता है।

सर रिचर्ड सॉलोमनसे बातचीत

हम मदीरा पहुँचनेकी तैयारीमें थे। उस समय सर रिचर्ड सॉलोमनसे हमारी बातचीत हुई। सारी बातचीतके बीच उन्होंने बतलाया कि किसी समय वे आयोग नियुक्त करनेके बारेमें सोचेंगे। उन्हें यह सूचना मिली है कि भारतीयोंने हर बन्दरगाहपर एजेंट मुकर्रर कर दिये है, जो आनेवाले लोगोंको ट्रान्सवालका भूगोल बतलाकर दाखिल कर देते है; और इस प्रकार बहुतसे लोग दाखिल हुए है। इसका अर्थ यह हुआ कि सारी कौम दगाबाज है और उसकी सजा देनेके लिए ही नया कानून बनाया गया है। दूसरे दिन सर रिचर्डने श्री अलीको नया कानून स्वीकार करनेकी सलाह दी। इससे लगता है कि सर रिचर्डने आयोग नियुक्त करनेका विचार छोड़ दिया है। मेरे खयालसे उसका कारण यह है कि उन्हें उत्तरदायी सरकारका प्रथम गवर्नर बननेका लोभ है। तब यदि आयोग वगैरह नियुक्त करके हमारी दलीलोंको मान लें तो सम्भव है उससे उनका नुकसान हो जायेगा। इसलिए वे हमारे लिए कुछ करना नही चाहते।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २४–११–१९०६

४८४. कुछ प्रश्न

ट्रान्सवालके नये कानूनके सम्बन्धमें बहुतेरे प्रश्न पूछे गये है। उनमें से महत्त्वपूर्ण प्रश्न और उनके उत्तर हम नीचे दे रहे है:

प्रश्न

१. कानूनका विरोध किस तरह किया जाये?
२. उसमें बचाव क्या किया जा सकता है?
३. जमानत देकर छुटना चाहिए या नही?
४. सजा क्या हो सकती है?
५. पहले फेरीवालोंको पकड़ा जायेगा या दूसरोंको?
६. व्यापारियोंका क्या हाल होगा?
७. अगले वर्ष परवानोंका क्या होगा?
८. जेल जानेसे भी फायदा न हो, तो?
९. कोई-कोई लोग नये पंजीयनपत्र ले लें तो?
१०. पंजीयन करानेमें क्या हर्ज है?

उत्तर

१. बहुतेरे भारतीयोंकी राय है कि पहली जनवरी को सभी भारतीयोंको अदालत या जेलके दरवाजेपर उपस्थित होकर कहना चाहिए कि हमें पकड़ो, हम नये पंजीयनपत्र नही लेना चाहते। लड़ाई इस तरहसे नही की जा सकती है। इस तरह सभी लोग हाजिर हो जायेंगे तो उन्हें कोई पकड़नेवाला नहीं होगा। पकडना या न पकड़ना यह सरकारकी मर्जीपर है। उसके नियमके

अनुसार तो जनवरीके पहले बहुतेरोको पंजीयनपत्र ले लेने चाहिए। यदि इस अवधिमे किसी भी भारतीयने पजीयनपत्र न लिया तो सरकारको फिक्र होगी। सम्भव है, वह नेताओं से पूछे। लेकिन सरकार पूछे या न पूछे, सघको तो पत्र लिखना ही होगा कि भारतीयोंमें से कोई भी पजीयनपत्र लेने नही जायेगा। इसपर यदि सरकारको मुकदमा चलाना हो तो, बेहतर होगा कि, वह अगुओपर चलाया जाये। सरकार इस पत्रको माने या न माने, यदि वह पंजीयनपत्र न लेनेकी बिनापर एक या ज्यादा व्यक्तियोको गिरफ्तार करती है, तो श्री गाधीको अपने वचनके अनुसार पैरवी करनेको जाना होगा। वहाँ बचावमे और कुछ कहना नही है। वहाँ वे सिर्फ पिछला इतिहास सुनायेंगे और बतलायेंगे कि पजीयनपत्र न लेनेमें न लेनेवालेका गुनाह नही है, बल्कि उसे श्री गाधीका या संघका गुनाह माना जाना चाहिए; क्योकि उन्हीकी सलाहसे यह हुआ है। इसपर, सम्भव है, लोगोंको उकसानेकी बिनापर श्री गाधीको ही गिरफ्तार किया जाये; या फिर गिरफ्तार किये गये लोगोको थोड़ी सजा ही दी जाये अथवा जुर्माना किया जाये। जुर्माना तो हमें देना नही है, अत जेल जाना ही रहा। इस मामलेके तार सारी दुनियामे जाये और ऐसे जो दूसरे मामले हों, उनके तार भी भेजे जायें।

२. ऊपर जो बताया गया है उसके सिवा बचाव करनेको और कुछ नही रहता। यदि सरकारी वकील कानूनमे गलती करे तो उसका फायदा जरूर उठाया जा सकेगा।

३. जब जेल जानेका प्रस्ताव किया जा चुका है तब जमानत देकर छूटनेकी बात ही नही रहती। इस प्रकार जेल जानेमें बदनामी नही है।

४. सजा हमेशा जुर्मानेकी, और जुर्माना न देनेपर जेलकी, या जुर्माने और जेल दोनोंकी हो सकती है। और, अगर यह जुर्माना न दिया जाये तो और जेलकी। जुर्माना तो हमे देना ही नही है। किसीको हाथ पकड़कर निकाल देनेकी सजा नही दी जा सकती। यदि कोई जेल भोगकर आनेके बाद भी पजीयनपत्र न ले, तो वह गुनहगार ठहरता है। यानी, यदि सरकार चाहे तो सबको हमेशाके लिए जेलमे रख सकती है।

५. पहले किसे पकड़ा जायेगा, यह नहीं कहा जा सकता।

६. व्यापारी वर्गके सभी लोगोको जेल जाना पड़े, यह सम्भव नही। फिर भी, यदि जाना ही पड़े, तो उसमें हर्ज जैसा कुछ नही। ऐसा होनेपर दूकान बन्द ही कर देनी चाहिए; या किसी भरोसेके गोरेको सौंपी जा सकती है। सरकार यहाँतक जाये, सो होगा नही। फिर भी यह माननेकी जरूरत नही कि अमुक बात हो ही नही सकेगी।

७. नये कानूनके अनुसार जिन्होंने नये पंजीयनपत्र न लिये हों उन्हें परवाने पानेका हक नही है। यदि परवाना न दिया जाये तो परवानेका शुल्क भेजकर हमारा जो भी धन्धा हो उसे चालू रखा जाये। यदि बिना परवानेके व्यापार करनेपर मुकदमा चलाया जाये, तो भी जुर्माना न देकर जेलकी सजा ही भोगी जाये।

८ यह सवाल उठता ही नहीं। जेल स्वयं ही फायदा है तो फिर उसमें दूसरा प्रश्न ही क्यों? अँगुलियोंकी छाप देनेसे बढ़कर बेइज्जती और किसमे है? [जिसमें हम बेइज्जती मानते है, वह काम हम करेंगे ही क्यों? दूसरे चोरी करें तो हम थोड़े ही करेंगे।] हैम्डनने[1] जब कर देनेसे इनकार किया तब उसने ऐसा विचार नही किया था।

९. जो नये पजीयनपत्र लेंगे उनकी नाक कटेगी और वे भारतीय समाजके तिरस्कारपात्र बनेंगे।

१. देखिए "टाइलर, हैम्डन और बनियन", पृष्ठ ४८८-९०।

१०. पंजीयनपत्र लेनेमें यह आपत्ति है कि हमारी स्थिति काफिरोंसे भी बदतर हो जायेगी। पंजीयनपत्र लेने या न लेनेसे बिना अनुमतिपत्रवाले लोगोंका फायदा होगा या नुकसान, यह सवाल यहाँ उठता ही नहीं। नये पंजीयनपत्र लेनेमें हमारी ही नाक कटती है। नाक कटानेमें जितनी आपत्ति है उतनी ही आपत्ति पंजीयनपत्र लेनेमें है। जिनसे जेल सहन न की जा सके उनके लिए यही ठीक होगा कि वे ट्रान्सवाल छोड़ दे। देश छोड़नेमें भी नामर्दगी तो है ही, लेकिन पंजीयनपत्र लेनेमें ज्यादा नामर्दगी है।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०–१०–१९०६

४८५. आशाकी किरण

सार्वजनिक सभाके प्रस्ताव कहाँतक फायदेमन्द होंगे, इसके बारेमें शायद ही दो मत हों। उनमें से तीसरे और चौथे प्रस्तावोंके बारेमें जानना है। उनका फल मिलनेकी बात अभी दूर है। वह भारतीय समाजकी दृढ़तापर अवलम्बित है। चौथे प्रस्तावपर दृढ़तापूर्वक डटे रहनेमें लाभ ही होगा। और फिर, कौन कह सकता है कि उसका प्रभाव आजसे ही नहीं होने लगा है? एक दफा शिष्टमण्डल भेजनेसे सम्बद्ध तीसरे प्रस्तावको रद कर देनेका विचार किया गया था। आजकी खबरोंसे मालूम होता है कि शिष्टमण्डल समयसे चला गया; यह बहुत ही अच्छा हुआ है। हमारा जोहानिसबर्ग-संवाददाता कहता है कि उपनिवेश-मंत्रीने लॉर्ड सेल्बोर्नको तार भेजा है कि भारतीय शिष्टमण्डलका निवेदन सुने बिना एशियाई कानूनको मंजूरी नहीं दी जायेगी, यह ब्रिटिश भारतीय संघको सूचित कीजिए। इतनेसे तीसरे प्रस्तावका काम पूरा हो जाता है। उपनिवेश-मन्त्रीने हमारे निवेदनको जो महत्त्व दिया, उसके कारणोंको खोजा जाये तो चौथे प्रस्तावका प्रभाव एक मुख्य कारण माना जायेगा। लॉर्ड एलगिनके तारसे तीसरे प्रस्तावकी उपयोगिता सिद्ध होती है और साथ ही चौथे प्रस्तावका प्रभाव भी दिखाई देता है। शिष्टमण्डलको सफलता मिले या न मिले, यह तो सिद्ध होता ही है कि बड़ी सरकारने ट्रान्सवालके भारतीयोंकी ओर कुछ दृष्टि फेरी है। ऐसे समयमें शिष्टमण्डल दरअसल बहुत काम कर सकेगा। चौथा प्रस्ताव जब इतनेमें ही अपना प्रभाव दिखाने लगा है, तो जब उसपर अमल किया जायेगा, तब क्या उसका विलायत और दूसरे हिस्सोंपर असर हुए बिना रह सकता है?

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०–१०–१९०६

४८६. टाइलर, हैम्डन और बनियन

हम इन तीन व्यक्तियोंका उल्लेख कर चुके है[१]। इन लोगोंने अपने देशके लिए जो कुछ किया है उसका सौवाँ हिस्सा भी हममेंसे कोई व्यक्ति दक्षिण आफ्रिकामें करे तो हमारी बेड़ी टूट सकती है।

वाट टाइलर बारहवीं सदीमें हुआ। एक बार इंग्लैंडके राजाने किसानोंपर भारी कर लगा दिया। वह कर अन्यायपूर्ण था। टाइलरने वह न देनेका निश्चय किया। उसके साथ बहुत-से किसान

१. देखिए "ट्रान्सवालके भारतीयोंका कर्तव्य", पृष्ठ ४७४–५।

हो गये। फौजने टाइलर और उसकी टोलीका सामना किया। टाइलर मारा गया। लेकिन अन्तमें किसानोके सिरसे करका बोझ भी चला गया। इस घटनाके बाद लोगोको अपनी सत्ताका जो भान हुआ उसका ज्यादा परिणाम सत्रहवी सदीमें देखनेको मिला।

उस समय इग्लैडमें चार्ल्स राज्य करता था। उसे विदेशोमे युद्ध करना था। उसका खजाना खाली हो चुका था। इसलिए उसने जहाजी कर (शिपमनी टैक्स) लागू किया। उस समय जॉन हैम्डन नामका एक सम्पन्न और इज्जतदार व्यक्ति था। उसने देखा कि राजाको यदि इस तरह कर दिया जायेगा तो आखिर इस राजाकी माँग और भी बढ़ेगी, और लोग दु खी होंगे। इसलिए उसने कर देनेसे इनकार कर दिया। बहुत-से लोग उसके साथ हो गये। कुछ लोग कर देनेको तैयार भी हो गये। लेकिन हैम्डन अपनी बातपर दृढ़ रहा। उसपर भारी मुकदमा चलाया गया। न्यायाधीशोने उसे सजा देते हुए निर्णय दिया कि हैम्डनने कर नही दिया, यह गलती की। सजा हो जानेपर भी हैम्डनने कर नही दिया। हैम्डन और उसके साथियोंको लोगोंने जेलमें बधाई दी। उसकी तरह और लोग भी दृढनिश्चय रहे। बहुतोने कर नही दिया। बड़ा विद्रोह उठ खड़ा हुआ। बादशाह घबड़ाया। फिर जॉच शुरू हुई। हजारो लोगोको जेलमे नही बन्द किया जा सकता। इसलिए पिछले निर्णयको दूसरे न्यायाधीशोसे रद करवाया। हैम्डन छूटा। उसने स्वतन्त्रताके युद्धका जो बीज बोया था उसका विशाल वृक्ष बन गया। उसीके श्रमके परिणामस्वरूप क्रॉमवेल पैदा हुआ और इग्लैडको सच्ची स्वतन्त्रता मिली तथा लोगोंको राज्यव्यवस्थामें हाथ बँटानेका मौका मिला। हैम्डन देशके लिए लड़ते-लड़ते मरा, फिर भी अमर है।

जॉन बनियन एक साधु पुरुष था। उसे भगवानकी प्रार्थना करनेके सिवा दूसरा कोई व्यसन न था। उसने उस समयके, अर्थात् सत्रहवी सदीके, धर्मका भारी अत्याचार देखा। उसे धर्माध्यक्ष (बिशप) की आज्ञाके अनुसार कार्य करना ठीक नही मालूम हुआ। वह सिर्फ खुदाकी आवाजको ही मानता था। वह अपनी पत्नी और बच्चोंको छोड़कर बेडफोर्डकी जेलमें बारह वर्ष रहा। वहाँ उसने अंग्रेजी भाषाकी एक अच्छीसे-अच्छी पुस्तक[1] लिखी। उस पुस्तकको पढकर लाखों लोग समाधान प्राप्त करते है। वह इतनी सरल भाषामें लिखी गई है कि बच्चे और बड़े सभी उसको आसानीसे पढ सकते है। जहाँ बनियनने जेल भोगी, वह अब अंग्रेजोके लिए तीर्थस्थान बन गया है। बनियनने दु ख भोगा, लेकिन उसने प्रजाको दु खसे छुड़ाया। आज इग्लैडमे लोग धार्मिक स्वतन्त्रता भोग रहे है, सो बनियन-जैसे साधु पुरुषोके प्रतापसे ही।

जिस जातिमें ऐसी त्रिमूर्ति पैदा हो, वह क्यो न राज्य करे? इन महापुरुषोने इतना दु ख उठाया, तब यदि ट्रान्सवालके भारतीयोंको कुछ समय जेल भोगना पड़े, या व्यापारमें नुकसान उठाना पडे तो उसे ज्यादा नही कहा जायेगा। यदि वे इतना न करेंगे, तो उनकी अपकीर्ति होगी; करेंगे तो सहज ही बन्धन छूट जायेंगे।

[गुजरातीसे]

इंडियन ओपिनियन, २०-१०-१९०६

१. 'पिलग्रिम्स प्रोग्रेस'।

सामग्रीके साधन-सूत्र

कलोनियल ऑफिस रेकर्ड्स : उपनिवेश कार्यालय, लन्दनके पुस्तकालयमें सुरक्षित कागजात। देखिए भाग १, पृष्ठ ३५९।

गांधी स्मारक संग्रहालय, नई दिल्ली : गांधी साहित्य और सम्बन्धित कागजातका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय। देखिए भाग १, पृष्ठ ३५९।

'इंडिया' (१८९०–१९२१) : भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी ब्रिटिश समिति, लन्दन द्वारा प्रकाशित। देखिए भाग २, पृष्ठ ४१०।

इंडिया ऑफिस रेकर्ड्स : भूतपूर्व इंडिया ऑफिसके पुस्तकालयमें सुरक्षित भारतीय मामलोंसे सम्बन्धित कागजात और प्रलेख जिनका सम्बन्ध भारत-मन्त्रीसे था।

'इंडियन ओपिनियन' (१९०३–) : एक साप्ताहिक पत्र जिसका प्रकाशन डर्बनमें शुरू किया गया परन्तु जो बादको फीनिक्समें ले जाया गया। यह १९१४ में गांधीजीके दक्षिण आफ्रिकासे रवाना होने तक लगभग उन्हींके सम्पादकत्वमें रहा।

क्रूगर्सडॉर्प नगर परिषद रेकर्ड्स, क्रूगर्सडॉर्प।

पत्र-पुस्तिका (१९०५) : फीनिक्ससे प्राप्त गांधीजीके लगभग एक हजार पत्रोंकी दफ्तरी प्रतियोंका सजिल्द संग्रह। अधिकांश पत्र व्यवसाय-सम्बन्धी हैं और १० मई तथा १९ अगस्तके बीच १९०५ में लिखे गये।

'महात्मा': मोहनदास करमचन्द गांधीका जीवन-चरित : श्री दी० गो० तेंडुलकर; झवेरी और तेंडुलकर, बम्बई १९५१–५४; आठ जिल्दोंमें।

'नेटाल मर्क्युरी' (१८५२–) : डर्बनका एक दैनिक समाचारपत्र।

प्रिटोरिया आर्काइव्ज़ : दक्षिण आफ्रिकी सरकारके प्रिटोरियामें सुरक्षित कागजपत्र।

'रैंड डेली मेल': जोहानिसबर्गका एक अंग्रेजी दैनिक समाचारपत्र।

साबरमती संग्रहालय, अहमदाबाद : पुस्तकालय तथा संग्रहालय जिनमें गांधीजीके दक्षिण आफ्रिकी काल और १९३३ तक के भारतीय कालसे सम्बन्धित कागजात रखे हैं।

'दक्षिण आफ्रिकाना सत्याग्रहनो इतिहास' (गुजराती) : मो० क० गांधी; नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद।

'सिलेक्टेड लेटर्स': मो० क० गांधी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४९।

भारत सेवक समिति, पूना।

'स्टार': जोहानिसबर्गसे प्रकाशित सान्ध्य दैनिक।

'ट्रान्सवाल लीडर': जोहानिसबर्गसे प्रकाशित एक दैनिक।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(१९०५-१९०६)

१९०५

जुलाई १ : परवानों और विशेष वस्तियोसे सम्वन्धित तथा अनविकृत देहाती जमीनों और रिहायगी मकानोपर लगाये गये करके वारेमें नेटालके नये मन्त्रिमण्डलके विधेयकोंकी गाधीजीने आलोचना की।

ब्रिटिश भारतीय सघने उच्चायुक्तसे आवेदन किया कि लेफ्टिनेंट गवर्नर ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें नगरपालिकाके रंगभेद करनेवाले क़ानूनोका निषेध कर दे।

जुलाई ८ : 'इंडियन ओपिनियन' में गाधीजीने माँग की कि भारतमे नमक-कर रद कर दिया जाये।

जुलाई १३ : ब्रिटिश भारतीय संघने अध्यादेशकी तीसरी उपधाराका, जिसके द्वारा एशियाई वाजारोंका नियन्त्रण नगर-परिषदोको दे दिया गया था, विरोध किया।

जुलाई १४ · गांधीजीने जोहानिसबर्गकी नगर-परिषदसे यह आश्वासन माँगा कि भारतीयोको ट्रामगाडियोमे यात्रा करनेकी सुविधाएँ दी जाये।

जुलाई १५ : 'इंडियन ओपिनियन' मे केप प्रवासी-अधिनियमकी आलोचना की।

जुलाई १७ के वाद : 'डेली एक्सप्रेस' को अपना मतभेद प्रकट करते हुए पत्र लिखा कि उसके एक सवाददाताने वोअर युद्धके पूर्व पीटर्सवर्गमे रहनेवाले भारतीय व्यापारियो और फुटकर दूकानदारोकी जो संख्या वताई है, वह गलत है।

जुलाई २० . भारतमें वग-भग घोषित।

जुलाई २२ : गांधीजीने दक्षिण आफ्रिकी राजनीतिज्ञोसे साम्राज्यकी सरक्षामें भारतीयोके योगदानको दृष्टिमे रखते हुए ब्रिटिश भारतीयोके साथ किये जानेवाले व्यवहारपर पुनर्विचार करनेका अनुरोध किया।

अगस्त ५ : एडविन आर्नोल्ड स्मारक कोषमे १० शिलिंग चन्दा दिया।

अगस्त ९ : नेटाल विधान-परिषदने व्यक्ति-कर विधेयक पास किया।

अगस्त १२ : गांधीजीने 'इंडियन ओपिनियन' मे लॉर्ड सेल्बोर्नकी इस घोषणाकी सराहना की कि वतनियोके साथ होनेवाला प्रशासनिक अन्याय एक कलक है।

नेटाल विधानमण्डल द्वारा वस्तियो तथा भूमि-कर सम्बन्धी विधेयकोकी अस्वीकृतिका स्वागत किया और ट्रान्सवालके सर्वोच्च न्यायालयके इस फैसलेपर हर्ष प्रकट किया कि धार्मिक जायदादको वतनियोके नाम चढ़ाया जा सकेगा।

अगस्त १४ . गांधीजीने हाजी हवीवको पत्र लिखकर इस वातसे इनकार किया कि उनके धार्मिक व्याख्यानोमें कटु आलोचना अथवा किसीको दु ख पहुँचानेका कोई इरादा था।

अगस्त १९ · वंग-भंगके सम्मिलित विरोध और ब्रिटिश मालके बहिष्कारका आह्वान किया।

अगस्त २६ . ब्रिटिश विज्ञान-प्रगति सघकी प्रशंसा की और आशा प्रकट की कि सघकी वैठक कभी-न-कभी भारतमे भी होगी। कर्जनकी वाइसरायगिरीके कालपर विचार प्रकट किये।

अगस्त ३० ब्रिटिश भारतीय सघने ऑरेंज रिवर उपनिवेशमे रंगदार व्यक्तियोपर लागू होनेवाले नगरपालिकाके वस्ती-सम्बन्धी कुछ उपनियमोको भारतीयोपर भी लागू करनेपर आपत्ति की।

सितम्बर १: संघने उस नियमपर आपत्ति की जिसके अनुसार भारतीय शरणार्थियोंको अपने जाननेवाले यूरोपीयोंके नाम देने पड़ते थे।

सितम्बर २: गांधीजीने मिकाडोके शिक्षा-सम्बन्धी आदेशों और सैनिकोंके सदाचारको जापानके अभ्युदयका कारण बताया।

सितम्बर ५: नेटालके भारतीयोंने सरकारके इस प्रस्तावका विरोध किया कि भारतीयोंकी पाठशालाको रंगदार बच्चोंकी शिक्षण-संस्थाके रूपमें बदल दिया जाये और शिक्षामें बालकों तथा बालिकाओंके बीच कोई भेद न किया जाये।

पोर्टस्मथमें रूस-जापान सन्धिपत्रपर हस्ताक्षर किये गये।

सितम्बर ९: गांधीजी ने 'इंडियन ओपिनियन' में चीनी खनिकोंके प्रति होनेवाले दुर्व्यवहारकी निन्दा की।

सितम्बर १६: भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके अध्यक्ष-पदके लिए प्रस्तावित नामोंमें गोखलेका नाम सबसे उपयुक्त माना।

सितम्बर ३०: रंगदार लोगोंके अधिकारोंपर अतिक्रमण करनेवाले विवादग्रस्त कानूनोंको अध्यादेश द्वारा लागू करनेपर ट्रान्सवालकी आलोचना की।

अक्तूबर ७: दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंसे अनुरोध किया कि वे शिक्षाके लिए उपयुक्त व्यवस्था करें।

श्री भावनगरीकी मध्यम मार्गीय सम्मतिके प्रति असहिष्णुताकी निन्दा की और यह मत प्रकट किया कि भारतको पूर्ण न्यायकी प्राप्ति केवल शान्तियुक्त तर्कसे ही हो सकेगी।

व्यापारिक परवानेके लिए की गई दादा उस्मानकी अपील डर्बनके परवाना निकाय द्वारा खारिज।

अक्तूबर ९: पाँचेफस्ट्रूम भारतीय संघने लॉर्ड सेल्बोर्नकी सेवामें मानपत्र तथा वक्तव्य प्रस्तुत किये।

अक्तूबर १४: गांधीजीने पाँचेफस्ट्रूममें लॉर्ड सेल्बोर्नसे मिलनेवाले शिष्टमण्डलका नेतृत्व किया।

दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंको प्लेगके प्रकोपके विषयमें चेतावनी दी।

भारतमें नमक-कर रद कर देनेके तथाकथित प्रस्तावका स्वागत किया।

प्रोफेसर परमानन्दका स्वागत और आतिथ्य किया।

अक्तूबर २८: जोहानिसबर्गके स्वागत-समारोहमें श्रोताओंसे प्रोफेसर परमानन्दका परिचय कराया और अध्यक्षके भाषणका अनुवाद सुनाया।

प्रस्ताव किया कि नेटाल कांग्रेस भारतीय व्यापारियोंके मामलोंकी जाँचके लिए एक परवाना समिति नियुक्त करे।

बंगालमें स्वदेशी आन्दोलनकी प्रगतिपर हर्ष प्रकट किया।

आस्ट्रेलियामें जापानी यात्रियोंको आनेकी अनुमति दी जानेपर हर्ष प्रकट किया।

नवम्बर १: बंगभंगके विरुद्ध आन्दोलनको शक्तिशाली बनानेके लिए बंगालमें साम्प्रदायिक एकताकी पुकार की।

नवम्बर ११: भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसकी ओरसे इंग्लैंड जानेवाले गोखले-लाजपत शिष्टमण्डलके बारेमें लिखा और उपनिवेशके राजनीतिज्ञोंसे अपील की कि चूँकि भारत साम्राज्यका एक अभिन्न अंग है, इसलिए उसके सम्बन्धमें हर प्रकारके लिहाजसे काम लिया जाये।

जहाज द्वारा दक्षिण आफ्रिका जानेवाले भारतीय यात्रियोंकी कठिनाइयोंकी ओर ध्यान दिलाया।

नवम्बर १३: एशियाई राष्ट्रीय सम्मेलनके शिष्टमण्डलने ट्रान्सवालके लेफ्टिनेंट गवर्नरसे भेंट करके यह माँग की कि उपनिवेशमें प्रवेशके लिए दिये गये प्रार्थनापत्रोंपर नियन्त्रण-निकाय विचार करे।

नवम्बर १८ : गांधीजीने ब्रिटिश उपनिवेशोंमें जापानके विरुद्ध किये जानेवाले भेदभावकी ओर ध्यान आकृष्ट किया।

केप उपनिवेशकी ब्रिटिश भारतीय समितिसे प्रवासी अधिनियमका विरोध करनेको कहा।

नवम्बर २५ : व्यक्ति-कर सम्बन्धी नियमोंके संशोधन और गरीब भारतीयोंके प्रति उनके विवेक-पूर्ण प्रयोग की माँग की।

नवम्बर २९ : ब्रिटिश भारतीय शिष्टमण्डलका नेतृत्व किया और लॉर्ड सेल्बोर्नके सामने वक्तव्य प्रस्तुत किया।

दिसम्बर २ : स्टैंजरमें जेलकी हालतोंकी आलोचना की।

"वन्दे मातरम्" को भारतके राष्ट्रीय गानके रूपमें अपना लेनेकी सिफारिश की।

दिसम्बर ४ : मद्रासके मनोनीत गवर्नर सर आर्थर लालीको इंग्लैंड होकर भारत जानेके अवसरपर ब्रिटिश भारतीय संघके मन्त्रीकी हैसियतसे विदाई दी।

दिसम्बर ६ . केप उपनिवेशके सर्वोच्च न्यायालयने फैसला दिया कि नेटालके भारतीयोंको, परिवार साथ न हों तो भी, केप उपनिवेशमें अधिवासका अधिकार है, बशर्ते कि वे लम्बे अरसेसे वहाँ रह रहे हों।

दिसम्बर २२ : ऑरेंज रिवर उपनिवेशके अध्यादेशोंके मसविदोंमें ब्रिटिश भारतीयोंको रंगदार लोगोंके दर्जेमें रखे जानेपर ब्रिटिश भारतीय संघने उच्चायुक्तके समक्ष विरोध प्रकट किया।

दिसम्बर २२ के बाद . उच्चायुक्तने भारतीयोंकी इस प्रार्थनाको अस्वीकृत कर दिया कि 'रंगदार लोगों' की परिभाषाको संशोधित किया जाये।

दिसम्बर २३ : गांधीजीने गोखलेकी सलाहका हवाला देते हुए भारतीय नवयुवकोंसे शिक्षाके काममें योग देनेकी सिफारिश की और भारतमें साम्प्रदायिक झगड़ोंके निपटानेमें किसी अन्य दलके हस्तक्षेपकी निन्दा की।

दिसम्बर ३० : १९०५ के कामका सिंहावलोकन किया और भारतीयोंसे अनुरोध किया कि वे संघर्षको "औचित्यके साथ, धैर्यके साथ और फिर भी दृढ़ताके साथ" जारी रखें।

हीडेलबर्गके भारतीय समुदायमें आपसी दंगोंकी निन्दा की।

श्री पोलक और कुमारी डूंसके विवाहके अवसरपर वर-सखा बने।

१९०६

जनवरी १ : १८ वर्ष या उससे अधिक आयुवाले भारतीयोंपर एक पौंडी कर लागू किया गया।

शीघ्र दूकानबन्दी अधिनियम लागू हुआ।

जनवरी २ : सानफ्रान्सिस्कोमें भूकम्पसे संहार।

जनवरी २० : 'इंडियन ओपिनियन' के एक समयके सम्पादक मनसुखलाल हीरालाल नाजरकी मृत्यु।

फरवरी ३ : 'इंडियन ओपिनियन' के हिन्दी और तमिल स्तम्भ बन्द कर दिये गये।

फरवरी ९ : ब्रिटिश भारतीय संघने अनुमतिपत्र सम्बन्धी विनियमोंमें परिवर्तनका विरोध करते हुए उपनिवेश सचिवको पत्र लिखा।

फरवरी १० : संघने जोहानिसबर्ग नगर-परिषद द्वारा भारतीयोंपर ट्रामगाड़ियोंके उपयोगके सम्बन्धमें लगाये गये प्रतिबन्धोंका विरोध किया।

फरवरी १४ · प्रिटोरिया और जोहानिसबर्गके बीच चलनेवाली विशेष रेलगाड़ियोंपर भारतीयोंकी यात्रा निषिद्ध करार दी जानेपर संघने आपत्ति की।

फरवरी १६ : भारतीयों द्वारा जोहानिसबर्गकी ट्रामगाड़ियोंके उपयोगके प्रश्नपर संघ 'ट्रान्सवाल लीडर' के साथ वाद-विवादमे शामिल हुआ।

फरवरी २२ : दादाभाई नौरोजीको भेजे वक्तव्यमें गांधीजीने ट्रान्सवाल तथा ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें उत्तरदायी सरकारके अधीन भारतीय हितोंकी रक्षाकी आवश्यकतापर जोर दिया।

फरवरी २६ : दादाभाई नौरोजीको सुझाया कि दक्षिण आफ्रिकाके भारतीयोंकी ओरसे एक शिष्टमण्डल ब्रिटिश मन्त्रियोसे मिले।

फरवरी २८ : नेटाल भारतीय कांग्रेसकी ओरसे निवर्तमान अध्यक्ष अब्दुल कादिरको मानपत्र दिये जानेके अवसरपर भाषण दिया।

इस महीनेमें जूलू विद्रोह भड़क उठा।

मार्च ७ : जोहानिसबर्गमे ट्रामके परीक्षणात्मक मुकदमेकी वकालत की।

मार्च १० के पूर्व : नेटाल भारतीय कांग्रेसने उपनिवेश-सचिवको प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमके अन्तर्गत पासों और प्रमाणपत्रोंपर प्रतिषेधात्मक शुल्क लगानेके विरोधमें पत्र लिखा।

मार्च १० : गांधीजीने "एशियाइयोंकी निरन्तर बाढ़" पर दक्षिण आफ्रिकाकी सहयोगी-व्यापारसंघ कांग्रेसके प्रस्तावकी आलोचना की।

ट्रान्सवालकी अनुमतिपत्र सम्बन्धी शिकायतोंके सम्बन्धमें शिष्टमण्डलके साथ सहायक उपनिवेश-सचिवसे भेंट की।

मार्च ११ : प्रिटोरियाकी सभामें भाषण दिया।

मार्च १२ : ट्रामके परीक्षात्मक मुकदमेमें वकालत की और जीते।

मार्च १६ : १९०२ के केप प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियमके संशोधनार्थ सरकारी "गज़ट" में विधेयक प्रकाशित।

मार्च १७ : गांधीजीने जूलू-विद्रोहके अवसरपर भारतीयोसे अनुरोध किया कि वे सरकारको अपनी सेवाएँ अर्पित करें।

मार्च १९ : एक पत्रमें ट्रांसवालके शान्ति-रक्षा अध्यादेश तथा १८८५ के कानून ३ के अन्तर्गत होनेवाली कठिनाइयों की ओर दादाभाई नौरोजीका ध्यान आकर्षित किया।

मार्च २१ : जोहानिसबर्गमें रंगदार लोगोंकी सभामे भाषण दिया।

मार्च २४ : साम्राज्यीय सरकारको रंगदार लोगों द्वारा मताधिकार तथा अन्य अधिकारोंके निमित्त भेजे गये प्रार्थनापत्रका अनुमोदन किया।

मार्च ३० : केपके रंगदार लोगोकी कठिनाइयोंके सम्बन्धमें डॉ० अब्दुर्रहमानने लॉर्ड सेल्बोर्नसे मुलाकात की।

दादा उस्मानने अपने व्यापारिक परवानेकी अस्वीकृतिके विरुद्ध उपनिवेश-मन्त्रीसे अपील की।

मार्च ३१ से पूर्व : साम्राज्यीय सरकार द्वारा ट्रान्सवाल-संविधानके सम्बन्धमें आयोगकी नियुक्ति।

मार्च ३१ : गांधीजीने ट्रान्सवालकी खानोंमें काम करनेके लिए भारतीय मजदूरोंके आयातकी निन्दा की।

अप्रैल ७ के पूर्व : ब्रिटिश भारतीय शिष्टमण्डलने भारतीयोंकी शिकायतोंके सम्बन्धमें जोहानिसबर्गके रेलवे अधिकारियोसे भेंट की।

ट्रान्सवालमे भारतीयोंके प्रवेशपर लगे प्रतिबन्धोंसे उत्पन्न कठिनाइयोंके विषयमें गांधीजीने 'लीडर' को पत्र लिखा।

अप्रैल १२ : ट्रान्सवालसे भारतीयोंकी गिरती हुई दशाके विषयमें विलियम वेडरबर्नको पत्र भेजा।

अप्रैल १४ के पूर्व · डर्बन नगर परिषदने प्रस्ताव पास किया कि परवाना-अधिकारी फेरीवालोंको नये परवाने न दे।

नेटाल भारतीय कांग्रेसने गांधीजीके नेतृत्वमें एक शिष्टमण्डल इंग्लैंड भेजनेका निश्चय किया।

हाजी वजीर अलीने स्थानापन्न लेफ्टिनेंट गवर्नर सर रिचर्ड सॉलोमनसे मलायी बस्तीके सम्बन्धमें भेंट की।

अप्रैल २३ : गांधीजीने डर्बनकी एक सभामें, जो 'इंडियन ओपिनियन' के भविष्यपर विचार करनेके लिए हुई थी, उसके उद्देश्योको फिरसे समझाया और भारतीय समाजसे अनुरोध किया कि वह उसे अपनाये।

अप्रैल २४ : गांधीजीने शिक्षाकी उन्नतिके लिए मुस्लिम युवक संघकी स्थापनाका स्वागत किया। उन्हे संघके विधानका मसविदा बनानेका काम सौंपा गया।

नेटाल भारतीय कांग्रेसकी बैठकमे व्याख्यान दिया। उसमें आहत-सहायक दल बनानेका प्रस्ताव किया गया।

अप्रैल २६ के पूर्व : साम्राज्य सरकारकी सेवामें प्रस्तावित शिष्टमण्डलके विषयमें 'नेटाल मर्क्युरी' के प्रतिनिधि द्वारा भेंट।

अप्रैल २८ : दूकान कानूनपर नेटाल दूकान-कर्मचारी संघके गैरजिम्मेदाराना वक्तव्यकी आलोचना की।

हिन्दू धर्मपर दिये गये अपने व्याख्यानों और 'इंडियन ओपिनियन' की नीतिपर मुस्लिम युवक संघकी सभाओंमे की गई आलोचनाके उत्तरमे वक्तव्य प्रकाशित किया।

मई ५ के पूर्व . जोहानिसबर्ग और प्रिटोरियाके बीच चलनेवाली कतिपय रेलगाड़ियोंमें भारतीयोंके लिए यात्रा सम्बन्धी निषेधाज्ञाके विषयमें नेटाल सरकार रेल-प्रणालीके महाप्रबन्धकसे मुलाकात की।

मई ५ : भारतीय व्यापारी संघकी स्थापनाके विचारका अनुमोदन किया।

मई १२ के पूर्व : ब्रिटिश भारतीय संघने अनुमतिपत्रों और अभ्यागत पासोंके विषयमें लॉर्ड सेल्बोर्नको पत्र लिखा।

मई १२ : गांधीजीने समर्थन किया कि "न्यायके और मानवताके कल्याणके लिए" भारतको स्वराज्य दिया जाये।

मई १४ के पूर्व : जोहानिसबर्गमें संविधान आयोगकी तीन बैठकें हुई।

मई १८ के पूर्व : लॉर्ड सेल्बोर्नने अनुमतिपत्रोके सम्बन्धमें ब्रिटिश भारतीय संघका आवेदन अस्वीकार कर दिया।

मई १८ : भारतीयों द्वारा ट्राम-गाड़ियोंका उपयोग करनेके पक्षमे कुवाडियाके परीक्षात्मक मुकदमेका निर्णय।

मई १९ : जोहानिसबर्ग नगर-परिषदने ट्राम विनियमोंको रद करने और भारतीयों द्वारा ट्रामोंका उपयोग करनेपर प्रतिबन्ध लगानेके उद्देश्यसे चेचक सम्बन्धी नियमोंको पुनः लागू करनेकी सूचना दी।

मई २१ · गांधीजीने 'ट्रान्सवाल लीडर' में जोहानिसबर्ग नगर-परिषदकी कार्यवाहीके औचित्यपर शंका प्रकट की।

मई २२ : संविधान-समितिसे मिलनेवाले प्रातिनिधिक शिष्टमण्डलका नेतृत्व किया और उसके सामने भारतीय दृष्टिकोण रखा।

मई २५ के पूर्व : लॉर्ड सेल्बोर्नने अनुमतिपत्रोंके विषयमें भारतीयोंके रुखपर पुनर्विचार करनेसे इनकार करया।

मई २५ : जिस नाबालिग लड़केपर १८८५ के कानून ३ के उल्लंघनका आरोप था, उसको गांधीजीने रिहा करवाया।

मई २६ : महारानी विक्टोरियाके जन्म-दिवस समारोहके सिलसिलेमें दक्षिण आफ्रिकाके जन-नायकोंसे आग्रह किया कि वे जातीय विद्वेष और रंगभेदकी नीति त्याग दें।

मई २७ : अपने बड़े भाई श्री लक्ष्मीदासको एक पत्र लिखा कि उन्हें अब सांसारिक सम्पत्तिके प्रति कोई आसक्ति नहीं है।

मई २९ : संविधान-समितिके समक्ष वक्तव्य प्रस्तुत किया।

मई ३० : ब्रिटिश भारतीय संघने निश्चय किया कि हाजी हबीब और अलीको भी विलायत जानेवाले शिष्टमण्डलमें शामिल किया जाये।

नेटाल सरकारने कांग्रेस आहत-सहायक दल-सम्बन्धी दित्साको मंजूर किया।

जून २ : गांधीजीने जहाजोंमें डेकके यात्रियोंको और अच्छी सुविधाएँ देनेकी हिमायत की डर्बनमें आहत-सहायक दलके लिए कोष एकत्र करनेके हेतु की गई भारतीयोंकी एक सभामें भाषण दिया।

जून ६ के पूर्व : लन्दन की ब्रिटिश भारतीय समितिने सुझाव दिया कि भारतीय मामलेको पेश करनेके लिए केवल गांधीजी ही लन्दन आयें।

जोहानिसबर्गमें ब्रिटिश भारतीय संघके अध्यक्ष और पोलकको ट्रामगाड़ीमें बैठने नहीं दिया गया।

ब्रिटिश भारतीय संघने निश्चय किया कि यदि सरकार अनुमतिपत्रोंके सम्बन्धमें भारतीयोंकी शिकायतें दूर नहीं करेगी तो वह परीक्षात्मक मुकदमे चलायेगा।

जून ८ : दादाभाई नौरोजीको सूचित किया कि मोर्चेपर आहत-सेवा कार्यके कारण शिष्टमण्डलका इंग्लैंड जाना स्थगित कर दिया गया है।

जून ९ : भारतीयोंसे अपील की कि वे सैनिक कोषके लिए चन्दा दें।

जून १३ के पूर्व : भारतीयोंकी कठिनाइयोंके सम्बन्धमें 'नेटाल मर्क्युरी' को एक वक्तव्य दिया।

जून १६ : भारतीय डोलीवाहक दलकी वफादारीका प्रतिज्ञापत्र 'इंडियन ओपिनियन' में प्रकाशित हुआ।

गांधीजी डाक्टरी परीक्षाके बाद स्वस्थ करार दिये गये।

जून २१ : आहत-सहायक दलको कूचका आदेश मिला।

जून २२ : सरकार द्वारा गांधीजीको सार्जेन्ट-मेजरका पद दिया गया। आहत-सहायक दलके साथ रेलसे रवाना हुए।

दलके सम्बन्धमें गोखलेको पत्र लिखा। उन्हें स्वदेश लौटते समय दक्षिण आफ्रिका आनेका निमन्त्रण दिया।

जून २३ से पूर्व : न्यायालयने इस बातकी पुष्टि की कि भायातको शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत अनुमतिपत्र पानेका अधिकार है।

जून २३—जुलाई १८ : आहत-सेवाकार्यके लिए मोर्चेपर नियुक्ति।

जुलाई १९ : डोलीवाहक दल विघटित कर दिया गया।

जुलाई २० : स्टैंजरमें दलके सदस्योंका सत्कार किया गया।

गांधीजीने डर्बनमें कांग्रेस द्वारा आयोजित स्वागत-समारोहमें भाषण दिया और आशा व्यक्त की कि दलको स्थायीरूप दिया जाये।

गांधीजीने सुझाव दिया कि भारतीयोंको स्थायी आहत-सहायक दलमें भरती होनेकी अनुमति दी जाये।

जुलाई २३ : कांग्रेसने दलके सदस्योंको पदक देनेका निश्चय किया।

गांधीजीने हीरक जयन्ती पुस्तकालयकी सभामें भाषण दिया।

जुलाई ३० : गांधीजीने शिष्टमण्डलकी उपयोगितापर वेडरबर्नकी सम्मति ली।

अगस्त ४ : ट्रान्सवाल वापस लौटनेके इच्छुक भारतीय शरणार्थियोंकी कठिनाइयाँ बताईं।

लिटिलटन और एलगिनके संविधानोंका फर्क बताते हुए लेख लिखा।

उपनिवेश सचिवने विधान-परिषदको सूचित किया कि सरकारका इरादा है कि ट्रान्सवालमें एशियाइयोंके पुनः पंजीयनके लिए विधेयक पेश किया जाये। ब्रिटिश भारतीय संघने इसपर तत्काल कार्रवाई करनेका प्रस्ताव किया।

अगस्त ६ : गांधीजीने प्रस्तावित पुनःपंजीयनसे ट्रान्सवालके भारतीयोंको होनेवाली कठिनाइयोंके विषयमें दादाभाई नौरोजीको लिखा और सुझाया कि वे उपनिवेश-मन्त्री व भारत-मन्त्रीसे भेंट करें।

अगस्त ७ : नेटालके गवर्नर सर हेनरी मैककैलमने डोलीवाहक दलकी सेवाओंके लिए गांधीजीको धन्यवाद दिया।

अगस्त ९ के पूर्व : गांधीजीने 'रैंड डेली मेल' के नाम एक पत्रमें भारतीयोंके लिए पूर्ण नागरिक स्वतंत्रताकी माँग की।

अगस्त ११ : 'इंडियन ओपिनियन' में पुनःपंजीयन अध्यादेशके सम्बन्धमें उपनिवेश-सचिवके वक्तव्यका विश्लेषण किया।

अगस्त १२ : हमीदिया इस्लामिया अंजुमनमें राजनीतिक स्थितिपर व्याख्यान देते हुए भारतीयोंको प्रेरित किया कि वे अध्यादेशके सम्बन्धमें उपनिवेश मन्त्रीके वक्तव्यका विरोध करनेके लिए संगठित हो जायें।

अगस्त १३ : दादाभाई नौरोजीको पत्र लिखा, जिसमें साम्राज्यीय सरकार द्वारा ट्रान्सवालके लिए न्यायभावनापर आधारित कानून बनानेकी आवश्यकता बताई।

नेटाल भारतीय कांग्रेसने लॉर्ड एलगिनको नगर निगम संघटन विधेयकके सम्बन्धमें प्रार्थनापत्र भेजा।

अगस्त १८ : गांधीजीने इस पक्षमें विचार व्यक्त किये कि एक राष्ट्रके निर्माणके लिए भारतमें हिन्दुस्तानीको राष्ट्रभाषा स्वीकार किया जाये।

सूचित किया कि मलायी बस्ती समितिने नगर-परिषद द्वारा अपनी अर्जीकी अस्वीकृतिके खिलाफ अपील करनेका निर्णय किया है।

अगस्त २१ : केप परवाना कानून 'गजट' में प्रकाशित कर दिया गया।

अगस्त २२ : एशियाई कानून संशोधन अध्यादेशका मसविदा ट्रान्सवाल सरकारके 'गजट' में प्रकाशित हुआ।

अगस्त २५ : आइन्दा ब्रिटिश भारतीयोंको रंगदार लोगोंकी श्रेणीमें न रखनेकी माँग की।

ब्रिटिश भारतीय संघने उपनिवेश-सचिवको एक पत्र लिखकर अध्यादेशके प्रति अपना विरोध प्रकट किया।

अगस्त २८: अध्यादेशके अन्तर्गत पुनः पंजीयनके सम्बन्धमें 'इंडिया' को तार भेजा; जाँच-आयोगकी नियुक्तिका सुझाव दिया।

सितम्बर १: उपनिवेश-सचिवसे मिलने प्रिटोरिया जानेवाले शिष्टमण्डलका नेतृत्व किया।

सितम्बर ४: ट्रान्सवाल विधान-सभा में अध्यादेश पेश किया गया।

सितम्बर ८: गांधीजीने एशियाई अध्यादेशके मसविदेको पास करानेके सरकारी आग्रहको मानव जातिके प्रति अपराध बताया।

ब्रिटिश भारतीय संघने भारत-मन्त्री, उपनिवेश-मन्त्री तथा भारतके वाइसरायको प्रस्तावित अध्यादेशके विरोधमें तार भेजे।

सितम्बर ९ के पूर्व: एक सभामें गांधीजीने "खूनी कानून" को भारतीयोंको उपनिवेशसे खदेड़नेका पहला कदम बतलाया और भारतीयोंसे उसका विरोध करनेके लिए कहा।

सितम्बर ९: हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी सभामें गांधीजीने ट्रान्सवालकी राजनीतिक स्थितिपर व्याख्यान दिया और इंग्लैंडको शिष्टमण्डल भेजनेकी आवश्यकतापर जोर दिया; लोगोंको परामर्श दिया कि वे पंजीयन न करायें और सबसे पहले स्वयं जेल जानेका इरादा प्रकट किया।

सितम्बर ११: जोहानिसबर्गमें आयोजित ब्रिटिश भारतीयोंकी सार्वजनिक सभामें अध्यादेशको वापिस लेनेकी माँग की और चेतावनी दी कि यदि यह अध्यादेश कानून बना दिया गया तो भारतीय उसका विरोध करेंगे।

सितम्बर १२: ब्रिटिश भारतीय संघने ट्रान्सवालके लेफ्टिनेंट गवर्नरको सार्वजनिक सभामें पास किये गये प्रस्ताव भेजे।

गांधीजीने अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करते हुए 'रैंड डेली मेल' को लिखा।

सितम्बर १४ के पूर्व: ब्रिटिश भारतीय संघने 'स्टार' को लिखा कि भारतीय असहनीय परिस्थितियोंके सामने न झुकनेको कृतसंकल्प है।

सितम्बर १४: भारतीय स्त्री पूनियाको रेलगाड़ीसे यात्रा करते समय पृथक् अनुमतिपत्र न रखनेके अपराधमे फोक्सरस्टमें गिरफ्तार करके रोक लिया गया।

सितम्बर १५: पूनियापर मुकदमा चलाया गया और उसे उपनिवेश छोड़नेकी आज्ञा दी गई। वह जर्मिस्टनमें उस आज्ञाकी अवहेलनाके अपराधमें पुनः गिरफ्तार कर ली गई।

सितम्बर १८: उच्चायुक्तने ब्रिटिश भारतीय संघको सूचित किया कि अध्यादेशको अभीतक औपचारिक स्वीकृति नहीं मिली है।

सितम्बर १९: अखबारोंको पूनियाके मुक़दमेके बारेमें पत्र लिखा जिसमें भारतीय स्त्रियों और बच्चोंके प्रति आतंकका राज्य कायम करनेके लिए ट्रान्सवाल सरकारकी आलोचना की।

सितम्बर २०: ट्रान्सवालमें भारतीयोंकी अवैध बाढ़की जाँचके लिए अदालती जाँच समिति बैठानेकी बात को तुरन्त मान लेनेकी अपनी रजामंदी घोषित की।

सितम्बर २१: गांधीजीने 'लीडर' के इस वक्तव्यको कि भारतीय दुश्चरित्र स्त्रियोंको अपनी पत्नियाँ कहकर उपनिवेशमें ला रहे है चुनौती देते हुए पत्र लिखा।

'नेटाल मर्क्युरी' ने पूनियाके मामलेका सरकारी स्पष्टीकरण प्रकाशित किया।

भारतीयोंकी एक सभामें अन्ततः यह निश्चय किया गया कि गांधीजी तथा अलीको शिष्ट मण्डलके रूपमें इंग्लैंड भेजा जाये।

लॉर्ड सेल्बोर्नने ब्रिटिश भारतीय संघको सूचित किया कि शिष्टमण्डलके इंग्लैंड पहुँचने तक अध्यादेशको स्वीकृति नहीं दी जायेगी।

सितम्बर २४: लॉर्ड सेल्बोर्नने ब्रिटिश भारतीय सघको सूचित किया कि लॉर्ड एलगिनकी सम्मतिमे शिष्टमण्डल उपयोगी सिद्ध नही होगा।

सितम्बर २६ · सघने ट्रान्सवालके गवर्नरसे पूछा कि अध्यादेशको सम्राट्की स्वीकृति मिल चुकी है या नही।

सितम्बर २९ के पूर्व : लॉर्ड सेल्बोर्नने ब्रिटिश भारतीय सघको लिखा कि वे अध्यादेशके सम्बन्धमें उसके दृष्टिकोणको नही मानते।

सितम्बर ३०: सघने ट्रान्सवालके गवर्नरको तार भेजा जिसमे साम्राज्यीय सरकारसे प्रार्थना की गई थी कि वह एशियाई अध्यादेशको तबतक अपनी स्वीकृति न दे जबतक शिष्टमण्डल भारतीय दृष्टिकोण उसके समक्ष प्रस्तुत न कर दे।

शिष्टमण्डलको इग्लैंड जानेके अवसरपर विदाई दी गई।

अक्तूबर १. गाधीजी और अली-केप टाउन होते हुए इग्लैंड जानेके लिए जोहानिसबर्गमें गाड़ीपर सवार हुए।

अक्तूबर ३: शिष्टमण्डल केप टाउन पहुँचा और प्रमुख भारतीयों द्वारा स्वागतके बाद 'आर्मडेल कासिल' नामक जहाजसे रवाना हो गया।

अक्तूबर ८ ब्रिटिश भारतीय संघने ट्रान्सवालके गवर्नरको उपनिवेश-मंत्रीके नाम दिये गये उस तारका पूरा मजमून भेजा जिसमे फ्रीडडॉर्प बाड़ा अध्यादेशको तबतक रोक रखनेकी प्रार्थना की गई थी जबतक शिष्टमण्डल अपनी बात न कह ले।

सघने लॉर्ड एलगिनको फ्रीडडॉर्प बाड़ा अध्यादेशके सम्बन्धमे प्रार्थनापत्र भेजा।

अक्तूबर ९. 'ट्रान्सवाल लीडर' ने भारतीय स्त्रियोपर लांछन लगानेवाले अपने डर्बन सवाददाता द्वारा दिये गये वक्तव्यको वापस ले लिया।

अक्तूबर १०-११: गांधीजीने 'इडियन ओपिनियन' के लिए सवादपत्र लिखे। वे तमिल भाषा सीख रहे थे।

अक्तूबर २०. एशियाई अध्यादेश तथा सत्याग्रहकी विधियोंके सम्बन्धमे किये गये प्रश्नोंके गांधीजी द्वारा दिये गये उत्तर 'इडियन ओपिनियन' मे प्रकाशित हुए।

शिष्टमण्डल साउथैम्पटन पहुँचा।

सांकेतिका

अ

अंग्रेज, –और हैदरअली, १२४; –के गुण, ४८२; अंग्रेजों, –की समृद्धिके कारण, ४८५; –के घुसनेसे डेला-गोआ-बे के भारतीयोंकी मुसीबतें, ४६६

अंग्रेज सरकार, –और बोअर सरकार, ४५३; –और महाराजा रणजीतसिंहके बीच समझौता, १२९

अंग्रेजी व्यापार संघ, –का प्रभाव, ३१४

अकाबा, ३१२

अजोध्यासिंह, ३६६, ३७८

'अधिवास', –का प्रश्न मन्त्रीके हाथमें, २६४

अधिवासी प्रमाणपत्र, –के शुल्कमे अभिवृद्धि, ३६५

'अधिवासी' शब्द, –की व्याख्या, १७७

अध्यादेश, –और प्रशासन विभाग, ४२२; –का मसविदा, ४२९; –का मसविदा और ब्रिटिश एशियाई, ४४३; –का मसविदा नगरपालिका परिषदों द्वारा एशियाई बाजारोंपर नियन्त्रण लगानेके लिए, २७; –का मसविदा प्रिटोरियामें नगरपालिकाकी विधि-संहितामें संशोधनके लिए, १२; –का मसविदा विधानसभामें, ४४२; –का विरोध करनेकी शपथ, ४३१; –की भारतीय-विरोधी धाराएँ, ४७७; –के मसविदेपर सम्राट्की मंजूरी स्थगित करनेकी प्रार्थना, ४३४; –के मसविदेमें आपत्तिजनक बातें, ४११–१२; –को जारी करनेका एकमात्र कारण, ४२३; अध्यादेशों, –की सूची ट्रान्सवालके *गवर्नमेंट गज़ट*में, ८४; –के मसविदे रंगदार लोगोंकी भरती या नियुक्तिका नियमन और नियंत्रण करनेके लिए, १७१

अनधिकृत देहाती जमीनों, –पर कर (नेटाल), १

अनिवार्य पंजीयन, –के नियम, वतनी नौकरोंके लिए, ५६

अनुमतिपत्र, –और ट्रान्सवाल, ३३; –और ट्रान्सवालके भारतीय, ३१, २०१; –और दो यूरोपीय गवाह, ८०; –और पंजीयन, जॉन सौकल्का, ४६; –न होनेपर स्त्री गिरफ्तार, ४४६; –प्राप्त करनेमें भारतीयोंकी कठिनाइयाँ, २१०; –भारतीयोंको देनेके सम्बन्धमें बड़ा फेरफार, १६९; –लेनेकी शर्तें भारतीयोंके लिए, ३२०; –सम्बन्धी दिक्कतें, २४८; –सम्बन्धी नियम, ४२२; –सम्बन्धी नियमोंका औचित्य, ३२३; –सम्बन्धी नियमोंके बार-बार बदलनेसे असुविधाएँ, २०१; –सम्बन्धी राहत, ३७३; –का काठ २१३–२३१; –का मुकदमा, २४२, ३४३, ३७०–७१; –का मुकदमा और फोक्सरस्टका प्रधान मजिस्ट्रेट, ३७०; –की अर्जी और गोरे गवाह, १४२; –की कठिनाइयाँ, २७९; –की दिक्कत, ३६१; –के बारेमें भारतीयोंके विरुद्ध नया कायदा, ३९४; –के मामलेमें लॉर्ड सेल्बोर्नका जवाब, ३३३, ३४१

अनुमतिपत्र अध्यादेश, ३२२, ३५१–५२, ४६४; –के मामलेमें गोपनीयता, २९४

अनुमतिपत्र कानून, ३९२–९३

अनुमतिपत्र कार्यालय, १६९; –के कार्यका लवडे द्वारा समर्थन, ३८९; –में एक नया नियम लागू, ५८; –में परिवर्तन, १९२

अनुमतिपत्र-सचिव, १५२

अन्तर्राज्य वतनी महाविद्यालय, २४४

अपमानजनक सिफारिशें, १९४

'अपराध', ४२२–२३

अपील-निकाय, –और परवाना-अधिकारीका निर्णय, २८५

अप्पासामी, ३६६, ३७८

अफगानिस्तान, १०६, १४४

अबूबकर आमद ऐंड कम्पनी, ३६९

अबूबकर, हाजी इस्माइल हाजी, –को पत्र, २०

अब्दुर्रहमान, डॉक्टर, २४९, २५३; –का भाषण, २६७–६९

अब्दुल हक ऐंड आमद, ३६९

अब्दुल्ला, १०

अब्दुल्ला, इब्राहीम, २०८

अब्राहम लिंकन, ५४–५६

अभयचन्द, ९२, १३१

अभिनन्दनपत्र, –अब्दुल कादिरको, २१६–१७

अभियोग, –पॉचेफस्ट्रूमके ब्रिटिश भारतीयोंके विरुद्ध, १००

अभ्यागत-अनुमतिपत्र, –देनेकी बात धोखेकी टट्टी, ३९६

अभ्यागत-पास, –आदिपर भी १ पौंड शुल्क, ३६५; –और नौकारोहण पास, २७१

अमरेली ताल्लुका, ९५

अमेरिका, –का घरेलू युद्ध, ५५; –की टस्केजी संस्था, २४४; –के कारीगरों और व्यापारियोंमें फूट, ८७; –के धनाढ्य, ३३८–३९; –में गुलामोंपर अत्याचार, ५५

अमेरिकी, –अरबपतियोंमें रूजवेल्टके भाषणसे खलबली, ३३९; –और चीनी, ८७; –और यूरोपके लोग, ३३८; –मालका बहिष्कार, चीनियों द्वारा, ८७

अम्बलवाना, १५१

अयोध्या, १३२

अरबों, –के गम्भीर मुकदमें, १७९

अलवार, ३६६

अलिफ लैला, –का किस्सा, ४४५

अली, अमीर, ४८१

अली, हाजी वजीर, २६७, ३४८, ३६१, ३६६, ४२१, ४५८–५९, ४७१–७३, ४७८, ४८०–८१, ४८६; –का भाषण, ४५४–५५; –की खुराक, ४८१; –की हालत, ४७९
अलीवाल नॉर्थ, २८०, ३२५
अवध, १४४
अविश्वासी वतनी, ३८२
अस्थायी अनुमतिपत्र, –देना बन्द, २६५; –या अभ्यागत पास, ३२०; –अस्थायी अनुमतिपत्रोंके स्वामी, ४४३
अस्वात, ४५५

आ

आँगलिया, मुहम्मद कासिम, २३०, २३६–३७, २७१, ३००, ३५८–५९, ३६९, ३७३, ४०५
आंग्ल-भारतीय शासक, १२६
आइजक, २०५, २२३, २२९, २७४, ३१७
ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, १७५ *पा० टि०*
'आगामी कांग्रेस अध्यक्ष कौन?', ६७
आत्मकथा, १९ *पा० टि०*, ३६ *पा० टि०*, ९१ *पा० टि०*
आदिवासी रक्षक सभा, ८–९
आनन्दलाल, १९, ९०, ९२–९३, १३१–३२, २०५–६, २७३, ३१८
आफ्रिकी राजनीतिक संघ (आफ्रिकन पॉलिटिकल ऑर्गेनाइज़ेशन), २६७, ३२३
आम चुनाव, –शाही संसदका, १३४
आमद, अबूबकर, २४०, २७८; –की जमीन और उनके वारिस, २७८; –की जायदादका मामला, ३९६; –की सम्पत्ति, २८४–८५
आमद, इब्राहीम, –का मामला, ३९४
आमद, उमर हाजी, –को पत्र, ३६
आमद, उस्मान, २२७, ४२०
आमद, सुलेमान, ४१९
आमद, हुसेन, ९३
आयरलैंड, २३८
आयोग, –नेटालमें स्थानीय औद्योगिक उत्पादनके लिए नियुक्त, ८७; –के सदस्य, ८७
आरलोंट, कर्नल; ३७८
आरिफ़, वली, १७४
ऑरेंज रिवर कालोनी, –और ट्रान्सवालका नया विधान, ३२३; –और रंगदार लोगोंसे सम्बन्धित कानून, ६; –के एशियाई विरोधी कानूनोंपर ब्रिटिश भारतीय संघ, ८; –के कानून, ८–९; –के *गवर्नमेंट गज़ट* में प्रस्तावित अध्यादेश, १८१; –के द्वार भारतीयोंके लिए बिलकुल बन्द, २१०; –के भारतीय, ७८–७९; –के रंगदार लोगोंको प्रभावित करनेवाले नगरपालिकाके कुछ उपनियम, ५६; –के सरकारी *गज़ट* में कुछ अध्यादेशोंके मसविदे, १७८, १८६; –में भारतीय, १८६; –में 'रंगदार व्यक्ति' का अर्थ, १७८; –में लेफ्टिनेंट गवर्नरके अधिकार, ६
ऑर्चर्ड, ८३, १३२, २२५
आर्थर, राजकुमार, २१८
आर्थर, रिचर्ड, २४५
आर्मस्ट्रॉग, –और हट, २७६–७७
आर्मडेल कासिल, ४७८–७९
आर्यसमाज, २३ पा० टि०, २४, ५१, ११३, १३४; –और हिन्दू धर्ममें सुधार, ५१
आस्ट्रेलिया, –और एशिया, २४५; –और जापान, १२०; –और जापानी, ३३८; –की सरकार और सिगरेट, ११०; –में बस्तीकी कमी, २४५
आस्ट्रेलियाई प्रवासी कानून, ३९८
आहत-सहायक दल, ३०१, ३८७; –और नेटाल भारतीय कांग्रेस, ३५८; –सम्बन्धी नेटाल भारतीय कांग्रेसकी दिलसा, ३५९

इ

इंग्लिश चैनल, १२२
'इंग्लैंड और जापानके बीच सन्धि', ४४
'इंग्लैंड कैसे जीता?', १२०–२१
'इंग्लैंड जानेवाला भारतीय प्रतिनिधिमण्डल,' १३४–३५
इंटरनेशनल प्रिंटिंग प्रेस, ३२६
इंडियन ओपिनियन, १५, १९ *पा०टि०*, ४६, ४८, ७९ *पा० टि०*, ८४, ९१–९३, ९९, १०० *पा० टि०*, १०८, ११३ *पा०टि०*, ११५, ११९, १३५ *पा०टि०*, १५६ *पा० टि०*, १६५, १९७–९८, २०५–७, २०९, २१५ *पा० टि०*, २२६–२९, २४९-५०, २७४, २८१, २८६ *पा० टि०*, ३०९ *पा० टि०*, ३१०, ३१७–१८, ३१९ *पा० टि*, ३२६, ३६२, ३६३ *पा० टि०*, ३७७, ३९० *पा० टि०*, ४०३, ४०४ *पा० टि०*, ४४४ *पा० टि०*, ४४६ *पा० टि०*, ४५३, ४५७ *पा० टि०*, ४७० *पा० टि०*, ४७२ *पा० टि०*, ४७६ *पा० टि०*, ४७८, ४८१; –निकालनेके तीन हेतु, ३००; –के बारेमें, २३९–४०
इंडियन मैगज़ीन ऐंड रिव्यू, ६६ *पा० टि०*
इंडियन रिव्यू, ३०८
इंडियन वर्ल्ड, ४०६–७
इंडियन सिविल सर्विस, ६७

इंडिया, ९, ६६–६७, १९६, २१८ *पा० टि०*, २४० *पा० टि०*, ३५७ *पा० टि०*, ३९५ *पा० टि०*, ४७६ *पा० टि०*; –को तार, ४१८
इकॉनोमिक हिस्ट्री ऑफ इंडिया सिन्स द एडवेन्ट ऑफ द ईस्ट इंडिया कम्पनी, ६७ *पा० टि०*
इजरेयलस्टम्, ४५१, ४५६
'इटलीमें भूकम्प,' ६८
इनविंसिबूल, १२२
इन्वेरिएरिटी, १४९
इन्दौर, ११२
'इन्दौर दण्ड-विधान', ११२
इन्वो, १८०, २४४
इब्राहीम, आमद, ३४२; –का मुकदमा, ३५५
इब्राहीम मदर्स, १००
इब्राहीम, मुहम्मद, ४०
इमेन्यूयल, विक्टर, ३०
इरविंग, वाशिंगटन, ४८१
इलैंड्सलागटे, २९३
'इस (*इंडियन ओपिनियन*) पत्रकी आर्थिक स्थिति', ३०५
इस्माइल, ई० इब्राहीम, ३६९
इस्माइल, ए० हक मुहम्मद, ३६९
इस्माइल, बी० इब्राहीम, ३०२
इस्माइल, सुलेमान, ८२
इस्माइल, सैयद, ११
इस्माइल, हाजी, २०
इस्माइल, –और ल्यूकस, ११
इस्लामकी स्फूर्ति (स्पिरिट ऑफ इस्लाम), ४८१
इस्लाम गज़ट, २२७

ई

ई० अबूबकर आमद ऐंड ब्रदर्स, २३३
ईदुलजी, होरमसजी, १७०
ईरान, १९२; –का मामला, ४१०; –के शाह; –के शाहका ऐलान, ४१०
ईवान्स, एमरिस, –की सलाह, ४७४
'ईश्वरकी लीला अद्भुत है', १७५
'ईश्वरचन्द्र विद्यासागर', ७०–७१
ईश्वरीय प्रकोप, –हाँगकाँगमें, ४७३–७४
ईसप, मुहमद, ३७८
ईसाई, –और मुसलमान, १९५–९६
ईसाई युवक मण्डल, ३००
ईसा मसीह, ५९
ईसो, २६८
ईस्ट इंडिया कम्पनी, १७, १२४, १२९, १४४, १६१ *पा० टि०*
ईस्ट इंडियन ट्रेडिंग कम्पनी, ३६९
ईस्ट ऐंड वेस्ट, ९४
ईस्टर, २७३
ईस्ट लन्दन, २३३

उ

'उचित और न्याय्य व्यवहार', ३९९–४०१
उच्चतर श्रेणी भारतीय विद्यालय, –और सरकार, ६१
उच्च न्यायालय, –का फैसला, १५३
उच्चायुक्त, –और नोमूराका अनुमतिपत्र, २८९; –का गांधीजीसे प्रश्न, १५२; –का ट्रान्सवालका दौरा, १०३; –के सचिवको पत्र, ६–७
उत्तरदायी दल (रिस्पॉन्सिबल पार्टी), २३९
उत्तरदायी शासन, –ट्रान्सवालके लिए, २१५
उत्तरी लैम्बेथ, ९६
'उद्धरण : दादाभाई नौरोजीके नाम पत्रसे', १९५, २८१, ३७७
'उपनिवेशमें उत्पन्न प्रथम भारतीय बैरिस्टर', ७९–८०
उपनिवेश-कार्यालयका रस्मी जवाब, १३६–३७
उपनिवेश-मंत्रीकी, –सेवामें ट्रान्सवालके भारतीयों द्वारा प्रार्थनापत्र, ७३; –को तार, ४२७, ४७६
उपनिवेश-सचिव, –की सेवामें शिष्टमण्डल, २२२; –को पत्र, १२, २२९–३०, २७१, ३०२, ३५८, ४११–१३, ४२७; –से भारतीय शिष्टमण्डलकी भेंट, २४६
'उपनिवेशी भारतीय अंकित कर लें,' ४१५–१६
उपस्नातक संघ (अंडर ग्रेजुएट्स असोसिएशन), १८८
उमर, *देखिए* झवेरी, उमर हाजी आमद
उमवोटी घाटी, ३८०, ३८२, ३८६
उस्मान, दादा, १०८, १७६, २२४, ४२०; –और उमर, ४०; –*न्याय पानेमें असफल*, २८९; –बनाम फ्राइहीड निकाय, १०९; –व्रयहीडकी ओर, १२८; –का प्रार्थनापत्र, २५६–५७; –का मामला, १०९, २८५, २९५, ३६४; –की अपील, १२७–२८; –को पत्र, १०, ३५; –पर गोरोंका अत्याचार, ११८

ऊ

ऊटकमंड, १११

ए

'एक अनुमतिपत्र सम्बन्धी मामला', ३५५
'एक अन्तर', २३३
'एक एशियाई नीति', ३२७–२८
'एक गुप्त बैठक', २८
'एक जागरूक भारतीय', १२९
एक नया नियम, –अनुमतिपत्र-कार्यालयमें लागू, ५७

'एक परवाना-सम्बन्धी प्रार्थनापत्र', २८९-९०
'एक भारतीय कवि', ९९
'एक भारतीय प्रस्ताव', ३०३
'एक महत्वपूर्ण मुक़दमा', २७८-७९
एक माकूल सवाल, ४२३
'एक मुश्किल मामला', २८७-८८
एक विवेक-सम्मत संशोधन, ४१५
एकाउन्टेन्ट जनरल, ११०
एजेक्स, ३१२; -का पत्र, ३१२
एडवर्ड, सम्राट्, ५०, २०९, २४०, ३२३, ३६८, ४५५-५६; -का ६५वाँ जन्मदिवस, १३३
एडवोकेट ऑफ इंडिया, १८८
एडिनबरा विश्वविद्यालय, ३८६
एथेन्स, १११
एनर्सडेल, ३३७
एम० सी० कमरुद्दीन ऐंड कम्पनी, ३६९
एम्टहिल, लॉर्ड, १६०
एम्पायर नाटकघर, ४४८, ४५१, ४६२, ४६९, ४७३; -की विराट सभा, ४६७; -में एक विशाल सभा, ४३५; -में ब्रिटिश भारतीयोंकी सार्वजनिक सभा, ४३९
एर्मेलो, १५१
एल० ई० एन०, -के एशियाई प्रश्नको हल करनेके सम्बन्धमें सुझाव, ३२७; -के भारतीयोंकी स्थितिके सम्बन्धमें विचार, ३३१
एलगिन, लॉर्ड, १८३, १८५, २१४ *पा० टि०*, २८५ *पा० टि०*, ३९५ *पा० टि०*, ४६८-७०, ४८०, ४८८; -और श्री लिटिल्टनके संविधान, ३९१; -का उत्तर, ४६८-६९; -का खरीता, ३७७; -का संविधान, ३९१; -का हस्तक्षेप, २७६; -के हस्तक्षेपसे स्वराज्यके संविधानकी आवाज, २७७; -को कानून पसन्द, ४५८; -को प्रार्थनापत्र, २५६-५७, ४०४-५, ४७६-७८; -को लॉर्ड सेल्बोर्नकी सलाह, ४६९; -द्वारा अध्यादेश स्वीकृत, ४६२; -द्वारा एशियाई अध्यादेश मंजूर, ४७१
एलनबरो, लॉर्ड, ७१, २११
एलफिन्स्टन, माउंटस्टुअर्ट, १४४-४५; -और बम्बई, १४५; -और बाजीराव पेशवा, २४५; -का शौर्य, १४४
एलफिन्स्टन कॉलेज, १४५, १८८
एलिजाबेथ फ्राइ, ४८-४९
एलिजाबेथ बन्दरगाह, २३१
एशिया और आस्ट्रेलिया, २४५
एशियाइयों, -की बाढ़, २३१-३३; -पर शासकोंकी नंगी तलवार, ३९८
एशियाई अधिनियम, -भारतीयोंको अस्वीकार, ४२१; -संशोधन और भारतीय, ४३०; -संशोधनका मसविदा, ४२८; -संशोधनका मसविदा *गवर्नमेंट गज़ट*में प्रकाशित, ४११; -संशोधनका मसविदा भारतीयोंके लिए अपमानजनक, ४११
एशियाई अध्यादेश, -एक विवादास्पद कानून, ४३३; -और बोअर शासनसे लिया गया कानून, ४१८; -और भारतीयोंके साथ किये गये वादे, ४१४; -क्विनकी दृष्टिमें वाजिब, ४६८; -ट्रान्सवाल विधान-परिषद्में, ४२८; -ब्रिटिश लोगोंके लिए अशोभनीय, ४३४; -लॉर्ड एलगिन द्वारा मंजूर, ४७१; -का मसविदा, ४१८; -की मंजूरीपर ब्रिटिश भारतीय संघको खेद, ४७१; -को मंजूर न करनेके लिए कुछ बातें, ४३३; -पर वक्तव्य, ४४२-४३; -पर श्री ग्रेगरोवस्की, ४३५
एशियाई कानून, -को संशोधित करनेका उद्देश्य, ४१५; -में निहित अपमान, १८३
एशियाई नाबालिग पुरुष, -और उनकी आयु-सीमा, ३२०
एशियाई पंजीयन अधिनियम, ३९२
एशियाई-*बाजार*, -और उनपर नगरपालिका-परिषद्का नियंत्रण, २७; -नगरपालिका-परिषदोंको हस्तान्तरित करनेका लेफ्टिनेंट गवर्नरका अधिकार, २७
एशियाई *बाजार* सम्बन्धी कानून, ८४
एशियाई-विरोधी आन्दोलन, १०२; -और व्यापारिक ईर्ष्या, २१९
एशियाई-विरोधी कानून, १२, २१९
एशियाई-विरोधी दल, ३२२
एशियाई-विरोधी पहरेदार संघ, -द्वारा पॉचेफस्ट्रूमके भारतीयोंके सम्बन्धमें प्रार्थनापत्र, १०१
एशियाई-विरोधी लोग, -भारतीयोंको उपनिवेशसे निकाल बाहर करनेके लिए सन्नद्ध, १०४
एशियाई-विरोधी सम्मेलन (एंटी एशियाटिक कन्वेन्शन), २८
एशियाई व्यापार और दूकान-कानून, ३०४
एशियाई व्यापारियों, -के परवानोंपर जोहानिसबर्गके महापौर, १०१; -की निहित स्वार्थका मुआवजा, ३५३
एशियाई समस्या, ११६; -दक्षिण आफ्रिकाके सार्वजनिक मण्डलोंमें, ४८३; -को हल करनेके सम्बन्धमें एल० ई० एन० के सुझाव, ३२७; -पर विचार करनेके लिए प्रस्तावित आयोग, ३५३
एस० पी० मुहम्मद ऐण्ड कम्पनी, ३६८
एस्काम्ब, सर हेरी, ७६, ११४, २३४, २३८, २६१, ३०१, ३७७, ४१६; -गिरमिटिया मजदूरोंपर, ३२७; -के जीवनकालमें अभ्यागत पासोंपर एक पौंडी शुल्क लगानेका प्रयत्न, २३०
एस्क्विथ, २१८-१९; -चीनी विवादके अवसरपर, २१८
एस्टकोर्ट, ३३७; -के स्टेशन मास्टरका एक भारतीयके साथ दुर्व्यवहार, ३३७

ऐ

ऐंग्लो वैदिक कालेज, ५१
ऐक्ट, अरनेस्ट, ८७
ऐडवर्टाईज़र ३१२
ऐन्स्ले, १४९
ऐयर, सर टी० मुतुस्वामी, ९३, १३९–४०;–और श्री पॉवेल, १३९;–और श्री मुतुस्वामी नायकर, १३९

ओ

ओकूमा, काउंट, –जापानकी महानतापर, ६०–६१
ओ'कोनर, निकोलस, ३१२
ओटीमाटी, ३७९–८०, ३८२, ३८६–८७
ओ'डोनल, २६६
ओयामा, मार्शल, –और लिनेविच, १८

क

'कटौती और व्यक्ति-कर', १५९
'कदम-ब-कदम', ४२–४३
कमरुद्दीन, सेठ मुहम्मद कासिम, -का मामला, ४०७
कमर्शियल गज़ट, ४५९, ४७२
कर, –आदिवासी काफिरोंपर, ५८
करसनदास, ८४
कराची, १७५
करीम, अब्दुल, १४
करोडिया, ३९
कर्जन, लॉर्ड, ४, ५०–५१; –और नमक-कर, ५०; –का राजाओंको इंडियन सिविल सर्विसके व्यक्तियोंको नियुक्त न करनेका आदेश, ६७; –की नीतिका कांग्रेस द्वारा अनुमोदन; १८४; –की बंगभंगकी कोशिश, ४७; –की महत्त्वपूर्ण घोषणा, १८५; –का श्री दत्तको दीवान नियुक्त करना नापसन्द, ६७; –द्वारा भारतीय मजदूर भेजनेकी शर्त, २६३·
कर्टिस-लॉयनेल, २४७ *पा० टि०*
कलकत्ता, ७०–७२, १०६, ११४, १२९, १३४, १६१, ४०६; –में बंगालियोंकी हड़ताल और विराट सभा, ११९; –में सर मंचरजीका अपमान, ९६
'कलर्ड पीपुल्का प्रार्थनापत्र', २५३–५४
कल्याणदास, ८२, १७०, २२२–२३, २२८, ३१०, ३१७–१८, ३४५
'कसौटीपर', ४६२
कॉंगड़ा जिले, –में भूकम्प, १३५
कॉंटावाला, एच० डी०, ९४–९५; –द्वारा स्थिर किये गये अनिवार्य शिक्षाके सिद्धान्त, ९४–९५
'काउंट टॉलस्टॉय', ५९–६०
काज़ी साहब, अब्दुल हक, ३६९
कॉटन, सर हेनरी, ७०, २६६, २७९, ३५७, ४५२; –का प्रश्न, ३७३
काठियावाड़, २१, ३०
कादिर, अब्दुल, ६२, ९९, २२४, २२७, ४५५, ४७९; –की विदाई, २३६; –की विदाईपर भाषण, २१७; –के अनुमतिपत्रकी नकल, ३७; –को अभिनन्दनपत्र, २१५–१६; –को पत्र, ४०–४१; –को सावधान रहनेकी सलाह, ४०–४१; –श्रीमती, ४०
कानरा तालुका, १२४
कानून, –उपयोगमें लानेकी प्रणाली, १५६–५७; –भंग करनेका प्रस्ताव, ४६९; –का उपयोग अत्याचारपूर्ण ढंगसे, १५६; –में कर वसूल करनेकी विधि, २७६
कानून १८३३, १७; कानून ३, १८८५, १२, २७–२८, १५३, १५६, १९०, २४०–४१, २५१, २५६–५७, २८४, २९०, ३४६, ३५५, ३८५, ३९३, ३९५–९६, ३९८–४०१, ४०९, ४१२–१३, ४१५, ४२१, ४३३, ४४१–४२; –और नेटाल परवाना अधिनियम, २८५; –और शान्ति-रक्षा अध्यादेश, १५८; –और सम्पूर्ण वर्गीय कानून, २३२; –और सिर्फ एशियाइयोंके लिए बनाये गये कानून, २१९; –का कठोर अर्थ भारतीयों के विरुद्ध लागू, १५४; –की करामात, २७८; –की परिभाषा, ४११; –की सर्वोच्च न्यायालय द्वारा व्याख्या, १२८; –के अन्तर्गत ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति, ४३४; –द्वारा भारतीयोंपर लगाई गई पाबन्दियाँ, १५७; –ब्रिटिश भारतीयोंके लिए अपमानजनक, १५७; –में हंकन द्वारा प्रस्तावित संशोधन, ४०३; –विशेष तौरपर एशियाइयोंके लिए, ३४८; कानून ३, १९०६, २२९–३०; कानून १८, १८९७, २५७; –के अन्तर्गत परवाने, १; कानून २५, १८७५, १६०
'कानून समर्थित डाका', २४०–४१
काफिर, –और दोगले, ४२९; काफिरों –का विद्रोह व्यक्ति-करके कारण, २७६
काबुल, १४४
कार, –की, अदालतमें परीक्षात्मक मुकदमेकी सुनवाई, २३९
कारूथर्स, १४
कॉर्टेज, डॉक्टर, ३०८
कार्यवाहक मुख्य यातायात-प्रबन्धक, –को पत्र, १९९
कालाभाई, ८१–८२, ९३
काला रेल-यात्री, –और वाउकर, ३१५
काले, –और गोरे लोग, १९०
कॉलेज चौक, ९६
कावसजी, पारसी, ३८; –को पत्र, ११
कासिम, ए० एम०, १००
कासिम, हुसेन, ३६९
किंग्स लाइन, ७४

किचिन, ८१, ९१, १०८, २२८, २८१; –को दी गई सुविधाएँ, १३१

किम्बर्ले, ४५९

'किरायेके बारेमें महत्त्वपूर्ण मुकदमा', ३७४

किसीका अपराध –किसीको दण्ड, २४८

किस्ता, ३६६, ३७८

कुंजी, ३६६, ३७८

कुक, मैनेजर, –की नृशंसता, ६४

कुछ अध्यादेशोंके मसविदे, –ऑरेंज रिवर कालोनीके सरकारी गज़टमें, १७८

'कुछ प्रश्न', ४८६–८८

कुछ हिदायतें, श्री छगनलाल गांधीको, ८३, २०४

कुरसी, –और गिसो, १७९

कुप्पुसामी, ३६६, ३७८

'कुमारी विन्सिवलकी मृत्यु', २६५

कुम्भकोणम्, ११०

कुली यात्री, ४१६

'कुली' शब्द, –के प्रयोगसे नेटालमें अनर्थ, १५१

कुवाडिया, इब्राहीम सालेजी, १५० पा० टि०, २१५, २३१, २२७, २३९, २८०, ३१६, ३३३–३४, ३४८, ३८८, ४७९; –का भाषण, ४५३; –का मुकदमा मजिस्ट्रेट क्रॉसकी अदालतमें, ३३२

कूने, लुई, २२५ पा० टि० ४२०;–का उपचार, ४८०

कूरलैंड, ७४, ८०, २३६;–और नादरी, १८७;–और नादरीके खिलाफ डर्बनके लोगोंका प्रदर्शन, २३६

केप, –का कानून, १६६; –का नया उपनियम और रंगदार यात्री, १६७;–का प्रवासी कानून, १४३–४४; –के ब्रिटिश भारतीय और प्रवासी अधिनियम, १६६; –के भारतीय, २६३–६४, –के भारतीय व्यापारी, १७४, २२०; –के विक्रेता परवाने, ३११; –में चेचक, २५४; –में भारतीयोंकी स्थिति, ३४४

केप गवर्नमेंट गज़ट, ८६, २६३;–और व्यापारको नियमित करनेवाले विधेयकका मसविदा, ३११

केप टाउन, १६, १२०, २०६, २०८, २२३–२४, २३२, २४९, २६५–७०, ३३०, ४५९; –की ब्रिटिश भारतीय समिति, २६४

'केप परवाना अधिनियम', ४१६

'केप प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम', १६, ८६, १६६, २६३; –में परिवर्तन, ३५६

केप वॉय, २५३

केप मेलकी व्यवस्था, ४७९

केप-सरकार, –द्वारा प्रवासी-अधिनियमको प्रतिबन्धक धाराओंकी गलत व्याख्या, १७७

कैम्बेल, डॉ० एस० जी०, ११८

कैम्बेल-बैनरमैन, सर हेनरी, २०९ पा० टि०

केम्बेल, मार्शल, ५८, –द्वारा आदिवासी काफिरोंकी प्रशंसा, ५९

केम्बेल, स्टुअर्ट, ४५१

केलनबैक, ३९

केवलराम, सी०, ११३

कटनी वल्व, ६९

कैखुसरू, ९, ३७

कैडबरी बन्धु (ब्रदर्स), २६७, ३१४

'कैडबरी बन्धुओंकी उदारता', २६७

कैनिंग, –एलफिन्स्टनकी वीरतापर, १४५

कैनिंगटन रोड, २१४, ३६१

कैनेको, बैरन, ६१

कैलेब्रिया, ६८

कोकोवाले, कैडबरी (बन्धु), २६७

कोचीन, १११;–और त्रावणकोरमें व्यापारिक समझौता, १११

कोठारी, ४६६

कोडामा, जनरल, –का शारीरिक गठन, ४१८, –की मृत्यु, ४१८

कोडी, –का बयान, ४६५

कोतवाल, एन०, ३६९

कोमाटीपोर्ट, ३७५, ३८४

कोमुरा, बरन, ३५

कोरा, इस्माइल, ३०२

कोष, –डर्बनकी बाढ़के लिए, १९

कौट्ज़, मुख्य न्यायाधीश, –का फैसला, १५३

'क्या भारत जागेगा?', ४७

क्यूराइल टापू, १८

क्राउज, डॉक्टर, २१६

क्रॉमवेल, ऑलिवर, १११, ४८९

क्रॉस (मजिस्ट्रेट), –का निष्पक्ष निर्णय, ३३२, ३४२; –की अदालतमें इब्राहीम सालेजी कुवाडियाका मुकदमा, ३३२; –के सामने पेश एक मुकदमा, ३५३

क्रिश्चियन वर्ल्ड, ५२

क्रिश्चियानिया, १८८

क्रीमिया, ३७६; –की लड़ाई, ५९, ६५

'क्रीसेंट', ७४, ८०

क्रुप, जर्मनी, १८१

क्रू, कर्नल, १६

क्रूगर, स्टीफेन्स जोहानिस पॉलस, ४२ पा० टि०, ७३, ८०, २४१, ४०१; –की योजना ४७४; –की सरकारकी महारानीकी सरकारसे माँग, ३४६

क्रूगर्सडॉर्प, ९०, १४० पा० टि०, १९८, ४३७, ४५४–५, –का व्यापार मण्डल, ३२४; –की नगर-परिषद, २९, –की नगर-परिषद और भारतीयोंको बस्तियोंमें भेजना, ३२; –के भारतीय, २९; –के भारतीयोंके बारेमें डॉक्टरी रिपोर्ट २९; –में भारतीय, ३२

क्रूगर्सडॉर्प स्टैंडर्ड, –में एक भारतीय मामलेका विवरण, ४६६

क्लाइनेनबर्ग, २१
क्लार्क, डॉ० सर एंड्र्यू, –के मतमें चायसे ज्ञान-तन्तु कमजोर, १२३
क्लार्क्सडॉर्प, १०० पा० टि०, २९६, ३३४, ४३७, ४५१; –और पॉचेफस्ट्रूम, ३२९; –के भारतीय भण्डार, ३२९
क्लिप रिवर डिविजन, २८७
क्लिपस्प्रूट, १४२, २१६, २४४, ४०८
क्लीवलैंड स्टेशन, ३४४
क्विन, –और भारतीय, ४६८; –की दृष्टिमें एशियाई अध्यादेश वाजिब, ४६८
क्वेकर, २६७

ख

खनिकोंकी माँग, ३६१
खूनी कानून, ४२८; –का उद्देश्य भारतीयोंकी हस्ती मिटाना, ४२८
खोटा, इब्राहीम, ३३४, ३४८

ग

गंगाट, ए० ई०, १००
गनी, अब्दुल, २, ७, १२, ४०, ५७–५८, ७५, ८०, १५० पा० टि०, १७१, १८२, १९३–९४, १९९, २०१–२, २०६, २४६, २६७, ३२०, ३३४, ३४८, ३८८, ४०२, ४१३, ४२१, ४२७, ४३८–३९, ४४१, ४६०, ४७८-७९; –और पोलक ट्राममें, ३६०; –का प्रार्थनापत्र, ४७६; –का भाषण, ४३५, ४५१
गवरू, ९२
गबीन्स, डॉ०, ८७
गर्टन कॉलेज, केम्ब्रिज, ६६ पा० टि०
गवर्नमेंट गज़ट, २४२, २५७; –में प्रकाशित एशियाई अध्यादेशके मसविदेके लिए 'घृणित' उत्तम विशेषण, ४१४; –में प्रकाशित एशियाई कानून संशोधन अध्यादेशका मसविदा, ४११
गवर्नर, नेटाल, –द्वारा आयोगकी नियुक्ति, ८७
गांधी, अभयचन्द अमृतलाल, ३२
गांधी, अमृतलाल, ३२ पा० टि०
गांधी, आनन्दलाल अमृतलाल, ३२
गांधी, छगनलाल, १३, १९, ८१–८४, ९०–९३, ९९, १०८, १३१, १७०, १८२, १९७–९८, २०३, २०९, २२५, २७४; –को कुछ हिदायतें, ८३, २०४; –को पत्र, १९, २०३–६, २०८, २२२–२४, २२७–२९, २७०, २७३–७४, २८१–८२, २८६, ३१०, ३१७–१८, ४१७, ४१९
गांधी, तुलसीदास, ३२ पा० टि०
गांधी, मगनलाल, १९
गांधी, मणिलाल, २३, ८३, ९२, ३४५, ४१९ पा० टि०
गांधी, रामदास, –को पत्र, ४८४
गांधी, लक्ष्मीदास, –को पत्र, ३४४–४५
गांधी, हरिलाल, २३, ३४५, ४१९, ४६१
गॉडफ्रे, डॉ०, ४५१–५२; –का भाषण, ४५५
गॉडफ्रे, जेम्स, ३१६
गॉडफ्रे, जॉर्ज, ३१६
'गॉड सेव द किंग', १६२, २६८, ४५६
गायकवाड, महाराजा, ६७, ११२
गॉश, जॉर्ज, ७७–८; –का कथन असत्य, १०१; –का ब्रिटिश भारतीयोंके सम्बन्धमें वक्तव्य, ७७
गिरिजा-परिषद, –की रैंड अग्रगामी संघके आन्दोलनके विरुद्ध आवाज, ४२
'गिरमिटिया कर', २७६
गिरमिटिया भारतीय, –और नेटाल जेल-आयोग, १७७; गिरमिटिया भारतीयों, –का नेटालमें बड़ी संख्यामें आगमन, १०१; –की दशाके बारेमें आशंका, १२५
गिरमिटिया मजदूर, ७५; गिरमिटिया मजदूरों, –का प्रश्न, ३२८; –की उपलब्धि, १८५; –की हालत खतरनाक रूपमें गुलामीके नजदीक, ३२७
गिल, पिकर्स, २६६
गिल, सर डेविड, ४८०
'गिल्टीवाला प्लेग', १०५
गिसीआवन, ९३
गिसो, –और कुरसी, १७९
'गुप्त न्याय', ३८९–९०
गुल, २०८, २२३–२४
गुल, आमद, ४७९
गुल, यूसुफ हमीद, ४७९
गेट्टा, ई० एच०, १००, ४५३
गेपलो, ६८
गेलानी, मानजी एन०, १९७
गैटेकर, सर विलियम, –की मृत्यु, २४५
गैब्रियल, बर्नार्ड, ७९, ३०२; –ऊँची शिक्षा प्राप्त करनेवाले प्रथम भारतीय, १७७
गैब्रियल, ब्रायन, २०३, २०५, २२२, २२५, २२८, ४१९; –श्रीमती, ३७३
गैब्रियल, लाजरस, –द्वारा सहायता देनेका प्रस्ताव पेश, ३०१
गैरीबाल्डी, ३०
गोकुलदास, ८२, १३१–३२, १७०, १८२, १९७, २७३, ३१०, ३१७–१८
गोखले, गोपाल कृष्ण, ४, ६७, १३४–३५, १७२; –और इंग्लैंडमें उनकी हलचल, १६८; –और लाला लाजपतराय, १८४; –दादाभाई नौरोजीपर, १३४; –श्री बनर्जी

और नौरोजीकी सेवाओंपर, १६८; –की अपील, १७३; –के भाषणका साराश, १६८; –को पत्र, ३७०
गोरी ब्रिटिश प्रजा, –और गोरे विदेशी बनाम ब्रिटिश भारतीय समाज, १०९
गोरे, –और मलायी वस्ती, १९८; –लोगोंका शिष्टमण्डल, २४०; –व्यापारी और भारतीय, १०२; गोरों, –का उत्साह, २८०; –का प्रभुत्व, ३४५–४६; –द्वारा भारतीयोंपर गन्दगीका इल्जाम, ४६६; –द्वारा भारतीयों-पर लगाई गई तोहमत, ३७२
गोर्की, मैक्सिम, ५
गोविन्दजी, १३२
ग्रिफिन, सर लेपेल, १८९: –दूकान कानूनपर, ४८४; –भारतीय व्यापारियोंके सम्बन्धमें, ४८३
ग्रेगरी, निवा-निवासी, ५२
ग्रेगरोवस्की, –एशियाई अध्यादेशपर, ४३५; –और लिखटन-स्टाइनकी राय, ४५८; –और लेनर्ड, २७८
ग्रेटाउन, २९१
ग्रे स्ट्रीट, ७६, ८२, ९०, ९९, ३०१, ३६४
ग्रैंट मेडिकल कॉलेज, १८८
ग्लासगो, १२४
ग्लैड्स्टन, विलियम एवर्ट, ९६ पा० टि०, ४१६

घ

'घृणित', ४१४–१५
घोष, डॉ० रासबिहारी, ६७
घोषणा, १८५७, (१८५८), १५५, २५३; –और दक्षिण आफ्रिकामें ब्रिटिश भारतीयोंका दर्जा, १७; –१६ वीं (१९०१), ३५१

च

चन्द अध्यादेशोंके मसविदे, –ऑरेंज रिवर उपनिवेशके सरकारी *गज़ट*में. १८६
चन्दा, –इकट्ठा न होना लज्जाजनक, ४६७; –देनेवालोंके नाम ३६९
चन्द्रनगर, ७०
चर्च स्ट्रीट, २७८
चर्चिल, विन्स्टन, २९९, ३१३, ३९१; –स्मिथके कार्यपर, २९१; –का जवाब, ३७३
चाय,–की शुरुआत चीनमें, १२३; –से हानियाँ, १२३
चार्ल्स, –द्वारा जहाजी-कर लागू, ४८९
चार्ल्स जेकब व सन्स, ४५९
चिआजरी, एन०, ३६८
चिन्दे, १०५
चिली, ४७३
चीन,–की जागृति, १८१; –की स्थितिमें परिवर्तन, ३३९–४०; –पर जापानके सुधारोंका प्रभाव, ३३९; –में अमरीकी मालका बहिष्कार, ३३९; –में विदेशियोंको दूर हटानेका आन्दोलन, ३३९, –में हलचल, ३०७
चीनी, –और अमेरिकी, ८७; –और गन्दी भाषा, ९; –और भारतीय : एक तुलना, ६९; –और भारतीय, सिंगापुरमें, ६; –वापस जा सकेंगे, ३२४; चीनियों, –की, माली हालत भारतीयोंसे अच्छी, ६९; –की हालत, ३१६; –को वतनके लिए पट्टेपर जमीन, ६९; –को वापस भेज देनेका सवाल, ३३२; –द्वारा अमेरिकी मालका बहिष्कार, ८७; –में ऐक्य, ८७
'चीनी खान-मजदूरोंपर अत्याचार', ६३–६४
'चीनी जागृतिकी एक निशानी', ३३८
चीनी भितिपत्र, ३२६
चीनी मजदूर, ९, २२१–२२, २४८, २६९, ३४१; चीनी मजदूरों, –और गोरोंपर लॉर्ड सेल्बोर्न, ९; –पर किये गये अत्याचारका प्रश्न, ६३
चीनी श्रमिक अध्यादेश, २१८–१९
चीनी संघ, ६९
चीनी सिपाही, –अत्याचारका शिकार, २७४
चेचक, –का टीका ३४१; –सम्बन्धी विनियम, ३५१
चेतावनी, ४६६
चेम्बरलेन, १३४, १५५, २४१, २९१, ४०७, ४११, ४५२, ४६१; –का खरीता, ३४६; –का नेटाल-सरकारसे निवेदन, २८६; –का वक्तव्य, ३४६–४७; –की नीतिकी रूप-रेखा, २०१; –को विलियम वेडरबर्नकी सलाह, २१९
चैमने, २२२, २४५, ३४२, ४२१, ४५१, ४५६
चौथी रियायत, ४०१

छ

छोटाभाई, ए० ई०, ४५५

ज

जगन्नाथ, –का मुकदमा, ४१
जगमोहनदास, ३४५
जवाबु, टेंगो, –और विशाल वतनी महाविद्यालय, १८०, –और श्री के० ए० हॉवर्ड हॉटनका दौरा, २४४
जमालुद्दीन, ३६६, ३७८
जमीदार, –और लॉर्ड मेटकाफ, १२९–३०
जयन्ती, –१८८७ की, ९९
जयशंकर, ८२, ९०, ९९, १३२
जर्मन पूर्व आफ्रिकी कम्पनी, ३५५
'जर्मन पूर्वी आफ्रिका जहाज प्रणालीके भारतीय यात्री', २३५
जर्मन सम्राट्का कथन, २१२
जर्मिस्टन, २२०, २८०, ३२५, ३५०, ३६७, ४२१, ४४४, ४६३
जवाब, –मुस्लिम युवक संघको, ३०९; –*रैंड डेली मेल* को, ४३९–४०; –*लीडर* को, २००

जसात, इब्राहीम, ३३४
जस्टिन, मार्टिन, –की अन्य धर्मोंके प्रति सहनशीलता, ५२
जहाजी कर, –चार्ल्स द्वारा लागू, ४८९; –देनेसे हैम्डनका इनकार, ४८९
जाँच-आयोग, २५९
जाँच-समिति, –की नियुक्ति, २६२; –के सदस्य, २६२
जापान, –और आस्ट्रेलिया, १२०; –और इंग्लैंडके बीच सन्धि, ४४; –और ब्रिटिश उपनिवेश, १४३; –और ब्रिटेन, २१८; –और रूस, १८, ३५, ६०–६१, १३७, १६८; –और रूसकी सन्धिकी शर्तें, ६३; –कैसे जीता? ३५; –की उन्नति, ६०–६१; –के लिए कड़वी गोली, १४३; –के वीर कोडामा, ४१८–१९; –के सुधारोंका चीनपर प्रभाव, ३३९; –द्वारा सन्धिकी तैयारी, १८
जापानी, –और आस्ट्रेलिया, ३३८; जापानियों, –की विजय, सखेलियन टापूपर, १८
जापानी सैनिकों, –के लिए ७ सीखें, ६१
जार, निकोलस द्वितीय; १३७ *पा० टि०* –और वाइसराय, १३८; –का चुनावपर आधारित संविधान ५४
'जॉर्ज वाशिंगटन', ८९–९०
जालभाई सोराबजी ब्रदर्स, ३७–३८; –को पत्र, १३
जिम्मेदार संघ (रिस्पॉन्सिबल असोसिएशन), २८
जिला-सर्जन, –की भारतीयोंके बारेमें रिपोर्ट, १०१–२
जीवनजी, ३०७
जुमा, हासम, १४१
जूलूलैंड, –के लिए परवाना-विधेयक, १
जूलू विद्रोह, २४३
जेनोआ, ३०
जेमिसन, –की श्री मेसन द्वारा ताड़ना, २७५
जेम्स, ८७, ४८१
जेल-सुधार आयोग (प्रिजन्स रिफॉर्म कमिशन), १२५
जोशी, एच० आई०, ३६६, ३७८
जोशुआ ब्रदर्स, ४७२
जोसफ, ई० एम०, ३४८
जोहानिसबर्ग, –का ब्रिटिश भारतीय संघ, २३२; –का भूमि-अध्यादेश और लेफ्टिनेंट गवर्नर, ८५; –का व्यापार युद्धसे पूर्व डच वतनियोंके हाथमें, ७५; –का शक्तिशाली समाज, २११; –की गिरजा-परिषदके शिष्टमण्डलकी लॉर्ड सेल्बोर्नसे भेंट, ४२; –की चिट्ठी, २१५–१६, २२१, २३९–४०, २४८–४९, २६७–६९, २७९–८०, २८८, २९८–९९, ३१५–१६, ३२५–२६, ३३२–३३, ३६०–६१, ३७४–७५, ३९१–९५, ४०७–८, ४२१, ४३५–३८, ३५१–५६, ४५८–५९, ४६७–६८; –की ट्रामें और भारतीय, २०१–३; –की नगर-परिषद और भारतीय, ३६०; –की नगर-परिषदका प्रस्ताव, १४२; –की नगर-परिषदकी बैठकका विवरण, २१०; –की नगरपालिकाका नया कानून, ३७५; –की सार्वजनिक सभा, ४४२; –के ट्राम प्रणाली उपनियम, २३९; –के महापौर एशियाई व्यापारियोंके परवानोंपर, १०१; –में आग २४८; –में नई मस्जिद, २१६; –में प्लेगका इतिहास, ११४–१५; –में भारतीय बस्ती, १४२
जोहानिसबर्ग ट्रामवे प्रणाली, –के प्रबन्धककी सिफारिशें, १९४–९५
जोहानिसबर्ग-निगम, –के खिलाफ मुकदमा, २९९
'जोहानिसबर्गवासियोंको सूचना', ८८
जोहानिसबर्ग स्टार, ४५, २१५, ३२५, ४१४–१५, ४४३, ४४८–८९; –रंगदार लोगोंकी गुंडागिरी-पर, ४०९; –का ब्रिटिश भारतीय विरोधी रुख, ४४०; –के विचारमें नये अध्यादेशके विरुद्ध समाजको शिकायतकी कोई गुंजाइश नहीं, ४४१; –को पत्र, ४४०–४१; –में प्रकाशित मिस्रमें ब्रिटिश सैनिकोंके कार्यका विवरण, ३९१
जौहरी, उमर हाजी आमद, *देखिए* झवेरी, उमर हाजी आमद

झ

झवेरी, अब्दुल्ला हाजी आमद, २९९
झवेरी, उमर हाजी आमद, १५, १९–२०, १००, २०८, २२४, २३०, २३३, २३६–३७, २६७, २७१, २९९, ३०५, ३१४, ३५८–५९, ३७३, ३८८, ४०५, ४५५, ४७९; –और दादा उस्मान, ४०; –को पत्र, १५, २०
झवेरी, रेवाशंकर, –को पत्र, २३, ३४५
झवेरी, हाजी आमद हाजी अबूबकर, ४०६
झवेरी, हाजी इस्माइल हाजी अबूबकर आमद, २१; –को पत्र, ४०६

ट

टाइम्स ऑफ नेटाल, १८, १८९, २५३, २७६, ३०७, ३५७
टाइलर, वॉट, ४७५; –और उसकी टोली, ४८९
'टाइलर, हैम्डन और बनियन', ४८८–८९
टाउन क्लार्क, –को पत्र, १५, १९८; –द्वारा अब्दुल गनी और पोलकको पत्र, ३६०
टॉड, २४५
टॉलस्टॉय, काउंट, ५९–६०, १७५; –की मान्यताएँ, ५९–६०
टॉलस्टॉय सेंटिनरी एडिशन १७५ *पा० टि०*
टिमोल, आई० बी०, ३६९
टुकड़ी नायक, –को पत्र, ३६८
टुगेला घाटी, ३८०, ३८६
टेरेनो, ६८

टोंगाट, ९३, २१७
टोवियानस्की, ४७४
ट्रान्सवाल, –आनेवाले भारतीयोंको महत्त्वपूर्ण सूचना, ३१; –और अनुमतिपत्र, ३३; –और ऑरेंज रिवर उपनिवेशका नया विधान, ३२३; –और ऑरेंज रिवर उपनिवेशके लिए नया शासन-विधान, २०७; –और ऑरेंज रिवर उपनिवेशको स्वायत्त शासन देनेका प्रभाव २०९; –और ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें अनोखी स्थिति, ३५४; –और ऑरेंज रिवर उपनिवेशमें ब्रिटिश भारतीयोंके सम्बन्धमें वक्तव्य, २०७–८; –और नेटाल, ३९२; –का कानून, ४६८–७०; –का नया कायदा, ४२५; –का नया विधेयक, ४४२; –का ब्रिटिश भारतीय संघ, १६४; –का संविधान, २६२; –की १८९५में भारतीय आबादी, ८०; –की खानें, ९; –की खानोंके लिए भारतीय मजदूर, २६३; –की नगर-परिषदें और नगरपालिका कानून संशोधन अध्यादेश, ८४; –की नगरपालिकाएँ, १२; –की विराट सभा, ४५१; –के अंग्रेजी राज्यकी स्थितिका रूसकी स्थितिसे मिलान, ४२४; –के अनुमतिपत्र, १६९, २९४, ३८४–८५; –के उच्च न्यायालयमें परीक्षात्मक मुकदमा, ३२४; –के एशियाई अनुमतिपत्र विभागकी ज्यादतियोंपर रोक, ३७०; –के गोरे अधिवासियोंका आन्दोलन, २४१; –के नये संविधानमें भारतीयोंकी स्थिति, ३९२; –के ब्रिटिश भारतीय, १९६, २१०–१२; –के ब्रिटिश भारतीय और श्री ब्रॉड्रिक, २; –के ब्रिटिश भारतीय समाजकी प्रार्थना अस्वीकृत होनेपर, ४३४; –के ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति १८८५के कानूनके अन्तर्गत, ४३४; –के ब्रिटिश भारतीयों द्वारा सम्राट्को अभिनन्दन-तार, १३३; –के भारतीय और अनुमतिपत्र, ३१, २०१–२; –के भारतीयोंका कर्तव्य, ४७४–७५; –के भारतीयोंको अनुमतिपत्रके सम्बन्धमें सूचना, १४२; –के भारतीयों द्वारा विरोध, ४४८–४९; –के भारतीयोंपर निर्योग्यताएँ, २४६–४७; –के लिए उत्तरदायी शासन, २३९–४०, २१५; –के लेफ्टिनेंट गवर्नरको पत्र, ४३९; –को नया संविधान देनेका प्रस्ताव, ३९१; –में अनुमतिपत्र, ३३; –में अनुमतिपत्र-सम्बन्धी जुल्म, २६५; –में अनुमतिपत्र-सम्बन्धी विनियम, ८०; –में एशियाई कानून, ४३५; –में एशियाई *बाजार*, २७–२८; –में कानून बनानेकी सरगरमी, ८४–८६; –में जमीनका कानून, २७८–७९, –में नकली अनुमतिपत्र, ४२६; –में ब्रिटिश भारतीय समाजकी कठिनाई, ३१९; –में ब्रिटिश भारतीयोंकी स्थिति, २८३; –में भारतीय वयस्क पुरुषोंकी सख्या, ५८; –में भारतीय वयस्क पुरुषोंकी सख्याके समर्थनमें कुछ सबूत, ७३–७४; –में भारतीय स्त्रियोंकी मुसीबतें, ४५०; –में भारतीय होटल, २९; –में भारतीयोंकी स्थिति, ४२९; –में भारतीयोंके विरुद्ध पूर्वग्रह, १६४; –में भारतीयोंको सहायकोंकी आवश्यकता और भारत, ११६; –में वतनियोंको जमीनका अधिकार, ४३; –में शान्ति-रक्षा अध्यादेशके अन्तर्गत भारतीयोंका प्रवेश वर्जित, २८४; –में सरकारसे न्याय पाना भारतीयोंके लिए कठिन, ३७१; –वापस आनेके लिए दूसरा अनुमतिपत्र जारी करना जरूरी, ३७; –से भारतीयोंको बलपूर्वक निकाल देनेका आन्दोलन, ४४८
'ट्रान्सवाल अनुमतिपत्र अध्यादेश', २८८–८९, ४४९–५०, ४६५
ट्रान्सवाल कानून, –और नेटाल कानून, २५७
ट्रान्सवाल *गवर्नमेन्ट गजट*, ३३, ३८८; –में अध्यादेशोंकी सूची, ८४; –में एक अध्यादेशका मसविदा, २७; –में एक नया उपनियम प्रकाशित, १६७; –में प्रकाशित १९०६ का क्रीडडॉर्प बाड़ा अध्यादेश, ४७६; –में विधेयक प्रकाशित, २९; –में सूचना, ३५१
ट्रान्सवाल घुड़सवार रायफल टुकड़ी, ३८८
ट्रान्सवाल प्रगतिशील संघ, ७७
ट्रान्सवाल लीडर, २८, १२५, १८०, २२०, २३३, ३४२, २७४, २७९, २८८, ३१६, ३९९, ४५७–५८, ४६१ पा० टि०, ४६३; –और हीडेलबर्गमें अरबोंके बीच हुई मारपीट, १७९; –के सम्पादकके सामने कुछ तथ्य, २००; –के सम्पादकसे कुछ प्रश्न, २००; –को जवाब, २००–१; –को पत्र, २७२, ३३५, ४४६–४७, ४५६–५७, ४६१
ट्रान्सवाल विधान-परिषद,–में आयोगकी नियुक्तिका प्रश्न, ४८; –में एशियाई अध्यादेश, ४२८
ट्रान्सवाल विधानसभा, ३२६; –के चालू अधिवेशनमें विवादास्पद कानून पेश न करनेका आश्वासन, ८४
ट्रान्सवाल सरकार, –को तार, ४७१
ट्रान्सवाल सर्वोच्च न्यायालय, –और शान्तिरक्षा अध्यादेश, ३८४; –की निष्पक्षता, ४३
ट्राफाल्गर, –की लड़ाई, १२२
ट्राम, –का मुकदमा, २१५, २२१, २३९, २६९, २८०, ३१६, ३२५, ३३२, ३४३; –के मामलेकी कहानी, ३६०
ट्रामगाड़ियाँ, –और पैदल पटरी, ३५०; –और भारतीय, २१६; ट्रामगाड़ियों, –के यातायात सम्बन्धी उपनियम, ३५१; –में भारतीयोंकी यात्रा, १५
ट्रामगाड़ी अभियोग, ३३५
ट्राम प्रणाली उपनियम, –और भारतीय २३९
ट्रामवे समिति, –के अध्यक्षसे सवाल, ३३३
ट्राम-सम्बन्धी कानून, –रद, ३३३
ट्राम-सम्बन्धी मामला, ३१६
ट्रेड ऐंड *ट्रान्सपोर्ट*, –सरकारद्वारा प्रस्तावित नागरिक कर्मचारियोंके वेतनमें कटौतीपर, १५९

ठ

ठाकरशी, –की मृत्यु, ४२०
ठाकुर, हरिलाल, २८६, ३१८

ड

डंकन, २४७, ३६०, ३९३, ३९६, ४००–१, ४१४, ४२५, ४४३, ४५१–५३; –का एशियाई विरोधी वक्तव्य, ३९२–९३; –का बयान, ३९४–९५; –का वादा, ३९९; –की नीति साम्राज्य सरकारकी नीतिके विरुद्ध, ४०१; –की हैरतमें डाल देनेवाली घोषणा, ४४८; –के बयानके खिलाफ जबरदस्त मोर्चा बाँधनेकी जरूरत, ४०२; –के वक्तव्यमें सूचित विधेयक, ३९७; –द्वारा १८८५ के कानून ३ में प्रस्तावित संशोधन, ४०३; –द्वारा एशियाइयोंको चार उपहार, ३९८; –से भारतीय शिष्टमण्डलकी मुलाकात, ४२१
डंडी, १२८, २०६ *पा० टि०*
डच, –और ब्रिटिश शासनोंमें पंजीकरण, ३९६; –और वतनियोंके हाथमें युद्धसे पूर्व जोहानिसबर्गका व्यापार, ७५; डचोंको नेटालके कानून नापसन्द, २३७
डचेतर गोरों, –को मताधिकार, २४१ *पा० टि०*
डर्बन, –के प्रमुख प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिकारीका उत्तर, ४६१; –के लोगोंका *नादरी* और *कूरलैंड* के खिलाफ प्रदर्शन, २३६
डर्बन नगर-परिषद, –और फेरीवाले, २९२; –और भारतीय, २९५; –की परवाना-समिति और फेरीवाले, २९५
'डर्बन निगमके भारतीय कर्मचारी', १६१
डर्बन बाढ़कोष, १९
डर्बन महिला मण्डल, ३६३
डर्बी, लॉर्ड, –को महारानी विक्टोरियाका पत्र, ३३६
डलहौजी, लॉर्ड, १०७; –और त्रावणकोर रियासत, १११
डाकर्टी, क्लार्क, २४८
'डॉक्टर बरनार्डो', ९७–९८
डामेल मदरसा, ३०९
डॉ० सेवेज, सार्जेंट, ३८०
डाह्या जोगी, १९
डिगका किला, १२९
डिल्क, सर चार्ल्स, १८४
डी विलियर्स, जे०,–को पत्र, ११
डुबे, ५९; –का भाषण, ५८
डेलागोआ-बे, १४१, १७०, २०८, २२४, २३४, २३८, २४८, २७२, २७९, २८४, २८८, ३१९–२०, ४८३; –के भारतीय, ४६६; –में भारतीयोंकी समिति, ४६६
डेली एक्सप्रेस, ६३–६४; –को पत्र, २१–२२
डेली न्यूज़, २६७
डेली मेल, १२१, ४४९; –नेटाल और ट्रान्सवालको एक करनेपर, ३९२
डेनियल, ३२५
डेवेंट्सडॉर्प, –और ब्रेडफोर्ड, १७८
डोघर्टी, –हिन्दुओंके श्मशानकी स्थितिपर, ४१०
डोलीवाहक दल, –के भारतीय, ३८७; –में शामिल भारतीयोंके नाम, ३७८
ड्यूक ऑफ कनॉट, २१८
ड्यूक ऑफ वेलिंग्डन, १४४ *पा० टि०*
ड्यूमा, –और शायर, १५३
ड्रे, कप्तान, ३६८

ढ

ढाका, ११९, १२६

त

तंजोर, १३९
'तम्बाकूसे हानियाँ', ३०८
तार,– *इंडिया*को, ४१८; –उपनिवेश-मन्त्रीको, ४२७, ४७६; –एशियाई पंजीयकको, ४५६; –ट्रान्सवाल सरकारको, ४७१; –भारतके वाइसरायको, ४२८; –सम्राट्को, १३३; –सर आर्थर लालीको, १४६
तिलक (लोकमान्य बाल गंगाधर), ४५४
तीन, –पौंडका वार्षिक कर, १४६; –पौंडी पंजीकरण, ३९६; –पौंडी शुल्क, ३९८
तीसरी रियायत, ४०१
तीसरे प्रस्ताव, –की उपयोगिता, ४८८
तुर्क सरकार, –और ब्रिटिश सरकारके बीच कडवाहट, ३१२
तुर्की, –ब्रिटेन और मिस्र, ३१२
तैयब, आमद, ३८८
तैयब, ई० ए०, ३६९
तैयबजी, बदरुद्दीन, १४९–५०; –राष्ट्रीय कांग्रेसके संस्थापक, ४४७; –की वक्तृत्व शक्ति और कानूनी ज्ञान, १४६; –के कुटुम्बके प्रति समवेदना, ४४८
तैयब, सेठ, ४४–४५
तैयब हाजी खान मुहम्मद ऐंड कम्पनी, ३९; –को पत्र, ४४–४५
तैयब, हासिम, १००
तोजो, १२१, १४३
त्रावणकोर, ११०–१२; –और कोचीनमें व्यापारिक समझौता, १११; –और राजा टी० माधवराव, १११; –और लॉर्ड डलहौजी, १११
त्रीकमलाल ब्रदर्स, ११३
त्र्यम्बकजी, दीवान, १४५

थ

थॉरल्ड, १४०
थियोसॉफिकल सोसाइटी, २६५
थ्रिम्स पोस्ट, ३८०–८१, ३८३

द

दक्षिण आफ्रिका, –और बम्बईके बीच चलनेवाले जहाज, ७४, ८०; –की व्यवस्था, ३९२; –के नौजवान भारतीयोंसे विनय, ३०५–६; –के भारतीय, ३०२; –के भारतीय मामलोंका पर्यवेक्षण, १७६; –के भारतीयोंमें एकताका अभाव, ३१३; –के शिक्षित भारतीय, युवकोंका कर्तव्य, १७२; –के सार्वजनिक मण्डलोंमें एशियाई सवाल, ४८३; –में कठिन समय, ४०५; –में दूकानबन्दी आन्दोलन, ३२८; –में ब्रिटिश भारतीय, २०७–८; –में भारतीयोंकी शिक्षाको निरुत्साहित करनेका प्रयत्न, ९४; –में भारतीयोंकी स्थितिको सुधारनेका प्रमुख उपाय स्वावलम्बन, १८३; –में भारतीयोंके अस्तित्वकी रक्षा, ४३१; –में व्यापारिक मन्दी, १०२
दक्षिण आफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास, ३९ पा० टि०
दक्षिण आफ्रिकाना सत्याग्रहनो इतिहास, ४३१
दक्षिण आफ्रिकी संघ, ४९, ३२३ पा० टि०
दत्त, रमेशचन्द्र, –दीवानके पदपर, ६७
द न्यू साइन्स ऑफ हीलिंग ऑर द डाक्ट्रीन ऑफ द वननेस ऑफ ऑल द डिज़ीज़ेस, २२५ पा० टि०
दमिश्क, ३१२ पा० टि०
दयालजी, वी० ११३
दाउद, शेख, –का पंजीकरण, ३९४
दादा अब्दुल्ला ऐंड कम्पनी, ३६९
दादा उस्मान, –की अपील, १२७–२८
दादा, मियाँ शेख, ३७८
दारूवाला, २१५, २२१
'दावानल', ४८३–८४
दिल्ली, ९९
'दुःखद प्रसंग', १२५–२६
दूकानदार, –छोटे व्यापारी या फेरीवाले, २१
दूकानबन्दी कानून, ३२८, ३४१; –और एशियाई व्यापार, ३०४
देसाई, ९३
देसाई, जी० ए०, ११३
देसाई, मणिलाल, ४५४
दोगले (हाफ कास्ट) और काफिर, ४२९
दो ज्ञात संदर्भ, –के बदले दो यूरोपीय संदर्भ, ५७
दो यूरोपीय गवाह, –और अनुमतिपत्र, ८७
दो सुझाव, १५५–५६
दोहरे प्रतिबन्धों, –से भारतीयोंका मुकाबला, २५७
'द्वारकाकी छाप' वाला कायदा, ४५८

ध

धारासभा, –में एशियाइयोंकी चर्चा, ३९२
धोरी भाई, २७३

न

नंडी, डॉ० एडवर्ड, ४४५; –का पत्र, ४६० पा० टि०; –के दो प्रश्न, ४४५ पा० टि०; –को पत्र, ४४५
नई मस्जिद, –जोहानिसबर्गमें, २१६
नगर-निगम (डर्बन), –और भारतीय कर्मचारी, १६१
नगर-निगम संग्राहक विधेयक (म्युनिसिपल कॉरपोरेशन्स कन्सोलिडेशन बिल), ३७७
नगर-परिषद, २९; –का अनीतिपूर्ण तरीका, ३३५, ३४३; –की बैठकमें प्रस्तावित संशोधन, ३५१; –की बैठकमें भारतीयों एवं वतनियोंका वेतन कम करनेका प्रस्ताव, १५९; –की समिति द्वारा नये ट्राम-कानूनका निर्माण, ३६०; –को पृथक् एशियाई बाजार स्थापित करनेका अधिकार, ८४; –द्वारा ट्रामके नियम वापस, ३४३
नगरपालिका, –के उपनियम, ५६; –के नये नियम, ३४४
नगरपालिका-कानून संग्राहक विधेयक (म्यूनिसिपल लॉज कन्सोलिडेशन बिल), १७६
नगरपालिका-कानून संशोधन अध्यादेश, –और ट्रान्सवालकी नगर-परिषदें, ८४
नगरपालिका-परिषद, –और एशियाई बाजारोंपर नियन्त्रण, २७
नगरपालिका-मताधिकार, –और ब्रिटिश भारतीय, ३७७
नगरपालिका-संघ, –की बैठक, ३७७
नमक-कर, ५०, १०५; –और डॉ० हचिन्स, १०; –और भारत, १०
नया अध्यादेश, –और *स्टार*, ४४१
नया कानून, –और भारतीय, ४७०
नया ट्राम-कानून, –और नगर-परिषद द्वारा उसका निर्माण, ३६०
नया संविधान, –ट्रान्सवालके लिए प्रस्तावित, ३९१
'नया सानफ्रान्सिस्को', ३५७
'नये नगरपालिका कानूनके सम्बन्धमें दो शब्द', ४८३
नर्मदाशंकर, ४६९ पा० टि०, ४८२
नवाबखाँ, ४५५
नवीन एशियाई अध्यादेश, ४६२
नसरुल्लाखाँ, नवाबजादा १४९; –और हेली, १४९–५०
नाइटिंगेल, फ्लॉरेन्स, ६५; –द्वारा घायलोंकी सेवा, ६५
नाईका टंटा, २०६ पा० टि०

नागपुर, १४४
नागरिक निर्योग्यताएँ, ३५०
नागरिक सेवा कानून, –की धारा, ८३, २६२
नाजर, मनसुखलाल हीरालाल, ९०, ९२, १८२, १८७–८८; १९७, २०६, २२७, २३६, ३१७;–एक ऊँचे दर्जेके राजनीतिज्ञ, १८९; –भारतीयोंके सलाहकार, १८७; –योगी और विश्वप्रेमी हिन्दू, १८९; –का दक्षिण आफ्रिकामें सार्वजनिक कार्य, १८९; –का वंश परिचय, १८८;–की मृत्यु, १९०
नादरी, ७४, ८०, २३८; –और *कूरलैंड*, १८७; –और *कूरलैंड*से सम्बन्धित डर्बन प्रदर्शन, ७४
नानजी, शकूर,–का मामला, ३९४;–श्रीमती, ३७३
नानाभाई, एम० ई०, १००
नायकन, पूती, ३६६, ३७८
नायकर, मुतुस्वामी, –और श्री मुतुस्वामी ऐयर, १३९
नायडू, आर० के०, २७०
नायडू, एन० ए०, ११३
नायडू, सी० के० टी०, –का भाषण, ४५२
नायक्लीस, कुमारी, १९, १९७, २२३
नॉर्टन, अरडली, ६७
नॉर्टन, जे० ब्रूस, –राजा माधवरावपर, १११
नॉर्थ अमेरिकन रिव्यू, ६०
नॉर्थब्रुक, लॉर्ड, १८९
निगरानी समिति, –का प्रार्थनापत्र, ३२३
निजाम, १२४, १३०
निजी बस्ती, –की व्याख्या, १; निजी बस्तियों, –में परवानोंकी व्यवस्था (नेटाल), १
नियम, –अनुमतिपत्र सम्बन्धी, १२२
नियुक्ति, –निरीक्षण अधिकारीकी, ३८९
निरंकुश सत्ता, –और मानव स्वभाव, ४२२
'निवास' शब्द, –की व्याख्या, १६
निवेदनपत्र, –लॉर्ड सेल्बोर्नको, २१५
निवेन, मैकी, २११
निषेधार्थक शुल्क, –अन्यायपूर्ण, २८१
निशान, –अंगूठेका, ३५२
नील, –की लड़ाई, १२२
नीवेन, –यूनियाके मामलेपर, ४६८
नेगापत्तम्, १३९
नेटाल, –और ट्रान्सवाल, ३३२; –का चेचक अधिनियम, ३४१; –का प्रवासी अधिनियम, १३६; –का भूमि विधेयक, ३३७; –का वतनी आन्दोलन, २४३; –का विद्रोह, २९१-९२, ३५७; –का विद्रोह और नेटालको मदद, ३०७; –का शीघ्र दूकानबन्दी अधिनियम, २५०–५१; –की कुछ जायदादोंमें गिरमिटिया भारतीयोंकी दशाके बारेमें आशंका, १२५; –की पाठशालाएँ, ८८; –की विधान-परिषद द्वारा वतनियोंपर कर लगानेका विधेयक अस्वीकृत, ४३; –की शैक्षणिक परीक्षा, २८४; –के कानून डच लोगोंको नापसंद, २३७; –के काफिरोंपर मकान-कर, ४७५; –के गिरमिटिया भारतीय, ३४–३५; –के नये कानून, ४३; –के भारतीय विद्यार्थियोंके लिए कुछ हिदायतें, ८८; –के भारतीय समाजको अधिक सतानेवाले दो कानून, ३६३; –के राज्यकर्ताओंके त्यागपत्र, २७७; –के लिए प्रवासी अधिनियमके समान कानून, ४८; –के विधेयक, १; –के सर्वोच्च न्यायालयमें एक महत्त्वपूर्ण मुकदमा, ३७४; –में अधिवासी पास आदिके नये नियम, २३८–३९; –में अध्ययनके लिए कुछ मनोरंजक समस्याएँ, १०४; –में उद्योगोंको प्रोत्साहन देनेका आन्दोलन, ८७; –में गिरमिटिया मजदूर भेजना बन्द रखनेका सुझाव, १८४; –में भारतीय आबादी, २४३; –में भारतीयोंकी स्थिति, ३६३–६६; –में भारतीयोंके विरुद्ध सख्त कानून, ८०; –में मकान-कर १७–१८; –से गिरमिटिया भारतीयोंका बड़ी संख्यामें आगमन, १०१
नेटाल ऐडवर्टाईज़र, २६२, ३०४, ३२१; –के सुझाव, २५८–५९
नेटाल कानून, और ट्रान्सवाल कानून, २५७
नेटाल गवर्नमेंट गज़ट, २१२, २३४; –और मकान-कर सम्बन्धी विधेयक, १७; –में प्रकाशित नियमावली, २३८; –में प्रकाशित सूचना, १५०, २२९
नेटाल गवर्नमेंट रेलवे, –एक शिकायत, ३३७; –और भारतीय, १७४; –के जनरल मैनेजर, १९१
नेटाल जेल आयोग, –और गिरमिटिया भारतीय, १७७
नेटाल दूकान कर्मचारी संघ, ३०४
नेटाल दूकान-कानून, ३०४–५
नेटाल नागरिक सेना, ३८६–८७
नेटाल नागरिक सैनिक दल, ३५८–५९
नेटाल परवाना अधिनियम, –तथा कानून ३, १८८५, २८५
नेटाल प्रवासी अधिनियम ७४, १४७ *पा० टि०*, १६२
नेटाल भारतीय-आहत-सहायक दल, १८९
नेटाल भारतीय कांग्रेस, २१६–१७, २२३, २२७, २३४, २३६–३८, २७१, २९७, ३०१–३, ३७१, ३७८, ३८८; –और आहत-सहायक दल, ३५८; –का डोली-वाहक दल बनानेका उद्देश्य, ३८६; –की दिसा सरकार द्वारा मंजूर, ३५९; –की भारतीय आहत-सहायक दल-सम्बन्धी दिसा, ३५९; –की वेतन देनेकी माँग सरकार द्वारा स्वीकार, ३७३; –की समिति, २२९ –द्वारा भारतीय डोलीवाहक दलके स्वागतके उपलक्ष्में समारोह आयोजित, ३२७; –में फेरफार, २३६
नेटाल भूमि विधेयक, २११
नेटाल मताधिकार अधिनियम (नेटाल फ्रैंचाइज ऐक्ट), १५५

नेटाल मर्क्युरी, १२५, २९५, ३६३ पा० टि०, ४४७ पा० टि०, ४५७ पा० टि०, ४६३; –और प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम सम्बन्धी पत्र-व्यवहार, १३६; –को भेंट, ३०२; –द्वारा पूनियाके मामलेका स्पष्टीकरण, ४४६ पा० टि० –शीघ्र दूकानबन्दी अधिनियमपर, २५०

नेटाल विक्रेता परवाना अधिनियम, २३१

नेटाल विटनेस, १४०, २७६, २८७, ३१२; –भारतीय समस्यापर, २४३; –का रुख, २५०; –की पूर्वग्रहपूर्ण दृष्टि, २५१; –द्वारा भारतीयोंको स्वयं-सैनिक बनानेका समर्थन, १६०

नेटाल विधान सभा, –में रैथमनकी माँग, ३४१

नेटाल संसद्, –द्वारा पास किया गया नगर-निगम सवटन विधेयक, ४०४

नेटाल सरकार, –की चेतावनी, परवाना अधिकारियोंको, ३६३; –द्वारा नियुक्त आयोगकी रिपोर्ट, ११४; –द्वारा नेटाल कांग्रेसकी वेतन देनेकी माँग स्वीकृत, ३७३; –द्वारा नेटाल भारतीय कांग्रेसकी दिलासा मंजूर, ३५९; –द्वारा २० आदमियोंका भारतीय स्वयंसेवक दल स्वीकार, ३७१; –से अनुरोध, २३४

नेपल्स, २९६

नेपाल, –में, सर लॉरेंस, १०७

नेपियर, लॉर्ड, १११

नेपोलियन, –और नेल्सन, १२२

नेल्सन, ७२, ११७, १२२–२३, १४३; –और नेपोलियन, १२२: –की निर्भयता १२२; –की मृत्यु, १२१

'नेल्सन शताब्दी महोत्सव : एक सबक', ११७

नैरोबी, ३०६

नोमूरा, २६५, २७९, २८८; –और मंगाकी मुसीबतें, ३९८; –और मंगाके मामले, २८९; –का अनुमतिपत्र और उच्चायुक्त, २८९; –को अनुमतिपत्र देनेमें विलम्ब, २३३; –से लीडरकी क्षमा याचना, २७२

नोर्सडीप, ६४

नौकरों, –का पंजीयन, ७८; –को कैसे रखना चाहिए, २६७

नौरोजी, दादाभाई, १६५, १६८–६९, १७३, १८८–८९, २१४, ३५७, ३७७, ४१७; –भारतके 'पितामह', ९६, १३४; –भारतीयोंके हितोंके प्रति जागरूक, १९६; –का ध्येय केवल भारत-सेवा, ४१३; –की जयन्ती, ४२१; –की ८२वीं वर्षगाँठ, ४१३; –को बधाई, ४२२; –को बधाईका तार, ४२१; –को बधाईके सन्देश, ४२४; –को पत्र, २१४, २४९–५०, ३२६, ३६१–६२, ३८५–८६, ३९५–९७, ४०३

न्याय, –का दुर्ग, २५९; –की विजय, ३७०

न्याय-विभागकी निष्पक्षता, ३५५

न्यूकैसल नगर, ३२४; –का परवाना अधिकारी और भारतीय, ३६३; –की एक राजनीतिक सभामें हुए प्रश्नोत्तर, १४०

न्यूगेट, ४८

न्यूजीलैंड, –के एक गोरे द्वारा एक चीनीकी हत्या, १६२

न्यूटाउन, १९५

न्यूमन, डॉक्टर, ३१४

न्यूयार्क, ३५, ६१

न्यूयार्क म्यूचुअल लाइफ इन्श्योरेंस सोसाइटी, ३२

न्यू सोप मैन्युफेक्चरिंग कम्पनी, २५५

प

पंजाब, १०७, १२९, १३४

पंजाब केसरी, १३४ पा० टि०

पंजीकरण, –ब्रिटिश और डच शासनोंमें, ३९६

पंजीयक, –का उत्तर, ४५६; –को तार, ४५६

पंजीयन, –एवं अनुमतिपत्र, और ब्रिटिश भारतीय स्त्रियाँ, १५७

पंजीयन अध्यादेश, ४४८

पंजीयन कानून, ४००

पंजीयन शुल्क, ३५०

पचीस पौंडी कर, ४४१

पटेल, २२७

पटेल, इस्माइल, ३३४

पटेल, ई० एम०, १००, ३१४

पटेल, जे० ए०, ३४८

पटेल, मूलजी, ११३

पण्डित, वसन्त, ९३

पत्नियोंके पास, २७१

पत्र, –अखबारोंको, ४४४–४५; –अब्दुल कादिरको, ४०; अब्दुल रहमानको, ४६–४७; –अब्दुल हकको, ३८; –अब्दुल हक व कैखुसरूको, ७, ३७; –उच्चायुक्तके सचिवको, ६–७, १७१, १८१–८२; –उपनिवेश सचिवको, १२, १९२, २२९–३०, २५८, २७१, ३०२, ४११–१३, ४२७; –उमर हाजी आमदको, १५, २०, ३६;– एक पत्र-संवाददाताका ३३७; –ए० जे० बीनको, २२५–२६; –कार्यवाहक मुख्य यातायात प्रबन्धकको, १९९; –कुमारी विसिक्सको, ३६; –कैखुसरू और अब्दुल हकको, ७, ३७; –कैप्टेन फाउलको, २५; –गवर्नरके निजी सचिवको, ५६–५७; –गो० कृ० गोखलेको, ३७०; –छगनलाल गांधीको, १९, ८१–८२, ८२–८३, ८३–८४, ९०–९१, ९१–९२, ९२–९३, ९३, ९९, १०८, १३१–३२, १७०, १९७–९८, २०३–४, २०५, २०६, २०८, २२२–२३; २२३–२४, २२७–२८, २२८–२९, २७०, २७३–७४, २८१, २८२, २८६, ३१०, ३१७–१८, ४१७, ४१९–२०; –जालभाई व सोराबजी मदर्सको, १३; –जे० डी विलियर्सको, ११; –टाउन क्लार्कको, १५, १९४, १९८; –टुकड़ी नायकको, ३६८; –ट्रान्सवालके लेफ्टिनेंट गवर्नरको, ४३९; –ट्रान्सवाल लीडरको,

३३५–३६; –डॉ० एडवर्ड नंडीको, ४४५, ४६०–६१; –डी० सी० मैल्कमको, ४६०; डेली ऐक्सप्रेस को, २१–२२; –तैयब हाजी खान मुहम्मदको, ३९; –तैयब हाजी खान मुहम्मद ऍड कम्पनीको, ४४; –दादा उस्मानको, १०, ३५; –दादाभाई नौरोजीको, २१४, २४९–५०, ३२६, ३६१–६२, ३८५–८६, ३९५–९७, ४०३; –पर्क्स लिमिटेडको, ४१; –पारसी फावसजीको, ११; –प्रधान चिकित्साधिकारीको, ३५९, ३८६–८७;–प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिकारीको, ४५७-५८; –बीमा कम्पनीके एजेंटको, ३२; –म० टी० नाजरको, १८२; –मुख्य अनुमतिपत्र-सचिवको, ३७–३८, ४६, ५७–५८; –मेवराज व मूडलेको, २४; –रविशंकर भट्टको, २३–२४;–रामदास गांधीको, ४८४; –रेवाशंकर झवेरीको, २३; –रैंड डेली मेल को, ३९७–९९; –लक्ष्मीदास गांधीको, ३४८–४५; –लॉर्ड सेल्बोर्नको, ३१९; –लीडरको, २७२, ४४६–४७, ४५६–५७, ४६१; –लेफ्टिनेंट गवर्नरके निजी सचिवको, ७३–७५; –विधानसभाके अध्यक्षको, ४३८; –विलियम वेडरबर्नको, २८३–८६, ३८५;–शिक्षा मंत्रीको, ६१–६२;–स्टारको, ४४०–४१; –हाइन व कारूथर्सको, १४; –हाजी इस्माइल हाजी अबूबकरको, २०, ४०५–६; –हाजी हबीबको, ३९, ४५

पद्मयाची, एम० ए०, ११३

परमानन्द, प्रोफेसर, २३, ५१, ८१ पा० टि०, १३५ पा० टि०, २३१–३३; –का स्वागत, १७७; –को मानपत्र, ११३

परवाना, –न पानेवालोंके लिए कुछ हिदायतें, ११८–१९; –सम्बन्धी परीक्षात्मक मुकदमा, ३७१; –सम्बन्धी प्रतिबन्ध केवल भारतीयोंपर, २०७; –सम्बन्धी मुकदमेकी अपील, २८७; –सम्बन्धी विज्ञप्ति, २९०–९१; परवानेका एक और मामला, १०८; परवानोंकी व्यवस्था, निजी बस्तियोंमें, १; –के अधिकारी होनेकी शर्तें ठेलेवालों व फेरीवालोंके लिए, ८५; –के कानूनमें संशोधनके लिए अध्यादेश, १७८; –के दलालोंका गिरोह, १५२

परवाना अधिकारी, ११८; –और भारतीय दूकानदार, २८७; –का निर्णय और अपील निकाय, २८५; –की दयापर प्रत्येक भारतीय, २३२; –द्वारा परवाना देनेसे इनकार, १२८; –द्वारा परवाना नया करनेसे इनकार करनेके कारण २५७; –द्वारा परवाना स्थानान्तरण दर्ज करनेसे इनकार, ७६

परवाना अधिनियम, २९१

परवाना कार्यालय, –और उनमें आनेवाली कठिनाइयाँ, ३९४

परवाना-निकाय, –और भारतीय दूकानदारकी अपील, २८७

परवाना विधेयक, –जूलूलैंडके लिए, १

परांजपे, १७२

परामर्शदाता-मण्डल, २३२

परीक्षात्मक मुकदमा, १६६, २१५, २३१, २४७

पर्क्स लिमिटेड, –को पत्र, ४१

पर्यवेक्षण, १७६–७७

पाँच शिलिंग, –का परवाना, १७८

पॉर्टर, ३६८

पॉचेफस्ट्रम, ४६, ७१, ७७, १००, १५१, १५४, १७७, पा० टि०, ३१६, ३३४, ३५३, ४५३, ४६५, ४६७, ४७८; –और क्लार्क्सडॉर्प, ३२९; –का भारतीय संघ, १०० पा० टि०; –की दौरा-अदालतके सामने एक महत्त्वपूर्ण मुकदमा, २५९; –के ब्रिटिश भारतीयोंके विरुद्ध अभियोग, १००; –के भारतीय व्यापारियोंकी सूची ब्रिटिश एजेंटको, १०१; –के भारतीय व्यापारी, ३२८; –के भारतीयोंका वक्तव्य, १०१–२; –के भारतीयोंकी शिकायतें, ३२९

पॉचेफस्ट्रम पहरेदार संघ, १०० पा० टि०

पॉचेफस्ट्रम बजट, ११६, २६०; –की टिप्पणीपर, ११५–१६

पामेर, एस० पी०, ११३

पानीपत, ९९

पायोनियर, –और पार्क रोड, ३२५

पारगेटर, ६८

पारसी (पारस), ९३

पारुक, ए० एम०, ३६९

पारेख, –का भाषण, ३२४

पार्क रोड, –और पायोनियर, ३२५

पार्क स्टेशन, ३२५

पार्सन, –द्वारा नवाबजादाकी सजा खारिज, १५०

पॉलकिंगहॉर्न, ३७३; –द्वारा प्रकाशित वार्षिक विवरण, ३४

पॉवेल, ११०; –और मुतुस्वामी ऐयर, १३९

पिंडारी, १४४

पिछला अनुभव–एक समतुल्य उदाहरण, ३५३

'पितामह', ४२३; –चिरजीवी हों, ४१३–१४

पियर्सन, कैप्टन, ३९२

पिल्ले, एन० बी०, ११३

पिल्ले, एम० एस०, ११३, १३२, १८२, २२६

पी० आदमकी पेढ़ी, ४७२

पीटरमैरित्सबर्ग, २७१, ३०२, ३१७ पा० टि०, ३५८–५९, ३८५

पीटर्सबर्ग, २१, ७४, ४३७, ४५५–५६

पीटर्सो, २२२

पी. डेविस ऍड सन्स, ३१७ पा० टि०

पीरखाँ, आर०, २२३

पीला भय, ३३८
पीली चमड़ी, –पर हमला, १६२
पुनर्विचारकी दरखास्त,–सर्वोच्च न्यायालय द्वारा खारिज,४४९
पुर्तगाली प्रजा, –और ब्रिटिश प्रजाजन, २७९, २८९
पुलिस अधिकारी, –और उसके बयान, ४५०
पुलिस सिपाही, –और उसकी गवाही, ४४४
पूना, १३४, १४४–४५, १७२
पूनिया, ४५६, ४५७ *पा० टि०*, ४६४; –का मामला, ४४४, ४५०; –के मामलेपर नॉविन, ४६८
'पूनिया काण्ड', ४६३–६४
पूर्व भारत सघ, १८४, १८९
पृथक् बस्तियाँ, –और भारतीयोंको वहाँ भेजनेका सुझाव, ४८३; पृथक् बस्तियोंमें गन्दगी, २८०
पेड्न, जॉर्ज, ८७
पेकमान, ६४
पेक्स, डॉ०, ११५; –का दावा, ११४; –की रिपोर्ट, ११४–१५; –की प्लेग-सम्बन्धी रिपोर्टकी कड़ी आलोचना, ११४–१५
पेरीक्लीज, १११
पेशवा, बाजीराव, १४५; –और एलफिन्स्टन, १४५
पेशावर, ७०
पैट्रीशिया, राजकुमारी, ११८
पैदल पटरी, –और ट्रामगाड़ियाँ, ३५०
पैलेस चेम्बर्स, २८३, ३८५
पोरबन्दर, १४, २०–२१, २०५, ४०६
पोर्ट आर्थर, ३३८
पोर्टर, डॉ०, ११४ *पा० टि०*, ११५, २६९, २८०
पोर्ट्स्मथ, ६३ *पा० टि०*
पोलक, १३१, ४१९; –और अब्दुल गनी ट्राममें, ३६०
प्रगतिशील दल (प्रोग्रेसिव पार्टी), २३९, ३२५, ३४७; –की घोषित नीति, ३५३
प्रजातन्त्रीय राज्य-विधान, –और रूसका नया संविधान, ५४
प्रतिकारके तरीके, –रूसियों और भारतीयोंके, ४२४
प्रतिनिधित्वहीन ब्रिटिश भारतीय, –और उनके न्यासी, ७६
प्रतिबन्धक अधिनियम, –के उद्देश्य, ८६
प्रतिबन्धकी लहर, २१२
प्रतिबन्धात्मक कानून, २२०
प्रधान चिकित्साधिकारी, –को पत्र, ३५९, ३८६–८७
प्रधान प्रतिबन्धक अधिकारी, –के पास बाजकी दरखास्त, १३७
प्रभुसिंह, –की सर जॉर्ज व्हाइट द्वारा प्रशंसा, १५१
प्रभुहरि, ३७८
प्रवासी, –की परिभाषा, २६४
प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिकारी, १३६, १४७; –को पत्र, ४५७–५८
प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिनियम, १३६; १४१, १४८, १५२, १५५, १६४, १७६, २०२, २१९, २२९, २३४, २४९, २८१, ३६५; –और केपके भारतीय, १६६; –और भारतीय, ३५४; –की प्रतिबन्धक धाराओंकी केप सरकार द्वारा गलत व्याख्या, १७७; –के अन्तर्गत ३ पौंडी वार्षिक कर, २७६; –के अन्तर्गत नियम, २८६; –के अन्तर्गत विज्ञप्ति, २३४; –के भारतीयोंपर अत्याचार, १३६; –के समान नेटालके लिए कानून, ४८
प्रवासी-प्रतिबन्धक विभाग, १३७
प्रशासन-विभाग, –और अध्यादेश, ४२२
प्रस्ताव, –भारतीयोंकी सेवाएँ समर्पित करनेका, ३०३
प्रस्तावित अध्यादेश, –ऑरेंज रिवर कालोनीके *गवर्नमेंट गजट* में, १८१; –का मंशा भारतीयोंका अपमान, ४१८
प्रस्तावित कानून, –उचित और न्याय्य व्यवहारकी मर्यादासे बहुत दूर, ३९७; –और सम्राट्की सरकार, ४४३; –पर डंकनका महत्त्वपूर्ण वक्तव्य, ३९९
प्रह्लाद, ३४५
प्राइस, –और भारतीय, ३१५
प्राच्य विद्या-परिषद (ओरिएंटल काग्रेस), १८८
प्रमाणपत्र, –और पासोंपर लगाया गया शुल्क, २४९
प्रार्थनापत्र, –एशियाई विरोधी पहरेदार संघका पॉचेफस्ट्रूमके भारतीयोंके सम्बन्धमें, १०१; –'कलर्ड पीपल्'का, २५३–५४; –परवानेके सम्बन्धमें, २८९–९०; –रंगदार लोगोंका, २५१–५२; –लॉर्ड एलगिनको, २५५–५६, ४०४–५, ४७६–७८
प्रिटोरिया, २८, ३९, ४३, ४५, ७३, १५४, १९२–९३, १९७–९८, २०२, २११, २३१, २४७, २४९, २५३, २६९, २७४, २७८, २८०, २८५, ३१०, ३१५–१६, ३२५, ३३४, ३४२–४३, ३५०, ३८८, ३९४–९५, ४०५, ४२१, ४३७, ४५१, ४५३–५४, ४५८, ४६५; –और पॉचेफस्ट्रूममें २१ साला पट्टा, ३५०; –के अधिकारी एशियाई विरोधी दलको खुश करनेकी फिक्रमें, २९४
प्रिटोरिया-नगरपालिका, –का संघर्ष और एशियाई *बाजार*-सम्बन्धी कानून, ८४
प्रिटोरिया समिति, १५० *पा० टि०*, ३६१
प्रेसके लिए ध्यानमें रखने लायक कुछ बातें, २०६
प्रेसीडेन्सी कॉलेज, ११०
प्लेग, –एक वार्षिक दूत, १०५; –सम्बन्धी लेख और भारतीय, ११९–२०; –से बचनेके उपाय, २५५
प्लेस, –का दण्ड देनेका नया तरीका, ६४

फ

'फर्ककी हिमायत', ४०९
फर्ग्युसन कॉलेज, १३४, १६८, १७२
'फसल', १७१–७३

फॉउल, कप्तान हैमिल्टन, ४१२; –को पत्र, २५
फॉक्स, न्यायमूर्ति, –द्वारा श्री अबूबकरके वारिसोंकी अपील रद्द, २७८
फॉक्सबोर्न, एच० आर०, ८, ९
फॉर्ब्स, २४५, ४८१
फार्मोसा, ३३
फारस, –की मित्र-पूजा, ५३
फिलिप्स, ४२
फीथम, ३३२–३३
फीनिक्स, १३, ५८, ८४, ९३, १०८, ११९, १३१, १७०, २०६, २०९, २२५, २७०, २७४, २८१–८२, २८६ पा० टि०, ३०९–१०, ३१७–१८
फील्ड स्ट्रीट, ९०, ९९
'फूट डालो और राज्य करो', १२६
फेरार, सर जॉर्ज, ४२, २३९, ३२८
फेरीवाले, –और डर्बनकी नगरपरिषद, २९२; –और डर्बन नगरपरिषदकी परवाना समिति, २५; फेरीवालोंपर खतरा, २९२
फैन्सी, ४७९
फोक्सरस्ट, ३१, ३३३, २८४, २९४, ३७४–७५, ३८४, ४०७, ४४४–४६, ४६३, ४६५, ४६७; –का प्रधान मजिस्टेट और अनुमतिपत्रका मुकदमा, ३७०; –के मजिस्ट्रेटका निर्णय, ४४९
फोर्डर, ३८७; –का धैर्य, ३८०
फोर्ड्सबर्ग, २१५, ३२५
फ्रांसीसी, –और महाराजा रणजीतसिंह १२९
फ्राइ, एलिजावेथ, ४८–४९, ५४, ६५, १२०
फ्राइहीड, १०, १०८, ११८, २५६–५७, २६६, २८५, २९०, ३६४; –के ब्रिटिश भारतीय और उनपर लागू होनेवाली निर्योग्यताएँ, ३६४; –को नेटालसे अलग करनेके लिए आन्दोलन, २३७; –में डंडोंकी पुनरावृत्ति, १२८
फ्राइहीड निकाय बनाम दादा उस्मान, १०९
फ्राइहीडवासी भारतीयका मामला, २८९
फ्रॉइहीड हेराल्ड, –दादा उस्मानकी अपीलपर, १२७
फ्रॉबेल सोसाइटी, ६६ पा० टि०
फ्रीडडॉर्प, ८५, २९८, ४७७
फ्रीडडॉर्प बाड़ा-अध्यादेश, –और ब्रिटिश भारतीय संघ, ४७६; –ट्रान्सवाल *गवर्नमेंट गज़ट* में प्रकाशित, ४७६
फ्रेनिखन (वेरिनिगिंग), ३४७
फ्रेनिखन (वेरिनिगिंग) सन्धि, ३४८
'फ्लॉरेन्स नाइटिंगेल', ६५–६६

ब

बंकिमचन्द्र, १६२; –का गीत सब राष्ट्रीय गीतोंसे मधुर, १६२
बंग-भंग, १२६, १७५ पा० टि०, २०९, २३७; –की लॉर्ड कर्जनकी कोशिश, ४७; –के मसलेपर सर मंचरजीका मतभेद, ९६, –के विरुद्ध आन्दोलन, ९७, १२६, १८३ पा० टि०
बंगला, १६३; –के विकासमें ईश्वरचन्द्रका योग, ७१
बंगाल, ११९, १२७, १३८, १६२, १७५ पा० टि०, २३७; –का बहिष्कार-आन्दोलन, ९७; –में विलायती मालका बहिष्कार, ७०; –में वीर पुरुषोंकी परम्परा, ७०
बंगाल तोपची पल्टन, १०६
बंगाल विभाजन, *देखिए* बंग-भंग
'बंगाली,' ६७; –और असमी बिलकुल भिन्न, ४७
बड़ौदा, ९४–९५, ११२; –के महाराजा गायकवाड़ और उनके दीवान, ६७
बधाई, –दादाभाई नौरोजीको, ४२२
बनर्जी, उमेशचन्द्र, १६८ पा० टि०, ४०८, ४४७; –भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेसके जन्मदाताओंमें से एक, ४०८
बनर्जी, बाबू कालीचरण, ६७
बनर्जी, सर गुरुदास, ६७
बनारस, १४४, १८४; –के रेजीडेंट, १४४
बनियन, जॉन, ४५५ पा० टि०, ४७५, ४८९; –हैम्डन और टाइलर, ४८८–८९
बम्बई, २१, ११२, ११४–१५, १४९–५०, १८८, २४५, २५५, २७३, ३३४, ४४७, ४५२ पा० टि०, ४६६; –और एलफिन्स्टन, १४५; –और दक्षिण आफ्रिकाके बीच चलनेवाले जहाज, ७४, ८०; –में प्लेग, १२०
बम्बाटा, २४३ पा० टि०, ३०७; –पदच्युत, २९१; –का विद्रोह, २९१; –के नेतृत्वमें जूलुओंका विद्रोह, ३०१
बर्जेस, २४६; –द्वारा बन्दरगाहोंमें जाँच, ३९४
बर्डवुड, जॉर्ज, २६६
बर्डेट ऐंड कम्पनी, २८७, ३६४
बर्दवान, ७२
बरनार्डो, डॉक्टर, –अनाथोंके नाथ, ९७; –की दयालुता, ९८; –की मृत्यु, ९७–९८
बर्मा, १०६
बसूटोलैंड, २२२; –में भारतीयोंका बहिष्कार, ३४०
बस्ती, –के विनियम, ५६; बस्तियों, –में भारतीयोंको भेजना, ३२
बस्ती-उपनियम, ५६
बहरामपुर तहसील, १२४
बहिष्कार, ९७; –आन्दोलन, १२७
बाइट, –का वसीयतनामा, ३९०; –द्वारा अपनी सम्पत्तिका उदारतापूर्ण उपयोग करनेकी व्यवस्था, ३९०
बाइबिल, ५९

बाउकर, ३१५-१६; -और एक काला रेल यात्री, ३१५
बॉक्सवर्ग, ३५३
बाजार, -और बस्तियाँ, १५३-५४
बाजार-सूचना, १५४
बारवर्टन, ४२६
बारह बतनियों, -को मृत्यु दण्ड, २९१
बारूदी हथियार-कानून, -में संशोधन, ३६२
बाल्टिक बेड़े, -का रहस्य, ३३; -की कहानी, ३३
बिन्स, सर हेनरी, १७४, ३६३
बिसिक्स, कुमारी एडा, ३६ पा० टि०, २६५; -को पत्र, ३६
बिस्मार्क, प्रिन्स ओटो एडवर्ड लियोपोल्डवान, ११२ पा० टि०
बीन, ९२; १३१-३२, २०५, २२२, २२८, २७३; -को पत्र, २२५, २२६
बुलर, जनरल, १४०, १५१ पा० टि०, ३०१
बूथ, डॉ०, ५६ पा० टि०, ३२१
बेंटिक, लॉर्ड विलियम, १३०
बेडफोर्ड, ४८९
बेथनल-ग्रीन, २
बेथ्युन कॉलेज, ७१
बेन्सन, ३७४
बैटरवर्ग, सार्जेंट, २८७
बोअर, -तथा ब्रिटिश शासनोंके अन्तर्गत ट्रान्सवालमें भारतीयोंकी स्थितिका मिलान, ३४९; बोअरोंके भारतीय विरोधी विधानका इतिहास, ३४६
बोअर युद्ध, १४०, १५१ पा० टि०, २४१
बोअर लोगोंकी समिति, २३९
बोअर शासन,-से लिया गया कानून और एशियाई अध्यादेशका मसविदा, ४१८
बोअर सरकार, -और अंग्रेज सरकार, ४५३
बोकाम, -और मुतुस्वामी ऐयर, १३९
बोथा, जनरल, ९३,-की चीनियोंके खिलाफ शिकायत, ३३२; -द्वारा चीनी मजदूरोंके दुर्व्यवहारकी शिकायत, ३४१
बोधा, ९३
बोनापार्ट, नेपोलियन, -की विजय, १२२
बोमाया, ३७८
बोर्क, २८; -का प्रस्ताव, २३१
बोस्टन ट्रान्सक्रिप्ट, -लाला लाजपतरायपर १३५
ब्यूमॉट, एम०, -और मित्र धर्मानुयायी, ५३
ब्रह्मसमाज, ७० पा० टि०
ब्राउन बन्धु, ३६
ब्रॉड्रिक, जॉन, २-४, २५; -ब्रिटेन और भारतके बीच होनेवाले व्यापारपर, २६; -साम्राज्यकी सुरक्षामें भारत द्वारा दिये जानेवाले योगदानपर, २६; -का भारतीय राजस्व लेखेपर वक्तव्य, २६; -को लॉर्ड कर्जनका विचार पसंद, ४७
ब्रिटिश इंडियन स्टीम नेविगेशन कम्पनी, ७४
ब्रिटिश उपनिवेश, -और जापान, १४३
ब्रिटिश, -और रूसी शासनोंका अन्तर, ४२३
ब्रिटिश गियाना, -के गिरमिटिया भारतीय और आयोग, १२६
ब्रिटिश प्रजाजन, -और पुर्तगाली प्रजा, २७९, २८९
ब्रिटिश भारतीय, -और नगरपालिका मताधिकार, ३७७; -और रंगदार लोग, ४०९;-और शान्ति-रक्षा अध्यादेश, १५६;- ट्रान्सवालके अनुमतिपत्र अधिकारियोंकी सनकसे परेशान, २१३; -सम्राटकी प्रजामें सबसे निम्न, १३३; ब्रिटिश भारतीयों, -का दर्जा, १८४; -की ट्रान्सवालमें स्थिति, २८३; -की नागरिक स्वतंत्रता, ३९८; -की मसविदा रूप एशियाई अधिनियम संशोधनमें अध्यादेशके विरुद्ध आपत्ति, ४३३; -की समवेत सार्वजनिक सभा, ४३३; -की सार्वजनिक सभा, एम्पायर थियेटरमें, ४३९; -की स्थिति, ३९६; -के प्रति व्यवहारका प्रश्न, १८५; -के लिए एशियाई कानून संशोधन अध्यादेशका मसविदा अपमानजनक, ४११; -के साथ अन्याय करनेवाला प्रस्ताव, ३९६; -के साथ किये गये वादे और एशियाई अध्यादेशका मसविदा, ४१४; -के हितोंके संरक्षणके उपाय, ३४७; -को ब्रिटिश सरकारसे आशा, १०३; -की युद्धसे पहले जमीनकी मिल्कियत, ७५; -पर शुल्कके रूपमें अप्रत्यक्ष कर, ३६६; -से सम्बन्धित विधेयक, १
ब्रिटिश भारतीय अनुमतिपत्र, -और उनके सम्बन्धमें लुक-छिपकर जाँच, ३८९
ब्रिटिश भारतीय शिष्टमण्डल, -और लॉर्ड सेल्बोर्न, ४५०
ब्रिटिश भारतीय संघ, ७, १२, २२, ५७-५८, ७३, ७५, १५० पा०टि०, १५१-५३, १७१, १७७, १८२, १९३-९४, १९६, १९९, २०१, २१४, २२७, २८३, ३१५-१६, ३१९ पा० टि०, ३२०, ३२५, ३३१, ३३३, ३३५, ३४५, ३४८, ३७०, ३८५, ३९३-९६, ४००, ४०२, ४११, ४१३-१४, ४२८, ४३०, ४३७, ४३९-४३, ४६०, ४६२, ४७६, ४७८, ४८८; -ऑरेंज रिवर कालोनीके एशियाई-विरोधी कानूनोंपर, ८; -और फ्रीडडॉर्प बाड़ा अध्यादेश, ४७६; -और लॉर्ड सेल्बोर्न, १७८; -और लॉर्ड सेल्बोर्नके बीच पत्रव्यवहार, ७८; -और वर्ग विधानके सिद्धान्तका प्रश्न, १६५; -यूरोपीयोंकी आशंकाओंसे असहमत, १५८; -रंगदार लोगोंके सम्बन्धित कानूनोंपर, ६-७; -का आखिरी कदम, ३६१; -का आवेदनपत्र, १८६; -का कड़ा विरोधपत्र, ८०; -का शिष्टमण्डल, १०१; -का सुझाव, १९४; -की दादाभाई नौरोजीको बधाई, ४२२; -की माँग, ३४२; -की शिकायत, ३७१; -की समिति, ४२१; -की समितिकी बैठक, ३८८; -की सर आर्थर लालीको बधाई, १४६; -के कोषाध्यक्षका मुकदमा, ३३२; -के शान्ति-रक्षा अध्यादेश लागू

करनेके बारेमें कुछ सुझाव, १५७–५८; –को एशियाई अध्यादेशकी मंजूरीपर खेद, ४७१; –को लॉर्ड सेल्बोर्नका उत्तर, ७८, ३२२; –द्वारा आरोपका प्रतिवाद, ३९७; –द्वारा एशियाई *बाजारों* को नगरपालिका परिषदोंके नियंत्रणमें करनेके विचारका प्रतिवाद, २७; –द्वारा पेश किये गये सबूत, ८०
ब्रिटिश भारतीय समिति, १६, १४४, ३५६
ब्रिटिश भारतीय सार्वजनिक सभा, ४३८
ब्रिटिश मध्य आफ्रिका, –के सम्बन्धमें समाचार, ६८; –में मजदूरोंकी जरूरत, ६८
ब्रिटिश विज्ञान-प्रगति संघ (ब्रिटिश असोसिएशन फॉर द एडवांसमेंट ऑफ साइन्स), ४९
ब्रिटिश संघ, ५८; –एक सुझाव, ४९; –के सदस्यों द्वारा श्री डुबेको ६० पौंड भेंट, ५९
ब्रिटिश संविधान, १०९, १५६; –कमजोर, १२८
ब्रिटिश सरकार, –और जापान, १४३; –और तुर्क सरकारके बीच कड़वाहट, ३१२; –द्वारा मुकदमेमें भारतीयोंकी सहायता, १५४; –से ब्रिटिश भारतीयोंको आशा, १०३
ब्रिटिश साम्राज्य विज्ञान प्रगति संघ, ४९
ब्रिटेन, –और जापान, २१८; –तुर्की और मिस्र, ३१२; –का भारतके साथ व्यापार, २६; –की सफलताका रहस्य, ११७
ब्रिस्टो, २४८
ब्रैडफोर्ड, –और डैवेंट्सडॉर्प, १७८
ब्लूमफॉंटीन, २६८–६९, ३४०; –का सम्मेलन, २४१
ब्लेन, २३९, ३३२

भ

भगवद्‌गीता, १८९
भट्ट, रविशंकर, २४, २०६–७, ३८४; –को पत्र, २३–२४
भविष्यकी थाह, १८३
भाइमा, ४६५
भाईलाल, ३६६
भाभा, मुहम्मद सुलेमान, –का मुकदमा, ४०७, ४६७; –की सजा लेफ्टिनेंट गवर्नर द्वारा माफ, ४५०
भायात, आमद, ३७०, ३८८
भायात, इब्राहीम, २७०, ३७०–७१, ३७४, ४४९; –का मुकदमा, ३७४, ३८४; –के बचावमें दलीलें, ३७४; –के मामलेमें उठाया गया मुद्दा अनिर्णीत, ४४९; –के मामलेमें उठाये गये मुद्देपर सर्वोच्च न्यायालयका फैसला, ४४९
भारत, –और नमक-कर, १०; –और रूस, १३७–३८, ४२४–२५; –और श्री जॉन मॉर्ले, २३७; –भारतीयोंके लिए, ४०६–७; –सम्बन्धी संसद समिति (इंडियन पार्लमेंटरी कमिटी) के सदस्य, २६६; –का प्रबन्ध, ३२४; –का साम्राज्यकी सुरक्षामें योगदान, २६; –की प्रतिष्ठाकी सम्पूर्ण जिम्मेदारी दक्षिण आफ्रिकावासी भारतीयोंपर, ४२८; –की स्थितिपर, *रैंड डेली मेल* के विचार, ३३१; –के एक राष्ट्र बननेके लिए एक भाषा होना आवश्यक, ४०६; –के पितामह, ९६; –के वाइसरायको तार, ४२८; –को स्वराज्य, ३२४; –में अनिवार्य शिक्षा, ९४–९५; –में नमकपर कर, १०; –में प्रारम्भिक शिक्षापर अपर्याप्त ध्यान, ९४; –में बार-बार अकाल पड़नेका कारण, ३२४; –में युवराजकी यात्रा, ३४०
भारतीय, –अवसरका लाभ उठाएँ, ३७२; –और अभारतीय रंगदार समाज, २५१; –और उत्तरदायी शासन, २१८; –और एशियाई अधिनियम संशोधन अध्यादेश, ४३०; –और विवन, ४६८; –और गोरे व्यापारी, १०२; –और चीनी, ६९; –और जोहानिसबर्गकी नगर-परिषद, ३६०; –और ट्रामगाड़ियाँ, २१६; –और न्यू कैसिलका परवाना अधिकारी, ३६३; –और यहूदी, ३३०; –और वतनी विद्रोह, ३६२; –और सर हेनरी कॉटन, ३५७; –कब भारतीय नहीं होता, २७२; –ट्रान्सवालकी रेल-सेवाके उपयोगसे वंचित, २८५; –का खून, ३४४; –के लिए ट्रान्सवालमें सरकारसे न्याय पाना कठिन, ३७१; भारतीयों, –और रूसियोंके प्रतिकारके तरीके, ४२४; –का आव्रजन और शान्ति-रक्षा अध्यादेश, २८३; –का कर्तव्य, विद्रोहके समय, २९१–९२; –का दर्जा आदिम जातियोंसे भी नीचा, ४३३; –का दोहरे प्रतिबन्धोंसे मुकाबला, २५७; –का मितव्ययी स्वभाव, २५०; –की अनुमतिपत्र प्राप्त करनेमें कठिनाइयाँ, २१०; –की एशियाई विरोधी कानूनोंको रद कर देनेकी माँग, २१९, –की केपमें स्थिति, ३५४; –की गन्दगी, २९, ३२५, ३२९; –की गोरोंके साथ अनियन्त्रित प्रतिस्पर्धा, १०४; –की प्रतिनिधित्वहीनता, २१०; –की भावनाकी उपेक्षा, ३२२; –की मुसीबतें, ३०६; –की व्यक्तिगत जिम्मेदारी, ४३२; –शक्तिकी कसौटी, ३६२; –की शिकायतें, १४६; –की शिकायतोंकी जाँचके लिए आयोग, ४८; –की सूझबूझ, २८२–८३; –की सेवाएँ समर्पित करनेका प्रस्ताव, ३०३; –की स्थिति, ट्रान्सवालके नये संविधानमें, ३९२; –की स्थितिके सम्बन्धमें एल० ई० एन० के विचार, ३३१; –की हस्ती मिटाना खूनी कानूनका उद्देश्य, ४२८; –के अंगूठों और अंगुलियोंका निशान लेनेका आदेश, २९०; –के अनुमतिपत्र, २२२, ३२२–२३; –के आव्रजन-पर लगाये गये नियन्त्रण, २८३–८४; –के पुनः ट्रान्सवाल प्रवेशमें असंख्य कठिनाइयाँ, ३८९; –के बारेमें जिला सर्जनकी रिपोर्ट, १०१–२; –के लिए ऑरेंज रिवर कालोनीके द्वार बिलकुल बन्द, २१०; –के लिए नागरिक कर्तव्य दिखानेका शानदार अवसर, ३६२;

—के विरुद्ध अनुमतिपत्रके बारेमें नया कायदा, ३९४; —के साथ दुर्व्यवहार, बन्दरगाहमें, १४१; —के स्वामित्वसे सम्बन्धित कानून, २८५; —के हाथमें बन्दूक न देनेका धूर्ततापूर्ण सुझाव, ३२१; —को अनुमतिपत्र देनेके सम्बन्धमें बड़ा फेरफार, १६९; —को एक पुराने उपनिवेशीकी सलाह, ३५७; —एशियाई अधिनियम अस्वीकार, ४२१; —को ट्रान्सवालसे बलपूर्वक निकाल देनेका आन्दोलन, ४४८; —को ट्राममें बैठनेका हक, २३९; —को दुबारा पंजीयन न करानेकी सलाह, ४२९; —को नगरपालिका मताधिकारसे वंचित करना एक गम्भीर शिकायत, ४०४; —को नीचा दिखानेवाला मामला, ३२९; —को पंजीयनके बजाय जेल जाना मंजूर, ४७५; —को पास रखना जरूरी, ४३५; —को पृथक् बस्तियोंमें भेजनेका सुझाव, ४८३; —को पैतृक सम्पत्तिका अधिकार, ४१३; —को बहुत सावधानी बरतनेकी जरूरत, ४५६; —को भूमिका स्वामित्व नहीं, ३५०; —को लड़ाईमें जानेकी सलाह, ३७६; —को श्री वाइटका अनुकरण करनेका सुझाव, ३९०; —को स्वयंसेवक बनानेका सवाल, २४३; —को हरानेके लिए नगर-परिषदकी साजिश, ३३३; —द्वारा आत्मसमर्पणके बजाय जेल जानेका निर्णय, ४७४; —द्वारा खोली गई सुख-सुविधा निधि, ३७९; —पर अपने साथ दुश्चरित्र स्त्रियाँ लानेका दोषारोपण, ४५८; —पर गोरों द्वारा गन्दगीका इल्जाम, ४६६; —पर नया विनियम लागू, २८४; —से सम्बन्धित कानून, १२८

भारतीय आहत-सहायक दल, १४०, १५१, २४३ *पा० टि०*, ३२१; —और उनका वेतन, ३५९; —के सदस्योंको चाँदीके तमगे, ३८४

भारतीय घोषणा, १०३

भारतीय जनता, —और उनका सामाजिक जीवन, १७७

भारतीय जहाजी यात्री, —और डर्बन बन्दरगाहपर उतरनेमें उनकी कठिनाइयाँ, २९७

भारतीय डोलीवाहकों, —के कारण कार्य पूर्ण, ३८१

भारतीय डोलीवाहक दल, ३६१, ३७३, ३७८–७९, ३८०–८३; —भुखमरीकी हालतमें, ३८१; —मोर्चेपर, ३७८; —विघटित, ३८६; —का अतिरिक्त असैनिक सेवा कार्य, ३८९; —का राशन, ३७८; —का संगठन, ३७८; —के जिम्मे सख्त काम ३८०–८१

भारतीय दूकानदार, —के कारण कार्यपूर्ण, २८१ —की अपील और परवाना-निकाय, २८७; भारतीय दूकानदारों, —के लिए लॉर्ड सेल्बोर्न द्वारा 'कुली दूकानदार' शब्दका प्रयोग, १५१

भारतीय दूकानों, —का समय, ३०४

भारतीय प्रजा, —का कर्तव्य, ४६९

भारतीय प्रवासियों, —पर रोक, २३१

भारतीय मजदूर, —नेटालमें लोकप्रिय, ३४

'भारतीय मामलोंके लिए ब्रिटिश संसद-सदस्योंकी नई समिति', २६६

'भारतीय मुसाफिर', ३५५

भारतीय यात्रियों, —के साथ हुए दुर्व्यवहारको पुष्ट करनेवाला पत्र, १४१; —को धमकियाँ, २८७; —को रेल यात्रामें कठिनाइयाँ, २९६; —भारतीय और *सोमाली* जहाज, १३६

भारतीय राजस्व लेखा, २५

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, १७ *पा० टि०*, ६७, १३५, १५०, १६८, १७५, १८४, १८८ *पा० टि०*, ३५७, ४५२ *पा० टि०*; —के जन्मदाताओंमें से श्री बनर्जी एक, ४०८; —के संस्थापक न्यायमूर्ति बदरुद्दीन तैयबजी, ४४७; —द्वारा भेजे गये प्रतिनिधि, १३४; —द्वारा लॉर्ड कर्जन की नीतिका अनुमोदन, १८४

'भारतीय लड़ाईमें जायें या नहीं?', ३७२

भारतीय-विरोधी आन्दोलनकारी, —और शान्ति-प्रस्ताव, १६४

भारतीय-विरोधी कानून, २१८, ३११

भारतीय-विरोधी दल, ७४

भारतीय-विरोधी प्रदर्शन, १८७

भारतीय-विरोधी संघ, २१

भारतीय व्यापार संघ, ३१४–१५; —स्थापित करनेका सुझाव, ३१४–१५

भारतीय व्यापारियों, —के बारेमें मैरित्सबर्गके व्यापार संघकी बैठकमें विचार, ४८३; —के सम्बन्धमें ग्रिफिन, ४८३

भारतीय शिकायतें, —और समाचारपत्र, १७७

भारतीय शिष्टमण्डल, —और लॉर्ड सेल्बोर्न, १७७; —विलायत भेजनेका प्रस्ताव, ४३५–३६; —की उपनिवेश-सचिवसे भेंट, २४६; —की माँगें, २४६–४७; —की लेफ्टिनेंट गवर्नरसे भेंट, ३१५; —की डंकनसे मुलाकात; ४२१; —की सविधान समितिसे भेंट, ३३४; —द्वारा अनुमतिपत्र कार्यालयमें परिवर्तनका विरोध, १९२

भारतीय संसदीय समिति, २८६

भारतीय समाज, —का अनावश्यक अपमान, १८१; —के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण धारा, ३११

भारतीय स्त्रियों, —की ट्रान्सवालमें मुसीबतें, ४५०; —के लिए अनुमतिपत्रकी जरूरत क्यों, ४६४; —को अनुमतिपत्र लेनेके अपमानसे बचाया जाये, ४६४; —पर दुष्टतापूर्ण लांछन, ४४७; —पर लगाया गया आरोप एक कुत्सित असत्य, ४६३

भारतीय स्वयंसेवक, ६०, २६१–६२, ३७१–७२; भारतीय स्वयंसेवकोंकी आवश्यकता, २४३

भारतीय स्वयंसेवक दल, १४०

भारतीय स्वयसेवा, ३२१–२२

भारतीय स्वराज्य-संघ (इंडियन होमरूल सोसाइटी), ३२४

भारतीय होटलों, –के लिए परवाने, २९
भावनगरी, सर मंचरजी मेरवानजी, २–३, ४८, ९६–९७, १८४; –और श्री लिटिल टन, ४८; –का अपमान, ९६–९७
भाषण, –अब्दुलकादिरकी विदाईपर, २१७; –आहत-सहायक दलके सत्कारके अवसरपर, ३८६; –कांग्रेसकी सभामें, ३०१; –'खूनी कानून' पर, ४२८–२९; –विदाई सभामें, ४७२; –हमीदिया इस्लामिया अंजुमनकी सभामें, ४०२, ४२९–३०
भीखूभाई, ३८८, ४७९
भूकम्प, –इटलीमें, ६८; –और कुमारी नायपर्लीसके हिसाबके पर्चे, १९; –काँगड़ा जिलेमें, १३५
भूकम्प-कोष, १९
भूमिधारा विधेयक, ३११
'भूल-सुधार', ११५-१६
भ्रष्टाचार, एशियाई कार्यालयमें, ४००

म

मगरे, ४५०
मंगा, इस्माइल, २६५, २७९
मंगा, सुलेमान, २४८, २६५, २७२, २७९, २८५, २८८, ३५२; –और नोमूराकी मुसीबतें, ३९८; –और नोमूराके मामले, २८९; –का मामला, २९४, ३१९, ३२२, ३७४; –का मुकदमा, २९९, ३७३; –को ट्रान्सवालसे गुजरनेका अनुमतिपत्र देनेसे इनकार, २७९, २८४
मकान-कर, –और व्यक्ति-कर, १७–१८; –नेटालमें, १७–१८; –सम्बन्धी विधेयक और नेटाल *गवर्नमेंट गज़ट*, १७
मक्का, ३१२ पा० टि०, ४५९
मगनलाल, १८२, २२७, २७३, २८१–८२
'मजदूरोंका रहन-सहन', ३१४
मजदूर आयात अध्यादेश (लेबर इम्पोर्टेशन ऑर्डिनेन्स), ३५२
मजदूर एजेंट, १७८
मजिस्ट्रेट, –का फैसला, ३४३, ४४४, ४६५; –द्वारा की गई शान्ति-रक्षा अध्यादेशकी व्याख्या, ३७१
मताधिकार कानून, २५२; –संशोधन (फ्रेंचाइज लॉ अमेंडमेंट), ४७३
मथुरा, १०६; –का रत्न, सर लॉरेन्स, १०६
मदनजीत, १९७; –*ओपिनियन* के संस्थापक, २९९; –जवाबदेहीसे मुक्त, २९९
मदार, शेख, ३६६, ३७८
मदीरा, ४८१, ४८६
मद्रास, ११०–१२, १२४–२५, १३९–४०, १४६, १६०, ३७८; –और सर टॉमस मनरो, १२४; –का कांग्रेस अधिवेशन, ६७ पा० टि०
मद्रास मेल, ६७ पा० टि०
मद्रास हाई स्कूल, १३९
मध्य दक्षिण आफ्रिका रेल-प्रणाली (सेंट्रल साउथ आफ्रिकन रेल्वे), १६७; –और यात्री, १६७; –में भारतीय यात्री, १२०–२१; –में यात्राकी कठिनाइयाँ, २९६
मनरो, सर टॉमस, १२५, २४५; –और मद्रास, १२४; –और हैदराबाद, १२४
'मनसुखलाल हीरालाल नाजर', १८७–९०
मनुस्मृति, ७१
मराठा, १४५, १७५ पा० टि०; –युद्ध, १२४–२५
मर्क्युरी ऐन, ९०, १००, १३२
मलायी बस्ती, २१६, ३१५, ३३३, ४०७–८; –और गोरे, २९८; –सम्बन्धी शिष्टमण्डल, २९८
मर्हाया, भीखूभाई डॉ०, ४५६
मसविदा, –एशियाई अध्यादेशका, ४१८, ४२२
मसविदा रूप एशियाई अधिनियम संशोधन अध्यादेश, ४३३–३४; –के विरुद्ध ब्रिटिश भारतीयोंकी आपत्ति, ४३३
मसेरू, २२२
महताब, शेख, ९१
महत्त्वपूर्ण निर्णय, –जर्मनोंके बारेमें, ४०७
महमूद, सैयद, १३९
महात्मा, ४४२ पा० टि०
महान प्रतिज्ञापत्र (मॅग्ना कार्टा), १५५
महान्यायवादी, –का आवेदनपत्र और सर्वोच्च न्यायालय, ३८८; –द्वारा पुनर्विचारके लिए सर्वोच्च न्यायालयसे प्रार्थना, ४४९
महाप्रबन्धक, –की सिफारिशें मनमानी, २०२
महाराज, कुन्दनलाल शिवलाल, –का मामला, ३३७
महाराज, थानू, २२७
महाराज, वी० जी०, ११३
महाराजा गायकवाड़, ९४–९५
माउंट एजकाम्ब, ५८
'माउंटस्टुअर्ट एलफिन्स्टन', १४४–४५
माण्डगांवकर, ३३
माधवराव, राजा सर टी०, ११०, ११२, १३९; –और त्रावणकोर राज्य, १११; –और बड़ौदा राज्यकी व्यवस्था, ११२
मानपत्र, प्रोफेसर परमानन्दको, ११३; –लार्ड सेल्बोर्नको, १००
मानव स्वभाव, –और निरंकुश सत्ता, ४२२
मापूमूलो, ३७९–८३, ३८६
मारसले गीत, १६२
मॉरिशस, ४७२; –और लंका, ३९१
मॉरिसन, प्रोफेसर, ९९
मार्केट स्क्वेयर, २१५; –की सभा, ३२४

मॉर्ले, जॉन, १८३, १८५, २०९, २१४ पा० टि०, २३७, २६३, ३४०, ३७०, ३९५, पा० टि०, –तथा श्री लिटिल्टनके खरीते, ४०३; –की दृष्टिमें भारतीय शासन कार्यमें हाथ बँटानेके अयोग्य, २३८
मार्सिल्ज़, ३०
मासडॉर्प, –का निर्णय, १६६
मिंटो, लॉर्ड, ५०, १८५, २६३
मिकाडो, ४१९; –का स्कूलोंके लिए आदेश, ६०–६१
मिचल, जी०, २३१
मिडिल टेम्पल, २७२
मिडिलबर्ग, ४५०–५१; –से गुजरनेवाले भारतीयोंको सूचना, २२१
मिदनापुर तालुका, ७०
मियाँ, ईसप, ३८८, ४२१, ४२४, ४५४, ४७९; –का प्रस्ताव, ४५३
मियाँखाँ, आदमजी, २१६ पा० टि०, २२७; –द्वारा अवैतनिक संयुक्त मन्त्री पदसे त्यागपत्र, २३६
मियाँखाँ, जी० एच०, ३६९
मियाँ, गेखदाग, ३६६
मिल्नर, लॉर्ड, ३, ९, ११६, २५३, २६८, ३४७, ४००, ४०९, ४१२, ४१८, ४४३, ४५२, ४७४; –और श्री लिटिल्टन, ४०३, ४११; –और सम्राटके अन्य प्रतिनिधियोंके वादे, ३९८; –की नीति, ४०१; –की लॉर्ड कर्जनसे भारतीय मजदूरोंकी माँग, २६३; –के विचारोंमें परिवर्तन, २४१
मिल्नर हाल, २६७
मिस्र, –और नेटालकी तुलना, ३९१; –ब्रिटेन और तुर्की, ३१२
मुक़दमा, –जगन्नाथका, ४१
मुख्य अनुमतिपत्र-सचिव, –को पत्र, ३७–३८, ४६, ५७
मुख्य न्यायाधीश, –और न्यायमूर्ति मेसन, ४४९
मुजफ्फरुद्दीन, –ईरानका शाह, ४१०
मुडी, ८८
मुतुसामी, ३६६
मुदलियार, एस० ए०, ११३
मुदलियार, वी० एम०, ११३
मुदलियार, मूनलाइट, ४५५
मुद्दती अनुमतिपत्र, –श्री सुलेमान मंगाको देनेसे इनकार, २७९
मुधोलकर, राव बहादुर, ६७
मुसलमान, –और हिन्दू, १७५
मुस्लिम युवक मण्डल, ३००, ३०५; –और हिन्दू सनातन धर्मका कर्तव्य, ३३०; –को जवाब, ३०९
मुहम्मद, ३६६, ३७८; –और उनके बादके लोग (*मुहम्मद ऐंड हिज सक्सेसर्स*), ४८१
मुहम्मद, अय्यूब हाजी बेग, १४० पा० टि०
मुहम्मद, ए० जी० साले, १००
मुहम्मद, एस० पी०, ३६९
मुहम्मद, कासिम, –का मामला, २८५, ३६४
मुहम्मद, खान, ३६६, ३७८
मुहम्मद, गुलाम, ४६७
मुहम्मद, तैयब हाजी खान, –को, पत्र, ३९
मुहम्मद, दाउद, २२७, २३६–३७, ३०१, ३६९, ४०५
मुहम्मद, पी० दाउजी, ३६९
मुहम्मद, पीरन, ३००, ३०६
मुहम्मद, हाजी सुलेमान शाह, २२३
मुहीउद्दीन, खान बहादुर, –की वफादारी, १२१
मूअर, ८७, २४७, ४७४
मूडले, ए०, –और वी० ए० मेघराजको पत्र, २३–२४
मूनकी रिपोर्ट, १३२
मूनलाइट, पीटर, ४२१
मूनलाइट, मूनस्वामी, १५० पा० टि०
मूल विधेयक, –और स्वीकृत अधिनियम, ४१६
मूसा, मुहम्मद हाफिजी, –और उनके पिता हाफिजी मूसाका मुकदमा, ४६५, ४६७
मूसा, हाफिजी, ४६५, ४६७; –तथा उसके पुत्र मुहम्मद हाफिजी मूसाका मुकदमा, ४६५; –का मामला, ३९४
मूसाजी एम० एम०, १९९
मेघराज, वी० ए०, –और ए० मूडलेको पत्र, २३–२४
मेटकाफ, लॉर्ड चार्ल्स थेआफिलस, –और जमींदार, १२९–३०; –और समाचारपत्रोंकी स्वतन्त्रताके विरोधी अंग्रेज, १३०; –निजामके रेजीडेंटके रूपमें, १३०; –भारतीय समाचारपत्रोंके तारक, १२९; –की बहादुरी, १२९; –की शिक्षा, १२९
मेंटयूसी, प्रोफेसर, –की वीरता, २९६
मेडन, –का वक्तव्य, ३६२
मेढ, सुरेन्द्र बापूभाई, ३६६, ३७८, ४१९ पा० टि०
मेनरिंग, ८१, २२६
मेल्बोर्न, ३३८
मेसन, न्यायमूर्ति, २७४; –और मुख्य न्यायाधीश, ४४९; –का फैसला, २७५
मेसॉनिक टेम्पल, –में यूरोपीयोंकी सभा, ३२८
मेहता, कल्याणदास जगमोहनदास, ४६ पा० टि०
मेहता, डॉ० प्राणजीवन, २३ पा० टि०
मेहता, सर फीरोजशाह, १४९
मैक्ग्रेगर, कैप्टन, २३, ४६३–६४
मक्डॉनल्ड, श्रीमती, २७०, २७३
मैकाले, टॉमस बेबिंगटन, ९४ पा० टि० १२७; –का शिक्षा सम्बन्धी स्मरणपत्र, १८३६, ९४
मैकिनटायर, २१५, २३९
मैकिफिक्न, –के परवानेको नया न करनेके कारण, २९३
मैकेंजी, डॉ०, –के प्रयत्नोंसे रोगका शीघ्र उन्मूलन, ११५
मैकेलिस्कर, ८७

मैक्समूलर, ११७
'मैक्सिम गोर्की', ५
मैजिनी, जोजेफ, ३०–३१
मैट्रोपोलिटन कॉलेज, ७१
मैनिंग, कुमारी, ६६
मैनिंग, जेम्स, ६६ पा० टि०
मैरित्सबर्ग, १७, ३६, ३६३; –के व्यापार संघकी बैठकमें भारतीय व्यापारियोंके बारेमें विचार, ४८३
मैरेस, डॉ० ११४
मैल्कम, टी० सी०, –को पत्र, ४६०
मैसिंघम, एच० डब्ल्यू०, –का लेख, १९०; –द्वारा रंगदार जातियोंकी सेवा, १९०
मैसिनी, ३८३
मोहन, हबीब, २०६
मोतीलाल, २०६, ४२०
मोम्बासा, ३०७; –का उदाहरण, ३१३; –की सभा, ६०६–७; –के भारतीय, ३१३
मोरक्कम, –की दृष्टिमें लॉर्ड एलगिनका कदम सही, २७७; –के विरुद्ध गोरोंकी निन्दायें, २७७
मोहनलाल, ३१८

य

यंगहस्बैंड, कर्नल, १३५
यहूदी, –और भारतीय, ३३०
युवराज (प्रिंस ऑफ वेल्स), १०५; –का भाषण, ३४०; –युवराज्ञी और उनका दल, ३४०
यूनियन बैंक, ४५५
यूरोपके लोग, –और अमेरिकी, ३३९
यूलीसिस सिमोर ग्रांट, २१२ पा० टि०

र

रंगदार जातियाँ, –और मैसिंघम, १९०
रंगदार यात्री, –और केपका नया उपनियम, १६७
रंगदार लोक संघ (कलर्ड पीपल्स ऑर्गनाइजेशन), ३२५, ४७३
रंगदार लोग, –और ब्रिटिश भारतीय, ४०९; रंगदार लोगों, –का जमीन रखनेका अधिकार, ३९८; –का प्रार्थनापत्र, २५१–५२, ३२३; –की गुंडागिरीपर *जोहानिसबर्ग स्टार*, ४०९; –की भरती या नियुक्तिका नियमन और नियंत्रण करनेके लिए अध्यादेशोंके मसविदे, १७१; –की रेलोंसे यात्रा करनेपर प्रतिबन्ध, २९९; –की शिकायत, २५२; –की श्रेणीमें रखनेके कारण भारतीयोंके साथ अनुचित अन्याय, ४०९; –की स्थिति बिल्कुल असहनीय, १९९; –के दुःखोंकी कथा, २६७–६८; –के लिए खास पिछलग्गू डिब्बे, ३५१; –द्वारा ट्रामकी सवारी करनेसे गोरोंकी श्रेष्ठता खतरेमें, २११; –से सम्बन्धित कानून और ऑरेंज रिवर उपनिवेश, ६
'रंगदार व्यक्ति', –का अर्थ ऑरेंज रिवर कालोनीमें, १७; –पर लगाये गये नियन्त्रण, १७९
रंगदार मतदाता, २५२
रंगदार समाज, –भारतीय और अ-भारतीय, २५१
रंग-भेदकी समस्या, –समस्त आफ्रिकामें अत्यन्त गम्भीर, २१२
रंगराव, आर० ११०
रणजीतसिंह, महाराजा, १२९; –और अंग्रेज सरकारके बीच समझौता, १२९
रणजीतसिंह, महाराजकुमार, ४४३
रतियात बहन, २३
रविवासरीय कानून, –और कासिम मुहम्मदका नौकर, ३६४
रसूल, ए० १७५ पा० टि०
रसेल, रॉबर्ट, ६१; –व अल्बर्ट हार्मके आश्वासनकी अवहेलना, ६१–६२
रस्किन, जॉन, –साम्राज्य भावनाके लक्ष्यपर, ३३६
रस्टेनबर्ग, १०० पा० टि०
रहमान, अब्दुल, १००, १०१ पा० टि०; –का भाषण, ४५२; –को पत्र, ४६–४७
रांदेरी, ९३
रांदेरी, एम० एस०, ३६९
रांदेरी, जी० एन०, ३६९
राजकीय घोषणा १८५८, २५१, ३३६
राजचन्द्र, ८२ पा० टि०
राजस्व परवाना अध्यादेश, ८५
'राजा सर टी० माधवराव', ११०
'राजवंशके सदस्योंका आगमन,' ११८
रानडे, १३४, १५०
रानावाव, ८४
राफा, ३१२
रॉबर्ट, एस० डी०, १००
रॉबर्ट्स, लॉर्ड, २६, ४५२
रॉबर्ट्स, हरबर्ट, २६६
रॉबिन्सन, सर जॉन, ७६, २०९; –का कथन, ३५३
रामनाथ, ८२–८३, ९०, ९९, १३२
रामस्वरूप, ९३
राय, राजा राममोहन, ७०
रायटर, १२५, २२२
राष्ट्रीय भारतीय संघ, ६६
रासमाला, अथवा गुजरातका इतिहास, ४८१
रिच, १९७, ३१६
रिजवे, सर वेस्ट, २६२; –का आयोग, ३१६; –के आयोगकी बैठकें, ३२५
रिपन, लॉर्ड, ५०
रिहायशी मकानों, –का अर्थ, १
रुस्तमजी, १३, ३७–३८, ३६६

रूज़वेल्ट, राष्ट्रपति, २४५, ३३८;–के भाषणसे अमेरिकी अरबपतियोंमें खलबली, ३३९
रूस, –और जापान, १८, ३५, ६०–६१, १३७, १६८; –और भारत, १३७–३८, ४२४–२५; –का नया संविधान, ५४;–का नया संविधान, और प्रजातन्त्रीय राज्य-विधान, ५४; –का सम्राट तानाशाह, १३७; –की स्थितिका ट्रान्सवालके अंग्रेजी राज्यकी स्थितिसे मिलान, ४२४; –के ज़ारकी घोषणा, ३८
रूसी, –तथा ब्रिटिश शासनोंमें अन्तर, ४२३
रे, लॉर्ड, १८९
रेथमन,–का प्रस्ताव, ३३७; –की नेटाल विधानसभामें माँग, ३४१
रेलगाड़ी, –की तकलीफ, ३२५, ३४३, ३९५
रेल-मार्ग निकाय, –की सूचनाएँ, २८५
रेलवे, –की अड़चन, २८०; –की परेशानी, ३१५
रेवाशंकर, ८१–८२, १३१; –जगजीवन ऐंड कम्पनी, २३
रेड अग्रगामी दल (रड पायोनियर्स), ४२, १६७, ३२५; –की सभा, ३२४; –के आन्दोलनके विरुद्ध, गिरजा परिषदकी आवाज, ४२
रैंड डेली मेल, २९४, २९९, ३२७, ३४०, ३९४, ४१०, ४४६ *पा० टि०*, ४४८, ४६४; –भारतीयोंकी सभापर, ४५१, –के विचार, भारतकी स्थितिपर, ३३१; –को जवाब, ४३९–४०; –को पत्र, ३९७–९९; –द्वारा पूनियाकी जोरदार वकालत, ४६३
रैग, सर वाल्टर, १७४
रोज-इन्स, सर जेम्स, ३२६
रोजदीस्तवेन्स्की, –का ज़ारको पत्र, ३३
रोड्स, ३२३
रोमन कैथलिक, १७२

ल

लंका, –और मॉरिशस, ३९१
लक्टशस, ५२
लखनऊ, १०७
लछाराम, ९२, ११३, ४७९
'लज्जाजनक', २३४
लड़ाई,–के दावे, २६६, ३८८;–में जानेके लाभ, ३७६
लतीफ, उस्मान, ४१९
लतीफ, सुमार, ९१
'लन्दनकी मैट्रिक परीक्षामें तमिल', २१३–१४
लन्दन भारतीय समाज (लंदन इंडियन सोसाइटी), १६८, १७३;–और प्रोफेसर गोखले, १६८
लन्दन विश्वविद्यालय, २१३–१४
लन्दन समझौता, ३४६, ३७८
लल्लूभाई पुस्तकालय, ३८४
लवडे, २८, ७७, ८१, १५२, ४४५; –और उनके भाई-बन्दोंको चुनौती, ४५२; –और उनके साथी, ४१५; –की शिकायत, १०१; –द्वारा अनुमति विभागके कार्यका समर्थन, ३८९
लवडेल, १८०, २४४
लाइशनसाई, ४५६
लाईयाँग, ४१८
लाजपतराय, लाला, १३४; –उच्चवर्गके हिन्दुओंकी सुन्दरताके प्रतीक, १३५; –और प्रोफेसर गोखले, १८४
लॉटन, १३, १८७
लॉरेंस, सर हेनरी, १०६–७, १२०, १२४, २४५, २७०; –का भ्रातृ-प्रेम, १०६; –की मृत्यु, १०७
'लॉर्ड कर्जन', ५०–५१
'लॉर्ड मेटकाफ़', १२९–३०
'लॉर्ड सेल्बोर्न', ३६७
'लाल फीता', १३६–३७
लाली, सर आर्थर, ९, २८, ३२, १६०; –पथ-भ्रान्त, १५५; –भारतीयोंपर लागू होनेवाले कानूनोंके पक्षमें, ४८; –के खरीतेके कारण भारतीयोंको अत्यन्त कष्ट, १५४; –के सुझावका अर्थ यूरोपीय विद्वेषसे समझौता, १६५; –को बधाई, १४६
लालू, नरोतम, १६६
लाहौर, ९९, १०७
लिंकन, अब्राहम, –मुन्शीके रूपमें, ५४, –राष्ट्रपतिके रूपमें, ५५; –वकीलके रूपमें, ५४; –का गुलामीकी प्रथा मिटानेके लिए संघर्ष, ५५; –का संसदके चुनावके लिए संघर्ष, ५५; –की हत्या, ५६; –के समय अमेरिकाकी स्थिति, ५५
लिखटनस्टाइन, ३७४, ४५१; –तथा ग्रेगरोवस्कीकी राय, ४५८; –का पत्र, ३९४
लिटन, लॉर्ड, ४०२
लिटिल्टन, २७, ३२, ४८, १०९, १६५, ४०१; –उपनिवेश मन्त्री १४३; –और लॉर्ड एलगिनके संविधान, ३९१; –और लॉर्ड मिल्नर, ४०३, ४११; –और श्री मॉर्लेके खरीते, ४०३;–और सर मंचरजी ४८; –से चीनी खान-मजदूरोंपर किये गये अत्याचारके विषयमें प्रश्न, ६३
लिनेविच, –और मार्शल ओयामा, १८
लियोनार्ड, ३२६
लीवर ब्रदर्स, ३१४
लेक, जनरल, १२९
लेडीस्मिथ, २४७, २८५, ३६४, ३७६;–का एक संवाददाता व्यक्ति-करपर, २४२; –के गिरमिटिया भारतीय, ३७३;–के भारतीयोंपर व्यक्ति-करका अत्याचार, २४२
लेडीस्मिथ परवाना-निकाय, २९३
लेन, ३३३

लेनर्ड और ग्रेगरोवस्की (ग्रेगोरस्की), २७८
लेनिन, १३८ पा० टि०
लेफ्टिनेंट गवर्नर, –और जोहानिसबर्गका भूमि-अध्यादेश, ८५; –का एशियाई नगरपालिका-परिषदोंको हस्तान्तरित करनेका अधिकार, २७; –का भारतीय शिष्टमण्डलको उत्तर, ३१५; –के निषेधाधिकारको दृष्टिमें रखते हुए ब्रिटिश भारतीय संघ द्वारा नगरपालिकाओंके स्थानिक शासनाधिकारोंका विरोध नहीं, ९; –को धारा १७ व उपधारा ४ से प्राप्त अधिकार, ४१२; –द्वारा श्री भाभाकी सजा माफ, ४५०
लेली, –और नवाबजादा नसरुल्ला खाँ, १४९; –को न्यायमूर्ति पार्सन द्वारा झिड़कियाँ, १५०
लैंसडाउन, लॉर्ड, ४७
लैड्सबर्ग, लिटमैन, ४५१
लैविस्टर, ३५
लेवी, ४१
ल्यूकस, –और इस्माइल, ११
ल्यूनार्ड, ११, २४०

व

वक्तव्य, –एशियाई अध्यादेशपर, ४४२–४३; –संविधान समितिको, ३४५–४८; –हीरक जयन्ती पुस्तकालयके सम्बन्धमें, ३८४
वजीर अली, नवाब, १४४
वजीर अली, हाजी, ३३४
वतनियों, –की जमीनका आयुक्तके नाम पंजीयन, ४२; –के लिए नई बस्ती, ३४४; –को ट्राममें बैठनेका अधिकार नहीं, ३४३; –की भू-स्वामित्वका अधिकार, ४२–४३, ३४८; –में एशियाइयोंको सम्मिलित करनेका प्रस्ताव, ३४६; –में शिक्षणकार्य, १८०
वतनी कानून, –भारतीयोंपर लागू, ७८
वतनी कार्य आयोग (नेटिव अफेयर्स कमीशन), २२, १५५
वतनी-विद्रोह, २२३; –और भारतीय, ३६२; –सम्बन्धी भारतीय समाजकी दिलसा, ३२१
वन्दे मातरम्, १६३; –बंगालका शौर्यमय गीत, १६२–६३
वफादारीका प्रतिज्ञापत्र, ३६६
वरिया, डी० आई०, १००
वर्ग-विधान, –के सिद्धान्तका प्रश्न और ब्रिटिश भारतीय संघ, १६५
वर्गीय कानून, १५४
वर्जीनिया राज्य, ८९
वली, जुसब हाजी, ४५५
वाइली, ३५
वाइसराय, –और जार, १३८; –की परिषद; ११२
वाइ० एम० सी० ए०, जोहानिसबर्ग, १९
वाछा, दिनशा एदुलजी, १७
वाज, ई०, १३६–३७; –की प्रवासी-प्रतिबन्धक अधिकारीके पास दरखास्त, १३७
वॉट, ३०१, ३०३; –भारतीयोंको नागरिक सेनामें भरती करनेपर, २६१; –के भाषणकी आलोचना, २६१–६२
वानिया, ए० ई०, ४५४
वारनेट, मेजर, ३२५
वॉर्ड, ९९
वॉशिंगटन, जॉर्ज, १८; –की नम्रता और वीरता, ८९; –की मृत्यु, ९०; –की सत्यवादिता, ८९
विक्टोरिया, महारानी, ९९ पा० टि०, १०३ पा० टि०, १३३; –का लॉर्ड डर्बीको पत्र, ३३६; –की सरकारकी ओरसे बोअर सरकारके नाम कठोर प्रतिवेदन, ३४६
वॉशिंगटन, बुकर टी०, २४४
विक्रेता-परवाना अधिनियम, ११८–१९, १२८, १५८, २५७, २८९, २९५, ३११, ३६३; –अत्यन्त अन्यायपूर्ण, २८८; –कष्टका सबसे बड़ा कारण, १७६; –सबसे अधिक शरारतकी जड़, २८५; –का उद्देश्य भारतीयोंको कुचलना, १०९; –पर सर्वोच्च न्यायालयका फैसला, ७६
विटवॉटर्स रैंड उच्च न्यायालय, –का फैसला, ४०१
विटेक्लेफॉटीन, २८७
विदेशी प्रवासी रिपोर्ट (एलियन इमिग्रेशन रिपोर्ट), ४८१
विद्यासागर, ईश्वरचन्द्र, ७०–७२; –की दयालुता, ७२
विधवा-विवाह, –की वैधताका कानून, ७२
विधान-परिषद, –द्वारा वतनियोंपर कर लगानेका विधेयक अस्वीकृत, ४३
विधान सभा, –के अध्यक्षको पत्र, ४३८; –में अध्यादेशका मसविदा, ४४२
विधेयक, आबाद रिहायशी मकानोंपर कर लगानेका, १
विप्लव, १८५७, –में लॉरेन्सका महान् कार्य, १०७
वियना-आयोग, ११४
विलायत, जानेवाला भारतीय शिष्टमण्डल, २९७, ३४४, ३६०, ३८८; –से आया हुआ आयोग, ३३४
विशाल वतनी महाविद्यालय, –और श्री टेंगो जबावुं, १८०
विशिष्ट राष्ट्रीय परिषद, –द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव, ३५२
विश्वधर्म, ५२–५३
वीकली स्टार, २७३–७४
वीरजी, ८२, ९३, १३२, १७०
वीरासामी, २०५
वीसूवियस, –का ज्वालामुखी, २९६–९७
वीहाइवी, ३३८
वुड्स एंड सन, ४२०
वेडरबर्न सर विलियम, ३, १८४, २६६, ३१९ पा० टि०, ३४४, ३५७; –का तार, ३६०; –की श्री चेम्बरलेनको सलाह, २१९; –को पत्र, २८३–८६, ३८५

वेल्लम, १२५; -के जेल अधिकारीकी गवाही, १२५
वेलेसली, १४४
वेसली, जॉन, -की चायके खिलाफ आवाज, १२३
वेसेल्स, २७४; -का निष्पक्ष निर्णय, २५९-६०; -का फैसला, २६०
वेस्ट, अल्बर्ट, १९ पा० टि० ८१, ९९, १०८, १३१-३२, २०४, २७३, २८६, ३१७, ३२६, ४१९
वेस्ट ऐंड हाल, ३६१
वेस्ट मेरलैंड, ८९
वेस्ट स्ट्रीट, ७६, ३६४, ४०५
व्यंकटराव, आर०, ११०
व्यंग्यपूर्ण सुझाव, -एक संवाददाताका, भारतीयोंके बारेमें, ३२१
व्यक्ति-कर, १८, १४६-४७, २४२-४३; -और फिरसे गिरमिटमें प्रवेश-सम्बन्धी कानूनके अमलसे संरक्षक अत्यधिक असंतुष्ट, ३८; -और मकान-कर, १७-१८; -नेटालके नामपर एक धब्बा, ३४; -राजस्व बढ़ानेका एक असन्तोषजनक तरीका, ३८; -सम्बन्धी शिकायत, २३५; -का क्षीण स्वागत, १८६; -का प्रभाव वतनियों और भारतीयोंपर, १४७; -की अदायगी, १८६-८७; -के कारण काफिरोंका विद्रोह, २७६
व्यक्ति-कर कानून, १७६; -की धारा १४, १८७
व्यापारिक ईर्ष्या, -और एशियाई विरोधी आन्दोलन, २१९
व्यापारिक परवाना अधिनियम, -द्वारा भारतीयोंपर अंकुश, ३५४
व्हाइट, सर जॉर्ज, २६; -द्वारा प्रभुसिंहकी प्रशंसा, १५१

श

शपथ, -लेनेके परिणाम, ४३२; -लेनेके बाद बदल जाना खुदाके प्रति गुनाह, ४३२
शम्स-उल-उलेमा, ९९
शरणस्थल, २७४-७५
शराब, -की लत, गरीब भारतीयोंमें, ३०६
शराब परवाना अध्यादेश, ४१५
शहाबुद्दीन, मुहम्मद, ३८८, ४७९
शान्ति-रक्षा अध्यादेश, १५१, १५६, १६४, १७७, २८८-८९, ३५१, ३५५, ४००-१, ४१२, ४२३, ४४१, ४४७, ४४९-५०, ४६५; -अनुचित और अपमानजनक, ३२२; -और ट्रान्सवालका सर्वोच्च न्यायालय, ३८४; -और भारतीय, १५६; -और भारतीयोंका आव्रजन, २८३; -सैनिक कानूनके समयका अवशेष, २०२; -की मजिस्ट्रेट द्वारा की गई व्याख्या, ३७१; -के अन्तर्गत ट्रान्सवालमें भारतीयोंका प्रवेश वर्जित, २८४; -के लागू करनेके बारेमें ब्रिटिश भारतीय संघके सुझाव, १५७-५८
शान्ति सन्धि, -के लिए जापानकी तैयारी, १८
शायर, -और ड्यूमा, १५३
शाह, नानालाल वालजी, -का भाषण, ४५१-५२
शाही विधान-परिषद (इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल), १३४, १६८ पा० टि०
शिकायतें, -भारतीय डेक मुसाफिरोंकी, ३५५
शिक्षा, -का अर्थ, १६८-६९; -का महत्त्व, ३०६; -की हिंदुओंको आवश्यकता, ५१
शिक्षा पद्धति, -अनिवार्य, बम्बई नगर निगम द्वारा स्वीकृत, ९४
शिक्षा मन्त्री, -को पत्र, ६१-६२
शिक्षा विभाग, -के अधीक्षककी रिपोर्ट, ८८
शिनाख्तका पास, -रखनेकी दूषित प्रणाली, ४४०
शिमला, १८४
शिवाजी, १४५
शिष्टमण्डल, -उपनिवेश सचिवकी सेवामें, २२२; -लॉर्ड सेल्बोर्नकी सेवामें, १५०-५८; -विलायत भेजना आवश्यक, २९३-९४; -का जाना स्थगित, ४६८; -का प्रस्ताव, ४२५; -की यात्रा, ४७८, ४८०-८२, ४८५-८६; -के लिए खर्च, ३८९, ४५९; -के सदस्य, ४५९
शीघ्र दूकान-बन्दी अधिनियम, २५८-५९; -पर *नेटाल मर्क्युरी*, २५०
शेल्त, यू० एम० (सार्जेंट), ३६६, ३७८, ३८१, ४२०
'श्री गॉश और भारतीय,' ७७-७८
'श्री जॉन मॉर्ले और भारत,' २३७-३८
'श्री ब्रॉड्रिक, -और ट्रान्सवालके ब्रिटिश भारतीय', २; -का बजट, २५-२६
श्री लंका, १०६ पा० टि०
'श्री वाछा और भारतीय,' १७
'श्री सीडन,' ३६७-६८
'श्री हैरी स्मिथ और भारतीय' १४७-४९

स

संरक्षक, -व्यक्तिकर और फिरसे गिरमिटमें प्रवेश-सम्बन्धी कानूनके अमलसे अत्यधिक असन्तुष्ट, ३८; -द्वारा दी गई भारतीय आबादीकी संख्या, ३४
संविधान-समिति, ३१६, ३६२; -को वक्तव्य, ३४५-४८
संशोधित अध्यादेश, -और भारतीय, ८४-८५
संस्कृत, १६२, १७२
संस्कृत कॉलेज, ७१
सटन, ३८०
सतारा राज्य, १४५
सत्यनाथन, डॉ०, -की मृत्यु, ३५६
सत्याग्रह, -की नीति कोरी धमकी नहीं, ४४१
सखेलियन द्वीप, ६३; -पर जापानियोंकी विजय, १८
सनातन धर्म सभा, ३०५

सनातन हिन्दू धर्म, २४
सन्धिपत्र, ६३
सन्धि-समिति, १८
सभा, –ट्रान्सवाल प्रगतिशील संघके तत्वावधानमें, ७७; –का उद्देश्य, २६७; –में स्वीकृत प्रस्ताव, ४३३
समाचारपत्र, –और भारतीय शिकायतें, १७७
समुराई, ४१८
सम्राट्, –का भाषण, २०९–१०; –की मंजूरी अध्यादेशके मसविदेपर स्थगित करनेकी प्रार्थना, ४३४; –की सरकार और प्रस्तावित कानून, ४४३; –को ट्रान्सवालके भारतीयों द्वारा उनके ६५ वें जन्मदिवसपर बधाईका तार, १३३
'सर आर्थर लाली मद्रासके गवर्नरके रूपमें', १६०
'सर जॉर्ज बर्डवुडकी बहादुरी और एक क्लबका हल्कापन', २६६
'सर टामस मनरो', १२४
'सर टी० मुत्तुस्वामी ऐयर के० सी० आई० ई०', १३९–४०
'सर डेविड हंटर', १९१
'सर विलियम गैटेकर', २४५
'सर हेनरी काटन और भारतीय', ३५७
'सर हेनरी लॉरेन्स', १०६–७
सरकार, –बनाम मामाका मुकदमा, ४४९; –की परवाना देनेवाले अधिकारियोंके नाम गश्ती चिट्ठी, ३६५
सरकारी नौकरियों, –के बारेमें लॉर्ड कर्जनका कथन, ४; –में भेदभाव, ४
सर्वेंट्स आफ इंडिया सोसाइटी, १७२ पा० टि०
सर्वोच्च न्यायालय, १५६; –और महान्यायवादीका आवेदन-पत्र, ३८४; –और सरकार ४०१; –का फैसला, आयातके मामलेमें उठाये गये मुद्देपर, ४४९; –का विक्रेता-परवाना अधिनियमपर फैसला, ७६; –की न्यायबुद्धि, ३२६; –के अधिकार-क्षेत्रका उच्छेद, ३५४; –के निर्णयके कारण पाबन्दियाँ समाप्त, १५४; –के निर्णयसे भारतीय परवानोंमें वृद्धि, २३२; –द्वारा १८८५ के कानून ३ की व्याख्या, १२८, २५६; –द्वारा पुनर्विचारकी दरखास्त खारिज, ४४९; –द्वारा भारतीयोंकी रक्षा, १७७; –में बन्दी प्रत्यक्षीकरणकी अपील, २७४; –से महान्यायवादी द्वारा पुनर्विचारकी प्रार्थना, ४४९
सलाहकार-मण्डल, –और एशियाइयोंके पंजीयक, ३८९
सॉंडर्स, ८७
साइमन कमीशन, १३४ पा० टि०
साउटर, २००
साउथवर्ककी नगर-परिषद्, –द्वारा चायसे होनेवाली लाभ-हानियोंकी जाँच, १२३
सादी, शेख, –का जीवन वृत्तान्त, ९९
सानफ्रान्सिस्को, ४७३; –का पुनर्निर्माण, ३५८; –की घटना, ३५७; –की हालत, ३०८; –में भूकम्प, ३०८
'साबुनके लिए प्रमाणपत्र', २५५
सामान्य लोक शिक्षा-समिति, ९४ पा० टि०
'साम्राज्य-दिवस', ३३६
साम्राज्यीय संसद, –का उद्घाटन, २०९
सार्वजनिक उद्यान, –भारतीयोंके लिए बन्द, १०२–३
सार्वजनिक सभा, –के तीसरे और चौथे प्रस्ताव, ४८८; –में पास किये गये पाँच प्रस्ताव, ४३६–३७
सालोमन, सर रिचर्ड, ४२, ८४, २६९, २९८–९९, ४८०–८१; –और लॉर्ड सेल्बोर्न, ३२५; –और हाजी वजीरअली, २९८; –का आश्वासन, ४३७; –का जवाब, ३४१; –से बातचीत, ४८६; –लेडी, ४८०
साहब, गुलाम, ३८८
'साहसके बिना सिद्धि नहीं', ४६९
साहस, –रूसी लड़कियोंका, ४२५
सिकरैमसैम, २१–२२
सिंगापुर, –में चीनी और भारतीय, ६
सिंधिया, १४४
सिख-युद्ध, १०७
सिगरेट, –और आस्ट्रेलियाकी सरकार, ११०; –से हानि, ११०
सिडनहम, १८७
'सिडनीमें प्लेग', २५५
सिराजुद्दौला, १६१ पा० टि०
सीडन, रिचर्ड, १४३, ३६८
सुकरात, ५२
सुभाव, २२७
'सुलेमान मंगाका मुकदमा', ३७३
सूचना, –ट्रान्सवाल *गवर्नमेंट गज़ट* में, ३५१; –बालकोंके अनुमतिपत्रके बारेमें, ३३१
सूटर, ३९२
सूरज, २३
सूरत, १४९
सूरती, मुहम्मद, २८०, ३२५
सेंट जान्सवुड, १९७
सेंट स्टीवन्स क्लब, २६६
सेठ, आदमजी, २०६
सेठ, उमर, ४०५; –का कष्टमय जीवन, ४०६
सेठ तैयब हाजी खान मुहम्मद ऐंड कम्पनी, ४५
सेल्बोर्न, लॉर्ड, ९, २८, ७९, १०१ पा० टि०, १०४, ११५, १६४–६५, १६७, १९६, २०२; २२२, २३१, २६५, २६८–६९, २७९, २८९, २९४, ३५५, ३७०–७१, ३७३, ३७५, ३८४, ३९९,

४३५, ४६२; –और गोरोंका शिष्टमण्डल, ९; –और जोहानिसबर्गके ब्रिटिश भारतीय संघके बीच पत्र-व्यवहार, ७८; –और ब्रिटिश भारतीय, १६४-६५; –और ब्रिटिश भारतीय संघ, १७८; –और भारतीय शिष्टमण्डल, १७७; –और रिचर्ड सालोमन, ३२५; –और स्वशासन, ४; –चीनी मजदूरों और गोरोंपर, ९; –का अनुमतिपत्रके विषयमें जवाब, ३४२; –का अर्थगर्भित भाषण, ३६७; –का आगमन, २०४; –का आदेश, १६९; –का जवाब अनुमतिपत्रके मामलेमें, ३३३; –का तार, ४८८; –का दूसरा पत्र, ४५९, ४७०; –का द्वयर्थी पत्र, ४५८; –का पत्र, ४६८–६९; –का ब्रिटिश भारतीय संघको उत्तर, ७८, ३२२; –का भाषण, १९५; –का यूरोपीयोंको वचन, १०३; –का शिष्टतापूर्ण उत्तर, १८६; –की घोषणा, १५३; –की दृष्टिमें वतनियोंके साथ अन्याय करना ब्रिटिश शासनके लिए कलंक, ४२; –की निष्ठापूर्वक सेवा करनेकी इच्छा, १८३; –की नीति, ४३; –की लॉर्ड एलगिनको सलाह, ४६९; –की सेवामें भारतीय शिष्टमण्डल, १५०–५८; –के उत्तरकी समीक्षा, ३२२; –के दो वादे, २१३; –के पत्रका अर्थ, ४६९; –को निवेदनपत्र, २१; –को पत्र, ३१९; –को पॉचेफस्ट्रूमके भारतीयों द्वारा मानपत्र १००; –को हटानेकी तजवीज, ३७५; –द्वारा ब्रिटिश भारतीय शिष्टमण्डलको दिये गये वचन, ४५०; –द्वारा भारतीय दूकानदारोंके लिए 'कुली दूकानदार' शब्दका प्रयोग, १५१; –द्वारा स्वशासनकी व्याख्या, ४; –से गिरजा परिषदके शिष्टमण्डलकी भेंट, ४२

सेवेज, डॉ०, ३८२

सैंडहर्स्ट, लॉर्ड २६२, ३३४

सैम, २०५, २७३

सोमाली जहाज १४१; –और भारतीय यात्री, १३६; –के भारतीय यात्री, १६२; –के मुसाफिरोंकी शिकायतें, २३५; –पर भारतीय यात्रियोंके साथ दुर्व्यवहार, १४७

सोसाइटी आफ फ्रेंड्स, ४८ *पा० टि०*

सौकल, जॉन, –का अनुमतिपत्र और पंजीयन, ४६

सौराष्ट्र, १८, १४१

स्कॉटलैंड, १४४

स्टॉक्स विल्ली, –श्री मुतुस्वामी ऐयरपर, १३९

स्टीन, हर अडॉल्फ, –जर्मन सैनिकोंकी मुसीबतोंपर, ४१५

स्टीवेनी फाजवे, ९८

स्टेड, १७५

स्टैंजर, ३७०, ३७८; –की काल-कोठरी (ब्लैक होल), १६१

स्टैंडर्टन, ३३४, ४५१

स्टोक्स, ३८०

स्थानिक निकाय, –का अन्यायपूर्ण कार्य, २५८; स्थानिक निकायों, –या नगर-परिषदों को परवाना जारी करने-न-करनेका अधिकार, १५६

स्पार्क्स, कर्नल, ३७९, ३८२

स्पियन कॉप, १५१ *पा० टि०*

स्प्रिंगफील्ड रोड, १९७

स्मट्स, जनरल, २६९, २७५

स्मिथ, १४, १४७–४८, २९१; –की लचर दलील, १४८

स्मिथ, जनरल, १४५

स्मिथ, डाक्टर क्लिंकेड, २४८–४९

स्मिथ, सर विलियम, –का महत्त्वपूर्ण निर्णय, ४०७

स्मिथ, सी० जे०, २ *पा० टि०*

स्मिथ, हैरी, १३६–३७, १४१, १६२, २५९; –का उत्तर, १४७

स्लीमन, २४५

स्लेटर, –का कठोर निर्णय, १४९

स्वतन्त्र भारतीयोंकी आबादी, ४०५

स्वदेशी आन्दोलन, १७५ *पा० टि०*

स्वशासनका अर्थ, २९०

स्वराज्यका संविधान और लॉर्ड ऐलगिन, २७७

'स्वर्गीय उमेशचन्द्र बनर्जी', ४०८

'स्वर्गीय कुमारी मेनिंग', ६६

'स्वर्गीय डॉक्टर सत्यनाथन', ३५६

'स्वर्गीय न्यायमूर्ति बदरुद्दीन तैयबजी', ४४७–४८

स्वशासन, –और लॉर्ड सेल्बोर्न, ३; –और लॉर्ड सेल्बोर्न द्वारा उसकी व्याख्या, ४

स्वशासित उपनिवेश, –और साम्राज्य सरकार, २–३

स्वाजीलैंड, –में बलवा, ३१३

हंटर, –और आर्मस्ट्रॉंग, २७६–७७

हंटर, सर डेविड, –के भारतीय ऋणी, १९१

हंटर, सर विलियम विलसन, १८९; –गिरमिटिया मजदूरोंकी स्थितिपर, ३२७

हक, अब्दुल, ७; –को पत्र, ३८; –व कैखुसरूको पत्र, ७, ३७

हचिन्स, डॉ०, –और नमक-कर, १०

हबीब, हाजी, १५० *पा० टि०*, १७५, २०६, २४६, ३३४, ३६१, ३८८, ४२१, ४५५; –का प्रस्ताव, ४३१; –का भाषण, ४५४; –को पत्र, ३९, ४५

'हमारा कर्तव्य', ११९–२०, ३१२–१३

'हमारे अवगुण', ३२९–३०

'हमारे तमिल और हिन्दी स्तम्भ', १९१

हमीदिया इस्लामिया अंजुमन, ४५१, ४५५, ४५९, ४७१, *पा० टि०*, ४७३, –की सभामें भाषण, ४०२, ४२९-३०

हरिदास, नानाभाई, १८८

हलेट, सर जेम्स, २२, १७४, ३७९; -की गवाही, २२०; -की दृष्टिमें भारतीय अच्छे नागरिक, १५५
हसन, मूसा, १००
'हाँगकाँगमें ईश्वरीय प्रकोप', ४७३-७४
हाइन, -व फार्स्यर्सको पत्र, १४
हाइम, अल्बर्ट, ६१; -व रॉबर्ट रसेलके आश्वासनकी अवहेलना, ६१-६२
हाइल, २३९
हॉउडेन, कप्तान, ३७९-८०
'हाजी वजीर अली', ४७२
हॉटन, के० ए० हॉवर्ट, -और श्री टेंगो जबावुंका दौरा, २४४
हॉटेन्टॉट, ४७५
'हल्का सुधार', १६१
हॉलवे, १३९
हाली, मुहम्मद वली, २०५
हाली, मौलवी सैयद अलताफ हुसेन अनसारी, ९९
हॉविक, २४८
हॉस्केन, ४२
हिन्दी भाषा, हिन्दू-मुसलमान दोनोंके अनुकूल, ४०७
हिन्दू, -और मुसलमान, १७५; -दोनोंके हिन्दी भाषा अनुकूल, ४०७; -के बीच समझौता, १७५; हिन्दुओं, -को शिक्षाकी आवश्यकता, ५१; -के श्मशानकी स्थिति, ४१०
'हिन्दू श्मशान', ४२६; -कोष, ३०९
हिन्दू सनातन धर्म सभा, -और मुस्लिम संघ, ३३०
हिमालय, १०७
हिलैरी, ३१७ पा० टि०
हिस्लॉप, कर्नल, जे०, ३८६
हीडेलबर्ग, ४३, १५४, १८०, ३३४, ३८८; -की जमातके बीच अनबन, २५४; -की जमातको दो शब्द, २५४; -की जमातमें फूट और मारपीट, १७९-८०
होन्सबरो, ३१४
हीरक जयन्ती पुस्तकालय, ३८४
हीलिएल, भगिनी, ३६
हुंडामल, १०, १७६; -का मामला, ७६, २८५-८६, ३६४; -के मामलेकी फिर चर्चा, ७६-७७
हुसैन, आजम मूसा, ३७
हुसैनखाँ, २८१
हुसैन, मुहम्मद, ३८८
हुसैनी, ७४, ८०
हेंट्ज़, गालिक, २८६
हेमचन्द्र, ८२-८३, ९२-९३, ९९, १३२, १७०, १९७, २०३-६, २२२, २२४, २७३, ३१७, -की बर्खास्तगी, ९१
हैदर, -की हत्या, ३४४
हैदरअली, -और अंग्रेज, १२४
हैमिल्टन, लॉर्ड जार्ज, १८४
हैम्डन, ४५५ पा० टि०, ४७५, ४८७; -टाइलर और बनियन, ४८८-८९; -द्वारा जहाजी-कर देनेसे इनकार, ४८९
हैलीडे, लेफ्टिनेंट गवर्नर सर फ्रेडिक, ७१
होलकर, महाराजा तुकोजी राव, ११२, १४५